प्रतिष्ठा रत्नाकर
प गुलाबचन्द्र 'पुष्प'

प्रथम सस्करण १००० प्रतिया

पावन प्रसग श्री १००८ आदिनाथ पचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव
जैन समाज, प्रीत विहार (पजी) दिल्ली–६२

अर्थ सौजन्य पचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव समिति
प्रीत विहार, दिल्ली–६२

प्राप्ति स्थान

ब्र. जय "निशात"
पुष्प भवन, टीकमगढ (म प्र)
फोन (०७६८३) ३३१३८

श्री महावीर स्वामी जिनालय
जैन समाज प्रीत विहार (पजी)
एफ–ब्लाक दिल्ली–६२
फोन २०५६८६६

अरिहंत साहित्य सदन
४ रैनवो विहार
मुजफ्फरनगर (उ प्र)
फोन ४३३६१३

लागत मूल्य दो सौ एक रुपए मात्र

मुद्रक . नरुला प्रिंटर्स, दिल्ली

प्रकाशन व्यवस्था प्रतिभा प्रतिष्ठान, नई दिल्ली

मंगलाचरण

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोएसव्वसाहूणं

चत्तारि मंगलं	-	अरिहंता मंगलं, सिद्धामंगलं साहू मगल, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं।
चत्तारि लोगुत्तमा	-	अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो।
चत्तारि सरणं पव्वज्जामि	-	अरिहंते सरणं पव्वज्जामि सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

एसो पंच णमोयारो सव्वपावप्पणासणो
मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं होइ मंगलं ॥
मंगलं भगवान वीरो मंगलं गौतमोगणी।
मंगलं कुन्दकुन्दार्द्यो जैन धर्मोऽस्तु मंगलम् ॥

विषय-अनुक्रमणिका

प्रथम परिच्छेद

द्वितीय परिच्छेद

तृतीय परिछेद

चतुर्थ परिच्छेद

पंचम परिच्छेद

षष्ट परिच्छेद

सप्तम् परिच्छेद

अष्टम् परिच्छेद

नवम् परिच्छेद

दशम् परिच्छेद

एकादश परिच्छेद

द्वादश परिच्छेद

त्रयोदश परिच्छेद

चतुर्दश परिच्छेद

विशिष्ट परिच्छेद

शुभाशीर्वाद
एवं
शुभकामनाएं

शुभाशीर्वाद

श्री गुलाब चंद्र जी "पुष्प" ने पंचकल्याणक विधि का जो संग्रह किया है, वह बहुत सुन्दर है जो गृहस्थ धर्म के लिये कार्यकारी है। "पुष्प जी" उन्नतिशील, साम्यता, संवृद्धि को प्राप्त होंगे। ग्रंथ सर्व समाज को मान्य होगा।

आचार्य विमल सागर

दिनांक ३१-१-९२
अहार क्षेत्र

पूज्य आचार्य विद्यानन्द जी महाराज के

शुभाशीर्वचन

समाज में बहुत समय से एक सर्वमान्य प्रतिष्ठा पाठ तैयार करने की मांग उठती रही है। इसी मांग के फलस्वरूप जैन समाज के प्रतिष्ठा प्राप्त संहिता सूरि पंडित नाथूलाल जी शास्त्री इन्दौर ने 'प्रतिष्ठा प्रदीप' नामक एक प्रतिष्ठा पाठ संपादित करके प्रकाशित किया है। दूसरा प्रतिष्ठा पाठ प्रतिष्ठाचार्य पंडित गुलाबचन्द जी 'पुष्प' ने तैयार किया है, जो हमारे सामने है। इसे तैयार करने मे पं० पुष्प ने बहुत परिश्रम किया है।

सम्यग्दर्शन की प्राप्ति में अन्य कारणों के साथ जिन महिमा दर्शन भी प्रमुख कारण है, जिन महिमा दर्शन मे जिन बिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा, मानस्तम्भ प्रतिष्ठा, जिनालय का निर्माण, मस्तकाभिषेक, रथयात्रा आदि सभी धार्मिक आयोजन सम्मिलित है, इन्हें भक्ति भाव पूर्वक देखने, कराने और अनुमोदन करने से भी सम्यग्दर्शन की प्राप्ति बताई है।

पण्डित आशाधर जी ने सागर धर्मामृत में बताया है कि जो व्यक्ति एक चावल के बराबर भी प्रतिमा बनवाकर प्रतिष्ठित कराता है और एक जौ के बराबर भी मन्दिर बनवाता है, वह नियम से मुक्ति प्राप्त करेगा। मूर्ति और मन्दिर का निर्माण आवश्यकता और उपयोगिता की दृष्टि से ही नही किया जाता उनके निर्माण के साथ व्यक्ति की भावना का गहरा सम्बन्ध है। जो व्यक्ति यह विचार कर मूर्ति और मन्दिर का निर्माण या प्रतिष्ठा कराता है कि इससे मेरे न्यायोपार्जित धन का सदुपयोग होगा, मेरे परिवारजनों में धार्मिक संस्कार बने रहेंगे, अनेक भव्य जीव यहाँ आकर और दर्शन-पूजन कर आत्म - कल्याण कर सकेंगे, उस व्यक्ति के इस धार्मिक कृत्य का किसी तर्क से विरोध नहीं किया जा सकता। ऐसे धर्मानुरागी प्रतिष्ठापक की निर्मल भावना के कारण मूर्ति अतिशय सम्पन्न बन जाती है।

प्रतिमा किस प्रकार प्रभावक और अतिशय सम्पन्न बनती है, इसमें प्रतिष्ठापक की निर्मल भावना तो मुख्य कारण है ही, किन्तु अन्य भी अनेक कारण हैं। जैसे -

(१) जिस शिला से मूर्ति निर्मित हुई है, वह निर्दोष हो।

(२) मूर्ति निर्माता शिल्पी निर्व्यसनी हो और मूर्ति के निर्माण-काल मे ब्रह्मचर्य का पालन करता हो और अभक्ष्य का भक्षण न करता हो।

(३) प्रतिष्ठाता व्रती हो और मूर्ति या मन्दिर में लगने वाला उसका धन न्यायोपार्जित हो।

(४) प्रतिष्ठाचार्य व्रती और निर्लोभी हो।

(५) प्रतिष्ठा सम्बन्धी मंत्रों का शुद्ध उच्चारण हो तथा सूरि मंत्र महाव्रती मुनि या आचार्य द्वारा दिया गया हो।

(६) मूर्ति की दृष्टि वेदी मे विराजमान होने के पश्चात शुभ फल वाली आय पर पड़ती हो।

(७) वेदी के नीचे जमीन में हड्डी आदि अपवित्र वस्तु न हो

(८) मन्दिर ओर आसपास का वातावरण धार्मिक हो, कषाययुक्त, हिंसायुक्त और विषय वासना युक्त न हो।

ये सब कारण हो तो मूर्ति सातिशय बन जाती है। वहॉ मनुष्य ही नहीं, देवगण भी दर्शन-पूजन को आते हैं। ऐसे मन्दिर में ऐसी मूर्ति के सामने बैठकर ध्यान करने से मन एकाग्र होता है और हृदय में अपार शान्ति का अनुभव होता है। **प्रस्तुत प्रतिष्ठापाठ आचार्य जयसेन के अनुसार तैयार किया गया है** । उसमे जो पाठ दिये गये वे भी जयसेन प्रतिष्ठापाठ से ही लिये गये है। इसमें संस्कृत और हिन्दी दोनों ही भाषाओं की पूजा दी गई हैं। इसमें ज्योतिष शास्त्र के अनुसार जो मुहूर्त विचार दिया गया है, वह बहुत उपयोगी है। इसमे आवश्यकतानुसार प्रतिष्ठा मयूख एवं वसुनन्दि प्रतिष्ठा पाठों से भी सहायता ली गई है।

इस पाठ मे कुछ स्थल विशेष उपयोगी प्रतीत होते है। तत्सम्बन्धी सूचनाओं पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। उदाहरणार्थ- प्रतिमा के माप के बारे में बताया है कि प्रतिमा विषम माप की बनवानी चाहिये। गृह चैत्यालय मे ग्यारह अंगुल से अधिक माप वाली प्रतिमा विराजमान नही करनी चाहिये। महावीर स्वामी, मल्लिनाथ और नेमिनाथ तीर्थंकरो को छोड़कर शेष इक्कीस तीर्थकरो में से किसी तीर्थकर की प्रतिमा

महोत्सवों के आयोजन बहुलता से हो रहे हैं जैन धर्म के प्रचार के लिये इन आयोजनों का रचनात्मक उपयोग किया जा सकता है। पंचकल्याणक प्रतिष्ठाओं में जो पात्र बनते हैं- जैसे इन्द्र-इन्द्राणी, तीर्थंकर के माता-पिता, ये सभी एक भवावतारी होते हैं। प्रतिष्ठाओं में इनके लिये बोली बोली जाती है। इस परम्परा को बदलना है यजमान (यज्ञनायक) की योग्यता बताते हुए उसका सबसे प्रथम गुण बताया है- पाक्षिकाचार सम्पन्न, इन्द्र के गुणों में बताया है- वह त्यागी, सम्यग्दृष्टि, जितेन्द्रिय होना चाहिये। इसी प्रकार माता-पिता की स्थापना करते हुए उन्हें सम्यग्दृष्टि, आसन्नभव्य और अर्जितपुण्य जैसे विशेषणों से संबोधित किया गया है। जैन समाज में अज्ञातकाल से यह आदर्श परम्परा चली आ रही है कि तीर्थंकर भगवान की स्थापना किसी जीवित प्राणी में नहीं की जाती, न कोई मनुष्य उनका अभिनय कर सकता है। तब उनके माता-पिता की कल्पना किसी मनुष्य या स्त्री में कैसे की जा सकती है। भगवान तीर्थंकर को गर्भ में धारण करने वाली माता जगजननी कहलाती है। एक सामान्य महिला में उस जगजननी का आरोपण करना अथवा स्थापना उचित नहीं है। इसलिये पेटिका में माता की अतदाकार स्थापना करना समीचीन है।

प्रस्तुत प्रतिष्ठापाठ कोई स्वतंत्र ग्रन्थ नहीं है। इसमें कई प्राचीन प्रतिष्ठा पाठों से पाठ संकलित किये गये हैं। इसके संकलन में पंडित गुलाबचन्द जी पुष्प ने बहुत परिश्रम किया है। उन्हें मेरा शुभाशीर्वाद।

कुन्दकुन्द भारती
दिल्ली

आचार्य विद्यानन्द
(प्रेषक बलभद्र जैन)

आशीर्वाद

भगवान वीतराग की द्वादशांग वाणी में एक उपासकाध्ययन नामक अंग है, उसमें प्रतिपादित विषय ही प्रतिष्ठा ग्रंथ है। पंचकल्याणक प्रतिष्ठा ग्रंथों में आचार्यो ने अनेक विषय प्रतिष्ठा विधानों के वर्णित किये हैं, जैसे - वसुनन्दी प्रतिष्ठा संग्रह, अकलंक प्रतिष्ठापाठ, इन्द्रनन्दी प्रतिष्ठापाठ, जयसेन प्रतिष्ठापाठ, आशाधर प्रतिष्ठा सारोद्धार, नेमिचन्द्र प्रतिष्ठा तिलक, अय्यपाय प्रतिष्ठा ग्रंथ आदि।

वर्तमान समय में अपनी-अपनी इच्छानुसार जो प्रतिष्ठापाठ जिन प्रतिष्ठाचार्यो को पसन्द आया वो प्रतिष्ठाचार्य उस ग्रंथ से प्रतिष्ठा करवाते हैं, जैसे- दक्षिणात्य प्रतिष्ठाचार्य नेमिचन्द्र प्रतिष्ठा तिलक से पंचकल्याणक विधि करवाते हैं। उत्तर भारत के कुछ प्रतिष्ठाचार्य तो ब्र. शीतल प्रसाद जी द्वारा संकलित प्रतिष्ठा पाठ से करते हैं तथा कुछ विद्वान जयसेन प्रतिष्ठापाठ से प्रतिष्ठा करवाते हैं। लेकिन जब तक सभी आचार्यो के प्रतिष्ठा पाठ सामने नहीं रखे जाए तब तक विषय एकांगी रहता है कहीं न कहीं कमी अवश्य होगी। सर्वांगी विषय तो तभी होता है जब सभी आचार्यो के विषयानुसार वर्णन किया जाये। सभी आचार्यो के प्रतिष्ठा ग्रंथों से संकलित करके प्रतिष्ठा संबंधी संपूर्ण विधि विधान सहित प्रतिष्ठा ग्रंथ पं. गुलाब चन्द्र जी 'पुष्प' टीकमगढ़ का आपके सामने आ रहा है। इसमें पुष्प जी ने अपने अनुभव का पूर्ण सदुपयोग किया है। पं. जी बहुत ही सरल स्वभाव के हैं, मेरा प्रथम परिचय मुजफ्फरनगर में हुआ उनसे निकटता हुई। आपके अन्दर गुरु विनय कूट- कूट कर भरी है। आप देव शास्त्र गुरु के सच्चे श्रद्धालु व्रती विद्वान हैं। आपने जो संग्रह किया है आगमानुसार है, यह प्रतिष्ठा ग्रंथ सर्वमान्य होगा। आपको मेरा बहुत-बहुत आशीर्वाद।

तारीख - १६-८-९० गणधराचार्य कुंथुसागर

श्री वीतरागाय नमः

जैन शासन में मूर्ति के आलम्बन से मूर्तिमान की पूजा का विधान मिलता है। वीतराग प्रतिमाओं की उपासना करके उपासक निजात्मा को वीतरागता के पथ की ओर ले जाने में सक्षम हो जाता है।

मूर्तियों में वीतरागता के संस्कार उन जिनेन्द्र के संस्कारों को, उन गुणों को आरोपित कर मूर्ति को संस्कारित किया जाता है। जिस विधि से पाषाण को भी भगवान का रूप दिया जाता है वह विधि प्रतिष्ठा (प्राणप्रतिष्ठा) कहलाती है।

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा की इष्ट विधि का विधान 'प्रतिष्ठापाठ' नाम से अनेकों आचार्यों व पंडितों ने विधिवत लिखा परन्तु आज सारी सामग्री उपलब्ध नहीं है और जो उपलब्ध है वह भी यत्र-तत्र बिखरी हुई नजर आती है। इस कारण प्रतिष्ठाचार्यों को पंचकल्याणक विधि यथाविधि कराने में परेशानियों का सामना करना पड़ता था।

पं. श्री गुलाबचन्द्र जी 'पुष्प' प्रतिष्ठाचार्य ने इस दुरूह कार्य में सबके लिए उपयोगी कार्य किया है। श्री जयसेनाचार्य, नेमिचन्द्राचार्य, वसुनन्दी आचार्य आदि के प्रतिष्ठा पाठों का संकलन कर **'प्रतिष्ठा रत्नाकर'** को तैयार किया है। आपने यह उपयोगी कार्य करके अनुपलब्ध आगम प्रमाणों को उपलब्ध कराया है। अतः हमारा आपके लिए आशीर्वाद है। आप भी अपने जीवन को तपाग्नि में संस्कारित कर मुक्ति-पथ की ओर अग्रसर होवें।

श्री दि. जैन सिद्धक्षेत्र अहार जी **उपाध्याय भरतसागर**
दि० १.२.१९९२ शनिवार

शुभाशीर्वाद

पाषाण को भगवान बनाने की, अपूज्य को पूज्य बनाने की, मूर्ति में मूर्तिमान को स्थापित करने की कला, विद्या और विधि का नाम ही श्रीमज्जिनेन्द्रपंचकल्याणक प्रतिष्ठा है। यह एक संस्कार भी है जिसके द्वारा अचेतन मूर्तियां संस्कारित हो अनेक असंस्कारित चेतनों को भी संस्कारित करती हैं। जिनके पावन दर्शन मात्र से ही सुख, शान्ति और आनंद की संवेदनायें प्रारंभ हो जाती हैं। वे सम्यक्त्वोत्पादक भव्य प्रतिमायें अवाक् पारमार्थिक उपदेश भी देती हैं।

तद्विषयक निर्ग्रंथ दिगम्बराचार्यो द्वारा प्रणीत अनेक ग्रंथ हैं उनमें से प्रतिष्ठाचार्य पं. श्री गुलाबचन्द्र जी 'पुष्प' ने शताधिक प्रतिष्ठाओं के अनुभव से संपूर्ण विधि विधान सहित सुसज्जित करने का प्रयास किया है।

निष्पक्षभाव विशालतम दृष्टिका संकेत है तथा अन्यूनमनतिरिक्तम् भाव आगम निष्ठा और उसकी अखण्डता का प्रतीक है। तदुनसार मेरा उन्हें शुभाशीर्वाद है। वे भविष्य
में भी पारमार्थिक कार्य करते हुये अपने पथ को प्रशस्त करते रहें।

ॐ नमः।

फाल्गुन अष्टान्हिक २५२१
टीकमगढ़

आचार्य विरागसागर

श्री शान्तिनाथाय नमः

'मंगलं बिम्बनिर्मितं'

विचारों में अनेकान्त, वाणी में स्याद्वाद, आचार में अहिसा व्यवहार में अपरिग्रह के शाश्वत सिद्धांत का अमृत स्नान कराने वाले जैन शासन के अंतिम तीर्थकर भगवान महावीर स्वामी के वीतरागमयी शासन में विविध जैनाचार्य हुए हैं। हमारे आत्मानुभवी दिगम्बराचार्यो ने भव्य जीवों की आत्मा के चरमोत्कर्ष हेतु विविध धर्मग्रन्थों की रचनायें की। अर्हद्भक्ति हेतु हमारे लब्धप्रतिष्ठित आचार्यो ने जिन बिम्बों एवं जिनायतनों का नव-निर्माण कराकर मिथ्यात्व के गहन अंधकार से सम्यक्त्व के प्रकाश में पवित्र आचार-विचारों से परिपूर्ण नैष्ठिक श्रावक धर्म धारण हेतु विविध प्रतिष्ठा-पाठों की रचना की है। आज भारतवर्ष में जगह-जगह नवीन जिनायतनों का निर्माण हो रहा है। समय-समय पर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सवों का विशाल आयोजन भी हुआ करता है। पिछले कई वर्षो से एक ऐसे प्रतिष्ठा पाठ की आवश्यकता थी जिसमें प्रतिष्ठा विधि-विधान के साथ ज्योतिष का भी विषय समाहित हो। इस अभाव को दूर करने हेतु श्रीमान् वाणीभूषण, प्रतिष्ठाचार्य गुलाबचन्द्र जी शास्त्री 'पुष्प' जी ने अथक श्रम करके एक नवीन प्रतिष्ठा पाठ का आकर्षक संकलन किया है। हमने उसकी फोटोस्टेट कापी आद्योपांत सूक्ष्म दृष्टि से देखी है। संस्कृत भाषा के साथ-साथ आपने हिन्दी पद्यानुवाद भी इसमें दिया है। जिसका प्रकाशन अतिशीघ्र होने जा रहा है। मैं वाणीभूषण प्रतिष्ठाचार्य श्रीमान् गुलाबचन्द जी 'पुष्प' को अपना पुण्य पीयूषवाणी शुभाशीर्वाद प्रदान करता हूँ। इनकी भावना उत्तरोत्तर जिन शासन की पुण्य प्रभावना में बनी रहे। पंचम काल में भव्य जीवों की आत्मा के उत्थान हेतु एक मात्र भगवद्भक्ति ही ऐसा सुगम मार्ग है। जिस पर चलकर वे अपनी आत्मा को समीचीन धार्मिक संस्कारो से संस्कारित कर अपनी आत्मा को सिद्ध शिला पर पहुंचने की पात्रता बना सकते हैं। प्रतिष्ठा ग्रन्थ के माध्यम से प्रतिष्ठाचार्य गण निरतिचार जिनबिम्बप्रतिष्ठा करायें यही मंगल कामना है।

शुभाशीर्वाद
आनन्द सागर मुनि

दिल्ली-६

शुभकामना

पंडित प्रवर गुलाब चन्द्र जी 'पुष्प' द्वारा संकलित **'प्रतिष्ठा रत्नाकर'** ग्रंथ की विषय सूची देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि जैसे सारी प्रतिष्ठा विधि हृदयंगम कर ली हो। मेरा आगम अभ्यासी प्रतिष्ठाचार्यो से निवेदन है कि 'प्रतिष्ठा रत्नाकर' के गूढ़ रहस्य को समझकर प्रतिष्ठाविधि करते हुये पण्डित पुष्प जी की महान मेहनत को सफल बनावें।

मेरी भगवान से यही प्रार्थना है कि पंडित जी का ज्ञान उत्तरोत्तर बढ़ता रहे यही शुभकामना है।

दिनांक ४.३.९४ **ब्र. सूरजमल जैन**
निवाई (टौंक) राजस्थान

अखिल भारत वर्षीय दिग. जैन विद्वत्परिषद् ने एक सर्वमान्य प्रतिष्ठा पाठ के प्रकाशन का विचार किया था। तदनुसार समाज के मान्य प्रतिष्ठाचार्य संहितासूरि पं. नाथूलाल जी शास्त्री इन्दौर और वाणीभूषण प्रतिष्ठा दिवाकर पं. गुलाब चन्द्र जी 'पुष्प' ने प्रतिष्ठा पाठ का संकलन किया था। कुछ विचार विषमता के कारण विद्वत्परिषद् इन संकलनों के प्रकाशन की व्यवस्था नहीं कर सकी। इनमें से पं. नाथूलाल जी शास्त्री के द्वारा संकलित प्रतिष्ठा प्रदीप इन्दौर से प्रकाशित हो चुका है और पं. गुलाब चन्द्र जी के द्वारा संकलित 'प्रतिष्ठा रत्नाकर' प्रीत विहार, दिल्ली से प्रकाशित हो रहा है। आशा है समाज में प्रतिष्ठा जैसे महान पुण्यवर्धक कार्य को सम्पन्न करने वाले प्रतिष्ठाचार्य विद्वान इन प्रकाशनों से लाभान्वित होंगे। समाज में प्रचलित आम्नाओं के अनुसार कुछ क्रियाओं में मतभेद अवश्य है पर उसे संघर्ष का कारण न बनाकर जिन धर्म की प्रभावना का ही अंग बनाया जावे, यह मेरी भावना है।

श्री वर्णी दि. जैन गुरुकुल
जबलपुर (म.प्र.)

डॉ. पन्नालाल जैन,
साहित्याचार्य (सागर)

मन्दिर निर्माण विधि [१]

शुद्धे प्रदेशे नगरेऽप्यटव्यां नदीसमीपे शुचितीर्थभूम्याम् ।
विस्तीर्णश्रृंगोन्नतकेतुमाला विराजितं जैनगृहं प्रशस्तम् ।।

शुद्धे मुहूर्ते किल वास्तुशान्तिं विधाय सीमानमकालदोषम् ।
खनेत्सुवर्णोद्धृतयंत्रपीठं निवेश्य तद्द्वारसमीपवर्ति ।।

स्थानं परीक्षां च दिशां च साधनं वस्त्वर्चनं मंडललेखनार्चने ।
ग्रावानिवेशो भुवनस्य लक्षणं शैलानयश्चेति तदष्टधा मतम् ।।

जलाशयारानसमग्रशोभा वल्मीकजंतुप्रविचारवर्ज्या ।
कीलास्थिदग्धाश्मविवर्जिताभूरत्र प्रशस्या जिनवेश्मयोग्या ।।

तत्राध्वरं गर्तमधः खनित्वा तद्दोषवर्ज्यं यदि तेन पांशुना ।
प्रपूरयेन्न्यूनसमाधिकेषु भंगं समं लाभ इति प्रशस्यते ।।

सीम्नि प्रखाते प्रथमं शुभेऽह्नि घृतोद्भवं दीपमुपांशुमंत्रैः ।
संयोज्य ताम्रे कलशे पिधाय न्यसेत् सयंत्रं कनकं तदूर्व्याम् ।।

व्यपोहनं नो लभते प्रदीपस्तथाद्दषद्भिः खनितोर्ध्वकुड्ये ।
नयेद् व्रतारंभनिवेदनादिकर्ता विदध्याज्जनसाक्षियुक्तम् ।।

तत्स्थानवासान्निखिलान्सुरादीन् संतोष्य पंचेशसुमंडलेन ।
पूजां विधायेतरदीनजंतून् सन्मानयेत्कारुणिको महात्मा ।।

चैत्रादिमासे विषुवं प्रसाध्य दिग्मूढतापोहनपूर्वमत्र ।
मुखं तु शक्रोत्तरपश्चिमासु कुर्याज्जिनेशालयकस्य मुख्यम् ।।

तत्क्षेत्रं पंचविंशत्यवधिपरिमितं संविभज्यात्र मध्ये ।
निध्यंशे मध्यकोष्ठे जिनपतिनिलयं पार्श्वयोः सिद्धपाठ्यौ ।।

आचार्यश्चोर्ध्वभागे तदितरगृहयोरागमो धर्मतीर्थ -
मग्रे साधुर्विधानालययजनपरिष्कारगेहं निवेश्यम् ।।

पूर्वोत्तरं दक्षिणमस्य कार्यं द्वारं तथा पूर्वदिशासु नृत्य -
गीतालयं चोत्तरमर्थशास्त्रसद्वाचनागेहमतः प्रशस्तम् ।।

पाश्चात्यभागे द्रविणालयादिविद्यालयं दक्षदिशिप्रदक्षिणा ।
जिनालयादेः परितोऽत्र कार्या प्राचीनयंत्रोपमसंनिवेशतः ।।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक १२७ से १४१

कल्याणको के महोत्सव सम्पन्न किए थे - तदनुसार मूर्तियो की प्रतिष्ठा भी इन पंचकल्याणको के रूप मे की जाने की परम्परा है। किसी योग्य व्यक्ति को सौधर्मइन्द्र का पद देकर बड़े समारोह से जनसमुदाय के सहयोग से मूर्ति प्रतिष्ठा की जाती है। प्रतिष्ठा की विधि पूर्वाचार्यो द्वारा लिखित पाई जाती है पर सर्वसाधारण विद्वान संस्कृत भाषा से परिपूर्ण अभिज्ञ न होने से उनका कुछ सरलीकरण किया गया है। जनता के आकर्षण के लिए उसे कुछ लोगो ने अभिनय का रूप भी दे दिया है। इस लोक रंजन की भावना से और प्रतिष्ठा के महत्त्व को न जानकर कुछ विसंगतियां भी पाई जाती है।

वर्तमान समय मे आचार्य जयसेन के प्रतिष्ठा पाठ को सामने रखकर तदनुसार मूर्ति प्रतिष्ठा विधि *का यह ग्रंथ 'श्री पं. गुलाबचन्द्र जी 'पुष्प' टीकमगढ' ने शताधिक प्रतिष्ठाओ* के अनुभव अनुसार लिखा है जो पाठको के सामने है इस ग्रन्थ मे प्रतिष्ठा विधि संबंधी सभी विषयों का सांगोपांग वर्णन है। ग्रन्थ के प्रारंभ मे प्रतिष्ठा का लक्षण, प्रतिष्ठाचार्य का लक्षण, इन्द्र स्थापना, मंदिर निर्माण की विधि का मुहूर्त आदि सभी आवश्यक बातो का विचार किया गया है।

प्रतिष्ठाओं मे प्रतिष्ठा के पूर्व उनके माता-पिता सौधर्म इन्द्र तथा उनकी इन्द्राणी, कुबेर, लौकातिक देव, माता की सेवा करने वाली देवियां आदि पात्रो की स्थापना मंत्र पूर्वक अनेक सुयोग्य व्यक्तियो मे की जाती है, परन्तु चतुर्निकाय के देव तथा अन्य शासन देवताओ की स्थापना व्यक्तियों मे नही की जाती किन्तु चारो दिशाओ मे वेदिका के आसपास यथायोग स्थानो पर केवल पुष्प स्थापना कर उनकी स्थापना की जाती है।

इन्द्र अपने कार्य को सम्पन्न करने के लिए देवताओ को सहयोग के लिए आमन्त्रित करता है और इसलिए इन सबकी स्थापना कीजाती है। सौधर्म इन्द्र इन्हे आमंत्रित कर उनके करने योग्य कार्यो के करने की आज्ञा देता है। इन सब कार्यो के करने मे जो एक बडी भूल हो रही है उसकी ओर मैं सभी प्रतिष्ठाचार्यो का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। वह इस प्रकार है कि जो व्यक्ति पात्र के रूप मे नियत होता है वह तो इन्द्र की आज्ञा को शिरोधार्य कर इस पुण्य पंचकल्याणक महोत्सव मे अपना नियोग पूर्ण कर पुण्य लाभ करता है, परन्तु जिन शासन-देवताओ की स्थापना केवल पुष्प के द्वारा या अन्य प्रकार से वेदिका मे यथायोग्य स्थानो मे की जाती है उन्हे सौधर्म इन्द्र के द्वारा अर्घ चढवाया जाता है।

यह जिनेन्द्र भगवान का पंचकल्याणक है और एक भवावतारी सौधर्मइन्द्र के द्वारा उन शासन देवताओं को जिनको कि जैन ग्रन्थो मे मिथ्यादृष्टि कुल से आकर उत्पन्न

होना लिखा गया है, उनको अर्घ प्रदान करना भयंकर भूल है।

यद्यपि प्रतिष्ठा पाठों मे उनको '**अर्घ्य गृहाण गृहाण**' इन शब्दों के द्वारा जो अर्घ देने की बात लिखी है वह इस अभिप्राय से लिखी है कि जैसे हम लोग पूजा के अंत मे जयमाला पढते समय उपस्थित समुदाय को अर्ग देकर पूजा में शामिल होने का उन्हे शुभ अवसर देते हैं इसी प्रकार इन्द्र ने जिन सेवको को (देवों को) उन कल्याणको मे अपना अपना नियोग (कार्य) करने की आज्ञा दी है वह उन्हे भी भगवान की पूजा मे सम्मलित कर पूजा करने का शुभ अवसर देता है न कि उनकी पूजा करता है।

जिनागम के अनुसार भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिष देव इन तीनो निकायो मे कोई सम्यक् दृष्टि जीव जन्म नहीं लेता किन्तु उनमे ऐसे समारोहो के प्रसंग पर किसी को सम्यक् दर्शन हो भी सकता है, तथापि इन्द्र जैसी उत्कृष्ट पदवी के धारक सुरेन्द्र के द्वारा अपने उन सेवको को अर्घ देकर उनको जिनेन्द्र की तरह मंत्र बोलकर बराबरी से अर्घ प्रदान करने की क्रिया जिनागम के सर्वथा विरुद्ध है। सरागी देवता होने से जिनागम मे उनकी पूजा स्वयं निषिद्ध है।

यदि जैसे प्रतिष्ठा के इन्द्रादि पात्रो की स्थापना योग्य व्यक्तियो में की जाती है इसी प्रकार इन शासन देवताओ की स्थापना भी योग्य व्यक्तियों में की जाये तो कोई भी सौधर्म इन्द्र बनने वाला व्यक्ति उनको अर्घ-दान कर पूजा नहीं करेगा, उसका स्वयं विवेक जागृत होगा और ये विसंगतियां स्वयं दूर हो जावेगी। आशा है प्रतिष्ठाचार्यो का ध्यान इस भूल के संशोधन की ओर जायेगा। इस प्रतिष्ठापाठ मे जिनागम के अनुकूल पूजा पाठ का ध्यान रखा गया है इसके लिए प्रतिष्ठाचार्य श्री गुलाबचंद जी 'पुष्प' धन्यवाद के पात्र हैं।

एक विषय प्रतिष्ठाचार्यो के लिए ओर भी विचारणीय है। भगवान के पांच कल्याणक हो जाने पर वह मूर्ति सिद्धपरमेष्ठी की हो जाती है। अरिहंत परमेष्ठी के चार ही कल्याण होते हैं पर हम अरिहत परमात्मा की प्रतिमा मानकर मंदिरो मे स्थापित करते हैं यह परंपरा उत्तर-भारत मे चली आ रही है। जहां तक मुझे ज्ञात है दक्षिण भारत के प्रतिष्ठाचार्य केवल चार कल्याणक करते है।

बुंदेलखण्ड मे 'गजरथ' के साथ प्रतिष्ठा होती है और गजरथ केवली भगवान के विहार का प्रतीक है ऐसी स्थिति में यह विचारणीय हो जाता है कि प्रतिमा के पांचो कल्याण हो जाने के बाद विहार की क्रिया कैसे संगत है। यह विषय भी विद्वानों के लिए विचारणीय है।

इस संबंध में मेरा यह सुझाव है कि सभी पक्ष के विद्वान एवं प्रतिष्ठाचार्यों की एक सम्मलित गोष्ठी हो और उसमे इन विषयों पर आगमानुकूल विचार कर निर्णय लिया जावे।

मेरा एक सुझाव यह भी है कि जिस प्रकार न्याय, धर्म, व्याकरण आदि की परीक्षाए उत्तीर्ण होने पर ही विद्वान परीक्षा के अनुसार शास्त्री या आचार्य पद को प्राप्त करता है इसी प्रकार प्रतिष्ठाचार्य परीक्षा का भी परीक्षालयो मे कोर्स रखा जाये और परीक्षा उत्तीर्ण होने पर उन्हे किसी प्रतिष्ठित निपुण प्रतिष्ठाचार्य के पास कार्य करने की पद्धित की ट्रेनिंग लेना भी आवश्यक है माना जाय और ऐसे ही व्यक्तियो को प्रतिष्ठाचार्य माना जाये तथा उनके द्वारा ही प्रतिष्ठा के कार्य सम्पन्न हो तो प्रतिष्ठा मे भी एक रूपता आ सकती है और कार्य भी आगमानुकूल सुचारु रूप से सम्पन्न हो सकते है ऐसी मेरी विद्वानो से विनय है।

प्रस्तुत प्रतिष्ठा पाठ मैने एक बार देखा है और वर्तमान मे उसकी सूची मेरे पास उपलब्ध है इसलिए मैं 'पुष्प' जी के इस कार्य की सराहना करता हू। उनकी यह कृति उनके कल्याण के लिए हो।

श्री महावीर उदासीन आश्रम

कुंडलपुर - २ अक्टूबर १९९२ **जगन्मोहन लाल शास्त्री**

सम्पादकीय

हमे प्रसन्नता है कि जिस कृति की हमारे पाठकगण और प्रवुद्ध विद्वज्जन चिर समय से प्रतीक्षा कर रहे थे वह अब उनके समक्ष है। वास्तव मे किसी विशिष्ट रचना के तैयार करने मे उसके लेखक को समय लगता है, यह वे जानते हैं।

आज हमे प्रसन्नता है कि संहितासूरि, प्रतिष्ठाचार्य पण्डित गुलाब चंद्र जी 'पुष्प' टीकमगढ़ द्वारा, जो सौ से ज्यादा प्रतिष्ठाऐ करा चुके हैं और जिन्हें पैतृक-परम्परा से प्रतिष्ठा सम्बंधी अनुभव प्राप्त है। उनका अभिनव प्रतिष्ठाग्रंथ प्रकाश में आ रहा है, यह भी सरस्वती के भण्डार को समृद्ध करेगा। साथ ही उनके यश को बढ़ायेगा। पुष्प जी ने तेरहवीं शताब्दी के विश्रुत आचार्य जयसेन के संस्कृत **'प्रतिष्ठापाठ'** को अपने प्रतिष्ठाग्रंथ का आधार माना है। इसमें संदेह नहीं कि आचार्य जयसेन का प्रतिष्ठापाठ शताव्दियो से वहुप्रचलित रहा है। पण्डित आशाधर जी ने अपने जिनयज्ञकल्प का उसे मूलाधार माना है। ब्र. शीतल प्रसाद जी ने उसका अनुसरण किया है और अपना प्रतिष्ठापाठ लिखा है।

पुष्पजी द्वारा कराई गयी कई जिनबिम्ब प्रतिष्ठाओ में सम्मिलित होने का मुझे अवसर मिला है। उनके विधि विधानो को देखकर मुझे शास्त्रीय प्रमाण बिना खोजे मिल गये।

प्रस्तुत कृति का नाम **'प्रतिष्ठा-रत्नाकर'** है, जो 'यथानाम तथा गुणः को चरितार्थ करता है। इसमे जैन संस्कृति मे निर्दिष्ट प्रायः सभी धार्मिक क्रियाओं एवं अनुष्ठानो का संयोजन/ आकलन किया गया है। मंगलाष्टक/मंगलपाठ से लेकर जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा तक की क्रियाओं का इसमे शास्त्रीय प्रमाणो के साथ विशद विवेचन किया गया है। सुयोग्य विद्वान प्रतिष्ठाचार्य ने प्रतिष्ठा एवं अनुष्ठान सम्बन्धी ऐसा कोई विषय नहीं छोड़ा, जिस पर उन्होने प्रकाश न डाला हो। बल्कि कई विषय तो ऐसे हैं, जो इस परम्परा मे नहीं है और अज्ञात चले आ रहे हैं। पर पैतृक परम्परा से वे उन्हे ज्ञात थे। यशस्वी कृतिकार ने उन्हे भी इसमें दिया है। अतएव इसे **'प्रतिष्ठा रत्नाकर'** नाम देना उचित एवं सार्थक है।

मंगलाष्टक का एक विचारणीय पदः

प्रत्येक धार्मिक क्रिया मंगलपाठ पूर्वक की जाती है। इस ग्रन्थ में भी मंगल पाठ के रूप मे मंगलाष्टक दिया गया हे। यह मंगलाष्टक जैन संस्कृति उत्सवो के आरम्भ मे अवश्य पढा जाता हे। इसमे सस्कृत-भाषा में निवद्ध नौ (९) पद्य हैं। इसके पॉचवें पद्य मे 'गणभृतः' (गणधरो) को 'कुर्वन्तु ते मंगलम्' पद्यान्त पद के द्वारा मंगल-प्रदाता

कहा गया है । इसमें 'गणभृतः' के छह विशेषणो मे एक विशेषण 'पंचज्ञानधराः' है, जिसका अर्थ है पॉच ज्ञान के धारक । किन्तु गणधर चार क्षायोपशमिक ज्ञानो के ही धारी होते हैं, पॉच ज्ञान के धारी नहीं, क्योकि पॉचवॉ ज्ञान 'केवलज्ञान' है और वह क्षयिक होता है तथा उक्त चार क्षायोपशमिक और यह एक क्षायिक केवलज्ञान एक साथ नहीं होते। फिर मंगलाष्टककार ने गणधरो को पंच-ज्ञानधारक कैसे कहा? भारतीय ज्ञान-पीठ से ई. १९५७ मे प्रकाशित और हिन्दी में अनूदित 'ज्ञानपीठपूजांजलि' मे भी उक्त विशेषण का अर्थ 'पॉच प्रकार के ज्ञान से सम्पन्न' यही किया गया है। ऐसी स्थिति मे मंगलाष्टककार की इस विसंगति अथवा भूल का क्या परिमार्जन हो सकता है?

जहॉ तक हम समझते हैं, मंगलाष्टक के इस पद मे पॉच ज्ञान क्रमशः विवक्षित हैं, युगपत् नहीं । आरम्भ में गणधरो के मति, श्रुत, अवधि और मनःपर्यय ये चार क्षायोपशमिक ज्ञान ही होते हैं । इसके बाद वे सर्वज्ञानी-केवल ज्ञानी होते है । आचार्य कुन्द कुन्द की 'योगि-भक्ति' गत निम्न गाथा से यही स्पष्ट जान पड़ता है-

आभिणिबोहि य सुद ओहिणाणि मणणाणि सव्वणाणी य।
वंदे जगप्पदीवे पच्चक्ख परोक्खणाणी य ।।

इस गाथा मे पॉच सम्यज्ञानों का उल्लेख हुआ है और उन्हे तत्त्वार्थ सूत्रकार की तरह प्रत्यक्ष तथा परोक्ष ज्ञानों मे विभक्त किया है। यहॉ आभिनिबोधिज्ञान मतिज्ञान को कहा गया है। ये पॉचो विशिष्ट ज्ञान योगियो के होते हैं और गणधर अनेक ऋद्धियो तथा अष्टांग महानिमित्तों से युक्त होने से योगी ही हैं । अतः क्रम की अपेक्षा गणधरो को पांच ज्ञान सम्पन्न कहा जाना असंगत नहीं है और न भूल है। भावीनय की विवक्षा से ऐसा कहा जा सकता है अथवा किसी प्रति मे 'चातुर्ज्ञानधराः' पद उपलब्ध हो तो वह अन्वेषणीय है। उस स्थिति मे इसी पद के साथ इसे पढा जाना चाहिए । तथा इसे ही शुद्ध पाठ समझना चाहिए ।

जिन-बिम्ब प्रतिष्ठा और स्थापना - निक्षेप :-

पदार्थो को जानने के लिए जहॉ प्रमाण और नय तथा उनके भेद-प्रभेदो का निरूपण किया गया है वहॉ उनका सम्यक् व्यवहार एवं अव्यभिचार के हेतु अर्थात् अमुक को अमुक ही व्यवहृत करने के लिए चार निक्षेपो/किसी में किसी को रखने का कथन किया गया है। जैनागम का बहुश्रुत ग्रन्थ तत्त्वार्थ सूत्र है । उसमे कहा है - **'नामस्थापना द्रव्यभावतस्तन्न्यासः'** (१) - अर्थात् उन जीवादि एवं सम्यक्दर्शन आदि का नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव इन चार से न्यास /निक्षेप होता है। तात्पर्य यह है कि उनका इन चार के द्वारा व्यवहार विशेष होता है ।

(१) तत्त्वार्थ सूत्र अध्याय १ सूत्र ५

दिखाई नही देगा । आशा है वे अपने चिन्तन पर गहराई से पुनः विचार करेगे ।

कृतिकार प्रतिष्ठाचार्य पं. गुलाबचन्द जी 'पुष्प':

इस महत्वपूर्ण कृति के रचयिता आदरणीय 'पुष्प' जी है, जो जैन समाज के लब्ध प्रतिष्ठ प्रतिष्ठाचार्य हैं और जिन्होने शताधिक प्रतिष्ठाएँ कराके विपुल यश प्राप्त किया है। लाखो लोगो की उपस्थिति मे उनके द्वारा ये प्रतिष्ठाएँ हुई हैं तथा वाणी भूषण, प्रतिष्ठा रत्ना संहिता सूरि प्रतिष्ठा दिवाकर जैसी उपाधियॉ और सम्मान प्राप्त किया है। आपका व्यक्तित्व प्रभावक और आकर्षक है। प्रतिष्ठा कराने की आपकी पद्धति अत्यन्त निराली है। सुयोग्य प्रवक्ता होने के साथ-साथ मंच से भाषण देने मे भी कुशल हैं।

चारित्र तो आपके जीवन का प्रधान अंग है। हम इस कृति के लिए उन्हे हार्दिक बधाई देते हैं ।

१५ जनवरी १९९६
बीना (इटावा)
सागर म०प्र०

पं० (डा०) दरबारी लाल कोठिया
सेवानिवृत्त रीडर
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय - वाराणसी

पंच कल्याण बनाम शिलापुत्र का जन्म

-उपाध्याय गुप्तिसागर मुनि

सहज प्रश्न हैं, पच कल्याणक क्यों? जब हम समाधन पाने प्रश्न की तह मे उतरकर इतिहास का अवलोकन करते हैं, तो पाते है कि "पंच-कल्याणक प्रतिष्ठा विश्व शान्ति महायज्ञ" विश्व कल्याण एव विश्व शान्ति की दृष्टि से किया जाता था, है क्योंकि प्रतिष्ठा विधान मे अनेक विधियाँ एवं मंत्र विश्व कल्याण/क्षेम की शुभकामनाओ से भरे हुए है। पंच कल्याणक के क्रिया कलाप न केवल शिलापुत्र (वीरसेन स्वामी ने मूर्ति को शिलापुत्र कहा है) को जीवन्त और पूज्य पद प्रदान करते है प्रत्युत जैन दर्शन की महती प्रभावना करते हुए सम्यग्दर्शन की उत्पत्ति, वृद्धि तथा स्थिति का प्रबल सशक्त कारण भी बनते है। ये धार्मिक क्रिया-कलाप अनेक जीवों मे जहाँ एक ओर धार्मिक संस्कारों का बीजारोपण करते है, वही दूसरी ओर प्रतिष्ठित प्रतिमाओ मे अद्भुत चमत्कारिक शक्तियाँ भी उद्भूत करते है बशर्ते सम्पूर्ण क्रियाएँ क्रिया विधि एवं पूर्ण शुद्धता के साथ सम्पन्न होती हुई आडम्बरों से अस्पर्शित हो।

जब तक पूर्ण शुद्धि, सम्पूर्ण विधि-विधान, श्रद्धा, न्यायोपात्त द्रव्यादि, प्रतिष्ठेय मूर्ति की निर्दोषता एवं प्रतिष्ठा पात्रों को प्रतिष्ठा विधानानुसार ध्यान नहीं रखा जाता तब तक प्रतिष्ठा अधूरी है, क्योकि प्रतिष्ठाचार्य का मंत्र, तंत्र, विधि, वास्तुविद्या, शकुन निमित्त, ज्योतिष प्रभृति विषयक तलस्पर्शी ज्ञान प्रतिष्ठेय प्रतिमा मे चमत्कार उत्पन्न करने की जितनी महत्वपूर्ण अपेक्षा रखता है, उतनी ही प्रतिष्ठा पात्रो की योग्यता भी। वस्तुत प्रतिष्ठा जैसे गुरुतर कार्य के लिए पल्लवग्राही पांडित्य से काम नहीं चल सकता है।

धातु या पाषाण की मूर्ति में 'जिनेन्द्र' की स्थापना, प्रतिष्ठा बच्चो का खेल नही है। प्रतिष्ठा के लिए कुछ ऐसे विशिष्ट तत्व है जिन्हे आज अनदेखा किया जा रहा है।

1. सर्वप्रथम कुभ स्थापना, कुंभ यात्रा स्वर्ण सौभाग्यवती महिलाओ द्वारा होनी चाहिए। जिनके माता-पिता, सास-श्वसुर जीवित है एव जो पुत्रवती भी हो।
2. तीर्थकर मुनि की दीक्षा के दिन यजमान, इन्द्र, इन्द्राणी एवं अन्य पुजारी लोगो को उपवास रखना चाहिए। अगले दिन विधिपूर्वक तीर्थकर मुनि के आहार के पश्चात् उन्हे पारणा करना चाहिए।

जैसा कि जयसेन प्रतिष्ठा पाठ मे दृष्टव्य है—

तत्रोपवासं मघवा तथार्यो यज्वा शची चान्यमहे नियुक्ताः।
विदध्युरुर्ध्वे विधिना हि मध्य दिने जिनाग्रे चरुपूजनानि।।
तदेव पंचादभुतवृष्टिरग्रे विम्बस्य पुष्पांजलिना समेता।
योज्या ध्वनि तूर्य गणैर्विधाय भुंजीयुरन्यानपि भोजयित्वा।

3 तीर्थंकर मुनि ऋषभदेव को युवराज श्रेयास, राजा सोमप्रभ एवं रानी लक्ष्मीमती ने केवल तीन अंजलि इक्षु रस द्वारा आहार विधि सम्पन्न कराई थी। ऋषभदेव

के अलावा शेष तीर्थकर मुनियों ने केवल क्षीरान्न (खीर) द्वारा ही प्रथम पारणा की थी, किन्तु आज कितनी विडम्बना है कि तीर्थकर मुनि के समक्ष सभी प्रकार के फलादिक का आहार दिया जाता है, जो लौकिक दृष्टि से भी तीर्थ प्रवर्तक के अनुकूल नहीं है।

४. प्रतिष्ठाचार्य को तीर्थकर मुनि की नाभि मे तिलक दान कराते समय यह स्मरण रखना चाहिए कि तिलक दान की केशर आदि सामग्री स्वर्ण सौभाग्यवती शचि या अन्य इन्द्राणी से पिसवाये।

इत्यादि ऐसी कई महत्वपूर्ण बातें है जिनका ध्यान प्रतिष्ठाचार्य को अवश्य रखना चाहिए। जैन समाज मे प्रतिष्ठा लब्ध पं. गुलाब चन्द पुष्प जी सुलझे एव विवेकी प्रतिष्ठाचार्य हैं। इन्होने कोई परीक्षाए उत्तीर्ण नही की, अपितु

आचार्य पादमाचष्टे पाद. शिष्य· स्वमेधया।
तद्विज्ञसेवया पाद· पाद. कालेन पच्यते।।

धवला ग्रन्थ के टीकाकार आचार्य वीरसेन महाराज के इस श्लोकानुसार पुष्प जी ने प्रतिष्ठा का एक पाद अपने पिता (गुरु) श्री मन्नू लाल जी से, प्रतिष्ठा का द्वितीय पाद अपनी बुद्धि से, तृतीय पाद पं. पन्नालाल जी सागर, पं. नाथू लाल जी शास्त्री संहिता सूरि इन्दौर, पं जगन्मोहन लाल शास्त्री कटनी आदि विद्वानो के सान्निध्य से एवं चतुर्थ पाद का ज्ञान अपनी बढती हुई उम्र के तजुर्बों से हासिल किया। परिणामस्वरूप आगम ग्रन्थों एव प्रतिष्ठा ग्रन्थो का विशेष अध्ययन आलोडन तथा परम पूज्य आचार्य प्रवर श्री विद्यासागर जी गुरुवर के सान्निध्य मे अनेकश· प्रतिष्ठा कराकर उनसे प्राप्त निर्देशों/सुझावों के आधार पर 'प्रतिष्ठा रत्नाकर' को नवनीत के रूप मे निकालकर जैन समाज को एक सुन्दर कृति उपलब्धि भेट की है। उनके इस सत्प्रयत्न के लिए मेरा बहुत–बहुत आशीर्वाद।

इस ग्रन्थ के मूल प्रेरणा स्रोत दिगम्बर आकाश मे चमकते सूर्य हमारे गुरुवर्य आचार्य प्रवर श्री १०८ विद्यासागर जी महाराज है। ग्रन्थ वृहद् काय है। समग्र प्रतिष्ठा विधि विधान को अपने में समेटे हुए है। दिल्ली एवं अतिशय क्षेत्र बहलना, मुजफ्फरनगर में जब–तब पंडित जी एवं पं. जय कुमार ने पाण्डुलिपियां दिखाई, चर्चाए कीं तथा तीन बार उनकी प्रतिष्ठा कियाए भी जीवन्त देखी। इसके प्रकाशन का प्रसग मेरे सामने आया। प्रीत विहार प्रतिष्ठा पच कल्याणक समिति एव सम्पूर्ण दिगम्बर जैन समाज प्रीत विहार प्रतिष्ठा हेतु आग्रह लेकर बार–बार आ रहे थे। मैने 'प्रतिष्ठा रत्नाकर' की ओर संकेत किया–सुभाष ! यह प्रकाश मे आना चाहिए। प जी का जीवन भर का परिश्रम है। समाज के अध्यक्ष सुभाष जी मेरा आशय समझ गए और कहा –आपकी आज्ञा शिरोधार्य है कहते हुए प्रकाशन का कार्यभार ले लिया, एवं मुद्रण मे धर्मानुरागी श्याम सुन्दर अग्रवाल (प्रभात प्रकाशन) ने जो तत्परता, श्रद्धा और गुरू भक्ति का परिचय दिया वह प्रशंसनीय है। चि० सजय जैन को आशीर्वाद जिसकी अथक तत्परता ने इसे अत्याल्पावधि मे प्रकाश मे लाया।

अन्त मे इस महान पुण्य को अधीत करने वाले महानुभावो को बहुत बहुत आशीर्वाद।

प्रकाशकीय

धर्म एक तुला है जो हमारे जीवन, परिवार, समाज, राष्ट्र और देश को सन्तुलित बनाए रखती है। धर्म विश्वप्रेम, विश्व शान्ति और परस्पर सहिष्णुता का भावक है।

धर्म एक दीप स्तम्भ है, धर्म की रोशनी मे चलने वाला कभी अन्धकार मे नहीं भटक सकता क्योकि धर्म की प्रभा अधर्म के मार्ग पर नही पडती। वस्तुत धर्म ही व्यक्ति को सत्कर्म की ओर प्रेरित करता है। धर्म ही उसकी असली पूजी है। अत इसी धर्म भावना से प्रेरित होकर प्रीत विहार जैन समाज ने मन्दिर निर्माण का निर्णय लिया। निर्माण कार्य प्रारम्भ हुआ वह अपनी गति से वर्षो चलता रहा पर उस प्रगति पर पग न पहुचा सका। जितना समय उसमे बीत चुका था। समय ने करवट बदली या कहिए अब उसका भी समय आ गया था।

मुझे यह लिखते हुए अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है जब जैन परम्परा के सूर्य आचार्य प्रवर श्री विद्यासागर जी महाराज के आज्ञानुवर्ती सुशिष्य परम तपोधन शाकार प्रवर्तक उपाध्याय मुनि श्री गुप्तिसागर जी ने हमे, हमारी समाज को हमारे आग्रह पर 'सर्वतोभद्र विधान' मे पधारने की पावन स्वीकृति प्रदान की। 'सर्वतोभद्र विधान' क्या हुआ, सारी दिल्ली एव आस–पास का परिसर चर्चित हो उठा, 'वाह क्या पूजा हुई।' हम सबको सोते से जगाया गुरुवर ने। गुरुवर्य के इस सहज उपकार के हम ऋणी है। जैसे ही गुरुवर्यो के आशीर्वाद से मुझे प्रीत विहार जैन समाज ने 'अध्यक्ष' बनाकर जिनालय की (निर्माण) सेवार्थ भेजा। उस कार्य को मै उन्ही सबके मगल आशीष से एव अपने साथी भाई श्री पदमचद महामत्री के पूर्ण सहयोग से अत्याल्पावधि में सम्पन्न करा सका। शास्त्रो मे वर्णित जिन मन्दिरो का स्वरूप और इस नव निर्मित महावीर जिन मन्दिर के रूप मे साम्यता पाकर मन जहा बाग–बाग हो उठता है वही ऐसे अपने मन्दिर की भव्यता को देखकर मस्तक गौरव से सहज ही ऊंचा हो जाता है।

हमारा परम सौभाग्य है जो इन विषम परिस्थितियो मे, दुषमा जैसे पचम कालिकाल मे भी दिगम्बर वीतराग सन्तो के दर्शन हमे मिल रहे है। उपाध्याय मुनि श्री गुप्तिसागर जी का हमारी प्रीत विहार जैन समाज पर बहुत–बहुत आशीर्वाद अनुकम्पा है। धर्मानुरागियो पर वीतरागी सन्तों का झुकाव सहज ही होता है। प्रीत विहार जैन समाज के अनुनय आग्रह पर १ फरवरी ६८ से ७

फरवरी ९८ मे आयोजित आदिनाथ पच कल्याणक प्रतिष्ठा मे हमे आपके पुनीत सान्निध्य की अनुमति मिल गई। प्रतिष्ठाचार्य का प्रश्न उठा तो गुरुदेव ने 'सर्वतोभद्र विधान' मे ही हमे सुझाया था कि प्रतिष्ठा प्रतिष्ठाचार्य प गुलाबचद 'पुष्प' टीकमगढ वालो से करायेगे। मेरे सान्निध्य मे उन्होने १९९३ मे कृष्णानगर दिल्ली मे प्रतिष्ठा की थी और अभी सोनीपत (हरियाणा) पच कल्याणक प्रतिष्ठा हेतु वे मेरी अनुमति ले गए है। प्रतिष्ठा विधि निर्दोष है, सुलझे विचारक हैं। अस्तु, निर्दोष विधि, मन्त्र न्यास, जैसी कियाए ही मूर्ति मे अतिशय पैदा करती है। गुरुदेव की प्रेरणा से हमारी समाज ने प्रतिष्ठाचार्य पुष्प जी को आमन्त्रित किया, उनकी सहज स्वीकृति भी हमे मिल गई, हमारी गतिविधिया आगे बढने लगी।

इस वर्ष १९९७ के चातुर्मास हेतु हम सभी लोग पूज्य महाराज श्री को 'निर्माण विहार' चातुर्मास हेतु हरिद्वार से दिल्ली लाये। चातुर्मास सम्पन्न हुआ, बीच–बीच मे हमे सकेत मिलते रहे। अभी विगत दिनो उपा श्री शास्त्री नगर मे पच कल्याणक महोत्सव मे अपनी पावन सन्निधि दे रहे थे। हम लोग प्रतिष्ठा हेतु उन्हें आमन्त्रित करने गए। तभी प्रतिष्ठा सन्दर्भ मे परम कारुणिक गुरुवर ने सुझाया। सुभाष जी ! प जी ने अनेकश प्रतिष्ठा शास्त्रो का आलोडन करके हमारे पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज की प्रेरणा से प्रेरित होकर 'प्रतिष्ठा रत्नाकर' का सकलन/सृजन किया है। पडित जी की इच्छा है इसका प्रकाशन हो जाये। वे सकल्पित है प्रतिष्ठा रत्नाकर के प्रकाशन के बाद प्रतिष्ठा कार्य का गुरुतर कार्य अपने प्रिय पुत्र चि ब्र जयकुमार 'निशान्त' को सौपकर अतिशीघ्र मुक्त हो जायेगे। मेरी इच्छा है प्रीत विहार जैन समाज अपने इस पच कल्याणक प्रतिष्ठा को चिर स्मरणीय रखने के लिए इसके प्रकाशन का 'पुण्य कार्य करे।'

हमारी सकल दिगम्बर जैन समाज एक बार फिर मुनि श्री के सहज कारुणिक उपकार से श्रद्धान्वित हो उठी ऐसे पुण्य कार्य की पवित्र प्रेरणा आदेश पाकर। उन्हीं की सत्प्रेरणा का सुफल है कि श्रद्धेय प 'पुष्प' जी के जीवन वृक्ष का एक और पुष्प 'प्रतिष्ठा रत्नाकर' का प्रकाशन पच कल्याण प्रतिष्ठा महोत्सव समिति 'प्रीत विहार दिल्ली के सौजन्य से हो रहा है। गुरूवर्य के चरणो मे नमन सहित मेरा विश्वास है इस 'प्रतिष्ठा रत्नाकर' का विद्वद्वर्ग मे समादर होगा।

अध्यक्ष
सुभाष जैन (F-8)
प्रीत विहार जैन समाज (पजी) दिल्ली–92

पुष्प जी: एक यशस्वी प्रतिष्ठाचार्य

पं० श्री गुलाबचन्द "पुष्प" इस शताब्दी के दिगम्बर जैन प्रतिष्ठाचार्यों में एक जाना पहिचाना नाम है। प्रायः निराडम्बर, पूर्णतः शास्त्रोक्त और प्रभावनापूर्ण प्रतिष्ठा महोत्सवों के लिये उन्हें विशेष प्रसिद्धि प्राप्त है। इस संदर्भ में साधु और श्रावक दोनों का विश्वास और सम्मान उन्हें प्राप्त है।

पुष्पजी स्वयं प्रतिष्ठाचार्य भर नहीं हैं। उन्हें एक प्रतिष्ठित प्रतिष्ठाचार्य का सुपत्र होने का सौभाग्य, और एक उदीयमान प्रतिष्ठाचार्य का पिता होने का भी गौरव प्राप्त है। पुष्पजी के पिता श्री पं० मन्नूलालजी अपने समय के माने हुए प्रतिष्ठाचार्य थे। वे सदा अपनी निष्ठा और निष्पृहता के लिये माने जाते थे। पुष्पजी ने उनसे प्रतिष्ठाचार्य बनने की प्रेरणा भी प्राप्त की और प्रशिक्षण भी प्राप्त किया। पुष्पजी के बड़े परिवार में उनके चतुर्थ पुत्र श्री जय निशान्त ने, पूज्य आचार्य श्री विद्यासागरजी के उपदेश-आदेशानुसार, फोटोग्राफी का शौकिया कार्य छोड़कर अपने पिता से इस विद्या की धरोहर सम्भालने का उद्यम किया है। उनकी कार्य-प्रणाली देख कर इस बात का विश्वास होता है कि जय निशान्त प्रतिष्ठाओं के क्षेत्र में अपने पू० पिता के नाम को, और अपने पिता के यश को वृद्धिगत ही करेंगे।

पुष्पजी को प्रतिष्ठा कार्यो का चालीस साल का विशद अनुभव है। १९५७ की श्री सिद्धक्षेत्र अहार की प्रतिष्ठा से लेकर आज तक एक सौ सोलह पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएँ पुष्पजी के द्वारा सम्पन्न हुई हैं जिनमें छियालीस गजरथ शामिल हैं। अन्य छोटे अनुष्ठान, वेदी प्रतिष्ठाओं, विधान पूजादिकों की तो गणना करना ही सम्भव नहीं है। उनके कार्यों की तालिका अपने आप में एक कीर्तिमान ही होगी।

पंचकल्याणकों की इस तालिका में अनेक नव-निर्मित जिनालयों की भी प्रतिष्ठा का गौरव पुष्पजी को प्राप्त है। द्रोणगिरि का चौबीसी जिनालय, हैदराबाद में केसरबाग का जिनालय तथा मानस्तम्भ, अशोकनगर का त्रिकाल चौबीसी मन्दिर, सिद्धक्षेत्र नैनागिरि का समवशरण मन्दिर, रैनबो विहार, वहलना मुजफ्फ़रनगर का सत्तावन फुट उत्तुंग मानस्तम्भ और गोसलपुर में सम्मेदगिरि, हस्तिनापुर के समवशरण मन्दिर तथा गाजियाबाद मे कविनगर के मन्दिर ऐसे ही धर्मायतन हैं जिनकी प्रतिष्ठा पुष्पजी के नाम पर दर्ज है।

उपलब्धियों के संदर्भ में कुछ महोत्सव तो इतने महत्वपूर्ण रहे हैं जो बीसवीं शताब्दी

के जैन इतिहास मे विशेष रूप से रेखाकित होते रहेगे। फिरोजाबाद मे स्व० सेठ छदामीलाल के द्वारा प्रतिष्ठित ४४ फुट ऊँची बाहुबली प्रतिमा और भगवान महावीर के प्रथम देशना स्मारक के रूप मे राजगिरि का विशाल जिनालय तथा उसकी मनोहर चतुर्मुख जिन बिम्ब और हस्तिनापुर के दो जिनालय तथा रजत और स्वर्ण प्रतिमाएँ आदि कुछ ऐसे ही उल्लेखनीय उत्सव है जिन्हे सम्पन्न कराने का गौरव पुष्पजी को प्राप्त है।

अनेक विश्रुत दिगम्बराचार्यों और मुनियों के पावन सान्निध्य मे प्रतिष्ठाएँ कराने का अवसर पुष्पजी को प्राप्त हुआ। उनकी शास्त्रोक्त पद्धति और अनुष्ठान–निष्ठा को सभी पूज्य आचार्यों और मुनिराजो की सराहना प्राप्त हुई है। मदनगज किशनगढ का गजरथ महोत्सव इस दृष्टि से उल्लेखनीय था। वह महोत्सव पूज्य आचार्य श्री विद्यासागरजी के पावन सान्निध्य मे सम्पन्न हुआ और उस अवसर पर पूज्य आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी तथा अजितसागर जी भी अपने विशाल सघ के साथ वहाँ विराजते थे। आचार्यश्री विद्यासागर जी के सान्निध्य मे सम्पन्न नैनागिरि की प्रतिष्ठा इस रूप मे भी उल्लेखनीय है कि वहाँ तप कल्याणक के दिन तेईसवे तीर्थंकर के समवशरण मे तेईस दीक्षाएँ सम्पन्न हुई थी। इनमे बारह आर्यिका दीक्षाएँ तथा ग्यारह क्षुल्लक दीक्षाएँ थीं। इन्ही आचार्यश्री के द्वारा नरसिंहपुर के पचकल्याण मे सात आर्यिका दीक्षाएँ प्रदान की गई। वह प्रतिष्ठा भी पुष्पजी के द्वारा ही कराई गई थी।

आचार्यश्री विद्यासागरजी के शिष्य समुदाय मे मुनिश्री सुधासागर जी के सान्निध्य मे अशोकनगर मे सप्त गजरथ सहित शताधिक मूर्तियो की प्रतिष्ठा मुनि श्री गुप्तिसागर जी के सान्निध्य मे कृष्णानगर दिल्ली एव सोनीपत (हरियाणा) तथा मुनि श्री समतासागरजी, प्रमाणसागरजी और क्षमासागरजी के सान्निध्य मे कटगी मे एव सूखी सिवनियाँ भोपाल मे पुष्पजी के तत्वावधान मे प्रतिष्ठा महोत्सव के साथ "प्रतिष्ठाचार्य–प्रशिक्षण" शिविर का भी आयोजन किया गया। अतिशय क्षेत्र नवागढ के गजरथ के समय मुनिश्री नेमिसागरजी द्वारा भी क्षुल्लक दीक्षा दी गई थी।

इस प्रकार प्रतिष्ठाचार्य श्री गुलाबचन्दजी पुष्प ने विगत चालीस वर्षो मे पचकल्याणक जिनबिम्ब प्रतिष्ठा और गजरथ महोत्सवो का विधि–नायक पद ग्रहण करके देव–शास्त्र–गुरु की महिमा की प्रभावना मे ऐसा महत्वपूर्ण योगदान दिया है जो इतिहास में अपनी चमक के साथ सदा रेखाकित रहेगा। उनके द्वारा सयोजित इस "प्रतिष्ठा–रत्नाकर" के प्रकाशन के अवसर पर उन्हे बार–बार बधाई।

नीरज जैन

शांति सदन
सतना (म०प्र०)

अपनी बात

मंगल कार्य गुरुजनों के आर्शीवाद के बिना कभी सम्पन्न नहीं होते कई वर्षो से विचार कर रहा था कि पंचकल्याणक प्रतिष्ठा का एक ऐसा ग्रंथ प्रकाशित हो जिसमें आद्योपांत सभी विषय हो परन्तु समयाभाव मे संभव न हो सका। संत शिरोमणि आचार्य गुरुवर १०८ विद्यासागर महाराज के मुक्तागिरि प्रवास जुलाई १९९१ में आयोजित दीक्षासमारोह के समय इस कार्य हेतु संकल्पित हुआ। यह ग्रंथ पूज्य गुरुवर के शुभाशीर्वाद का ही सुफल है।

जन्म से ही धार्मिक संस्कार पूज्या माता श्रीमति हरबाई एवं पूज्य पिताश्री मन्नू लाल जी प्रतिष्ठाचार्य ककरवाहा से मिले। महावीर दिगम्बर जैन विद्यालय साढूमल में अध्ययन करने के साथ-साथ पिता जी के साथ प्रतिष्ठा कार्यो मे भी जाने का योग मिला। मैंने प्रतिष्ठा कार्य वर्ष १९५७ से आरम्भ किया। इसी काल मे माँ जिनवाणी के स्वाध्याय से प्राप्त ज्ञान एवं ११९ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं गजरथ महोत्सवों के अनुभव को **'प्रतिष्ठा रत्नाकर'** मे संयोजित किया है।

'प्रतिष्ठा रत्नाकर' मे जिन आचार्यो के प्रतिष्ठा ग्रंथो एवं विद्वानों के ग्रंथों से विषय सामग्री संग्रहीत की है, मै उनके प्रति हार्दिक आभारी एवं कृत्तज्ञ हूँ।

ग्रंथ संपादन जिनके आर्शीवाद बिना संभव नहीं था, वे हैं अध्यात्म संत आचार्य श्री १०८ विद्यासागर जी महाराज एवं राष्ट्रसंत आचार्य श्री १०८ विद्यानंद जी महाराज जिनसे समय - समय पर आवश्यक निर्देश, सुझाव, शंकाओ का आगमिक समाधान एवं महत्वपूर्ण सामग्री प्राप्त हुई। इनके साथ- साथ सभी आचार्यो मुनिराजों का मंगल आशीर्वाद एवं मार्ग निर्देशन मिला सबके चरणो मे हृदय से नमनकर सादर नमोस्तु करता हूँ।

"गुरुविन ज्ञान नहीं"। गुरु ही मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करते हैं, हमारी पतित आत्मा को परमात्मा वनाने का कार्य हो या पाषाण को भगवान बनाने का बिना दिगम्बर मुनिराज के संभव नही है। अज्ञानतावश प्राणी निरन्तर शरणहीन होकर भटकता रहता है। प्राणी यह भूल जाता है कि - अनादि काल से विषय वासनाओं से प्रेरित संसार- परिभ्रमण करने वाले प्राणी को यदि कोई शरण है तो वह है 'धर्म', जिससे शान्ति समृद्धि एवं शाश्वत निरुपम सुख प्राप्त होता है। धर्म के साधन स्वरूप अरिहंत, सिद्धपरमात्मा एवं जिनमुद्रा धारण करने वाले दिगम्बर मुनिराज हैं। जिनका प्रतिदिन स्मरण किया जाता है -

'णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं ।
चत्तारि मंगलं, चत्तारि लोगुत्तमा, चत्तारि सरणं पव्वज्जामि ।।

हमारा कल्याण पथ प्रशस्त करने वाला यह अनादिनिधन पवित्र मंगल मंत्र है । यह सर्वांगीण कल्पमंत्र [1] आसपास के आकाश, वायुमण्डल, माध्यम (इलेक्ट्रोडायनेमिक फील्ड) के साथ - साथ शुद्ध उच्चारण करने वाले का आभामण्डल भी आश्चर्यजनक रूप से बदलने की शक्ति रखता है । इसके साथ भावना की गई है सर्वोत्कृष्ट मंगल, लोकोत्तम एवं सर्वश्रेष्ठ शरण की ।

चत्तारि [2] प्राकृत शब्द है जिसका अर्थ है चत्ता + अरि अर्थात् नाशकर रहे है, नाशकर दिये हैं, नाश करेंगे + अरि आर्थात् कर्म समूह को । अरिहन्त भगवान नाश कर रहे है, सिद्ध भगवान कर्म का नाश कर चुके है, साधु परमेष्ठी कर्मों का नाश करेंगे । हमारे जीवन मे प्रतिक्षण अरिहत, सिद्ध, साधु और केवली प्रणीत धर्म मंगलमय, लोकोत्तम एवं शरणभूत है । वर्तमान काल मे अरिहत एवं सिद्ध परमात्मा यहाँ भरत क्षेत्र मे नही हैं, अतएव उनकी उपासना करने के लिए उनके प्रतिबिम्बो को जिनालय मे विराजमान कर अर्चना करके जीवन का उत्थान करते हैं । सम्यग्दर्शन की प्राप्ति मे जिनबिम्ब को साधन मानते हुये प्रतिदिन श्रद्धा पूर्वक दर्शन, पूजा, उपासना, भक्ति करते हैं जिससे कल्याणकारी मोक्षमार्ग प्रशस्त होता है ।

जिनबिम्ब की स्थापना करने के पूर्व उनमे पूज्यता लाने के लिये विशेष संस्कारो के लिये पंचकल्याणक विधि एवं प्राण प्रतिष्ठा की आवश्यकता होती है, जिन्हे धार्मिक प्रभावना के साथ सम्पन्न किया जाता है । चतुर्थकाल मे तो साक्षात् तीर्थकरों का जन्म होता था और उनके गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान एवं निर्वाण पंचकल्याणक महोत्सव स्वर्ग के अनुपम साधनो के साथ इन्द्र एवं देवगण आकर स्वयं ही अत्यंत प्रभावना के साथ श्रद्धा भक्ति पूर्वक सम्पन्न करते थे । किन्तु वर्तमान पंचमकाल के भरत क्षेत्र मे साक्षात् तीर्थकरो का जन्म और देवताओ का आगमन नही हे अत श्रद्धा भक्ति से उनके प्रतिबिम्बो की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा, विधि विधान प्रतिष्ठाशास्त्रानुसार करके जिनालयो मे विराजमान कर आराधना से पुण्यार्जन करते हुये और रत्नत्रय की प्राप्ति कर आत्मकल्याण का मार्ग प्रशस्त करना हमारा कर्तव्य है ।

पंचकल्याणक विधि का वर्णन वीतराग सर्वज्ञ भगवान के दिव्योपदेश से प्राप्त हुआ, जिसका विस्तार गणधर देव और आचार्यो ने बारह अंगो मे विभाजित किया है । बारहवे अंग के पांच भेद हैं, इनमे से पूर्वगत को चौदह भेदो मे वर्णित किया है, उनमे से ग्यारहवे पूर्व का नाम कल्याणवाद पूर्व है जिसमें तीर्थकरो के पांचो कल्याणको का विस्तार पूर्वक

१.णमोकार मत्र एक अनुचितन, डा० नेमि चन्द्र जैन
२. देवपूजा प्रवचन- क्षु० सहजानंद जी वर्णी

शास्त्रज्ञान रहित, विकथा एवं प्रलाप करने वाला अत्यंत लोभी, अशांत स्वभाववाला, परम्परा हीन, अर्थ को नहीं जानने वाला ऐसा प्रतिष्ठाचार्य नहीं होना चाहिये।

प्रतिष्ठा कराने वाले के लक्षण (१)

न्यायोपजीवी गुरुभक्तिधारी कुत्सादिहीनो विनयप्रपन्नः,
विप्रस्तथा क्षत्रियवैश्यवर्गो व्रतक्रियावन्दनशीलपात्रः।
श्रद्धालुदातृत्व महेच्छुभावो ज्ञाता श्रुतार्थस्य कषायहीनः,
कलंकपंकोन्मदतापवादकुकर्मदूरोऽर्हदुदारबुद्धिः।

न्याय पूर्वक आजीविका वाला, गुरुभक्त, निन्दा नही करने वाला, विनयवान ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्यवर्णी, व्रतक्रिया वन्दना करने वाला, शीलवान, श्रद्धावान, दानी, गुणी, शास्त्र का ज्ञाता, कषायरहित, पाप क्रिया एवं उन्माद रहित, अपवाद, कुकर्म रहित, उदारबुद्धि वाला ऐसा प्रतिष्ठा कराने वाला होना चाहिये।

निषादनाडिंधमुण्डिचण्डी परीष्टिपाटच्चरदारपण्यं
द्यूतव्यवस्योपजनस्थसीधुकृषीवलाद्यर्जनमत्रवर्ज्यं।
परोपदानी किल संघपिंजो भूपार्थिनिर्माल्यधनप्रहर्त्ता
न शस्यते क्वापि महोपयोगं कर्तुं जनस्तद् धृतहेमभोक्ता।

नीचकर्म करने वाले भीलादि से व्यापार करने वाला, नाड़ीधम सुनार, कुदेवो की पूजा करने वाला, चोरी करने वाला, व्यभिचार द्वारा धन संग्रह करने वाला, जुवारी, व्यसनी रौद्र कर्मवाला, मदिरा पान करने वाला, खेती करने वाला, पराया धन लगाकर अपनी प्रशंसा कराने वाला, सघ का निन्दक, राज्य का धन हरण करने वाला, निर्माल्य धन का उपयोग करने वाला, इत्यादि का द्रव्य प्रतिष्ठाकार्य मे नहीं लगाना चाहिये अर्थात् इनका धन लेने योग्य नही है।

इन्द्र के लक्षण (२)

नीच कुल एवं नीच विचार रहित, संपत्तिवान, सुन्दर, भाग्यवान, बलवीर्य गुण सहित, युवावस्था वाला, मनोज्ञ बहुमूल्य आभूषण सहित, शुद्ध विचारवान, दृढचित्तवाला, जिनेन्द्र भक्त, त्रिकाल सामायिक करने वाला, प्रतिष्ठा विधि का ज्ञाता, मंत्रशास्त्र का ज्ञाता, इन्द्रिय विजयवाला, व्रत नियम पालने वाला, रात्रि भोजन का त्यागी, परिवार वाला, विनयवान शान्ति, क्षमा, तप, वैराग्य युक्त समस्त विधि का ज्ञाता, इन्द्र होना चाहिये। अंगहीन, मिथ्यागमन, अभक्ष्य भोजन, झूठ वचन बोलने वाला, विपरीत श्रद्धावाला, इन्द्र नहीं होना चाहिये।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ७७-७८ (२) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ८९ से ९३, पं. आ. ध., प्र. सा. पृष्ठ १३

इन्द्राणी के लक्षण [1]

सौभाग्यशालिनी, सर्वांग सुन्दर, बहुमूल्य वस्त्र आभूषणों से सुसज्जित, अच्छे चरित्र वाली उत्तमकुलवाली,व्रत नियम संयम सहित शीलवती, रात्रि भोजन एवं अभक्ष्य त्यागी, उत्तम गुणो को धारण करने वाली, कृत्तकर्म की ज्ञाता, जिनेन्द्रदेव भक्त, विनयवती इन्द्राणी होना चाहिये।

छप्पन कुमारी एवं अष्टकुमारी देवियां [2]

सुन्दर, वस्त्राभूषण सहित, अविवाहित, कुलवान, ज्ञानवान, गर्भ जन्म की क्रिया की ज्ञानवाली, सेवा भावी, आज्ञाकारी, सुशील, सुन्दर स्वरूप वाली छप्पन कुमारी एवं अष्टकुमारी देवियां होना चाहिये।

छप्पन कुमारी देवियों की व्यवस्था [3]

बीस भवनवासी जानो, अरु षोडस देवी व्यन्तर जान,
कल्पवासिनी द्वादश देवी, युगल ज्योतिषी देवी मान।
श्री ह्री धृति कीर्ति सुबुद्धि लक्ष्मी कुलगिर देवी जान,
इह विधि छप्पन सब कुमारिका सेव करें माता की आन।

भवनवासी देवियों के नाम (२०)

(१) विजया (२) वैजयंति (३) अपराजिता (४) जयन्ति (५) नन्दा (६) आनन्दा (७) नन्दावर्धिनी (८) नन्दोत्तरा (९) यशोधरा (१०) सुप्रबुद्धा (११) सुकीर्ति (१२) स्वस्तिका (१३) लक्ष्मीमति (१४) सुप्रणीधा (१५) चित्रा (१६) वसुन्धरा (१७) रुचिंकामा (१८) रुचिका (१९) रुचिकोज्ज्वला (२०) रुचिक प्रभा।

व्यन्तर देवियों के नाम (१६)

(१) इला (२) नवमिका (३) सीला (४) पद्मावती (५) पृथ्वी (६) कांचनाभा (७) चन्द्रिका (८) सुरा (९) विजया (१०) वैजयंति (११) जयंति (१२) अपराजिता (१३) सुमंगला (१४) मंगलावती (१५) मंगलसेना (१६) मंगल मालिनी।

कल्पवासी देवियों के नाम (१२)

(१) श्री (२) ह्री (३) धृति (४) आशा (५) वारुणि (६) पुण्डरीकनी (७) अलंवुषा (८) मिश्रकेशी (९) कनक चित्रा (१०) चित्रा (११) त्रिशिरा (१२) सूत्रामणि।

---

(१) आ. ज. से , प्र. पा. श्लोक ७७६ (२) वही, श्लोक ७२७ (३) पं. म. ला. जैन प्र. ए. लि. डा.

ज्योतिषी देवियां (२)

(१) शान्ति (२) पुष्टी

कुलाचलवासी देवियों के नाम (६)

(१) श्री (२) ह्री (३) धृति (४) कीर्ति (५) बुद्धि (६) लक्ष्मी

लौकान्तिक देव (१)

ब्रह्मलोक स्वर्ग के अंत मे निवास करते हैं यह देवर्षि कहलाते हैं, यह केवल तीर्थकर के वैराग्य की स्तुति करने ही आते हैं, अन्य किसी कल्याणक मे नही आते हैं। ये बाल ब्रह्मचारी होते है इनकी देवियां नहीं होती, एक भवावतारी होते हैं ऐसा नियम है।

लौकान्तिक देवो के लिये अविवाहित आठ वर्ष से बीस वर्ष तक के बालक ही लेना चाहिये, यदि बालब्रह्मचारी मिले तो सर्वोत्तम है। इन्हे सफेद वस्त्र, मुकुट, माला धारण करना चाहिये।

प्रतिष्ठा विधि में कम से कम पात्र (२)

सूरिमंत्र देने वाला (मुनि/आचार्य), इन्द्र, इन्द्राणी, यजमान (प्रतिष्ठापक), यजमान की पत्नि, पूजनकर्ता, सामग्री बनाने वाला, मंत्री, सभासद, पूजा पढ़ने वाला, विधि का जानने वाला, देवियां, लौकांतिक देव इतने पात्र आवश्यक हैं जो संयमी ब्रह्मचर्य धारण करने वाले हो। इसके अतिरिक्त अन्य पात्र आवश्यकतानुसार होने चाहिये। सभी पात्रो की भावना पवित्र एवं उल्लासित होकर व्रत नियम के पालने की होना चाहिये।

प्रतिष्ठा पात्रों में माता-पिता की व्यवस्था

माता-पिता बनाने में प्रतिष्ठाचार्यो के दो मत हैं, कोई माता - पिता बनाते हैं तथा कोई माता पिता नहीं बनाते हैं। श्री जयसेनाचार्य जी ने प्रतिष्ठापाठ मे निम्न प्रकार लिखा है -

यद्वंश्यतीर्थकरबिम्बमुदीर्य संस्था मुख्या तदीयकुलगोत्रजनिप्रवेशात् ।
संवृत्तगोत्रचरणप्रतिपात योगादाशौचमावहतु नोद्यभवप्रशस्तम् ॥ (३)

जिस वंश मे तीर्थकर हुये हैं, उस कुल गोत्र एवं वंश को आप (माता-पिता) प्राप्त हों। अर्थात् उनके परिवार मे परिवर्तित होने से सूतक पातक आदि अशौच का दोष नहीं लगेगा।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ७९९ (२) वही, श्लोक ५२-५३
(३) आ. ज. से., प्र. पा. पृष्ठ ६२ श्लोक २५८

मंत्र मे भी स्पष्ट लेख है -

"अस्ययजमानस्य इक्ष्वाक्वादि वंशे श्री ऋषभनाथादि संताने काश्यप गोत्रे परावर्तनं यावदध्वरं भवतु भवतु क्रौ ह्रीं र्ह्रं नमः ।"

उक्त श्लोक एवं मंत्र से स्पष्ट है कि माता- पिता (यजमान) बनाकर उनका वंश परिवर्तन किया जाता है अर्थात् माता पिता बनाये जा सकते हैं ।

पाण्डुक शिला पर जन्माभिषेक करके वापिस आकर माता-पिता की गोद में आदि कुमार को देने को लिखा है ।

'अत्र मातापित्रोस्कंनिवेशस्थानीयपूर्वप्रक्लृप्तमंडपोपस्कृतवेदिकायां भद्रासनेमूल बिम्बस्थापनं विदध्यात् ।' [१]

देवियो द्वारा सेवा भेट समर्पण, प्रश्नोत्तर एवं स्वप्नदर्शन माता के बिना सम्भव नहीं है, अतएव माता-पिता की कल्पना पात्रो मे भी की जा सकती है । किन्तु गर्भ की क्रिया मंजूषा मे ही करना चाहिए ।

माता-पिता बनने हेतु पात्रता

प्रतिष्ठाचार्य पात्र कल्पना के समय ध्यान रखे जिसमें योग्यता हो वही पात्र माता-पिता बनाये जावें । माता-पिता बनने वालो का परिवार होना चाहिये अर्थात्

(१) जिनके सन्तान न हो वह माता-पिता नहीं बन सकते ।

गोम्मटसार (जीवकाण्ड) मे तीन योनियों का कथन हैं । (२)

(अ) **कूर्मोन्नत योनि** - जिससे तीर्थकर चक्रवती बलभद्र आदि महापुरुष पैदा होते हैं ।

(ब) **वंशपत्र योनि** - जिससे सामान्य मनुष्य पैदा होते हैं ।

(स) **शंखावर्त योनि** - इस योनि मे गर्भ नहीं रहता ।

अर्थात् तीर्थकर की माता शंखावर्त योनि वाली (निःसंतान) नहीं होना चाहिये ।

(२) जिन्होने माता-पिता बनने के पूर्व अजीवन ब्रह्मचर्य व्रत न लिया हो ।

(३) जिन्होने परिवार नियोजन नहीं कराया हो ।

वह माता-पिता बन सकते हैं, यह भी आवश्यक है कि वह जाति एवं कुल से श्रेष्ठ हो, समाजिक मे अपवाद न हो, एवं हीनांगी न हो । आचार विचार श्रेष्ठ हों तथा माता-पिता बनने के पश्चात् आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत का नियम पालन करें तथा श्रावकोचित संयम को पालन करे । उनको अक्षम व्यापार वर्जित है ।

(१) अ.क.से. प्र पा. पृष्ठ ५३ (२) आ जे. च. सि. च., गो. सा. गाथा ८१ - ८२

प्रतिष्ठा में उपयोगी सामग्री एवं वस्त्र [१]

प्रतिष्ठा कार्य मे शुद्ध धुले हुये, बहुमूल्य वस्त्रो का उपयोग करना चाहिये, जिससे पूजा करने वालो का मन आनंदित हो। मलिन कटे,फटे, छेद सहित जीर्ण वस्त्रो का उपयोग नहीं करना चाहिये। प्रतिष्ठा पात्र, यज्ञवेदी, तोरण स्थान, उपकरण, वस्त्रादि का उपयोग दूसरी बार नहीं करना चाहिये। प्रतिष्ठा की सभी सामग्री नवीन होना चाहिये। प्रतिष्ठा में उपयोग होने वाली सामग्री एवं अन्य सामान के लिये कंजूसी नही करना चाहिये। इसमे प्रमाद एवं शिथिलता भी नहीं होना चाहिये।

जिनबिम्ब प्रतिष्ठा की आवश्यकता एवं फल

जो श्रावक माया, मिथ्यात्व, निदान और ख्याति पूजा लाभ रहित पंचकल्याणक प्रतिष्ठा कराके जिन बिम्ब की स्थापना करते हैं वह पुण्य एव यश की वृद्धि करते हुये मोक्षमार्ग की विशेष प्रभावना करते हैं। जव तक सूर्य चन्द्रमा हैं तव तक भव्य जीवो के लिये सम्यग्दर्शन की प्राप्ति मे निमित्त बनते है, शांति स्वरूप वीतराग जिनविम्व के स्मरण एवं दर्शन से अनन्त विघ्नो का नाश होता है, जैसी दीवाल होती है तदनुसार ही चित्र अंकित होता है अर्थात् आत्मपरिणाम निर्मल होते हैं तो नियम से जिनविम्व दर्शन से सम्यग्दर्शन होता है।[२]

जो भव्यआत्मा वदरी वरावर मंदिर और धनिया के वीज वरावर भी जिनविम्व स्थापित करते हैं वह अनन्त भवो के पापो को नाश करके सम्यक्त्व प्राप्त करते है। सद्गृहस्थ का कर्तव्य है कि वह आपनी न्यायपूर्वक उपार्जित संपत्ति को निम्न विशेष कार्यो मे उपयोग करे तो तव ही वह संपत्ति श्रेष्ठ मानी जाती है। [३] जैसे

(१) जिन मंदिर निर्माण
(२) प्रतिष्ठा
(७) जीर्णोद्धार
(३) जिन विम्व स्थापना
(४) तीर्थ यात्रा
(५) चारोंदान
(६) जिनेन्द्र अर्चना

जिनविम्व (प्रतिमा) निर्माण विधि [४]

श्रावक का कर्तव्य है कि जव मंदिर एवं जिनविम्व निर्माणकराके प्रतिष्ठा कराने की भावना उत्पन्न हो तो दिगम्बर साधुओ के पादमूल की वन्दना करके प्रार्थना करे कि 'भगवन्! न्यायपूर्वक अर्जित सपत्ति को जिनविम्व निर्माण मे लगाना चाहता हूँ कृपाकर आशीर्वाद और मार्ग निर्देशन दीजिये' ऐसी प्रार्थना सुन मुनिराज कहते हैं कि शुभलग्न,

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक १०२ से १०४
(२) वही, श्लोक १०५ से १०७ (३) आ. ज. से., प पा. श्लोक १४ से १६
(४) पं. आ. ध., प सा अ. एक श्लोक ४० से ६२

शुभतिथि में जिनेन्द्र देव की पूजा करके शिल्प शास्त्र मे प्रवीण मूर्तिकार (शिल्पी) को साथ लेकर किसी पहाड़ मे प्रतिमा निर्माण के योग्य शिला को देखो जो कि बहुत मोटी, विशाल, चिकनी, ठन्डी, सुन्दर, मजबूत, अच्छी गंध एवं रंग वाली, ठोस, अधिक चमक वाली, बिन्दु, रेखा, दाग आदि रहित, मधुर ध्वनि सहित होना चाहिये। शिला निर्णय के पश्चात् शुभ दिन मे जिनेन्द्र पूजा करके शिल्पी का सम्मान कर मंगल गान करते हुये, शिला की शुद्धि मंत्रो द्वारा कराना। मंत्रोच्चारण करते हुये, शिला को तराश कर, सावधानी से निकालना, उस शिला को गज रथ में रखकर जिनालय में स्थापित करना। फिर शुभलग्न शुभयोग मे जिनदेव की पूजा करके अनादि मंत्र से शिला को मंत्रित करके उत्तम औषधियो के क्वाथो से शिला का परीक्षण करना जिससे शिला के अन्दर यदि कोई दोष हो तो ज्ञात हो सके। बिम्ब निर्माण कराने के दिन विनायक-सिद्ध यंत्र की पूजा करके शांति विधान करावे। शिल्पी को सप्त व्यसन का त्याग, ब्रह्मचर्य का पालन, अभक्ष्य पदार्थो का त्याग करावें और स्वतः(मूर्ति निर्माता) इन नियमों का पालन करे।

आकर शुद्धि (शिला परीक्षण)

जिस शिला से प्रतिमा बनानी हो उसकी शुद्धि हेतु तथा शिला के अन्दर के दोष प्रकट करने हेतु निम्न क्वाथों का प्रयोग आवश्यक है।

(१) सप्तौषधिक्वाथ -

अमृतासहदेवी च विष्णुकान्ता शतावरी
भृंगराजः शमीश्यामाः सप्तौषध्यः स्मृता इमा।
एताभिर्युक्ततीर्थाम्बुपूर्णशुभ्रमहाघटैः
मंत्राभिमंत्रितैर्भक्त्या जिनार्चामभिषिंचयेत्॥

(२) पंच फल क्वाथ -

जाती फल लवंग्राम विल्व भल्लात कान्वितैः।
सर्व तीर्थाम्बुभिः पूर्णै. कुम्भैः स्नपयेज्जिनम्॥

(३) छल्लपंचक्वाथ -

पलाशोदुम्बराश्वत्थशमी न्यग्रोधकत्वचा।
मिश्र तीर्थाम्बुभिः पूर्णै. स्नपयेच्छुभ्रसद्घटैः॥

(४) दिव्यौषधि मूलाष्ठक क्वाथ -

सहदेवी वला सिंही शतमूली शतावरी,
कुमारीचामृताव्याघ्री तासां मूलाष्टकान्वितैः।

सर्वतीर्थाम्बुभि· पूर्णै·श्चित्र कुम्भैर्नवैर्दृढै·,
मंत्राभिर्मन्त्रितै जैनं बिम्बं स्नपयेत्सवा ।।

(५) सर्वौषधि क्वाथ - लवंगैलावचा कुष्टं कंकोलाजाति पत्रिका,
सिद्धार्थ चन्दनाद्यैश्च गंधद्रव्यै विमिश्रितैः ।
तीर्थाम्बुभिर्भृतैर्कुम्भैः सर्वौषधिसमन्वितैः,
मंत्राभिर्मन्त्रितैर्जैनी प्रतिमामभिषेचयेत् ।।

(६) सर्वौषधि - केशर अरु कर्पूर जायफल, जावित्री कंकोल प्रयंग,
वच सरसों मौथा हल्दी ले, लोग पत्र तुलसा के संग ।
मलयागिरि सुरदारु कटाई, अगर तगर वारौ ले आय,
तज पत्रज एला गजकेशर, कूट जटामासी मिलवाय ।।

(७) अष्टगंध - अगर तगर सित रक्त ले, चन्दन और कपूर,
हरताल हेम हिगुल मिला, अष्टगंध भरपूर ।

(८) उबटन - पीत सिद्धारथ जायफल, हल्दी और कपूर,
तनुल पीस मिलाईये, उबटन से मल दूर ।

(१) निर्मल कांजी के साथ बेल वृक्ष के फल की छाल प्रतिमा पर लगाने से दाग प्रगट हो जाते हैं । [१]

(२) पानी के साथ छिला हुआ गरी गोला प्रतिमा पर रगड़ने से रेखाओ की जानकारी हो जाती है । [२]

वर्तमान मे क्वाथ औषधियां उपलब्ध न होने के कारण सर्वोषधि से शुद्धि कर सकते हैं । पहले प्रतिमा शास्त्रानुसार निर्दोष बनवायी जाती थी, आज तैयार की हुई प्रतिमा ली जाती है अतः निर्दोष प्रतिमा लेना चाहिये तथा परीक्षण करके निर्दोष प्रतिमा की ही प्रतिष्ठा कराना चाहिये ।

(१) ठ. फे., वा. सा. प्र. पृष्ठ ८२ (२) प. म. ला. प्र. ह. लि. डा.

प्रतिमा का माप

'दसताल माण लक्खण' प्रतिमा दस ताल की होना चाहिये [१]

'नवताल हवई रूवं' प्रतिमा नव ताल की होना चाहिये [२]

'जदोदेव मणुस्स णेरइयाण मुस्सेधो दस णव अट्ठताल पमाणेण भणिदो'

देव, मनुष्य और नारकियों का उत्सेध दस, नौ और आठ ताल के प्रमाण से कहा गया है अर्थात् देव दसताल, मनुष्य नौ ताल और नारकी का आठ ताल प्रमाण लिया गया है।[३]

'उर्ध्वेदिपाभ्र विधुमागकृत्तौ' कायोत्सर्ग प्रतिमा, द्विप माने ८, अभ्र माने ० (शून्य), विधु माने १ अर्थात् नवताल की प्रतिमा १०८ भाग प्रमाण होनी चाहिये। [४]

इस प्रकार देव प्रतिमा निर्माण का ९ ताल प्रमाण तीन ग्रंथों में मिलता है जबकि दस ताल प्रमाण केवल एक ही ग्रंथ में मिलता है अतः प्रतिमा नवताल की होना चाहिये।

ताल का प्रमाण [५]

तालं मुखं वितस्तिस्यादेकार्थ द्वादशांगुलं।
तेन "मानेनतद्बिम्बं नवधा प्रविकल्पयेत्॥

ताल, मुख, वितस्ति, बारह अंगुल, यह सब एकार्थ वाचक हैं। इस माप से जिनबिम्ब को नौ भागों मे कल्पित करना चाहिये।" प्रतिमा के अंगुल से १२ अंगुल का एक ताल होता है।"

निजांगुल प्रमाणेन साष्टांगुलशतायुतम्। [६]

जिस जिनबिम्ब का माप लेना हो उस प्रतिमा (जिनबिम्ब) के अंगुल से ही १०८ भाग बनाना चाहिये। यहां अंगुल का तात्पर्य भाग से जानना चाहिये। इसका विशेष वर्णन आचार्य जयसेन कृत प्रतिष्ठा पाठ में है।

कायोत्सर्ग प्रतिमा [७]	९ ताल माप	१० ताल माप
ललाट	४ अंगुल	४ अंगुल
नासिका	४ अंगुल	५ अंगुल
मुख	४ अंगुल	४.५ अंगुल
ग्रीवा (गला)	४ अंगुल	४ अंगुल

(१) आ. ने. च. सि. च, त्रिलोकसार गाथा ९८६ (२) ठ. फे., वा. सा. बिम्ब परीक्षा प्रकरण गाथा ५ (३) आ. पु. दं. भू., षट्खण्डागम ध. पु. ४ पृष्ठ ४० (४) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक १५३ (५) आ. व. नं., प्रतिष्ठा सार संग्रह (६) वही (७) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक १५३ से १५५

ग्रीवा से हृदय तक	१२ अंगुल	१३.५ अंगुल
हृदय से नाभि तक	१२ अंगुल	१३.५ अंगुल
नाभि से गुह्यस्थान (लिंग)	१२ अंगुल	१३.५ अंगुल
गुह्य स्थान से घुटना के ऊपर	२४ अंगुल	२७ अंगुल
घुटना	४ अंगुल	४ अंगुल
घुटना के नीचे से गांठ तक	२४ अंगुल	२७ अंगुल
गांठ से पैर के तले तक	४ अंगुल	४ अंगुल
	१०८	१२०

दोनो पैरो के बीच अन्तर ४ अंगुल होता है एवं हाथ लम्बायमान होते है।

पद्मासन प्रतिमा [1]

वास्तुसार ग्रंथ के अनुसार पद्मासन प्रतिमा ५६ अंगुल मानी है जबकि प्रतिष्ठासारसंग्रह के अनुसार ५४ अंगुल मानी है। **'प्रतिमा का समचतुरस्त्र होना अति आवश्यक है'** इसका माप इस प्रकार है।

१. दाहिने घुटने से वाये घुटने तक
२. दाहिने घुटने से बाये कंधे तक
३. बायें घुटने से दाहिने कंधे तक
४. नीचे से मस्तक तक (पादपीठ आसन से केशान्त तक)

यह चारो भाग बराबर बरावर होना चाहिये, इसमे यदि थोड़ा भी अन्तर हो तो उस प्रतिमा की प्रतिष्ठा नही करना चाहिये। दोनो हाथों की अंगुलियों से पेडू मे ४ अंगुल का अन्तर होना, कोहनी के पास उदर से दो भाग अन्तर होना नाभि से लिग अष्टभाग नीचे बनाना और पॉच भाग लम्बा होना, दोनो पांव से नीचे आसन के ऊपर अभिषेक के जल का निकास बनाना,

पद्मासन प्रतिमा का नाप [2]

ललाट	४ अंगुल	ग्रीवा से हृदय तक	१२ अंगुल
नासिका	४ अंगुल	हृदय से नाभि तक	१२ अंगुल
मुख	४ अंगुल	नाभि से गुह्य स्थान	१२ अंगुल
ग्रीवा	४ अंगुल	घुटना	४ अंगुल
	१६ अंगुल		४० अंगुल

इस प्रकार ५६ अंगुल की पद्मासन प्रतिमा का प्रमाण दिया गया है।

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक १७८-१७९

(२) वही, पृष्ठ ४३ एवं ठ. फे., वा. सा. प्र. पृष्ठ ८६ गा. ४

प्रतिमा स्वरूप

१. जिसके अंगोपॉग सुन्दर, कांति लावण्य सहित, कायोत्सर्ग एवं पद्मासन दिगम्बर, अन्य नाना प्रकार के आसनो से रहित, वृद्ध - बालावस्था रहित, शांतस्वरूप, श्री वत्स लक्षण सहित, नख केश रहित, समचतुरस्र संस्थान सहित, वैराग्य युक्त, और तप की मुद्रा सहित हो वह जिनबिम्ब पूजा करने योग्य होती है। (१)

२. अष्टप्रातिहार्यो से युक्त, संपूर्ण अवयवों से सुन्दर, जिनकी आकृति वैराग्य पूर्ण, तप अवस्था वाली, अरिहंत भगवान की प्रतिमा है तथा उपरोक्त लक्षणों सहित हो किन्तु अष्टप्रातिहार्य रहित हो वह प्रतिमा सिद्ध परमात्मा की है। (२)

३. जो शांत, प्रसन्न, मध्यस्थ, नासाग्रस्थित - अविकारी दृष्टि सहित, जिसके अंग वीतरागता सहित हों, अनुपम वर्णवाली, शुभलक्षण सहित हो, रौद्रादि बारह दोषरहित, अष्ट प्रातिहार्ययुक्त प्रतिमा विराजमान करें।

प्रतिमा के दोष

नात्यन्तोन्मीलारत्तद्वा न विस्फारितमीलिता ।
तिर्यगूर्ध्वमधोदृष्टि वर्जयित्वा प्रयत्नतः । (३)

१.रौद्र २. कृशांग ३. संक्षिप्तांग ४. चपटीनासिका ५. विरूपक नेत्र ६. हीनमुख ७.बड़ा उदर ८. महाहृदय ९. महाअंस १०. महाकटि (कमर) ११. महापाद १२.हीन जंघा (शुष्क जंघा) यह बारह दोष हैं इनसे रहित बिम्ब ही प्रतिष्ठा योग्य मानी हैं।

प्रतिमा के अंग न्यूनाधिक होने पर उनका निम्न प्रभाव पड़ता है।(४)

टेड़ी नाक -	दुख कारक	छोटे अवयव	क्षयकारक
विकृत नेत्र -	नेत्र नाशक	छोटा मुख	भोग नाशक
हीन कटि -	आचार्य नाशक	हीन जंघा	पुत्र मित्र नाशक
हीन आसन	ऋद्धिनाशक	हीन हस्त-चरण	धन क्षय
उर्ध्व मुख -	धन नाशक	टेड़ी गर्दन	स्वदेश नाशक
अघोमुख -	चिंताकारक	अन्याय धन से निर्मित	दुष्काल कारक
विषमासन	व्याधिकारक	रौद्र रूप	प्रतिमा निर्माता विनाशक
न्यूनाधिक अंग -	कष्ट कारक		

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक १५१ - १५२ (२) आ. व. नं. प्र. पा.
(३) पं. आ. ध., प्र. सा. पृष्ठ ७ (४) ठ . फे., वा. सा. प्र. पृष्ठ १०१

अधिक अंग	शिल्पीनाश	दुर्बल अंग	धन नाशक
कृशोदर	दुर्भिक्षकारक	तिरछी दृष्टि	अपूज्यनीय
गाढ दृष्टि	अशुभकारक	अधोदृष्टि	विघ्नकारक

इन दोषो से रहित प्रतिमा (जिनबिम्ब) ही जिनालय मे विराजमान करना चाहिये। दोषपूर्ण प्रतिमा पूजक के नाश का कारण होती है अतः प्रतिमा निर्माण या प्रतिमा लेते समय इनका ध्यान रखना अत्यावश्यक है।

अशुभ रेखायें [१]

हृदय, मस्तक, कपाल, दोनो स्कंध, दोनो कान, मुख, पेट, पृष्ठ भाग (पीठ), दोनों हाथ, दोनो पांव इत्यादि प्रतिमा के किसी अंग पर या सब अंगो पर नीले काले आदि रंग की रेखाये या विद्ध गूढ़ नेत्र, जर्जर शरीर, लम्बोदर, प्रभारहित होठ हो तो उस प्रतिमा की प्रतिष्ठा नही कराना चाहिये।

उपरोक्त अंगो के अलावा अन्य किसी अंग पर यदि शुभरेखाये (उसी वर्ण की) हो तो वह प्रतिमा प्रतिष्ठा योग्य होती है किन्तु नियम तो यही है कि बिम्ब निर्दोष, स्वच्छ, चिकनी, ठडी और अपने वर्ण की रेखा वाली होवे तो प्रतिष्ठा की जा सकती है।

मृत्तिका (मिट्टी), काष्ठ (लकडी) और चित्राम (भित्ति चित्र) आदि का बिम्ब पूजा योग्य नहीं है।

न मृत्तिकाकाष्ठविलेपनादिजातं जिनेन्द्रैः प्रतिपूज्यमुक्तम् [२]

अन्य प्रकार बिम्बों का निर्माण एवं फल

१. एक ही पटिया (पत्थर) पर चौबीसी जिनबिम्ब, पंचबालयति बिम्ब, शांति नाथ, कुंथुनाथ, अरनाथ बिम्ब, सप्त ऋषीश्वर बिम्ब भी बनाये जा सकते हैं। स्वर्ण, रत्न, मणि, रजत और स्फटिक, निर्दोष पाषाण एवं धातु से बनाये गये कायोत्सर्ग (युगलकर लम्बायमान, चार अंगुल अन्तर से स्थापित चरण ध्यानारूढ मुनिजन को आनंदकारक) बिम्ब और पद्मासन (शान्त मुद्रा, नासाग्रदृष्टि मानोन्मानकरि प्रशस्त, ध्यानस्थमुद्रा, वामहाथ पर दाहिना हाथ रखा हो ऐसा) बिम्ब स्थापित करना।[३]

२ सफेद, लाल, हरे, नीले, पीले पाषाण पर बनाये गये बड़े या छोटे स्थिर बिम्ब स्थापना प्रशस्त हैं किन्तु रथोत्सव, विमानोत्सव आदि मे धातु के ही बिम्ब स्थापित करना चाहिये, पाषाण का बिम्ब स्थापित नही करना चाहिये।[४]

---

(१) ठ. फे., वा. सा. प्र. पृष्ठ ८४ (२) आ. ज. से., प्र. पा श्लोक १८३

(३) वही, श्लोक ७० (४) वही, श्लोक ७१

२. चारों दिशाओं में जिन बिम्ब स्थापित कर शत इन्द्रों द्वारा प्रचुर पुण्य को देने वाली पूजा चतुर्मुख पूजा कहलाती है।

३. दुखी, दरिद्री मनुष्यों की इच्छानुसार दान देकर बहुमूल्य सामग्री द्वारा जिनेन्द्र भगवान की पूजा जो चक्रवर्ती द्वारा की जाती है कल्पद्रुम पूजा कहलाती है।

४. इन्द्र ध्वज, सिद्धचक्र, त्रैलोक्य तिलक विधान आदि पूजा जो धन का लोभ त्याग कर प्रभावनापूर्वक की जाती है आष्टाह्निक पूजा कहलाती है। भगवान आदिनाथ का दिव्य उपदेश सुनकर भरतचक्रवर्ती ने अतुल सम्पत्ति से ७२ जिनालयों का निर्माण कराया, उनमें भूत, वर्तमान एवं भविष्यकाल संबंधी जिनबिम्बों की स्थापना की।(१)

जिनबिम्बों के अभिषेक – पूजा की परम्परा अनादि – निधन है। पाँचों मेरु उससे संबन्धित वृक्षादि एवं नंदीश्वर द्वीप के अकृत्रिम जिनालयों में अकृत्रिम जिनबिम्ब हैं। जिनका अभिषेक पूजन इन्द्र एवं देवगण करते हैं, यहाँ तक कि पर्व के दिनो मे चतुर्निकाय के देव चौबीसों घंटे अभिषेक पूजा करते हैं (२)

यह भी विचारणीय है कि साक्षात् तीर्थंकर भगवान का समवशरण विराजमान होने पर एवं विदेह क्षेत्र में विद्यमान बीस तीर्थंकरों के दर्शन करते हुये भी इन्द्र एवं देव सपरिवार जाकर अकृत्रिम जिनालयों में दर्शन, अभिषेक, पूजन करते हैं।

भगवान आदिनाथ स्वामी के निर्वाण पश्चात् ५० लाख करोड़ सागर एवं १२ लाख पूर्व बीतने पर भगवान अजितनाथ का जन्म हुआ। उनके ही काल में द्वितीय चक्रवर्ती सगर ने जिनालयों का निर्माण कराके जिनबिम्बों को स्थापित किया।(३)

इस प्रकार तृतीय काल से जिनालयों और जिनबिम्बों की स्थापना हुई, इससे पता चलता है कि यह परम्परा बहुत ही प्राचीन है। वर्तमान इतिहास के अनुसार द्वितीय शताब्दि में सम्राट् खारबेल के शिलालेख से ज्ञात होता है कि सम्राट के द्वारा भगवान ऋषभनाथ की प्रतिमा विराजमान की गई। उस प्रतिमा को मगध का राजा नन्द कलिंग विजय के बाद पटना ले गया था, किन्तु खारबेल मगध पर चढ़ाई करके भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा वापिस लाये थे। आजकल वह मूर्ति जैनों का प्राचीन इतिहास बता रही है। यह प्रतिमा मौर्यकालीन पटना के संग्रहालय में सुरक्षित है। (४)

वर्तमान में मूर्तियों की आवश्यकता (५)

जिस प्रकार दीवार पर बने चित्रों से अथवा काष्ठ या पाषाण से निर्मित मूर्ति को देखकर राग-विराग रूप परिणाम होते हैं उसी प्रकार स्थापना निक्षेप द्वारा स्थापित वीतराग भगवान की मूर्ति से साक्षात् तीर्थंकर भगवान का स्मरण हो जाता है और परिणाम निर्मल होते ही सम्यक्त्व की उत्पत्ति हो जाती है।

---

(१) आ. ज. से. प्र. पा. श्लोक १७ (२) आ. ने. च. सि. त्रि. सा., गाथा ९७३ से ९७६ (३) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक १८ (४) भारतीय मूर्तिकला के विकास में जैनों का योगदान (५) आ. ज. से., प्र. पा., श्लोक ६७ एवं ६८

प्रतिष्ठा का लक्षण (१)

प्रतिष्ठान, प्रतिष्ठा, स्थापन, तत्प्रतिक्रिया, इत्यादि प्रतिष्ठा के पर्यायवाची हैं। पंचकल्याणक के मंत्रो से गुणों की स्थापना सर्वज्ञपने की स्थापना, क्रिया अनुष्ठान निक्षेपादि से स्थापना द्वारा जिनबिम्ब में पूज्यता आती है और स्तुति आदि से पुण्यार्जन होता है। यह बिम्ब प्रतिष्ठा का प्रभाव है। मंत्रो द्वारा किये गये संस्कार, अंकन्यास, मंत्रन्यास गुणो की स्थापना आदि प्रतिष्ठा के समय पाषाण या धातु की मूर्तियों मे जो सस्कारो का प्रभाव किया जाता है वह पंचकल्याणक प्रतिष्ठा है।

अतएव प्रतिष्ठा के समय मंत्राराधन, भक्तियॉं एवं क्रियाओं को विधिवत् करना चाहिये, मात्र पुष्प क्षेपण करना उचित नहीं क्योंकि आचार्य जयसेन स्वामी ने स्पष्ट निर्देशित किया है कि' अधिवासना, नेत्रोन्मीलन, तिलकदान, अंकन्यास, सूरिमंत्र, प्राण प्रतिष्ठा यह क्रियायें प्रत्येक मूर्ति में होना चाहिये।(२)

अन्य विधि पुण्यबंध कराने वाली है वह विधिनायक प्रतिमा में करते हुये विशेष भक्ति पूर्वक करना चाहिये इस प्रकार पंचकल्याणक विधि स्वभाव सिद्ध है। प्रतिष्ठाचार्य का कर्तव्य है कि प्रमादरहित सावधानी के साथ प्रत्येक क्रिया करे तब ही प्रतिष्ठा उत्तम एवं फल दायक होती है।

सामग्री वर्णन (३)

जिनेन्द्र अर्चना के लिये अष्ट प्रकार की सामग्री का वर्णन प्रतिष्ठापाठ, धवलापुस्तक (८) एवं श्रावकाचार आदि ग्रंथों मे विस्तृत रूप से किया गया है। वर्तमान में कोई मात्र भावपूजा को प्रधानता देते हैं उन्हें दीप, धूप आदि से पूजा करना उचित नहीं लगता किन्तु आचार्यो ने गृहस्थ श्रावक को अष्ट द्रव्य से पूजा करने का ही विधान बतलाया है। अतः अष्टद्रव्य से ही पूजा करें।

गृहस्थ को अष्ट द्रव्य से भाव सहित पूजा करने का विधान है सामग्री लाने एवं बनाने में विवेक भी आवश्यक है। आगम में प्रमाद को पाप और अहितकर माना है फिर वह प्रमाद चाहे बाहर का हो या अंतरंग का। अतएव किसी भी कार्य मे प्रमाद नही करना चाहिये। शुद्ध, प्रासुक निर्दोष सामग्री से बुद्धि पूर्वक जिनेन्द्र पूजा करना श्रावक का प्रथम कर्तव्य है।

(१) जल- गंगादि शुद्ध तीर्थ से उत्पन्न, सूतीवस्त्र से छना हुआ, प्रासुक (अग्नि से गर्म किया) होना चाहिये।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा., श्लोक ६४ एवं ६६
(२) वही, श्लोक ३४९ (३) वही, श्लोक ९४ से १०७

(२) **चन्दन**- केशर, कर्पूर, मलयागिरि चन्दन, प्रासुक जल से बना हुआ हो तथा बहुत ही सुगंध युक्त हो ।

(३) **अक्षत**- उज्ज्वल, अखण्ड उत्तम चावलो को तीन बार प्रासुक- जल से धोकर उपयोग करना चाहिये ।

(४) **पुष्प** - ग्रंथों में तीन प्रकार के पुष्पों की चर्चा की गई है ।

१. प्रासुक, निर्जीव सुगंधित पुष्प ।

२. चांदी एवं स्वर्ण से बनवाये गये पुष्प ।

३. केशर से चावलों को रंगकर बनाये गये पुष्प ।

(५) **नैवेद्य** - शर्करा एवं घृत से बनाये गये मोदक आदि, किन्तु इनके लिये विशेष सावधानी का भी वर्णन है । प्रतिदिन मर्यादित (दिन मे ही) बनाये नैवेद्य हो । वर्तमान में गोला की चिटक का उपयोग शुद्ध है ।

(६) **दीप** - घृत जो (स्वयं शुद्धि पूर्वक बनाया गया) या रत्नों का दीप जिनेन्द्र पूजा मे प्रयोग करना ।

(७) **धूप** - अगर-तगर, मलयागिर आदि शुद्ध पदार्थो से सुगंधित धूप बनाकर अग्नि में क्षेपण कर पूजा करे । **ध्यान रखें कि धूप बाजार की बनी हुई न हो ।** मर्यादित शुद्ध पदार्थो से बनवाकर उपयोग करे अथवा मलयागिरी चंदन को रेती से बुरादा बनाकर उपयोग करना चाहिये ।

(८) **फल** - सुन्दर, मनोहर, प्रासुक, अचित्त फलो से जिनेन्द्र भगवान की पूजा करना ।

सामग्री मे प्रासुकता एवं उत्कृष्ट निर्दोषता का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है । सदोष सामग्री का उपयोग पूजा में नहीं करना चाहिये। मूर्खपना, कृपणता, योगरहित (मन, वचन एवं काय द्वारा प्रमाद) सामग्री जिनेन्द्र पूजा मे योग्य नहीं मानी है ।[१] अतः जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा मे या नित्यमह पूजा में सामग्री शुद्ध एवं आगमानुकूल होना चाहिये । **पूजा विधि में मनमानी करने की आज्ञा आगम में नहीं है ।**

द्रव्य, क्षेत्र, काल एवं भाव शुद्धि

(१) **द्रव्य**- सचित्त अचित्त के भेद से दो प्रकार के द्रव्य माने हैं। सचित्त द्रव्य प्रतिष्ठापक, प्रतिष्ठाचार्य इन्द्रादि पात्र यह सब संयमी आगमानुसार चर्या करने वाले होना चाहिये।

अचित्त द्रव्य, प्रतिमा, वेदी, मण्डप, पूजा के बर्तन, सामग्री आदि समस्त साधन, वस्त्रादिक शुद्ध, नवीन, उत्तम होना चाहिये ।

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक १०४

(२) क्षेत्र - पवित्र, मनोज्ञ, निर्जीव, उपद्रव रहित, तीर्थभूमि के निकट निर्दोष, ईतिभीति, अग्निभय रहित, श्मशान भूमि न हो, नदी, तालाब, बगीचा,निकट हो आर्य पुरुषों से युक्त हो, अनार्यो का निवास न हो ऐसा उत्तम स्थान होना चाहिये।

(३) काल : वर्षाकाल न हो, राजा मंत्री आदि का मरण न हुआ हो, रोग, महामारी, शत्रु आदि की पीड़ा न हो, भूकंप, दिशादाह, स्वचक्र, परचक्र ,चोर डाकू आदि का भय न हो, सर्वोपद्रव रहित, निर्दोष काल होना चाहिये ।

(४) भाव - समस्त संघ में प्रसन्नता हो, धर्म वृद्धि हो, उत्सव में प्रसन्न चित्त, आनन्द उल्लास हो, भव्य जीवों का उपयोग निर्मल हो, साधु सन्त विद्वानों के समागम से परिणाम निर्मल हों, धार्मिक अनुष्ठान करने का उत्साह हो इस प्रकार भाव पवित्र होना चाहिये ।

प्रतिष्ठा पात्रों की शुद्धि एवं मंत्राराधन विधि

प्रतिष्ठा पात्रों की शुद्धि सकलीकरण और अंगन्यास क्रिया से मंत्रों द्वारा की जाती है। सकलीकरण के दो भेद हैं। [१]

(१) निश्चय (अंतरंग) सकलीकरण (२) बाह्य सकलीकरण

अन्तरंग सकलीकरण मन, वचन एवं काय की निर्मलता के साथ क्रोध, मान, माया, लोभादिक कषायो की मन्दता हो जाना । इसमें अन्दर के विकारों का अभाव जितने अंश में होता है वही यथार्थ सकलीकरण माना जाता है ।

बाह्य सकलीकरण में मंत्रित जल से शरीर शुद्धि करना । इस विधि में मन वचन काय एवं कषायो की मंदता करने के लिये नियम व्रतादिक धारण करना अनिवार्य है ।

(१) सप्त व्यसन का त्याग (२) अष्टमूलगुणों का पालन (३) रात्रिभोजन त्याग (४) अभक्ष्य भक्षण त्याग (५) नशीले पदार्थो का त्याग (६) ब्रह्मचर्य का पालन (७) भूशयन (८) त्रिकाल सामायिक (९) विषय कषाय की मन्दता (१०) एकाशन (११) व्यग्रता, चित्त की चंचलता एवं आलस्य का त्याग (१२) ताम्बूल (पान) तम्बाखू, गुटका, पान मसाला आदि का त्याग इनके साथ जिनेन्द्र पूजा एवं स्वाध्याय करना आवश्यक है।

कार्य की निर्विघ्नता के लिये लघुकार्यो में कम से कम ११ ग्यारह हजार मध्यम ५१ इक्यावन हजार एवं बिम्ब प्रतिष्ठा आदि में सवा लाख, शान्ति मंत्रों का जाप किया जाना आवश्यक है ।

कार्य के समापन में दशांश मंत्रों द्वारा आहुतियां (हवन) करना आवश्यक है। वर्तमान में हवन कार्य आगमानुसार नहीं हो रहा है जो गलत है । [२]

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ३६९ (२) वही. श्लोक ४२७

वर्तमान मे बिना अग्नि के पुष्पों से हवन करने की पद्धति आरम्भ हुई है जिसका किसी आगम ग्रंथ में कोई उल्लेख नही है। जबकि धूप के प्रयोग का उल्लेख आचार्य कुन्दकुन्द ने चैत्यभक्ति में, धवलापुस्तक (८) पृष्ठ ९२ एवं जिनसेनाचार्य ने आदि पुराण मे संस्कारो का वर्णन करते हुये, संस्कार विधि और हवन करने का विधान विस्तृत रूप मे किया है। (देखें धूप एवं हवन आगम की दृष्टि मे)

प्रतिष्ठाकार्यो मे भक्तियॉ, यंत्र एव मंत्राराधन, प्रतिष्ठा कार्य में संलग्न प्रत्येक पात्र की मन, वचन, काय की शुद्धि के साथ श्रद्धा एवं समर्पण की भावना परम आवश्यक है। प्रतिष्ठा मे सूरिमंत्र, प्राण-प्रतिष्ठा के द्वारा पूज्यता स्थापित की जाती है। भक्तियॉ एवं मंत्र संस्कार गुरु(मुनिराज) आचार्य के द्वारा ही किये जाना चाहिए।

बिना गुरु के मंत्र शक्तिहीन हो जाते हैं।

मंत्र का निर्दोष उच्चारण, भावो की विशुद्धता एवं महाव्रती की संयम साधना से जब प्रतिमा सस्कारित होती है तभी करोड़ो श्रद्धालुओ का मस्तक स्वयमेव झुक जाता है। अर्चना वन्दना के स्वर गुंजायमान होते हैं। ऐसी प्रतिष्ठित प्रतिमाये धर्मायतनों में स्थापित करके भक्त धन्य होते है और संयम पूर्वक अपना जीवनधन्य करते है। प्रत्येक क्रिया मे भक्तियां, यंत्र, मण्डल एवं मंत्राराधन (१०८ बार), आगमानुसार करना चाहिये [१]

प्रतिठाचार्य का कर्त्तव्य है कि वह सभी कार्य/ क्रियाये समय पर करावें तभी पूर्ण विधिविधान संभव है। कल्याणको के साथ-साथ सभी कार्यो में आवश्यक मंत्र यंत्र मण्डल एवं भक्तियो का वर्णन इस प्रतिष्ठा ग्रंथ मे क्रिया के पूर्व मे दिया गया है।

प्रत्येक कल्याणक की क्रिया प्रतिष्ठाग्रंथो मे वर्णित समय पर करना चाहिये। दीक्षा कल्याणक मध्यान्होपरांत (चाहे ग्रीष्म ऋतु हो या शीत ऋतु) मुनिराज के सान्निध्य मे ही किया जाना चाहिये। रागी गृहस्थ (प्रतिष्ठाचार्य) वीतरागी प्रतिमा की क्रियाओ को नहीं करे। दीक्षा क्रिया अकन्यास सस्कारारोपण सभी क्रियायें दिगम्बर मुनिराज के द्वारा कराना चाहिये। ऐसी मेरी भावना है। अंकन्यास एवं सस्कार विधि आचार्य जयसेन स्वामी ने तपकल्याणक के दिन ही करने को लिखा है, किन्तु अन्य प्रतिष्ठा ग्रंथो मे यह क्रियाये ज्ञान कल्याणक के दिन तिलक दान के समय करने का वर्णन है। प्रतिष्ठा सारोद्धार, प्रतिष्ठा तिलक (कोल्हापुर) मे पहले संस्कार विधि बाद मे अंकन्यास विधि दी है। प्रतिष्ठा विधि दर्पण मे तपकल्याणक के दिन संस्कार विधि तथा ज्ञान कल्याणक मे अंकन्यास क्रिया का विधान है। आज वर्तमान मे मुनिदीक्षा के साथ मे ही संस्कार विधि की जाती है। विद्वान/प्रतिष्ठाचार्य यथार्थ निर्णय करे।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. पृष्ठ १२० से १३८

ज्ञानकल्याणक के दिन यज्ञ वेदी पर केवल प्रतिष्ठा कार्य में संलग्न पात्र पूर्ण शुद्धि सहित उपस्थित हो अन्य सभी का प्रवेश वर्जित करें पवित्रता पूर्ण, शांत वातावरण बनाये जिससे सभी का चित्त एकाग्र हो सके। सभी इन्द्र इन्द्राणियां णमोकार महामंत्र की जाप निरन्तर करते रहे जब तक कि कार्य पूर्ण नहीं होता है।

ज्ञान कल्याणक का कार्य शीघ्र आरम्भ करना चाहिये चूंकि प्राणप्रतिष्ठा सूरि मंत्र पंचकल्याणक में अति महत्वपूर्ण क्रिया है। इस दिन की क्रियायें समस्त प्रतिमाओं पर होना आवश्यक है सभी मंत्रो की आराधना १०८ बार शुद्ध उच्चारण के साथ अलग-अलग करना चाहिये। भक्तियाँ एवं विशेष मंत्रों का जाप मुनिराज से भी करा सकते है।

आचार्य जयसेन कृत प्रतिष्ठा पाठ मे तिलकदान विधि में शचि (इन्द्राणी) मंगल भावना के साथ इस महत्वपूर्ण कार्य को संपादित करने के लिये प्रतिष्ठाचार्य का तिलक करके सम्मानित करती है कि यह मंगल कार्य आप निर्विघ्न सम्पन्न करावें। (१)

परन्तु आज प्रतिष्ठाचार्यो ने इस मंगल क्रिया को अर्थोपार्जन का साधन बना लिया है, जो उचित नहीं है।

मुखोद्घाटन क्रिया के समय यवमाला और सप्तधान्य को प्रतिमा के सामने रखने को लिखा हे मुख पर बांधने को नहीं। श्लोक ८४७ में यथाख्यात् चारित्र प्राप्त जिनेन्द्र की पूजा की और ८४८ वे श्लोक मे मोहनीय, दर्शनावरणी, ज्ञानावरणी और अन्तराय कर्म के अभाव करने वाले जिनेन्द्र को अर्घ चढाया गया है। इस प्रकार बारहवें गुणस्थान मे स्थापित बिम्ब की कल्पना की गई तब उस प्रतिमा के मुख पर कपड़ा बांधा जाना कैसे संभव है। प्रतिष्ठा पाठ मे प्रतिमा के सामने परदा लगाने को लिखा कि "प्रतिमा इतनी तेज स्वरूप हो गई है कि साधारण व्यक्ति उसे देख नहीं सकता" अतएव परदा करे 'मुखाग्रमहवस्त्रमुपाकरोमि' पश्चात् मंत्र द्वारा परदा खोलने को भी लिखा "इति मंत्रेण मुखादग्रे वस्त्रयवनिकां दूरमुत्सारयेत्" इतना स्पष्ट वर्णन होने पर भी आज प्रतिष्ठाचार्य मनमानी कर रहे हैं।

आचार्य नागसेन स्वामी ने इसका विशेष स्पष्टीकरण पृष्ठ २८० पर किया है।

'इति मुखाग्रे वस्त्रयवनिकां दत्त्वा यवमालावलयं जिनपादाग्रतः स्थापयेत्'

सामान्यतः भी मूल पाठ मे 'वस्त्र यवनिकां दत्वा' का तात्पर्य वस्त्र का परदा करना (देना) है, तब यह क्रिया आगम विरुद्ध क्यो? जब एक दिगम्बर मुनिराज के शरीर पर वस्त्र डालने से उनका दिगम्बरत्व खण्डित होता हे तब बारहवें गुणस्थान में स्थापित

---

(१) [illegible] श्लोक ८८९ से ८९१

बिम्ब पर वस्त्र बांधना कहां तक संगत है ? आशा है प्रतिष्ठाचार्य इस विषय पर गंभीरता पूर्वक विचार कर क्रिया मे सुधार करेगे ।

सूरि मंत्र मुनिराज के द्वारा ही दिलाना चाहिये । प्रतिष्ठाचार्य को सूरि मंत्र देना मैं उचित नहीं मानता । रागी गृहस्थ वीतरागी प्रतिमा को सूरिमंत्र नहीं दे सकता तथापि कोई – कोई प्रतिष्ठाचार्य लंगोटी लगाकर (नग्न होकर) सूरि मंत्र देते है किन्तु वस्त्र धारी निर्ग्रंथ बिम्ब को सूरि मंत्र दे कदापि उचित नहीं। कोई – कोई प्रतिष्ठाचार्य वस्त्र उतारकर सूरि मंत्र देते हैं वह ध्यान करे कि दिगम्बर मुद्रा धारण करने के पश्चात् वस्त्र धारण नहीं करना चाहिये जैसे ब्रह्मगुलाल मुनिराज । स्वयं विचार करें क्या इस प्रकार दिये गये सूरिमंत्र और प्राण प्रतिष्ठा से जिनबिम्ब प्रतिष्ठा निर्दोष नहीं हो सकती है ?

गुरु आज्ञाउपलंभन विधि के अनुसार आचार्य/मुनिराज से आशीर्वाद प्राप्त करके यज्ञ दीक्षा संस्कार ग्रहण करके ही प्रतिष्ठाकार्य उनके निर्देशानुसार संपादित करना चाहिये ।[१] वृहत्संहिता मे श्री वराहमिहर ने पृष्ठ ४०२ मे प्रतिमा प्रतिष्ठापन के अधिकारी शीर्षक मे स्पष्ट लिखा है कि **"जिन की प्रतिष्ठा दिगम्बर क्षपण करें"** ।

अत. सूरिमंत्र के लिये मुनिराज का होना अनिवार्य है। बिना मुनिराज के प्रतिष्ठा नहीं होना चाहिये ऐसा मेरा विचार है ।

आचार्य श्री जयसेन स्वामी ने प्रतिष्ठा पाठ एवं पण्डित आशाधर जी ने प्रतिष्ठा सारोद्धार मे अर्हन्त बिम्ब की प्रतिष्ठा की पूर्ण विधि दी है । सिद्ध परमेष्ठी (निर्वाण कल्याणक) की प्रतिष्ठा मे अष्ट गुणारोपण निर्वाण भक्ति सिद्ध परमेष्ठी के गुणो की पूजा का विधान दिया है अन्य क्रियाये नही दी हैं ।

अन्य सब प्रतिष्ठा ग्रंथो में निर्वाण कल्याणक की क्रिया विस्तार से दी गई है, जिनालय मे अरिहन्त बिम्ब की स्थापना होती है अतएव चार कल्याणको की विधि विस्तार पूर्वक दी है निर्वाण कल्याणक सिद्ध परमेष्ठी का होता है यह विषय विचारणीय है ।

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा मे यंत्रो की महत्वपूर्ण उपयोगिता है । प्रतिष्ठा कार्य मे उपयोग होने वाले प्रत्येक यंत्र का अपना महत्व एवं प्रभाव है, तीर्थंकरों के पूर्ण जीवन वृत्त को ५ दिनो मे इन्हीं यंत्रो के माध्यम से पूर्ण किया जाता है । विनायक यंत्र पंचपरमेष्ठी एवं मंगल उत्तमशरण की साक्षी, सुरेन्द्र यंत्र इन्द्रों की उपस्थिति, वर्धमान यत्र उत्तरोत्तर शरीर, आयु की वृद्धि, इसी प्रकार अन्य यत्र ध्यान की वृद्धि गुणस्थानो का आरोहण दर्शाते हैं । परन्तु निर्दोष प्रतिष्ठा के लिये यंत्रो की शुद्धि एवं प्रतिष्ठा अनिवार्य है ।

---

(१) प. आ. ध., प्र. सा., पृष्ठ १२२, ७/३६

श्रीचन्दनादिवेद्यां तु पट्टादौ सम्यगुद्धृतम्
सिद्धचक्रादि संपूज्य तत्पत्रं पुष्पमण्डपे ।
मंगल द्रव्य सर्वौषधन्मिश्र तीर्थवारिणि
निशामुषितमानीयं निवेश्य स्नपनमण्डपे ।।(१)

आगमानुसार यंत्रों की शुद्धि एवं प्राण प्रतिष्ठा के द्वारा ही करना चाहिये । मात्र हवन कुण्ड मे रखने से यंत्र शुद्ध नहीं होते हैं ।

जिस प्रकार प्रतिमा को संस्कारित किया जाता है, उसी प्रकार यंत्रों को भी संस्कारित करके प्राण प्रतिष्ठा की जाती है क्योकि जिन बीजाक्षरों द्वारा प्रतिमा मे संस्कार किये जाते हैं उन्ही बीजाक्षरो को यंत्र पर अंकित किया जाता है। सिद्ध चक्र यंत्र पूजा में उस पर अंकित बीजाक्षरों की ही पूजा की जाती है । ऋषिमण्डल विधान में शब्द ब्रह्म और परमब्रह्म दो प्रकार के ब्रह्मों का वर्णन आया है शब्द ब्रह्म जिनवाणी यंत्र आदि है तथा परमब्रह्म प्रतिमाऐं हैं ।

जिस प्रकार प्रतिष्ठित प्रतिमा पूज्य है उसी प्रकार प्रतिष्ठित यंत्र भी उतने ही पूज्य हैं। अतः यंत्रो की भी वही विनय पूजन – प्रक्षाल करना अनिवार्य है। यदि यंत्रों को गृहनिवास मे स्थापित करे तो वहां भी उनकी शुद्धि, विनय आवश्यक है , प्रतिष्ठित यंत्रों की अविनय से दोष लगता है अतः इसका विशेष ध्यान रखें ।

हवन के द्वारा शुद्ध किये तावीज, अंगूठी, कड़ा एवं अन्य सामग्री का उपयोग करते समय ध्यान रखे कि उनको अशुद्ध स्थान (शौच आदि स्थानों पर) पर न ले जावें अशुद्ध अवस्था मे धारण न करे अन्यथा उनका विपरीत एवं प्रतिकूल प्रभाव हो सकता है ।

धार्मिक अनुष्ठानो को व्यवसाय का साधन नहीं बनाना चाहिये। प्रतिष्ठाचार्य एवं श्रावकों को भी चाहिये कि विधि विधान की क्रियाये आगमानुसार की जा रही हैं या नहीं इसका ध्यान रखे तभी क्रियाये सही हो सकेगी ।

यंत्रो की प्रतिष्ठा के समान ही जिनवाणी की स्थापना जिनालय में की जाती है, मंत्राराधन के उपयोग मे आने वाली माला (जाप) की भी शुद्धि मंत्र द्वारा करना चाहिये ।

चतुर्विधिमहासंघं संतप्याहारभेषजै:
योग्योपकरणं दत्वा यष्टा संपूजयेत्स्वयम् ।
प्रतिष्ठाचार्यमानम्य तस्यात्मानं समर्प्य च,
वस्त्रेराभरणाद्यैश्च संपूज्य क्षमयेत्ततः ।

---

(१) प्र. सा. प्र. सा. अ. ६ श्लोक ५६-५७

संमान्य सूत्रधारादीन् स्वर्णवस्त्रान्नभूषणैः
गांधर्वनर्तकादींश्च यथार्ह तत्समर्पयेत् ॥[१]

प्रतिष्ठाकारक का कर्तव्य है कि चतुर्विधसंघ का, प्रतिष्ठाचार्य का, प्रतिष्ठा सहायक का, गंधर्वादि का वस्त्राभूषण आदि से यथायोग्य सम्मान करें। प्रतिष्ठाचार्य को भी निर्लोभी होना चाहिये। विधि विधान कराने की राशि तय नहीं करना चाहिये, श्रावक जैसा सम्मान करे सहजता से संतोष पूर्वक स्वीकार करना चाहिये ।

इस कृति के संकलन मे मुख्य आधार आचार्य जयसेन[२] कृत **"प्रतिष्ठापाठ"** है। आचार्यश्री ने मुहूर्त, मंदिर निर्माण, प्रतिमा माप एवं निर्माण से लेकर प्रतिष्ठा पात्रों की योग्यता, भक्तियॉं, मंत्राराधन, यंत्र निर्माण विधि एवं फल आदि विषयों की विवेचना सुन्दर ढंग से की है ।

प्रतिष्ठापाठ के अतिरिक्त क्रियाओ के विशद् विवेचन हेतु अन्य प्रतिष्ठा ग्रंथ जैसे प्रतिष्ठा सारोद्धार, प्रतिष्ठा तिलक, प्रतिष्ठा दर्पण के साथ साथ आगमग्रंथ, वास्तु शास्त्र, ज्योतिष ग्रंथो सहित लगभग ९५ ग्रंथो का आलोडन करके प्रमाण पूर्ति करने का प्रयास किया है। मेरा विश्वास है कि यह ग्रंथ प्रतिष्ठा विधि विधान के सम्पन्न कराने मे अत्यंत सहयोगी होगा ।

मुझे प्रतिष्ठा संबधी जितना ज्ञान श्रद्धेय गुरुजनो, विद्वानो एवं जिनवाणी के स्वाध्याय से मिला है इस ग्रंथ में देने का प्रयास किया है। किसी भी विधि विधान को आगम के विपरीत नहीं लिखा है फिर भी मेरी अल्पज्ञता से कहीं कोई भूल हो गई हो तो विद्वज्जन उसको सुधारकर मुझे सूचित करें। अनुपलब्ध विषयों को भी आगम द्वारा प्रस्तुत करने का प्रयास किया है इसमे जो भी शंका समाधान हो आचार्य तथा मुनिराज एवं विद्वज्जन मुझे संकेत करके उपकृत करेगे ।

मेरा आशय किसी को भी ठेस पहुंचाने का नही है तथापि यदि किसी को कोई संक्लेश हो कृपया क्षमा करे। मेरी यही भावना है कि विधि विधान आगमानुसार होना चाहिये हमारे सहयोगी विद्वानो से भी अनुरोध है वह इस ओर ध्यान देवे तथा नवीन प्रतिष्ठाचार्यों को संकेत है कि वह जो भी क्रिया करावे आगम ग्रंथो मे देख ले, विवेक पूर्वक कार्य सम्पन्न करावें; आगम के साथ छल न करे श्रावको की भावना के अनुरूप अपनी पूर्ण निष्ठा, शक्ति से विशुद्धि पूर्वक विधि विधान सम्पन्न करावें ।

(१) पं., आ. ध., प्र सा. ७ पृष्ठ १२३ (२) आ. ज. से. प्र. पा. पृष्ठ ३०८ श्लोक ९२३

'प्रतिष्ठा रत्नाकर' के प्रकाशन की प्रेस कापी–तैयार करने का कार्य हमारे प्रिय स्नेही पं० नन्हे भाई जी शास्त्री सागर ने अथक परिश्रम करके किया। ग्रंथ प्रकाशन मे मूर्धन्य विद्वान श्रद्धेय पं० जगन्मोहन लाल जी सिद्धांतशास्त्री कटनी एवं डा० पं० श्री पन्ना लाल जी साहित्याचार्य सागर से विशेष सुझाव एवं विषय संयोजन हेतु निर्देश मिले तथा लिपि सशोधन (प्रूफरीडिंग) का कार्य वरिष्ठ विद्वान पं० बाबूलाल जी फाल्गुल वाराणसी, पं० मूल चन्द्र जी शास्त्री टीकमगढ, पं० दया चन्द्र जी शास्त्री अजयगढ एव डा० जय कुमार जी मुजफ्फरनगर ने अत्यधिक परिश्रम के साथ किया, ग्रंथ संपादन का दुरूह कार्य प० डॉ० दरबारी लाल जी कोठिया बीना ने स्वीकार करके मेरा गौरव बढाने के साथ ग्रथ के संयोजन/परिमार्जन मे अथक परिश्रम करके जटिल विषयों का सरलीकरण कर नवीन विद्वानों पर उपकार किया है। आप सभी के सक्रिय सहयोग से ही मै इस कार्य को निष्पादित कर सका हूँ। मै सभी का हार्दिक आभारी एवं कृतज्ञ हूँ।

प्रतिष्ठा रत्नाकर की सामग्री संयोजन का कार्य परम पूज्य आचार्य श्री १०८ विद्यासागर जी महाराज के आशीर्वाद से प्रतिष्ठा क्षेत्र में आये चि० ब्र० जय कुमार निशांत एम०एस–सी० ने दिन-रात परिश्रम करके निष्ठा एवं श्रद्धा के साथ करते हुये प्रतिष्ठा कार्य भार को भी सभाला है। इस ग्रंथ के संकलन में अरिहंत साहित्य सदन परिवार मुजफ्फरनगर के लाला श्री श्रीचन्द्र जी एवं परिवार का सक्रिय सहयोग मिला तथा मुद्रण मे मे० माईक्रोजोन देहरादून भारतीय ख्याति प्राप्त रंगकर्मी पी.डी. रूद्र कुमार झा (छिन्दवाडा) ने अपने चित्रों द्वारा ग्रन्थ की सुन्दरता मे अपना सहयोग दिया है, साथ ही मुझे जिन महानुभावों का सहयोग प्रत्यक्ष/परोक्ष में मिला है उन सभी के प्रति मै आभारी हूँ।

उपकृत हूँ परम पूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज की मुनि शिष्य परम्परा के पंचम मुनि श्री उपाध्याय गुप्तिसागर जी महाराज का। जिनके शुभाशीर्वाद एवं सत्प्रेरणा से यह ग्रन्थ प्रकाशित हुआ। प्रकाशन कार्य प्रीति विहार जैन समा दिल्ली के सौजन्य से हुआ। उपाध्याय श्री के चरणो मे नमन करत ुए समाज के प्रति आभार एवं साधुवाद ज्ञापित करते हुए कामना करता हूँ कि सभी की रुचि इसी प्रकार जिनवाणी के प्रचार–प्रसार एवं धार्मिक कार्यो में निरन्तर बनी रहे।

मैं अपने परमपूज्य पिता श्री पं० मन्नूलाल जी प्रतिष्ठाचार्य का ऋणी हूँ जिनके प्रसाद से इस कार्य की शिक्षा मुझे मिली जिससे मै इस योग्य बन सका।

विनम्र भाव सहित ... ।

पुष्प भवन, टीकमगढ (म०प्र०) पं० गुलाब चन्द्र पुष्प 'प्रतिष्ठाचार्य'
फोन : ०७६८३-२३१३८

कब, कहां, कैसे ...?

समाज के विस्तार एवं विकास के साथ-साथ जिन मंदिरों का निर्माण एवं पचकल्याणक जिनबिम्ब प्रतिष्ठायें भी उसी अनुपात में हो रही हैं। मूलतः प्रतिष्ठा का विधिविधान संस्कृत भाषा में है। जो कि प्रतिष्ठापात्रों की समझ से परे हैं। अतः पूरे आयोजन की शुद्धि / क्रिया/ सफलता प्रतिष्ठाचार्य पर निर्भर रहती है, जब भी 'जिनवाणी' को आधार मानकर सभी कार्य पूर्णविशुद्धि एवं विधिविधान पूर्वक किये हैं, तब वह निर्विघ्न सम्पन्न हुये है, लेकिन जब जब 'जनवाणी' को आधार बनाकर प्रतिष्ठाकार्य सम्पन्न हुये हैं, कोई न कोई व्यवधान अवश्य उपस्थित हुआ है।

अतः सभी प्रतिष्ठाचार्यो से अनुरोध है कि न आगम को तोडें और न अपनी ओर से जोडें जैसा आगम में विधिविधान दिया है तदनुसार ही कार्य सम्पादित करें।

चतुर्थ काल में सर्वोत्कृष्ट पुण्य प्रकृति का बंध करने वाले तीर्थकरों के पांचों कल्याणकों का उत्सव स्वयं सौधर्म इन्द्र समस्त देवो सहित आकर विशेष प्रभावना और भक्ति पूर्वक करता था। अवसर्पिणी के इस पंचम काल में न तीर्थकर होने का नियम है और ना ही वैमानिक देवों का आगमन है, इसी कारण स्थापना निक्षेपानुसार धातु / पाषाण की प्रतिमाओ में तीर्थकरों की स्थापना करते हैं, इस भव्य आयोजन में मनुष्यों में ही इन्द्र की कल्पना कर प्रभावक एवं भक्तिपूर्वक पंचकल्याणक समारोह का आयोजन करते है।

पंचकल्याणकों का वर्णन केवली भगवान की दिव्यध्वनि के अनुसार जिनागम के बारहवे दृष्टिवाद अंग के अन्तर्गत किया गया है, इसके पांच भेद हैं-

(१) परिकर्म (२) सूत्र (३) प्रथमानुयोग (४) पूर्वगत (५) चूलिका

इनका जो चौथा पूर्वगत भेद है, उसके चोदह भेद बताये हैं, उसका जो ग्यारहवां भेद कल्याणपाद नाम का पूर्द है उसकी पद संख्या छब्बीस करोड़ है। उसमें तीर्थकरो के गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान एवं निर्वाण कल्याणक का सम्पूर्ण वर्णन है, उसी का आधार लेकर पूर्वाचार्यो ने पचकल्याणक क्रिया सम्बन्धी प्रतिष्ठाशास्त्रों की रचना की है, वर्तमान मे उन्ही प्रतिष्ठाग्रंथो के आधार से समस्त क्रियाये सम्पन्न कराई जाती हैं, मुख्य ग्रंथ निम्न हैं।

(१) श्रीमद् जयसेनाचार्य कृत्त प्रतिष्ठापाठ (संस्कृत)

(२) श्रीमद् वसुनन्दी आचार्य कृत्त प्रतिष्ठासार संग्रह (संस्कृत)

(३) श्री नेमिचन्द्रदेव कृत प्रतिष्ठा तिलक (संस्कृत)

(४) श्री पं० प्रवर आशाधरजी कृत प्रतिष्ठासारोद्धार (सस्कृत)

(५) श्री पं० शिवजीराम पाठक रांची द्वारा संकलित प्रतिष्ठाचन्द्रिका, (संस्कृत)

(६) श्री ब्र० शीतल प्रसाद जी द्वारा सकलित प्रतिष्ठासार संग्रह (संस्कृत, हिन्दी)

पूर्व में प्रतिष्ठाकार्य संस्कृत पूजा पद्धति से निष्पादित होते थे परन्तु वर्तमान में वैज्ञानिक साधनों एवं आधुनिकता के कारण प्रतिष्ठा कार्य ब्र० शीतल प्रसाद जी के द्वारा हिन्दी पद्य में अनुवादित 'प्रतिष्ठासार सग्रह' से कराया जाता है। **शैली एवं संगीत सुरुचिपूर्ण और भक्तिमय हो यह आवश्यक है, पर संगीत और मंचीय प्रदर्शन की बहुलता में भक्ति छूट जाये या आगम में वर्णित कल्याणक की मूल क्रियाओं (मंत्राराधन, भक्तियां आदि) को संक्षिप्त या अधूरा किया जावे ठीक नहीं है।**

आज पंचकल्याणक प्रतिष्ठा सुविधानुसार होने लगी है, प्रतिष्ठाकारक जहां जैसा भी कराना चाहते हैं, प्रतिष्ठाचार्य कराने को तैयार हो जाते है। प्रतिष्ठा ग्रथो का ध्यान न रखकर मनमाने समय पर कल्याणक किये जाते हैं। जबकि आचार्य जयसेन स्वामी ने विशेष रूप से दिशा एवं समय का ज्ञान कराया है, किन्तु आज प्रतिष्ठा धार्मिक अनुष्ठान न होकर प्रदर्शन मात्र रह गई है। जो प्रतिष्ठाचार्य जितना प्रदर्शन करा सकता है समाज उतनी ही प्रसन्न होती है, और प्रतिष्ठा को अच्छा मान लेती है। किन्तु ध्यान रखना आवश्यक है कि -

'अर्थहीनाऽथ कर्तारं मंत्रहीना तु ऋत्विजम्।
श्रियं लक्षणहीना तु न प्रतिष्ठा समो रिपुः ।।[१]

द्रव्यहीन प्रतिष्ठा यजमान का, मंत्रहीन प्रतिष्ठा आचार्य का, लक्षणहीन प्रतिष्ठा लक्ष्मी का विनाश करती है।[१]

इस प्रकार विधिहीन प्रतिष्ठा विनाश करने वाली है।

धार्मिक अनुष्ठान के लिये बनाई गई यज्ञवेदी भी राजनैतिक मंच बन गई है, जिस पर सांस्कृतिक कार्यक्रम, राजनेताओं का स्वागत समारोह एवं अन्य सभी कार्य कराये जाते है, जो यज्ञवेदी की गरिमा/पवित्रता को नष्ट करते हैं। प्रतिष्ठाचार्य एवं प्रतिष्ठाकारक का कर्तव्य है कि वह मर्यादा एव प्रतिष्ठा शास्त्रो का ध्यान रखते हुये सांस्कृतिक मंच का अलग निर्माण करायें।

वर्तमान में प्रतिमाओ में अतिशय या चमत्कार नही पाते हैं, यह प्रतिमा की नहीं वरन् हमारी श्रद्धा, भावना और शुद्धता की कमी है, आज आगम को किनारे करके मनमाने

---

(१) वृहद वास्तुमाला, पृष्ठ १७८ श्लोक ३५

समय और मनमानी क्रियाये करकेप्रतिष्ठाये सम्पन्न की जा रही हैं, पात्रों की योग्यता, अर्थ की विशुद्धि (न्यायपूर्वक पैदा किया गया धन) प्रतिष्ठाचार्य का ज्ञान/चरित्र, आचार्य/ मुनि का सान्निध्य, मंत्राराधन, भक्तियां एव कल्याणक क्रिया का काल, दिशा आदि किसी को भी महत्व नही दिया जाता, फिर आगम विरुद्ध क्रियाओं द्वारा प्रतिमा मे अतिशय कैसे आ सकते हैं। यहां आशय आलोचना का नहीं किन्तु आगम को तोड़ने/ छोड़ने को इंगित करने का है, आगमानुकूल कहां/ कब/ कैसा करना चाहिये निम्नानुसार है :-

मण्डप

मण्डप की लम्बाई, चौड़ाई से डेढ़ गुनी होना चाहिये मण्डप का मुख्य द्वार पूर्व या उत्तर दिशा मे होना चाहिये।

यज्ञवेदी

वेदी चतुर्विधा तत्र चतुरस्त्रा च पद्मनी।
श्रीधरी सर्वतोभद्रा दीक्षा स्यात् स्थापनादिषु॥
चतुरस्त्रा चतुःकोणा वेदी सौख्यफलप्रदा।
केचिन्चैत्यप्रतिष्ठायां पद्मनी पद्मसंनिमा॥ (१)

वेदी चार प्रकार की होती हैं,

(१) चोकोर वेदी - प्रतिष्ठा कार्य मे (गर्भकल्याणक में)

(२) पद्मनी वेदी (कमलाकार) - समवशरण, ज्ञानकल्याणक में

(३) श्रीधरी (अर्धचन्द्राकार) वेदी - जन्म कल्याणक में

(४) सर्वतोभद्र (अष्टकोणी) वेदी - दीक्षा कल्याणक में

सामान्यतः वेदी चोकोर ही बनाना चाहिये,(२) यदि पात्रो की संख्या अधिक होती है तो वेदी की लम्बाई चोड़ाई से डेढ़ गुनी बनाना चाहिये, वेदी पर केवल प्रतिष्ठा क्रिया, पूजा, जप और होम ही होना चाहिये अन्य कार्य नहीं। सांस्कृतिक कार्यक्रम हेतु अलग से मंच बनाना चाहिये, जिससे अनुष्ठान मे कोई बाधा न आवे और यज्ञ वेदी की पवित्रता बनी रहे।

अथोत्तरस्मे वृत्ति कर्मणे वृत्ती वेदी द्वितीयां विनिवर्त्य पावनीं।
गागीय मंत्राणि तथोत्तरं पृथक् कर्मारंभतां यजनक्रियोचितं॥ (३)

इस सदा मे दो वेदी सम्मत है एक यागमण्डल की १२x१२ की मुख्य वेदी और उत्तर

(१) श्री [illegible] प्रतिष्ठापाठ, - श्लोक २२८, २२९
(२) वही, पृष्ठ [illegible] (३) वही, श्लोक ३४२

कर्म, जपस्थान, मंत्राराधन शान्ति हवन आदि कार्यो के लिये दूसरी वेदी होना चाहिये।

इस प्रकार यागमण्डल वेदी के पास जो मुख्य वेदी है उसी पर समस्त प्रतिष्ठा क्रियायें सम्पन्न कराई जावेंगी अतः शुद्धता/ पवित्रता परम आवश्यक है,

मंत्राराधन

नांदी यस्मिन् दिने क्लृप्ता तदादि प्रत्यहं मनु ।
अनादि सिद्धं जपतां सिद्धिर्लक्ष्मीश्च वर्धते ।। (१)

नान्दी विधान (पात्र प्रतिष्ठा) के दिन से मत्रों का प्रतिदिन जाप करना चाहिये।

स्थिर एवं चल प्रतिमा की प्रतिष्ठा का स्थान

स्थिरांस्थाने निवेश्यार्चा चलां वा यागमण्डले ।
प्रतिष्ठाचार्ययष्टारौ स्थापयेतां यथाविधि ।।(२)

विशाल स्थिर प्रतिमा को अपने पूजन स्थान (जिनालय में) छोटी चल प्रतिमा को यागमण्डल मे रखकर इन्द्र और यजमान विधिपूर्वक प्रतिष्ठा करें।

प्रतिष्ठा हेतु अयोग्य प्रतिमा

नार्चाश्रितानिष्टरुपां व्यंगितां प्राक् प्रतिष्ठिताम् ।
पुनर्घटितसंदिग्धां जर्जरां वाप्रतिष्ठयेत् ।। (३)

ऐसी प्रतिमा प्रतिष्ठायोग्य नही है जो पहले की प्रतिष्ठित हो जिनलिग के सिवाय दूसरा आकार हो, अन्यमूर्ति केआकार को मिटाकर मूर्ति बनाई गई हो, अथवा आकार में संदेह हो, अत्यंत जीर्ण हो गई हो तो प्रतिष्ठा नहीं करना।

गर्भगृह

दक्षिणदिशि जिनवेद्या राजगृहं प्रसृतचत्वराकीर्णम् ।
दशपंचकत्रिकधरणीभागमनेका द्वारयुतम्।।
कुर्यादन्तः पुरकृतसुषममधोभुवि च सर्वतोभद्रम्।
पाषाणकाष्ठशिविरे रचितं दृढ़बंधनाकीर्णम्।।
चलत्पताकं धृततोरणांकं संगीतवादित्रगणेन रुद्धम् ।
स्वर्गात्समानीतमिव प्रक्लृप्तं तदूर्ध्वमागेडितमातृगेहम्।।
स्वप्नावली षोडशचित्रवल्ली संदर्भमांगल्यनियावभासि।
अनेकनारीकलगीतरम्य मन्तःपुरं संविदधीत यज्वा ।। (४)

---

(१) श्री जयसेनाचार्य, प्रतिष्ठा पाठ, श्लोक ३८० (२) पं. आशाधर कृत, प्रतिष्ठा सारोद्धार, श्लोक ८२ (३) (अ) वही, श्लोक ८३ (ब) श्री गोम्मट प्रश्नोत्तर चिंतामणि, पृष्ठ ९०८ (४) श्री जयसेनाचार्य कृत, प्रतिष्ठा पाठ श्लोक ३६० से ३६३ तक

राजगृह (माता) का सर्वतोभद्र महल सुन्दर शोभायुक्त वेदी की **दक्षिण दिशा** में दशखण्ड, पांचखण्ड, तीनखण्ड एवं अनेक अटारियों युक्त हो। यह सर्वतोभद्र भवन पाषाण, काष्ठ वस्त्र के दृढ़ बंधन द्वारा रचित ध्वजातोरण से युक्त संगीत वादित्र आदि सामूहिक व्यवस्थाओं से पूर्ण एव सौभाग्यशाली स्त्रियों के मंगलगीतों से गुंजायमान हो। (अतःपुर की रचना स्वर्ग की विभूति से की जाती है)

हवन कुण्ड

होमार्थकुण्डानि पुरोत्तरस्याः क्रियान्नवोत्कृष्ट तया च पंच।
मध्याद्विधेर्वा त्रयमेव तत्र वृत्तं त्रिकोणं चतुरस्त्रमेव ॥

तन्मेखलानां त्रयमत्रकुण्ड प्रशस्तमार्यैः पृथुनोन्नतत्वे।
वाणानुयोगाग्निमितं वितस्ति प्रमांवगाहायति रूढ़पक्षात् ॥ (1)

वेदी की उत्तर दिशा मे नव पांच या तीन हवन कुण्ड बनाना चाहिये। जिनका आकार गोल, तिकोन एवं चौकोर हो, कुण्ड निर्माण की दो विधियां है।

(१) चौकोर कुण्ड बीच में त्रिकोण कुण्ड ऊपर तथा गोल कुण्ड नीचे (2)

(२) चौकोर कुण्ड बीच में त्रिकोण कुण्ड नीचे तथा गोल कुण्ड ऊपर(3)

प्रथम कुण्ड रचना अनेक आचार्यो से प्रमाणित है। कुण्ड तीन कटनी वाले जिनके भीतरी भाग १५"-१५" गहरे, लम्बे, चौड़े व वृत्त वाले बनाना चाहिये।

दशांश होम विधान

जिस मंत्र का जाप किया गया हो उसकी दशांश आहूतियां विश्वशांति महायज्ञ में होना आवश्यक है।

सहस्त्रमस्टोतरमत्र मुख्योजपस्तदाराधकृत्ता दशांशः।
होमो विधेयः पुनरिष्टकाले मंत्रेणकार्यो विधिरर्प्यमानः॥(4)

मंगलध्वजारोहण

अष्टाविंशतिरस्तस्मात् एकविंशे चतुर्दशे।
नवमे सप्तमे चैव दिने पूर्व ध्वजोत्सवे ॥

ध्वजोत्सव पंचकल्याणक क्रिया आरम्भ करने के २८ दिन, २१ दिन, १४ दिन, ९दिन, ७ दिन पूर्व करना चाहिये। ध्वजा का ध्वजदण्ड पाण्डाल की ऊंचाई से कम

---

(1) आ ज. से, प्र. पा. श्लोक ३५१-३५२ (2) श्री. ने. चं., प्र. ति. पृष्ठ १५६, आ. ज. से., प्र. पा. पृष्ठ १०८, प. शि रा. पा. प्र. च. पृष्ठ ५५ (3) श्री. ने. च., प्र. ति. (को.) पृष्ठ ५९ (4) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ४२१

से कम दो गुना होना चाहिये। ध्वजोत्सव यज्ञ वेदी के सामने तीन कटनी का चबूतरा बनाकर करना चाहिये।

पाण्डुक शिला

जन्माभिषेक हेतु पाण्डुक शिला उत्तर दिशा में ही बनाना चाहिये।

आचार्यशक्रस्थितिरस्य पृष्ठे स्नानासनादीनि तदन्तिके च ।
तथोत्तरस्यां जन्मोत्सवादि दीक्षावनं ज्ञानविभूतिसद्म ।। (१)

उत्तर दिशा में निर्मित पाण्डुक शिला निम्नानुसार बनाना चाहिये।

तदंगणे नाटकसत्प्रसज्जोपककार्यमाराद्दिशिचोत्तरस्यां ।
सुदर्शनो मेरुरुदीर्णशालो वनैश्चतुर्भिः परतोविभातु ।।
सप्तच्छदाशोकरसालचंपा महीरुहानेककृतोपशोभः।
पांशुश्चतुर्भिः क्षणकोपरिष्टात् मार्गैः सुवर्णाचित विग्रहोद्धः।।
पांडुशिलामासनसंनिविष्टां संस्थाप्य सोपान चतुष्पथाढ्याम् ।
तत्रैव कार्योजलधिः शरांकः क्षराब्धिनामा शुचितोयपूर्णः ।।(२)

सुदर्शन मेरु पर पाण्डुकशिला भद्रशालादिचारों वन वृक्षों पुष्पों से शोभायमान हो एवं जन्माभिषेक क्षीरसागर के पवित्र जल से किया जाना चाहिये।

वर्तमान में प्रतिष्ठाचार्यो की शिथिलता से देखा जाता है, कि लोग पेंट शर्ट पहिनकर भी बिम्ब को बालक मानकर उनका जन्माभिषेक करते हैं, जो कि आगमानुकूल नहीं है। अभिषेक के लिये प्रासुक जल का ही प्रयोग करें।

दीक्षावन

दीक्षावन वेदी के पूर्व दिशा में बनाना चाहिये।

तत्रैव पूर्वत्र दिशासुदीक्षावनंः विशालांगणकल्पशाखम् ।
दीक्षातरुस्तत्र शिलाप्रदेशः संस्कारवाटीकृतगूढमध्या ।। (३)

आहार गृह

यज्ञ वेदी से दक्षिण दिशा में आहार गृह बनाना जिसमें विधिनायक जिनबिम्ब (जो मुनिमुद्रा में हैं) का प्रथम आहार कराया जाय।

समवशरण - समवशरण वेदी से पूर्व दिशा में बनाना चाहिये। (४)

---

(१) श्री जयसेनाचार्य, प्रतिष्ठा पाठ, श्लोक २१८

(२) वही, श्लोक ३६४, ३६५, ३६६ (३) वही, श्लोक ३६७, २१८

(४) वही, पृष्ठ ५३

कल्याणक की क्रियाओं का काल विचार

गर्भ कल्याणक

इत्यायुपाक्लृप्तकुमारिकाणां सार्थेन पूज्या जननी जिनेशः।
मासान्नवाथोपनिनाय यद्वा यामान् दिनानि व्यतिसंक्रमेण ॥ (१)

श्री जिनेश (तीर्थकर) की माता का उत्कृष्ट नव महीना, नव दिन या नव प्रहर पर्यत यथायोग्य गर्भवास होना चाहिये।

तां मूलप्रतियातनां सुरपतिर्गधात्तवर्ष्यप्रभां।
मंजूषानिहितां विधाय विनयान्मातुः प्रसूतिस्थले ॥
आनीयापि निधापयेत् शुचितरैर्वस्त्रै रहस्येरज-
न्यर्धे चाल्पतनौ तु तत्र वसनाच्छन्नां क्रियान्मंत्रवित्॥ (२)

गर्भ कल्याणक की क्रियायें अर्धरात्रि के पश्चात् करके मंजूषा को शुद्धवस्त्र से आच्छादित करें, ततपश्चात् सभी अन्य प्रतिष्ठा हेतु आई प्रतिमाओं पर भी गर्भकल्याणक की क्रिया करके पृथक् पृथक् वस्त्र से आच्छादित करना चाहिये।

जन्मकल्याणक

शुभे विलग्नेसुनावांशके वा जिनेन्द्रजन्म प्रवभूवयद्वत्।
मंजूषिकांतर्गतमाशुबिम्बे निः कश्येदार्यवरः कराभ्यां ॥ (३)

ब्रह्ममुहूर्त (प्रातःकाल रात्रिका चौथा पहर), शुभलग्न, शुभनवांशक में दक्षिण दिशा में बनाये गये राजमहल के सर्वतोभद्र भवन में जन्म की क्रिया कराना और पाण्डुकशिला पर जन्माभिषेक की क्रिया करना।

दीक्षाकल्याणक

वादित्रगंधर्वजयेतिशब्दैः स्तब्धीकृताशानिचये मुहूर्ते।
शुभे दिनार्धोत्तरभाजि जिष्णोर्नैर्ग्रंथ्यकालः शुभदो विधेयः॥ (४)

दिनार्ध के ऊपरभाग (अपराह्न) में निर्ग्रथ दीक्षा काल शुभ है।

ज्ञानकल्याणक

ज्ञानकल्याणक क्रियायें मध्याह्न काल से आरम्भ करनी चाहिये। यह मुख्य क्रिया है, अतः पूर्ण शुद्धि पूर्वक मंत्राराधन भक्तियां आदि क्रियायें आचार्य/ मुनि के सान्निध्य में करनी चाहिये।

---

(१) आ. ज. से. प्र. पा. श्लोक ७५३ (२) वही, श्लोक ७२९
(३) वही, श्लोक ७५८ (४) वही, श्लोक ८३३

प्राणप्रतिष्ठाप्यधिवासना च संस्कारनेत्रोच्छ्रतिसूरिमंत्राः।
मूलं जिनत्वाधिगमे क्रियाऽन्या भक्तिप्रधाना सुकृतोद्भवाय।। (१)

प्राण प्रतिष्ठा, अधिवासना, नेत्रोन्मीलन, सूरिमंत्र यह विधि सर्वज्ञत्व प्राप्ति में मुख्य है, अन्य विधि पुण्यबंध करने वाली भक्ति विशेष है। अतः यह क्रियायें सभी बिम्बों में करना अनिवार्य है।

निर्वाण कल्याणक

सूर्योदय के समय शुभलग्न में यह क्रिया करना चाहिये।

गजरथ

निर्वाण कल्याणक के पश्चात रथयात्रा अभिषेक, पूजन उत्सवपूर्वक करना चहिये,

रथयात्रां पुरा कृत्वाऽभिषेकमहनीयतां।
संपाद्य संघसद्भक्तिं कुर्वीत याजकोत्तमः ।।(२)

गजरथ का आयोजन प्रशिक्षित हाथियो (हथिनी नही) के द्वारा ही कराना चाहिये, नये हाथी का निषेध करें।

गजरथ समयानुसार शुभ लग्न मे आरम्भ करें। किसी भी प्रकार का विलम्ब न करें। विशेष जानकारी आरंभ में दी गई है उसी के अनसार व्यवस्थाये करे।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पाठ श्लोक ३४९ (२) वही, शलोक ९७४

जिन वच में शंका न धार ..।

१. अभिषेक क्या और क्यों ?

२. जिनेन्द्र पूजा एवं पूजा के अंग ।

३. धूप एवं हवन आगम की दृष्टि में ।

ब्र० जयकुमार 'निशांत', एम. एस-सी.

कृपया सुधी विद्वान अपने अभिमत/ सुझाव इन संदर्भो में अवश्य भेजें। जिनका उपयोग आगामी प्रकाशन में किया जा सके।

अभिषेक क्या और क्यों ?

वर्तमान में भौतिक व्यस्तताओं के कारण हमारे जीवन में धार्मिक कार्यो में अत्यधिक शिथिलता आ गयी है, यहां तक कि प्रमादवश अभिषेक एवं प्रक्षाल के साथ अष्टद्रव्य से पूजन को सावद्य मानकर उससे भी बचना चाहते हैं। जिसका मुख्य कारण है हमारी अज्ञानता (जिनवाणी से अरुचि) जबकि मुख्य आगम ग्रंथों में आचार्यो ने गृहस्थ के कर्तव्यों का स्पष्ट उल्लेख किया है।

'दाणं पूजा सीलमुववासो चेदि चउव्विहो सावयधम्मो (1)
दाणं पूजा मुक्खं सावयधम्मेण सावया तेण विणा। (2)

दान, पूजा, शील, उपवास चारों श्रावक के धर्म हैं।

स्नपनं पूजनं स्तोत्रं जपो ध्यानं श्रुतस्तवः,
षोढा क्रियोदिता सद्भिर्देवसेवासु गेहिनाम् (3)

अभिषेक, पूजन, स्तोत्र, जाप, ध्यान एवं श्रुत भक्ति; ये छह सद्क्रियायें गृहस्थ को जिनेन्द्र पूजन में अवश्य करना चाहिये।

गृहस्थावस्थायां दान पूजादिकं त्यजन्ति तपोधनावस्थायां-
-षडावश्यकादिकं त्यक्त्वो भयभ्रष्टाः सन्तः तिष्ठन्ति तदा दूषणमेव (4)

जो गृहस्थ अवस्था में दान पूजादि शुभ क्रियाओं को छोड़ देते हैं और मुनिपद में छह आवश्यक कर्मो को छोड़ देते हैं, वे न तो श्रावक हैं और न ही यति हैं; वे निन्दा के योग्य ही हैं।

अभिषेक पूजा का ही अंग है – बिना अभिषेक किये भगवान की पूजन होती ही नहीं है। फिर भी यदि प्रमाद/समयाभाव से हम पूजा कर लेते हैं, तो गलत है।

अहिसेय वंदणा सिद्धचेदिय पंचगुरु सतिभत्तीहि (5)

अभिषेकमहं नित्यसुरनाथाः सुरैः समम्।
द्वि द्विप्रहरपर्यन्तमैवैकदिशिशान्तये (6)

अपने दुष्कर्मों की शान्ति के लिये देवगण अभिषेक करके भगवान की पूजा, वंदना दो-दो पहर तक करते हैं।

स्नपनार्चा स्तुतिजपान् साप्यार्थप्रतिमार्पिते।
युज्यायथाऽम्नायमाद्यद्दते संकल्पितेऽर्हति (7)

---

(1) आचार्य गुणधराचार्य-कषाय पाहुडं (जयधवला) पुस्तक एक पृष्ठ ९१ सूत्र ८२ (2) आचार्य कुन्दकुन्द - रयणसार - १० (3) आचार्य सोमदेव, यश स्तिलक चम्पू - ४७ (4) आचार्य योगीन्दुदेव - परमात्मप्रकाश. अध्याय २ पृष्ठ १७७ (5) आचार्य देवसेन, भावसंग्रह, पृष्ठ १०९ (6) आचार्य नेमिचन्द्र, सिद्धान्त संग्रह (7) वृहत्सामायिक पाठ (५,६ एवं ७ आत्मशुद्धिप्रकाश से संकलित)

जिनबिम्ब स्नपन (अभिषेक) करके ही अर्चना, स्तुति, जाप आदि करने से सकल्प पूर्वक भक्ति करना चाहिये।

अट्ठसहस्सेहिं तहा खीरोवहिसलिलपुण्णकलसेहिं।
ण्हावंति पहिट्ठमणा परमाए भत्तिराएण ॥(१)

क्षीरसागर के जल से पूर्ण भरे १००८ कलशों से भक्तिभाव (राग) सहित जिनेन्द्र प्रतिमा का अभिषेक करते हैं।

प्रस्तावना पुराकर्म स्थापना सन्निधापनम्।
पूजा पूजाफलं चेति षडविधंदेवसेवनम् ॥ (२)

(१) पूजा के समय जिनाभिषेक की तैयारी **'प्रस्तावना'** है।

(२) जलाभिषेक के लिये कलशस्थापन **'पुराकर्म'** है।

(३) जिनबिम्ब स्थापना **'स्थापना'** है।

(४) इन्द्र बनकर साक्षात् जिनेन्द्रदेव का अभिषेक कर रहा हूँ, इस कल्पना के साथ प्रतिमा की निकटता प्राप्त करना **'सन्निधापन'** है।

(५) जलाभिषेक, अष्ट द्रव्य से पूजा, स्तुति, भक्ति करना **'पूजा'** है।

(६) पूजा के पश्चात् आपके चरणों में ही मेरा हृदय लगा रहे, जबतक कि मुक्तिपद प्राप्त न हो, ऐसा भाव **'पूजाफल'** है।

जिनाभिषेक क्या है ?

अभिषेकः- अभिः मुख्यरूपेण सिंचयति इति अभिषेकः।

पूरी प्रतिमा जल से सिंचित हो इस प्रकार प्रासुक जल की धारा भगवान के ऊपर करना। जिनदेव की निकटता प्राप्त करना एवं साक्षात् अर्हन्त भगवान के स्पर्शन का भाव करना। स्व का आत्ममल प्रक्षालन भक्तिरूपी जल से करना।

जिनाभिषेक (जलाभिषेक) को जन्माभिषेक बताकर/ मानकर इसे पूजा विधि से अलग किया जाना तथा गंधोदक को वंदनीय नहीं मानना भ्रामक प्रचार है। यह जानना अनिवार्य है कि हम अभिषेक किसका एव क्यों करते हैं, इसका कारण व महत्व क्या है ?

अभिषेक को परम्परागत मानकर रूढि के अनुसार करते आये है, कही-कही अभिषेक के समय-

---

(१) जबूदीव पण्णत्ति संगहो, श्लोक ११३ (२) आचार्य सोमदेव उपासकाध्ययन (यश स्तिलक चम्पू) (श्रावकाचार सग्रह भाग एक से सकलित)

इस प्रकार अभिषेक की परम्परा अनादि निधन है। एक बात और विचारणीय है। सौधर्मइंद्र और देवगण आज भी विदेहक्षेत्र में विद्यमान विंशति तीर्थंकरों के कल्याणक एवं साक्षात् दर्शन, पूजन का सौभाग्य प्राप्त होने पर भी अकृत्रिम चैत्यालय के बिम्बों का भक्तिपूर्वक अभिषेक, प्रक्षाल करने जाते हैं और स्वयं को धन्य मानते हैं।[१] इससे सिद्ध होता है कि जिनाभिषेक से पुण्यार्जन होता है। एवं पूजा के साथ अभिषेक अनिवार्य है।

कहीं-कहीं यह भी समाधान दिया जाता है कि प्रतिमा की स्वच्छता के लिये अभिषेक किया जाता है। यदि यह कारण होता तो नंदीश्वर द्वीप एवं स्वर्गों के अकृत्रिम जिनालयों में जहाँ धूल कण मात्र भी नही है, देवगण अभिषेक क्यों करते हैं ?

आहरणगिहम्मि तओ सोलसहा भूसणं च गहिऊण
पूजोवयरणसहिओ गंतूण जिणालए सहसा ॥[२]

धम्मं पसंसिदूण ण्हादूण दहे भिसेयलंकारं।
लद्धाजिणाभिसेयं पूजं कुव्वंति सिद्दट्ठी ॥[३]

देवगण उपपाद शैय्या से उठते ही तुरन्त अवधिज्ञान से पूर्वजन्म को जानकर धर्म की प्रशंसा करते हुये सर्वप्रथम सरोवर में स्नान करके अलंकारों से सुसज्जित हो जिनेन्द्रदेव का अभिषेक एव पूजन करते हैं।

जिनाभिषेक सावद्य किन्तु अतिशय पुण्यकारीः-

यह सही है कि जिनाभिषेक एव पूजा के लिये अष्टद्रव्य प्रक्षालन में आरंभ से सावद्य (पाप) होता है। परन्तु इसके निमित्त से भावों की विशुद्धि एवं भगवत् भक्ति से अनंतगुणा पुण्यास्रव संवर एवं कर्मों की निर्जरा होती है, जिससे आरंभ का दोष अत्यधिक न्यून हो जाता है।

पुण्णरासि ण्हवणाइयइं पाउलहुवि किउ तेण।
विसकणियइं वहु उवहिजल णउ दूसिज्जइ जेण ॥[४]

पूज्यं जिनं त्वाऽर्चयतो जनस्य सावद्यलेशो बहुपुण्यराशौ।
दोषायनालं कणिका विषस्य न दूषिका शीतशिवाम्बुराशौ ॥ [५]

अभिषेक एवं पूजन मे इतना कम सावद्य (पाप) होता है कि अर्जित पुण्य राशि के सामने यह सावद्य अकिंचित्कर है अर्थात् दोषजनक नही है। जो श्रावक जिनाभिषेक एवं अष्टद्रव्य से पूजन का निषेध या विरोध करते हैं वह घोर पाप का बन्ध करके अपनी दुर्लभ पर्यायव्यर्थ कर रहे हैं।

---

(१) श्री पूज्यपाद स्वामी - दशभक्त्यादि सग्रह, नंदीश्वरभक्ति, श्लोक - १५-१६ (२) आचार्य वसुनन्दी श्रावकाचार, श्लोक ५०२ (३) श्री नेमिचंद सिद्धांतचक्रवर्ती, त्रिलोकसार, ५५२ ... सावयधम्मदोहा २०७ (५) आचार्य समन्तभद्र, वासुपूज्यस्तवन, श्लोक ५८

सारंभइं ण्हवणाइयहं जे सावज्ज भणंति ।
दंसणु तेहिं विणासियउ इत्थु ण कायउ भंति ।।[१]

पूजाभिषेकेप्रतिमासु प्राप्ते जिनालये कर्मणि देवकार्ये ।
सावद्यरूपं तु वदन्ति येऽपि जनाश्च ते दर्शनघातकाःस्युः ।। [२]

जो, अभिषेक जिनालय एवं प्रतिमा निर्माण आदि के समारंभों को सावद्य दोषपूर्ण कहते हैं, उन्होंने सम्यग्दर्शन का नाश कर दिया, इसमें कोई भ्रांति नहीं है ।

गृहस्थजीवन आर्तरौद्रध्यान प्रधान एवं विषय-कषाय से युक्त है, जहाँ वह निरन्तर पापाचरण करता है, बिना अवलंबन सामायिक आदि में श्रावक का परिणाम स्थिर नहीं होता है । अतः वह विविध प्रकार के अदलंबन लेकर भगवान की भक्ति करता है, जिससे वह पापाचरण से बच सके । यदि धर्म के लिये किये गये कार्यो में हिंसा (पाप) मानेंगे तो यह युक्तिपूर्ण नहीं होगा । यह जैन सिद्धांत के भी विरुद्ध भी है क्योंकि-

१. क्षायिक सम्यग्दृष्टि सौधर्मइन्द्र अथाह जलराशि से जन्माभिषेक करता है,[३] देवगण समवसरण मे पुष्पवृष्टि एवं चंवर ढोरते हैं ।
२. तीर्थ वंदना एवं साधु दर्शन को राजा, महाराजा समस्त सेना एवं प्रजाजन सहित जाते हैं ।
३. साधु की समाधि होने पर उनका संस्कार एवं दीक्षा होने पर उत्सव भोज आदि करते हैं ।

उक्त कार्यो में अत्यधिक हिसा होती है अर्थात् महापाप होना चाहिये, परन्तु सिद्धांत कहता है यह कार्य पुण्योपार्जन के लिये किये जाते हैं, हिंसा की भावना से नहीं, अतः पाप की न्यूनता एवं पुण्य की अधिकता से उक्त कार्य दोषपूर्ण नहीं हैं । आगमानुसार गृहस्थ मात्र संकल्पी हिंसा का त्यागी होता है शेष का नहीं होता ।

जिनाभिषेक विधिः-

दैनिकचर्या से निवृत्त होकर शुद्ध छने जल से स्नान करके शुद्ध धोती, दुपट्टा (जिसका उपयोग केवल पूजन में ही होता हो, गृहस्थी के कार्यो में नहीं, अन्यथा मंदिर जी का ही धोती दुपट्टा पहने) पहिनकर अष्टद्रव्य लेकर जिनालय जावें । दर्शन करके जिनाभिषेक की तैयारी करें, जिसमें कुएं के छने जल को प्रासुक करना, द्रव्य तैयार करना आदि व्यवस्थित करना ।

---

(१) आचार्य देवसेन, सावयधम्म दोहा, श्लोक २०४ (२) श्री जिनदेव भव्यधर्मोपदेश उपासकाध्ययन श्लोक ३५७ (३) इंद्र १००८ कलशों से अभिषेक करता है जिसका प्रत्येक कलश ८ मील के मुँह वाला ३२ मील चौड़ा एवं ६४ मील गहरा होता है ।

ऐसे निर्मल भाव करके धारा समाप्त करें, पश्चात् अर्घ चढ़ाकर स्वच्छवस्त्र से मार्जन करके प्रतिमा के ऊपर से जल इस प्रकार साफ करें कि एक भी बूंद शेष न रहे। फिर वापिस वेदी पर श्री जी को विराजमान करके विनय पूर्वक गंधोदक लेवें।

गंधोदक वंदनीय क्यों ?

निर्मलं निर्मलीकरणं पवित्रं पापनाशनम् ।
जिन गंधोदकं वंदे अष्ट कर्मविनाशनम् ॥

जिनबिम्ब प्रतिष्ठा की विधि में पंचकल्याणक के माध्यम से तपकल्याणक एवं ज्ञानकल्याणक में संस्कार एवं अंकन्यास विधि में प्रतिमा के ऊपर बीजाक्षरों का आरोपण एवं मंत्रन्यास विधि में प्रतिमा के ऊपर मंत्रों का आरोपण दिगम्बर मुनिराज के माध्यम से किया जाता है। फिर उस प्रतिमा में प्राणप्रतिष्ठा एवं सूरिमंत्र के संस्कार करके उसे पूज्य बनाया जाता है।

जलाभिषेक की धारा से जो जल प्रतिमा पर गिरता है, उन मंत्रों एवं अभिषेक के समय उच्चारित मंत्रों की शक्ति (ऊर्जा) का प्रभाव जल में आ जाता है जिससे वह वन्दनीय एवं चमत्कारिक हो जाता है। अतः गंधोदक लेने से पूर्व जल से हाथ धोकर विनयपूर्वक गंधोदक की वंदना करके केवल मस्तक पर धारण कर पुनः हाथ धोना चाहिये। **अशुद्ध हाथ या रुमाल आदि में गंधोदक नही लेना चाहिये।**

नत्वापरीत्य निज नेत्र ललाटयोश्च,
व्यात्युक्षणेन हरतादघ संचयं मे।
शुद्धोदकं जिनपते तव पादयोगाद्,
भूयाद्भवातपहरं धृतमादरेण ॥

जिनाभिषेक एक वैज्ञानिक दृष्टि :-

जिनाभिषेक वैज्ञानिक दृष्टि से भी सिद्ध हो चुका है। प्रत्येक धातु की अलग-अलग चालकता होती है। अतः जब धातु की प्रतिमा पर प्रासुक जल की धारा करते हैं तो धातु के सम्पर्क से जल का आयनीकरण होता है जिसके फलस्वरूप निकलने वाले ऋण आयनों को शरीर ग्रहण करता है जो कि शरीर में स्थित स्वास्थ्य रक्षक हीमोग्लोबिन में वृद्धि करते हैं।

साथ ही यह भी सिद्ध हो चुका है कि मंत्रों के उच्चारण से ध्वनि तंरगों की शक्ति से जल की गुणवत्ता बढ़ जाती है उसमें विशेष शक्ति उत्पन्न हो जाती है जिसका चमत्कारी प्रभाव होता है।

उर्जा विज्ञान ने भी सिद्ध किया है कि जिस भावना से प्रेरित होकर हम कार्य करते हैं वहां का वायुमण्डल हमारे आभामण्डल से निकली किरणो से उसी प्रकार का हो जाता है कि वहां उपस्थित प्राणियों को उसी अनुसार प्रभावित भी करता है। अर्थात् शुभ भावों से किये धार्मिक कार्यो का परिणाम भी शुभ होता है, जो हमारी अन्तर्मन की दशा को बदलता है।

पाषाण की प्रतिमा पर प्रतिदिन प्रासुक जल की धारा नही करना चाहिये उससे पत्थर में प्रसरण एवं संकुचन होने से क्षरण् होने लगता है। जिससे प्रतिमा की आयु एवं मनोज्ञता कम हो जाती है प्रतिदिन विवेकपूर्वक प्रक्षाल करना चाहिये। पाषाण प्रतिमा का रगड़कर प्रक्षाल करने से प्रतिमा की सुन्दरता कम हो जाती है।

अभिषेक का फल :-

जिनेन्द्र भगवान के साक्षात् स्पर्शन उनकी निकटता के भावों से हमारे परिणाम इतने विशुद्ध हो जाते हैं कि अशुभ कर्मो के संवर के साथ-साथ अनंतगुणे कर्मो का क्षय भी क्षणांश में हो जाता है। यही क्षण हमारे जीवन को सार्थकता प्रदान कर हमारे उत्तम भविष्य का निर्माण करते है।

अभिषेकं जिनेन्द्राणां विधाय क्षीरधारया।
विमाने क्षीरधवले नराणां जायते द्युतिः ॥(१)

जो मनुष्य जिनेन्द्रदेव का अभिषेक क्षीरसागर के जल से करते हैं, वे स्वर्ग विमान में उत्पन्न होते हैं।

जिनांगं स्वच्छनीरेण क्षालयन्ति स्वभावतः,
येऽत्ति पापमलं तेषां क्षयं गच्छति धर्मतः ॥(२)

जो मनुष्य उत्तम भाव से स्वच्छ जल द्वारा भगवान का अंग प्रक्षालन (अभिषेक) करते हैं वह धर्म के प्रभाव से स्वभावतः समस्त पापों को नष्ट करते हैं।

स्नपनं यो जिनेन्द्रस्य कुरुते भावपूर्वकं।
स प्राप्नोति परं सौख्यं सिद्धिनारी निकेतनम् ॥ (३)

---

(१) आचार्य रविषेण, पद्मपुराण (संस्कृत) श्लोक ३२/१६६ (२) आचार्य सकलकीर्ति, प्रश्नोत्तर श्रावकाचार श्लोक १९६ (३) श्री अभ्रदेव व्रतोद्योतन श्रावकाचार, श्लोक १९८ (१) (२)

जो भाव पूर्वक जिनेन्द्र देव का अभिषेक करते हैं वे सिद्धिनारी (मोक्ष) के परम सुख को प्राप्त करते हैं।

इस प्रकार हम अभिषेक को पूजा से भिन्न करके पूजा के फल से वंचित हो रहे हैं।

जिस प्रकार अंगहीन सम्यग्दर्शन संसार की संतति को नहीं मिटाता, अक्षरहीन मंत्र विष की वेदना दूर नहीं करता उसी प्रकार अंगहीन पूजा का भी हमें फल प्राप्त नहीं होता।[१]

अतः पूजा के सभी अंगों यानि अभिषेक, आह्वानन, स्थापन, सन्निधिकरण, पूजन एवं विसर्जन को भाव सहित उल्लासपूर्वक करना अनिवार्य है। जब मुनिराज के नवधाभक्ति पूर्वक पड़गाहन में एक भक्ति भी कम होने पर उनका पड़गाहन नहीं होता है, तब अंगहीन पूजा से हमें जिनेन्द्रदेव का सान्निध्य या पूजा का फल कैसे प्राप्त हो सकता है यह स्वयं विचारणीय है ? अतः जिनवाणी पर प्रगाढ़ श्रद्धा रखते हुये पूरी क्रियायें करके ही भक्ति करना चाहिये। संक्षिप्त मार्ग (short cut) से हम लक्ष्य को न प्राप्त करके भटक जावेंगे अर्थात् उससे हमारा संसार परिभ्रमण नहीं मिटेगा, जबकि पूजा, परम्परा से मोक्ष का कारण है।

(१) आचार्य समंतभद्र, रत्नकरण्ड श्रावकाचार, श्लोक १/२१

जिनेन्द्र पूजा एवं पूजा के अंग

प्रत्येक पुरुष/श्रावक के चार पुरुषार्थ हैं- धर्म, अर्थ, काम एव मोक्ष। धर्म जीवन की आधार शिला एवं मोक्ष लक्ष्य है। इनके माध्यम/प्राप्ति के भाव से ही अर्थ और काम करना अनिवार्य है। परन्तु आज वर्तमान में हमने अर्थ और काम को प्रमुखता देकर धर्म को गौण कर दिया है। यही कारण है कि लौकिक कार्यो के प्रति अधिक सचेत/चिंतित रहते हैं, धार्मिक कार्यो के लिये नहीं। यहॉ लौकिक कार्यो में व्यस्तता होने पर हम धार्मिक क्रियाओं में कटौती करने में हिचकिचाते नहीं हैं। हम लौकिक कार्य, चाहे वह मकान-निर्माण, व्यापारिक या पारिवारिक कार्य क्यों न हो, बिना परामर्श/ प्रशिक्षण के नहीं करते, परन्तु धार्मिक कार्य बिना आगम प्रमाण, परम्परागत रुढ़ियों के आधार से करते चले आ रहे है। व्यापार का हिसाब दैनिक, मासिक, वार्षिक करते ही है, परन्तु धार्मिक हिसाब करने का खतरा मोल नहीं लेते। धर्म की जो लकीर ५० वर्ष पूर्व देखा-देखी से खींची थी वह छोटी हो सकती है पर उसमें वृद्धि कदापि नहीं, आखिर क्यों ? क्या धर्म इतना निरर्थक/ बेमानी/ अनावश्यक है ? हमारी दिनचर्या में उसका कोई स्थान नही ? उसके प्रति इतने लापरवाह क्यों ? एक तो हम चौबीस घंटे पापाचरण में सलग्न रहते हैं, आर्तरौद्र परिणामों से काषायिक प्रवृत्ति में संलग्न रहते हैं। इस बीच कुछ क्षण जिनेद्रदेव के समक्ष निर्मल भाव से स्वयं की ओर दृष्टिपात करने का, आर्तरौद्र परिणाम शिथिल करने का, अशुभ के परिहार एवं शुभ मे आने का सौभाग्य मिलता है, परन्तु हम प्रमादवश उसे भी गंवा देते हैं।

दिन-रात की आपाधापी, आजीविका के लिये किये गये आरभ के सावद्य (पाप) को भूलकर जिनेन्द्र भगवान के अभिषेक एवं पूजन हेतु अष्ट-द्रव्य मे होने वाले आरभ को सावद्य कहकर, जहां कुछ लोग स्वयं भक्ति से वंचित होते हैं वही अन्य के श्रद्धान को भी शंकित करने से नही चूकते। जबकि आगम (जिन वाणी) मे आचार्यो का स्पष्ट कथन है कि गृहस्थ संकल्पी हिंसा का त्यागी होता है। परन्तु आरंभी, उद्योगी एवं विरोधी हिसा का त्यागी नही हो सकता, क्योंकि गृहस्थ की भूमिका ही ऐसी है।[१]

यह भी ध्यान रखें श्रावक-श्रद्धावान, विवेकवान और क्रियाशील, अर्थात् देवशास्त्रगुरु में सच्ची श्रद्धा, प्रत्येक कार्य विवेक से करना, प्रमाद नहीं करना एवं क्रिया कर्म करना श्रावक का लक्षण है। आचार्यो ने गृहस्थों को उल्लेखित किया है-

---

(१) (अ) आचार्य समतभद्र, वासूपूज्यस्तवन, श्लोक ५८ (ब) आचार्य देवसेन, सावयधम्म दोहा, श्लोक २०४ (स) श्री जिनदेव भव्यधर्मोपदेश उपासकाध्ययन, श्लोक ३५७

दाणं पूजा सीलमुववासो चेदि चउव्विहो सावय धम्मो । [१]

दाणं पूजा मुक्खं सावयधम्मेण सावया तेण विणा ॥ [२]

देवपूजा गुरुपास्तिः स्वाध्यायः संयमस्तपः
दानं चेति गृहस्थानां षट्कर्माणि दिने दिने । [३]

दान और पूजा के बिना श्रावक धर्म नहीं हो सकता । जिनदर्शन पूजा हमारी दिनचर्या का मंगलाचरण है, पूजा आत्म शुद्धि का हेतु है, पूजा अंधकार से प्रकाश की ओर यात्रा है, यहां तक कि पूजा अंतहीन प्रकिया है जो मुक्ति तक चलती है अर्थात् परम्परा से मोक्ष का कारण है । [४]

पूजा क्या है ?

पूजनं इति पूजा ।
पूजा शब्द 'पूज्' धातु से बना है, जिसका अर्थ है अर्चन करना । [५]
पू = पवित्र होना, पवित्र करना ।
पूज्य के माध्यम से पूजक को पवित्र/पावन करना, प्रक्षालित करना ।
पू = मांजना, साफ करना ।
पूज्य के माध्यम से स्वयं के विकारी परिणामों, भावों को निर्मल करना जिनेंद्रवाणी द्वारा कर्ममल को निष्कासित करना, परिमार्जित करना अर्थात् विकारों को हटाना ।
पू = फटकारना ।
त्याग और संयम के सूप द्वारा व्यर्थ-पदार्थो को फटकारना एवं सारतत्त्व को साफ करके ग्रहण करना । [६]

पूजा के कई पर्यायवाची हैं जिनका अलग-अलग स्थानों पर प्रयोग करते हैं ।

यागो यज्ञः कृतुः पूजा सपर्येज्याध्वरो मखः ।
मह इत्यपि पर्यायवचनान्यर्चनाविधेः ।[७]

पूजार्हणार्चा यजनं च यज्ञ इज्या सपर्या परिसेवनं च ।
महः क्रतुःकल्प उपासनेति प्रभृत्युपाख्या जिनपूजनस्य ।६०। [८]

याग, यज्ञ, कृतु, पूजा, सपर्या, इज्या, अध्वर, मख, मह, सेवा, कल्प, उपासना आदि । पाप क्रियाओ का त्याग करके, परिग्रह को निषिद्ध करके, विकल्प रहित निर्मल भावो से पूज्य की आराधना में मन, वचन और काय पूर्वक समर्पित होना पूजा है । अर्थात् अनीचा (निष्काम) भक्ति यथार्थ पूजा है ।

---

(१) आचार्य गुणधर, कषाय पाहुण (जयधवला) पुस्तक प्रथम पृष्ठ ९१, सूत्र ८२ (२) आचार्य कुन्दकुन्द, रयणसार ९० गाथा १० (३) (१) आचार्य पद्मनंदि पचविंशतिका ६/७ (२) आचार्य योगीन्द्रदेव, परमार्थ प्रकाश (४) आचार्य कुंदकुंद पंचास्तिकाय । (५) राजेन्द्र अभिधान कोश - भाग ४ पृष्ठ १०७३ (६) डा० नेमिचन्द्र जैन, सम्पादक तीर्थंकर पूजा विशेषांक । (७) आचार्य गुणभद्र उत्तरपुराण, सर्ग ६७/१९३ (८) आचार्य जयसेन, प्रतिष्ठापाठ, पृष्ठ १४

जिनदर्शन में व्यक्ति की पूजा नहीं बल्कि व्यक्तित्व अर्थात् गुणों की पूजा का विधान है।

'पूज्यानां गुणेषु अनुरागः भक्तिः'

'तुम गुण चिंतत निज पर विवेक – प्रगटें, विघटें आपद अनेक'

शक्ति के अनुसार संकल्प पूर्वक जिनपूजा की मुख्यता होती है, बिना संकल्प किया गया कार्य फलीभूत नहीं होता।

यथाशक्ति यजेतार्हद्देवं नित्यमहादिभिः।
संकल्पतोऽपि तं यष्टा भेकवत्स्वर्गहीयते ॥[१]

आचार्य पुष्पदंत कृत षट्खण्डागम पुस्तक ८ की टीका में आचार्य वीरसेन स्वामी ने निम्नानुसार विशेष व्याख्या की है।

चरुबलिपुप्फ-फल-गंध-धूव-दीवादीहि सगभत्ति पगासो अच्चणा णाम।
एदाहि सह अइंदधय-कप्परुक्ख-महामह-सव्वदोभद्दादिमहिमा विहाणं पूजा णाम।
तुहुं णिट्ठवियट्ठकम्मो केवलणाणेण दिट्ठसव्वट्ठा धम्मुम्मुहसिट्ठगोट्ठीए पुट्ठाभयदाणो सिट्ठपरिवालओ दुट्ठणिग्गहकरो देव त्ति पसंसा वंदणा णाम।
पंचहि मुट्ठेहि जिणिंदचरणेसु णिवदणं णमसणं।[२]

अर्चना - चरु, बली, पुष्प, फल, गंध, धूप, दीप आदि से अपनी भक्ति प्रकाशित करना अर्चना है।

पूजा - अष्टद्रव्य के साथ इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम, महामह और सर्वतोभद्र इत्यादि महिमा विधान को पूजा कहते हैं।

वंदना - अष्ट कर्मों को नष्ट करने वाले, केवलज्ञान से समस्त पदार्थों को देखने वाले, धर्मोन्मुख शिष्टों की गोष्ठी में अभयदान देने वाले शिष्ट परिपालक और दुष्ट निग्रह कारी देव हैं, ऐसी प्रशंसा वंदना है।

नमस्कार - पांच मुष्टियो अर्थात् अंगों द्वारा भूमि को स्पर्श करते हुये जिनेन्द्र देव के चरणों में नमन को नमस्कार कहते हैं।

पूजा के भेद (१) पूजा के मुख्यतः दो भेद है -

'पूजा द्वि प्रकारा द्रव्यपूजा-भावपूजा चेति। [३]

वचोविग्रहसंकोचो द्रव्यपूजा निगद्यते।
तत्र मानससंकोचो भाव पूजा पुरातनैः ॥ [४]

---

(१) पं. आशाधर, सागारधर्मामृत, श्लोक २/२४ (२) आचार्य पुष्पदंत, षट्खण्डागम, पुस्तक ८ पृष्ठ ९२ (३) आचार्य शिवकोटी, भगवती आराधना। (४) आचार्य अमितगति - अमितगतिश्रावकाचार, श्लोक १२/१२

वचन और शरीर का संकोच अर्थात् क्रियाओं का निरोध करना द्रव्य पूजा है और मन का संकोच अर्थात् समस्त विकल्पों का त्यागकर जिन भक्ति में लगना भाव पूजा है।

अन्य आचार्यो के अनुसार अष्ट द्रव्य से जिनभक्ति करना द्रव्य पूजा है तथा मन की चंचलता/प्रवृत्ति को रोककर गुणानुवाद करना भाव पूजा है।

(२) विधिविधान पूर्वक विभिन्न अवसरो पर विशेष भक्ति करने के उद्देश्य को लेकर चार भेद किये हैं।

प्रोक्ता पूजार्हतामिज्या सा चतुर्धा सदार्चनम् ।
चतुर्मुख महःकल्पद्रुमाश्चाष्टाह्निकोऽपि च ॥[1]

सदार्चन (नित्यमह), चतुर्मुख (सर्वतोभद्र), कल्पद्रुम एवं आष्टाह्निक यह चार भेद हैं।

इन्द्रध्वज पूजा के रूप मे इसका पाचवां भेद किया है[2]

(३) भक्ति का माध्यम लेकर निक्षेप के आधार पर पूजा के छः भेद हैं।

णामट्ठवणा दव्वे खित्ते काले वियाणा भावे य ।
छव्विह पूया भणिया समासओ जिणवरिंदेहि ॥[3]

नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, एवं भाव। विस्तार न हो इस कारण इसका विस्तृत विवेचन नहीं दिया है।

पूजा के अंग- किन्हीं-किन्हीं आचार्यो ने अभिषेक को अनिवार्य मानकर पूजा के छः अग माने है[4] एवं किन्हीं-किन्हीं आचार्यो ने अभिषेक को पृथक् मानकर पांच अंग माने है।

आह्वाननं स्थापनं च सन्निधिकरणं तथा ।
पूजा विसर्जनं चेति उपचारास्तु पंचधा ॥ [5]

अभिषेक, आह्वानन, स्थापन, सन्निधिकरण, पूजन एवं विसर्जन।

आचार्यो ने इस प्रकार पूजा के पांच अथवा छः अंग बताये हैं। प्रत्येक अंग की विशेष विधि प्रभाव एवं फल है। यह भी निश्चित है अंगहीन पूजा फलीभूत नहीं होती, फिर भी कुछ लोग आचार्यो के कथन को गौण करके मनमाने ढंग से पूजा कार्य संपन्न करने का कर्त्तव्य पूरा करते (निपटाते) हैं। यहॉ तक कि एक अंग अभिषेक ही क्या, उसके साथ - साथ आह्वानन, स्थापन, सन्निधिकरण और विसर्जन को

---

(१) आचार्य जिनसेन, महापुराण, ३८/२६ (२) पं. आशाधर सागारधर्मामृत, अध्याय प्रथम, श्लोक १८ (३) आचार्य वसुनंदि, वसुनंदिश्रावकाचार, गाथा ३८१ (४) (१) आचार्य देवसेन, भावसंग्रह, पृष्ठ १०९ (२) आचार्य नरेन्द्रसेन, सिद्धान्त सग्रह (३) आचार्य सोमसेन, यशःस्तिलक चम्पू (५) (१) आचार्य अकलक देव, भट्टाकलक संहिता (२) आचार्य उमास्वामी, उमास्वामी श्रावकाचार, श्लोक १४७-४८

भी अनावश्यक मानकर केवल पूजन करके अपने दायित्व की इति श्री कर लेते हैं। यह मनमानी है। जिनवाणी पर अश्रद्धा आखिर क्यो ? जरा विचार करें ?

क्या अधूरी नवधा भक्ति से मुनिराज का पड़गाहन (आहार) संभव है ?
क्या अंगहीन सम्यग्दर्शन संसार परिभ्रमण मिटा सकता है ?
क्या अक्षरहीन मंत्र विषवेदना दूर कर सकता है ?

नहीं। फिर अंगहीन (लंगड़ी) पूजा से हमें लक्ष्य की प्राप्ति कैसे होगी ?

आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि,
नूनं नचेतसिमया विधृतोऽसि भक्त्या।
जातोऽस्मि तेन जन बांधव दुःखपात्रं,
यस्मात्क्रिया प्रति फलन्ति न भाव शून्याः ॥ (१)

रूढ़ि परम्परा एवं जिनवाणी के स्वाध्याय के अभाव में हम क्रियायें तो करते है पर हमारे पास उसका कारण (उद्देश्य) नहीं है। बिना कारण हमारी पूजा भावहीन/थोथी होती है जबकि पूजा/क्रिया के भाव ही उसके प्राण हैं और हमारे हाथ में केवल निष्प्राण क्रिया शेष है इसलिये कारण न खोजकर हमने इसे नकार दिया है।

अभिषेक - अभिषेक का विस्तृत विवरण अभिषेक क्या और क्यो? शीर्षक में दिया जा चुका है शेष अंगों पर हम विचार करें।

आह्वानन्, स्थापन एवं सन्निधिकरण- वीतरागी अर्हन्त प्रभू की पूजा करने के लिये सभी संकल्प, विकल्प एव रागद्वेष, मोह आदि विकारी परिणामों को मन से हटाकर कषायों की मन्दता करें। मन वचन एवं काय से पूजा करने का संकल्प करके स्थिर (पैरों के बीच चार अंगुल का अंतर रखकर) खड़े हो जायें। फिर सिर ढककर विनय मुद्रा से हाथ जोड़कर आह्वानन, स्थापन एवं सन्निधिकरण की क्रिया करें।

भक्ति प्रार्थना है, भक्ति मस्तिष्क से नहीं हृदय से होती है। सिद्धान्त अलग है भक्ति अलग है। जब भक्त भगवान की भक्ति में एकाग्र, तल्लीन, तन्मय होता है तो बीच के सारे अवरोध समाप्त हो जाते है, केवल भक्त और भगवान होते हैं कोई औपचारिकता नही होती, सारा कार्य श्रद्धापूर्वक निर्मल भावना से ही होता है।

पूजा में आह्वानन, स्थापन सन्निधिकरण बहुत ही महत्त्वपूर्ण विधि है उसे किसी विकल्प में न ले कर आगमानुसार करें, जिससे उसका यथार्थ लाभ प्राप्त हो सके।

आह्वानन का अर्थ है भाव सहित उल्लासपूर्वक त्रिलोकीनाथ को आंमत्रित

(१) आचार्य कुमुदचन्द्र, कल्याण मन्दिर, स्तोत्र, श्लोक ३८

(अवतरित) करने का विनय भाव । स्थापन है सजग/सतर्क होकर भगवान से ठहरने आग्रह भाव एवं सन्निधिकरण है भगवान को हृदय कमल पर विराजमान होने का अनुरोध/श्रद्धापूर्वक साक्षात् जिनेन्द्र भगवान से निकटता प्राप्त करना,(१) उनके चरणों मे स्वयं को बिना शर्त निष्काम भाव से समर्पित/विसर्जित कर देना, भगवान से सीधा साक्षात्कार करना ।

परन्तु यह महत्वपूर्ण क्रिया परम्परागत रूप से अनेक प्रकार से करते आये हैं। प्रत्येक क्रिया आह्वानन, स्थापन एवं सन्निधिकरण में क्रमशः तीन-तीन पुष्प चढ़ाने का प्रयास करते करते यह महत्त्वपूर्ण क्रिया पूर्ण करते हैं और अखण्ड पीले चावल सम्हारने- चढ़ाने में ही भगवान केआह्वानन्, स्थापन एवं सन्निधिकरण का भाव चूक जाता है, उनसे निकटता प्राप्त करने का अवसर हाथ से निकल जाता है हम उनके प्रति समर्पित होने का भाव जागृत ही नहीं कर पाते हैं और क्रिया पूर्ण हो जाती है ।

आगम और प्राचीन पूजा पाठ में पुष्पों द्वारा प्रत्येक क्रिया करने का उल्लेख नहीं है। प्राचीन संस्कृत विधानों में भी आह्वानन, स्थापन एवं सन्निधिकरण तीनों क्रियाओं के पश्चात् पुष्प क्षेपण करना लिखा है। पुष्पों में भगवान की स्थापना करने का निषेध अवश्य मिलता है ।

हुंडावसप्पिणीए विइया ठवणा ण होदि कायव्वा
लोए कुलिंगमइमोहिए जदो होइ संदेहो ।(२)

हुण्डावसर्पिणी काल में दूसरी असद्भाव स्थापना पूजा नहीं करना चाहिये। क्योंकि कुलिंग मतियों से मोहित इस लोक में संदेह हो सकता है ।

रत्नकरण्ड श्रावकाचार में पं० सदासुखदास जी ने पृष्ठ २३३-३५ श्लोक टीका ११९ में प्रतिमा के सामने पुष्पों में अतदाकार की स्थापना का निषेध किया है। यदि यही पुष्प पूज्य हो तो धातु पाषाण की प्रतिमा क्यों विराजमान की हैं, साथ ही अकृत्रिम चैत्यालय में विराजमान प्रतिमा की पूज्यता में भी संदेह हो जावेगा । साथ ही कहा कि भावना से आह्वानन आदि करके **'संकल्प के पुष्प'** क्षेपण करना चाहिये ।

जिन प्रतिमा के सामने भी आह्वानन, स्थापन, एवं सन्निधिकरण करना आवश्यक है ।

संवौषडाहूयनिवेश्यठाभ्यां सान्निध्यमनीय वषड्पदेन ।
श्री पंचमेरुस्थजिनालयानां यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः ।
आहूय संवौषडिति प्रणीत्य ताभ्यां प्रतिष्ठाप्य मुनिष्ठतार्थान् ।
वषड्पदेनैव च सन्निधाय नन्दीश्वरद्वीपजिनान्समर्चे ।।(३)

(१)(अ) प. आशाधर, सागारधर्मामृत, श्लोक २/६४ (ब) आचार्य पद्मनंदि, पद्मनंदिपंचविंशतिः, श्लोक १/६८ (स) रत्नकरण्डश्रावकाचार, पं. सदासुखदास टीका, पृष्ठ २२६ (श्लोक ११९) (२) आचार्य वसुनंदी, वसुनंदी-श्रावकाचार, श्लोक ३८५ (३) क्षु. जिनेन्द्र वर्णी जैनेन्द्र सिद्धांत कोश, भाग ३, पृष्ट ७६

'संवौषट्' पद के द्वारा बुलाकर, 'ठः ठः' पद के द्वारा ठहराकर तथा 'वषट्' पद के द्वारा अपने निकट करके पांचों मेरु पर्वत पर अस्सी चैत्यालय की समस्त प्रतिमाओं की पूजा करता हूँ। तथा नंदीश्वरद्वीप के जिनेन्द्रों की पूजा करता हूँ।

आह्वानन, स्थापन एवं सन्निधिकरण मन, वचन एवं काय से मंत्र, मुद्रा एवं क्रिया द्वारा करना चाहिये। बीजकोष में बीजाक्षरों की शक्ति एवं उपयोग में स्पष्ट कथन है कि संवौषट् – आमंत्रण/आह्वानन में, 'ठ ठः' रोकने/स्तंभन में एवं 'वषट्' निकटता/वशीकरण के रूप में प्रयुक्त होते हैं।[1]

मुद्रोद्धार शास्त्र के अनुसार आह्वानन, स्थापन एवं सन्निधिकरण की अलग-अलग मुद्रायें हैं जिनके माध्यम से यह क्रिया करना चाहिये।

हस्ताभ्यामंजलिं कृत्वाऽनामिकामूलपर्वणि।
अंगुष्ठौ नाक्षिपेत्सेयं मुद्रा त्वावाहिनी मता॥
अधोमुखी चेयं चेत्स्यात् स्थापिनी मुद्रिका मता।
उच्छ्रितांगुष्ठयुष्टयोरस्क संयोगात्सन्निधापिनी॥ [2]

(१) आह्वानन मुद्रा या आकर्षिणी मुद्रा- दोनो हाथों को खोलकर एक साथ मिलाकर फैलाना फिर दोनो अंगूठे दोनों अनामिकाओं के मूलस्थान में रखना, इससे जो आकृति बनती है यह 'आह्वानन मुद्रा' कहलाती है।

(२) स्थापनी मुद्रा - उसी आकृर्षिणी मुद्रा सहित दोनों हाथों को उल्टा रखने से 'स्थापनी मुद्रा' होती है। अर्थात् आकर्षिणी मुद्रा में जो दोनो हथेली ऊर्ध्वमुख थी, वे ही अंगूठे को जहाँ के तहाँ रखकर अधोमुख कर देने से जो आकृति होती है, उसे 'स्थापिनी मुद्रा' कहते हैं।

(३) सन्निधिकरण मुद्रा - दोनों हाथों की मुट्ठी बांधकर मिलाने से और दोनो अंगूठे हृदय की ओर रखने से सन्निधिकरण मुद्रा होती है। सन्निधिकरण करते समय सन्निधिकरण मुद्रा से हृदय स्पर्श और नमस्कार करना चाहिये। इस प्रकार मंत्र एवं मुद्रा द्वारा विशुद्ध भाव पूर्वक जिनेन्द्र देव की निकटता/ सान्निध्य प्राप्ति की मंगल भावना से भरकर आह्वानन, स्थापन, एवं सन्निधिकरण की क्रिया भावपूर्वक करे तत्पश्चात् पुष्पों को ठोना पर क्षेपण करते हुए पूजा का संकल्प करें।

आचार्य उमास्वामी के अनुसार- **"क्षेत्रात्क्षेत्रांतरं द्रव्यं स्थापना सा निगद्यते"** [3] अर्थात् किसी द्रव्य को एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र मे स्थापित करना स्थापना है। पूजा के समय भगवान को अपने हृदय में विराजमान किया जाता है यही उनका क्षेत्रांतर

---

(१) मंगलमंत्रणमोकार एक अनुचिंतन, डॉ. नेमिचन्द्र जैन ज्योतिषाचार्य पृष्ठ ८२ एवं उमास्वामी श्रावकाचार, आचार्य उमास्वामी, पृष्ठ ५८। (२) मुनि श्री आदिसागर महाराज द्वारा संकलित, श्रावक का नित्य क्रियाकलाप, पृष्ट १७४-७५। (३) उमास्वामी श्रावकाचार, आचार्य उमास्वामी, पृष्ठ ५९।

स्थापन है ।

क्रिया विधि - दर्शन मुद्रा पूर्वक सजग/सतर्क खड़े होकर, जिन प्रतिमा की ओर दृष्टि करके उनकी साक्षात् निकटता का भाव करके सभी परिग्रह/विकल्पों से स्वयं को अलग करते हुये विनयपूर्वक हाथ जोड़े (दोनों हथेली मुकुल अवस्था मे हृदय के समीप रखें) पूजा मे मत्र का उच्चारण करना आवश्यक है तभी मन, वचन एवं काय पूर्वक पूजा सम्पन्न होगी ।

आह्वानन, स्थापन, एवं सन्निधिकरण करने के पूर्व मंत्र पढ़ने तक हाथ जोड़ें, तत्पश्चात् मुद्रा बनाते हुये क्रिया का भाव करें । अर्थात् क्रमशः प्रत्येक क्रिया पूर्ण करने के पश्चात् पुनः हाथ जोड़ कर अगली क्रिया, मंत्र पढ़ते हुये प्रारम्भ करें ।

आह्वानन - **ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह (संवोधन)**
अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आकर्षण मंत्र)
आह्वाननम् (आह्वानन मुद्रा)
उल्लासित होकर भगवान को आमंत्रित करने का भाव (क्रिया)

स्थापन- **ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह (संवोधन)**
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्तंभन मंत्र)
स्थापनम् (स्थापनी मुद्रा)
भावो मे भगवान को रोकने का भाव (क्रिया)

सन्निधिकरण - **ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह (क्रिया)**
अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (वशीकरण मंत्र)
सन्निधिकरणम् (सन्निधिकरण मुद्रा)
भाव पूर्वक भगवान को हृदय कमल पर विराजमान करना (क्रिया)

इसके बाद पूजा करने का संकल्प इस भावना के साथ करे कि हे भगवन ! जो विशुद्धि, कषायो की मंदता एवं परिणामो की निर्मलता आपके सान्निध्य में हुई है, वह मेरे जीवन मे बनी रहे । तत्पश्चात् ठोने पर 'संकल्प पुष्प' क्षेपण करें ।

यहां किसी प्रकार की गिनती के व्यवधान में नहीं उलझना, क्योंकि हम भगवान की पूजा का संकल्प करके संकल्प पुष्प ठोने पर क्षेपण कर रहे हैं, भगवान को नहीं ।

ठोने पर संकल्प पुष्प क्षेपण क्यों ?

वर्तमान मे कुछ आचार्यों ने पूजा के समय ठोना रखना बंद कर दिया है क्योंकि

वह आह्वानन, स्थापन, सन्निधीकरण एवं विसर्जन नहीं करते हैं अतः उन्हें ठोने की आवश्यकता नहीं जबकि यह आगम विरुद्ध है। पूज्य वसुनन्दि आचार्य ने श्रावकाचार में ठोने की आवश्यकता का वर्णन किया है।

पुव्वुत्तवेइमज्जे लिहेज्ज चुण्णेण पंचवण्णेण,
पिहुकण्णियं पइट्‌ठाकलावविहिणा सुकंदुत्थं ॥४०५॥
रंगावलिं च मज्झे ठविज्ज सियवत्थपरिवुडं पीठं,
उचिदेसु तह पइट्‌ठोवयरण दव्वं च ठाणेसु ॥४०६॥

प्रतिष्ठा मण्डल में पंचवर्ण वाले चूर्ण के द्वारा माड़ना बनाकर इसके ऊपर उचित स्थान पर ठोना स्थापित करना।

आगमग्रंथों में स्पष्ट कथन है कि अकृत्रिम चैत्यालयो मे प्रत्येक चैत्यालय में १०८ पद्मासन रत्नमयी जिन-प्रतिमा अलग-अलग गर्भगृह में विराजमान हैं, साथ ही प्रत्येक प्रतिमा के साथ अष्टप्रातिहार्य, अष्टमंगल द्रव्य, ३२ चंवर धारी नागकुमार युगल, पार्श्व में यक्ष एवं देवियाँ विद्यमान है।

भिंगारकलसदप्पण वीयणधयचामरादवत्तमहा।
सुवइट्‌ठ मंगलाणि य अट्‌ठ हियसयाणि पत्तेयं ॥
भृंगारकलशदर्पणवीजन ध्वजचामरातपत्रमथ।
सुप्रतिष्ठं मंगलानि च अष्टाधिकशतानि प्रत्येकम्।[1]
भृंगाराब्दकलशाद्युपकरणैरष्टशतकपरिसंख्यानैः।
प्रत्येकं चित्रगुणैः कृतझणझणनिनदविततघंटाजालैः।[2]

इसी के अनुसार जब भी नवीन वेदी मे जिनबिम्ब स्थापित करते है तो उनकी वेदी पर अष्ट प्रातिहार्य एवं अष्ट मंगल द्रव्य स्थापित किये जाते हैं एवं अष्टप्रातिहार्य तथा अष्ट मंगल द्रव्य युक्त जिनेन्द्र भगवान को अर्घ चढाते है।[3] पूजा में धूप की आवश्यकता का भगवान के समवसरण का वर्णन करते हुये पूज्य यतिवृषभाचार्य तिलोय-पण्णत्ती में कहते हैं कि पूजा की द्रव्य के साथ ही धूप घट एवं मंगल द्रव्य गंधकुटी में स्थित रहते है।

धूवघडा णवणिहिणो अच्चणदव्वाइं मंगलाणिं पि।
चेट्ठंति बिदियपीठे को सक्कइ ताण वण्णेदुं ॥[4]

समवसरण की गंधकुटी की द्वितीय पीठ पर जो धूपघट, नवनिधियां, पूजनद्रव्य, मंगलद्रव्य स्थित रहते हैं, उनका वर्णन करने के लिये कौन समर्थ है?

(१) आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धांत चक्रवर्ती, त्रिलोक सार, गाथा ९८९ (२) आचार्य पूज्यपाद, नंदीश्वर भक्ति, श्लोक २४ (३) प. मन्नूलाल जी प्रतिष्ठाचार्य की हस्तलिखित डायरी से। (४) यतिवृषभाचार्य, तिल्लोय-पण्णत्ती, गाथा ८८९

पूजन मे अष्ट द्रव्यों के साथ ठोने का होना स्वयं सिद्ध है। साथ ही विचार करे यदि संकल्प के पुष्प द्रव्य चढ़ाने की थाली में क्षेपण करेंगे तो हमारा संकल्प निर्माल्य हो जावेगा अर्थात् खण्डित हो जावेगा। इसलिये पूजन की समाप्ति पर पूजन क्रिया का विसर्जन, (समापन) पुष्पो के द्वारा ठोने पर ही किया जाता है।

पूजन - जिनेन्द्रभगवान केअनंत गुणों का स्मरण करके(गुणानुवाद) अष्टद्रव्य, (जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प, चरु, दीप, धूप, फल एवं अर्घ) को क्रमशः संसार परिभ्रमण कराने वाले जन्मजरा मरण की वेदना, संसार का आताप, क्षत अवस्था, कामवासना, क्षुधा की पीड़ा, मोह का अंधकार, आष्टकर्मो के दुखों को नष्ट करने एवं अभीष्टफल (मुक्ति) केअमूल्य पद का लक्ष्य करकेसकल्प पूर्वक जिनेन्द्र चरणों मेंसमर्पित करना।

'आठों दुखदानी, आठ निशानी, तुमढिंग आनी, निवारन हो (१)

मंत्र का भाव - ओं ह्रीं श्रीं.. .... निर्वपामीति स्वाहा।

पूरी पूजा के मंत्रो मे यह बीजाक्षर ही क्यों लिये गये हैं ?

इस पर कभी विचार न करके, हम मात्र द्रव्य चढ़ाते आये हैं, चढ़ा रहे हैं। जबकि ये बीजाक्षर हमारी भावना/उद्देश्य को प्रकट करते हैं।

'ओं' पंच परमेष्ठि वाचक, 'ह्रीं' चौबीस तीर्थंकर वाचक, 'श्रीं' लक्ष्मी अनंत चतुष्टय वाचक।

निर्वपामीति - संपूर्ण रूप से समर्पित करना अर्थात् मन, वचन, काय से अष्ट द्रव्य चढ़ाना/ समर्पित करना।

के लिए मैं द्रव्य समर्पित करता हूँ। वह कर्म मेरे जीवन में शेष ही न रहें, समूल नष्ट करने की मांगलिक आत्मशक्ति मेरे अन्दर उद्घाटित हो जावे। इस भाव से मैं यह द्रव्य सम्पूर्ण रूप से समर्पित करता हूँ।

इसका अभिप्राय है कि हम संकल्प करे कि अपने जीवन से अशुभकर्मो को नष्ट कर देंगे, इनको बढाने वाले कृत्य नही करेंगे, पुनः नहीं बोयेंगे जिससे यह वेदनायें मेरे जीवन में बार-बार न आवें और पूर्ण आत्मशान्ति प्राप्त करूँ क्योंकि पूजा परंपरा से मोक्ष का कारण है।

उद्देश्य - **दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो,**
सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।[१]

मैं वंदू जिनदेव को कर अति निर्मल भाव।
कर्म बंध के छेदने और न कोई उपाव॥

इन्द्रादिक गणपति थके कर विनती भगवान।
अपनो विरद निहारिके कीजे आप समान॥ [२]

'वन्दे तद्गुणलब्धये' [३]

इस प्रकार जिनेन्द्र गुणो की प्राप्ति ही पूजा का उद्देश्य है।

विसर्जन - विश्व शांति की मगल कामना के साथ शाति पाठ पढकर, पूजा में होने वाली अशुद्धियों ज्ञाताज्ञात त्रुटियों की क्षमायाचना पूर्वक पूजा कार्य की समाप्ति करना विसर्जन है। विसर्जन का तात्पर्य पूजा संकल्प के विसर्जन से है न कि देवताओं के विसर्जन से, विसर्जन पाठ मे पढा जाने वाला अंतिम पद -

आये जो जो देवगण पूजे भक्ति प्रमाण।
वे अब जावहूं कृपाकर अपने अपने थान॥

पूजा विसर्जन से सम्बंध नहीं रखता है। यह पद प्रतिष्ठाग्रंथों से लिया गया है। प्रतिष्ठाकार्य के निर्विघ्न संपन्नता हेतु प्रारंभ में चतुर्निकाय के देवों को आमंत्रित किया जाता है, जिन्हें प्रतिष्ठा कार्य की समाप्ति पर ससम्मान यथास्थान वापिस करने के उद्देश्य से पढा जाता है। [४]

सर्वे ये ऽपि समाहूता जिनयज्ञमहोत्सवे
तान्सर्वान् संविसृज्येत भक्तिनम्रशिराः पुनः। [५]

अतः पूजन के समय देव या जिनेन्द्र देव का विसर्जन नही है। पूजा में होने वाली त्रुटि/कमी के प्रति क्षमायाचना का भाव करके पूजा संकल्प पूर्ण हो गया है, अत.

---

(१) आचार्य कुन्द कुन्द- दशभक्त्यादि, संग्रह (२) प. नाथूराम, विनय पाठ (३) आचार्य उमास्वामी, तत्वार्थसूत्र मंगलाचरण (४) श्री नेमिचद्र देव, प्रतिष्ठा तिलक, पृष्ठ ६०३ (५) आचार्य जयसेन, प्रतिष्ठा पाठ श्लोक ९७६

पूजा समाप्ति पर पूजन कार्य का विसर्जन (समापन) भी पुष्पों के द्वारा ठोने पर किया जाता है।

चौबीसों जिनराजपद पूजे भक्ति प्रमाण।
पूजा विसर्जन मैं करूं सदा करो कल्याण। (१)

संकल्प के पुष्पों का भी ठोने पर जल डालकर निर्माल्य की थाली में क्षेपण कर दे। अग्नि में नहीं जलाना चाहिये।

पूजा का फल - आचार्य कुंद कुंद महाराज ने पूजादि कार्यो को व्रतसहित करने को पुण्य कहा है तथा मोह-क्षोभ-रहित आत्मा के परिणामों को धर्म कहा है।

पूयादिसु वयसहियं पुण्णं हि जिणेहि सासणे भणियं।
मोहक्खोहविहीणो परिणामो अप्पणो धम्मो (२)

इस प्रकार पुण्य से शुभ परिणाम होते हैं जिन्हें आचार्य ने धर्म (पुण्य) कहा है जो परम्परा से मोक्ष का कारण हैं।

'पूयाफलेण तिलोयसुरपूजो हवेइ सुद्धमणो'

शुद्ध मन से की गई पूजा त्रिलोक पूज्य पद को देती है।

आचार्य अमितगति के अनुसारः-

पवित्रं यन्निरांतकं सिद्धानां पदमव्ययम्।
दुष्प्राप्यं विदुषामर्थ्य प्राप्यते तज्जिनार्चकैः ॥(३)

जिनपूजा के परिणाम के निमित्त से परम्परा से रत्नत्रय प्राप्तकर नियम से मोक्ष प्राप्त होता है।

आचार्य समंतभद्र के अनुसार :-

देवाधिदेव चरणे परिचरणं सर्वदुःखनिर्हरणम्।
कामदुहिकामदाहिनि परिचिनुयादादृतो नित्यम् ॥(४)

सर्व दुखों की नाशक, इच्छित फल को देने वाली और मानसिक विकारों को जलाने वाली देवाधिदेव वीतरागप्रभु के चरणों की पूजा नित्य आदरपूर्वक करना चाहिये।

एक पुष्प दल से पूजा का भाव रखने वाला मेंढक स्वर्ग को प्राप्त कर सकता है। तब जो अष्ट-द्रव्य से भगवान की पूजा करते हैं, उनके पुण्य का कथन नहीं किया जा सकता।

---

(१) पं. मन्नूलाल जैन, हस्तलिखित डायरी (२) आचार्य कुंदकुंद, भावपाहुड़ - गाथा ८१ (३) आचार्य अमितगति, अमितगति- श्रावकाचार, श्लोक १२/३९ (४) आचार्य समंतभद्र, रत्नकरण्ड-श्रावकाचार, श्लोक ११९

आचार्य पूज्यपाद स्वामी सर्वार्थ सिद्धि में कहते हैं '**पुनात्यात्मानं पूयतेऽनेनेति वा पुण्यम्** [१]

जो आत्मा को पवित्र करे या जिस से आत्मा पवित्र होता है, वही पुण्य है।

ऐसे निधत्ति एवं निकाचित रूप मिथ्यात्वादि कर्मो का जिनका अन्यकारणों से संक्रमण, उदीरणा नहीं होती का क्षय जिनेन्द्र देव के दर्शन मात्र से हो जाता है एवं उनके नाम मात्र की कथा से अनेक जन्मों के संचित पापों का नाश होता है, तब जिनेन्द्र भगवान की अष्टद्रव्य से पूजा करने पर मोक्ष की प्राप्ति क्यों नहीं होगी। नियम से होगी ही।[२]

जिन दर्शन/पूजा का फल तभी प्राप्त होगा जब यह परिणाम मंदिर तक ही नहीं किंतु घर, आंगन, मकान, दुकान एवं प्रत्येक कार्य क्षेत्र तक पहुंचकर हमारी दिनचर्या को पवित्र करें, तब ही यह क्रिया सम्यक्त्ववर्धिनी होगी। अन्यथा मात्र प्रदर्शन ही रहेगा।

---

(१) आचार्य पूज्यपाद, सर्वार्थसिद्धि, ६/३

(२) आचार्य पुष्पदंत, षट्खण्डागम-टीकाकार आचार्य वीरसेन स्वामी, धवला पुस्तक ६, पृष्ठ ४२ आचार्य पद्मनंदि, पद्मनंदि पंचविंशति:, १०/४२, आचार्य कुंदकुंद, मूलाचार ७/६, आचार्य गुणधर, कसायपाहड जयधवला प्रथम टीका वीरसेन स्वामी पृष्ठ ८।

धूप एवं हवन आगम की दृष्टि में

किसी भी धार्मिक कार्य को निर्विघ्न सम्पन्न करने के लिये जप[1] अनुष्ठान करना अनिवार्य है जिसमें विशेष मंत्र[2] की जाप संकल्प पूर्वक की जाती है। कार्य की समाप्ति पर किये गये जप संकल्प की दशांश आहुति से हवन करना आवश्यक है।

आचार्य जयसेन कृत प्रतिष्ठा पाठ में स्पष्ट उल्लेख है कि कम से कम एक हजार आठ जप अवश्य करें पश्चात् उसका दशांश होम करें।

सहस्रमष्टोत्तर मन्त्रमुख्यो जपस्तदाराधकृता दशांशः।
होमो विधेयः पुनरिष्टकाले मंत्रेण कार्यो विधि रर्प्यमान।।[3]

श्री नेमिचन्द्र कृत प्रतिष्ठातिलक के पृष्ठ १३२ पर होम विधि का वर्णन है।

प्रतिष्ठा सारोद्धार के प्रथम अध्याय श्लोक १४० के अनुसार –

दातृसंघनृपादीनां शान्त्यै स्नात्वा समाहिताः
शान्तिमंत्रैर्जपं होमं कुर्यारिन्द्रा दिने-दिने।

अर्थात वे इन्द्र, प्रतीन्द्र, दाता, श्रावक संघ राजा आदि की शान्ति के लिये प्रतिदिन स्नान करके शांति मंत्रों से जाप और होम अवश्य करें।

इस प्रकार प्रतिष्ठा ग्रंथों में हवन करने का विधान आया है।

हवन किस विधि से एवं किस सामग्री से किया जावे इसमें मत-मतान्तर हैं परन्तु हवन करना अनिवार्य है इससे सभी सहमत हैं।

वर्तमान में धूप द्वारा अग्नि से हवन का विरोध तीव्रता से होने लगा है जबकि इसके विरुद्ध निषेधात्मक आगम प्रमाण एक भी नहीं है। यहां तक कि पुष्पों द्वारा बिना अग्नि के आहुतियां करने के नये (विकृत) मार्ग का सृजन हो गया है जबकि किसी भी ग्रथ में इसका कोई उल्लेख नही हैं।

हवन हेतु आचार्यों ने समिधा के रूप में विशिष्ट वृक्षों की लकड़ी का प्रयोग लिखा है वर्तमान में शुद्ध समिधा उपलब्ध न होने के कारण एवं लकड़ी में होने वाले जीवों की विराधना से बचने के लिये कपूर का प्रयोग कर सकते हैं। तथापि हवन की क्रिया में श्रावकों को विवेक रखना आवश्यक है। हवन हेतु अधिक अग्नि प्रज्ज्वलित न करें तथा कम मात्रा में धूप की आहुति विधि पूर्वक करें। (मध्यमा एवं अनामिका पर धूप लेकर अंगूठे से होम करें)।

---

(१) जकारो जन्म विच्छेदः पकारः पाप नाशन., तस्माज्जप इति प्रोक्तः जन्मपाप विनाशकम्।
(२) मकारं च मनः प्रोक्तं त्रकार त्राण मुच्यते, मनस्त्राणत्व योगेन मंत्र इत्यभिधीयते।
(३) आचार्य जयसेन, प्रतिष्ठा पाठ, ७३८ श्लोक ४२१।

धूप के लिये चंदन चूरा या तत्काल निर्मित धूप का प्रयोग करें, धूप में बूरा एवं धान्य सामग्री मिश्रित नहीं करना चाहिए । बाजार की अमर्यादित धूप का प्रयोग कदापि नहीं करना चाहिए । भगवान समंतभद्र स्वामी ने स्वयंभू स्तोत्र में १००८ भगवान वासुपूज्य की स्तुति में लिखा है-

'सावद्यलेशो बहुपुण्य राशौ'

अर्थात् श्रावक की प्रत्येक क्रिया में सावद्य योग कम हो तथा पुण्यार्जन अधिक हो यह विवेक रखें ।

पूजा एवं हवन में अग्नि में धूप क्षेपण के कई प्रमाण आगम ग्रंथों में दिये गये हैं जो निम्न हैं-

१. आचार्य गुणधर स्वामीकृत्त कषाय पाहुड (जयधवला) पुस्तक एक पृष्ठ ९१ में लिखा है 'दीप जलाये एवं अग्नि में धूप क्षेपण बिना पूजा नहीं होती है ।

'धूवदहणादिवावारेहि जीव वहाविणाभावीहि विंणा पूजकरणाणुववत्तीदो च'

२. आचार्य पुष्पदंत स्वामीकृत्त धवला पुस्तक ८ (षट्खण्डागम) में अष्टद्रव्य में दीप एवं धूप का स्पष्ट कथन है ।

३. आचार्य कुन्द कुन्द भगवन् ने चैत्य भक्ति में वर्णन किया है कि देवगण अकृत्रिम चैत्यालय में दिव्य (स्वर्ग की प्रत्येक सामग्री चाहे वस्त्र, आभूषण, पुष्प या अष्टद्रव्य सभी दिव्य होती है । तात्पर्य स्वर्ग की प्रत्येक सामग्री दिव्य होती है पर स्वर्ग के आधार पर वह सामान्यतः उपलब्ध होने वाली सामग्री ही है। हम उसे दिव्य कहते हैं ।) सामग्री से भगवान की पूजा करते हैं ।

'दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण धूवेण,
दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण वासेण, दिव्वेण ण्हाणेण ।

४. श्री यतिवृषभाचार्य ने तिलोय पण्णत्ति भाग २ में गाथा ७४५, ७४९ एवं ७६८ में समवसरण के गोपुर नाट्यशाला में धूपघटों का वर्णन किया है ।

५. आचार्य पुष्पदंत स्वामीकृत्त धवला पुस्तक ९ पृष्ठ २२० पर आचार्य वीरसेन स्वामी ने टीका में जलते हुये सुगंधित धूप वाले दो-दो धूपघटों का वर्णन किया है ।

६. आचार्य जिनसेन ने आदिपुराण में सर्ग २२/१५७ में लिखा है कि इन धूपघटों से इतना धूम्र उठता है कि स्वर्ग से आने वाले देव इससे बादलों की आशंका करने लगते हैं ।

७. समवसरण में केवली भगवान की पूजा की सामग्री में दीप एवं धूप का वर्णन आदिपुराण के सर्ग २२/१९६ एवं २३/१०६ में हैं।

८. आदिपुराण के सर्ग २३/११३ में सौधर्म इन्द्राणी (शची) भगवान की पूजा जलते हुये दीपकों एवं धूप से करती है- स्पष्ट उल्लिखित है -

ददौ धूपमिद्धं च पीयूष पिण्डं महास्थाल संस्थं ज्वलद्दीपदीपम् ।

९. आदिपुराण के सर्ग २३/१९ एवं २० एवं तिलोय पण्णत्ति भाग २/८९६ के अनुसार समवसरण की गंधकुटी का नामकरण उसके चारों ओर से मालाओं एवं धूप की सुगध से ही हुआ है। जिसकी सुगंध से आकर्षित होकर भौंरे गुंजायमान होते हैं।

१०. आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धांत चक्रवर्ती त्रिलोकसार की गाथा ९९० से ९९३ एवं यतिवृषभाचार्य तिलोय पण्णत्ति की गाथा १८८४ एवं १८८८ में कहते हैं कि अकृत्रिम चैत्यालयों के महाद्वार के पास २४ हजार धूपघट एवं मुख्य मण्डप में १६ हजार धूपघट विद्यमान होते हैं जिनसे लगातार सुगंधित धूम्र उठता रहता है।

११. श्री यतिवृषभाचार्य तिलोय पण्णत्ति की गाथा २१६३ में कथन करते हैं-

चउतोरण वेदिजुदा रयणमया विविह दिव्वधूवघड़ा,
पजलंतरयणदीवा ते सव्वे धयवदाइण्णा ।

रत्नमय प्रासाद चार तोरण वेदी सहित विविध प्रकार के दिव्य धूपघट से युक्त जलते हुए रत्न दीपों से प्रकाशमान एवं ध्वजपताकाओं से व्याप्त हैं।

१२. आचार्य पूज्यपादस्वामी शान्ति भक्ति में हवन से शान्ति प्राप्त होने का कथन करते हैं -

क्षुब्धाशीर्विषदष्ट दुर्जय विषज्वालावली विक्रमो ।
विद्याभैषज मंत्रतोय हवनैर्याति प्रशान्तिं यथा ॥

अन्य उद्धरण लेख विस्तृत न हो इस कारण उल्लेखित नहीं किये हैं।

अपने साक्ष्य हेतु विद्वान हवन को वैदिक परम्परा से लिया गया मानते हैं जबकि आचार्य जिनसेन ने इसे द्वादशांग जिनवाणी के सातवें अंग उपासकाध्ययन के ज्ञान से हवनविधि लिखने का उल्लेख किया है, उपरोक्त उदाहरणों से सिद्ध होता है कि मूल आगम ग्रंथों में धूप, अग्नि एवं हवन का स्पष्ट उल्लेख है। यह सर्वविदित एवं शाश्वत सत्य है कि तीर्थंकरों के कल्याणक एवं अकृत्रिम चैत्यालय अनादि निधन

है तब उनसे संबंधित धूप अग्नि एवं धूपघट की परम्परा भी अनादि निधन ही है, नई नहीं है। ।

फिर मेरी समझ में नही आया कि जिनवाणी पर श्रद्धा रखने वाले श्रावक को जिनवाणी के प्रति शंका किस आधार पर एवं क्यों हुई ? विद्वानों से भी नम्र निवेदन है कि धूप, अग्नि एवं दीप का निषेध करके अन्य श्रावकों को भ्रमित न करे। गृहस्थ मात्र संकल्पी हिंसा का त्यागी होता है किंतु आरंभी, उद्योगी, विरोधी हिंसा का त्याग उसके नहीं है। अतः मंदिर बनवाना, धार्मिक आयोजन करना, पूजा आदि में होने वाले आरंभ से बचाव करना सभव नहीं है अतः प्रत्येक कार्य विवेकपूर्वक करना चाहिए।

हवन का उद्देश्यः-

संकल्प किये धार्मिक कार्य के समापन के पश्चात् सात प्रकार के मंत्रों के द्वारा आहुतियां एवं दशांश आहुतियां दी जाती हैं। जिनका उद्देश्य है सप्त परम पदों की प्राप्ति की भावना -

सज्जातिः सद्गृहित्वं च पारिव्राज्यं सुरेन्द्रता,
साम्राज्यं परमार्हन्त्यं परनिर्वाणमित्यपि। (१)

हवन मंत्र(२)

(१)**पीठिका मंत्र** (३३) जिस प्रकार मकान निर्माण के लिये नींव का मजबूत होना आवश्यक है, इन मत्रों का आराधन अपने परिणामों की विशुद्धि एवं स्थिरता के लिये अनिवार्य है। यह मंगल कार्य की आधारशिला है।

(२)**जाति मंत्र** (८) इन मंत्रों में कामना की गई है कि कल्याण करने वाले सद् विचार ही उत्पन्न हों।

(३)**निस्तारक मंत्र** (११) इन मंत्रों में कामना की गई है कि जो सद् विचार उत्पन्न हों, वह क्षणिक न हों, वह उच्च एवं कल्याणकारी विचार आत्मा में अधिक समय तक स्थिर रहें।

(४)**ऋषि मंत्र** (१५) इन मंत्रों में कामना है कि श्रावक व्रत पालन करते हुए समाधि मरण पूर्वक मरण करते हुये मुनिव्रत धारण कर सद्गति प्राप्त करूं।

(५)**सुरेन्द्र मंत्र** (१३) इन मंत्रो में कामना की गई है कि मुनिव्रत धारण करके समाधिमरण पूर्वक मरण के पश्चात् सौधर्मेन्द्र पद की प्राप्ति हो जिससे निरन्तर भगवान की भक्ति करता रहूँ।

---

(१) आचार्य जिनसेन, महापुराण, सर्ग ३८ श्लोक ६७

(२) वही, सर्ग ३८ श्लोक ७४

(६)**परमराज मंत्र** (९) इन मंत्रों में कामना की गई कि सौधर्म स्वर्ग से चयकर ऐसे धार्मिक राज परिवार में जन्म हो जहां धर्माराधन करते हुये सकल संयम धारण करने का सौभाग्य प्राप्त हो ।

(७)**परमेष्ठी मंत्र** (२३) इन मंत्रों में कामना की गई है कि हे भगवन् । सकल संयम धारण करके मैं पंच परमेष्ठियों का परम स्थान प्राप्त करके सिद्ध शिला को प्राप्त करूं ।

ऐसी कामना से हवन का कार्य करते हुये आत्मोत्थान की भावना बनायें, क्योंकि क्रिया कर्म सब व्यवहार है और व्यवहार से निश्चय की प्राप्ति हो ऐसी कल्याणकारी भावना जीवन में आवे तो आत्मोत्थान का लक्ष्य पूर्ण करें ।

हवन- एक वैज्ञानिक दृष्टि -

हवन में धूप का प्रयोग वैज्ञानिक एवं आध्यात्मिक रूप से भी सिद्ध होता है। हमारा मुख्य लक्ष्य सिद्ध शिला की प्राप्ति का है अर्थात् औदारिक शरीर से परमौदारिक एवं सूक्ष्म आत्मतत्व की प्राप्ति करना । आत्मा पर लिप्त रागद्वेष विषयविकार रूपी कर्मो का प्रक्षालन या कर्म दहन कर कर्ममल दूर करना ।

धूप में प्रयुक्त सुगंधित सामग्री स्थूल रूप में सीमित क्षेत्र को अपनी परिमल से प्रभावित करती है जबकि अग्नि का सान्निध्य पाकर वह स्थूल से सूक्ष्मता को प्राप्त कर अपने चारों ओर के वातावरण को सुगंधित करके कण-कण में व्याप्त हो जाती है । जहां तक उसका प्रभाव होता है वायु मण्डल स्वच्छ, पवित्र एवं कीटाणु रहित हो जाता है तथा विचारों को एकाग्र करने एवं विशुद्ध करने में अत्यंत सहयोगी होती है ।

हवन सामग्री में सुगंधित द्रव्य जैसे जावित्री, पांचों चन्दन, नागर मौथा, छबीला, कपूर, शुद्ध घी आदि वनस्पतियों का प्रयोग किया जाता है। जिनमें अधिक मात्रा में एल्काइड्स, एमाइन्स, पिकोनिलिक एवं साइक्लिक, टरपिनाइड्स रसायन पदार्थ पाये जाते हैं। हवन सामग्री के जलने से सुगंधित द्रव्य से निकले तैलीय पदार्थ की वाष्प जिसमें मुख्यतः एथिलीन आक्साइड, प्रापिलीन आक्साइड, फार्मल्डिहाइड, फिनायल, एसिटिलीन, बीटा प्रापियो लेक्टोन पाये जाते हैं, जो वायुमण्डल में प्रदूषण फैलाने वाली गैसों एवं अशुभ वर्गणाओं को नष्ट करके वायुमण्डल को विकार रहित करते है ।

हवन कुण्ड में अग्नि प्रज्ज्वलित करते ही यज्ञ स्थल की वायु हल्की होकर ऊपर उठती है, जिससे चारों ओर की वायु रिक्त स्थान की पूर्ति हेतु आती है। हवन पदार्थ की वाष्प उस वायु में उपस्थित जहरीली गैसों को नष्ट करके वातावरण स्वच्छ करती है। इनमें मुख्यतः सल्फर डाई आक्साइड़ (जिससे कैंसर होता है) नाइट्रस आक्साइड़, क्लोरीन, कार्बन मोनो आक्साइड़ आदि के प्रभाव को कम करने की अद्भुत क्षमता यज्ञ के धुयें में होती है।

डॉक्टरों ने परीक्षण के द्वारा सिद्ध किया है कि यज्ञ से उत्पन्न गैसों में चेचक, रक्तविकार, आंत्ररोग, निमोनिया, हैजा, तपैदिक आदि रोगों के कीटाणुओं को दूर करके पर्यावरण को कीटाणुरहित (स्ट्रलाइज्ड) करने की विशेष क्षमता है।

यज्ञ में मंत्रों के शुद्ध एवं सस्वर सामूहिक उच्चारण से मंत्रों के बीजाक्षर एवं हवनकर्ता की श्रद्धा एवं भावना से आत्मिक शक्ति का विशेष उद्घाटन होता है। जिससे सम्पूर्ण पर्यावरण के साथ-साथ जीवों की भावना भी प्रभावित होती है।

उसी प्रकार हम अपने स्थूल भावों को भक्ति एवं ध्यानाग्नि मे जलाकर परिमार्जित करके निर्मलता को प्राप्त करने का भाव जागृत करते हैं। सकल्पित कार्य करके भगवान के चरण सान्निध्य में हवनाग्नि मे धूप क्षेपण करके उत्कृष्ट सप्त पदों की सीढ़ियां चढ़ने की भावना भाते हैं, कि हे भगवन्! जैसे इस धूप ने स्वयं को जलाकर वायुमण्डल को सुगंधित स्वच्छ, पवित्र करते हुये सूक्ष्मता को प्राप्त किया है। मैं भी अपने विकारों (मान, अहंकार, रागद्वेष, कषाय आदि) को नष्ट करके प्राणी मात्र के कल्याण का मार्ग प्रशस्त करते हुये औदारिक से सूक्ष्मता की ओर आरोहण करते-करते आत्म तत्त्व को प्राप्त कर सकूं।

हवन विधिः-

नवमी शताब्दी में आचार्य जयसेन ने आदिपुराण (महापुराण) में हवन की विधि विधान का विस्तृत उल्लेख किया है।

अंगानां सप्तमा दंगाद् दुस्तरार्णवादपि,
श्लोकैरष्टाभिरुन्नेष्ये प्राप्तं ज्ञानलवं मया। (१)

जो संसार से भी दुस्तर है ऐसे बारह अंगों में सातवें अंग (उपासकाध्ययनांग) से जो कुछ मुझे ज्ञान का अंश प्राप्त हुआ है उसे मैं नीचे लिखे आठ श्लोकों में प्रगट करता हूं। इन आठ श्लोकों में ५३ क्रियाओं का वर्णन किया है। इस पर्व में इन क्रियाओं के तीन भेद किये हैं।

(१) आचार्य जिनसेन, महापुराण, सर्ग ३८ श्लोक ५४

१. गर्भान्वय क्रिया ।
२. दीक्षान्वय क्रिया ।
३. कर्मन्वय क्रिया ।

श्लोक ५० में आचार्य महाराज ने तीसरे चरण में लिखा '**सद्दृष्टिभिरनुष्ठेया**'। सम्यग्दृष्टि पुरुषों को इन क्रियाओं का पालन अवश्य करना चाहिये ।

इन क्रियाओं के विशद विवेचन में हवन का विधान श्लोक ७० से ७३ तक किया गया है ।

हवन के लिये तीन कुण्ड[१] बनाकर तीनों अग्नियों को स्थापित करना चाहिये ।[२]

(१) गार्हपत्य अग्निः- अर्हन्त (तीर्थकर) भगवान के निर्वाण के बाद उनके शरीरावशेष का संस्कार इसी अग्नि से किया जाता है ।

(२) आह्वेनीय अग्निः- गणधर देवों के निर्वाण के बाद उनके शरीरावशेष का संस्कार इसी अग्नि से किया जाता है ।

(३) दक्षिणाग्निः- सामान्य केवलियों के निर्वाण के बाद उनके शरीरावशेष का संस्कार इसी अग्नि से किया जाता है ।

इस प्रकार विशिष्ट पुरुषों का सान्निध्य पाकर यह अग्नियां परम पवित्र एवं पूजनीय हो गई है अतः इन्हीं अग्नियों को मंत्र द्वारा अलग-अलग कुण्डों में स्थापित किया जाता है सामान्य अग्नि को नहीं । पीठकादि मंत्रों द्वारा तीनों अग्नियों में धूप की आहूति करने का विशद् विवरण श्लोक १ से ७७ तक किया गया है । इन मंत्रों में पुण्य पुरुषों को नमस्कार करते हुये उनके जैसा बनने की कामना के साथ स्वाहा बोलकर आहुति करते हैं ।

जपकाले नमः शब्दो मंत्रस्यान्ते प्रयोजयेत् ।
होम काले पुनः स्वाहा मंत्रस्यायं सदाक्रमः॥

स्वाहा शब्द की व्याख्या निम्नानुसार हैः-

'**स्वाहा शान्तिकं मोहकं वा**[३] स्वाहा शब्द, पापनाशक, मंगलकारक तथा आत्मा की आंतरिक शांति को उद्बुद्ध करने वाला है ।

स्वाहा[४] - स्वाहाकारान्ता तद्रहितमंत्रस्य-

जिसके अन्त में स्वाहाकार है, वह विद्या है । मंत्र स्वाहाकार से रहित होता है ।

---

(१) आचार्य जयसेन, प्रतिष्ठा पाठ, श्लोक ३५१-३५२ (२) आचार्य जिनसेन, महापुराण, सर्ग ४० श्लोक ८३, ८४, ८९ (३) मंगल मंत्र णमोकार एक अनुचिंतन, पृष्ठ ८२ एवं ८६ (४) जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश, क्षु. जिनेन्द्रवर्णी, भाग ४ पृष्ठ ५२९

मंत्रशास्त्रानुसार स्वाहा शब्द की विशेषता -

स् - कर्मो का कर्ता, सब मंत्रों से पूजित, ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी आवरण का विनाशक, आत्मा सूचक व दर्शक ।

वा- विष को निर्विष करने वाला, कर्मो को शांत करने वाला, विघ्नों का विनाशक एवं निरोधक (स्तंभक) एवं सिद्धि का सूचक ।

हा- शान्ति, पुष्टि एवं मांगलिक कार्यो का उत्पादक साधनासिद्धि सहायक, कर्मनाशक व देवताओं का आकर्षक ।

इस प्रकार प्रत्येक मंत्र का प्रभाव अलग-अलग होता है । जाप मंत्र का संकल्प करके स्वाहा बोलकर वांछित कामना फलीभूत करने का भाव जागृत करके धूप की आहूति देने से नियम से कर्मो का क्षय होता है, विघ्नों का नाश होता है तथा सिद्धि की प्राप्ति होती है ।

एक विशेष बात और चल पडी है कि हवन घर में होना चाहिये जिनालय में नही क्योंकि यह धर्म क्रिया नहीं है । किन्तु आचार्य जिनसेन ने कथन किया है -

तत्रार्चनाविधौ चक्रत्रयं छत्रत्रयान्वितम्
जिनार्चामभितः स्थाप्यं समं पुण्याग्निभिस्त्रिभिः ।

त्रयोऽग्नयो ऽर्हद्गणभृच्छेष केवलिनिर्वृतौ,
ये हुतास्ते प्रणेतव्याः सिद्धार्चा वेद्युपाश्रयाः।(१)

अरिहंत देव की पूजा के द्वारा मंत्रपूर्वक जो संस्कार किया जाता है उसे आधान क्रिया कहते हैं इस आधान क्रिया में जिनेन्द्र भगवान की प्रतिमा की दाहिनी ओर तीन चक्र बांयी ओर तीन छत्र और सामने तीन पवित्र अग्नि स्थापित करते हैं । अरिहंत पूजा करने के पश्चात् मंत्रपूर्वक तीनों अग्नियों में आहुति करना चाहिये । अर्थात जिनालय में हवन कार्य किया जाना चाहिये ।

इस हवन विधि का आचार्य जिनसेन के उत्तरवर्ती किसी भी आचार्य ने विरोध नहीं किया अर्थात् सभी आचार्य उनसे सहमत थे ।

परन्तु आज हम अपनी कल्पना से अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिये इसका विरोध करें उचित नही हैं । विद्वत्‌जन इस प्रकरण पर गभीरता पूर्वक विचार कर निर्णय करें एवं हवन कार्य को पवित्रभावना एव विवेकपूर्वक करावें ।

---

(१) आचार्य जिनसेन, महापुराण, सर्ग ३८ श्लोक ७१-७२

पण्डाल निर्माण हेतु आवश्यक निर्देश

१. मुख्य वेदी **चौकोर, पक्की, ठोस** होना चाहिये या पात्रों (इन्द्रों)की संख्या के अनुसार बनाई जावे। वेदी की लम्बाई चौड़ाई से १.५ गुना होना चाहिये उसकी ऊंचाई २.५ से ३ फुट तक होगी। चारों ओर परिक्रमा करने के लिए स्थान रहेगा।

२. **सांस्कृतिक कार्यक्रम हेतु मंच अलग बनेगा**। वेदी पर किसी प्रकार के कार्यक्रम नहीं होंगे।

३. प्रतिमा विराजमान करने हेतु वेदी निर्माण प्रतिमा (प्रतिष्ठा हेतु)की संभावित संख्या के अनुसार बनेगी, मुख्य वेदी के पिछले हिस्से में दो फुट जगह परिक्रमा को छोड़कर तीन कटनी बनेगी, सबसे नीचे की कटनी २ फुट ऊंची १ फुट चौड़ी, दूसरी कटनी १ फुट ऊंची १ फुट चौड़ी, तीसरी कटनी १ फुट ऊंची एवं २ फुट चौड़ी बनेगी, इस पर बीच में सिंहासन विमान रखने हेतु १ फुट ऊंचा ३ फुट लम्बा चबूतरा बनेगा जिसपर **पूर्व प्रतिष्ठित मूलनायक प्रतिमा** विराजमान होगी।

४. प्रतिमा वेदी की निचली कटनी से २ फुट स्थान छोड़कर यागमण्डल की वेदी पक्की डेढ़ फुट ऊंची एवं १२ × १२ फुट लम्बी चौड़ी बनेगी।

५. यागमण्डल वेदी तक आधार ठोस (पक्का) बनेगा।

६. प्रतिमावेदी और यागमण्डल वेदी की बायीं ओर तीन हवन कुण्ड तीन कटनी वाले बनाये जावेंगे। कुण्डों के भीतरी भाग की लम्बाई, चौड़ाई, गहराई १५" इंच होगी। चौकोर कुण्ड बीच में त्रिकोण कुण्ड ऊपर एवं गोल कुण्ड नीचे नक्शे के अनुसार बनेगा।

७ मण्डप के सामने मंगलध्वज का चबूतरा गोल तीन कटनी (१ फुट ऊँची एवं चौड़ी) वाला बनेगा बीच में पाइप लगाने का स्थान रहेगा। ध्वज दण्ड की ऊँचाई पाण्डाल से कम से कम १.५ गुनी अधिकतम दो गुनी होना चाहिये।

८. यज्ञ वेदी के दाहिनी ओर माता का महल एवं गर्भगृह १० × ६ फुट का बनेगा।

९. पाण्डुकशिला मुख्य वेदी से उत्तर दिशा में तीन कटनी की कलात्मक चित्रकारी सहित १२ से १५ फुट ऊँची बनाना चाहिये।

१०. मुख्य वेदी के पीछे टीन के कमरे नक्शे के अनुसार बनेंगे जिनमें जपगृह, स्टोर, सामग्री बनाने का स्थान, वस्त्र बदलने का स्थान आदि बनेंगे।

११ प्रतिष्ठाचार्य, पुजारी एवं संगीत वालों का निवास मुख्य पाण्डाल के निकट ही रखा जाना चाहिये।

१२. लिस्ट के अनुसार सामग्री पुजारी को दिखाकर, स्टोर प्रबंधक को सौंपने की व्यवस्था की जावे।

१३. वेदी के उपर तिरपाल लगाकर उसे जल अवरोधक (वाटरप्रूफ) बनायें।

१४. पण्डाल के चारों ओर केवल ३ द्वार रखें जिससे श्रावकों को पण्डाल में जूते चप्पल लाने से रोका जा सके।

स्वयं सेवकों की व्यवस्था

१. वेदी की शुद्धि एवं अनुशासन बनाये रखने हेतु १० स्वयंसेवक अन्य शहर के स्थायी रूप से वेदी पर नियुक्त किये जावें उन्हें अन्य कार्य न दिया जावे।

२. 'वाद्यघोष' की, ध्वजारोहण, जन्मकल्याणक, तपकल्याणक, ज्ञानकल्याणक एवं निर्वाण कल्याणक के दिन विशेष आवश्यकता पत्रिका में दर्शाये समयानुसार होगी।

३. जन्मकल्याणक – प्रातः जुलूस, रात्रि पालना हेतु, तपकल्याणक की प्रातः, आहारचर्या के समय, निर्वाण कल्याणक की प्रातः हवन के समय एवं मुनि संघ की चर्या हेतु वरिष्ठ स्वयं सेवक अनिवार्य हैं।

४. गरजथ हेतु स्वयंसेवकों की व्यवस्था पुलिस के सहयोग से, पुलिस और स्वयंसेवक प्रभारी के अनुसार रहेगी।

५. महिला स्वयंसेवक कमसे कम रखे जावें।

६. जुलूस एवं गजरथ हेतु पायलट हरे एवं लाल ध्वज सहित होना चाहिये, जिन्हें मार्ग की एवं जुलूस व्यवस्था की पूर्ण जानकारी हो।

गजरथ व्यवस्था हेतु निर्देश

१. गजरथ परिक्रमा के दिन पण्डाल में पहुंचने के लिये दो द्वार रखे जावें, बाकी मार्ग वेरीकेट्ट द्वारा पूर्णतः निषेधित किये जावें।

२. पण्डाल में **केवल महिलायें** ही रहेंगी अतः ठीक **ग्यारह बजे** से वेरीकेट पर पुलिस एवं वरिष्ठ स्वयं सेवक नियुक्त किये जावें।

३. मुख्य द्वार १२.३० बजे बंद किया जावे शेष द्वार एक बजे तक खुला रहेगा यह **सूचना माइक द्वारा पूर्व में प्रसारित की जावे।**

४. महिलायें एवं आमंत्रित अतिथि **एक बजे** के पूर्व ही प्रवेश पा सकेंगे। इसके पश्चात् नहीं। यह **सूचना माइक द्वारा एक दिन पूर्व प्रसारित की जावे।**

५. मुख्य पात्र एवं आमंत्रित अतिथियों को **पूर्व में ही प्रवेश पास दिये जावें** बिना पास किसी पुरुष वर्ग को प्रवेश नहीं दिया जावे चाहे वह कोई भी **पदाधिकारी** क्यों न हो।

६. आमंत्रित अतिथियों को बैठने की व्यवस्था अलग से की जावे तथा **प्रवेश पास में स्थान की** जानकारी अंकित की जावे।

७. पण्डाल के चारों ओर स्पीकर यूनिट की व्यवस्था की जावे।

८. **दोपहर एक बजे रथ में हाथी बंधकर तैयार होना चाहिये।**

९. रथ के ऊपरी भाग में केवल इन्द्र ही बैठेंगे इन्द्राणी या अन्य महिला पात्र नहीं।

१०. रथ में प्रतिष्ठा पात्रों की संख्या अधिकतम ५० होगी इससे अधिक पात्र रथ में न बिठाये जावें।

११. रथ में बैठने वाले इंद्र इंद्राणियां **'णमोकार मंत्र'** का आराधन करें।

१२. रथ के आगे एक अन्य हाथी पर मंगल ध्वजा होना अनिवार्य है।

१३ रथ एवं हाथियों के पास बैण्ड या अन्य स्वयं सेवक नहीं होना चाहिये।

१४. रथ का संचालन पण्डाल के प्रमुख द्वार से होगा तथा प्रत्येक परिक्रमा के पश्चात् प्रमुख द्वार पर रथ रोककर अर्घ चढ़ाकर पुनः रथ आगे बढ़ायें।

१५ रथ में मुख्य पात्र ही सातों फेरियों में बिठाना चाहिये, समिति की व्यवस्थानुसार रथ में प्रतिष्ठा पात्र बिठाने का कार्य पास द्वारा सुनियोजित करें, उन्हें फेरी केअनुसार पहले से ही एकत्रित करलें एवं जिम्मेवारी व अनुशासन पूर्वक कार्य सम्पन्न करें।

१६. परिक्रमा में मुनिसंघ के साथ दिव्यघोष (बैण्ड)वाले स्वयंसेवक एवं इन्द्र इन्द्राणियां ही रहेंगे। **अन्य स्वयं सेवक या पदाधिकारी** नहीं।

१७. रथ की सात परिक्रमा ही होंगी कम या अधिक नहीं।

१८. मुख्य पण्डाल के पीछे एवं पण्डाल के बाहर चारों ओर **पेयजल** की व्यवस्था की जावे।

१९. यदि दर्शक अनुशासित न हों तो पूर्ण व्यवस्था पुलिस को सौंपी जावे।

२० पूरी रूपरेखा स्वयंसेवक प्रभारी एवं पुलिस अधिकारियों के द्वारा बनाई जावे।

२१. हाथी की लीद (मल) उठाने हेतु दो कर्मचारी नियुक्त किये जावें।

२२. पायलट स्वयंसेवकों के पास **लाल एवं हरे** ध्वज होंगे।

२३. रथ परिक्रमा का रोड पक्का होना चाहिये, जिससे रथ चलने में सुविधा होगी।

२४ एक दिन पूर्व रथ को चलाकर देखलें उसमें व्यक्तियों को भी बिठायें (यह कार्य रात्रि के समय ट्रेक्टर द्वारा सम्पन्न करें।)

२५. हाथियों का श्रृंगार एवं झूल आदि की व्यवस्था पूर्व में ही कर ली जावें।

२६. रोड पर रथ संचालन हेतु चूने की लाइन डालकर स्वयंसेवकों एवं इन्द्राणियों को उसके अनुसार चलने हेतु निर्देशित करें।

प्रतिष्ठा संबंधी (५० पात्रों हेतु) आवश्यक सामग्री

१५१ श्रीफल (सूखे)
६०१ गोला
३०० कि.ग्रा. चावल
२० कि.ग्रा. वादाम,
२ कि.ग्रा. सुपारी
३ कि.ग्रा. लवंग
१ कि.ग्रा. इलायची
२ कि.ग्रा. चिरौंजी
५० ग्राम केशर
५० ग्राम चांदी के फूल
२ चंदन मूठा
२५ पंचरत्न पुड़िया
२५ चांदी स्वास्तिक
२ चांदी स्वास्तिक बड़े
१०० यज्ञोपवीत
१ कि.ग्रा. पांचोंचन्दन
१ कि.ग्रा. मांगलीक गांठ (हल्दी)
३ कि.ग्रा. कपूर
१० कि.ग्रा. धूप
२ कि.ग्रा. मौली
१ कि.ग्रा. पीली सरसों
१ कि.ग्रा. कालेउड़द
२० कि ग्रा. शुद्ध घी
५ कि.ग्रा. रुई (धुनी)
१० पैकेट माचिस
१०० आसनी
२५ बड़ी आसनी
१०० जप माला

२ मूंगामाला
५ जवमाला
१० कि.ग्रा. रंगोली (५ रंग की)
५ कि.ग्रा. छुहारा
३ कि.ग्रा. किशमिश
२ कि.ग्रा. काजू
१ कि.ग्रा. मखाने
१०० ग्राम जायफल
२५० ग्राम मैनफल
१०० ग्राम जावित्री
५०० ग्राम सप्तधान्य
१०० ग्राम भोजपत्र
५०० ग्राम पिसी हल्दी
२५० ग्राम सर्वोषधि
१०० ग्राम अष्टगंध
१०० ग्राम उवटन
५० पूजाबर्तन सेट
१५१ घट यात्रा कलश
५ मंगल कलश बड़े चित्रकारी सहित
६ मंगल कलश छोटे
५ ताम्रकलश (छोटे)
५ ताम्र कटोरी (छोटी)
५० तस्तरी बड़ी
४ गुण्डी
२ स्टील टंकी
४ बाल्टी
५० धोती

५० दुपट्टा
५० बनियान
५० अंडरवियर (लंगोट)
२० गमछा
५० रूमाल
२०० हार
२०० मुकुट
२०० माला
२० गुलदस्ता
५०० ग्राम रेशमधागा
१५ हार सफेद
१५ मुकुट सफेद
१० ग्राम पारद
नगदी रुपया एवं चवन्नी (७ नग चांदी)
२५० ग्राम लोहे की कील (छोटी बड़ी)
१० तांबे की शलाका ४"
१ तसला चांदी
१ फावड़ा चांदी
१ गेंती चांदी
१ कन्नी चांदी
५ शिलाऐं (स्वर्ण, रजत, कांस्य, पत्थर, मारवल प्रत्येक),
१ भद्रासन (चंदन)
१ षट्कोण शिला
१ चौकोन शिला
१ गोल शिला

१	अर्धचन्द्रकार शिला	१	शांति यंत्र	१	पालकी (चांदी)
१	चकी	१	जलमण्डल यंत्र	२	चांदी छड़ी
१	हथौड़ी	१	सर्वसम्पत्तिकर यंत्र	१	पालना (चांदी)
१	हीराकनी	१	निर्वाण यंत्र	१	शंख, घंटा, झालर,
१	पिच्छी	१	गणधर वलय यंत्र		तुरही (प्रत्येक १)
१	कमण्डलु	१	चौसठ ऋद्धि यंत्र	१	मंजूषा कांच
१	सिल-लोडा	१	नयनोन्मीलन यंत्र		१' × १' × १'
४	सिगड़ी	१	बोधि समाधि यंत्र	१	केश मंजूषा चांदी
४	पखा (बांस)	१	सुरेन्द्र यंत्र	१	अंजन डिब्बी चांदी
१	गस भट्टी	१	वर्धमान यंत्र	२	कटोरी चांदी
१	चिमटा	१	मोक्षमार्ग यंत्र	२	स्वर्ण शलाका
	[illegible]	१	पूजा यंत्र	२०	मी० पीला कपड़ा
१	परात बड़ी	१	श्रुतस्कंध यंत्र	१०	मी० लालतूस
१	टोकनी	१	वृहत्सिद्ध चक्र यंत्र	३०	मी० खादी सफेद
[illegible]	कुण्डा	१	आकाश मण्डल यंत्र	२०	मी० मलमल
१५०	बड़े दीपक (गलिया)		अचल यंत्र (प्रतिमानुसार)	५	मी० साटन
[illegible]	छोटे दीपक		कागज दस्ता, कार्बन, पेन,	१	चंदोवा १२' × १२'
२	दीपक जाली सहित		पेन्सिल, सेफ्टी/आलपिन,	३	चंदोवा ४' × ४'
४	कलश (मिट्टी)		धागा मोटा एवं पतला	५	अछार (वेस्टन)
	चित्रकारी सहित	१	सुई पुड़िया	१	मंगलध्वज त्रिकोण
३	प्रतिमा मूलनायक	१	कैंची, बैज		४.५' × ९'
	(प्रतिष्ठित)	१	इंचीटेप	१२	मण्डपध्वज २' × ३'
१	प्रतिमा विधिनायक	१	परकार	८	यागमण्डल ध्वज
४	मानस्तंभ		(दो नौक वाली)		(१' × १.५' चोकोर)
[illegible]	[illegible]	१	पाण्डुक शिला	२०	जुलूसध्वज २' × ३'
[illegible]	[illegible]		(अभिषेक हेतु)	२०	पंचरंगीध्वज २' × ३'
[illegible]	[illegible]	१	अष्टमंगल द्रव्य सेट	४	सफेदध्वज १' × २'
[illegible]	[illegible] यंत्र	१	अष्ट प्रातिहार्य सेट	५	कल्याणकों के बेनर
[illegible]	[illegible] यंत्र	१०	छत्र		बेनर -
	[illegible] यंत्र	१५	चंवर		नगर, बाजार, एवं
	[illegible] यंत्र	५	सिंहासन		द्वार हेतु

१ श्रृंगारदान
(पूरे समान सहित)
१ तेल शीशी
१ दर्पण बड़ा
४ झारी
२ पंखा सजावट वाले
२ तलवार (नाटक)
५०० ग्राम गोटा,
रिविन ३-४ रग
१ प्लास्टिक गुड्डा
(बड़ा)
५ फुटबाल प्लास्टिक
१ सीटी
१ रस्सी सजी हुई
५० बच्चों के बड़े खिलौनें
५ कि.ग्रा. रत्नवृष्टि
हेतु सितारे मोती
२०० ग्राम चमकी
५ पैकेट कांच कटिंग
२ बन्दनवार
सुनहरे कागज
सजावट का सामान
खाली डिब्बा,
दान पेटी, दान थैला
२ लोहे के संदूक
२ लकड़ी पेटी बड़ी,
तराजू, बाट, स्लेट, पेंसिल,
गेहूँ, उड़द, हल।
साबुत गन्ना
डोरी, ध्वजदंड
५० ध्वजा हेतु पाईप

स्वप्नरील, त्रिपाल,
विछायत, लकड़ी के पाटे
२० तखत
२५ चौका
५० चौकी
१० बैंच
३० टेबिल (पूजा हेतु)
५० कुर्सी
माता का पंलग एवं बिस्तर
शामयाना/कनात, चांदनी
रस्सा/रस्सी/सुतली

• प्रकाश
प्रचार व्यवस्था
स्पीकर माइक
संगीत पार्टी
बैण्ड पार्टी
शहनाई
हेलीकाप्टर
घोडा, ऊंट
हाथी हौदा सहित
पानी टेकर
हाथ ठेला
मजदूर
सफाई कर्मचारी
५०० ईंट मिट्टी
पुजारी
जपवाले
परिचारक
प्रबंधक (विद्वान)
पुलिस
स्वयं सेवक

स्वयंसेविका
प्रबंधक (स्टोर)
प्रबन्धक (मुनिसंघ)

निर्माण कार्य

यज्ञवेदी
सांस्कृतिक मंच
पण्डाल
मण्डप
गर्भगृह/राजमहल
मंगल ध्वजा वेदी
पाण्डुकशिला
दीक्षावन
समवशरण रचना
कैलाशपर्वत,
गमले
झाकियां
जपशाला
सामग्रीशाला
भोजन शाला
सामग्री धोने का स्थान
धोती बदलने का स्थान
विद्वान आवास

धूप की सामग्री

मलयागिरि, अगर तगर, चन्दन, नागर, मोथा, उसीर, छबीला, वायतूमरी, पांडरी, पत्रज, सुगन्धवाला

सप्तधान्य

मूंग, जवा, उड़द, गेहू, ज्वार, चावल, चना

गजरथ हेतु सामग्री

१ रथ
५० ग्राम सिंदूर
५० ग्राम · गुग्गुल
२०० ग्राम तिल का तेल
५० ग्राम लोवान
१ ग्राम (मोदक)शुद्ध
बांस बल्ली
गन्ना, गुड़

उवटन

पीला सरसों, जायफल, हल्दी, अक्षत, कपूर

अष्टगंध

अगर, तगर, मलयागिरि, रक्तचंदन, कपूर, हरताल, हिंगुल ।

सर्वोषधि

केशर, कपूर, जायफल, जावित्री, कंकोल, प्रियंगु, वच, सरसों, मोथा, हल्दी, लौंग, तुलसीपत्र, मलयागिरि, देवदारु, कटाई, अगर चंदन, तगर चंदन, सुगंधवाला, तज, पत्रज, बड़ी इलायची, नागकेशर, कूठ, जटामासी

वस्त्राभरण

१ भगवान केआभरण- मुकुट, हार, कण्ठी, बाजूबंध, करधन, कुण्डल, यज्ञोपवीत सभी सोने के।
२ भगवान के वस्त्र - कुर्ता, साफा, पेंचा (सभी तीन रंग के लाल, नीला, पीला) गद्दा, रजाई, तकिया लोड़ (२)
३ इन्द्र, कुबेर, आदि को पूजा के वस्त्र - सूती धोती, दुप्पट्टा बनियान सभी केशरिया
४ इन्द्रसभा, राजदरबार के वस्त्र- चूडीदार पायजामा, लम्बा सुन्दर कोट, पगड़ी, मुकुट, हार माला अलगा सभी अच्छे रंग में ।
५ इन्द्राणी के पूजा के वस्त्र- सूती साडी, ब्लाउज, पेटीकोट चादरा सभी केशरिया
६ राजदरबार एवं इन्द्रसभा- बढ़िया साड़ी, आभूषण, हार मुकुट
७ अष्टकुमारी- नीली साडी २, लालसाड़ी २, हरीसाड़ी २, केशरिया साड़ी २
८ छप्पन कुमारियां - लंहगा चुनरी या साड़ी अच्छे रंग के
९ नीलांजना २ सेट, गहरे नीले वस्त्र साड़ी ब्लाउज आदि
१० लौकांतिक देव - सफेद धोती, दुपट्टा बनियान सफेद हार एवं मुकुट
११ प्रतिष्ठाचार्य- धोती दुपट्टा बनियान, अंडरवियर, कुर्ता, तौलिया रुमाल सब सफेद
१२ पुजारी - धोती, दुपट्टा, बनियान
१३ गर्भ गृह के वस्त्र- बढ़िया दरी, गद्दा, रजाई, कालीन, बेडसीट एवं पलंग
१४ इन्द्र सभा, राजसभा- रेशमीपर्दा ३, राजगद्दी २, बढ़िया कुर्सी ५०, कालीन आदि पूर्ण सज्जासहित
१५ भरत बाहुबलि, महामण्डलेश्वर ४ मण्डलेश्वर ४ एवं ३२ मुकुटबद्ध राजाओं के वस्त्र सुन्दरतम साधन एवं सुविधानुसार

नोट : पूजा के सभी वस्त्र नये (उपयोग में लाये हुए नहीं) होना अनिवार्य है ।

ओ ह्रीं अनंतानंतपरमसिद्धेभ्यो नमः

मंगलाष्टक पाठ

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिताः सिद्धाश्च सिद्धीश्वराः ।
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः ॥
श्रीसिद्धान्तसुपाठकाः मुनिवराः रत्नत्रयाराधकाः ।
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ १ ॥

श्रीमन्नम्रसुरासुरेन्द्र – मुकुटप्रद्योतरत्नप्रभा –
भास्वत्पादनखेन्दवः प्रवचनाम्भोधीन्दवः स्थायिनः ।[१]
ये सर्वे जिन-सिद्ध-सूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः,
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ २ ॥

सम्यग्दर्शन – बोध – वृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं,
मुक्तिश्री-नगराधिनाथ – जिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रदः ।
धर्मः सूक्तिसुधा च चैत्यमखिलं चैत्यालयं श्र्यालयं,
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ ३ ॥

नाभेयादि – जिनाः प्रशस्तवदनाः[२] ख्याताश्चतुर्विंशतिः
श्रीमन्तो भरतेश्वर-प्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश ।
ये विष्णु – प्रतिविष्णु – लांगलधरा सप्तोत्तराविंशति–
स्त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रिषष्टिपुरुषाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ ४ ॥

ये सर्वौषधिऋद्धयः सुतपसो वृद्धिगताः पञ्च ये,
ये चाष्टांगमहानिमित्त[३] कुशलाश्चाष्टौ वियच्चारिणः ।
पञ्चज्ञानधरास्त्रयोऽपि बलिनो ये बुद्धिऋद्धीश्वराः,
सप्तैते सकलार्चिता मुनिवराः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ ५ ॥

पाठान्तर (१) धावपरस्थायिनः (२) जिनाधिपास्त्रिभुवन
(३) कुशलाश्चाष्टविधाश्चारणाः

ज्योतिर्व्यंतरभावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ स्थिताः,
जम्बूशाल्मलिचैत्यशाखिषु तथा वक्षारं-रूप्याद्रिषु।
इष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे द्वीपे च नन्दीश्वरे,
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ ६ ॥

कैलासो वृषभस्य निर्वृतिमही वीरस्य पावापुरी,
चम्पावा वसुपूज्यसज्जिनपतेः सम्मेदशैलोऽर्हताम्।
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरीनेमीश्वरस्यार्हतो,
निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ ७ ॥

सर्पो हारलता भवत्यसिलता सत्पुष्पदामायते,
सम्पद्येत रसायनं विषमपि प्रीतिं विधत्ते रिपुः।
देवायान्ति वशं प्रसन्नमनसः किं वा बहु ब्रूमहे,
धर्मादेव नभोऽपि वर्षतितरां कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ ८ ॥

यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां जन्माभिषेकोत्सवो,
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो यः केवलज्ञानभाक्।
यः कैवल्यपुर-प्रवेशमहिमा सम्पादितः स्वर्गिभिः,
कल्याणानि च तानि पञ्च सतत कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ ९ ॥

इत्थं श्रीजिनमंगलाष्टकमिदं सौभाग्यसंपत्करम्
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थङ्कराणांमुखात्।
ये श्रृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनै-र्धर्मार्थकामान्विता,
लक्ष्मीराश्रियते व्यपायरहिता निर्वाणलक्ष्मीरपि ॥ १० ॥

मंगलपञ्चक

गुणरत्नभूषा विगतदूषाः सौम्यभावनिशाकराः
सद्बोधभानुविभाविभासितदिक्चया विदुषां वराः ।
निःसीमसौख्यसमूहमण्डितयोगखण्डितरतिवराः
कुर्वन्तु मंगलमत्र ते अर्हन्तजिनपरमेश्वराः ॥१॥

सद्ध्यानतीक्ष्णकृपाणधारानिहतकर्मकदम्बका
देवेन्द्रवृन्दनरेन्द्रवंद्याः प्राप्तसुखनिकुरम्बकाः ।
योगीन्द्रयोगनिरूपणीयाः प्राप्तबोधकलापकाः
कुर्वन्तु मंगलमत्र ते सिद्धाः सदासुखदायकाः ॥२॥

आचारपञ्चकचरणचारणचञ्चवः समताधरा
नानातपोभरहेतिहापितकर्मकाः सुखिताकराः ।
गुप्तित्रयीपरिशीलनादिविभूषिता वदतां वराः
कुर्वन्तु मंगलमत्र ते श्रीसूरयोऽर्जितशम्भराः ॥३॥

द्रव्यार्थभेदविभिन्नश्रुतभरपूर्णतत्वनिभालिनौ
दुर्योगयोगनिरोधदक्षाः सकलवरगुणजालिनः
कर्त्तव्यदेशनतत्परा विज्ञानगौरवशालिनः
कुर्वन्तु मंगलमत्र ते गुरु देवदीधितिमालिनः ॥४॥

संयमसमित्यावश्यकापरिहाणिगुप्तिविभूषिताः
पञ्चाक्षदान्तिसमुद्यताः समतासुधापरिभूषिताः
भूपृष्ठविष्टरशायिनो विविधर्द्धिवृन्दविभूषिताः
कुर्वन्तु मंगलमत्र ते मुनयः सदा शमभूषिताः ॥५॥

स्वस्ति मंगलपाठ

श्रीपंचकल्याणमहार्हणार्हा वागात्मभाग्यातिशयैरुपेताः।
तीर्थंकराः केवलिनश्च शेषाः स्वस्तिक्रियां नो भृशमावहन्तु ॥१॥

ते शुद्धमूलोत्तरसद्‌गुणानामाधारभावादनगारसंज्ञाः।
निर्ग्रंथवर्या निरवद्यचर्याः स्वस्तिक्रियां नो भृशमावहन्तु ॥२॥

ये चाणिमाद्यष्टसुविक्रियाढ्यास्तथाऽक्षयावासमहानसाश्च।
राजर्षयस्ते सुरराजपूज्याः स्वस्तिक्रियां नो भृशमावहन्तु ॥३॥

ये कोष्ठबुध्यादिचतुर्विधर्द्धीरवापुरामर्शमुखौषधर्द्धीः।
ब्रह्मर्षयो ब्रह्मणि तत्परास्ते स्वस्तिक्रियां नो भृशमावहन्तु ॥४॥

जलादिनानाविधचारणा ये ये चारणाग्र्यांवरचारणाश्च।
देवर्षयस्ते नतदेववृन्दाः स्वस्तिक्रियां नो भृशमावहन्तु ॥५॥

सालोकलोकोज्ज्वलनैकतानं प्राप्ता परं ज्योतिरनंतबोधं।
सर्वर्षिवंद्याः परमर्षयस्ते स्वस्तिक्रियां नो भृशमावहन्तु ॥६॥

श्रेणीद्वयारोहणसावधानाः कर्मोपशान्तिक्षपणप्रवीणाः।
ये ते समस्ताः यतयो महान्तः स्वस्तिक्रियां नो भृशमावहन्तु ॥७॥

समग्रमध्यक्षमिताक्षदेशप्रत्यक्षमत्यक्षसुखानुरक्ताः।
मुनीश्वरास्ते जगदेकमान्याः स्वस्तिक्रियां नो भृशमावहन्तु ॥८॥

उग्रं च दीप्तं च तपोभितप्तं महच्च घोरं च तरां चरन्तः।
तपोधना निर्वृतिसाधनोत्काः स्वस्तिक्रियां नो भृशमावहन्तु ॥९॥

मनो वचःकायबलप्रकृष्टाः स्पष्टीकृताष्टांगमहानिमित्ताः।
क्षीरामृतास्त्राविमुखा मुनीन्द्राः स्वस्तिक्रियां नो भृशमावहन्तु ॥१०॥

प्रत्येकबुद्धप्रमुखा मुनीन्द्राः शेषाश्च ये ये विविधर्द्धियुक्ताः।
सर्वेऽपि ते सर्वजनीनयुक्ताः स्वस्तिक्रियां नो भृशमावहन्तु ॥११॥

शापानुग्रहशक्तताद्यतिशयै रुच्चावचैरंचिताः।
ये सर्वे परमर्षयो भगवतां तेषां गुणस्तोत्रतः।
एतत्स्वस्त्ययनादपैति सकलः संक्लेशभावः शुभो।[1]
भावस्यात्सुकृतं च तच्छुभविधेरादाविदं श्रेयसे ॥१२॥

स्वस्ति मंगल पाठ वेदी प्रतिष्ठा मे भी पढ़ें।

शान्त्यष्टक पाठ (हिन्दी)

दोहा

वन्दो श्री अरहंत को वन्दों सिद्ध महान ।
आचारज उवझाय मुनि वन्दों करके ध्यान ॥१॥

पद्धडी

जय वीतराग सर्वज्ञदेव, तुम ही अघहर्ता पूज्यदेव ।
तुम ही मंगलकर्ता सुदेव, तुम ही शरणा सुख हेतु देव ॥२॥

तुम अक्ष जीत तुम काम जीत, तुम राग जीत तुम द्वेष जीत ।
तुम मान जीत तुम लोभ जीत, तुम मोह जीत तुम करम जीत ॥३॥

तुम जगतध्येय तुम सत्य ध्यान, तुम ही गुण निर्मल के निधान ।
तुम समदर्शी समता अधीश, भवि भक्ति करें निजनाय शीश ॥४॥

तुम ही जगपावन हो उदार, तुम ही दाता निज ज्ञान धार ।
तुम ही भव भ्रमण विनाशकार, तुम ही भवदधि से पारकार ॥५॥

तुम नहि प्रसन्न तुम नहि उदास, तो भी भक्तन की पूर्ण आश ।
यह महिमा कैसे कही जाय, तुम ध्यान गम्य योगी सहाय ॥६॥

वन्दें तुम पद हम बार बार, यह कार्य होय निर्विघ्न पार ।
यह बिम्ब-प्रतिष्ठा अति महान, उमगे हम तुम्हरी शरण आन ॥७॥

यह कार्य होय सुख शांतिकार, होवे मंगल दिन दिन अपार ।
राजा परजा सब सुखी होय, जिन धरमतनों उद्योत होय ॥८॥

हम ज्ञानहीन विधितै अजान, तुव भक्ति करे हिय गुण पिछान ।
जो भूले चूके क्षम्यनाथ, विनती करते हम जोड़ हाथ ॥९॥

गृहस्थ के कर्त्तव्यों में जिनबिम्ब प्रतिष्ठा का महत्व[१]

कालेे गृहस्था विकला गृहादिकार्येष्वनुष्ठानमुपाचरन्ति,
अल्पावबोधद्रविणप्रभावान्न धर्मकार्ये बहुधा यतन्ते ।
प्राप्यापि केचिद्विभवं तदीयसंरक्षणोपार्जनदत्तचित्ताः,
स्वायुः समाप्ति किल तैलभावाभावाद्यथादीपगणा लभन्ते ।।
ये नश्वरं वैभवमाकलय्य क्षेत्रेषु सप्तस्वतिवापयन्ति,
तैर्लब्धमीशत्वफलं मनुष्यभवस्य सारं सुगृहीतुकामैः ।
येनार्थसंपत्तिमता जिनेन्द्रबिम्बं प्रतिष्ठापितमात्मकृत्यैः,
तेनाधिकल्पं यशसापि पुण्यप्रभूतिना व्याप्तमशेषविश्वम् ।।
बदरीफलमात्रबिबतो ह्रदये पूर्वमनाप्तमाप्यते,
भवकोटिसमुत्थमेनसां निचयं स्फेट दमेयदर्शनम् ।
तीर्थादौ भरतेश्वरेण भगवत्सन्देशनालब्धितो,
गार्हस्थ्ये रसखंडमंडलघनैरष्टापदे निर्मितः ।।
चैत्यानां निवहस्तु तत्र जिनराड्बिबानि संस्थापिता,
न्येवं भूतभविष्यदैहिककला पूज्येश्वराणां पृथक् ।
तीर्थेऽजितेशः सगरादिभिस्तथा कृत्वा प्रतिष्ठा जिनसद्मनां शुभा,
अनादिसंतानभवा स्वरूपसत्प्रतिक्रियालम्भनभावतः स्मृता ।।
साक्षाच्चिदानदघनाभिरामे या देवबुद्धिः किल तत्स्वरूपं,
दृष्ट्वा तदीयस्मरणं न किं स्यादेव तयोर्वै चिदचित्प्रभेदः ।
धन्याः पूर्वजनुः प्रवाहमहितोत्साहा धराभूषणा -
मानौनत्यदयादमादिगुणिनः पुण्यानुबन्धोदयाः ।।
भोक्तारः कमलाचलार्थवनिताभोगस्य मत्युन्नताः,
शक्तास्ते हि जिनेन्द्रबिब भवनानुष्ठापने नेतरे ।
युतिरयुतिरिति स्याद्द्विप्रकारोपदेशाद्,
विकल-सकल धर्माध्यासतो मोक्षमार्गे ।।
तदिह मुनिवराणां वीतरागत्वभाव -
स्तदितरभविकानां दत्तिरिज्या प्रधाना ।
अतो महाभाग्यवतां धनसार्थक्यहेतवे ।
नान्योपायो गृहस्थानां चैत्यचैत्यालयाद्विना ।।
।। इति जिनबिंबचैत्यालयप्रतिष्ठामहत्त्वम् ।।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक १२ से २२

प्रतिष्ठा में आवश्यक पात्र [१]

आचार्यो मघवा कर्ता तत्पत्नी पूजकस्तथा,
पञ्चैते यज्ञनेतारो मुख्या व्रतसमन्विताः ।
सामग्री सम्पत्तिकरा मंत्रिणोऽध्यापका बुधाः,
श्री ह्रयादिकन्यका लौकांतिककल्पा अपि स्मृताः ।।

प्रतिष्ठालक्षण [२]

प्रतिष्ठानं प्रतिष्ठा च स्थापनं तत्प्रतिक्रिया ।
तत्समानात्मबुद्धित्वात्तदभेदः स्तवादिषु ।।
यत्रारोपात् पञ्चकल्याणमंत्रैः सर्वज्ञत्वस्थापनं तद्विधानैः ।
तत्कर्मानुष्ठापने स्थापनोक्तनिक्षेपेण प्राप्यते तत्तथैव ।।
नामक्षेपात्स्थापनांगप्रधानात् भावारोपाद् भव्यवृन्दैकमान्यात् ।
पूजास्तोत्रं सत्त्वबुद्ध्या कृतं वै पुण्यं सूते किं न नानाप्रकारम् ।।
संदृष्ट्वा प्रतिमानमात्मविलसद्भावेषु संकल्पना ।
निर्बाधेति गुणैः सुशीलगणने चित्रामकामृत्स्त्रियाः ।।
संगं चित्तविमर्षणान्नियमतो ज्ञात्वा तु संत्यज्यते ।
सुज्ञानैस्तदनेकनीतिनिपुणैः संस्थापना श्लाध्यते ।।
नो चेदत्र कलौ चराचरगुरुर्नो वा मनः पर्यय -
ज्ञानी वावधिलोचनो मुनिवरस्तत्संस्मृतेः कारणम् ।।
तत्तर्हि स्मरणस्वभावशुचिताध्यानस्तुलेः संभवात् ।
सम्यग्दर्शनहेतुरेव गदिता संस्थापनाधीश्वरी ।।

प्रतिष्ठा कारक के लक्षण [३]

आत्मसंपत्तिद्रव्येण व्ययं कृत्वा महोत्सुकः ।
यः करोति प्रतिष्ठां च स प्रतिष्ठापको मतः ।।
निषादनाडिंधमर्मुंडिचंडीपरीष्टिपाटच्चरदारपण्यम् ।
द्यूतव्यवस्योपजनस्थसीधुकृषीबलाद्यर्जनमत्र वर्ज्यम् ।।
परोपदानी किल संघपिंजो भूपार्थिनिर्माल्यधनप्रहर्त्ता ।
न शस्यते क्वापि महोपयोगं कर्तुं जनस्तद् घृतहेमभोक्ता ।।

---

(१) आ. ज. से, प्र. प्रा. श्लोक ७१ (२) वही, श्लोक ६४ से ६८
(३) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ७४ से ७९

न्यायोपजीवी गुरुभक्तिधारी कुत्सादिहीनो विनयप्रपन्नः ।
विप्रस्तथाक्षत्रिय वैश्यवर्गो व्रतक्रियावंदनशीलपात्रः ।।

श्रद्धालुदातृत्वमहेच्छुभावो ज्ञाता श्रुतार्थस्य कषायहीनः ।
कलंकपंकोन्मदतापवाद कुकर्मदूरोऽर्हदुदारबुद्धिः ।।

यज्वा तु याजको यष्टा पूजको यजमानभाक् ।
षट्कर्मा यागकृत् संघीत्यादिनाम्ना प्रयुज्यते ।।

प्रतिष्ठाचार्य के लक्षण (१)

अनूचानः श्रोत्रियश्च प्रतिष्ठाचार्य आश्रयः ।
समावृत्तः प्राड्विवाकः समाचार्यादिनामयुक् ।।

स्याद्वादधुर्योऽक्षरदोषवेत्ता निरालसो रोगविहीनदेहः ।
प्रायः प्रकर्त्ता दमदानशीलो जितेन्द्रियो देवगुरुप्रमाणः ।।

शास्त्रार्थसंपत्तिविदीर्णवादो धर्मोपदेशप्रणयः क्षमावान् ।
राजादिमान्यो नययोगभाजी तपोव्रतानुष्ठितपूतदेहः ।।

पूर्वं निमित्ताद्यनुमापकोऽर्थसंदेहहारी यजनैकचित्तः ।
सद्ब्राह्मणो ब्रह्मविदां पटिष्ठो जिनैकधर्मा गुरुदत्तमंत्रः ।।

भुक्त्वा हविष्यान्नमरात्रिभोजी निद्रां विजेतुं विहितोद्यमश्च ।
गतस्पृहो भक्तिपरात्मदुःखप्रहाणये सिद्धमनुर्विधिज्ञः ।।

कुलक्रमाप्ततसुविद्यया यः प्राप्तोपसर्गं परिहर्त्तुमीशः ।
सोऽयं प्रतिष्ठाविधिषु प्रयोक्ता श्लाघ्योऽन्यथा दोषवती प्रतिष्ठा ।।

शास्त्रानभिज्ञं कुलवावदूकं लोभानलप्लुष्टमशांतशीलम् ।
परंपराशून्यमपार्थसार्थं दूरात्त्यजंतु प्रणिधाननिष्ठाः ।।

प्रयोक्तृवाक्यं न हि मन्यमानो लोभादिसंचारकृतापमानः ।
प्राप्नोत्यनर्थं गुरुवाग्विरुद्ध इहान्यतः श्वभ्रमदभ्रदुःखम् ।।

सामग्री व्यवस्था (२)

पूजा के लिए जल, चंदनादि अष्ट द्रव्य निर्मल एवं प्रासुक लेना चाहिए । स्थल, वेदी, मण्डप, पात्र एवं वस्त्र आदि नवीन हों ।

वासांसि शुद्धानि सितानि धौतान्युद्भूतमात्राणि दशायुतानि ।
संधारयेत्पूजनकृत् प्रसन्नं चेतो यतः स्याद्बहुमूल्यकानि ।।

(१) आ. ज. से, प्र. प्रा. श्लोक ८० से ८७ (२) वही, श्लोक १०२ से १०४

पात्राणि वेदीस्थलतोरणानि सर्वाण्यनेकान्युपकारणानि ।
नव्यानि चित्ताक्षिहराणि यज्ञे जीर्णत्वदुष्टत्वविधाच्युतानि ॥

सामग्रीयोजने शाठ्यं कार्पण्यं योगवंचनम् ।
न कदाचिन्मनस्वीति कुर्यात्स्वहितकामुकः ॥

प्रतिष्ठाफल (१)

संबंधो ह्यभिधेयसंधिविषयाशक्यत्वकृत्यात्मता –
माचार्याः प्रथमं विचार्य करणे ग्रन्थस्य तत्रोद्यमम् ॥

कुर्वतीह ममापि तन्मुनिवरानूनानुकं पालनात् ।
सिद्धं तत्फलवर्णना खलु फलोद्देशे तथाऽऽवश्यकी ॥

ये कुर्वंति जिनेंद्रबिंबमनघं सत्पंचकल्याणका –
रोपात्सुस्थितमत्र पुण्ययशसां वृद्धिः सुमार्गावनम् ॥

तेषां मार्गविवृद्धिकारकतया पुण्यानुबंधोदयात् ।
यावच्चंद्रदिवाकरं दृशिकृत्तां सद्दृष्टिलाभः परम् ॥

भ्रश्यत्पातककर्ममर्मनिगलात् स्वानंदथुप्रीणन –
मंतातीतगुणार्णवं मनसिजोद्रेकव्यतीतस्पृहम् ॥

शांतं बिंबमपेक्षितं स्मृतमपि प्रत्यूहनिर्णाशनं ।
मान्यं तत्सति चित्रमाश्रय इव स्यात्तत्प्रतिष्ठापने ॥

कल्याणपंचकविधिः स्वयमात्मसत्त्वकर्तव्यता नियतकर्मवशाज्जनेन ।
तेनेह जन्मसफलत्वमितं प्रकर्षादुद्भूतिशक्रपदवी नियतं गृहीता ॥

द्रव्यं वपुः स्थिरतरं नहि जातु कस्य राज्यं मनोज्ञसुरचक्रिनरेंद्रलादि ।
तस्मादखंडभवकोटिसमुद्धरैकं स्थाप्यं जिनेन्द्रभवनप्रतिमानमुच्चैः ॥

कल्पे सुराणां भवनेऽसुराणां ज्योतिःकृत्तां व्यंतरसन्निकाये ।
असंख्यपुण्योदयसेतुहेतु जिनेन्द्रबिंबं यदनादिकालम् ॥

भाव्यभावकसंबंधो विषयाः पुण्यहेतवः ।
स्वर्गमोक्षसुखं तत्र फलं शक्यप्रतिक्रियम् ॥

समस्तकार्ये प्रथमं विचार्यानुष्ठानमेवं विदधातु कर्ता ।
यशः प्रवृत्तिः सुकृतोपपत्तिरनर्गलास्यात्कृतिकर्मकर्तुः ॥

(१) आ. ज. से., प्र. प्रा. श्लोक १०५ से ११२

मन्दिर निर्माण विधि (१)

शुद्धे प्रदेशे नगरेऽप्यटव्यां नदीसमीपे शुचितीर्थभूम्याम् ।
विस्तीर्णश्रृंगोन्नतकेतुमाला विराजित जैनगृहं प्रशस्तम् ।।

शुद्धे मुहूर्ते किल वास्तुशान्ति विधाय सीमानमकालदोषम् ।
खनेत्सुवर्णोद्धृतयत्रपीठं निवेश्य तद्द्वारसमीपवर्ति ।।

स्थानं परीक्षां च दिशां च साधनं वस्त्वर्चनं मंडललेखनार्चने ।
ग्रावानिवेशो भुवनस्य लक्षणं शैलानयश्चेति तदष्टधा मतम् ।।

जलाशयारामसमग्रशोभा वल्मीकजंतुप्रविचारवर्ज्या ।
कीलास्थिदग्धाश्मविवर्जिताभूरत्र प्रशस्या जिनवेश्मयोग्या ।।

तत्राध्वरं गर्तमधः खनित्वा तद्दोषवर्ज्यं यदि तेन पांशुना ।
प्रपूरयेन्न्यूनसमाधिकेषु भंगं समं लाभ इति प्रशस्यते ।।

सीम्नि प्रखाते प्रथमं शुभेऽह्नि घृतोद्भवं दीपमुपांशुमंत्रैः ।
संयोज्य ताम्रे कलशे पिधाय न्यसेत् सयंत्रं कनकं तदूर्व्याम् ।।

व्यपोहनं नो लभते प्रदीपस्तथाद्दषद्भिः खनितोर्ध्वकुड्ये ।
नयेद् व्रतारंभनिवेदनादिकर्ता विदध्याज्जनसाक्षियुक्तम् ।।

तत्स्थानवासान्निखिलान्सुरादीन् संतोष्य पंचेशसुमंडलेन ।
पूजां विधायेतरदीनजंतून् सन्मानयेत्कारुणिको महात्मा ।।

चैत्रादिमासे विषुवं प्रसाध्य दिग्मूढतापोहनपूर्वमत्र ।
मुखं तु शक्रोत्तरपश्चिमासु कुर्याज्जिनेशालयकस्य मुख्यम् ।।

तत्क्षेत्रं पंचविंशत्यवधिपरिमित संविभज्यात्र मध्ये ।
निध्यंशे मध्यकोष्ठे जिनपतिनिलयं पार्श्वयोः सिद्धपाठ्यौ ।।

आचार्यश्चोर्ध्वभागे तदितरगृहयोरागमो धर्मतीर्थ -
मग्रे साधुर्विधानालययजनपरिष्कारगेहं निवेश्यम् ।।

पूर्वोत्तरं दक्षिणमस्य कार्यं द्वारं तथा पूर्वदिशासु नृत्य -
गीतालयं चोत्तरमर्थशास्त्रसद्वाचनागेहमतः प्रशस्तम् ।।

पाश्चात्यभागे द्रविणालयादिविद्यालयं दक्षदिशिप्रदक्षिणा ।
जिनालयादेः परितोऽत्र कार्या प्राचीनयंत्रोपमसंनिवेशतः ।।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक १२५ से १४१

त्रिद्वारं हृदये जिनेन्द्रनिलये चाष्टोत्तरं सच्छत्रं ।
बिबानां विनिवेशनं तदभितः प्रादक्षणीयक्रमः ।।

अग्रे प्रेक्षणगेहमास्थितिगृहं माहेन्द्रनामादिकं ।
स्वच्छा पुष्करणीत्यकृत्रिमजिनेशावासरूपाकृतिः ।।

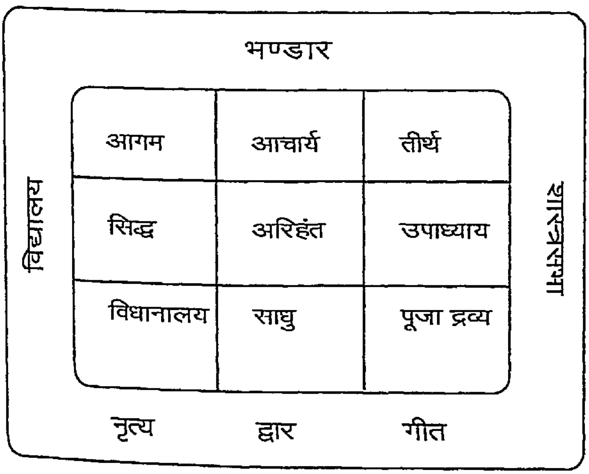
पूर्वोत्तरं चोत्तरदिग्मुखं वा पार्श्वे सभायां श्रुतसंनिवेशः ।
मध्ये चतुष्कं सुविधानकारि तत्पूर्वमग्रे जिनसंस्थितिः स्यात् ।।

पृथक् कपाटादिधृतावकाशावेदी त्रिश्रृंगा त्रिककट्टिनीका ।
ऊर्ध्व महद्वृत्तशिरस्कदेशे, छत्रोपमं केतुसुकिंकिणीकम् ।।

तदूर्ध्वदेशे शिखराकृतिस्थे जिनेन्द्रबिंबादिलसत्सुशोभं ।
प्रदक्षिणा तत्परितो विधेया यथा सुशोभं गृहकल्पनादि ।।

द्वित्रिक्षणं वाऽ पि चतुःक्षणादिश्रृंगोन्नतं केतुपरीतभालं ।
वास्तूत्पथं कर्तुरनर्थयोगस्तस्माद्विधेयं किल वास्तुपूर्व ।।

मंदिर का नक्शा



भूमि परीक्षा

जिस भूमि पर मंदिर का निर्माण करना हो, वहाँ दूब आदि उगती हो, उसमें नीचे मुर्दा हड्डी आदि अपवित्र वस्तुएं न हों, जहाँ आसपास विघ्नकारक, मांसाहारी, मद्यपायी, निंद्य मनुष्यों का निवास न हो, जहाँ विशेष कोलाहल न हो, धर्म साधन में विघ्न न आवें ऐसे ही शुद्ध स्थान में, नगर में, वन में, पवित्र नदी के समीप में या तीर्थ – भूमि में, विस्तारयुक्त जिन भवन बनाना चाहिए । जो शिखरयुक्त हो, कलश, ध्वजा सहित हो, ऐसा जिन मंदिर आगम में शुभ माना है ।

(१) जिस भूमि पर मंदिर का निर्माण करना हो वहाँ एक हाथ लम्बा-चौड़ा एवं गहरा गड्ढा मध्यभाग में खुदवाना चाहिए । उसमें से निकली मिट्टी को उसमें ही भरना । यदि मिट्टी बच जाय तो वह भूमि उत्तम जानना, मिट्टी बराबर रहे तो मध्यम और यदि गड्ढा खाली रहे तो जघन्य जानना यह अशुभ है ।

(२) एक हाथ गहरे, लम्बे, चौड़े उस गड्ढे में पानी भर दें फिर सौ कदम चलकर गड्ढा देखना यदि एक अंगुल पानी कम हुआ हो तो उत्तम, यदि दो अंगुल पानी कम हो गया तो मध्यम, और तीन अंगुल पानी कम हो गया हो तो जघन्य जानना यह अशुभ है । वह भूमि मंदिर निर्माण योग्य नही है ।

(३) मंदिर – निर्माण स्थल पर कनात या चटाइयों द्वारा घेरा लगाकर हवा को रोक लें, अथवा फूस की आठ हाथ लम्बी चौड़ी और पाँच हाथ ऊंची झोपड़ी बनवा लेना चाहिए एवं रक्षा मंत्र पढकर चारो दिशाओं में चार कच्चे घड़े रखें तथा उन पर चार दीपक घी भरकर रखें । दीपकों में पूर्व दिशा में सफेद, दक्षिण में लाल, पश्चिम में पीली, उत्तर में काली बत्ती डालकर जला दें । वहां दो पुरुष अनादि सिद्ध मंत्र (णमोकार मंत्र) का जाप करते हुए रात्रि जागरण करें । दीपकों पर विशेष ध्यान रखें । यदि पहले सफेद या पीली बत्ती वाला दीपक बुझ जाय तो मंदिर अल्पकाल रहेगा । यदि पहले लाल व काली बत्ती वाला दीपक बुझ जाय तो शुभ है । इस प्रकार भूमि – परीक्षा करके मंदिर निर्माण योग्य स्थान का विचार करना ।

मंदिर - निर्माण मुहूर्त [१]

कालनागमावर्ज्यमानयेत् भूपसीमधरपार्श्वकान्मुदा ।
ज्योतिरर्थपरिपूर्णकारुकैः संनियोज्य खनिमुत्तमां क्रियात् ॥
मीनमेषवृषराश्यवस्थिते ग्रीष्मभारिशिवदिग्यमाननम् ।
युग्मकेशरिकुलीरगेऽनिले कन्यकालितुलगेऽश्रये भवेत् ॥

(१) आ. ज. से, प्र. पा. पृष्ठ ३५ श्लोक १४२ से १४८

कार्मुके च मकरे घटे रवावग्निदिश्युपगतं विदुर्बुधाः ।
निश्चयेन तदपास्य पृष्ठतः संखनेन्नयविशारदो जनः ॥
अधोमुखैर्भैर्विदधीत खातं शिलास्तथैवोर्ध्वमुखैश्च पट्टम् ।
तिर्यग्मुखैर्द्वारकपाटदानं गृहप्रवेशो मृदुभिर्ध्रुवर्क्षैः ॥
मार्गादिषु विचैत्रेषु मासेषूत्तरसंक्रमे ।
व्यतीपातादियोगेन शुभेऽह्नि प्रारभेत तत् ॥
पुष्योत्तरात्रयमृगश्रवणाश्विनीषु चित्राकया हि वसुपाशिविशाखिकासु ।
आर्द्रापुनर्वसुकरेष्वपि भेषु शस्तं जीवज्ञशुक्रदिवसेषु जिनेषु सद्म ॥
जीवेन चंद्रहरिसर्पजलध्रुवाणि पुष्यं प्रशस्तमथ तक्षवसुद्विनाथाः ।
इस्त्रार्द्रिका शलपदाश्च सुमार्गविन वाहोत्तराकरकदाश्च बुधेन योगात् ॥

राहु विचार[१]

मीन, मेष, वृष का सूर्य हो तो राहुमुख ईशान कोण में होता है
मिथुन, कर्क, सिह का सूर्य हो तो राहुमुखवायव्य कोण में होता है
कन्या, तुला, वृश्चिक का सूर्य हो तो राहुमुख नैऋत्य कोण में होता है
धनु, मकर, कुम्भ का सूर्य हो तो राहुमुख आग्नेय कोण में होता है

अतः क्रिया में प्रवीण पुरुष राहुमुख को छोड पृष्ठ भाग अर्थात् पीछेभाग में नींव का खनन करे। भूमि को सुप्त नक्षत्रों में न खोदें।

नक्षत्र विचार[२]

(१) बुधवार को मूल, अश्लेषा, विशाखा, मंगलवार को तीनों पूर्वा, मघा, भरणी यह **अधोमुखसंज्ञक** नक्षत्र हैं, इनमें नींव का खनन करना।

(२) रविवार को आर्द्रा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, तीनों उत्तरा, रोहणी यह **उर्ध्वमुखसंज्ञक** नक्षत्र हैं इनमें शिलास्थापन करना छत्त नहीं डालना।

(३) अनुराधा, हस्त, स्वाति, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, अश्वनी ये **तिर्यक्मुखसंज्ञक** नक्षत्र हैं इनमें द्वार के कपाट लगाना श्रेष्ठ है।

(४) रविवार को तीनों उत्तरा, रोहणी, ये **ध्रुवसंज्ञक**[३] नक्षत्र हैं इनमें गृहप्रवेश करना जिन बिम्ब स्थापन करना श्रेष्ठ है अभिषेक, शांतिधारा, वृक्षारोपण, आदि नगर भ्रमण धर्म क्रियायें स्थिर कार्य करें।

(५) मार्गादिषु विचैत्रेषु मासेषूत्तरसंक्रमे
व्यतीपातादियोगेन शुभेऽह्नि प्रारंभेत् तत्। [४]

---

(१) आचार्य जयसेन प्रतिष्ठा पाठ, श्लोक १४३/१४४ (२) आचार्य जयसेन प्रतिष्ठा पाठ, श्लोक १४५ (३) वराहमिहिर वृहत्संहिता पृष्ठ ५७२ श्लोक ६ (४) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक १४६

शुक्रवार को मृगसिर, रेवती, अनुराधा ये मृदुसंज्ञक नक्षत्र है इनमें गृहप्रवेश, बिम्ब स्थापन, यात्रा, गायन आदि करना श्रेष्ठ है। चैत्र बिना मार्गशीर्ष, आदि महीना, उत्तरायण सूर्य में व्यतीपातादि योग रहित शुभ दिन में जिनालय प्रारंभ करें।

(६) पुष्य, तीनों उत्तरा, मृगसिर, श्रवण, अश्विनी, चित्रा, पुनर्वसु, विशाखा, आर्द्रा, हस्त इनमे गुरु वार, बुधवार, शुक्रवार में जिनमंदिर प्रारंभ करना योग्य है।

गुरु वार में मृगसिर, अनुराधा, अश्लेषा, पूर्वाषाढ ये ध्रुवसंज्ञक नक्षत्र प्रशस्त हैं। और पुष्य भी प्रशस्त है। चित्रा, धनिष्ठा, विशाखा, अश्विनी, आर्द्रा, शतभिषा ये शुक्रवार में श्रेष्ठ हैं। अश्विनी, उत्तरा, हस्त, रोहणी बुधवार में श्रेष्ठ हैं।

लग्नशुद्धिविचार (१)

मीनस्थे तनुगे क्वावपि चतुर्थे कर्कगे गीष्पतौ
रुद्रस्थे तुलगे शनावथ बलाधिक्ये सुतारायुजि ।
लग्नायां वरगेषु शुक्रतपनज्ञेष्टामरे केंद्रगे ।
षष्टेऽर्के विदि सप्तमोऽग्निषु शनौ शस्तो जिनेंद्रालयः ॥

मीन लग्न में शुक्र हो अथवा चौथ हो, कर्क का वृहस्पति हो, और ग्यारहवें तुला का शनि हो, अधिक बलशाली और सुंदर तारा का योग हो और लग्न, और ग्यारहवें और दशमें शुक्र, सूर्य, बृहस्पति हो अथवा केन्द्र में बृहस्पति हो और छटे सूर्य हो व सात में बुध हो, त्रिकोण में शनि हो तो इनमें से एक भी योग होने पर जिनेन्द्रालय प्रशस्त कहा गया है।

द्वारचक्र विचार(२)

सूर्याधिष्ठितभात् चतुर्भिरुपरिस्थैरष्टाभिः कोणगै -
स्तस्मादग्रिमभाष्टभिरस्तत इतैर्भैर्वन्हिसंख्यैरलम् ॥
देहल्यामथ तत्पुरःस्थितचतुर्भिर्भःवृत्ते चक्रके -
लक्ष्मीप्राप्तिरमानवं सुखकरं मृत्युः शिवं च क्रमात् ॥

सूर्य नक्षत्र से दिन नक्षत्र तक गिनना और फल इस प्रकार जानना ४ नक्षत्र ऊपर लक्ष्मी प्राप्ति, ८ नक्षत्र कोण शून्य (उजाड़), ८ नक्षत्र पार्श्व सुखकारी, ३ नक्षत्र देहली मृत्युकारक, ४ नक्षत्र चक्र कल्याणकारक
इस प्रकार द्वारचक्र देखकर मंदिर निर्माण कार्य प्रारंभ करना।

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक १४९ (२) वही, श्लोक १५०

भूमिशुद्धि

शिलान्यास

भूमि शुद्धि - शिलान्यास

मंत्र - (१) शान्ति मंत्र/वृहच्छांति मंत्र
(२) भूमि जागरण मंत्र

मंडल - (१) १७ वलय
(२) गणधरवलय
(३) नवदेव
(इनमे कोई एक)

यंत्र - (१) विनायक यंत्र
(२) नवदेव यंत्र
(३) मातृका (अचल) यंत्र

भक्तियां - (१) सिद्ध भक्ति
(२) श्रुत भक्ति
(३) तीर्थकर भक्ति
(४) शान्ति भक्ति

सामग्री -
(१) पूजन सामग्री
(२) जप एवं हवन सामग्री
(३) मंगल ध्वज
(४) पारद
(५) ताम्र सिक्का
(६) सभी शिलायें
(७) ताम्र कलश
(८) मजदूर कारीगर
(९) समस्त नये औजार

भूमि शुद्धि विधि[१] (सामग्री सूची के अनुसार)

जहां मंदिर, यज्ञवेदिका का निर्माण कराना हो, वहां छोटा मण्डप (शामयाना) लगाकर टेबल पर विनायक सिद्धयंत्र – मंगलकलश की स्थापना करना चाहिए प्रथम मंगलाष्टक पाठ प्रारंभ करना पश्चात् दिग्बंधन कार्य पुष्प (पीले चावल) और पीले सरसों से करें।

(१) **ओं ह्रां णमो अरिहंताणं ह्रां पूर्वदिशातःसमागत विघ्नान् निवारय - २ मां रक्ष रक्ष स्वाहा** (मुठ्ठी बंधे हाथ द्वारा पूर्व दिशा में पुष्प फेकें)

(२) **ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं दक्षिणदिशातःसमागत - विघ्नान् निवारय -२ मां रक्ष रक्ष स्वाहा** (दक्षिण दिशा में पुष्प फेकें)

(३) **ओं ह्रूं णमो आइरियाणं ह्रूं पश्चिम दिशातःसमागत - विघ्नान् निवारय -२ मां रक्ष रक्ष स्वाहा** (पश्चिम दिशा में पुष्प फेकें)

(४) **ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं उत्तरदिशातःसमागत - विघ्नान् निवारय -२ मां रक्ष रक्ष स्वाहा** (उत्तर दिशा में पुष्प फेकें)

(५) **ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः सर्वदिशातःसमागत - विघ्नान् निवारय - २ मां रक्ष रक्ष स्वाहा** (सभी दिशाओं में पुष्प फेके)

रक्षामंत्र

ओं हूं क्षूं फट् किरिटिं किरिटिं घातय घातय पर - विघ्नान् स्फोटय स्फोटय सहस्त्रखण्डान् कुरुकुरुपर - मुद्रान् छिंद छिंद परमंत्रान् भिन्द भिन्द क्षां क्षः वाः वाः हूं फट् स्वाहा। (इस मंत्र से अपने ऊपर पुष्प क्षेपण करें)

शांतिमंत्र

ओं नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेष दोष कल्मषाय, दिव्य तेजोमूर्तये नमः श्रीशांतिनाथाय शांतिकराय सर्वविघ्नप्रणाशनाय, सर्वरोगापमृत्युविनाशनाय, सर्वपरकृच्छ्रोपद्रव, विनाशनाय, सर्वक्षामडामरविघ्नविनाशनाय, ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सर्व शांतिं कुरुकुरु स्वाहा (सब दिशाओं में पुष्प फेकें)

---

(१) प० मन्नूलाल जैन प्रतिष्ठाचार्य की हस्तलिखित डायरी से

शुद्धि विधि (सामान्य सकलीकरण)

अमृत स्नान

शोधये सर्वपात्राणि पूजार्थानपि वारिभिः ।
समाहितो यथाम्नाय करोमि सकलीक्रियाम् ।।

ओं ह्रां ह्री हूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा पवित्रतरजलेन पात्रशुद्धिं करोमि ।

रक्षासूत्र मंत्र

ओं नमोऽर्हते सर्व रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा ।

(दाहिनी कलाई मे रक्षासूत्र/पंचवर्णी धागा बांधना)

यज्ञोपवीत मंत्र

ओं नमः परम शान्ताय शान्तिकराय पवित्रीकरणायाहं रत्नत्रयस्वरुपं यज्ञोपवीतं दधामि मम गात्रं पवित्रं भवतु अर्ह नमः स्वाहा । (यज्ञोपवीत धारण करें)

तिलक मंत्र

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा नमः मम सर्वांगशुद्धिं कुरु कुरु स्वाहा । (तिलक लगावें)

विनायक यंत्र अभिषेक

टेबिल पर चौका रखकर थाली में श्री लेखन करें ।
ओं ह्रीं श्रीं श्री लेखनं करोमि

अर्ह मंत्रं नमस्कृत्य रत्नत्रयतपोनिधिम् ।
सिद्धियंत्रं स्थापयामि सर्वोपद्रवशान्तये ।।

ओं ह्रीं स्नपन पीठे विनायक सिद्ध यंत्रं स्थापयामि ।

ओं ह्रीं चतुष्कोणेषु स्वस्तये चतुष्कलश स्थापनं करोमि ।

स्नात्वा शुभांवरधराः कृतयत्नयोगात् यत्रं निवेश्य शुचिपीठवरेऽभिषिचेत् ।

ओं भूर्भुवः स्वरिहमंगलयंत्रमेतत् विघ्नौघ वारकमहं परिषिचयामि ।

ओं ह्रीं विघ्नौघ वारकं यंत्रं वयं परिषिञ्चयामः (उदक चंदन तंदुल ....अर्घ चढ़ावें)

शान्तिधारा

ओं नमः सिद्धेभ्यः । श्री वीतरागायनमः ।

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।

चत्तारि मंगलं - अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं - साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंता-लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो। चत्तारि सरणं पव्वज्जामि - अरिहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धेसरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मंसरणं पव्वज्जामि । ओं ह्रीं अनादि मूल मंत्रेभ्यो सर्व शान्तिं तुष्टिं पुष्टिं च कुरु कुरु।

ओं नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेष दोषकल्मषाय दिव्यतेजो मूर्तये नमः श्री शान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वविघ्न प्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्युविनाशनाय सर्वपरकृच्छुद्रोपद्रव नाशनाय ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सर्व शान्तिं कुरु कुरु ।

ओं ह्रूं क्षूं फट् किरिटिं किरिटिं घातय घातय, परविघ्नान् स्फोटय स्फोटय, सहस्त्र - खण्डान् कुरु कुरु पर मुद्रां छिंद छिंद, परमन्त्रान् भिन्द-भिन्द, क्षां क्षः वाः वाः ह्रूं फट् सर्वशान्तिं कुरु कुरु ।

ओं ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं अ सि आ उ सा अनाहतविद्यायै णमो अरिहंताणं ह्रौं सर्वशान्तिं तुष्टिं पुष्टिं च कुरुकुरु।

तव भक्ति प्रसादात् लक्ष्मी पुरराज्यगेह पदभ्रष्टोपद्रवदारिद्रयोद्भवोपद्रव स्वचक्र पर- चक्रोद्भवोपद्रव प्रचण्ड पवनानलजलोद्भवोपद्रव शाकिनी डाकिनी भूतपिशाचकृतोपद्रव दुर्भिक्ष व्यापार वृद्धि रहितोपद्रवाणां विनाशनं भवतु ।

संपूर्ण कल्याण मंगलरूप मोक्षपुरुषार्थश्चभवतु । लोक कल्याणं भवतु ।

उदकचन्दन तंदुल ....अर्घ चढाकर यंत्र का प्रक्षाल करकेसिहासन में विराजमान करके विनयपाठ पूजापीठिका पूर्वक विनायक यंत्र की पूजा करें ।

विनायक यंत्र पूजा (संस्कृत)

परमेष्ठिन् जगत्त्राणकरणे मंगलोत्तम ।
इत: शरणं तिष्ठ त्वं सन्निधौ भव पावन ।।

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूताः अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ - तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्) ।।

पकेरुहायातपरागपुञ्जैः सौगन्ध्यवद्भिः सलिलैः पवित्रैः ।
अर्हत्पदाभासितमंगलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ।।

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

काश्मीरकर्पूरकृतद्रवेण संसारतापापहृतौ युतेन ।
अर्हत्पदाभासितमंगलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ।।

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेभ्यः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

शाल्यक्षतैरक्षतमूर्तिमद्भिरब्जादिवासेन सुगंधवद्भिः ।
अर्हत्पदाभासितमंगलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ।।

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूत जिनेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

कदम्बजात्यादिभवैः सुरद्रुमैर्जातैर्मनोजातविपाशदक्षैः ।
अर्हत्पदाभासितमंगलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ।।

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

पीयूषपिण्डैश्च शशांककान्तिस्पर्धाभिविष्टैर्नयनप्रियैश्च ।
अर्हत्पदाभासितमंगलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ।।

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरण भूत जिनेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ध्वस्तान्धकारप्रसरैः सुदीपैर्घृतोद्भवैः रत्नविनिर्मितैर्वा ।
अर्हत्पदाभासितमंगलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ।।

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वकीयधूमेन नभोऽवकाशसंव्याप्नुवद्भिश्च सुगंधधूपैः ।
अर्हत्पदाभासितमंगलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ।।

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

नारंगपूगादिफलैरनर्घ्यैर्हन्मानसादिप्रियतर्पकैश्च ।
अर्हत्पदाभासितमंगलादीन् प्रत्यूहनाशार्थमहं यजामि ।।

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूत जिनेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

अच्छम्भःशुचिचंदनाक्षतसुमैर्नैवेद्यकैश्चारुभिः ।
दीपैर्धूपफलोत्तमैः समुदितैरेभिः सुपात्रस्थितैः ।।
अर्हत्सिद्धसुसूरिपाठकमुनीन् लोकोत्तमान् मंगलान् ।
प्रत्यूहौघनिवृत्तये शुभकृतः सेवे शरण्यानहम् ।।

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरण भूतजिनेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रत्येक अर्घ

कल्याणपञ्चककृतोदयमाप्तमीशमर्हन्तमच्युतचतुष्टयभासुरांगम् ।
स्याद्वादवागमृतसिन्धुशशांककोटिमर्चे जलादिभिरनन्तगुणालयं तम् ।।१।।

ओं ह्रीं अनंतचतुष्टयादि लक्ष्मीविभ्रतेऽर्हत्परमेष्ठिने अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्माष्टकेन्धनचयमुत्पथमाशु हुत्वा सद्ध्यानवह्निविसरे स्वयमात्मवन्तम् ।
निश्रेयसामृतसरस्यथ सन्निनाय तं सिद्धमुच्चपदवं परिपूजयामि ।।२।।

ओं ह्रीं अष्टकर्मकाष्ठभस्मीकुर्वते सिद्धपरमेष्ठिनेऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वाचारपञ्चकमपि स्वयमाचरन्तः ह्याचारयन्ति भविकान्निजशुद्धभाजः ।
तानर्चयामि विविधैः सलिलादिभिश्च प्रत्यूहनाशनविधौ निपुणान् पवित्रैः ।।३।।

ओं ह्रीं पञ्चाचारपरायणायाचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

अंगांगबाह्यपरिपाठनलालसानामष्टांगज्ञानपरिशीलनभावितानाम् ।
पादारविन्दयुगलं खलु पाठकानाम् शुद्धैर्जलादिवसुभिः परिपूजयामि ।।४।।

ओं ह्रीं श्री द्वादशांगपठनपाठनोद्यताय उपाध्याय परमेष्ठिनेऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

आराधनासुखविलासमहेश्वराणाम् सद्धर्मलक्षणमयात्मविकस्वराणाम् ।
स्तोतुं गुणान् गिरिवनादिनिवासभाजाम् एषोऽर्घलश्चरणपीठभुवं यजामि ।। ५ ।।

ओं ह्रीं त्रयोदशप्रकारचारित्राराधकसाधुपरमेष्ठिनेऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्हन्मंगलमर्चामि जगन्मंगलदायकम् ।
प्रारब्धकर्मविघ्नौघप्रलयाय पयोमुखैः (१) ।।६।।

ओं ह्रीं श्री अर्हन्मंगलायार्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

चिदानन्दलसद्वीचीमालीढंगुणशालिकम् ।
सिद्धमंगलमर्चेऽहं सलिलादिभिरुज्ज्वलैः ।।७।।

ओं ह्रीं श्री सिद्धमंगलायार्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

---

(१) पाठान्तर "जलादिभिरित्यर्थः"

बुद्धिक्रियाररसतपोविविक्रियौषधिमुख्यकाः।
ऋद्धयो यं न मोहन्ति साधुमंगलमर्चये ॥८॥

ओं ह्रीं श्री साधु मंगलायार्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

लोकालोकस्वरूपज्ञप्रज्ञप्तं धर्म मंगलम्।
अर्चे वादित्रनिर्घोषगीतनृत्यैः वनादिभिः ॥९॥

ओं ह्री श्रीकेवलिप्रज्ञप्तधर्म मंगलायार्घ्य निर्वपामीति स्वाहा

लोकोत्तमोऽर्हन् जगता भवबाधाविनाशकः।
अर्च्यतेऽर्घ्येण स मया कुकर्मगणहानये ॥१०॥

ओं ह्रीं श्री अर्ह लोकोत्तमायार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

विश्वाग्रशिखरस्थायी सिद्धो लोकोत्तमो मया।
मह्यते महसानंदचिदानदसुमेदुरः ॥११॥

ओं ह्रीं श्री सिद्धलोकोत्तमायार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

रागद्वेषपरित्यागी साम्यभावावबोधक
साधुलोकोत्तमोऽर्घ्येण पूज्यते सलिलादिभि ॥१२॥

ओं ह्री श्री साधुलोकोत्तमायार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तमक्षमया भास्वान् सद्धर्मो विष्ट पोत्तमः।
अनंतसुखसंस्थान यज्यतेऽम्भःसुमादिभिः ॥१३॥

ओं ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्मलोकोत्तमायार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

अर्हस्त्वमेव शरणं नान्यथा शरणं मम।
तत्त्वां भावविशुद्ध्यर्थमर्हयामि जलादिभिः ॥१४॥

ओं ह्री श्री सिद्ध शरणायार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

व्रजामि सिद्धशरणं परावर्तनपञ्चकम्।
भित्वा स्वसुखसन्दोहसम्पन्नमिति पूजये ॥१५॥

ओं ह्रीं श्री सिद्ध शरणायार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

आश्रये साधुशरण सिद्धान्तप्रतिपादनैः।
न्यक्कृताज्ञानतिमिरमिति शुद्ध्या यजामि तम् ॥१६॥

ओं ह्रीं श्री साधुशरणायार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

धर्म एव सदा बन्धुः स एव शरणं मम ।
इह वाऽन्यत्र संसारे इति तं पूजयेऽधुना ।।१७।।

ओं ह्रीं श्री केवलिप्रज्ञप्तधर्मशरणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

संसारदुःखहनने निपुणं जनानां नाद्यन्तचक्रमिति सप्तदशप्रमाणं ।
संपूजये विविधभक्तिभरावनम्रः शान्तिप्रदं भुवनमुख्यपदार्थसार्थैः ।।

ओं ह्रीं अर्हदादिसप्तदशमंत्रेभ्यो समुदायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

विघ्नप्रणाशनविधौ सुरमर्त्यनाथा अग्रेसरं जिन वदन्ति भवन्तमिष्टम् ।
आनाद्यनंतयुगवर्तिनमत्र कार्ये विघ्नौघवारणकृतेऽहमपि स्मरामि ।।१।।

गणानां मुनीनामधीशत्वतस्ते गणेशाख्यया ये भवन्तं स्तुवन्ति ।
सदाविघ्न संदोहशान्तिर्जनानां करे संलुठत्यायतक्षेमकानाम् ।।२।।

कलेः प्रभावात्कलुषाशयेषु जनेषु मिथ्यामदवासितेषु ।
प्रवर्तितो यो गणराजनाम्ना कथं स कुर्याद्भववार्धिशोषम् ।।३।।

यो दृक्सुधा तोषितभव्यजीवो यो ज्ञानपीयूषपयोधितुल्यः ।
यो वृत्तदूरीकृतपापपुञ्जः स एव मान्यो गणराजनाम्ना ।।४।।

यतस्त्वमेवासि विनायको मे दृष्टेष्टयोगान्नविरुद्धवाचः ।
त्वन्नाममात्रेण पराभवन्ति विघ्नारयस्तर्हि किमत्र चित्रम् ।।५।।

घत्ता (मालनीछन्द)

जय जय जिनराज त्वद्गुणान् को व्यनक्ति यदि सुरगुरुरिन्द्रः कोटिवर्षप्रमाणम् ।
वदितुमभिलषेद्वा पारमाप्नोति नो चेत् कथित इह मनुष्यः स्वल्पबुद्ध्या समेतः ।।६।।

ओं ह्रीं श्री अर्हदादि सप्तदशमंत्रेभ्यो जयमालार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रियं बुद्धिर्मनाकुल्यं धर्मप्रीति विवर्धनम् ।
जिनधर्मे स्थितिर्भूयः श्रेयांसि ते दिशत्वरम् ।।

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

विनायक सिद्ध यंत्र पूजा [१]

अरिघात शुद्धातम प्रगट किया, अरहंत परम पद पाया है,
अविनाशी शाश्वत सुखसागर, निजधाम चिदानद पाया है।

आचार्योपाध्याय साधु महा, मंगल लोकोत्तम शरण कहे,
प्रभु आप विराजो मन अदर, आतम दर्शन अरु बोध लहे।

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूत जिनाः अत्र अवतर[२] संवौषट् आह्वाननम्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक चाल छंद

भव भव की प्यास बुझानें, लाया जल चरण चढाने।
मंगलोत्तम शरण सहाई, नमुं पच परम सुखदाई।

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव की आताप मिटानें, चन्दन सम शीतल पाने।
मंगलोत्तम शरणसहाई, नमुं पंच परम सुखदाई॥

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूत जिनेन्द्रेभ्यः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय पद शाश्वत पानें, चरणो मे लाया चढानें।
मंगलोत्तम शरण सहाई, नमुं पच परम सुखदाई॥

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूत जिनेन्द्रेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मन्मथ की पीड़ा हरनें, शुद्धातम अनुभव करनें।
मंगलोत्तमशरण सहाई, नमुं पंच परम सुखदाई॥

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेन्द्रेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भव भव दुठ क्षुधा मिटाऊ, तब आतम अमृत पाऊं।
मंगलोत्तमशरण सहाई, नमुं पंच परम सुखदाई॥

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

---

(१) पं० गुलाबचन्द्र 'पुष्प' द्वारा रचित

मिथ्यातम सकल हटाऊं, निज आतम ज्योति जलाऊं।
मंगलोत्तमशरण सहाई, नमुं पंच परम सुखदाई ।।
ओं ह्री अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेन्द्रेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्मो की धूप जलाऊं, शुद्धात्म दशा प्रगटाऊं ।
मंगलोत्तमशरण सहाई - नमुं पंच परम सुखदाई ।।
ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेन्द्रेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

फल लाया चरण चढ़ानें - आतम अनुभव फल पानें ।
मंगलोत्तमशरण सहाई, नमुं पंच परम सुखदाई ।।
ओं ह्री अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेन्द्रेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल फल शुचि द्रव्य मिलाये - पूजत आतम सुख पाये ।
मंगलोत्तमशरण सहाई, नमुं पंच परम सुखदाई ।।
ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेन्द्रेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्घावली (चाल छंद)

जिन घाती कर्मनशाया - अरिहंत परम पद पाया ।
मैं पूजों मन वच काया, जिन पद पा आतम ध्याया ।।
ओं ह्रीं अर्ह अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जिन अष्ट कर्म विनशाये, समकित स्वातम गुण पाये ।
ऐसे प्रभु सिद्ध कहाये, हम चरणन शीश नमाये ।।
ओं ह्री अर्ह सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभ पंचाचार सम्हाला, छत्तीस मूल गुण पाला ।
दीक्षा शिक्षा हितकारी, आचारज है सुखकारी ।।
ओं ह्रीं अर्ह आचार्यपरमेष्ठिने अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

एकादश अंग सुहाये, चौदह पूरब श्रुत पाये ।
शिष्यो को बोध दिलाये, पाठक पूजों शिरनाये ।।
ओं ह्री अर्ह उपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अष्टाविंशति गुणधारी, गुरुसाधत आतम न्यारी ।
अरि मित्र समान विचारें, समता सागर सुख धारें ।।
ओं ह्रीं अर्ह साधुपरमेष्ठिने अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा - मंगलीक अरहंत हैं, नमत पाप गल जाय ।
आतम मंगलरूप है, पूजत सब सुख पाय ।।

ओं ह्रीं अर्ह अर्हत्मंगलाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा

सिद्ध चक्र मंगल महा, सर्वविघन नशि जाय ।
पूजत पद निज पाइये, मंगलमय सुखदाय ।।

ओं ह्रीं अर्ह सिद्धमंगलाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा

समता धर संयम धरें, साधत आतम काज ।
राग द्वेष मदलेश नहिं, मंगलमय मुनिराज ।।

ओं ह्रीं अर्ह साधुमंगलाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा

मंगलमय जिनधर्म है, भवदुख नाशन हार ।
धारत भविजन भाव सों, स्वर्ग मोक्ष सुख द्वार ।।

ओं ह्रीं अर्ह केवलिप्रज्ञप्तधर्ममंगलाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

त्रोटक - लोकोत्तम श्री अरहंत महा, जिनका सर्वोदय तीर्थ कहा ।
दर्शनपूजन से पाप कटें, संसार विषम भव बंध कटें ।।

ओं ह्रीं अर्ह अर्हल्लोकोत्तमेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्मोदय जब जिय का आता, तब भवसागर में भटकाता ।
आतम संबल पा कर्म नशा, शुद्धातम बन शिवलोक बसा ।।

ओं ह्रीं अर्ह सिद्धलोकोत्तमाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

संयम धर चलते शिवमग में, तीरथ चलते फिरते जग में ।
जग में हैं उत्तम साधु महां, पूजन करते धन भाग्य यहां ।।

ओं ह्रीं अर्ह साधुलोकोत्तमाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

रत्नत्रय उत्तम धर्म कहा, भवदुःख मिटें शिवपाय महा ।
भव सागर से भवितारत हैं, निज श्रद्धा से जब धारत हैं ।।

ओं ह्रीं अर्ह केवलिप्रज्ञप्तधर्मलोकोत्तमाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

चाल - अरहंत शरण जिन लीना, तिन जनम मरण भय छीना ।
इन्द्रादिक नित गुण गाते, हम चरणन शीश नवाते ।।

ओं ह्रीं अर्ह अर्हत्शरणाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

हैं करम जगत दुखदाई, भव भव में भ्रमण कराई ।
तिन नाश सिद्ध पद पाया, पूजन हित शरण में आया ।।

ओं ह्रीं अर्ह सिद्धशरणाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जिन मुद्रा आतमधारी, मद राग द्वेष परिहारी ।
निज आतम अनुभव पाया, नमूं साधु शरण में आया ।।

ओं ह्रीं अर्ह साधुशरणाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जिनधर्मशरण सुखकारी, पाते निज अनुभव धारी ।
मिथ्यामद मोह मिटाते, अक्षय अनंत सुख पाते ।।

ओं ह्रीं अर्ह केवलिप्रज्ञप्तधर्मशरणाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

कृत कृत्य विमल वैरागी, निज आतम सत्ताधारी ।
मंगलोत्तम शरण महाना, पूजों पद श्री भगवाना ।।

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेन्द्रेभ्यः पूर्णार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाल

दोहा- जय मंगल उत्तम शरण, पंच परम गुरुजान ।
गाऊं नित गुणमालिका, होय करम की हान ।।१।।

पद्धड़ी - जय वीतराग सर्वज्ञदेव, तुम घाते घातिक कर्मभेव ।
सदनंत चतुष्टय राजमान, नव केवललब्धि विराजमान ।।२।।
भये अजर अमर हे मुक्तिवंत, चारों अघातिया कर्म हन्त ।
हो नित्य निरंजन निर्विकार, चैतन्य सुधारस भोगसार ।।३।।
रत्नत्रय मंडित गुण अनंत, छत्तीस मूलगुण शोभवंत ।
जय पंचाचार आचरण धीर, दीक्षाशिक्षाहित गुण गंभीर ।।४।।
एकादशांग चौदह सुपूर्व, धारें जिन पच्चिसगुण अपूर्व ।
जय पाठक मुनि करुणा निधान, देते शिक्षा शिवपथ महान ।।५।।
जय बीस आठ गुण धरत आप, शमदम विराग सह मुक्ति धाय ।
बाह्याभ्यन्तर परिग्रह नशाय, निज आतम साधत मुक्ति पाय ।।६।।
जय मंगल उत्तम शरणरूप, त्रैकालिक सुख पावत अनूप ।
हम शरण गही मन वचन काय, परमेष्ठीपद लहिं मुक्ति पाय ।।७।।

दोहा- विघ्न विनाशक मंत्र शुभ, महिमामयी अनूप ।
पूजत मंगल होत नित, मिले 'पुष्प' निज रूप ।।८।।

ओं ह्री अर्ह अ सि आ उ सा मंगलोत्तमशरणभूतजिनेन्द्रेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा - आतम का अनुभव मिले, बाढ़े धरम प्रभाव ।
रत्नत्रय निधि मिलत है, भक्ति भावना भाव ।।९।।

(इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

---

(१) आ. ज. से प्र. पा. - यागमण्डल विधान

(२) जिस कार्य के लिये यागमंडल करे उस कार्य का मंत्र बोलें ।

नवदेव अर्घ

अर्हत्सिद्धाचार्य गुरु साधु जिनागम धर्म ।
चैत्य चैत्यगृह देवनव, यजत होय शिवशर्म ।।

ओं ह्रीं अर्ह अर्हदादिनवदेवेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

यागमण्डल अर्घ [1]

सर्वानेतान्तत्वचन्द्रप्रमाणान् जापध्यानस्तोत्रमंत्रैरु दर्च्य ।
द्रव्यक्षेत्रस्फूर्तिसज्जावकाशं नत्वार्घेण प्रांशुना संस्मरामि ।।१।।

दोहा - पंच परम गुरु सार हैं, मंगल उत्तम जान ।
शरणा राखन को बली, पूजूं कर उर ध्यान ।।

ओं ह्रीं प्रथमवलयोन्मुद्रित अर्हत्परमेष्ठिप्रभृतिधर्मशरणांत सप्तदशजिनाधीश यज्ञदेवताभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

पूर्व विसर्पिण्यथकालमध्ये संजातकल्याणपरंपराणाम् ।
संस्मृत्यसार्थ प्रगुणं जिनानां यज्ञे समाहूय यजे समस्तान् ।।

दोहा- भूत भरत चौबीस जिन, गुण सुमरूं हरबार ।
मंगलकारी लोक में, सुखशान्ति दातार ।।२।।

ओं ह्रीं अस्मिन् वेदिकाशिलान्यासे (बिम्बप्रतिष्ठामहोत्सवे)[2] यागमंडलेश्वर द्वितीयवलयोन्मुद्रितनिर्वाणाद्यनंत वीर्यान्त भूतजिनेन्द्रेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अत्राहूतसुपर्वपर्वनिकरे बिबप्रतिष्ठोत्सवे
सं पूज्याश्चतुरुत्तरा जिनवरा विशप्रमासंप्रति ।
संजाग्रत्समयादयैकसुकृतानुद्धार्य मोक्षंगता -
स्तेऽत्रागत्य समस्तमध्वरकृतं ग्रह्णं तु पूजाविधिम् ।

दोहा - वर्तमान चौबीस जिन, उद्धारक भविजीव ।
बिम्ब प्रतिष्ठाकारने, यजूं परम सुखनीव ।।३।।

ओं ह्रीं अस्मिन् वेदिकाशिलान्यासे मखमुख्यार्चिततृतीयवलयोन्मुद्रितवर्तमानचतुर्विंशति- जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

काले भाविनि ये सुतीर्थधरणात् पूर्व प्ररूप्यागमे
विख्याता निजकर्मसंततिमपाकृत्यस्फुरच्छक्तयः ।

तानत्र प्रतिकृत्यपावृतमखे संपूजिता भक्तितः
प्राप्ताशेषगुणस्तदीप्सितपदावाप्त्यै तु संतु श्रिये ।।

दोहा - तीर्थराज चौबीस जिन, भावी भव हरतार
बिम्ब प्रतिष्ठा कार्य में, पूजूं विघ्न निवार ।।४।।

ओं ह्रीं वेदिका शिलान्यासे मुख्यपूजार्ह चतुर्थवलयोन्मुद्रितानागतचतुर्विंशतिमहापद्माद्यनंत वीर्यान्तेभ्यो जिनेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

एवं पंचमकोष्ठपूजितजिनाः सर्वे विदेहोद्भवा -
नित्य ये स्थितिमादधुः प्रतिपतत्तन्नाममंत्रोत्तमाः ।
कस्मिंश्चित्समयेऽभ्रषड् विधुमित पूर्ण जिनानां मतं ।
ते कुर्वन्तु शिवात्मलाभमनिशं पूर्णार्घसंमानिताः ।।

दोहा - राजत बीस विदेह जिन, कबहिं साठशत होय ।
पूजतवंदित जास को, विघ्न सकल क्षय होय ।।५।।

ओं ह्रीं वेदिकाशिलान्यासे मुख्यपूजार्हपंचमवलयोन्मुद्रितविदेहक्षेत्रेसुषष्टि - सहितैकशतजिनेशसंयुक्तनित्यविहरमानविंशतिजिनेन्द्रेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

गुणोद्देशादेषा प्रणिधिवशतोऽनंत गुणिनां -
कृत्वा ह्याचार्याणामपचितिरियं भाव बहुला
समस्तान् संस्मृत्य श्रमणमुकुटानर्घमलघु-
प्रपूर्त संदृब्धं मम मखविधि पूरयतु वै ।

दोहा - गुण अनंत धारी गुरू, शिवमगचालनहार ।
सकलसंघ रक्षा करे, यज्ञविघनहरतार ।।६।।

ओं ह्रीं अस्मिन् वेदिकाशिलान्यासे पूजार्हमुख्यषष्टवलयोन्मुद्रित आचार्य परमेष्ठिभ्यस्तद्गुणेभ्यश्च अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

इत्थ श्रीश्रुतदेवतां जिनवरांभोध्युद्गतामृद्धिभृ-
न्मुख्येर्ग्रथनिबंधनाक्षरकृतामालोकयन्तीं त्रयम् ।
लोकाना तदवाप्तिपाठनधियोपाध्यायशुद्धात्मनः
कृत्याराधनसद्विधि धृतमहार्घेणार्चये भक्तितः ।

दोहा - अंग एकादश पूर्वदश, चार सु ज्ञायक साध ।
जजूं गुरु के चरण दो, यजन सु अव्याबाध ।।७।।

ओं ह्रीं अस्मिन् वेदिकाशिलान्यासे सन्निधाने मुख्यपूजार्हसप्तमवलयोन्मुद्रित-द्वादशांगश्रुतदेवताभ्यस्तदाराधकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यश्च अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अष्टाविंशति सद्गुणगृथितसद्रत्नत्रयाभूषणं
शीलेशित्वतनुत्ररक्षितवपुः कामेषुभिर्नाहतम् ।
अर्हत्यादि पदस्य बीजमनघं येषां परं पावनं ।
साधूनां समुदायमुत्तमकुलालकारमाशास्महे ।।

दोहा- अठविंशत गुणधरयती, शील कवच सरदार ।
रत्नत्रय भूषण धरें, टारे कर्म पहार ।।८।।

ओं ह्रीं अस्मिन् वेदिकाशिलान्यासे मुख्यपूजार्हअष्टमवलयोन्मुद्रितसाधु परमेष्ठिभ्यस्तन्मूलगुणग्रामेभ्यश्च अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।।

इत्थं सत्तपस प्रभावजनिता सिद्ध्यर्द्धिसंपत्तयो-
येषां ज्ञानसुधाप्रलीढहृदयाः संसारहेतुच्युताः ।
रोहिण्यादिविधाविदोदितचमत्कारेषु सं निःस्पृहा
नो वांछंति कदापि तत्कृत्तविधिं तानाश्रये सन्मुनीन् ।

दोहा - अड़तालीस हजार अरु, उन्निस लक्ष प्रमाण ।
तीर्थंकर चौबीस यती, सघ जजूं धर ध्यान ।।९।।

ओं ह्रीं अस्मिन् वेदिकाशिलान्यासे मुख्यपूजार्हनवमवलयोन्मुद्रितसकलत्रृद्धिसम्पन्न-सर्वमुनिभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा- अर्हत्सिद्धाचार्यगुरु, साधुजिनागम धर्म ।
चैत्यचैत्यगृहदेवनव, यजमण्डल करि शर्म ।।१०।।

ओं ह्रीं यागमण्डलदेवताभ्यः पूर्णार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

---

(१) आ. ज. से, प्र. पा. श्लोक २७५

शिलान्यास क्रिया

कार्य की निर्विघ्नता हेतु शांतिमंत्र का ११ हजार और भूमि जागृत करने हेतु भूमिजागरण मंत्र का ११ हजार जाप आवश्यक है।

शान्ति मंत्र

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा नमः सर्वशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।

वृहच्छान्ति मंत्र

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सर्वविघ्न विनाशनं सर्वशान्तिं च कुरु कुरु स्वाहा।

भूमिजागरण मंत्र

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौ ह्रः जिनगर्भगृहक्षेत्रे धरित्रीं जागृतावस्थायां कुरु कुरु स्वाहा।

मातृका मंत्र

ओं नमोऽर्ह अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः, क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व, श ष स ह ह्रीं क्लीं क्रौं स्वाहा।

तत्पश्चात् भक्तियां पढ़कर कार्य आरंभ करें।

यस्यार्थ क्रियते कर्म सः प्रीतो नित्य मस्तु मे।
शान्तिकं पौष्टिकं चैव सर्वकार्येषु सिद्धिदः॥

घंटाटंकार वीणा क्वणित मुरज धां धां क्रियाकाहलाच्छे-
च्छेंकारोदार भेरी पटह धल धलंकार संभूत घोषे।

आक्रम्पाशेषकाष्ठा तट मथ झटति प्रोच्चटल्युद्भटेऽभ्रं
शिष्टाभिष्टार्हदिष्टप्रमुख इह लतांतांजलिं प्रोत्क्षिपामः।

नंद्यावर्त स्वस्तिक पर प्रशस्ति पत्र (शिलालेख) जिस पर संवत, माह, दिन, मंदिर निर्माता का नाम, प्रतिष्ठाचार्य का नाम अंकित हो, यदि वेदी का शिलान्यास हो तो जो कार्य करा रहा हो उसका नाम लिखाया जावे। नींव खनन या शिलान्यास के पूर्व काम में आने वाली कुदाली, फावड़ा आदि की मंत्र द्वारा शुद्धि करना चाहिये।

ओं ह्रां ह्री ह्रूं ह्रौं ह्रः पञ्च परमेष्ठिभ्यः क्षी भूः अमृत जलेन खंत्रीशुद्धिं करोमि ।
(कुदाली, फावड़ा आदि पर जल डालकर शुद्धि करें)

ओं क्ष्रां क्ष्री क्ष्रूं क्ष्रौं क्ष्रः खंत्रीचन्दनलेपनं करोमि।(कुदाली, फावड़ा पर चन्दन लगावें)

ओं ह्रीं श्रीं क्षीं भू रक्ष रक्ष फट् स्वाहा । (कुदाली, फावड़ा पर मंगल सूत्र बांधें)

पश्चात् कारीगर मजदूर को वस्त्र भेंट देकर प्रसन्न करें और कार्य आरंभ करावें । स्वर्ण, रजत, ताम्र, पत्थर, मिट्टी आदि की शिलायें तैयार करावें ।

ओं ह्रीं परमब्रह्मणे नमो नमः स्वस्ति स्वस्ति, जीव जीव, नन्द नन्द, वर्धस्व वर्धस्व, विजयस्व-विजयस्व, अनुसाधि अनुसाधि, पुनीहि पुनीहि, पुण्याहं पुण्याहं, मांगल्यं मांगल्यं पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् । (भूमि पर पुष्प क्षेपण करें)

यज्ञस्थल पर कार्य करने के लिए भूमिरक्षक देवों से क्षमायाचना एवं कार्य हेतु स्वीकृति-

अहो धरायामिह ये सुराश्च क्षमन्तु यज्ञाधिकृति ददन्तु ।
प्रीतिः पुराणा बहुवासयोगात् क्षितावतोऽस्मद्विनिवेदनं वः ।।[१]

अस्मिन् यज्ञस्थाने स्थित भो देवगणाः आज्ञाप्रदानं कुर्युः
(पुष्प क्षेपण कर स्थान हेतु आज्ञा मांगें एवं श्रीफल भेंट कर आमंत्रित करें)

विहारकाले जगदीश्वराणामवाप्तसेवार्थकृतावदानः ।
हुत्वार्चितो वायुकुमारदेव त्वं वायुना शोधय यागभूमि । [१]

भो वायुकुमारसर्वविघ्नविनाशनाय महींपूतां कुरु कुरु हूं फट् स्वाहा ।
(स्वच्छ वस्त्र से स्थल मार्जन करें)

विहारकाले जगदीश्वराणामवाप्त सेवार्थकृतावदानः ।
हुत्वार्चितो मेघकुमारदेव त्वं वारिणा शोधय यागभूमि ।। [२]

भो मेघकुमार सर्वविघ्न विनाशनाय धरां प्रक्षालय २ अं हं सं वं ठं झं यः क्षः फट् स्वाहा (भूमि पर जल सिंचन करें)

गर्भान्वयादौ महितद्विजेन्द्रैर्निर्वाणपूजासु कृतावदान ।
हुत्वार्चितो वह्निकुमारदेव त्वं ज्वालया शोधय यागभूमिं [३]

भो अग्निकुमारदेवसर्वविघ्नविनाशनाय भूमिं ज्वालय २ अं हं सं वं ठं झं यः क्षः फट् स्वाहा
(कपूर जलाकर भूमि पर डालें)

(१, २, ३) श्री. ने. दे, प्र. ति० पृष्ठ ४३, ४४

वास्तुविधानभेद (४)

१ स्थान परीक्षा २ दिग्साधन ३ वास्तुशुद्धि ४ मंडलशुद्धि ५ मंडलशांति ६ शिलास्थापन ७ गृहलक्षण ८ शिलानयन ये आठ प्रकार वास्तुकर्म हैं।

वास्तुविधान आवश्यक क्यों ? **(वास्तु विधान से लाभ)**

पृथ्वीविकरात्सलिलप्रवेशात् अग्निर्विदाहात्पवनप्रकोपात्।
चौरप्रयोगादपि वास्तुदेवः चैत्यालयं रक्षतु सर्वकालम् ॥

वास्तु विधान

१ **णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं, ह्रौं सर्वशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।**
(प्रत्येक मंत्र के बाद भूमि पर पुष्प क्षेपण करना)

२ ओं ह्री अक्षीणमहानसर्द्धिभ्यो नमः स्वाहा।

३ ओं ह्री अक्षीण महालयर्द्धिभ्यो नमः स्वाहा।

४ ओं ह्रीं दशदिशातः आगतविघ्नान् निवारय २ सर्व रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा।

५ ओं ह्री दुर्मुहूर्त दुःशकुनादिकृतोपद्रवशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।

६ ओं ह्री परकृतमंत्रतंत्रडाकिनीशाकिनी भूतपिशाचादि कृतोपद्रव शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।

७ ओं ह्रीं वास्तुदेवेभ्यः स्वाहा।

८ ओं ह्रीं सर्वविघ्नोपशान्तिं कुरुत कुरुत स्वाहा।

९ ओं ह्रीं सर्वाधिव्याधिशान्तिं कुरुत कुरुत स्वाहा।

१० ओं ह्रीं सर्वत्र क्षेमं आरोग्यतां विस्तारय विस्तारय सर्व पुष्टिं ह्रष्टिं प्रसन्न चित्तं कुरु कुरु स्वाहा।

११. ओं ह्रीं यजमानादीनां सर्वसंघस्य शान्तिं तुष्टिं पुष्टिं ऋद्धिं वृद्धिं समृद्धिं अक्षीणर्द्धिपुत्र पौत्रादिवृद्धिं आयुर्वृद्धिं धनधान्यसमृद्धिं धर्मवृद्धिं कुरुत कुरुत स्वाहा।

१२ ओं क्षां क्षी क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्षं क्षः णमोऽर्हते सर्व रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा।

१३ ओं भूर्भुवः स्वः नमः स्वाहा।

१४ ओं ह्री क्रौं आं अनुत्पन्नानां द्रव्याणामुत्पादकाय उत्पन्नानां द्रव्याणां वृद्धिकराय चिंतामणिपार्श्वनाथाय वसुदाय नमः स्वाहा।

(४) आ. ज. से प्र. पा. पृष्ठ ३१

पांच मारवल की शिलाओं पर **"ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः"** इन बीजाक्षरों को लिखकर मंगलसूत से वेष्टित करें। फिर क्रमशः पांचों शिलाओं को थाली में स्वास्तिक बनाकर उसमें रखकर निम्न मंत्र १०८ बार पढ़कर पुष्प क्षेपण कर मंत्रित करें।

(१) ह्रां वाली शिला को **"ओं ह्रां अर्हद्भ्यः नमः"**
(२) ह्री वाली शिला को **"ओं ह्रीं सिद्धेभ्यः नमः"**
(३) ह्रूं वाली शिला को **"ओं ह्रूं सूरिभ्यः नमः"**
(४) ह्रौं वाली शिलाको **"ओं ह्रौं पाठकेभ्यः नमः"**
(५) ह्रः वाली शिलाको **"ओं ह्रः सर्वसाधुभ्यः नमः"**

प्रासादमण्डन शास्त्र मे शिला के दो रूप किए हैं १ कूर्म शिला २ खुरशिला। कूर्मशिला चांदी या स्वर्ण की बनवायें और प्रशस्ति-शिला पर प्रथम अचलयंत्र की स्थापना करें। और यंत्र पर बीच में कूर्म शिला रखे

(२) खुरा शिलायें - नौ प्रकार की हैं - (१) नन्दा, (२) भद्रा, (३) जया, (४) रिक्ता, (५) अजिता, (६) अपराजिता (७) शुक्ला, (८) सौभाग्यवती, (९) धरणी ये शिलाएं कूर्मशिला से दिशा विदिशाओं में स्थापित करना चाहिए। शिलान्यास का कार्य ईशान विदिशा से प्रारंभ करना लिखा है - आठ खुरशिलाये ईशान से आठों दिशा में नवमी कूर्म शिला के नीचे रखें। शिलान्यास कार्य यजमान द्वारा निम्नप्रकार कराये। स्थान शुद्धि करके नंद्यावर्त स्वस्तिक बनाकर कार्य प्रारंभ करें।

सिद्ध भक्ति पढ़कर अष्टद्रव्य से शुद्धि करें

ओं ह्रीं नीरजसे नमः (जल छोड़े) **ओं ह्री शीलगंधाय नमः** (चंदन)
ओं ह्रीं अक्षताय नमः (अक्षतं) **ओं ह्रीं विमलाय नमः** (पुष्प)
ओं ह्रीं परमसिद्धायनमः (नैवेद्यं) **ओं ह्रीं ज्ञानोद्योतनाय नमः** (दीपं)
ओं ह्रीं श्रुतधूपाय नमः (धूपं) **ओं ह्रीं अभीष्टफलदाय नमः** (फलं)
ओं ह्रीं वसुकर्मरहितायसिद्ध परमेष्ठिने नमः (अर्घ)

इस प्रकार शुद्धि करके शिला स्थापन करने की विधि करें

सिद्धार्थ (पीले सरसों) स्थापन मंत्र [१]

अथ सिद्धार्थसत्पुंजान् क्षिपेदिष्टार्थसिद्धये।
आग्नेयादिषु कोणेषु वेदिकायां विदम्भहे॥

ओं आग्नेयकोणे सिद्धार्थान् स्थापयेत्।

---

(१) श्री ने दे. प्र. ति. पृष्ठ ३७०

वाणैश्चतुर्भिर्निशितैर्जयाय सिद्धार्थपुञ्जैश्चनिजेष्ट सिद्ध्यैः ।
संतानवृध्यै च यवारवैः श्रीवेद्याश्च कोणान्परिभूषयामि ।।

ओं ह्रीं वेदी कोणेषु सिद्धार्थान्स्थापनं करोमि
(वेदी की आठों दिशाओं में पीले सरसों क्षेपण करना)

वाणस्थापनमंत्र

अतितीक्ष्णचतुर्वाणान् भव्यानां जयलब्धये
आग्नेयादिषु कोणेषु वेदिकायां विदद्महे।

ओं वेदीकोणेषु वाणस्थापनं करोमि (वेदी की आठों दिशाओं में तांबे की ५ इंची कीलें लगायें तथा मंगलसूत्र (मौली) से तीन घेरा लगा दें।)

मातृका (अचल) यंत्रस्थापन

मध्ये वेदिसकर्णिकं दलचतुष्कोणाष्टसंख्यैर्दलैः
युक्तं द्वित्रिचतुर्हताष्टदलवत्पद्मं वृहत्तद्बहिः ।
सद्वाः कोणकपंचमंडलवृतं संलिख्य तत्रार्चितान्
मंत्रागान्नव देवतान्वृतसुरानर्घ्येन संभावयेत् ।।

ओं ह्रीं मातृकायंत्रस्थापनं करोमि च अर्घ समर्पयामि
(प्रशस्ति शिला पर यंत्र स्थापित कर नवदेव अर्घ चढ़ावें)

शिला स्थापन

शिलां विशालां लवणेन विद्धां सूत्रेण वद्धां समृदं सलोष्ठाम् ।
भागौघपुष्ट्यै दुरितौघपिष्ट्यै वेद्याः अधस्ताद्विनिवेशयामि ।।

ओं सर्वजनानंदकारिणि सौभाग्यवति तिष्ठ तिष्ठ स्वाहा ।

प्रशस्ति शिला पर बीच में शिला रखें पश्चात् आठों दिशाओं में आठ, और बीच में नवमी शिला रखें। समस्त स्वर्ण, रजत, ताम्र मारवल की शिलायें स्थापित करें)

कलश स्थापन

तीर्थाम्बुपूर्णशरणोत्तममंगलार्थ संकल्पनादिसमलंकृतशुभ्रकुंभान्।
वेद्यष्टदिक्षु विनिवेश्य सपंचवर्णसूत्रेण तास्त्रिगुणमेव वृणोमि सिद्ध्यै ।।

ओं ह्रीं कलश स्थापनं करोमि ।

एक बीच में और चार चारों दिशाओं मे रखें (कलशो को जल से शुद्ध करके उन पर केशर से स्वस्तिक बनाये मंगलसूत्र बांधे पंचरत्न, हल्दी की गांठे , सुपारी, पारद, पीलासरसों चांदी का स्वस्तिक कलश मे डालना चाहिए । यदि कलश बड़े हो तो दीपक अंदर रखे, यदि छोटे कलश हो तो ऊपर रखें ।)

दीपक स्थापन

दीव्यत्प्रदीपकलिकोज्ज्वलवर्णपूरैर्नीराजनार्थमुदितैर्वरभाजनस्थैः ।
नीराजयामि भगवज्जिनयज्ञवेदीमोजो गुणस्य यजतामभिवर्धनाय
ओं ह्रीं दीपकस्थापनं करोमि

(दीपक स्थापन करे) पश्चात् आनादि मंत्र पढ़कर गर्त को पूरा करा दें और शान्तिहवन, पुण्याहवाचन, शान्त्यष्टक, शान्तिभक्ति, पाठ पढकर विसर्जन करना चाहिए । **(इतिभूमिशुद्धि शिलान्यास विधि)**

प्रतिमा निर्माण विधि

प्रतिमा लक्षण (१)

स्वर्णरत्नमणिरौप्यनिर्मितं स्फाटिकामलशिलाभवं तथा।
उत्थितांबुजमहासनांगितं जैनबिम्बमिह शस्यते बुधैः॥

शान्तं नासाग्रदृष्टिं विमलगुणगणैर्भ्राजमानं प्रशस्त-
मानोन्मानं च वामे विधृतवरकरं नाम पद्मासनस्थम्॥

व्युत्सर्गालंबिपाणिस्थलनिहितपदांभोजमानम्रकंबु।
ध्यानारूढं विदैन्यं भजत मुनिजनानंदकं जैनबिंबम्॥

उत्कीर्णं स्फटिकाशिलारुणहरित्पीताश्मभित्तावपि।
स्थूलं ह्रस्वमवेल्लितं स्थिरतरं शस्तं प्रतिष्ठाविधौ॥

प्रत्यग्रं चलनक्षमं दृढवपुः संधिं तथा धातुजं।
योग्यं नित्यमहोत्सवेषु शिविकासत्स्यंदनारोहणे॥

एककुड्ये चतुर्विंशसमुदायोऽपि पंचशः।
त्रयं सप्त जिनेन्द्राणां बिंबसंस्थोपलाल्यते॥

प्लुष्टं तथा वेधितगूढनेत्ररेखांगुलिक्लिष्टहतप्रभं च।
वर्ज्यं प्रतिष्ठासु पुराणगात्रं लंबोदराद्यष्टकदोषयुक्तम्॥

प्रतिमा नवताल की होनी चाहिए - ऐसा कथन प्रतिष्ठाशास्त्र, षट्खण्डागम पुस्तक ४ पृ० ४० में है। नारकी ८ ताल, मनुष्य ९ ताल और देव १० ताल प्रमाण शरीर वाले होते हैं।

तालं मुखं वितस्तिस्यादेकार्थं द्वादशांगुलम् (२)
तेन मानेन तद्बिम्बं नवधापरिकल्पयेत्॥

खड्गासन प्रतिमा का लक्षण (३)

आजानुलम्बबाहुः श्रीवत्सांकः प्रशान्तमूर्तिश्च।
दिग्वासास्तरुणो रूपवांश्च कार्योऽर्हतां देवः॥

प्रतिमा माप (४)

संस्थानसुन्दरमनोहररूपमूर्ध्वप्रालंबितं ह्यवसनं कमलासनं च।
नान्यासनेन परिकल्पितमीशबिंबमर्हाविधौ प्रथितमार्यमतिप्रपन्नैः॥

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ६९ से ७३ (२) ताल - प्रतिमा के अंगुल से १२ अंगुल का एक ताल होता है। वसुनंदिश्रावकाचार पृष्ठ १४७ (३) व. मि., वृ. सं. पृष्ठ ३९४ श्लोक ४५ (४) आ. ज. से, प्र. प्रा. श्लोक १५१ से १८३

बृद्धत्वबाल्यरहितांगमुपेतशांति श्रीवृक्षभूषिहृदयंनखकेशहीन।
सद्धातुचित्रदृषदां समसूत्रभागं वैराग्यभूषितगुणं तपसिप्रसक्तं॥

ऊर्ध्वे द्विपाभ्रविधुभागकृतौ स्वकीयमानेन तत्र मुखमंडलमक्षिसोमं।
ग्रीवाहृदौ च चतुरक्षिमितौ हृदानुप्रेक्षाप्रमं जठरमत्र तु नाभिमूलात्॥

तावत्प्रमैव मदनादि तदादि ...... (भातु) जानुद्वयं करमितं च ततोऽपि गुल्फं।
तस्माच्च पादतलमत्र हि गुल्फदेशात् पिंडिदृढा तु पदयोः शुभलक्षणांका॥

वेदांगुलं भालनसोर्मुखस्य मानं तु घोणा चतुरंगुला च।
मूर्धानमीषन्नतमत्र कार्यमर्धेदुबिंबं पृथुभालदेशम्॥

भ्रुवोरंतरं युग्मभागप्रमाणं तथा नेत्रयोः श्वेतिमा तत्प्रमाणं।
सुतारास्थितिश्चैकभागे त्रिभागा नसोर्मूलभागेऽक्षिणी युग्मभागे॥

भ्रूलते वेदभागायते मध्यतः स्थौल्ययुक्तेऽन्तिमे सत्कृशे धानुषे।
नेत्रयोः पक्ष्मणी (यावता) त्र्यंगुलं दृष्टितः कूलतुल्येनदीनामिवोपर्यधः॥

ओष्ठद्वयं चांगुलमुच्छ्रिलं स्यान्मध्ये तथा विस्तृतमत्र तुर्याः।
भागास्तु किंचिन्मिलितं द्विपार्श्वे किंचित्प्रकाशेंऽतरु दीर्यमानं॥

एकांगुला सृक्किणिकार्धपृथ्वीनेत्रांगुलं स्याच्चिबुकं विशालं।
मूलाद्धनोरंतरमस्य तज्ज्ञैर्वेदांगुलं द्वयंगुलविस्तरं स्यात्॥

कर्णौ च षड्भागयुतौ प्रलंबौ वेदांगुलव्यासयुतौ तदंतः।
छिद्रे तु नाली यवनालिकाभा त्वर्धांगुलं चांतरमुच्यतेऽथ॥

श्रोत्रस्य नेत्रस्य च वेदमंतरमष्टादशांशा द्वयकर्णभित्तेः।
पाश्चात्यभागे तु चतुर्दशांशाः शल्याक्षिभागाः परिधिस्तुकस्य॥

तथोर्ध्वभागे रविभागमात्रा त्र्यंशांगुलाः पंच च कूर्परस्य।
तत्षोडशांशाः परिधेस्तु तस्य तत्रापि हानिर्मणिबंधमात्रा॥

पंचागुलं वा त्रिकभागकोनं मध्यं प्रवाहोर्विततेस्तु तस्य।
विशालता स्याद् युगचंद्रभागा स्कंधं वृषस्कंधमिवाप्तशोभं॥

तुर्यांगुला स्यान्मणिबंधकोर्वी वैशालमस्यास्तु चतुर्दशांशं।
मध्यांगुलेर्द्वादशकांतरं च मध्यांगुलिः पंचमिता करस्य॥

अनामिका मध्यसुपर्वणार्द्धा प्रदेशनी स्वायततुल्यभागा।
कनीयसी पर्वलघुस्तथाऽत्र पंचांगुलं मूलमधो विशालं॥

अर्धांगुलामध्यमतो विधेया हीना सुलर्जन्यपि योग्यदेशा ।
अंगुष्ठयुग्मं चतुरंगुलं स्यादेकांगुलं विस्तृतमत्र साधि ।।

द्विपर्वणांगुष्ठ धृतिस्तथासां त्रिपर्वणा पुष्टि युता नखानां ।
पर्वार्धमानेन तलं करस्य सप्तांशकं पंच सुविस्तृतं च ।।

दृढं च बाहुद्वयमुन्नतांशं निः संधिहस्तिप्रकराकृतिः स्यात् ।
लंबौ तथा जानुगतौ सुवीरताख्यापकौ शोभनलक्ष्मभाजौ ।।

न चातिनिम्नौ मृदुलौ समौ च निश्छिद्रकौ मांसलरक्तवर्णौ ।
उरो वितस्तिद्वयविस्तृतं स्य च्छ्रीवत्ससंभासि सुचूचुकं च ।।

सषट्कपंचाशसमांगुलं तु पुष्टोरसः स्यात्परिणाहदेशः ।
स्तनांतरं तालवितानभाजियुग्मांतरं स्यात्स्तनचूचुकंवै ।।

तस्याधरस्तात्तु वितस्तिमात्रं नाभिर्यमावर्त्तमनोहरा च ।
मुखांगुलं रंध्रमथो तदीयं तस्याप्यधोऽष्टांगुलमंतरं स्यात् ।।

मेढ्रस्य गुप्ताग्रिमभागकस्य कटिर्विशालाष्टदशांगुला स्यात् ।
हस्तद्वयं तत्परिधिः प्रशस्यः स्फिक्स्यान्मदांगुल्यवधिस्त्रिपर्णा ।।

सद्व्यंगुलं लिगवितानमस्य मूले च मध्येंऽगुलमेकमेव ।
व्यासाच्च नाहस्त्रिगुणस्तथामूत्वक् (?) प्रायसापौत्रकृतिर्विधेया ।।

कुकुंन्दरौ वाऽपि नितंबदेशौ समांसलग्रंथिकया वितानौ
स्कंधस्य पायोः रसबह्निसंख्यं स्यादन्तरं पृष्ठविभागदेशे ।

वितस्तियुग्मायतमूरु युग्मं विस्तीर्णतैकादशभिः प्रनुन्ना ।
मूले च मध्ये नवकांगुलं स्यात्त्रिः स्यात्तयोः सत्परिधिप्रतानं ।।

जंघाद्वयं वृत्तमथो द्वितालं षडंगुला तत्पिटिका सुमध्या ।
सपादतुर्याशकगुल्फदेशः पादौ चतुश्चंद्रकलावदातौ ।।

सुगूढ गुल्फौ शुभचिह्नलक्ष्यौ सदंगुलीयोगविधानदृश्यौ ।
निम्नोन्नतं तत्र तलं प्रदिष्टं सत्र्यंगुलांगुष्ठविभासमानं ।।

त्रऽप्यायतस्यत्त्वितिमार्ग एष पर्यंकसंस्थस्य विशेष उक्तः
उत्सेधमूर्व्वात्परिणाहकार्ध तावत्सुपर्यंकमवस्थितं स्यात् ।।

सुवाहुयुग्मांतरिते प्रदेशे तुर्यांगुलं चांतरमाहुरन्ये ।
प्रकोष्ठकात्कूर्परमूलवद्धं सद्द्व्यंगुलं सन्निपुणैर्विधेयं ।।

नासाग्रदत्तेक्षणमुग्रतादिदोषैरपेतं जिनबिमर्हम् ।
अंगाधिके हीनतनौ प्रकर्तुर्नाशाय स्यादत एव यत्नः ।।

विस्तारतोऽस्य प्रथुतं समीहा चेच्छ्रवकाचारत ऊहनीयं।
न मृत्तिकाकाष्ठविलेपनादिजातं जिनेन्द्रैः प्रतिपूज्यमुक्तं॥

अर्थ : कायोत्सर्ग प्रतिमा एक सौ आठ भाग प्रमाण है वह इस प्रकार है मुखमंडल गोलाकार बारह भाग प्रमाण, ग्रीवा चार भाग, ग्रीवा से हृदय बारह भाग, हृदय से नाभि तक बारह भाग, नाभि से लिग तक मूलभागपर्यंत बारह भाग, लिग से गोड़ा (जांघ) तक चौबीस भाग जानु (घुटना) चार भाग, जानु से गुल्फ तक चौबीस भाग, गुल्फ से पादतल तक चार भाग, प्रमाण प्रतिमा शुभ लक्षण से युक्त होती है।

एक सौ आठ भागों का विशेष विवरण

मस्तक के केशो से लेकर ठोड़ी तक १२ भाग प्रमाण ऊंचा और इतना ही चौड़ा मुख करें। ऊंचाई के तीन भाग करें। उनमे से १ भाग अर्थात् ४ भाग प्रमाण ललाट, दूसरे भाग में ४ भाग प्रमाण नासिका, तीसरे भाग में ४ भाग प्रमाण मुख और ठोड़ी करें।

ललाट ८ भाग प्रमाण चौड़ा, ४ भाग प्रमाण ऊंचा करें। अष्टमी के चन्द्रमा समान ललाट करना। ललाट के ऊपर उष्णीश चोटी तक ५ भाग प्रमाण केश करें। उसके ऊपर दो भाग प्रमाण किंचित् ऊंची गोल चोटी करें। चोटी से ग्रीवा के पिछले भाग तक ५ भाग प्रमाण केश करें। इस प्रकार ललाट से चोटी तक १२ भाग रखें। पीछे केश से चोटी तक १२ भाग प्रमाण रखे। मस्तक के उभय पार्श्वों में ४-४ भाग प्रमाण चौड़े (धनुष के आकार मध्य मे मोटे दोनों ओर अग्रभाग मे कृश) शंख नाम के दो हाड़ करे। ललाट के ४ भाग प्रमाण नीचे ४॥ भाग प्रमाण लम्बे दोनों भवारे करें। आदि में १॥ भाग प्रमाण चौड़ा १/४ (पाव भाग) प्रमाण चौड़ा अन्त मे करें। ३ भाग प्रमाण लम्बी नेत्रों की सफेदी कमल पुष्पदल के समान करें। सफेदी के मध्य में १ भाग प्रमाण श्याम तारा करें। तारा के मध्य १/३ भाग प्रमाण गोल छोटी श्याम तारिका करें। भृकुटी के मध्य से लेकर नीचे की ओर वाफुणी (विरौनी) तक ३ भाग प्रमाण आंखों की चौड़ाई करें। नासिका के मूल मे २ भाग प्रमाण दोनों नेत्रो का अतराल करें। ऊपर नीचे के दोनों ओंठ २-२ भाग प्रमाण लम्बे और १-१ भाग प्रमाण ऊंचे (मोटे) करें। ४ भाग प्रमाण मुख फाड़ करें। मुख के मध्य में २ भाग प्रमाण ओठों को खुला करें और १-१ भाग प्रमाण दोनों बगलें मिली हुई करें। नासिका के नीचे और ऊपर के ओंठ के मध्य में १/२ भाग प्रमाण लम्बी १/३ भाग प्रमाण चौड़ी नाली करे। १ भाग प्रमाण लम्बी, १/२ भाग प्रमाण मोटी सृक्किणी (ओंठ की वाम-दक्षिण.बगले) करें। २ भाग प्रमाण चौड़ी, २ भाग प्रमाण लम्बी ठोड़ी करें। २ भाग प्रमाण मोटा

हनू (गाल के ऊपर के समीप का हाड़) करें। हनू के मूल से चिबुक (गालों के नीचे कानों के पास तक का हाड़) का अंतराल ८ भाग प्रमाण करें। ४ भाग प्रमाण लम्बे २ भाग प्रमाण चौड़े कान करें। ४ भाग प्रमाण पास (कान के मध्यवर्ती कडीनस के आगे परनाली रूप खाल) लंबी करें। पास के ऊपर की वर्तिका (गोट) १/४ भाग प्रमाण करें। १/२ भाग प्रमाण कर्ण का छिद्र मध्य में यव नालिका के समान करे। ४।। भाग प्रमाण नेत्र और कान का अन्तराल करें। दोनों कानों का अंतराल आगे १८ भाग प्रमाण पीछे १४ भाग प्रमाण हो। इस प्रकार कर्णो के समीप मस्तक की परिधि ३२ प्रमाण और ऊपर के मस्तक की परिधि १२ भाग होना चाहिए। हाथ, कोहनी का विस्तार १६/३ भाग प्रमाण और उसकी परिधि १६ भाग प्रमाण करे। कोहनी से पौंचा तक चूड़ा उतार से बाहु करें। भुजा का मध्यभाग १३/३ भाग प्रमाण और उसकी परिधि १४ भाग प्रमाण करें। पौंचे का विस्तार ४ भाग प्रमाण और उसकी परिधि १२ भाग प्रमाण करें। पौंचे से मध्यमांगुलि पर्यन्त १२ भाग प्रमाण करें। मध्यमांगुलि ५ भाग प्रमाण और मध्यामांगुलि से अर्ध अर्ध पर्वहीन तर्जनी और अनामिका करें। अनामिकांगुलि से १ पर्वहीन कनिष्ठकांगुलि करें। पौचें से लेकर कनिष्ठिका के ५ भाग प्रमाण अन्तराल करें। तर्जनी तथा मध्यमा के प्रमाण से कनिष्ठिका की मोटाई अर्धभाग कम करें अंगुष्ठ में दो पर्व करें। अंगुष्ठ की परिधि ४ भाग प्रमाण करें। शेष चारों अंगुलियों में ३-३ पर्व करें। अर्ध पर्व समान पाँचों ही अंगुलियों मे नख करें। हथेली ७ भाग प्रमाण लम्बी और ५ भाग प्रमाण चौड़ी करें। हथेली की मध्य परिधि १२ भाग प्रमाण करें। अंगुष्ठ मूल और तर्जनी के मूल का अन्तराल २ भाग प्रमाण करें। भुजा गोल संधि जोड से मिली गोड़ा तक लम्बी करे। अंगुलियों को मिलाप युक्त स्निग्ध ललित, उपचय संयुक्त शंख, चक्र सूर्य, कमलादि उत्तम चिन्हों से युक्त करें। वक्षस्थल २४ भाग चौड़ा करें। पीठ सहित वक्षस्थल की परिधि ५६ भाग प्रमाण हो वक्षस्थल के मध्य मे श्रीवत्स का चिन्ह हो। मय भुजा के वक्षस्थल ३६ भाग प्रमाण करें। दोनों स्तनों का मध्य अंतराल १२ भाग प्रमाण हो। स्तनों की चूचियां २ भाग प्रमाण वृत्तकार हों, चूचियों के मध्य में १/४ भाग प्रमाण वीटलियां हों। वक्षस्थल से नाभि तक १२ भाग प्रमाण अंतराल होना चाहिए।

उदर एवं नाभि -

वक्षस्थल से नीचे और नाभि से ऊपरी भाग को उदर करते हैं। नाभि का मुख १ भाग प्रमाण चोड़ा हो नाभि दक्षिणावर्त रूप में गोल मनोहर शंख के मध्य भाग समान करे।

पेडू -

नाभि के मध्य से लेकर लिग के मूल तक ८ भाग प्रमाण में पेडू करें। उसमे आठ रेखाएं करें। १८ भाग प्रमाण चौडी कटि उसकी परिधि ४८ भाग प्रमाण हो। तिकूणा (बैठक का हाड़) ८ भाग प्रमाण विस्तीर्ण हो। दोनों कूल्हे ६ भाग प्रमाण गोल हो स्कंध के सूत से गुदा पर्यन्त ३६ भाग लंबा और आधा भाग मोटा रीढ़ का हाड़ हो।

लिंग -

४ भाग प्रमाण लम्बा मूल में दो भाग प्रमाण मोटा मध्य में १ भाग मोटा अन्त में १/४ भाग लिग हो। सर्वत्र अपनी मोटाई के प्रमाण से तिगुनी परिधि हो।

पोते -

दोनों पोतों को आम की गुठली के समान चढाव उतार रूप में ५-५ भाग लम्बे ४ भाग चौड़े पुष्ट रूप में बनावें।

जांघ -

दोनों जाघों को २४-२४ भाग प्रमाण पुष्ट बनावें दोनों जांघे मूल में ११-११ भाग मध्य में ९-९ भाग अंत में ७-७ भाग चौड़ी रखे। इनकी परिधि सर्वत्र अपनी अपनी मोटाई से तिगुनी होना चाहिए।

घुटना -

जांघों से नीचे और पीडियों से ऊपर मध्य मे ६ भाग चौडे ४ भाग लम्बे दोनों घुटने रखें।

पीड़ी -

घुटनों से नीचे टिकून्या तक लम्बी २४-२४ भाग प्रमाण दोनों पीड़ियां बनावें। दोनों पीड़ियां मूल मे ७-७ भाग मध्य में ६-६ भाग अंत में टिकून्या के पास १३/३, १३/३ चौड़ी रखे। परिधि सर्वत्र तिगुनी हो।

टिकून्या -

दोनों पगों की चारो टिकून्यों को १-१ भाग प्रमाण करें परिधि तिगुनी हो।

चरण -

दोनों पगों के चरण तलों को १४-१४ भाग प्रमाण लम्बे करें। टिकून्यों से अंगुष्ठ के अग्र भाग तक १२ भाग प्रमाण लम्बाई हो। टिकून्यों के पीछे एड़ी को २ भाग रखें।

एड़ी नीचे २ भाग बगल में कुछ कम मध्य में ऊंची गोल हो परिधि ६ भाग प्रमाण हो। अंगुष्ठ ३ भाग लम्बा मध्य में २ भाग तथा आदि अन्त में कुछ कम चौड़ा हो। प्रदेशिनी ३ भाग लम्बी हो। मध्यमा प्रदेशनी से एक भाग का सोलहवां भाग कम करें अर्थात् ३३/१६ भाग लम्बी हो मध्यमा से अनामिका कुछ और कम एक भाग का आठवां भाग छोटी अर्थात् १७/८ भाग लम्बी हो। अनामिका से कनिष्ठिका को कुछ और कम अर्थात् ११/४ भाग लम्बी हो।

चारों ही अंगुलियां १-१ भाग प्रमाण मोटी और तिगुनी परिधि की हो अगूठों में दो दो पर्व और चारों अंगुलियों में ३-३ पर्व करें। अंगुष्ठ का नख १ भाग, प्रदेशिनी का नख १/२ भाग और शेष अंगुलियों के नख अनुक्रम से कुछ - कुछ कम रखें। पादतली को एडी के पास ४-४ भाग मध्य में ५-५ भाग अंत में ६-६ भाग प्रमाण चौड़ी बनावें। चरण युगल एक समान पुष्ट बनावें। शंख, चक्र, अंकुश, कमल, यव, छत्र आदि शुभ चिन्हों सें संयुक्त चरण बनावें। इस प्रकार कायोत्सर्ग प्रतिमा बनाना चाहिए।

अंग चिन्हों का माप

ललाट	४	अंगुल	गुह्यस्थान से जानु (घुटना)	२४	अंगुल
नासिका	४	अंगुल	घुटना	४	अंगुल
मुख	४	अंगुल	घुटना से पैरों की गुल्फ (गांठ)	२४	अंगुल
गर्दन	४	अंगुल			
गला से हृदय	१२	अंगुल			
हृदय से नाभि	१२	अंगुल	गांठ से पैर तक	४	अंगुल
नाभि से गुह्य स्थान	१२	अंगुल			
योग	**५२**	**अंगुल**	**योग**	**५६**	**अंगुल**

इस प्रकार कायोत्सर्ग प्रतिमा एक सौ आठ (१०८) अंगुलप्रमाण मानी गई है।

पद्मासन प्रतिमा का स्वरूप[१]

बैठी हुई प्रतिमा की दाहिनी जांघ एवं पिण्डी के ऊपर बायां हाथ और बायां चरण रखना और बायीं जांघ और पिण्डी के ऊपर दाहिना चरण और दाहिना हाथ रखना चाहिये। इस आसन को पद्मासन कहते हैं।

पद्मासन प्रतिमा का माप ललाट से गुह्यस्थान तक ५२ अंगुल कायोत्सर्ग प्रतिमा के अनुसार ही होता है एवं घुटना ४ अंगुल कुल ५६ अंगुल नाप माना गया है

(१) आ. ज. से, प्र. पा. पृष्ठ ४३

किन्हीं आचार्यों ने इसे कायोत्सर्ग प्रतिमा का आधा ५४ अंगुल भी माना है।

दाहिने घुटने से वाम कंधा तक, वाम घुटने से दाहिने कंधा तक, पलौटी ऊपर केश तक, पलौटी के एक घुटने से दूसरे घुटने तक यह चारो भाग समान भाग हो इसको समचतुष्क संस्थान कहते है।

प्रक्षालन का जल निकलने का स्थान चरण चौकी के ऊपर रखे नाभि से लिग ८ भाग नीचे होना तभी पानी का निकास लिग के नीचे से होगा। तब प्रतिमा शुद्ध बनेगी। दोनों हाथों की अंगुलियों और पेडू मे ४ भाग अंतराल रखे, उदर से स्कंध पर्यन्त क्रम से हानि रूप २ भाग प्रमाण अन्तर रखें। इस प्रकार प्रतिमा का निर्माण कराना तब प्रतिमा शुद्ध बनेगी।

अरिहंत प्रतिमा (१)

सल्लक्षणं भावविवृद्धिहेतुकं संपूर्णशुद्धावयवं दिगम्बरम्।
सत्प्रातिहार्यैर्निजचिह्नभासुरं संकारयेद्बिंबमथार्हतः शुभम्॥

इस प्रकार अरिहंत का बिब सम्पूर्ण अंगोपांग विशुद्ध, दिगम्बर स्वरूप अष्टप्रातिहार्य संयुक्त तथा अपने चिन्ह से युक्त जानना चाहिए।

सिद्ध प्रतिमा(१)

सिद्धेश्वराणां प्रतिमाऽपि योज्या तत्प्रातिहार्यादिविना तथैव।
आचार्यसत्पाठकसाधुसिद्धक्षेत्रादिकानामपि भाववृद्ध्यै॥

प्रातिहार्य बिना सिद्ध प्रतिमा बनवाना। आचार्य, उपाध्याय, व साधु की प्रतिमा भी आगम प्रमाण बनवायें। सिद्धक्षेत्र आदि की प्रतिमा भी योग्य है।

प्रतिमा का फल (२)

आयुः श्री बल जयदा दारुमयीमृण्मयी तथा प्रतिमा।
लोकहितायमणिमयी सौवर्णी पुष्टिदा भवति॥
रजतमयी कीर्तिकरी प्रजाविवृद्धिं करोति ताम्रमयी।
भूलाभं तु महान्तं शैलीप्रतिमाथवा लिंगम्॥

लकड़ी और मिट्टी की प्रतिमा आयु, श्री, बल और विजय देती है मणि की प्रतिमा लोगो के हित के लिये होती है। सोने की प्रतिमा पुष्टि को देती है। चॉदी की प्रतिमा यश को करती है। तांबे (धातु) की प्रतिमा सन्तान की वृद्धि करती है। पत्थर की प्रतिमा अत्याधिक भूमि का लाभ करती है।

---

(१) आ. ज. से, प्र. पा. पृष्ठ ४३ श्लोक १८० - १८१ (२) व. मि. वृ. स. पृष्ठ ४०० श्लोक ४ एव ५

हीनांग प्रतिमा का फल [१]

प्रतिमा की नाक वक्र (टेढ़ी) हो तो	दुःखकारक
प्रतिमा के अवयव छोटे हों तो	क्षयकारक
प्रतिमा के विकृत नेत्र हों तो	नेत्रविनाशक
प्रतिमा का छोटा मुख हो तो	भोगविनाशक
प्रतिमा की कटि (कमर) हीन हो तो	आचार्यनाशकारक
प्रतिमा की जंघा हीन हो तो	पुत्रमित्रविनाशक
प्रतिमा का हीन आसन हो तो	ऋद्धिनाशकारक
प्रतिमा के हीन हाथ और चरण हों तो	धनक्षयकारक
प्रतिमा का ऊर्ध्वमुख हो तो	धननाशकारक
प्रतिमा की गर्दन वक्र (टेढ़ी) हो तो	स्वदेशनाशकारक
प्रतिमा का अधोमुख हो तो	चिन्ताकारक
प्रतिमा का ऊंचा नीचा मुख हो तो	विदेशगमन
प्रतिमा का विषम आसन हो तो	व्याधिकारक
प्रतिमा अन्याय के धन से निर्मित हो तो	दुष्कालकारक
प्रतिमा न्यूनाधिक अंगवाली हो तो	स्व-पर पक्ष को कष्ट
प्रतिमा रौद्र रूप वाली हो तो	प्रतिमा निर्माता का नाश
प्रतिमा अधिक अंगवाली हो तो	शिल्पीकार का नाश
प्रतिमा दुर्बल अंगवाली हो तो	द्रव्य का नाश
प्रतिमा पतले उदरवाली हो तो	दुर्भिक्ष कारक
प्रतिमा तिरछी दृष्टिवाली हो तो	अपूजनीय विरोधकारक
प्रतिमा गाढ दृष्टि वाली हो तो	अशुभकारक
प्रतिमा अधोदृष्टि वाली हो तो	विघ्नकारक पुत्रनाश
प्रतिमा ऊंची दृष्टि वाली हो तो	भार्या का नाश
प्रतिमा नेत्ररहित हो तो	नेत्रनाशकारक
प्रतिमा बड़े उदरवाली हो तो	उदररोग कारक
प्रतिमा हृदय हीनाधिकवाली हो तो	हृदयरोग कारक
प्रतिमा हीनकंधावाली हो तो	पुत्रनाशकारक

विशेष -

नासाग्रदृष्टि और क्रूरतादि १रौद्र २कृशांग ३संक्षिप्तांग ४चिपिटनासिका ५विरूपक

(१) ठ. फे., वा. सा. प्र. पृष्ठ १०१ से १०३, गाथा ४४ से ५१

नेत्र ६हीनमुख ७महोदर ८महाह्रदय ९महाअंस १०महाकटी ११महपाद १२हीनजंघा (शुष्क जंघा) इन बारह दोष रहित जिनबिब पूजने योग्य हैं और अंगहीन व अंग अधिक हो तो कर्त्ता अर्थात् पूजक के नाश के अर्थ होता है। अतः प्रतिमा शास्त्रानुसार ही होना चाहिये। विस्तारपूर्वक कथन, प्रतिष्ठा ग्रंथ एवं श्रावकाचार से विचार करना और मृत्तिका, काष्ठ और चित्राम आदि का जिनबिब पूज्य नही कहा है।[१]

खण्डित प्रतिमा फल [२]

प्रतिमा के नख खण्डित हों	शत्रुभयकारक
प्रतिमा की अंगुली खण्डित हों	देशविनाशकारक
प्रतिमा की बाहु खण्डित हो	बंधनकारक
प्रतिमा की नासिका खण्डित हो	कुलनाशकारक
प्रतिमा के चरण खण्डित हों	द्रव्यक्षयकारक
प्रतिमा का पादपीठ खण्डित हो	स्वजननाश
प्रतिमा का चिन्ह खण्डित हो	वाहननाश
प्रतिमा का परिकर खण्डित हो	सेवकनाश
प्रतिमा का छत्र खण्डित हो	लक्ष्मीनाश
प्रतिमा का श्रीवत्स खण्डित हो	सुख का नाश
प्रतिमा के कान खण्डित हों	बंधु का नाश

प्रतिमा माप पर विशेष विचार [३]

प्रतिमा समांगुल माप की स्थापित नहीं करना चाहिए।

एक अंगुल की प्रतिमा श्रेष्ठ है। **दो** अंगुल की प्रतिमा धन नाश कारक
तीन अंगुल की सिद्धि कारक। **चार** अंगुल की दुख कारक
पाँच अंगुल की धनधान्ययश कारक **छह** अंगुल की उद्वेग कारक,
सात अंगुल की पशुवृद्धि कारक, **आठ** अंगुल की हानि कारक,
नौ अंगुल की पुत्रादि वृद्धिकारक, **दस** अंगुल की धन का नाश करने वाली,
ग्यारह अंगुल की इच्छित कार्य की सिद्धि करने वाली है।

इससे प्रतिमा विषम माप की बनवाना और गृह चैत्यालय में ग्यारह अंगुल से अधिक मापवाली प्रतिमा विराजमान नहीं करना। गृह – चैत्यालय में मल्लिनाथ, नेमिनाथ और महावीर स्वामी की प्रतिमा विराजमान नहीं करना। किंतु इक्कीस तीर्थकरों की प्रतिमा गृह मंदिर में शांतिकारक, पूजनीय एवं वंदनीय है।

---

(१) आ. ज. से., प्र. श्लोक १८३ (२) ठ. फे., वा. सा. प्र. गाथा ४४ से ५१ (३) श्री उमास्वामी श्रावकाचार, श्लोक १०१ से १०३, ठ. फे., वा. सा. प्र. गाथा ४३

दीवार में लगी प्रतिमा का फल (१)

दीवार के साथ लगा हुआ ऐसा जिनबिंब और उत्तम पुरुष की मूर्ति सर्वथा अशुभ मानी गयी है। अतः दीवार से या दीवार के अंदर कोई मूर्ति विराजमान नहीं करना चाहिए।

चौबीस जिनालय एवं प्रतिमाओं की स्थापना (२)

चौबीस जिनालय वाला मंदिर बनवाना हो तो बीच के मुख्य मंदिर के सामने, दाहिनी और बांयी तरफ इन तीनों दिशाओं मे आठ -आठ वेदियॉ मंदिर के भीतर निर्मित करना चाहिए और सिंहद्वार (प्रमुख द्वार) के दक्षिण दिशा से (अपनी बांयी ओर से) क्रमशः ऋषभदेव आदि जिनेश्वरों के पूर्व दक्षिण पश्चिम, उत्तर इस क्रम से बिम्ब स्थापन करना चाहिए।

प्राचीन प्रतिमा का शुभाशुभ फल (३)

१- जो प्रतिमा एक सौ वर्ष से पहले स्थापित की हो वह यदि विकलांग (बेडौल) हो अथवा खण्डित हो तो भी वह प्रतिमा पूजना चाहिए पूजा का फल निष्फल नही जाता।

२- मुख, नाक, नयन, नाभि और कमर इन अंशों में से कोई अंग खण्डित हो जाय तो मूलनायक रूप में स्थापित प्रतिमा का त्याग करना चाहिए। किंतु परिकर चिन्ह भग हो तो पूजन कर सकते हैं। दोष नहीं है।

३ - प्रतिष्ठते पुनर्बिम्बे संस्कारः स्यान्न कर्हिचित्।
संस्कारे च कृते कार्या प्रतिष्ठा तादृशी पुनः ॥
संस्कृते तुलते चैव दुष्टस्पृष्टे परीक्षिते।
हृते विम्बे च लिंगे च प्रतिष्ठा पुनरेव हि ॥

प्रतिष्ठा के बाद मूर्ति का संस्कार करना पड़े, तोलना पड़े दुष्ट मनुष्य का स्पर्श हो जाय, परीक्षा करना पड़े अथवा चोर चोरी कर ले जाय तो फिर उस मूर्ति की पूर्ववत् ही प्रतिष्ठा करना चाहिए (या लघु पंचकल्याणक करें)[४]

---

(१) ठ. फे., वा. सा. प्र., पृष्ठ १३३ गाथा ४७ (२) वही पृष्ठ १४८ गाथा ७६ (३) उमास्वामी श्रावकाचार श्लोक ११०-१११ (४) ठ. फ., वा.सा.प्र. बिम्ब परीक्षा पृष्ठ ९९

प्रतिमा की दृष्टि का प्रमाण (पद्मासन बिम्ब) (१)

१- मंदिर के मुख्यद्वार के देहली और उत्तरंग के मध्यभाग का दश भाग करना। जिसमे से नीचे से छह भाग छोड और ऊपर से तीन भाग छोडना फिर सातवे भाग के दश भाग करे उसमे से सातवे भाग में वीतराग की प्रतिमा की दृष्टि रखना चाहिए।

२- वसुनन्दि कृत प्रतिष्ठासार के अनुसार -

द्वार का नवभाग करके नीचे के६ भाग ऊपर के दो भाग छोड़कर बाकी जो सातवा भाग रहा, उसका भी नव भाग करके सातवें भाग पर प्रतिमा की दृष्टि रखना चाहिए।

३- प्रासाद मण्डन के अनुसार

मंदिर के मुख्य द्वार के आठ भाग करना उनमे से ऊपर का जो सातवां भाग है, उसकेभाग आठ करे उसी केसातवे भाग में प्रतिमा की दृष्टि रखना चाहिए। उदाहरण - जैसे द्वार के ६४ भाग किए उनमें से ५५वे भाग पर वीतराग की दृष्टि (गजाश) रखना चाहिए।

आठ आय के नाम (२)

१ध्वज २धूम ३सिह ४श्वान ५वृष ६खर ७गज ८ध्वाक्ष। इनके नाम के सदृश ही फल जानना। इनमे विषम आय (ध्वज, सिह, वृष, गज) श्रेष्ठ हैं। सम आय (धूम, श्वान, खर, ध्वांक्ष) अशुभ है। इनका फल निम्न प्रकार से जानना।

ध्वज विभूति बढ़ाता है, धूम सु मृत्यु करेय।
सिह सुजयजय करत है, श्वान कष्ट बहु देय ॥
धूम बैल की शुभ करै, खर की पीर बढाय।
गज की लक्ष्मी देत है, ध्वाक्ष त्याग घर जाय ॥ (३)

द्वार के आठ भाग किए थे उसमे से सातवें भाग के आठ भाग करें, उनमें से

१ भाग की दृष्टि **संपत्तिकारक**, २ भाग की दृष्टि **मृत्युकारक**,
३ भाग की दृष्टि **शुभकारक**, ४ भाग की दृष्टि **कष्टकारक**,
५ भाग की दृष्टि **कल्याणकारक**, ६ भाग की दृष्टि **पीड़ाकारक**,
७ भाग की दृष्टि **लक्ष्मीदायक**, ८ भाग की दृष्टि **अशुभफलदायक**

---

(१) ठ. फ., वा सा.प्र. प्रासाद प्रकरण पृष्ठ १३१ गाथा ४४
(२) ठ. फ, वा. सा. प्र. पृष्ठ ३१ गाथा ५२ (३) आ. विद्यानन्द महाराज से प्राप्त

इस प्रकार सातवे भाग के आठों भागों का फल बताया है अतः १,३,५,७ वें भाग में दृष्टि शुभ है बाकी के भाग अशुभ हैं। अतएव वीतराग की दृष्टि विचार पूर्वक शुभ स्थान मे रखना चाहिए। दीवार पर एवं द्वार के ऊपर प्रतिमा की दृष्टि नही होना चाहिए।

प्रतिमा पर रेखा विचार (१)

हृदय, मस्तक, कपाल, दोनों स्कंध, दोनों कान, मुख, पेट, पृष्ठ भाग, दोनों हाथ, दोनो पांव इत्यादि प्रतिमा के किसी अंग पर अथवा सब अंगों पर नीली या अन्य रंगवाली रेखाएं हों तो उस प्रतिमा को पण्डित जन छोड़ दें।

उक्त अंगों को छोड़ दूसरे अंगों पर हो तो मध्यम है किंतु खराब चीरा आदि दूषणों से रहित स्वच्छ चिकनी ठंडी अपने वर्ण सदृश रेखा दोष वाली नहीं है। दोष जानने का प्रयोग बेलवृक्ष की छाल कांजी में पीसकर मूर्ति या पाषाण पर लेप करने से दाग (रेखाएं) दिखने लगते हैं। (२)

[illegible] पृष्ठ [illegible] (२) वही, पृष्ठ [illegible]

मुहूर्तावली

प्रतिमा निर्माण मुहूर्त [1]

उत्तराणां त्रये पुष्ये रोहिण्यां श्रवणे तथा ।
वारुणे वा धनिष्ठायामार्द्रायां बिम्बनिर्मितिः ॥

अर्थ - तीनों उत्तरा पुष्य रोहणी श्रवण चित्रा धनिष्ठा आर्द्रा नक्षत्रों तथा सोम गुरु शुक्रवारों में बिब बनवाना श्रेष्ठ है ।

प्रसन्नमनसा कारुं संतर्प्य पुष्पवाससैः ।
ताम्बूलैर्द्रविणैर्यज्वा कारयेन्नेत्रहृत्प्रियम् ॥
गुरुपुष्ये तथा हस्तार्यम्णि गर्भोत्सवे शुभान् ।
निमित्तान्नवलोक्येशप्रतिमानिर्मितिः शुभा ॥

अर्थ - पूजक प्रथम प्रसन्न मन करके पुष्प वस्त्र तांबूल और दक्षिणा आदि देकर सिलावट को संतोषित करे तथा अपने नेत्र एवं हृदय को सुन्दर लगे ऐसा बिंब निर्मित करावें तथा एक गुरुपुष्य योग तथा हस्तार्क योग में तथा जिस भगवान का बिंब बनाना हो भगवान का गर्भकल्याणक दिन निमित्त शुभ सूचक एवं देखकर प्रतिमा निर्माण योग्य है ।

भारतीय ज्योतिष

पुष्य, रोहिणी, श्रवण, चित्रा, धनिष्ठा, आर्द्रा अश्विनी, तीनों उत्तरा, हस्त, मृगसिर, रेवती, अनुराधा, नक्षत्रों में एवं सोमवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार - तथा २,३,५,७,११,१३ इन तिथियों में प्रतिमा बनावायें ।

प्रतिष्ठा मुहूर्त एवं शुभाशुभ योग [2]

लग्नस्य शुद्धिमभिधाय सुपंचधाग्र्यां यां वारयोगतिथिमादिकलग्नशुद्ध्या ।
नैमित्तिकार्थपरिसंकलनैः पुराणैरुक्तां प्रतिष्ठितिविधौ पुरतो विदध्यात् ॥
भौमं रविं शौरिमपास्य वारान् सर्वे हि शस्याः किल संस्थितौ च ।
सिद्धामृतादिं परियोज्य रिक्तामभां त्यजन् याति सुसौख्यभावम् ॥
रिक्ताख्यथोयोगविशेषसिद्ध्या कार्याणि कुर्यात्सिनिवालिकां च ।
संवर्जयेत्सिद्धियुजं तथापि रुद्रामपि प्रांततिथिं विनेष्टम् ॥
जिनस्य यस्यात्र दिने प्रजातं कल्याणकं तन्नियमेन तत्र ।
तस्यास्तु तत्कार्यमथोत्तरायां पुनर्वसूपुष्यकरश्रवस्सु ॥

---

(१) आ. ज. से., प्र. पाठ पृष्ठ ४५ श्लोक १८५-१८६
(२) वही, श्लोक १८७ से १९१

अंत्येऽपि रोहिण्यजवाजिषु द्राक् चित्रामघास्वातिभगांगमूलम् ।
कदाचिदंगीकृतमत्र चान्यत् ग्राह्यं सुनक्षत्रमधीतिवाक्यात् ॥

अर्थ- पांच प्रकार की तिथि, वार, नक्षत्र, योग करण रूप दिनशुद्धि है। उसमें लग्नशुद्धि मुख्य है और पुराण (उत्तम) पुरुषो द्वारा कथित ऐसे दिन में प्रतिष्ठा विधि विधान करें और मंगल रविवार शनिवार को छोड़ सर्व ही वार प्रशस्य हैं। और सिद्ध अमृत आदि योग उत्तम हैं। अमावस्या त्याग सुख को प्राप्त होता है, रिक्ता तिथि के दिन भी योग विशेष की शुद्धि हो तो कार्य करें पूर्णिमा वर्जित है और सिद्धि योग भी हो परन्तु एकादशी हो तो वर्जित है तथा मासांत तिथि बिना भी इष्ट कहा है। जिन जिनेन्द्र का जिस तिथि में जो कल्याण हुआ हो उस तिथि में वह कल्याणक इष्ट है। उत्तरा, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, श्रवण इनमें और रेवती में, रोहणी अश्विनी में शुभ योग ग्राह्य है। और चित्रा, मघा, स्वाति, भरणी, मूल भी कदाचित्, आवश्यक कार्य में अंगीकार किया है अन्य भी शुभयोगयुक्त नक्षत्र ज्योतिष के अनुसार ग्रहण करना ।

विष्कम्भमूले शरनाडिकाः षट् गंडातिगंडे नववज्रघाते ।
व्ययादिपातं परिधं च सर्व विवर्जयेद् मुक्तिसुखाभिलाषी ॥

भूकंपदिग्दाहनरेशमृत्यूनुद्दिश्य घस्त्रत्रयमत्र वर्ज्य ।
चरेषु विष्टिप्रगतेषु नैवं प्रतिष्ठितिं प्रांचति पूज्यलोकः ॥ (१)

विष्कंभ और मूल में प्रथम पांच घड़ी वर्जित हैं और गंड अतिगंड में छह घड़ी, वज्र और घात में नव घड़ी वर्जित हैं और मुक्ति सुख की वांछा करने वालों को व्यतीपात और परिघि हमेशा ही वर्जित है। धरती का कंपना, दिशा का दाह, भूपति का मरण आदि के उत्पात में तीन दिन प्रतिष्ठा वर्जनीय है। इस कार्य में चर नक्षत्र विष्टि (भद्रा) योग हो तो सर्वथा वर्जित है।

शुभयोग

सूर्येण वा चन्द्रमसा कुजेनाष्टम्यंकशल्यानि शुभावहानि ।
बुधेन च द्वादशिका द्वितीया गुरुस्पृशो दिक्शरपूर्णिमाश्च ॥

शुक्रेण षष्ठी प्रतिपत्प्रशस्ता चतुर्थिका वा नवमी शनिस्था ।
सिद्धिं तथा चामृतयोगमुच्चैः प्रशस्तमाहुर्मुनयो निमित्तात् ॥ (२)

सूर्यवार की अष्टमी, सोमवार की नवमी, मंगलवार की तृतीया, बुधवार की द्वादशी, तथा द्वितीया, गुरुवार की दशमी, पचमी, पूर्णिमा हो तो श्रेष्ठ है। शुक्रवार की षष्ठी वा पडिमा शुभ है, और शनिवार को चतुर्थी, नवमी श्रेष्ठ है। इनमें सिद्धियोग अमृतसिद्धियोग हो तो मुनीश्वर निमित्तज्ञान से अति प्रशस्त कहते हैं।

(१) (२) आ. ज. से., प्र. पाठ, श्लोक १९२ से १९५

अशुभयोग[1]

सूर्यादितो वा भरणीं च चित्रां तथोत्तराषाढ्धनिष्ठभं च ।
सदुत्तरां फाल्गुनिकां च ज्येष्ठामन्त्यं तथा जन्मभमेव मोच्यम् ॥

दग्धातिथिः प्रयत्नेन वर्जनीया तथा शुभाः ।
अमृताख्या श्वात्र योज्याः प्रतिष्ठाया महोत्सवे ॥

क्रूरासन्ने दूषितोत्पातलूता विद्धाः दुष्टाः पर्वसन्नोपपाताः ।
वर्ज्याः सर्वेऽसदृग्रहास्सूर्यवेधोराशिद्रेष्काणर्क्षकांशोऽपि वर्ज्यः ॥

अर्थ- रविवार को भरणी, सोमवार को चित्रा, मंगलवार को उत्तराषाढ़, बुध को धनिष्ठा, गुरु को उत्तराफाल्गुनी शुक्र को ज्येष्ठा, शनि को रेवती हो तो वज्रमुसल अशुभ योग होते हैं यह प्रतिष्ठा में त्याज्य हैं। तथा जन्म नक्षत्र, दग्धा तिथि, क्रूर, आसन्न, दूषित उत्पात, लूता, विद्ध दुष्ट, सन्न उत्पात योग वर्जित हैं। तथा राशि द्रेष्काण नक्षत्र संबंधी सूर्य वेध भी वर्जित है। शुभ अमृतादि योग ही प्रतिष्ठादि शुभकार्यों में प्रशस्त माने गये हैं।

लग्नास्तृतीये शिवषट्कदेशे भौमो यमश्चापि शनैश्चरोऽपि ।
शुभाय सूर्यो दशमोऽपि सौम्यो मुक्त्वाष्टमं द्वादशगं शुभाय ॥

षष्ठाष्टमं द्वादशकं तृतीयं त्यक्त्वा गुरुः स्याद् शुभदो विधिज्ञः ।
शुक्रोरसाष्टांत्यमुनिस्थितोऽसौ न स्याच्छुभोऽन्यत्र शुभाय बोध्यः ॥

शशी त्रिरुद्रद्वितये प्रशस्तो यदारस्तदौर्बल्यमुपागतो न ।
ताराबलं चात्र विधौ विधेयं त्रिसप्तपंचम्यपराः शुभाय ॥

लग्न में अर्थात् १, ३, ६, ११ स्थान में मंगल राहु, शनि हो तो शुभ है १० वें सूर्य शुभ है। कितु चन्द्रमा ८वें १२वें स्थान छोड़ सर्वस्थानों में शुभ है और ३, ६, ८, १२ वे स्थान छोड़ गुरुहो ५वें में गुरुश्रेष्ठ है। तथा ६, ८, १२वें स्थान छोड़ शुक्र हो तो शुभ है और चन्द्रमा २, ३, ११ वे स्थान में शुभ है तथा तारा हीनबली हो, अस्त न हो क्योकि ३, ५, ७वें तारा छोड़ शुभ होता है।

कृष्णे च ताराबलमत्र शुक्ले सुधांशुवीर्यं नियतं मुनींद्रैः ।
जीवेन्दुसूर्योऽस्य बलं प्रधानमन्यद्ग्रहाणामपि निर्बलत्वे ॥

कृष्ण पक्ष में तारावल प्रशस्त है। शुक्लपक्ष में चन्द्रवल श्रेष्ठ है। यदि अन्य ग्रह निर्बल हों कितु गुरु चंद्र सूर्य बल को श्रेष्ठ माना है।

---

(1) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक १९६ से २०२

प्रतिष्ठामयूख से मुहूर्त

चैत्रे वा फाल्गुने वापि ज्येष्ठे वा माधवे तथा ।
माघे वा सर्वदेवानां प्रतिष्ठा शुभदा भवेत् ।।
पंचांगतिथिसंशुद्धि लग्नं षट्वर्गगोचरं ।
शुभाशुभं निमित्त च लग्नशुद्धिस्तु पंचधा ।।
वारास्तिथिभयोगाश्च करणं पंचधातिथिः ।
त्यक्त्वा कुजं रवि सौरि वारा: सर्वेऽपि शोभना: ।।
सिद्धामृतादियोगेषु कुर्यात्तेष्वपि मगलम् ।
त्यक्त्वा रिक्तामभावस्यां सर्वास्तु तिथयः शुभा: ।।

प्रतिष्ठा योग्य नक्षत्र [1]

पुनर्वसूत्तरापुष्यः हस्तश्रवणरेवतीः ।
रोहिण्यश्च मृगर्क्षेषु प्रतिष्ठा कारयेत्सदा ।।

अमृत सिद्धियोग [2]

रविवार - हस्त, पुनर्वसु, पुष्य
सोमवार - मृगसिर, रोहणी
मंगलवार - अश्विनी, रेवती
बुधवार - अनुराधा, शतभिषा
गुरुवार - उत्तरात्रय, पुष्य
शुक्रवार - श्रवण, रेवती
शनिवार - विशाखा, कृतिका, रोहणी, श्रवण

इन वारों में यह नक्षत्र अमृतसिद्धियोग संज्ञक हैं

भारतीय ज्योतिष, केवलज्ञान प्रश्न चूड़ामणि, लग्नचन्द्रिका, मुहूर्तचक्रावली, ज्योतिषसार, मुहूर्तचितामणि, वास्तुरत्नावली, मुहूर्त गणपति, वृहत्संहिता आदि ग्रंथों के अनुसार

गुरु शुक्रास्त में वर्जित कार्य [3]

बावड़ी, कुआं, तालाब, यज्ञ करना, यात्रा, मुण्डन, प्रतिष्ठाकार्य, प्रथमव्रतारंभ, विद्याध्ययन, मंदिर एवं मकान निर्माण, कर्ण छेदन, महादान, गुरु सेवा, विवाह कार्य, हवन कार्य, मंत्रोपदेश आदि शुभकार्य नहीं करना चाहिए ।

---

(१) प्रतिष्ठा मयूख (२) आ. व. न. प्र. सा. सं. (३) मुहूर्त चक्रावलि पृष्ठ ९ श्लोक ६

मलमास में वर्जित कार्य

बावड़ी, कुआं, तालाब बनवाना, यज्ञकार्य, देवप्रतिष्ठा, महादान, प्रथमव्रतारंभ आदिकार्य मलमास (अधिक मास) में नहीं करना। (प्रथम मास का शुक्ल पक्ष द्वितीय मास का कृष्ण पक्ष मलमास माना है एवं प्रथम मास के कृष्ण पक्ष द्वितीय मास के शुक्ल पक्ष को शुद्ध मास माना है)।

शुभकार्यो में वर्जित हैं (१)

जन्म का नक्षत्र, जन्म का महीना, जन्मतिथि, व्यतीपातयोग, भद्रातिथि, अमावस्या, क्षयतिथि, वृद्धि तिथि, क्षयमास, अधिक मास, कुलिकयोग प्रहरार्द्ध, वारबेला, दग्धातिथि आदि अशुभयोग, महापात, यह सब शुभ कार्यो में वर्जित हैं। तथा विष्कुंभ और वज्र योग की आदि की ३ घड़ी, शूलयोग की ५ घड़ी, गण्ड, अतिगण्ड की ६ घड़ी, व्याघात की ९ घडी त्यागना चाहिए। तथा सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण और १३ दिन वाला पक्ष वर्जित है।

भद्रानिवास (२)

मेष, वृष, मिथुन, वृश्चिक के चन्द्रमा में **स्वर्ग** में शुभ
कन्या, मकर, धन, तुला के चन्द्रमा में **पाताल** में शुभ
कर्क, सिह, कुंभ, मीन के चन्द्रमा में **मर्त्यलोक** अशुभ

इस प्रकार भद्रा निवास माना है शुभ कार्यो में भद्रा विचार आवश्यक है। भद्रा का फल इस प्रकार है स्वर्ग की भद्रा शुभ है, पाताल की भद्रा धन प्राप्त कराती है। मर्त्यलोक की भद्रा अशुभ है इसको शुभ कार्य में बचाना चाहिये। **दिनार्द्ध के बाद भद्रा शुभ होती है।**

मास, पक्ष, तिथि नक्षत्र से अशुभयोग

चैत्र	-	कृ० शु० ८, ९ तिथि	- रोहिणी अश्विनी नक्षत्र
वैशाख	-	कृ० शु० १२ तिथि	- चित्रा, स्वाति नक्षत्र
ज्येष्ठ	-	कृ० १४ शु० १३ तिथि	- उत्तराषाढ़, पुष्य नक्षत्र
आषाढ़	-	कृ० ६ शु० ७ तिथि	- पूर्वा फाल्गुनी, धनिष्ठा नक्षत्र
श्रावण	-	कृ० शु० २, ३ तिथि	- उत्तराषाढ़ श्रवण नक्षत्र
भाद्रपद	-	कृ० शु० १, २ तिथि	- शतभिषा, रेवती नक्षत्र
अश्विन	-	कृ० शु० १०, ११ तिथि	- पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र
कार्तिक	-	कृ० ५ शु० १४, तिथि	- कृतिका, मघा नक्षत्र

(१) मुहूर्त चक्रावलि, पृ. १४ श्लोक १४-१४ (२) शीघ्रबोध, श्लोक १२

मार्गशीर्ष - कृ० शु० ७, ८ तिथि - चित्रा, विशाखा नक्षत्र
पौष - कृ० शु० ४, ५ तिथि - आर्द्रा, अश्विनी हस्त नक्षत्र
माघ - कृ० ५ शु० ६ तिथि - श्रवण, मूल नक्षत्र
फाल्गुन - कृ० ४ शु० ३ तिथि - भरणी ज्येष्ठा नक्षत्र

मास शून्य तिथि एवं नक्षत्रों में विद्यारभ, गृहनिर्माण, वेदी प्रतिष्ठा, बिब प्रतिष्ठा, मंदिर निर्माण, यज्ञोपवीत संस्कार नहीं करना चाहिए। प्रतिष्ठाकारक, प्रतिष्ठाचार्य और प्रतिमा के नाम से चन्द्रमा देखना चाहिए। इनकी राशि से ४,८, १२वां चन्द्रमा वर्जित है।

जैन ज्योतिष के अनुसार उदयतिथि ६ घड़ी या अधिक हो तो मान्य है, यदि कम हो तो पहिले दिन व्रत करना चाहिए। यदि जैन तिथि दर्पण या पंचांग मे दो तिथि हों तो पहिले दिन की तिथि मान्य होती है, किन्तु यह देखलें कि उस दिन तिथि कितनी है। यदि ६ घड़ी से कम हो तो दूसरे दिन की तिथि मानना चाहिए।

शुभ कार्यो में त्याज्य दग्ध लग्न

तिथि	१	३	५	७	९	११	१३
लग्न	तुला मकर	मकर सिंह	मिथुन कन्या	धन कर्क	कर्क सिंह	धन मीन	मीन वृष

कुलिक योग (शुभ कार्यों मे त्याज्य है)

तिथि	७	६	५	४	३	२	१
वार	रवि	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि

दग्ध तिथि (शुभ कार्यों में त्याज्य है)

सूर्य	मीन धन	वृष कुम्भ	मेष कर्क	कन्या मिथुन	सिंह वृश्चिक	मकर तुला
तिथि	२	४	६	८	१०	१२

अशुभयोगचक्र

क्रमांक	योग नाम	तिथि नक्षत्र	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
१	चरयोग	नक्षत्र	पूर्वाषाढ़ उ.षा.	आर्द्रा	विशाखा	रोहणी	शतभिषा	मघा	मूल
२	क्रकच योग	तिथि	१२	११	१०	९	८	७	६
३	दग्ध योग	तिथि	१२	११	५	३	६	८	९
४	विशाख्य योग	तिथि	४	६	७	२	८	९	७
५	हुताशन योग	तिथि	१२	६	७	८	९	१०	११
६.	यमघंट योग	नक्षत्र	मघा	विशाखा	आर्द्रा	मूल	कृत्तिका	रोहणी	हस्त
७.	दग्ध योग	नक्षत्र	भरणी	चित्रा	उत्तरा षाढ	धनिष्ठा	उत्तरा फाल्गुनी	ज्येष्ठा	रेवती
८.	उत्पात योग	नक्षत्र	विशाखा	पूर्वा षाढ़	धनिष्ठा	रेवती	रोहणी	पुष्य	उत्तरा फाल्गुनी
९	मृत्यु योग	नक्षत्र	अनु राधा	उत्तरा षाढ़	शत-भिषा	अश्विनी	मृगसिर	अश्लेषा	हस्त
१०.	काण योग	नक्षत्र	ज्येष्ठा	अभि जित	पूर्वभाद्र पद	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा
११	काल योग	नक्षत्र	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभिजित	पू० भा०

अशुभयोगचक्र

क्रमांक	योग नाम	तिथि नक्षत्र	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
१२	वज्र मुसल	नक्षत्र	भरणी	चित्रा	उत्तरा षाढ	धनिष्ठा	उत्तरा फाल्गनी	ज्येष्ठा	रेवती
१३.	शत्रु योग	नक्षत्र	भरणी	पुष्य	उत्तरा षाढ	आर्द्रा	विशाखा	रेवती	शतभिषा
१४	अवला योग	तिथि	१२ आर्द्रा	११ मृगसिर	० -	२ रोहणी	० -	० -	५ कृत्तिका
१५	यमल योग	तिथि नक्षत्र	० -	० -	२ मृगसिर	० -	७ चित्रा	० -	१२ धनिष्ठा
१६	सवर्त योग	तिथि	७	०	०	१	०	०	०
१७	यमदृष्ट्र योग	नक्षत्र	मघा धनिष्ठा	मूल विशाखा	कृत्तिका भरणी	पूर्वाषाढ पुनर्वसु	उत्तराषाढ अभिजित	रोहणी अनुराधा	श्रवण धनिष्ठा
१८	मृत्युयोग तिथि	तिथि	१,६,११	२,७,१२	१,६,११	३,८,१३	४,९,१४	२,७,१२	५,१०,१५ ३०
१९	अधम योग	तिथि	१२	११	१०	३	६	२	७
२०.	राक्षस योग	नक्षत्र	शतभिषा	अश्विनी	मृगसिर	अश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उत्तराषाढ
२१	वज्रपात योग	तिथि नक्षत्र	२ अनुराधा	३ तीनो उत्तरा	५ मघा	६ रोहणी	७ मूलहस्त,	-	-

१३ को चित्रा एव स्वाति, ७ को भरणी, ९ को पुष्य, १० को अश्लेषा, ८ को पू भाद्रपद हो तो वज्रपात होता है अत त्याज्य है।

२२- तिथि नक्षत्र से अशुभ योग

	तिथि	४	५	९	३	८
कालमुखी	नक्षत्र	तीनों उत्तरा	मघा	कृतिका	अनुराधा	रोहणी

२३- मृत्यु योग तिथि नक्षत्र से[1]

तिथि	नक्षत्र
१ ६ ११	मूल, आर्द्रा, स्वाति, चित्रा, अश्लेषा, रेवती कृतिका, शतभिषा
२ ७ १२	पूर्वभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी
३ ८ १३	मृगसिर, श्रवण, पुष्य, अश्विनी, भरणी ज्येष्ठा
४ ९ १४	पूर्वाषाढ, उत्तराषाढ, विशाखा, अनुराधा, मघा, पुनर्वसु
५ १० १५	हस्त, धनिष्ठा, रोहणी

इन तिथियो मे यह नक्षत्र मृतक समान है अत: इनमे नान्दी, प्रतिष्ठा आदि शुभ कार्य नही करना

२४- सूर्य दग्धा तिथि

सूर्य	तिथि	सूर्य	तिथि
धन, मीन	२	मिथुन, कन्या	८
मेष, कर्क	६	सिह वृश्चिक	१०
[illegible], कुम्भ	४	तुला, मकर	१२

यह तिथियां शुभ कार्यो मे वर्जनीय है।

(१) ह. पे., वा. सा. प्र., पृष्ठ २३३

२५ चन्द्रदग्धा तिथि

चन्द्रमा	तिथि	चन्द्रमा	तिथि
कुंभ, धन	२	मकर, मीन	८
मेष, मिथुन	४	वृष, कर्क	१०
तुला, सिह	६	कन्या, वृश्चिक	१२

यह तिथियां शुभ कार्यो में वर्जनीय हैं।

वार तिथि एवं नक्षत्र से अशुभयोग

वार	तिथि एवं नक्षत्र
रविवार	तिथि - ६ ७ ११ १२ १४ शतभिषा, भरणी, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मघा
सोमवार	तिथि - ७ ११ १२ १३ विशाखा, चित्रा, धनिष्ठा, पूर्वाषाढ, उत्तराषाढ, अभिजित्, आर्द्रा, अश्विनी
मंगलवार	तिथि - १ १० ११ पूर्वभाद्रपद, उत्तराषाढ, मघा, आर्द्रा, धनिष्ठा, शतभिषा
बुधवार	तिथि - १ ३ ८ ९ १३ १४ शतभिषा, मूल, धनिष्ठा, अश्लेषा, रेवती, अश्विनी, भरणी, चित्रा
गुरुवार	तिथि - २ ७ १२ ४ ६ ८ शतभिषा, कृतिका, रोहणी, मृगसिर, आर्द्रा उत्तराफाल्गुनी, हस्त, ज्येष्ठा
शुक्रवार	तिथि - २ ३ ४ ७ ९ १४ रोहणी पुष्य, अश्लेषा, मघा, अभिजित्, ज्येष्ठा
शनिवार	तिथि - ५ ६ ७ १० १५ रेवती, उत्तराषाढ, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ, मृगसिर, पूर्वभाद्रपद

वार नक्षत्र एवं वार तिथि से शुभयोग

	योग	रवि	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
१	सिद्ध योग	मूल	श्रवण	उत्तरा भाद्रपद	कृत्तिका	पुनर्वसु	पू०फा०	स्वाति
२	सर्वार्थ सिद्धि योग	हस्तमूल पुष्य अश्विनी तीनो उत्तरा	श्रवण रोहणी मृगसिर अनुराधा पुष्य	अश्विनी उ०भा० कृत्तिका अश्लेषा	रोहणी अनुराधा हस्त कृत्तिका मृगसिर	रेवती अश्विनी अनुराधा पुष्य पुनर्वसु	अनुराधा रेवती अश्विनी पुनर्वसु श्रवण	श्रवण रोहणी स्वाति
	दुष्ट तिथि	१, ३, ७	२, ११	३, ९, १२	७, ९, ११	---	---	११, १३
३	अमृत सिद्धयोग	हस्त पुष्य पुनर्वसु	रोहणी मृगसिर	अश्विनी रेवती	अनुराधा शतभिषा	पुष्य तीनों उत्तरा	रेवती श्रवण	श्रवण रोहणी विशाखा कृत्तिका
	विषयोग तिथि	५	६	७	८	९	१०	११
४	आनन्द योग	अश्विनी	मृगसिर	अश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उत्तरा षाढ	रेवती शतभिषा
५	तिथि सिद्धियोग	--	--	३, ८, १३	२, ७, १२	५, १० १५, ३०	१, ६ ११	४, ९ १४
६	अमृत योग	५, १० १५, ३०	५, १० १५, ३०	२, ७ १२	१, ६ ११	३, ८ १३	४, ९ १४	१, ६ ११
७	सिद्धियोग	३, ८ १३	१, ६	३, ८ १३	२, ७ १२	५, १० १५	१, ६ ११	४, ९ १४
८	रत्नाकुर योग	३, ८, १३	१, ६	४, ९, १४	५, १० १५, ३०	२, ७, १२	५, १५ १०, ३०	३, ८, १३

३, ६ - आ. व. नं. प्र. सा. सं. ७ - लोक विजयपंचांग सं. २०४४ पृष्ठ ४
८ चितामरण जंत्री सन् १९८८, शेष - ज्योतिष मुहूर्त्त विज्ञान

तिथि वार एवं नक्षत्र से शुभयोग

१. रविवार	तिथि – १ - ८ - ९ हस्त, पुनर्वसु, रेवती, मृगसिर, तीनों उत्तरा पुष्य, मूल, अश्विनी, धनिष्ठा
२. सोमवार	तिथि – २ - ९ मृगसिर, रोहणी, अनुराधा, उत्तराफाल्गुनी, हस्त श्रवण, शतभिषा, पुष्य
३. मंगलवार	तिथि – ३ - ६ - ८ - १३ अश्विनी, रेवती, उत्तराभाद्रपद, मूल, विशाखा, उत्तराफाल्गुनी, कृत्तिका, मृगसिर, पुष्य, अश्लेषा
४. बुधवार	तिथि – २ - ७ - १२ अनुराधा, श्रवण, ज्येष्ठा, पुष्य, हस्त, कृत्तिका, रोहणी, पूर्वाषाढ, उत्तराफाल्गुनी
५. गुरुवार	तिथि – ५ - १० - ११ - १५ पुष्य, अश्विनी, पुनर्वसु, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ, पू० भा० अश्लेषा, धनिष्ठा, रेवती, स्वाति, विशाखा, अनुराधा
६. शुक्रवार	तिथि – १ - ६ - ११ - १३ रेवती, अश्विनी, पूर्वाषाढ, उत्तराषाढ, अनुराधा, मृगसिर, श्रवण धनिष्ठा, पूर्वाफाल्गुनी, पुनर्वसु
७. शनिवार	तिथि – ४ - ८ - ९ - १४ रोहणी, श्रवण, धनिष्ठा, अश्विनी, स्वाति, पुष्य, अनुराधा, मघा, शतभिषा

शुभाशुभ विशेष योग चक्र

क्रमाक	नामयोग	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	फल	त्याज्य घड़ी
१	आनद	अश्विनी	मृगसिर	अश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उत्तराषाढ	शतभिषा	सिद्धि	०
२	कालदण्ड	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभिजित्	पू० भा०	मृत्यु	सर्व
३	धूम्र	कृतिका	पुनर्वसु	पू०फा	स्वाति	मूल	श्रवण	उ० भा०	दुख	आदि १ घड़ी
४	प्रजापति	रोहणी	पुष्य	उ० फा	विशाखा	पू षा	धनिष्ठा	रेवती	सौभाग्य	०
५	सौम्य	मृगसिर	अशलेषा	हस्त	अनुराधा	उ षा	शतभिषा	अश्विनी	सुख	०
६	ध्वाक्ष	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभिजित्	पू भा	भरणी	धनक्षय,	आदि ५
७	ध्वज	पुनर्वसु	पू फा	स्वाति	मूल	श्रवण	उ भा	कृतिका	सौभाग्य	०
८	श्रीवत्स	पुष्य	उ फा	विशाखा	पू षा	धनिष्ठा	रेवती	रोहणी	सपत्ति	०
९	वज्र	अश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उ षा	शतभिषा	अश्विनी	मृगसिर	क्षय,	आदि ५
१०	मुद्गर	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभिजित	पू भा	भरणी	आर्द्रा	लक्ष्मीनाश	" ५
११	छत्र	पूर्वा फा	स्वाति	मूल	श्रवण	उ भा	कृतिका	पुनर्वसु	राज्यसन्मान	०
१२	मित्र	उ फा	विशाखा	पू षा	धनिष्ठा	रेवती	रोहणी	पुष्य	पुष्ठी	०
१३	मानस	हस्त	अनुराधा	उ षा	शतभिषा	अश्विन	मृग०	अश्लेषा	सौभाग्य	०
१४	पद्माख्य	चित्रा	ज्येष्ठा	अभिजित	पू भा	भरणी	आर्द्रा	मघा	धनप्राप्ति	आदि ४
१५	लुवक	स्वाति	मूल	श्रवण	उ भा	कृतिका	पुनर्वसु	पू षा	धनक्षय	" ४
१६	उत्पात	विशाखा	पू षा	धनिष्ठा	रेवती	रोहणी	पुष्य	उ फा	प्राणनाश	सर्व
१७	मृत्यु	अनुराधा	उ षा	शतभिषा	अश्विन	मृगसिर	अश्लेषा	हस्त	मृत्यु	सर्व
१८	काणाख्य	ज्येष्ठ	अभिजित	पू भा	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	क्लेश	आदि २
१९	सिद्धि	मूल	श्रवण	उ भा	कृतिका	पुनर्वसु	पू०फा०	स्वाति	कार्यसिद्धि	०
२०	शुभ	पू षा	धनिष्ठा	रेवती	रोहणी	पुष्य	उ फा	विशाखा	कल्याण	०
२१	अमृत	उ षा	शतभिषा	अश्विन	मृग०	अश्लेषा	हस्त	अनुराधा	राज्यसन्मान	०
२२	मुसल	अभिजित	पू भा	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	धनक्षय	आदि २
२३	गदाख्य	श्रवण	उ भा	कृतिका	पुनर्वसु	पू फा	स्वाति	मूल	अविद्या	"६
२४	मातग	धनिष्ठा	रेवती	रोहणी	पुष्य	उ फा	विशाखा	पू षा	कुलवृद्धि	०
२५	राक्षस	शतभिषा	अश्विन	मृगसिर	अश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उ०षा०	कष्ट	सर्व
२६	चर	पू०भा०	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठ	अभिजित	सिद्धि	आदि २
२७	स्थिर	उ भा	कृतिका	पुर्नवसु	पू फा	स्वाति	मूल	श्रवण	गृहारम्भ	०
२८	प्रवर्धमान	रेवती	रोहणी	पुष्य	उ०फा०	विशाखा	पू षा	धनिष्ठा	विवाह	०

१ - रवियोग [१]

सूर्य जिस नक्षत्र पर हो उस नक्षत्र से दिन का नक्षत्र ४,६,९,१०,१३,२० हो तो रवियोग होता है। यह सब प्रकार से सिद्धिकारक है। किंतु सूर्य नक्षत्र से दिन का नक्षत्र १,५,७,८,११,१५,१६ हो तो प्राणों का नाश करने वाला है। इसमें शुभ कार्य नहीं करना चाहिए।

२ - कुमारयोग

मंगल, बुध, सोम, और शुक्र इनमें से कोई एक वार एवं अश्विनी, रोहणी, पुनर्वसु, मघा, हस्त, विशाखा, मूल, श्रवण, पूर्वभाद्रपद इनमें से कोई एक नक्षत्र तथा १, ५, ६, १०, ११, कोई एक तिथि हो तो कुमार नाम का शुभ योग होता है। यह योग मित्रता, दीक्षा, व्रत, विद्या, गृहप्रवेशादि कार्यों में शुभ है।

परन्तु मंगलवार को १० तिथि, पूर्वभाद्रपद नक्षत्र, सोमवार को ११ तिथि, विशाखा नक्षत्र, बुधवार को ९ तिथि, मूल व अश्विनी नक्षत्र, शुक्रवार को १० तिथि, रोहणी नक्षत्र हो तो उस दिन कुमार योग भी होता हो तो शुभकारक नहीं है, क्योंकि इन दिनों में कर्क, संवर्तक, काण, यमघण्ट , आदि अशुभ योग होते हैं।

३ - राजयोग

मंगल, बुध, शुक्र, और रवि इनमें से कोई एक वार को भरणी, मृगसिर, पुष्य, पूर्वाफाल्गुणी, चित्रा, अनुराधा, पूर्वाषाढ, धनिष्ठा और उत्तराभाद्रपद इनमे से कोई एक नक्षत्र तथा २,३,७,१२,१५, इनमे से कोई एक तिथि हो तो राजयोग शुभकारक है।

४ - स्थिरयोग

गुरुवार या शनिवार को ४, ८, ९, १३, १४ इनमें से कोई एक तिथि, कृतिका, आर्द्रा, अश्लेषा, स्वाति, उत्तराफाल्गुनी, ज्येष्ठा, उत्तराषाढ़, शतभिषा, रेवती इनमें से कोई एक नक्षत्र हो तो शुभकारक स्थिरयोग होता है। शुभ कार्यो में यह श्रेष्ठ है।

५ - त्रिपुष्करयोग

मंगल, गुरुवार, या शनिवार को २, ७, १२ तिथि, कृतिका, पुनर्वसु, उत्तराफाल्गुनी, विशाखा, पूर्वभाद्र पद, उत्तराषाढ नक्षत्र हो तो शुभकारक त्रिपुष्कर योग होता है।

६ - द्वितीय त्रिपुष्कर योग (मुहूर्त ज्योतिष विज्ञान)

रवि, मंगल गुरु, शनि इनमें से कोई एक वार १, २, ६, ७, ११, १२ तिथि, विशाखा, उत्तराफाल्गुनी, पूर्वभाद्रपद, पुनर्वसु, कृतिका, उत्तराषाढ़ नक्षत्र हो तो शुभकारक द्वितीय त्रिपुष्कर योग है।

---

(१) ठ. फे., वा. सा. प्र. प्रतिष्ठा मुहूर्त पृ २३० श्लोक ५४ से ५७

७ - यमलयोग

मंगल, गुरुवार या शनिवार को २, ७, १२ तिथि मृगसिर, चित्रा, धनिष्ठा नक्षत्र हो तो यमल योग होता है

८ - द्विपुष्कर योग (मूहूर्त ज्योतिष विज्ञान)

रवि, मंगल गुरु, शनि को १, २, ६, ७, ११, १२ तिथि, मृगसिर, चित्रा, धनिष्ठा नक्षत्र के योग से द्विपुष्कर योग होता है। यह शुभ कार्यों में श्रेष्ठ है।

९ - पंचकयोग

धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद रेवती ये नक्षत्र पंचक कहलाते हैं। इनमें मृतक कार्य एवं दक्षिण गमन वर्जित है।

विशेष

त्रिपुष्कर, यमल, पंचक योगों में जो शुभ या अशुभ कार्य किए जाते हैं, वह क्रम से द्विगुना, तिगुना, पांच गुना तक फल देते हैं। जितने शुभ या अशुभ योग बताये हैं उन्हें प्रत्येक मुहूर्त में देखना आवश्यक है। धार्मिक या लौकिक कार्य शुभयोग में गुरु और शुक्र के अस्तकाल एवं मलमास को बचाकर करना चाहिए।

अशुभयोगों का परिहार (१)

१ तिथि और वार के योग से, तिथि और नक्षत्र के योग से, नक्षत्र और वार के योग से तथा तिथि, वार, नक्षत्र इन तीनों के योग से जो अशुभ योग होते हैं वे सब उड़ीसा, बंगाल, नेपाल देशों में वर्जनीय हैं, अन्यत्र नहीं। फिर भी अशुभ योग में कार्य नहीं करना चाहिए।

२ अशुभ योग के दिन यदि शुभ योग (रवि, राजयोग, कुमारयोग) हो तो अशुभयोग का नाश करके सिद्धि कारक होते हैं।

३ लग्न शुद्धि से कुयोगों का फल नाश होता है। अतएव लग्न शुद्धि पर विशेष विचार आवश्यक है।

४ दुष्टतिथि, दुष्टवार, अशुभयोग, विष्टि (भद्रा) जन्म नक्षत्र और दग्धतिथि यह सब मध्यान्ह के बाद अवश्य ही शुभ होते हैं।

५ तिथिवार और नक्षत्र से उत्पन्न होने वाले जो अशुभ योग कहे गये हैं वे सब बलवान् ग्रह युक्त लग्न में कभी समर्थ नहीं होते अर्थात् **यदि लग्न बल ठीक है तो वहाँ कुयोगों का दोष नहीं होता।**

---

(१) ठ. फे., वा. सा. प्र. पृ. २३३, २३४ श्लोक ६६, ६७, ६८, ६९, ७०, ७१

सिद्धयोगों का अशुभ फल

अमृत योग और सिद्धि योग दोनों जिस दिन साथ पड़ जावें तो वह दिन दुष्ट हो जाता है। जैसे मधु और घृत समान मात्रा में विष बन जाता है। कोई कहते हैं कि सिद्ध योग के साथ अमृत योग का विषाक्त प्रभाव ६ घड़ी (२ घंटा २४ मिनट) तक रहता है, बाद में शुभ हो जाता है। किंतु तत्कालीन लग्न बलशुद्धि समस्त कुयोगों को नाशकर शुभ फल प्रदान करता है।

शिलान्यास मुहूर्त [1]

तीनों उत्तरा, रोहणी, मृगसिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा हस्त, पुष्य, धनिष्ठा, शतभिषा, स्वाति इन नक्षत्रों में कार्य प्रारंभ करना और पुष्य तीनों उत्तरा, रेवती, रोहणी हस्त, मृगसिर, श्रवण इन नक्षत्रों में शिलान्यास करना। ईशान कोण में वास्तु विधान पूर्वक पंचरत्न, स्वर्ण, रजत, शिला, ताम्रकलश, दीपक आदि को एकत्रित करके कारीगर का सम्मान करके धार्मिक अनुष्ठान पूर्वक शिला स्थापित करना चाहिए।

मंदिर की नींव का मुहूर्त

मूल, अश्लेषा, विशाखा, कृतिका, तीनों पूर्वा, भरणी मघा इन नक्षत्रो में मंगल, बुधवार को नींव खनन करना चाहिए। नीव खनन के समय राहु सन्मुख न हो पृष्ठ में हो तो ध्यान पूर्वक पृष्ठ १६ पर लिखे **"राहु विचार"** को देखकर कार्य प्रारंभ करना चाहिए।

वेदी निर्माण मुहूर्त

रोहणी, मृगसिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त पुष्य, धनिष्ठा, शतभिषा, स्वाति – तीनों उत्तरा ये **नक्षत्र**, **तिथि** २, ३, ५, ७, ११, १३, **वार** रवि, चन्द्र, बुध गुरु शुक्र इनमें वेदी का निर्माण करना चाहिए।

मण्डप निर्माण मुहूर्त

नक्षत्र - मृगसिर, पुनर्वसु, पुष्य, अनुराधा, श्रवण तीनो उत्तरा। **तिथि** - २, ५, ७, ११, १२, १३ **वार** - चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र

प्रतिष्ठा नक्षत्र

मघा, मृगसिर, हस्त, तीनों उत्तरा, अनुराधा, रेवती, श्रवण, मूल, पुष्य, पुनर्वसु, रोहणी, स्वाति, धनिष्ठा यह **नक्षत्र** शुभ हैं। **तिथि** - शुक्ल पक्ष की १, २, ५, १०, १३, १५। कृष्णपक्ष की १, २, ५,। गुरुवार, सोम, बुध, शुक्र यह **वार** शुभ माने हैं।

---

(१) डा. ने. च., भा. ज्यो. पृष्ठ ४०६, ४०७ एवं ठ. फे., वा. सा. प्र पृ. २१३

संवत्सर अयन एवं मास शुद्धि

सिंहस्थ गुरु के वर्ष को छोड़कर वर्ष, मास, दिन, नक्षत्र और मंगलवार को छोड़कर दूसरे वार इन सबकी शुद्धि जैसे - विवाह कार्य में देखते हैं। उसी प्रकार प्रतिष्ठा कार्य में भी देखना।

गृह प्रवेश, बिम्ब की प्रतिष्ठा, विवाह, मुण्डन, यज्ञोपवीत व्रत आदि शुभ कार्य उत्तरायण सूर्य मे करना। दक्षिणायन सूर्य में नही करना। चैत्र पौष और अधिक मास सूर्य ग्रहण तथा चन्द्र ग्रहण एवं १३ दिवसीय पक्ष को छोड़कर मार्गशीर्ष माघ, फाल्गुन, वैसाख, ज्येष्ठ, आषाढ मास शुभ है। किंतु गुरु शुक्र की बाल, वृद्ध दशा न हो और अस्तावगल भी नही हो।

क्रूर तिथि यंत्र (चन्द्रमा राशि) से विचार करना

मेष १ - ५	कर्क ४ - ५	तुला ८ - १०	मकर १२ - १५
वृष २ - ५	सिंह ६ - १०	वृश्चिक ९ - १०	कुंभ १३ - १५
मिथुन ३ - ५	कन्या ७ - १०	धन ११ - १५	मीन १४ - १५

इन क्रूर तिथियों मे शुभ कार्य वर्जित है। उक्त राशि पर सूर्य, मंगल, शनि या राहु आदि कोई पापग्रह हों वे तब क्रूर तिथि मानना अन्यथा नहीं मानना।

ग्रह - मैत्री (ग्रहो का स्वाभाविक मित्र बल) (१)

रवि	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	गृहदशा
चन्द्र मंगल गुरु	सूर्य बुध	सूर्य चन्द्र गुरु	सूर्य शुक्र	सूर्य चन्द्र मंगल	बुध शनि	बुध शुक्र	मित्रगृही
बुध	मं. गु. शु. श.	शुक्र शनि	मंगल गुरु शनि	शनि	मंगल गुरु	गुरु	समगृही
शुक्र शनि	--	बुध	चन्द्र	बुध शुक्र	सूर्य चन्द्र	सूर्य चन्द्र मंगल	शत्रुगृही

(१) [illegible] श्लोक ९१-९५

कौन वार में प्रतिष्ठा शुभ है (१)

रविवार की प्रतिष्ठा प्रभावशाली होती है। सोमवार की प्रतिष्ठा कुशल मंगलकारी। मंगलवार की अग्निदाहकारक, बुधवार की मनवांछित फलदायक, गुरुवार की दृढ (स्थिर) शुक्रवार की आनंददायक, शनिवार की कल्पपर्यन्त अर्थात् सूर्य एवं चन्द्र जब तक हैं, तब तक स्थिर रहने वाली है। अतः **मंगलवार को बिम्ब प्रतिष्ठा नहीं करना चाहिये।**

लग्नशुद्धाशुद्धि विचार

१ लग्न से ग्यारहवें स्थान में समस्त ग्रह शुभ होते है। ३, ८ वें स्थान मे सूर्य, एवं शनि शुभ है, २, ३, स्थान में चन्द्रमा, ३, ६ स्थान में मंगल २, ३, ४, ५, ६, ९, १० स्थानों में बुध व गुरु २, ३, ४, ५, ९, १० स्थानों में शुक्र ३, ५, ६, ८, ९, १०, १२ स्थानों मे राहु शुभ माना है।

२ रवि, मंगल, शनि, राहु एवं शुक्र यदि सप्तम स्थान मे रहें तो स्थापना करने वाले आचार्य का, गृहस्थ का तथा प्रतिमा का भी शीघ्र विनाश होता है।

३ लग्न से ३, ६, १०, ११, स्थानो में रवि २, ३, ६, ९, १०, ११ स्थानों में चन्द्रमा ३, ६, ११ स्थानों में मंगल व शनि, १, २, ३, ४, ५, ९, १०, ११ स्थानों में शुक्र और ८, १२ स्थान छोड़कर शेष स्थानों में बुध एवं गुरु हो तो श्रेष्ठ है। अतएव **लग्नशुद्धि के साथ ही शुभ कार्य करना चाहिए।**

४ रवि, मंगल, शनि, राहु, केतु यदि १, ८, ५, ७ स्थानों में हो ८ स्थान मे शुभग्रह हो एवं १, ६, ८ स्थान में चन्द्रमा हो तो वह लग्न प्रतिष्ठा में त्यागने योग्य है।

लग्न चक्र (२)

द्वि स्वभाव	मिथुन, कन्या, धन, मीन	उत्तम
स्थिर	वृष, सिह, वृश्चिक, कुम्भ	मध्यम
चर	मेष, कर्क, तुला, मकर	अधम

(१) ठ. फे. वा. सा. प्र. पृ. २१०, उद्धरणरत्नमाला श्लोक १२ (२) ठ. फे., वा. सा. प्र. पृ. २३५

बिम्ब प्रवेश नक्षत्र (बिम्ब स्थापना)

शतभिषा, पुष्य, धनिष्ठा, मृगसिर, तीनों उत्तरा रोहणी, चित्रा अनुराधा, रेवती, नक्षत्र। चन्द्र, गुरु शुक्रोदय में शुभ हैं। शुभ तिथि और शुभवार में वेदी पर बिम्ब स्थापन करना शुभ है। बिम्ब स्थापना मध्यान्ह के पूर्व ही करना चाहिए।

प्रतिष्ठाकारक को अशुभ नक्षत्र

जन्म नक्षत्र १०, १६, १८, २३, २५, यह नक्षत्र प्रतिष्ठा कराने वाले यजमान के बचाना चाहिए।

स्वयंफलप्रद तिथियां

चैत्रशुक्ला १, वैशाखशुक्ला ३, अश्विन शुक्ला १०, कार्तिक शुक्ला १ आधाभाग, आषाढ़ शुक्ला ९, फाल्गुन शुक्ला २ दीपावली की प्रदोष वेला, तीर्थकरों के कल्याणकों की तिथियां शुभ हैं।

वर्गबल विचार

अवर्ग, कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग, यवर्ग, शवर्ग, आठ वर्ग हैं। उनके स्वामी अवर्ग का गरुड़, कवर्ग का विलाव, चवर्ग का सिंह, टवर्ग का श्वान, तवर्ग का सर्प, पवर्ग का मूषक, यवर्ग का हिरन, शवर्ग का मीढ़ा (बकरा) है अपने वर्ग से पंचम शत्रु है। चौथा मित्र, तीसरा सम है, प्रतिमा के चिन्ह पर विचार करना।

प्रतिष्ठा दोष [1]

अर्थहीनाऽथ कर्तारं मंत्रहीना तु ऋत्विजम्।
श्रियं लक्षणहीना तु ना प्रतिष्ठा समो रिपुः॥

अर्थ (द्रव्य) हीन प्रतिष्ठा यजमान का, मंत्रहीन प्रतिष्ठाचार्य का, लक्षण हीन प्रतिष्ठा, लक्ष्मी का नाश करती है और विधि हीन प्रतिष्ठा विनाशकारिणी होती है।

प्रतिष्ठा महाद्योग [2]

इत्थं मुहूर्त परिशोध्य सम्यक् राजाज्ञया संघ निमंत्रणार्थ,
विधानकृत्यस्फुट लेखनांका प्रेष्या पुरःपत्रविनीत रज्जूः।
आदिष्टिनं सदसि पूज्यविचार्यकार्यमात्सर्यसंशयितनिस्त्रपवाक्यहीनं,
पत्रं लतांतमलयादिभिरर्च्यदूरादामंत्रयेद्, गुणवतो बहुमानपूर्व॥
सहायन् ब्राह्मण्ये विधिवदतिथीन् कल्पनिरतान् मरुत्वन्तं सन्तं प्रकृतिविरतं कोशनिरतं।
परं चान्यं सत्रे सदसि विनयुंज्याद्यजनभृद् धृतौदार्याशंसुः प्रथम पठितार्हच्छ्रुतनुतिः।

---

(1) वृहद वास्तुमाला पृ. १७८ श्लोक ३५ (2) आ. ज. से. प्र. पाठ, पृ ४९ श्लोक २०३ से २०६

गुरुं नत्वा पृच्छेद्‌यजनसमनीतांबुधितटं परिप्राप्तुं कामो मुनिवरनिमित्तानि कथयन् ।
तदुद्देशे सम्यक् प्रणिधिनिहतात्मप्रतिभया स चाप्यालोकेत श्रितविजनदेशोपवसनः ।

शकुनावधारण (१)

भूमौ विधाय परिकर्मचतुष्कमध्ये चक्रं सुकूर्मविधिना परिभाव्य रम्यम् ।
देवांशसंस्थितिवता खलु सिद्धचक्रं मंत्रं यथोक्तविधिना परिजल्पनीयम् ।
स्वप्ने स्वरांगर्क्षविधाविधिज्ञः प्रातर्जिनाराधनसंस्तवं च ।
कृत्वोपदिश्येत यथाध्वरीयं शुभाशुभं यन्निशि लोक्यमानम् ॥

गोहस्तिशार्दूलमुनीश्वराणां चन्द्रार्यमाम्भोनिधिकल्पभाजाम् ।
शालेयमुक्ताफलपर्वतानां सौख्याय दृष्टिः शयने नितान्तम् ॥

समाप्तिकाले मनुजल्पनस्य वामाशुभांका निजनाडिकेष्टा ।
आरंभकाले खलु दक्षिणार्च्या स्वस्थस्य निर्णीतिकृतो जनस्य ॥

बाहोः परिस्फूर्तिरुरो नितंबतुंदस्तनानामपि सौख्यपात्रम् ।
धत्ते तु नित्यं विपरीतपक्षः स्यादेतदंगस्फुरणे निमित्तम् ॥

लग्ने विचार्ये सति कुंभवर्ज्य षष्ठाष्टमे चन्द्रमसा वियुक्ते ।
धर्मे गुरौ तद्‌दृशिनापि युक्ते वीर्ये तनौ वा बलवत्प्रदिष्टे ॥

तैलसर्पधरणीधरकंपमाक्षिकात्ततनुकूपनिपाताः ।
यद्यशुद्धशकुनेक्षणलब्धी शांतिकर्म विदधीत तदानीम् ॥

कूर्म चक्र (२)

<table>
<tr><td>ल क्ष</td><td colspan="3">क ख ग घ ङ</td><td>च छ ज झ ञ</td></tr>
<tr><td rowspan="3">श ष स ह</td><td>अं अः</td><td>अ आ</td><td>इ ई</td><td rowspan="3">ट ठ ड ढ ण</td></tr>
<tr><td>ओ औ</td><td>जप स्थान</td><td>उ ऊ</td></tr>
<tr><td>ए ऐ</td><td>ऌ ॡ</td><td>ऋ ॠ</td></tr>
<tr><td>य र ल व</td><td colspan="3">प फ ब भ म</td><td>त थ द ध न</td></tr>
</table>

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक २०७ से २१३ (२) वही, पृष्ठ ११९

यदि स्वप्न में बैल, हाथी, सिंह, मुनि, चन्द्रमा, सूर्य, समुद्र, कल्पवृक्ष, चावल, मोती, पर्वत दिखे तो शुभ है। यदि तेल, सर्प, पर्वतों का कंपन, शरीर पर मधुमक्खी लगना, कुऑं में गिरना आदि अशुभ स्वप्न दिखें तो धरती पर चावल से कूर्मचक्र बनाकर निम्न मंत्रों का जाप करें।

(१) जाप मंत्र - ओं ह्रीं अनाहत सिद्धचक्राधिपतये ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं हः स्वाहा
(२) ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौः ह्रः, श्रीसिद्धिचक्राधिपतयेऽष्टगुणसमृद्धाय फट् स्वाहा
(१०८ बार जाप करना।)

मंदिर एवं यज्ञ स्थल की शुद्धि (१)

मनोज्ञवर्णा सुरसा विशाला कार्कश्यवल्मीकशिलादिवर्ज्या।
दग्धादिदोषै रहिता जलाद्यारामादिसंस्था धरिणी प्रशस्ता॥

अहो धरायामिह ये सुराश्च क्षमंतु यज्ञाधिकृतिं ददंतु।
प्रीतिः पुराणा बहुवासयोगात् क्षितावतोऽस्मद्विनिवेदनं वः॥

तद्द्वादशांशेषु जिनेन्द्रगर्भगृहं तु मध्ये परिकल्पनीयम्।
तत्प्राचि सन्मण्डलमुन्नतांगं क्रियाकलापोचितमाविधेयम्॥

प्रेक्षागृहं साधनिकागृहं तु तदग्रभूमावपि सव्यपार्श्वे।
होमाह्वनीयोद्धरणं सुदक्षे पार्श्वे सभा प्रश्नकृतां मनोज्ञा॥

आचार्यशक्रस्थितिरस्य पृष्ठे स्नानासनादीनि तदंतिके च।
तथोत्तरस्यां जननोत्सवादि दीक्षावनं ज्ञानविभूतिसद्म॥

नृत्यालयादिः स्वकयोग्यभूमौ विकल्पनीयं परिणाहभागे।
गर्भालयात्पश्चिमदिग्विभागे सामग्रिका कल्पनमग्रभागे॥

संप्रेष्यकानामपि नृत्यगीतमतांडवं पुण्यविधानदक्षम्।
मार्गाविदूरा किल दानशाला सद्भेषजागारमपि क्रियावत्॥

निस्तारकेधर्मनिरूपणं च पृच्छश्रुतोद्घोषणवाचनादिः।
गर्भोत्सवे मातृजनोपवेशः पृथग्नृपागारनिवेशनं च॥

वेदी निर्माण विचार (२)

एवं विधिज्ञस्तु यथानुरूपं देशोचितं संविदधीत युक्त्या।
गर्भालये स्थापनमीश्वराणां वेदी त्रिभूरूर्ध्वविशालमध्या॥

तदग्रवेदीचतुरस्रकाष्ठकरप्रमाणा सुकुमारिकाभिः।
सुवासिनीभिश्च सुलिंप्यमाना सन्मृत्स्नया चित्रविचित्रशोभा॥

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक २१४ से २२१ (२) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक २२२ से २२९

अपक्वपक्वेष्टिकसंनिवेशा दृढा सिता दर्पणवत्समाना ।
अंतःस्थितैः षोडशभिर्लसद्भिः स्तंभैर्वितानोद्ग्रथितैः प्रयुक्ता ।
वेद्याः कोणे हस्तिहस्तोच्चवेदस्तंभान् दद्याद् बह्निदिक्तः सचूडान् ।
प्रादक्षिण्यात् पंचमांशं तु भूमौ दद्यादेवं षोडशस्तंभसंस्था ॥
वेदी चतुर्विधातत्र चतुरस्रा च पद्मिनी, श्रीधरी सर्वतो भद्रा दीक्षासु स्थापनादिषु ।
चतुरस्रा चतुः कोणा वेदी सौख्यफलप्रदा, केचिच्चैत्य प्रतिष्ठायां पद्मिनी पद्मसंनिभा ॥

विशेषः-

वेदियां चार प्रकार की हैं १ चौकोर, २ कमल के आकार पद्मनी,
३ अर्द्धचन्द्राकार श्रीधरी, ४ आठ खूंट की सर्वतोभद्रा ।
सो दीक्षा में प्रतिष्ठा में आवश्यकतानुसार उपयोग करना ।

प्रतिष्ठासारोद्धार मे कथन है कि चौकोर वेदी यदि अनुकूल नहीं हो अर्थात् प्रतिष्ठा पात्रों की संख्या अधिक हो तो जितनी वेदी की चौड़ाई हो उससे डेढ़ गुनी लम्बाई वाली वेदी बनाना शुभ मानी है । पंचकल्याणक में चौकोर, जन्मकल्याणक में अर्द्धचन्द्राकार, दीक्षा कल्याणक में सर्वतोभद्र, ज्ञान कल्याणक में पद्मिनी वेदी का उपयोग करें ।

जिनालय, वेदी एवं यज्ञवेदी के शिलान्यास पर विचार

भूमि परीक्षण के पश्चात् यदि वह स्थान अनुकूल हो तो भूमि शुद्धि करके पीछे दिए गए **'मंदिर निर्माण मुहूर्त'** के अनुसार शुभ लग्न में कार्य प्रारम्भ करना । भूमि सुप्त नक्षत्र का ध्यान आवश्यक है । उसे बचाकर नींव खनन का कार्य प्रारंभ करना । और **"वृष वास्तुचक्र"** के अनुसार कार्य करना ।

भूमि सुप्त नक्षत्र ज्ञान [1]

सूर्य के नक्षत्र से जिस दिन मुहूर्त कराना हो उस दिन के नक्षत्र तक गिनें भूमि सुप्त नक्षत्र में आवे तो नींव नहीं खोदना चाहिए ।

सूर्य नक्षत्र से ५, ७, ९, १२, १९, २६ इन नक्षत्रो में भूमि की सुप्त अवस्था होती है इन्हें बचाकर कार्य करना चाहिए ।

(१) मुहूर्त चक्रावली पृ. ८३

वृषवास्तुचक्र सूर्यभात्

नक्षत्र	अंग	फल	नक्षत्र	अंग	फल
३	मस्तक	अग्निभय	४	दक्षिणकोख	लाभदायक
४	अगले चरण	शून्यता	३	पूंछ	स्वामीनाश
४	पिछले चरण	स्थिरता	४	वाम कोख	दरिद्रता
३	पीठ	लक्ष्मी लाभ	३	मुख	पीड़ाकारक

चक्रानुसार ७ अशुभ ११ शुभ और १० अशुभ है, इसलिए भूमि सुप्त नक्षत्र, चक्र के अशुभ नक्षत्रों को त्यागकर मुहूर्त विचार करना आवश्यक है।

पंचकल्याणक पत्रिका

ओं ह्रीं अनन्तानन्तपरमसिद्धेभ्यो नमः ।

स्वस्ति श्री सम्प्रतिकालश्रेयस्करस्वर्गावतरणजन्माभिषवणपरिनिष्क्रमण केवलज्ञान-निर्वाणविभूषिताना सिद्धविद्याधाममहाराजमण्डलीकमुकुटबद्धबलकेशव। सार्वभौमादिकल्पज्योतिष्क दानवोरगेन्द्र किरीटमणिगणप्रभाव्योमापगाप्रवाहप्रक्षालित नखकिरणचन्द्रिका प्रतिहतपापान्धकाराणां चतुर्विंशति तीर्थकराणां भवनै पवित्रिते धरातले, हाटक कल क्ल ध्वजा पताकादि विराजिते, स्फटिकपद्मरागमणिजड़ितभित्तिरत्न भवेदिकालंकृते, सुरासुरमानवाद्यर्चितोत्तमसप्तधातुनिर्मितप्रतिमा सुशोभिते, वर्णाश्रमसमधिष्ठाने, श्रीमद्वैयाकरण काव्यकोष सिद्धान्त तर्कादिसमस्तशास्त्रपारंग वद्वज्जनसमाकीर्णे, विकशदिन्दीवरबहुविधकल्हारराजकेलिलोलकलहस चक्रवाकादिकलरवाकुलविमलशीतलसलिल ललित कासार भूषिते मंद सुगंध समीरणान्दोलित पादपोपविष्टशुकपिकमयूरकपोतादिपक्षीगण रवकूजतोपवन सुसज्जिते, शुभस्थाने . . नगरे, निवसतो नम देवेन्द्रचक्रमुकुटतटसमारोपितरत्नप्रभोद्योतक भगवच्चरणारविंद-दर्शनाभिलाषिनश्चतुर्विध धर्मपरायणा नष्टमदत्रिमूढताष्टदोषविवर्जितान्, साष्टांगसम्यग्दर्शन-धारकान् द्वाविंशतिगुणपालकान्, सम्यक्त्वपचभूषणभूषितान् श्रीजिनप्रासाद-प्रतिमाप्रतिष्ठासंघतीर्थयात्रागुरु पदस्थापनाद्यनेकशुभकार्य करणधुरीणानाहारादि-वितरण प्रवर्त्तितसन्मार्गान्, सिद्धान्तादिशास्त्रपरिशीलनोद्युक्तान्, सकलप्राणिग-णानुग्रहकरदया धर्मप्रवर्त्तकान्, धैर्यशौर्यगाभीर्यसोन्दर्याद्यनेकगुण गरिष्ठा, श्चतु संघोपासकान्, सकलसाधर्मिकजनान्प्रति . .. प्रान्तांतर्गता . . ग्रामतो (नगरतो) ....मिच्छ्रप्रकारार्थगर्भिता सविनयंजुहारेतिगी प्रोल्लसन्तुतरागुभयत्रशगिति, अपरञ्च श्रीमद्देवाधिदेवजिनेन्द्रपरमात्मा की असीम अनुकम्पा से हमारे भाप श्रीमज्जिनेद्रबिम्ब पंचकल्याणकप्रतिष्ठा (गजरथ) महोत्सव कराने के हुए हैं जिसका मुहूर्त शुभ मिति तदनुसार दिनाक से . तिथि ..... तदनुसार दिनाक. . पर्यन्त है।

निमंत्रण पत्रिका (२)

स्वस्तिश्रीसाम्प्रतं सर्वकल्याणकराणा स्वर्गावतरण जन्माभिषेक परिनिष्क्रमण केवल ज्ञान निर्वाणेतिपंचकल्याणकविभूतिविभूषितानाम् चतुर्विंशतितीर्थकराणानिलये पवित्रते, अतुल धनधान्यादिपरिपूरिते, वीतरागधर्मधारकसज्जनजनास्पदे, ... श्रीनगरे विराजमान अनेकगुणगणालंकृतस्याद्वादसिद्धान्तदक्षश्रावकोचितषट्कर्मनिरत चतुर्विधसंघसेवारत धर्मवत्सलश्रीमंत . ... योग लिखा .. .. . धर्मस्नेहाभिषिता जयजिनेन्द्र बांचियेगा । श्री १००८ मंगलोत्तमशरणभूत जिनेन्द्रदेव कुशल मंगल करें ।

अपरंच ...... (कार्य विवरण देकर कार्यक्रम देना ।)

मांगलिक कार्यक्रम

प्रथमदिवस- गुरुआज्ञा उपलंभन, आचार्य निमंत्रण, मंगलध्वज स्थापन, घट यात्रा, यज्ञवेदिका शुद्धि ।

द्वितीय दिवस - मण्डप प्रतिष्ठा, बिम्ब स्थापन, मंगलकलश स्थापन, दीप प्रज्ज्वलन, सकलीकरण, इन्द्र प्रतिष्ठा, नान्दी विधान । याग मण्डल विधान ।

गर्भ कल्याणक का पूर्व रूप - इन्द्र सभा तत्त्व चर्चा, इन्द्रासन कम्पायमान होना, रत्न वृष्टि , मातृसेवा, स्वप्न दर्शन, गर्भकल्याणक क्रिया । (अर्धरात्रि में)

तृतीय दिवस - गर्भकल्याणक का उत्तर रूप - महाराज नाभिराय का दरबार, तत्त्वचर्चा, स्वप्न फल, मातृ सेवा, प्रश्नोत्तर ।

चतुर्थ दिवस, जन्म कल्याणक :

जन्मक्रिया, जन्माभिषेक, जन्म संस्कारारोपण, ताण्डव नृत्य पालना, बाल क्रीड़ा ।

पंचम दिवस, तप कल्याणक - नाभिराय दरबार, राज्याभिषेक, भेंट समर्पण, नीलांजना नृत्य, वैराग्य, दीक्षा, संस्कारारोपण अंगन्यास ।

षष्ट दिवस- ज्ञान कल्याणक - आहार विधि अधिवासना, तिलकदान, नयनोन्मीलन, प्राणप्रतिष्ठा, सूरी मंत्र, केवलज्ञानोत्पत्ति, समवशरण रचना ।

सप्तम दिवस, निर्वाण कल्याणक - कैलास पर्वत पर ध्यानारूढ़ दर्शन, निर्वाण गमन, सिद्धाराधन सिद्धप्रतिष्ठा, विश्वशांति महायज्ञ, गजरथपरिक्रमा ।

अष्टमदिवस - मंदिर वेदी संस्कार, जिनबिम्ब स्थापन, कलशारोहण, ध्वजारोहण, पूर्णाहुति, यज्ञ दीक्षा विधि, समापन मण्डल विसर्जन ।

अन्य कार्यक्रम आयोजन के अनुसार दिये जावेंगे ।

प्रतिमा - प्रशस्ति (प्रथम)

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमोऽगणी ।
मगलं कुन्दकुन्दार्यो जैनधर्मोऽस्तु मंगलम् ।।

ओं नमः सिद्धेभ्यः । स्वस्ति श्री महावीर निर्वाणाब्दे..... ......विक्रमाब्दे ..... ,........ मासे .... पक्षे .... तिथौ .... वासरे श्री मूलसंघे दिगम्बर जैन कुन्दकुन्दाचार्याम्नाये बलात्कारगणे सरस्वतिगच्छे........ प्रदेशे .... नगरे (क्षेत्रे) श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक जिन बिम्ब प्रतिष्ठा (गजरथ) महोत्सवे .... सान्निध्ये .... वास्तव्य . ... प्रतिष्ठाचार्यत्वे ....वास्तव्य ...... अन्वये .... गोत्रोत्पन्न ....तस्यपुत्रेण ....प्रतिष्ठापितमिति ते नित्यं प्रणमन्ति ....श्री दिगम्बर जैन मंदिरे (क्षेत्रे) स्थापितमिदं जिनबिम्बं लोककल्याणकारकं भवतु ।

प्रतिमा प्रशस्ति (द्वितीय)

वीराब्दे .... सं० ....,..........मासे .. .. पक्षे ...... तिथौ ....वासरे मूलसंघे कुन्दकुन्दाम्नाये बलात्कारगणे सरस्वतिगच्छे.......... नगरे पंचकल्याणक जिनबिम्ब प्रतिष्ठोत्सवे . ...प्रतिष्ठाचार्येण .... प्रतिष्ठापितमिति तेनित्यं प्रणमन्ति । शुभं भूयात् ।

प्रतिमा प्रशस्ति (तृतीय)

वीराब्दे .... सं० .....,............ मासे .... तिथौ............. वासरे कुन्दकुन्दाम्नाये . ...नगरे पंचकल्याणकोत्सवे ....प्रतिष्ठाचार्येण .... प्रतिष्ठापितमिदं बिम्बं शुभं भूयात् ।

मंदिर - वेदी शिला - पाण्डुक शिला प्रशस्ति

श्री वीतरागाय नमः । स्वस्ति श्री मन्महावीर निर्वाणाब्दे ....विक्रमाब्दे ... . मासे .... पक्षे . ... तिथिमारभ्य . .... पर्यन्तसुतिथिषु पंचकल्याणकाभ्यन्तर जन्माभिषवण महोत्सवे ....तिथौ ....वासरे श्री दिगम्बर जैन कुन्दकुन्दाचार्याम्नाये सरस्वतिगच्छेबलात्कारगणे ....मण्डलान्तर्गत .... ग्रामे (नगरे) ....वास्तव्य .....गोत्रोत्पन्न ......वास्तव्य .....प्रतिष्ठाचार्य कर कमलेन ......(मंदिर वेदी पाण्डुक शिला) स्थाने स्थापितेयं पुण्यशालिनी पाण्डुकशिलेति शुभं भूयात् ।

यावत्प्रतिष्ठासमयावतीर्णो न स्यादपब्रह्म चतुः कषायाः ।
अन्यायभुक्तिर्व्यसनाशनानां वर्ज्या त्रिकालं समताग्रहेण ।।

अन्यायसर्वस्वकुभुक्तिकुत्सामिथ्याप्रलापादिविमोचनं च ।
पूर्वं प्रयोगेष्वतिचारमृष्टिः स्वतस्तवास्त्येव किमर्थमन्यैः ।।

इत्याद्याभिप्रायवशादुदीर्य व्रतग्रहः सद्गुरुणोपदेश्यः ।
मंत्रेण बद्धांजलिमस्तकाभ्या यज्वेद्रकाभ्यामपरैर्विधार्यः ।।

यजमान गुरुको नमस्कार कर श्री फलादि भेंट कर व्रत ग्रहण करें एवं मंगलकार्य आरंभ करने का आशीर्वाद एवं आज्ञा प्राप्त करें ।

ओं ह्रीं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुसमक्षकं दृढव्रतं समारुढंभवतु भवतु स्वाहा ।

प्रतिष्ठाचार्य निमंत्रण विधि

प्रतिष्ठाकारक, प्रतिष्ठाचार्य के निवास स्थान पर जाकर प्रार्थना करे कि न्यायपूर्वक अर्जित किये धन को जिनेन्द्रबिम्ब प्रतिष्ठा में लगाना चाहता हूँ। आपने प्रतिष्ठा कार्यो को प्रभावना के साथ कराया है, आप यज्ञविधि के ज्ञाता हैं अतः आप इस महोत्सव को सम्पन्न कराने की स्वीकृति प्रदान कीजिये ।

तत्पश्चात् प्रतिष्ठाचार्य का वस्त्र, राशि, श्रीफल आदि समर्पित कर मालादि से सम्मान कर स्वीकृति प्राप्त करें ।


श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक प्रतिष्ठा
ध्वजारोहण
श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक

मंगल ध्वजारोहण

मंत्र - शान्ति मंत्र

मण्डल : नवदेव मण्डल

यंत्र - (१) विनायक यंत्र
(२) नवदेव यंत्र

भक्तियां :-
(१) सिद्ध भक्ति
(२) श्रुत भक्ति
(३) तीर्थंकर भक्ति
(४) शान्ति भक्ति

सामग्री :-

(१) पूजन सामग्री
(२) मंगल ध्वज (तैयार)
(३) मंगल कलश (तैयार)
(४) दीपक (कांच एवं जाली सहित)
(५) पंचरंगा सूत
(६) हार मुकुट
(७) संगीत/बैण्ड

मंगलध्वजारोहण विधि

शुभ मुहूर्त एवं शुभ लग्न में कार्य प्रारंभ करना । मण्डप के सामने तीन कटनी वाला गोल चबूतरा तैयार कराना जिस पर मंगलध्वजा स्थापित की जावे । मंगलध्वजा का दण्ड प्रतिष्ठा मण्डप से दुगना या डेढ़ गुना लम्बा होना चाहिए । वह लकड़ी का हो तो उत्तम है यदि लकड़ी न मिले तो लोहे का लिया जा सकता है । यह लोहे का दण्ड तीन फुट नीचे जमीन में गड़ा हो, और तीन फुट का चबूतरा हो, इतना मजबूत कराना चाहिए । ध्वजा दण्ड में ही लगाना, यदि संभव न हो तो दण्ड के ऊपरी हिस्से पर गिर्री का उपयोग किया जा सकता है किंतु यह प्रतिष्ठा शास्त्र की आज्ञा नहीं है। वर्तमान समयानुसार लोह दण्ड गिर्री वाला उपयोग में लाया जाता है किन्तु लकड़ी का दण्ड ही लेना चाहिए ।

प्रतिष्ठाकारक लोक प्रभावक जुलूस की व्यवस्था बनायें, जिसमें ध्वजायें बैण्ड बाजे, कीर्तन पार्टी, महिलायें एवं इन्द्राणियां मंगलकलश सिर पर रख कर चलें । विमान में जिन बिब और विनायक सिद्धयंत्र विराजमान करें और थाली में मंगलध्वजा रखें । (मंगलध्वजा पर श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक बिम्ब प्रतिष्ठा एवं विश्वशांति महायज्ञ महोत्सव और जैनं जयतुशासनम् लिखा जाना चाहिए एवं ध्वजा पर सुंदर स्वस्तिक बनवायें । मंगलध्वजा का कपड़ा मजबूत एवं सुंदर होना चाहिए)

इस प्रकार जूलूस को श्री जैन मंदिर से प्रारंभ करें और यज्ञस्थल पर जावें । वहां पर पहले से शामयाना या चन्देवा लगवाना आवश्यक है । श्री जिनबिंब एवं विनायक यंत्र को उच्च स्थान पर कार्य स्थल पर विराजमान करें एवं मंगलध्वजा का थाल वहां ही रख लेना चाहिए । दर्शकों को बैठने की व्यवस्था बनायें । मंगलकार्य की निर्विघ्नता हेतु जुलूस में जिनबिब के आगे प्रतिष्ठाचार्य रक्षामंत्र पढ़ता हुआ पीले सरसों या पुष्पों को फेंकता जाय ।

सर्वप्रथम मंगलाष्टक, पात्र शुद्धि, दिग्बंधन, रक्षामंत्र, शान्तिमंत्राराधन कर यंत्राभिषेक पूर्वक विनायक यंत्र पूजा करें । तत्पश्चात् सभी श्रावक एवं प्रतिष्ठापात्र खड़े होकर हाथ जोड़े और विनयपूर्वक शान्त्याष्टक पाठ (हिन्दी) पढ़ें । लघु शान्ति मंत्र का जप एवं भक्तियां पढ़ें।

मंगलध्वजा स्थापन का समय

अष्टाविंशतितस्माद् एकविंशे चतुर्दशे ।
नवमे सप्तमे चैव दिने पूर्व ध्वजोत्सवे ॥

ध्वजभूमि/वेदी (चबूतरा) शुद्धि [१]

विहार काले जगदीश्वराणामवाप्तसेवार्थकृत्तापदान ।
हुत्वार्चितो वायुकुमारदेव त्व वायुना शोधय यागभूमिम् ।।

भो वायुकुमारसर्वविघ्नविनाशाय महीपूतां कुरु कुरु हूं फट् स्वाहा ।

विहारकाले जगदीश्वराणामवाप्तसेवार्थकृत्तापदान ।
हुत्वार्चितो मेघकुमार देव त्वं वारिणा शोधय यागभूमिम् ।।

भो मेघकुमारसर्वविघ्नविनाशायधरां प्रक्षालय २ अं हं सं वं ठं झं यः क्षः फट् स्वाहा ।

गर्भान्वयादौ महिताद्विजेन्द्रैनिर्वाणपूजासुकृत्तापदान ।
हुत्वार्चितो वह्निकुमारदेव त्वं ज्वालया शोधय यागभूमिम् ।।

भो अग्निकुमारसर्वविघ्नविनाशाय भूमिं ज्वालय २ अं हं सं वं ठं झं यः क्षः फट् स्वाहा ।

क्षेत्रस्थितदेवों से आज्ञा एवं आमंत्रण [२]

अहो धरायामिह ये सुराश्च क्षमन्तु यज्ञाधिकृति ददन्तु ।
प्रीतिः पुराणा बहुवासयोगात् क्षितावतोऽस्मद्विनिवेदनं वः ।।

ओं अस्मिन्यज्ञस्थाने स्थितदेवगणाः आज्ञाप्रदानं कुर्यात् विघ्ननिवारणार्थ अत्र आगच्छ आगच्छ । (मंगलध्वज के स्थान पर पुष्पक्षेपण कर आज्ञा प्राप्त करके श्री फल भेंटकर आमत्रित करें)

श्रीमज्जिनस्य जगदीश्वरता ध्वजस्य, मीनध्वजादिरिपुजालजयध्वजस्य ।
तन्न्यासदर्शनजनागमनध्वजस्य, चारोपणं विधिवदाविदधेध्वजस्य [३] ।।

ओं ह्री श्रीं क्षीं भूः स्वाहा विधियज्ञ प्रतिज्ञायै पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।
(ध्वजा स्थान पर पुष्प क्षेपण करें)

ध्वजदण्ड शुद्धि [३]

ज्ञानशक्तिमयी मत्वा ध्वजदण्डाग्रचूलिका ।
अनादिसिद्धमन्त्रेण स्नपनं ते करोम्यहम् ।।

ओं णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियांण, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं । चत्तारि मंगलं - अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं केवलिपण्णत्तोधम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा - अरिहंता लोगुत्तमा सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि - अरिहंते

---

(१) श्री ने. दे प्र. ति. पृष्ठ ६७० (२) आ. ज. से प्र. पा. श्लोक २७७ (३) प. म. ला. जै., प्र. ह. लि. डायरी

सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि । ओं ह्रीं श्रीं क्लीं अनादिसिद्धमंत्रेभ्योनमः पवित्रतरजलेन ध्वजदण्डशुद्धिं करोमि सर्वशान्तिं कुरुकुरुस्वाहा (प्रतिष्ठाकारक जल से शुद्धि करे । दर्शकगण ध्वजदण्ड पर पुष्प क्षेपण करें)

ध्वजदण्डाग्रभागस्थकोकिलात्रयवर्तिनः ।
वेणुदण्डस्य तस्याग्रे बध्नामि ध्वजकूर्चिकाम् ॥

ओं ह्रीं श्री क्षी ध्वजदण्डं मालामंगलसूत्रेण वेष्टयामि ।

ध्वजदण्ड को माला मंगल सूत्रसे वेष्टित करें ।

ध्वजागर्तशुद्धि

(जहां ध्वजा लगाना है उस गर्त की जलादि द्रव्यों से शुद्धि करना।)
ओं ह्रीं नीरजसे नमः (जलं) (गर्त में जल छोड़ें) ।
ओं ह्रीं शीलगंधाय नमः (सुगंधं) ।
ओं ह्रीं अक्षताय नमः (अक्षतं) ।
ओं ह्री विमलाय नमः (पुष्पं) ।
ओं ह्री दर्पमथनाय नमः (नैवेद्यं) ।
ओं ह्रीं ज्ञानोद्योताय नमः (दीपं) ।
ओं ह्रीं श्रुतधूपाय नमः (धूपं) ।
ओं ह्रीं अभीष्ट फलप्रदाय नमः (फलं) ।
ओं ह्री परम सिद्धाय नमः (अर्घ) ।
ओं ध्वजदण्डगर्ते पंचरत्नहिरण्यस्वस्तिक स्थापनं करोमि
(गर्त में चांदी का स्वस्तिक, पंचरत्न, पारद, पुष्प डालें)
सिद्ध भक्ति पढ़कर नौ बार णमोकार मंत्र पढें । पश्चात् नवदेवपूजन करें ।

मंगलकलश स्थापन [1]

अभिनवनवकुम्भान् पुण्यतीर्थाम्बुपूर्णान्
विधिवदिह निवेश्याभ्यर्च्य पुण्यध्वजाग्रे ।
कलशनिकटदेशे सर्वतः स्थापयामि
प्रधृत्तयजनयोग्यं मंगलद्रव्यजालम् ॥

(१) श्री जे. दे प्र. ति. पृष्ठ १८७

ओं ह्रां ह्री ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते श्रीमत्पद्म महापद्मतिगिंछकेसरिपुण्डरीक महापुण्डरीक गंगासिन्धु रोहिद्रोहितास्याहरिद्धरिकान्तासीतासीतोदानारी नरकान्ता सुवर्णरूप्यकूलारक्तारक्तोदाक्षीरांभोधिजलं स्वर्णघट प्रक्षिप्तं सर्वगंध पुष्पाढ्य आमोदकं पवित्रं कुरुकुरुझौं झौं वं वं मंमं हं हं संसं तंतं पंपं स्वाहा जलाभिमंत्रणम् । (जल के छीटे लगाकर) मंत्रोच्चारण कर कलश स्थापित करें ।

ओं ह्रीं स्वस्ति विधानाय मंगलकलश स्थापनं करोमि ।

दीपक स्थापन

रुचिरदीप्तिकर शुभदीपकं सकललोकसुखाकरमुज्ज्वलम् ।
तिमिर जालहरं प्रकरं सदा किल धरामि सुमंगलकं मुदा ।।

ओं ह्रीं अज्ञानतिमिरहरं दीपकं स्थापयामि ।

नवदेव पूजा [१]

अर्हन्तः सिद्धा आचार्या उपाध्यायाश्च साधवः ।
चैत्यचैत्यालयो धर्मो जिनशास्त्रं नव देवताः ।।
निर्विघ्नकार्यसिद्ध्यै आह्वायामि सुभक्तितः ।
प्रसिद्धान् नवदेवांस्तान् प्रतिष्ठादिमहोत्सवे ।।

ओं ह्रीं नवदेवसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ओं ह्रीं नवदेवसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ओं ह्री नवदेव समूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

स्थानासनार्थ प्रतिपत्तियोगान् सद्भावसन्मानजलादिभिश्च ।
ध्वजप्रतिष्ठासमये सु भक्त्या जिनादिकानादरतो यजेऽहम् ।।

ओं ह्री नवदेवेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीखण्डकर्पूरसुकुंकुमाद्यै गंधैः सुगधीकृतदिग्विभागैः ।
ध्वजप्रतिष्ठासमये सु भक्त्या जिनादिकानादरतो यजेऽहम् ।।

ओं ह्री नवदेवेभ्यः संसारताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

शाल्यक्षतैरक्षतदीर्घगात्रैः सुनिर्मलैश्चन्द्रकरावदातैः ।
ध्वजप्रतिष्ठासमये सु भक्त्या जिनादिकानादरतो यजेऽहम् ।।

ओं ह्री नवदेवेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

---

(१) प. मन्नूलाल जैन प्रतिष्ठाचार्य की हस्तलिखित डायरी से

अम्भोजनीलोत्पलपारिजातकदंबकुन्दादिवरप्रसूनैः ।
ध्वजप्रतिष्ठासमये सुभक्त्या जिनादिकानादरतो यजेऽहम् ।।

ओं ह्रीं नवदेवेभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

नैवेद्यकैः काचनभाजनस्थैः रसप्रपूर्णैर्नयनप्रियैश्च ।
ध्वजप्रतिष्ठासमये सुभक्त्या जिनादिकानादरतो यजेऽहम् ।।

ओं ह्रीं नवदेवेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपोत्करैर्ध्वस्ततमोवितानैरुद्योतिताशेषपदार्थजातैः ।
ध्वजप्रतिष्ठासमये सुभक्त्या जिनादिकानादरतो यजेऽहम् ।।

ओं ह्रीं नवदेवेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

तुरुष्ककृष्णागुरुचन्दनादिसच्चूर्णजैरुत्तमधूपवर्गैः ।
ध्वजप्रतिष्ठासमये सुभक्त्या जिनादिकानादरतो यजेऽहम् ।।

ओं ह्रीं नवदेवेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

लवंगनारिंगकपित्थपूग श्रीमोचचोचादिफलैः पवित्रैः ।
ध्वजप्रतिष्ठासमये सु भक्त्या जिनादिकानादरतो यजेऽहम् ।।

ओं ह्रीं नवदेवेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीचन्दनाद्यक्षततोयमिश्रं विकासिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
ध्वजप्रतिष्ठासमये सु भक्त्या जिनादिकानादरतो यजेऽहम् ।।

ओं ह्रीं नवदेवेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा

प्रत्येक अर्घ

निःशेषदोषेंधनधूमकेतुमपारसंसारसमुद्रसेतुम् ।
यजे समस्तातिशयैकहेतून् श्रीमज्जिनानंबुजकर्णिकायाम् ।।

ओं ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

तत्पूर्वपत्रे परितः पुरस्तात् दुष्टाष्ट कर्माणि विनाशकान् च ।
लोकाग्रचूडामणिसंनिभास्तान् सिद्धान्यजे शान्तिकरान्नराणाम् ।।

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सूरि सदाचारविचारसारानाचारयन्तं स्वपरान्यथेष्टम् ।
दुष्टोपसर्गैकनिवारणार्थं समर्चयाम्यक्षतगंधधूपैः ।।

ओं ह्रीं आचार्यपरमेष्ठिने अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीधर्मशास्त्राण्यनिशं प्रशान्त्यै पठंति येऽन्यानपि पाठयन्ति ।
अध्यापकांस्तान् परमाब्जपत्रैः स्थितान् चरित्रान् परिपूजयामि ।।

ओं ह्रीं उपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

वैराग्यमन्तर्वचःसु परं प्रसिद्धं सत्यं तपो द्वादशधा शरीरे ।
एषामुदक्पत्रगतान्पवित्रान्साधून् सदा तान् परिपूजयामि ।।

ओं ह्रीं साधुपरमेष्ठिने अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

कृत्याकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान्नित्यंत्रिलोकीगतान् ।
वंदे भावनव्यंतरद्युतिवरान् स्वर्गामरावासगान् ।।

सद्गन्धाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलैः ।
नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा दुष्कर्मणां शान्तये ।।

ओं ह्रीं कृत्याकृत्रिमत्रिलोकवर्तिश्रीजिनालयेभ्योऽर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

यावन्ति जिनबिम्बानि विद्यन्ते भुवनत्रये ।
तावन्ति सततं भक्त्या त्रिशुद्धया पूजयाम्यहम् ।।

ओं ह्रीं त्रिलोकवर्तिवीतरागबिम्बेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्हद्वक्त्रप्रसूतं गणधररचितं द्वादशागं विशालं ।
चित्रं बह्वर्थयुक्तं मुनिगणवृषभैर्धारितं बुद्धिमद्भिः ।।

मोक्षाग्रद्वारभूतं व्रतचरणफलं ज्ञेयभावप्रदीपं ।
भक्त्या नित्यं प्रवन्दे श्रुतमहमखिलं सर्वलोकैकसारम् ।।

ओं ह्रीं जिनागमेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

आराधकानभ्युदये समस्तान्निःश्रेयसे वा धरति ध्रुवं यः ।
तं धर्ममाग्नेयविदिग्दलान्तः संपूजये केवलिनोपदिष्टम् ।।

ओं ह्री जिनधर्माय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

ध्वजारोहणमंत्र[१]

रत्नत्रयात्मकतयाभिमतेऽत्रदण्डे, लोकत्रयप्रकृतकेवलबोधरूपम् ।
संकल्पपूजितमिदं ध्वजमर्घ्यलग्ने, स्वारोपयामि सति मंगलवाद्यघोषे ।।

ओं णमो अरिहंताणं स्वस्ति भद्रं भवतु । सर्वलोकशान्तिर्भवतु स्वाहा ।

(ध्वजगान एवं वाद्यघोष के साथ ध्वज फहराना चाहिए) ।

(१) श्री ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ २०२ श्लोक ६२ (२) आ. ज. सं.., प्र. पा. श्लोक ३९८

तदग्रदेशे ध्वजदण्डमुच्चैर्भास्वद्विमानं गमनाद्विरुंधत् ।
निवेश्यलग्नेमै सुशुभोपदेश्ये महत्पताकोच्छ्र्यणं विदध्यात् ।। (२)

ओं ह्रीं अर्हजिनशासनपताकेसदोच्छ्रिता तिष्ठ तिष्ठ भव भव वषट् स्वाहा (अर्घम्) ।

अर्घ चढायें ।

सजयतु जिनधर्मो यावदाचन्द्र-तारं व्रत-नियम-तपोभिर्वर्धतां साधुसंघः ।
अहरहरभिवृद्धि यान्ति चैत्यालयस्ते तदधिकृतजनानां क्षेममारोग्यमस्तु ।। (१)

प्रतिष्ठाकारक, प्रतिष्ठाचार्य एवं सम्मिलित दर्शकगण सब ध्वजा पर पुष्प फेकें और नौ बार णमोकर मंत्र पढ़ें ।

शाति भक्ति (शांतिपाठ), पढकर विसर्जन करें ।

ध्वजा फहराने का फल (२)

मुक्ते प्राची गते केतौ सर्वकामानवाप्नुयात् ।
उत्तराशां गते तस्मिन् स्वस्यारोग्यं च सम्पदः ।।
यदि पश्चिमतो याति वायव्ये च दिशाश्रये ।
ऐशान्ये वा ततो वृष्टिं कुर्यात् केतुः शुभानि सः ।।
अन्यस्मिन् दिग्विभागे तु गते केतौ मरुद्वशात् ।
शान्तिकं तत्र कर्त्तव्यं दान-पूजा-विधानतः ।।

ध्वजगान

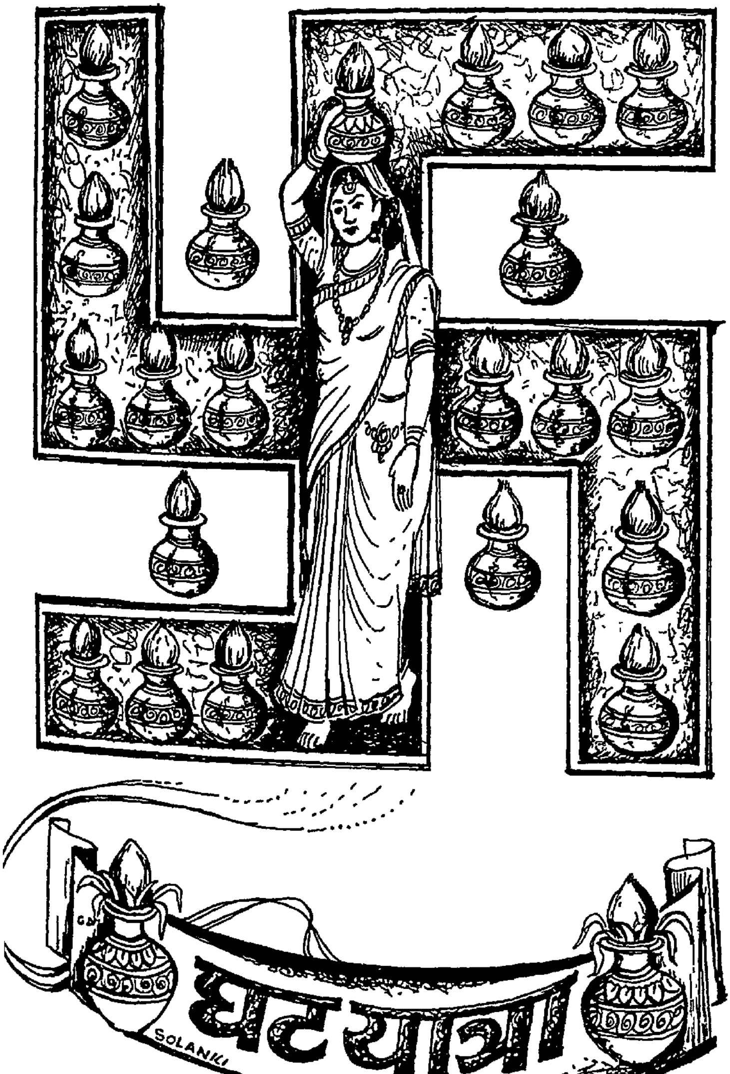
मगलमय केशरिया प्यारा, झण्डा ऊंचा रहे हमारा २
अखिल विश्व का है जो प्यारा, जैन जाति का चमकित तारा,
हम युवको का पूर्ण सहारा - झण्डा ऊंचा रहे हमारा -१
सत्य अहिसा का है नायक, शांतिसुधारस का है दायक
भक्त जनों का सदा सहारा, झण्डा ऊंचा रहे हमारा २
साम्य भाव दरशाने वाला, प्रेम क्षीर बरसाने वाला
जीव मात्र हरषाने वाला, झण्डा ऊंचा रहे हमारा - ३
भारत का सौभाग्य बढ़ाता, स्वावलम्ब का पाठ पढ़ाता,
वन्दे वीरम् नाद गुंजाता, झण्डा ऊंचा रहे हमारा - ४
आओ इसके नीचे आओ, महावीर संदेश सुनाओ,
बोलो महावीर जयकारा, झण्डा ऊंचा रहे हमारा - ५

(१) श्री नो. दे.. प्र. ति. पृष्ठ २०१ श्लोक ७१ (२) पं. आ. ध. प्र. सा. अध्याय ७श्लोक ७१ से ७३

ध्वजगीत

(तर्ज - राष्ट्र गीत जनगण मन ....)

अरिहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय, सर्व साधु सुखदाता, परमेष्ठि पंच सुखदाता।
इन्द्र नरेन्द्र यक्षसुर किन्नर, पण्डित बुधजन सारे
भवतम भंजन शीश नमावत, रक्षक तुम्ही हमारे
जब शुभ मन से ध्यावें, तब तुम आशिष पावें
हे सद्बुद्धी प्रदाता,
भवदुख से बाधा हरो हमारी, तुम्हें नमावत माथा
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय, जय हे !
परमेष्ठि पंच सुखदाता, अरिहंत सिद्ध ....
चारों गति में भ्रमत फिरे हैं, कष्ट अनेक उठाये
ज्ञान नयन जब खुले हमारे, तब तुम दर्शन पाये
सुखकी ये आश लगाये, हम सब तुम ढिग आये
जहा मिले सुखसाता,
नाथ तुम्हारे दर्शन से तो, मुक्ति पथ मिल जाता
जय हे, जयहे, जयहे, जय जय जय, जयहे !
परमेष्ठि पंच सुखदाता, अरिहंत सिद्ध ....।
जैनं जयतु शासनम् - वंदे वीर जिनेश्वरम्


घटयात्रा
SOLANKI

घटयात्रा

मंत्र	-	शान्ति मंत्र
मण्डल	-	८१ कोष्ठों का मण्डल
यंत्र		(१) विनायक यंत्र.
		(२) जल मण्डल यंत्र
भक्तियां	-	(१) सिद्ध भक्ति
		(२) नवदेव भक्ति
		(३) शान्ति भक्ति

सामग्री :-

(१) पूजन द्रव्य

(२) घट यात्रा कलश

(३) जुलूस ध्वज

(४) हार मुकुट

(५) रंगोली

(६) बैण्ड

घटयात्रा

मंदिर वेदी तथा कलश शुद्धि के लिए तीर्थ जल की आवश्यकता होती है। अतः किसी जलाशय पर गाजे-बाजे (जुलूस) के साथ जल लाना चाहिए। इस कार्य हेतु ९, २१, ३१, ५१, ८१ कलशों को ले जाकर जल भरना चाहिए। प्रत्येक कलश पर तूस या पीला कपड़ा, श्रीफल (नारियल) एवं मंगलसूत्र (मौली, कलावा) बांधना आवश्यक है। प्रत्येक कलश में हल्दी गॉठ, सुपारी पीले सरसों या पुष्प (पीले चावल) डालना चाहिए।

जलाशय पर बड़ी टेबिल, तख्त, बड़े पाटे पर नंद्यावर्त स्वस्तिक, पंचपरमेष्ठी मण्डल, सत्रहवलय मंडल या ८१ खण्ड का एक मण्डल बनाना चाहिए, जिस पर कलश रखे जा सकें। पानी भरने के लिए एक बड़े बर्तन की व्यवस्था करें, जिसमें पानी छानकर रखें और पिसी लवंग को पानी में डाल कर प्रासुक करें। यदि जलयंत्र हो तो वह पानी में डाल देवें अथवा केशर के द्वारा रकाबी पर लिखकर डाल देवे।

प्रथम मंगलाष्टक पाठ, दिग्बंधन, पात्रशुद्धि, अंगरक्षा मंत्र, शांतिमंत्राराधन कर सिद्धभक्ति पाठ पढ़कर नौ बार णमोकार मंत्र का जाप करें। जुलूस के आते जाते हुए मार्ग में प्रतिष्ठाचार्य रक्षामंत्र पढता हुआ पीले सरसों सभी दिशाओं में फैंकता जाय।

विनायकयंत्र अर्घ (१)

द्रव्याणि सर्वाणि विधाय पात्रे ह्यनर्घमर्घ वितरामि भक्त्या।
भवे भवे भक्तिरुदारभावाद् येषां सुखायास्तु निरन्तराय॥
ओं ह्रीं अर्हं मंगलोत्तमशरणभूतेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

नवदेव अर्घ

मध्येकर्णिकमर्हदार्यमनघं बाह्येऽष्ट पत्रोदरे
सिद्धान् सूरिवरांश्च पाठकगुरून् साधूंश्च दिक्पत्रगान्।
सद्धर्मागमचैत्यचैत्यनिलयान् कोणस्थदिक्पत्रगान्
भक्त्या सर्वसुरासुरेन्द्रमहितान् तानष्टधेष्ट्या यजे॥
ओं ह्रीं अर्हदादिनवदेवेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(१) समयानुसार पृष्ठ ९० से विनायक यंत्र पूजा करें।

तीर्थमण्डलपूजा

ओं ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्त ज्ञानशक्तयेऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
ओं ह्रीं श्रीप्रभृतिदेवतास्थाने चैत्यचैत्यालयेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
ओं ह्री गंगादेवीस्थाने चैत्यचैत्यालयेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
ओं ह्रीं सीताविद्धमहाह्रददेवस्थाने चैत्यचैत्यालयेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
ओं ह्री सीतोदाविद्ध महाह्रददेवस्थाने चैत्यचैत्यालयेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
ओं ह्री लवणोदकालोदमागधादितीर्थस्थाने चैत्यचैत्यालयेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
ओं ह्रीं सीतासीतोदादिमागधादितीर्थस्थाने चैत्यचैत्यालयेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
ओं ह्रीं संख्यातीत समुद्रदेवस्थाने चैत्यचैत्यालयेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
ओं ह्रीं लोकस्थिततीर्थस्थाने चैत्यचैत्यालयेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
ओं ह्री श्री ह्री धृति-कीर्ति-बुद्धि-लक्ष्मी-शान्ति पुष्ट्यः श्री दिक्कुमार्यो कलशमुखेष्वेतेषु नित्यनिविष्टा भवत् भवतेति स्वाहा । (जलाशय पर पुष्प क्षेपण करे)

जलशुद्धि मंत्र

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते श्रीमत्पद्ममहापद्मतिगिंछकेसरि पुण्डरीक महापुण्डरीक गंगासिन्धुरोहिद्रोहितास्याहरिद्धरिकान्ता सीता सीतोदानारीनरकान्ता सुवर्णरूप्यकूलारक्तारक्तोदाः क्षीराम्भोधिजलं सुवर्णघटप्रक्षिप्तं नवरत्नगन्ध पुष्पाक्षतादिबीजपूरितं पवित्रं कुरुकुरुझ्रौ झ्रौं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं स्वाहा
(जलाभिमंत्रणम्)
(जलपात्र से घटों में जल भरे)

इन्द्राणियों को कलश देने का मंत्र (१)

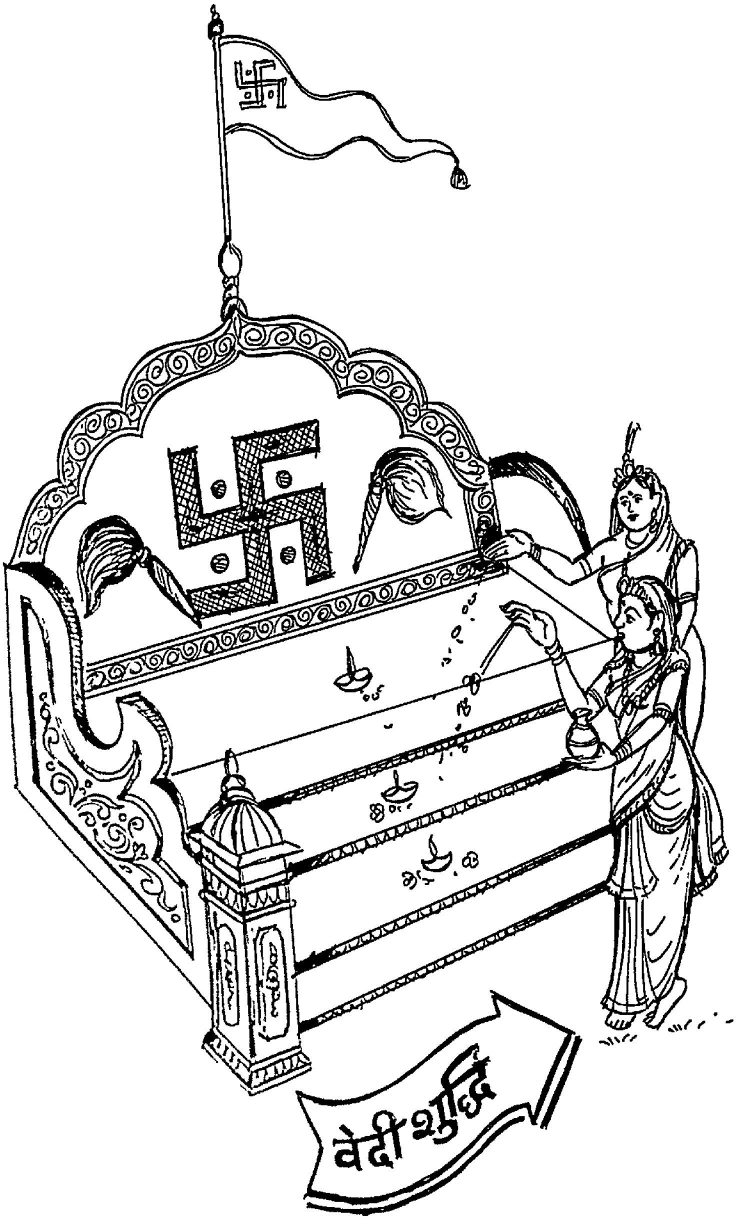
ओ क्षीराब्धि सर्वतीर्थोदकमयवपुषा स्वैरमाक्रोशतोऽस्य
क्षीरैः पद्माकरस्य प्रणयमुपगतान् शातकुम्भीयकुम्भान् ।
सानन्दं श्र्यादिदेवी निचयपरिचयोज्जृभमाणाप्रभावान्
एतानभ्युद्धरामो भगवदभिषवश्रीविधानाय हर्षात् ॥

ओं ह्रीं श्रीं अर्हं पंच परमगुरुभ्यो नमः स्वाहा

पश्चात् शांतिभक्ति पढ़कर विसर्जन करें। रक्षा मंत्र पढ़ता हुआ जुलूस सहित वापिस आवें। तख्त पर नंद्यावर्त स्वस्तिक बनाकर कलश रख दें। मंदिर वेदी या कलश जिसकी शुद्धि करना हो उसकी विधि करें ।

---

(१) पं. आ. ध. प्र. सा. अध्याय २ श्लोक ६१


वेदी शुद्धि

यज्ञवेदी शुद्धि विधान

मंत्र - (१) मातृका मंत्र

मण्डल - (१) नवदेव मण्डल

यंत्र - (१) विनायक यंत्र

(२) नवदेव यंत्र

भक्तियां - (१) सिद्ध भक्ति

(२) श्रुत भक्ति

(३) आचार्य भक्ति

(४) चैत्य भक्ति

(५) शान्ति भक्ति

सामग्री -

(१) पूजन द्रव्य

(२) मंगल कलश (तैयार)

(३) दीपक (काँच एवं जाली सहित)

(४) जिन बिम्ब विराजमान करने हेतु आवश्यक सामग्री

यज्ञवेदी शुद्धि क्रिया

घटयात्रा के पश्चात् वेदी शुद्धि करने के लिए मंगलाष्टक, दिग्बंधन, रक्षामंत्र, शांति मन्त्र पढ़कर स्वस्ति मंगलपाठ (श्री पंचकल्याण महार्हणाहो) पढ़ते हुए वेदी पर पुष्प क्षेपण करना चाहिए। तत्पश्चात् भक्तियां पढ़ें।

वेदी शुद्धि (१)

आयात भो वातकुमारदेवाः प्रभोर्विहारावसराप्तसेवाः।
यज्ञांशमभ्येतसुगन्धिशीतमृद्वात्मना शोधयताध्वरोर्वीम्॥

भो वायुकुमार ! सर्वविघ्नविनाशनाय वेदिकाभूमिशुद्धिं कुरु कुरु हूं फट् स्वाहा।
(वेदी का शुद्ध वस्त्र से मार्जन करना)

आयात भो मेघकुमारदेवाः प्रभोर्विहारावसराप्तसेवाः।
गृह्णीत यज्ञांशमुदीर्णशम्या गन्धोदकैः प्रोक्षत यज्ञभूमिम्॥

भो मेघकुमार ! वेदिधरां प्रक्षालय २ अं हं सं वं ठं झं यः क्षः फट् स्वाहा
(जल के छींटे वेदी पर देकर शुद्ध करें)

आयात भो वह्निकुमारदेवाः आधानविध्यादिविधेयसेवाः
भजध्वमिज्यांशमिमां मखोर्वीज्वालाकलापेन परं पुनीत

भो अग्निकुमार ! वेदिभूमिंज्वालय ज्वालय अं हं सं वं ठं झं यः क्षः फट् स्वाहा।
(कपूर जलाकर वेदी को अग्नि द्वारा शुद्ध करें)

उद्भात भो षष्टि सहस्रनागाः क्ष्माकामचारस्फुटवीर्यदर्पाः।
प्रतृप्यतानेन जिनाध्वरोर्वी सेकात्सुधागर्वमृजामृतेन॥

भोः षष्टि सहस्रनागाः जिनवेदिकारक्षां कुरुत कुरुत
(ईशान कोण में पुष्प क्षेपण करें)

काश्मीरकालागुरुमिश्रितेन कर्पूरभाजा हरिचन्दनेन।
वेदीसमंतादिह चर्चयामो निजात्मचर्चाचरणप्रसिद्ध्यै।

ओं क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः कुंकुमचन्दनादिना वेदीलेपनं करोम्यहम्।
(सर्वौषधि अष्टगंध आदि से वेदी का लेपन करावें।)

भव्यात्मनां दुष्कृतकर्मणौघं प्रक्षालनार्थं जिनयज्ञवेदीम्।
कुशोद्धतैः प्रोक्षणमंत्रपूतैः संप्रोक्षयामः परितः पयोभिः॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः जिनयज्ञवेदीप्रोक्षणं करोमि (वेदी को शुद्ध वस्त्र से प्रोक्षण करें)

---

(१) पं. आ. ध., प्र. सा. २/१३१ से १३४

मंगलं जिननामानि मंगलं मुनिसेवनं ।
मंगलं श्रुतमध्येयं मगलं जिनसद्वृषं ॥

ओं ह्रीं स्वस्ति विधानाय पुष्पांजलिं क्षिपेत् (वेदी पर पुष्प क्षेपण करें)

(यदि घट यात्रा में विनायक यंत्र ले जावें तो वेदी शुद्धि के पश्चात् उसे वेदी पर स्थापित करें) यदि समय हो तो जिन बिम्ब की स्थापना अभिषेक पूजन पूर्वक वेदी पर करे ।

वेदी पर हीरक (पंचरत्न) स्थापन

कोणेषु वेद्याश्चतुरस्रदेशे संस्थाप्य गाढं घनघातयोगात् ।
सद्धीरकान् शंकुवदासितांश्च काष्ठाविमूढी शिथिलीकरोतु [१] ॥

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा यज्ञवेदिका स्थाने हीरकस्थापनं करोमि ।

(वेदी पर प्रतिमा के नीचे हीरक (पचरत्न) एवं स्वस्तिक स्थापित करें)

ओं ह्रीं अष्टप्रातिहार्यसंयुक्तजिनबिम्बस्थापनं करोमि ।

(यह मंत्र पढ़कर जिनबिम्ब की स्थापना करें)

मंगल कलश स्थापन

भूशोधनादि विधिमाविधाय पूर्वादिदिक्षु प्रतिदिग्नवैव ।
कुम्भान् विशुद्धाम्बुभृतः प्रसिद्धान् संस्थाप्य सर्वान् परिपूजयामः ॥

ओं अद्य भगवतो महापुरुषस्य श्रीमदादिब्रह्मणो मतेऽव - सर्पिण्याः दुःखमकालस्य प्रथमपादे श्रीमद्वीर निर्वाणे ... .संवत्सरे ....ऋतौ .... मासानामुत्तमेमासे .. . .पक्षे तिथौ .... वासरे सर्वदूषणरहितेऽस्मिन् विधीयमाने .... .कर्मणि मण्डपे ....मन्दिरे नवरत्नगंधपुष्पाक्षतादि श्रीफल शोभित, मंगलकुम्भकलशस्थापन करोमि ।

झ्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा (ईशान कोण मे कलश स्थापन करें)

दीपक स्थापन

दीव्यत्प्रदीपकलिकोदनवर्णपूरैर्नीराजनार्थ विदितैर्वरभाजनस्थैः ।
नीराजयामि भगवज्जिनयज्ञवेदीमोजोगुणस्य यजतामभिवर्द्धनाय ॥

ओं ह्रीं अज्ञानतिमिरहरं दीपकं स्थापयामि ।

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ३३८

मण्डप प्रतिष्ठा

मण्डप प्रतिष्ठा

मंत्र	-	(१) शान्ति मंत्र
मण्डल	-	(१) नवदेव मण्डल
यंत्र	-	(१) नवदेव यंत्र
भक्तियां	-	(१) सिद्ध भक्ति
		(२) तीर्थंकर भक्ति
		(३) चैत्य भक्ति
		(४) शान्ति भक्ति
सामग्री	-	
		(१) पूजन सामग्री
		(२) ध्वजायें (तैयार)
		(३) सीढ़ी
		(४) रस्सी

मण्डप प्रतिष्ठा

मंगलाष्टक पाठ, दिग्बंधन, रक्षामंत्र, शान्तिमंत्र, एवं भक्तियां पढ़ें।

मण्डप प्रतिष्ठा विधान [1]

इन्द्रवेद्यपि हस्तानां विज्ञेयाष्टोत्तरं शतम् ।
शतेन्द्रो जिनबिम्बानां प्रतिष्ठां कुरुते स्वयम् ।

साष्टारत्निशतेन्द्रिवेदिरुचिरं शक्रः कुबेरेण यं
ज्यायांसंमणिमण्डपं विरचयत्यर्हत्प्रतिष्ठाकृते ।

अन्तर्निर्मितदिव्यवेदिविलसल्लक्ष्मीकटाक्षोद्भटः ।
सोयं मंगलमण्डपो विजयते जैनप्रतिष्ठोत्सवे ।।
ओं ह्रीं अर्ह बिम्बप्रतिष्ठाविधाने मण्डपशुद्ध्यर्थं पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्
(मण्डप पर पुष्प क्षेपण करें)

मण्डप प्रतिष्ठाक्रिया [2]

चतुर्णिकायामरसंघ एष आगत्य यज्ञे विधिना नियोगम् ।
स्वीकृत्य भक्त्या हि यथार्हवंशे सुस्था भवन्त्वाह्निककल्पनायाम् ।।
ओं चतुर्णिकायदेवाः स्वस्थाने तिष्ठत-तिष्ठत, विघ्नं निवारयत निवारयत, प्रतिष्ठाकार्ये सहयोगं कुरुत कुरुत । (मण्डप पर पुष्प क्षेपण करें)

आयात मारुतसुराः पवनोद्भटाशाः संघट्टसंलसितनिर्मलतन्तरीक्षाः ।
वात्यादिदोषपरिभूतवसुन्धरायां प्रत्यूहकर्म निखिलं परिमार्जयन्तु ।।
भो वायुकुमारदेवगणाः प्रतिष्ठास्थले तिष्ठत तिष्ठत, विघ्नं निवारयत निवारयत, प्रतिष्ठा कार्ये सहयोगं कुरुत कुरुत (मण्डप पर पुष्प क्षेपण करें)

आयात वास्तुविधिषूद्भटसंनिवेशा योग्यांशभागपरिपुष्टवपुः प्रदेशाः ।
अस्मिन् मखे रुचिरसुस्थितभूषणांके सुस्था यथार्हविधिना जिनभक्तिभाजः ।।
भोवास्तुकुमारदेवगणाः जिनेन्द्रभक्त्यर्थ स्वस्थाने तिष्ठत तिष्ठत प्रतिष्ठाकार्ये सहयोगं कुरुत कुरुत । (मण्डप पर पुष्प क्षेपण करें)

---

(१) पं. गप्पूलाल जैन प्रतिष्ठाचार्य की हस्त लिखित डायरी से
(२) आ. ज. से प्र. पा. श्लोक ३२२ से ३३२

आयात निर्मलनभः कृतसंनिवेशाः मेघासुराः प्रमदभारनमच्छिरस्काः ।
अस्मिन् मखे विकृतविक्रियया नितान्ते सुस्था भवन्तु जिनभक्तिमुदाहरन्तु ॥

भो मेघकुमारदेवगणाः पंचकल्याणकप्रतिष्ठोत्सवे मेघकृतविघ्ननिवारणार्थं स्वस्थाने तिष्ठत तिष्ठत, सहयोगं कुरुत कुरुत, (मण्डप पर पुष्प क्षेपण करें)

आयात पावकसुराः सुरराजपूज्यसंस्थापनाविधिषु संस्कृतविक्रियार्हाः ।
स्थाने यथोचितकृते परिवद्धकक्षाः सन्तु श्रियं लभतु पुण्यसमाजभाजाम् ॥

भो अग्निकुमारदेवगणाः अस्मिन् पंचकल्याणकप्रतिष्ठोत्सवे अग्निकृतविघ्ननिवारणार्थं स्वस्थाने तिष्ठत तिष्ठत, प्रतिष्ठाकार्ये सहयोगं कुरुत कुरुत ।
(मण्डप पर पुष्प क्षेपण करे)

नागाः समाविशत भूललसनिवेशाः स्वा भक्तिमुल्लसितगात्रतया प्रकाश्य ।
आशीविषादिकृतविघ्नविनाशहेतोः सुस्था भवन्तु निजयोग्यमहासनेषु ॥

इति जिनभक्तितत्परवास्तुकुमारदेवगणाः यथायोग्यस्थाने तिष्ठत, तिष्ठत, सर्व विघ्ननिवारणार्थ मण्डपोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् (मण्डप पर पुष्प क्षेपण करें)

पुरुहूतदिशि स्थितिमेहि करोद्धृतकाञ्चनदण्डगखण्डरुचे ।
विधिना कुमुदेश्वरसव्यश धृतपंकजशंकितकंकणके ॥

भो कुमुदप्रतीहारनिजपूर्वद्वारि तिष्ठ तिष्ठ, सर्वविघ्ननिवारणं कुरु कुरु
(पूर्व दिशा में पुष्प क्षेपण करें)

वामनाशु यमदिग्विभागतः स्थानमेहि जिनयज्ञकर्मणि ।
भक्तिभारकृतदुष्टनिग्रहः पूतशासनकृतामबन्ध्यकः ॥

भो वामनप्रतीहारनिजदक्षिणद्वारि तिष्ठ तिष्ठ, सर्वविघ्ननिवारणं कुरु कुरु
(दक्षिण दिशा में पुष्प क्षेपण करे)

पश्चिमासु विततासु हरित्सु भूरिभक्तिभरभूकृतपीठाः ।
अञ्जनस्वहितकाम्ययाऽध्वरे तिष्ठ विघ्नविलयं प्रणिधेहि ॥

भो अंजनप्रतीहारनिजपश्चिमद्वारि तिष्ठ तिष्ठ, सर्वविघ्न निवारणं कुरु कुरु
(पश्चिम दिशा में पुष्प क्षेपण करें)

पुष्पदन्तभवनासुरमध्ये सत्कृतोऽसि यत इत्थमवोचम् ।
उत्तरत्र मणिदण्डकराग्रस्तिष्ठ विघ्नविनिवृत्तिविधायी ॥

भो पुष्पदन्तप्रतीहारनिज उत्तरद्वारि तिष्ठ तिष्ठ, सर्व विघ्ननिवारणं कुरु कुरु
(उत्तर दिशा में पुष्प क्षेपण करे)

करकृतकुसुमानामञ्जलिं संवितीर्य धनदमणिसुरत्नाधीशपूजार्थसार्थे।
विकिरविकिरशीघ्रं भक्तिमुद्भाव्यनूनं निगदतु परमांके मण्डपोर्ध्वावकाशे ।।

इत्युक्त्वा मण्डपोपरि सर्ववर्णा चितपुष्पाक्षताः क्षेप्याः

(मण्डप के ऊपर पुष्प सहित अक्षत बरसावें)

पंचसूत्रं समादाय याजको वेष्टयेत्तदा ।
मण्डपं सुन्दरं कृत्वा वादित्रकलशब्दकैः ।।

ओं ह्रीं परमात्मब्रह्मणे नमो नमः, ओं ह्रीं जिनाय नमो नमः, ओं ह्रीं चतुर्मंगलाय नमो नमः, ओं ह्रीं चतुर्लोकोत्तमाय नमो नमः, ओं ह्रीं चतुःशरणाय नमो नमः, इति सर्वेषां यजमानानां सर्वोपद्रव शान्तिं कुरुकुरुस्वाहा ।

(मण्डप को तीन बार पंचवर्णी सूत्र से वेष्टित करें)

मण्डप पर ध्वजारोहण[१]

ततस्तंदंडमुद्धृत्य मण्डपं परितः श्रिया ।
महत्या भ्रमयित्वा त्रिः सुलग्ने मंत्रमुच्चरन् ।

ओं णमो अरिहंताणं स्वस्ति भद्रं भवतु सर्वलोकस्य शान्तिर्भवतु स्वाहा

(मण्डप पर ध्वजा लगावें) ।

स जयतु जिनधर्मो यावदाचन्द्रतारम् व्रतनियमतपोभिर्वर्द्धतां साधुसंघः ।
अहरहरभिवृद्धि यान्तु चैत्यालयास्ते तदधिकृतजनानां क्षेममारोग्यमस्तु ।।

इति पठित्वा विश्वकल्याणार्थ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् (सब दिशाओं में पुष्प क्षेपण करें) ।

(१) प. आ. ध. प्र. सा. ५/६७

सकलीकरण एवं मंत्राराधन

सकलीकरण एवं मंत्राराधन

मंत्र - (१) णमोकार महामंत्र

मण्डल - (१) पंचपरमेष्ठीमण्डल

यंत्र - (१) विनायक यंत्र

(२) वृहत्सिद्धचक्र यंत्र

भक्तियां - (१) सिद्ध भक्ति

(२) श्रुत भक्ति

(३) आचार्य भक्ति

(४) चारित्र भक्ति

(५) शान्ति भक्ति

सामग्री

(१) पूजन सामग्री

(२) पंचरंगा सूत्र

(३) यज्ञोपवीत

(४) मंगल कलश (तैयार)

(५) दीपक (कॉंच एवं जाली सहित)

(६) जाप माला

सकलीकरण (पात्रों की शुद्धि)

अंगन्यासविधि

मंगलाष्टक पाठ पढ़कर कार्य प्रारम्भ करना चहिए
अथेन्द्रराजः परिवद्ध कर्मा ह्याचार्यवर्यः कृतनायकश्च ।
स्थित्वा स चैत्योपकृतौ सुवेद्यां देहस्य शुद्धिं विदधातु मंत्रैः ॥
मनः प्रसत्यै वचसः प्रसत्यै कायप्रसत्यै च कषायहानिः ।
सैवाऽर्थतः स्यात् सकलीक्रियाऽन्यामंत्रैरु दारैः कृतकल्पनांगा ॥
प्राक् कल्पितानेकविदुष्टभावप्रत्याहृति तां पुरतो विधाय ।
आचार्य सिद्धश्रुतभक्तिपाठं , करोतु पूर्व विजनप्रदेशे ॥
शिरस्युरस्यक्षिगले ललाटे पंचाक्षरान् पिंडगधर्मसिद्ध्यै ।
आद्यन्तबीजादि विदर्भगर्भैर्गुरू पदेशादथवा विदध्यात् ॥
पूर्वमाचार्यैः सिद्धश्रुतचारित्रभक्तिपाठाः कर्त्तव्याः

अमृतस्नान मंत्र

ॐ ह्रीं अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतं स्रावय स्रावय सं सं क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां द्रीं द्री द्रावय द्रावय सं हं झ्वीं क्ष्वीं ठः ठः हं सः स्वाहा ।

(इस मंत्र से जल को मंत्रित कर शरीर पर छिटककर शुद्धि करें)

ॐ ह्रां णमो अरिहंताणं ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः (अंगूठा शुद्ध करें)

ॐ ह्री णमो सिद्धाणं ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः (तर्जनी अंगुली शुद्ध करें)

ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः (मध्यमा अंगुली शुद्ध करें)

ओ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं अनामिकाभ्यां नमः (अनामिका अंगुली शुद्ध करें)

ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः कनिष्ठकाभ्यां नमः (कनिष्ठा अंगुली शुद्ध करें)

ओ ह्रां ह्री ह्रूं ह्रौं ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः (दोनों हाथ शुद्ध करें)

ॐ ह्रां णमो अरिहंताणं ह्रां मम शीर्षं रक्ष रक्ष स्वाहा (शिर का स्पर्श करें)

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं मम वदनं रक्ष रक्ष स्वाहा (मुँह का स्पर्श करें)

ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं ह्रूं मम हृदयं रक्ष रक्ष स्वाहा (हृदय का स्पर्श करें)

ओं हौं णमो उवज्झायाणं हौं मम नाभिं रक्ष रक्ष स्वाहा (नाभि का स्पर्श करें)

ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः मम पादौ रक्ष रक्ष स्वाहा (पैरों का स्पर्श करें)

ओं ह्रां णमो अरिहंताणं ह्रां मां रक्ष रक्ष स्वाहा (शरीर पर पुष्प छोड़ें)

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं मम वस्त्रं रक्ष रक्ष स्वाहा (वस्त्रों पर पुष्प छोड़ें)

ओं ह्रूं णमो आइरियाणं ह्रूं मम पूजाद्रव्यं रक्ष रक्ष स्वाहा
(पूजा सामग्री के पास पुष्प छोड़ें)

ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं मम स्थलं रक्ष रक्ष स्वाहा (पूजा स्थल पर पुष्प छोड़े)

ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः सर्वं जगत् रक्ष रक्ष स्वाहा

(यह मंत्र पढ़कर सब यजमानों पर पुष्प क्षेपण करें)

पात्रेऽर्पितं चन्दनमौषधीशं शुभ्रंसुगंधाहृतचंचरीकं
स्थाने नवांके तिलकाय चर्च्यं न केवलं देहविकारहेतोः । [१]

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा मम सर्वांगशुद्धिं कुरु करु

(नौ स्थानों पर तिलक लगावें) ।

तिलक के नौ स्थान (२)

शिखा[१] शीश की जान ललाट[२] गिनीजिये कंठ [३] ह्रदय[४] अरुकान[५] भुजा[६] शुभ लीजिए ।
पीठ[७] हाथ[८] अरुनाभि[९] सरसशुभ लीजिए, तब जिनवर को जजै तिलक नव दीजिए ॥

रक्षासूत्रबंधन -

सम्यक्पिनद्धनवनिर्मलरत्नपंक्तिरोचिर्वृहद्वलयजातबहुप्रकारं।
कल्याणनिर्मितमहं कटकं जिनेशपूजाविधानललिते स्वकरे करोमि ॥

ओं ह्रीं नमोऽर्हते सर्व रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा
(दाहिने हाथ में रक्षासूत्र तीन बार लपेट कर बाधें)

यज्ञोपवीत धारण मंत्र

पूर्वं पवित्रतरसूत्रविनिर्मितं यत् प्रीतः प्रजापतिरकल्पयदंगसंगि ।
सद्भूषणं जिनमहे निजकंठधार्यं यज्ञोपवीतमहमेष तदाऽऽतनोमि ॥

ओं नमः परमशान्ताय शान्तिकराय पवित्री करणायाहम् रत्नत्रयस्वरुपं यज्ञोपवीतं दधामि, मम गात्रं पवित्रं भवतु अर्हं नमः स्वाहा ।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ४२३ (२) श्री भूधर दास जी कृत चर्चा समाधान

(निम्न नियमों को ग्रहण कर यज्ञोपवीत धारण करें)
(१) सप्तव्यसन का त्याग, (२) अष्टमूल गुणधारण करना, (३) अभक्ष्यत्याग, (४) बीड़ी, पान मसाला, तम्बाकू, सिगरेट आदि नशीले पदार्थों का त्याग, (५) ब्रह्मचर्य पालन, (६) भूमिशयन, (७) एकाशन, (८) रात्रिभोजनत्याग, (९) शुद्धभोजन, (१०) हिंसाजन्य तरीके से बनी वस्तुओं का त्याग। (११) विषय कषाय की मंदता (१२) व्यग्रता, चित्त की चंचलता एवं आलस्य त्याग। इन नियमों का यज्ञसमापन तक पालन करना आवश्यक है।

दिग्बंधन

ओं ह्रां णमो अरिहंताणं ह्रां पूर्व दिशातः समागत विघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा (बंद मुट्ठी से पूर्व दिशा में पुष्प या पीले सरसों फेकें)

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं दक्षिणदिशातः समागत विघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष - रक्ष स्वाहा (बंद मुट्ठी से दक्षिण दिशा में पुष्प या पीले सरसों फेकें)।

ओं ह्रूं णमो आइरियाणं ह्रूं पश्चिमदिशातः समागत विघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा (बंद मुट्ठी से पश्चिम दिशा में पीले सरसों या पुष्प फेकें)

ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं उत्तरदिशातः समागत विघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा (बंद मुट्ठी से उत्तर दिशा में पीले सरसों या पुष्प फेकें)।

ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः सर्वदिशातः समागत विघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा (बंद मुट्ठी से दशों दिशाओं में पीले सरसों या पुष्प फेकें)।

रक्षामंत्र

ओं ह्रूं क्षूं फट् किरिटिं किरिटिं घातय घातय परविघ्नान् स्फोटय स्फोटय सहस्रखण्डान् कुरुकुरु परमुद्रां छिन्द छिन्द परमंत्रान् भिन्द भिन्द क्षां क्षः वाः वाः ह्रूं फट् स्वाहा। (अपने ऊपर पुष्प क्षेपण करें।)

शान्ति मंत्र

ओं नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषदोषकल्मषायदिव्य तेजोमूर्तये नमः श्रीशान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वविघ्नप्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्यु विनाशनाय सर्वपरकृत्च्छुद्रोपद्रवनाशनाय सर्वक्षामडामरविघ्नविनाशनाय ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सर्वशान्तिं तुष्टिं पुष्टिं च कुरुकुरुस्वाहा (यह मंत्र पढ़कर पीले सरसों या पुष्प चारों दिशाओं में फेकें)। पश्चात् भक्तियां पढ़कर नौ बार णमोकार मंत्र पढ़े।

प्रतिक्रमण

हे भगवन् ! अरहंत देव मैं आपके समक्ष अपने मन, वचन, काय से किए हुए दोषों की आलोचना गर्हा आत्मनिन्दापूर्वक करके प्रतिक्रमण करता हूँ। द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के निमित्त से किसी जीव की विराधना अथवा प्राण-पीड़ा हुई हो, उसे मैं आत्मनिन्दा पूर्वक मन, वचन, काय की शुद्धि से परित्याग करता हूँ। एकेन्द्रिय, दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पति काय और त्रसकाय इन जीवों को मैंने स्वतः मारा हो, अन्य से मरवाया हो व मारने वाले की अनुमोदना की हो अथवा और किसी प्रकार से जीवों को सन्ताप दिया हो, अन्य से दिलवाया हो, सन्ताप देने वाले को भला माना हो अथवा प्राणियों के अंगोपांग का वियोग किया हो, कराया हो, करते हुए को भला माना हो इत्यादि अनेक प्रकार से जिन जीवों को पीड़ा हुई हो उनसे उत्पन्न हुए पापों का परित्याग करता हूँ। मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदना सहित जिन जीवों का मुझसे घात हुआ हो तो हे भगवन् ! वह सब पाप निरर्थक हों, तथा प्रमाद व अज्ञान से अतिचार व अनाचार से व्रत भंग का दोष लगा हो उसकी मैं मन वचन काय से उपस्थापना करता हूँ। दिवस संबंधी, शारीरिक, मानसिक और वाचनिक कार्य करने में जो दोष मैंने किए हों उनका प्रतिक्रमण करता हूँ।

अब मैं मन शुद्धि के लिए अपने किए हुए दोषों की आलोचना करता हूँ एवं दोषों से सर्वथा मुक्त होने के लिए श्री पंचपरमेष्ठी का चिंतन कर सिद्ध भक्ति में लीन होता हूँ। (सिद्ध-भक्ति पढ़कर नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ें)

नोट : जपकरने वाले जपगृह में जाकर विनायक यंत्र पूजा करें एवं प्रतिष्ठापात्र मुख्य वेदी पर ही विनायक यंत्र पूजा करें।

जाप विधि

सामग्री - सूची के अनुसार

सकली करण के पश्चात् जपस्थल की शुद्धि करके टेबिल लगायें, ऊपर चंदोवा बांधकर छत्र लगावें तथा सिंहासन पर पूर्व या उत्तर दिशा में विनायक सिद्ध यंत्र विराजमान करें। टेबिल के चारों कोनों पर चार मंगल कलश स्थापित करें और पूर्वोत्तर कोण में अर्थात् यंत्र की बायीं ओर एक मंगल कलश स्थापित करें।

मंगलकलश में पंचरत्न, चांदी का स्वस्तिक, सुपारी, हल्दी गांठ, पीली सरसों या पुष्प एवं १.२५ रुपया डालकर पीले या लाल तूस से श्री फल बांध कर सुसज्जित

करे। मंगलाष्टक, पात्र शुद्धि, दिग्बंधन, रक्षामंत्र एवं शांति मंत्राराधन करके यंत्राभिषेक विनायक यंत्र पूजा पेज २० से करके नवदेव पूजा करें।

नवदेवपूजन

अनंतकालसम्भवद्भवभ्रमणभीतितो निवार्य सन्दधत् स्वयं शिवोत्तमार्यसद्मनि।
जिनेश-विश्वदर्शि-विश्वनाथ-मुख्यनामभिः स्तुतं जिनं महामि नीरचन्दनैः फलैरहम् ॥१॥

ओं ह्री अनंतभवार्णवभयनिवारकानन्तगुणस्तुतायार्हते परमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मकाष्ठहुतभुक् स्वशक्तितः सम्प्रकाश्य महनीय भानुभिः।
लोकतत्त्वेमचले निजात्मनि संस्थितं शिवमहीपतिं यजे ॥ २ ॥

ओं ह्री अष्टकर्मविनाशकनिजात्मतत्त्वविभासक सिद्धपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सार्थवाहमनवद्यविद्यया शिक्षणान्मुनिमहात्मनां वरम्।
मोक्षमार्गमलघुप्रकाशकं संयजे गुरुवरं परमेश्वरम् ॥ ३ ॥

ओं ह्री अनवद्यविद्याविद्योतनायाचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादशांगपरिपूर्णसच्छ्रुतं यः परानुपदिशेत् पाठकः।
बोधयत्यभिहितार्थसिद्धये तानुपास्य यजयामि पाठकान् ॥ ४ ॥

ओं ह्री द्वादशांगपरिपूर्णश्रुतपाठनोद्यतबुद्धिविभवोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उग्रमर्घ्यतपसाभिसंस्कृतिं ध्यानतानविनिवेशितात्मकम्।
साधकं शिवरमासुखाप्तये साधुमीड्यपदलब्धयेऽर्चये ॥ ५ ॥

ओं ह्री घोरतपोऽभिसंस्कृतध्यानस्वाध्यायनिरतसाधुपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

यो मिथ्यात्वमतंगजेषु तरुणक्षुन्नसिंहायते एकान्तातपतापितेषु समरुत्पीयूषमेघाय ते।
श्वभ्राख्य प्रहिसंपतत्सु सदयं हस्तावलम्बायते स्याद्वादध्वजमागमं तमभितः संपूजयामो वयम् ॥ ६ ॥

ओं ह्री स्याद्वादमुद्रांकितपरमजिनागमायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनेन्द्रोक्तं धर्मं सुदशयुतभेदं त्रिविधया, स्थितं सम्यक्रत्नत्रयलतिकयापि द्विविधया।
प्रणीत सागारेतरचरणतो ह्येकमनघं दयारूपं वन्दे मखभुवि समास्थापितमिमम् ॥७॥

ओं ह्री सर्वज्ञवीतरागप्रणीतशाश्वतधर्मायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

कृत्या कृत्रिमचारु चैत्यनिलयान्नित्यं त्रिलोकीगतान्
वन्दे भावनव्यंतरान् द्युतिवरान् स्वर्गामरावासगान् ।
सद्गन्धाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलैः
नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा दुष्कर्मणां शान्तये ।।

ओं ह्रीं कृत्याकृत्रिमत्रिलोकवर्तिश्रीजिनालयेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

यावन्ति जिनचैत्यानि विद्यन्ते भुवनत्रये ।
तावन्ति सततं भक्त्या त्रिःपरीत्य नमाम्यहम् ।। ९ ।।

ओं ह्रीं त्रिलोकवर्तिवीतरागबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

शांति विसर्जन करके अग्रिम क्रियायें करावे ।

मंगल कलश स्थापन

ओं अद्य भगवतो महापुरुषस्य श्रीमदादिब्रह्मणो मतेऽस्मिन् विधीयमानेकर्मणि श्रीवीरनिर्वाण संवत्सरे .... , ...मासे ....पक्षे .... तिथौ ....वासरेप्रशस्तलग्ने .... कार्यस्यनिर्विघ्न समाप्त्यर्थ नवरत्नगंधपुष्पाक्षत श्रीफलादि शोभितं मंगल कलश स्थापनम् करोमि । श्रीं क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा ।

दीपक स्थापन

रुचिरदीप्तिकरं शुभदीपकं सकललोकसुखाकर मुज्ज्वलम् ।
तिमिरजालहरं प्रकरं सदा किल धरामि सुमगंलकं मुदा ।।

ओं ह्रीं अज्ञानतिमिरहरं दीपकं स्थापयामि ।

जप का संकल्प

ओं जम्बूद्वीपे भरत क्षेत्रे आर्यखण्डे .... देशे ....प्रान्ते .... नगरे ....वीरनिर्वाण सम्वत्सरे .... .ऋतौ ....मासे .... पक्षे .... तिथौ .... जैनमन्दिरे ....कार्यस्यनिर्विघ्नसमाप्त्यर्थं ....इति मंत्रस्य ....वासरादारंभ ....वासर पर्यन्तं करिस्यामहे । .... जापस्य संकल्पं कुर्मः निर्विघ्नं समाप्तिर्भवतु अर्हं नमः स्वाहा ।

यह संकल्प लेकर श्री फल यंत्र के पास चढ़ा देवें ।

मौन गृहण मंत्र -

ओं ह्रीं अर्ह ह्म्यूं मौनस्थितर्थम् मौनव्रतं गृह्णामि

आसन गृहण मंत्र -

ओ ह्री अर्ह निःसहि ह्रूं फट् दर्भासने उपविशामि ।

मालाशुद्धि मंत्र -

ओंह्रीं रत्नैः स्वर्णैः सूत्रैर्बीजैःरचिता जपमालिका सर्वजपेषु सर्वाणि वाञ्छितानि प्रयच्छन्तु ।

माला (जाप) को प्रासुक जल से धोकर थाली में स्वस्तिक बनाकर उसमें रखे उक्त मंत्र को ७ बार पढ़कर पुष्प क्षेपण करें ।

प्रतिष्ठाचार्य जपवालों से जाप मंत्र का उच्चारण कराकर मंत्रोच्चारण शुद्ध करा देवे । मंत्राराधन बहुत ही शुद्धतापूर्वक होना चाहिए ।

प्रतिदिन यंत्राभिषेक-पूजा-विसर्जन करके मंत्राराधन का कार्य करने के पूर्व एवं पश्चात् कार्योत्सर्ग करके ही स्थान छोड़ें । माला के अंत में दाहिने हाथ से धूपदान मे धूप क्षेपे । माला भी दाहिने हाथ से करना चाहिए । प्रतिदिन की माला का हिसाब लवग द्वारा लगाकर सावधानी पूर्वक अलग कागज पर लिख कर रखना चाहिए ।

मंत्र परिभाषा -

मकारं च मनः प्रोक्तं त्रकारं त्राणमुच्यते ।
मनस्त्राणत्वयोगेन मंत्र इत्यभिधीयते ।।

जप परिभाषा -

जकारो जन्म विच्छेदः पकारः पापनाशनः ।
तस्माज्जप इति प्रोक्तः जन्मपापविनाशकम् ।।

जाप एवं हवन में मंत्र का प्रयोग

जपकाले नमः शब्दो मंत्रस्यान्ते प्रयोजयेत्
होम काले पुनः स्वाहा मंत्रस्यायं सदा क्रमः ।
नोट : जाप मत्र मंत्राधिकार परिच्छेद पेज .... में देखें ।


इन्द्र प्रतिष्ठा

इन्द्र प्रतिष्ठा - नान्दीविधान

भक्तियां - (१) सिद्ध भक्ति

सामग्री -

(१) हार मुकुट

(२) मंगलकलश (तैयार)

(३) दीपक (काँच एवं जाली सहित)

(४) यज्ञोपवीत

(५) मौली

(६) रंगोली

इन्द्र प्रतिष्ठा (१)

दृग्बोधदेशव्रतरूपरत्नत्रयं भवेन्मेकलितैकभक्तम्।
आकर्मिका ब्रह्मनिर्वृत्तियुक्तं स्याद्यज्ञदीक्षाविधिना विशिष्टं ॥ (१ अ)

ओं ह्रीं अर्हद्देवयज्ञदीक्षांगीकारः (सब पात्रों पर पुष्प क्षेपण करें)

धृत्वाग्रतो मंगलयंत्रधाम्नि प्रसाधनान्यार्हतयज्ञपीठे ।
अनादिसिद्धादभिमंत्रपूतान्यंगेषु धार्याणि यथाप्रसादम् ॥

ओं ह्रां णमो अरिहंताणं, ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं, ओं ह्रूं णमो आइरियाणं, ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं इन्द्र इन्द्राण्योराभूषणानि पवित्राणि कुरु कुरु(जल से मुकुट माला आदि शुद्ध करें)

अमृतस्नान मंत्र

ओं ह्रीं अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतं स्रावय स्रावय सं सं क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय हं सं क्ष्वीं क्ष्वीं ठः ठः हं सः स्वाहा ।
(शरीर पर मन्त्रित जल के छींटे लगाकर शुद्धि करें)

धौतांतरीयं विधुकांतिसूत्रैः सद्ग्रंथितं धौतनवीनशुद्धम् ।
नग्नत्वलब्धिर्न भवेच्च यावत् संधार्यते भूषणमूरुभूम्याः ॥

इति अधोवस्त्रं अवधारयामि (अधोवस्त्र (धोती का) स्पर्श करें) ।

संव्यानमंचद्दशया विभांतमखंडधौताभिनवं मृदुत्वम् ।
संधार्यते पीतसितांशुवर्णमंशोपरिष्टाद् धृतभूषणांकम् ॥

इति दुकूलं अवधारयामि । (दुपट्टा का स्पर्श करें)

पात्रेऽर्पितं चंदनमौषधीशं शुभ्रं सुगंधाहृतचंचरीकम्।
स्थाने नवांके तिलकाय चर्च्यं न केवलं देहविकारहेतोः ॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः मम सर्वांगशुद्धिं कुरु कुरु।

यह मंत्र पढ़कर (१) शिखा, (२) मस्तक, (३) ग्रीवा, (४) हृदय, (५) दोनों भुजाएं, (६) पीठ , (७) कान, (८) नाभि और (९) हाथ में नौ तिलक लगावें ।

---

(१) आ. ज. से. प्र. पा. श्लोक ४२२ से ४३४ (१ अ) प्रतिष्ठातिलक पृ. १६

सम्यक् पिनद्धनवनिर्मलरत्नपंक्ति रोचिबृहद्वलयजातबहुप्रकारम् ।
कल्याणनिर्मितमहं कटकं जिनेशपूजाविधानललिते स्वकरे करोमि ।।

ओं णमो ऽर्हते सर्व रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा (दाहिने हाथ में रक्षा सूत्र बांधे)

यज्ञार्थमेव सृजतादिचक्रेश्वरेण चिन्हं विधिभूषणानाम् ।
यज्ञोपवीतं वितत हि रत्नत्रयस्य मार्गं विदधाम्यतोऽहम् ।।

ओं नमः परमशांताय शान्तिकराय पवित्रीकरणायाहं रत्नत्रयस्वरूपं यज्ञोपवीतं दधामि मम गात्रं पवित्रं भवतु अर्हं नमः स्वाहा । (यज्ञोपवीत धारण करें)

जिनांघ्रिभूमिस्फुरितां स्रजं मे स्वयंवरं यज्ञविधानपत्नी ।
करोतु यत्नादचलत्वहेतोरितीव मालामुररीकरोमि ।

ओं मालां अवधारयामि (माला धारण करें)

शीर्षण्यशुम्भन्मुकुटं त्रिलोकीहर्षाप्तराज्यस्य च पट्टबन्धम् ।
दधामि पापोर्मिकुलप्रहन्तृरत्नाढ्यमालाभिरु दञ्चितांगम् ।।

ओं मुकुटं अवधारयामि (मुकुट धारण करे) ।

मुक्तावलीगोस्तनचन्द्रमालाविभूषणान्युत्तमनाकभाजाम् ।
यथार्हसंसर्गगतानि यज्ञलक्ष्मीसमालिंगनकृद् दधेऽहम् ।।

ओं हारं अवधारयामि (हार धारण करें)

प्रोत्फुल्लनीलकुलिशोत्पलपद्मरागनिर्जत्करप्रकरबंधसुरेन्द्रचापम् ।
जैनेन्द्रयज्ञसमयेऽगुलिपर्वमूले रत्नांगुलीयकमहं विनिवेशयामि ।।

ओं रत्नमुद्रिकां अवधारयामि (मुद्रिका धारण करें)

ग्रैवेयकं मौक्तिकदामधामविराजितं स्वर्णनिबद्धयुक्तम् ।
दधेऽध्वरापर्णविसर्पणेच्छुर्महाधनाभोगनिरूपणांकम् ।।

ओं कण्ठाभरणं अवधारयामि (कण्ठाभरण धारण करें)

एकत्र भास्वानपरत्र सोमः सेवां विधातुं जिनपस्य भक्त्या ।
रूपं परावृत्य च कुण्डलस्य मिषादवाप्ते इव कुण्डले द्वे ।।

ओं कुण्डलं अवधारयामि (कुण्डल धारण करे)

- भुजासु केयूरमपास्तदुष्टवीर्यस्य सम्यक् जयकृत्ध्वजांकम् ।
दधे निधीनां नवकैश्च रत्नैर्विमण्डितं सद्ग्रथितं सुवर्णे ॥

ओं केयूरं अवधारयामि (बाजूबंद धारण करें) ।

अन्यैश्च दीक्षां यजनस्य गाढं कुर्वद्भिरिष्टैः कटिसूत्रमुख्यैः ।
संभूषणैर्भूषयतां शरीरं जिनेन्द्रपूजा सुखदा घटेत ॥

ओं कटिमेखलां अवधारयामि (कटिसूत्र धारण करें)

विधेर्विधातुर्यजनोत्सवेऽहं गेहादिमूर्च्छामपनोदयामि ।
अनन्यचेताः कृतिमादधामि स्वर्गादिलक्ष्मीमपि हापयामि ॥

(यह पढ़कर घर – गृहस्थी के कार्यो से उत्सवपर्यन्त निवृत रहने की प्रतिज्ञा करें)

(इति पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं पञ्चमहागुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।)

नान्दी विधान (१)

नान्दीविधान, पात्रों की मंत्रों द्वारा कल्पना जिनमदिर या प्रतिष्ठा मंडप में करना चाहिये। मण्डप के मध्य पाटला पर चावलों से नंद्यावर्त स्वस्तिक बनावें। उस पर मंगलकलश एवं दीपक रखें। पश्चात् प्रतिष्ठा पात्रों (यज्ञनायक (माता-पिता) इन्द्र इन्द्राणी आदि) की अमृत स्नान (मंत्र द्वारा शुद्धि) करें फिर पृथक् पृथक् पात्रों की कल्पना (संकल्प) करना चाहिये।

अथोपनीतेऽध्वरसंनिवेशस्थले समागत्य पुरध्रिगानैः।
वादित्रनादैः परिपूरिताशं नांदीविधानं पुरतो विधत्ताम्॥

शाल्यक्षतैः कुंकुमकर्दमात्तैर्विधाय नंद्यावर्तमर्जितांशे।
वेद्यां कृतार्घ्यं मणिदर्पणस्रग्वस्त्रावृतं सत्कलशं निवेशयेत्॥

रक्तवस्त्रफलदामभूषिते वेदिकांतरितभूतले शुचौ।
स्वस्तिके मणिसुवर्णशालिजैर्निर्मिते कुलबधूभिरादरात्॥

इन्द्रमध्वरकृतं सुचंदनैः कुंकुमात्ततिलजै सतीर्थगैः।
अंबुभिः कलशवारिधारया स्नापयेदवभृतार्थमंजसा॥

स्वस्तिमंत्रपरिपाठनपूर्वमाशिषां ततिमवाप्य हितार्थम्।
श्रोत्रियेण विहितक्रिययाऽमू यज्ञयोग्यपरिकर्मभृतौ स्तः॥

अमृत स्नान मंत्र

ओं ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा णमो अरिहंताणं सप्तर्द्धि समृद्धगणधराणां अनाहतपराक्रमस्ते भवतु भवतु ह्रीं नमः

(आचार्य, इन्द्र और यजमान पर जल के छींटे लगावें एवं पुष्प क्षेपण करें)

उपवासमेकभक्तं तद्दिवसे संविधाय भावनया।
त्रैषष्टिस्मरणकथानिपुणः पंक्त्यां तु वर्जयेद् भोज्यं॥

तत्प्रभृति सोऽपि याजकवर्यो मघवाऽऽज्ञया गुरुदिशा विचरेत्।
दानाध्ययनपरार्थिषु भक्त्या चेहानयेत्संघम्॥

रत्नत्रयांगमुपवीतमुरस्यथांगं देशव्रतस्य च सुकंकणमत्र हस्ते।
ब्रह्मव्रतांगमधुना स्वकटौ च मौंजी धृत्वारभे जिनमखं मखदीक्षितोऽहम्॥ (२)

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञान चारित्राय नमः।

(प्रतिष्ठा पात्रों पर पुष्प क्षेपण करे)

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक २५१ से २५७ (२) श्री ने. दे., प्र. ति. श्लोक ५६

यज्ञनायक (माता-पिता) की योग्यता एवं कल्पना [1]

पक्षिकाचारसंपन्नो धीसंपद्बन्धुबंधुरः ।
राज्यमानो वदान्यश्च यजमानो मतः प्रभुः ॥

आयुष्मंस्त्वयि वर्तन्ते यजमानगुणा अमी ।
यज्ञेऽस्मिन् याजमानत्वं साधुमन्यामहे त्वयि ॥[2]

इत्युच्चैर्वदता दत्तान्समंत्रान् गुरुणाक्षतान् ।
स्वीकृत्यांजलिनो पांशु मंत्रमुच्चार्यनामिते ॥

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा णमो अरिहंताणं अनाहतपराक्रमस्ते भवतु भवतु ह्रीं नमः स्वाहा । (माता-पिता पर पुष्प क्षेपण करें)

गोत्र परिवर्तन [3]

यद्वंश्यतीर्थकरबिंबमुदीर्य संस्था -
मुख्या तदीयकुलगोत्रजनिप्रवेशात् ।
संवृत्तगोत्रचरणप्रतिपातयोगा -
दा शौचमावहतु नोद्यभवप्रशस्तम् ॥

ओं तत्सदद्य भगवतो महापुरुषस्य श्रीमदादिब्रह्मणो मतेऽवसर्पिण्या दुःखमपंचमकालस्य प्रथमपादे .... वर्षगतेश्रीमद्वीरनिर्वाणे मासानामुत्तमे .... मासे, शुभे .... पक्षे .... तिथौ .... वासरे अस्मिन् जम्बूद्वीपस्य भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे .... नाम्नि नगरे मंत्राभिषव श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक बिम्ब प्रतिष्ठा कर्मणि .... नाम्नो यजमानस्य इक्ष्वाकवादिवंशे श्री ऋषभनाथादिसंताने काश्यपगोत्रे परावर्तनं यावदध्वरं भवतु भवतु क्रौं ह्रीं अर्हं नमः । (पुष्प क्षेपण करें)

इत्युक्त्वा यजमानस्य पट्टं बंधं (मुकुटबंध) कुर्यादाचार्यः यज्ञनायक (माता - पिता) को मुकुट बांधे माला पहिनावें तथा प्रतिष्ठाचार्य आशीष देवें ।

ओं सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे आसन्नभव्य आसन्नभव्य विश्वेश्वरे विश्वेश्वरे अर्जित पुण्ये अर्जित-पुण्ये जिन माता पिता भव । (माता पिता पर पुष्प छोड़ें ।)

नांदीविधान के पश्चात वंश-परिवर्तन हो जाने से कुटुंब संबंधि सूतक-पातक नहीं लगता समस्त पात्रों को व्यापारादि कार्य छोड़ कर प्रतिष्ठाकार्यो को समय पर ही करें ।

---

(१) श्री ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ ७३ श्लोक ४१ से ४३ (२) श्री ने. दे. प्र. ति. श्लोक ४२-४३ (३) आ. ज. से प्र. पा. पृष्ठ ६२ श्लोक २५८

इन्द्रकल्पना (स्थापना) [१]

देशजातिकुलाचारैः श्रेष्ठो दक्षः सुलक्षणः ।
त्यागी वाग्मी शुचिः शुद्धः सम्यक्त्वः सद्‌वृतो युवा ।। १ ।।

श्रावकाध्ययनज्योतिर्वास्तुसारपुराणवित् ।
निश्चयव्यवहारज्ञः प्रतिष्ठाविधिवित्प्रभुः ।। २ ।।

विनीतः सुभगो मन्दकषायो विजितेन्द्रियः ।
जिनेज्यादिक्रियानिष्ठो भूरिसत्वार्थबाधवः ।। ३ ।।

आयुष्मंस्त्वयि वर्तन्ते प्रोक्ता याजकसद्‌गुणाः ।
जिनाग्रयाजकतया सौधर्मेन्द्रोऽसि सोऽधुना ।। ४ ।।

इत्युच्चैर्वदता दत्तान्समंत्रान् गुरुणाक्षतान् ।
स्वीकृत्यांजलिनोपांशुमंत्रमुच्चार्य नामिते ।। ५ ।।

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा णमो अरिहंताणं अनाहत पराक्रमस्ते इन्द्रो भवतु भवतु ह्रीं नमः स्वाहा । (पुष्प क्षेपण करें)
(इन्द्र को मुकुट बांधे, माला पहिनावें)

शचीकल्पना (स्थापना) [२]

सौभाग्यामलचारुभूषणचरित्रालकृतां पावनी
कल्पद्रासवभामिनी व्रतगुणैः शीलैर्महाशोभनाम् ।

अन्यां वा कृतिकर्मसंग्रहकरी योग्यामुदीक्ष्य ध्रुवं
संदीक्षाव्रतशुद्धये वितनुतागाचार्यवर्यः स्वयम् ।।

अस्मिन् कर्मणि मात्रुपासनविधावेषा प्रशस्ता भव -
त्वेवं सभ्यजनाः प्रमाणयत सद्धर्मत्वबुद्ध्येति ताम् ।

मांगल्यादिविभूषणैः कृतमहोत्संहामिमां रक्षय
मंत्रोपास्तितया नियोज्य कुसुमक्षेपं विदध्योत्सवे ।।

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा णमो अरिहंताणं अनाहत पराक्रमस्ते शची भवतु भवतु ह्रीं नमः स्वाहा (पुष्प क्षेपण करें)

---

(१) श्री. ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ ११ एवं १२ श्लोक ३३ से ३८
(२) आ. ज. से., प्र. पा. पृष्ठ २३२ श्लोक ७१६, ७१७

यज्ञ दीक्षा विधि [1]

तुभ्यं परं स्वस्ति मयाऽभ्यधायि व्रतं गृहाणाखिलकर्मसिद्ध्यै ।
पूर्वगृहीतेष्वभिवृद्धिपुष्टिर्यथा भवेत्त्वं कुरु तत्तथैव ।।

यावत्प्रतिष्ठा समयावतीर्णो न स्यादपब्रह्म चतुःकषायाः ।
अन्यान्यभुक्तिर्वसनाशनानां वर्ज्या त्रिकालं समताग्रहेण ।।

अन्याय सर्वस्वकुभुक्तिकुत्सामिथ्याप्रलापादिविमोचनं च ।
पूर्वप्रयोगेष्वतिचारमृष्टिः स्वतस्तवास्त्येव किमर्थमन्यैः ।।

इत्याद्यभिप्रायवशादुदीर्य व्रतग्रहः सद्गुरुणोपदेश्यः ।
मंत्रेण बद्धांजलिमस्तकाभ्यां यज्वेन्द्रकाभ्यामपरैर्विधार्यः ।।

इस प्रकार समस्त पात्र, इंद्र इंद्राणी प्रतिज्ञाबद्ध हों कि वह प्रतिष्ठाकार्य समाप्त होने तक ग्रहण किये गये नियमों के साथ-साथ विजातीय के यहाँ भोजन एवं वस्त्रादिक का सन्मान, अन्यायपूर्वक धनार्जन मिथ्याप्रलाप, पर निंदा आदि कोई कार्य नहीं करेंगे । मन में इस प्रकार विचार करके हाथ जोड़ें पंचपरमेष्ठी को साक्षी मानकर कायोत्सर्ग करके संकल्प लें ।

व्रतग्रहण मंत्र [2]

ओं ह्रीं अर्हं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु समक्षकं दृढव्रतं समारूढं भवतु स्वाहा । यावत्कल्प समाप्तिस्तावदर्थितमंगेन पालयितव्यमिति मंत्रेण व्रतदानं कुर्यात् ।

तस्मिन् क्षणे तन्महती पुरस्तात् चतुर्विधं वाद्यगणं प्रशस्य ।
स्थाप्यं तदीशान् पुरु चारुवस्त्रैः सन्मानयेत्तत्र विधौ नियुज्यात् ।।

(यज्ञनायक का वस्त्रादिक द्वारा सन्मान करें)

एवं नान्दीविधानेन कृतारंभक्रियो नरः ।
सन्मंगलपुरस्कारैः सौख्यभागी भवेत्सदा ।।

(पात्रों पर आशीर्वाद स्वरूप पुष्प क्षेपण करें)

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक २४६ - २४९
(२) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक २५९ - २६०

अभिषेक एवं शान्तिधारा

सामग्री :

टेबिल

चौका

चंदोवा

छत्र

चंवर

प्रासुक जल

चंदन / केशर

अष्ट द्रव्य

शुद्ध वस्त्र पहिनें इन्द्र

कलश

अभिषेक पाठ (आचार्य माघनंदी कृत)

मगलाष्टक, पात्र शुद्धि, दिग्बंधन रक्षामंत्र, शांति मंत्र, आराधन के पश्चात् अभिषेक क्रिया करे।

श्री मन्नतामरशिरस्तटरत्नदीप्ति, तोयाविभासिचरणाम्बुजयुग्ममीशम्।
अर्हन्तमुन्नतपदप्रदमाभिनम्य, त्वन्मूर्तिषूद्यदभिषेकविधिंकरिष्ये॥

अथ पौर्वाह्निक देववन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल कर्मक्षयार्थ भावपूजा वंदना स्तव समेतं श्री पञ्चमहागुरुभक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम् (नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ें)

पात्रेऽर्पितं चंदनमौषधीशं, शुभ्रं सुगंधाहृतचंचरीकम्।
स्थाने नवांके तिलकाय चर्च्य, न केवलं देहविकारहेतोः॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः मम सर्वांग शुद्धिं कुरु कुरु।
(चंदन से तिलक लगायें एवं आभूषण पहनें)

याः कृत्रिमास्तदितराः प्रतिमा जिनस्य, संस्नापयन्ति पुरुहूतमुखादयस्ताः।
सद्भावलब्धिसमयादिनिमित्तयोगात्तत्रैवमुज्ज्वलधिया कुसुमं क्षिपामि॥

इति अभिषेक प्रतिज्ञानाय पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि।

श्रीपीठक्लृप्ते विशदाक्षतोघे, श्रीप्रस्तरे पूर्णशशांककल्पे।
श्री वर्तते[1] चन्द्रमसीतिवार्ता, सत्यापयन्तीं श्रियमालिखामि॥

ओं ह्री श्रीं अर्ह श्री लेखनं करोमि। 'श्री' लेखन करें

कनकादिनिभं कम्रं पावनं पुण्यकारणम्।
स्थापयामि वरं पीठं जिनस्नपनाय भक्तितः॥

ओं ह्री पीठस्थापनं करोमि। (सिहासन स्थापित करें)।

भृंगारचामरसुदर्पणपीठकुम्भ-तालध्वजातपनिवारकभूषिताग्रे।
वर्धस्व नन्द जय पाठपदावलीभिः, सिंहासने जिन! भवन्तमहं श्रयामि॥

ओं ह्रीं श्री धर्मतीर्थाधिनाथ! भगवन्निह स्नपनपीठे (सिंहासन) तिष्ठ तिष्ठ!

शातकुम्भीयकुम्भौघान् क्षीराब्धेस्तोयपूरितान्।
स्थापयामि जिनस्नानचन्दनादिसुचर्चितान्॥

ओं ह्रीं चतुःकोणेषु स्वतये चतुः कलशस्थापनं करोमि!
(चार कोनो मे चार कलशों पर स्वस्तिक बनाकर कलश स्थापित करें)

---

(१) 'श्री वर्तके' इति पाठान्तर

आनन्दनिर्भरसुरप्रमदादिगानै-र्वादित्रपूरजयशब्दकलप्रशस्तैः।
उद्गीयमानजगतीपतिकीर्तिमेनां, पीठस्थलीं वसुविधार्चनयोल्लसामि॥

ओं ह्रीं स्नपन पीठ स्थिताय जिनायार्घ निर्वपामीति स्वाहा !

(अर्घ चढ़ावें, वादित्र, नाद, तथा जय-जय शब्द का उच्चारण करे।)

कर्मप्रबन्धनिगडैरपि हीनताप्तं, ज्ञात्वापि भक्तिवशतः परमादिदेवम्।
त्वां स्वीयकल्मषगणोन्मथनाय देव, शुद्धोदकैरभिनयामि नयार्थतत्त्वम्॥

ओं ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन जिनमभिषेचयामः। (अभिषेक करें)

सकलभुवननाथं तं जिनेन्द्रं सुरेन्द्रै, रभिषवविधिमाप्तं स्नातकं स्नापयामः।
यदभिषवनवारां बिन्दुरेकोऽपि नृणां, प्रभवति विदधातुं भुक्तिसन्मुक्तिलक्ष्मीम्॥

ओं ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं हं झं झ्वीं झ्वीं हं सः झं वं ह्रः यः सः क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्षं क्षः क्ष्वीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः ह्रीं द्रां द्रीं नमोऽर्हते भगवते श्री मते ठः ठः इति बृहच्छांतिमंत्रेणाभिषेकं करोमि।

दूरावनम्रसुरनाथकिरीट कोटि, संलग्नरत्नकिरणच्छवि-धूसराङ्घ्रम्।
प्रस्वेदतापमल-मुक्तिमपि प्रकृष्टै, र्भक्तया जलैर्जिनपतिं बहुधाऽभिषिञ्चे॥

ओं ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तं कृपालुसन्तं श्रीवृषभादि महावीरपर्यन्त चतुर्विंशति तीर्थंकर परमदेवं मध्यलोके जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे भारत देशे.......प्रदेशे.........नगरे (ग्रामे) ....मंदिरे (मण्डपे) ....वीरनिर्वाणसंवत्सरेमासानामुत्तमेमासे......... .....पक्षे.......पुण्यतिथौ.....वासरेमुनि-आर्यिका-श्रावक-श्राविकाणां सकलकर्मक्षयार्थं जलेनाभिषेचयामः। (उदकचंदनादि...........बोलकर अर्घ चढ़ाना)

स्नात्वा शुभांवरधराः कृत यत्नयोगात् यंत्र निवेश्य शुचि पीठ वरेऽभिषिंचेत्।
ओं भूर्भुवः स्वरिह मंगलयंत्र मेतत् विघ्नौघवारक महं परिषेंचयामि॥

ओं ह्रीं विघ्नौघवारकं यंत्रं वयं परिषेंचयामः

अर्ह मंत्रं नमस्कृत्य रत्नत्रयतपोनिधिम्।
सिद्धयंत्रं स्नपयामि सर्वोपद्रवशान्तये॥

ओं ह्रीं श्री वृषभादिवीरान्तान् विनायकसिद्धयंत्रं च जलेन स्नपयामः।

(यहां पर शान्तिधारा करें)

पानीयचन्दनसदक्षतपुष्पपुञ्जनैवेद्यदीपकसुधूपफलव्रजेन।
कर्माष्टकक्रथनवीरमनन्तशक्तिं, सम्पूजयामि महसा महसां निधानम् ॥

ओं ह्रीं अभिषेकान्ते श्री वृषभादिवीरान्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा !

नत्वा मुहुर्निजकरैरमृतोपमेयैः स्वच्छैर्जिनेन्द्र तव चन्द्रकरावदातैः।
शुद्धांशुकेन विमलेन नितान्तरम्ये, देहे स्थितान् जलकणान् परिमार्जयामि ॥९॥

ओं अमलांशुकेन जिनबिम्बमार्जनं करोमि।

(प्रतिमाजी को शुद्ध और स्वच्छ वस्त्र से पौंछे)

स्नानं विधाय भवतोऽष्ट राहस्त्रनाम्नामुच्चारणेन मनसो वचसो विशुद्धिम्।
जिघृक्षुरिष्टिमिनतेऽष्टतयीं विधातुं सिंहासने विधिवदत्र निवेशयामि ॥

ओं ह्रीं सिंहासने जिन बिम्बं स्थापयामि।

(प्रतिमा को सिंहासन पर विराजमान करें)

जलगन्धाक्षतैः पुष्पैश्चरुदीपसुधूपकैः।
फलैरर्घैजिनमर्चे जन्मदुःखापहानये ॥

ओं ह्रीं पीठ स्थिताय जिनायार्घं निर्वपामीति स्वाहा !

इमे नेत्रे जाते सुकृतजलसिक्ते सफलिते, ममेदं मानुष्यं कृतिजनगणादेयमभवत्।
मदीयाद् भल्लाटादशुभकर्माटनमभूत्, सदेदृक्पुण्यार्हन् मम भवतु ते पूजनविधौ ॥
(पुष्पक्षेपण करें)।

मुक्ति - श्रीवनिता करोदकमिदं पुण्यांकुरोत्पादकं,
नागेन्द्र - त्रिदशेन्द्रचक्रपदवी-राज्याभिषेकोदकम्।
सम्यग्ज्ञानचरित्र-दर्शनलता-संवृद्धि-सम्पादकं,
कीर्तिश्रीजयसाधकं तव जिन स्नानस्य गन्धोदकम् ॥३॥

(गन्धोदक मस्तक पर लगावें)

शांतिधारा (१)

(१) **ओं नमः सिद्धेभ्यः। श्री वीतरागाय नमः। ओं ह्रीं णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं। चत्तारि मंगलं-अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा-अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो। चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरिहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं**

धम्मं सरणं पव्वज्जामि। ओं ह्रीं अनादिमूल मंत्रेभ्यो नमः सर्वशान्तिं तुष्टि पुष्टिं च कुरु कुरु।

(२) ओं नमोऽर्हते भगवते श्रीमते प्रक्षीणाशेषदोषकल्मषाय दिव्यतेजोमूर्तये नम श्रीशान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वविघ्नप्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्यु-विनाशनाय सर्व परकृच्छ्रुद्रोपद्रव विनाशनाय सर्वक्षामडामरविघ्न - विनाशनाय ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा नमः सर्वशान्तिं तुष्टिं पुष्टिं च कुरु कुरु।

(३) ओं ह्रूं क्षूं फट् किरिटिं किरिटिं घातय घातय परविघ्नान् स्फोटय स्फोटय सहस्रखण्डान् कुरु कुरु परमुद्रां छिन्द छिन्द परमंत्रान् भिन्द भिन्द क्षां क्षः वाः वाः ह्रूं फट् सर्वशान्तिं कुरु कुरु।

(४) ओं ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं अ सि आ उ सा अनाहत विद्यायै णमो अरिहंताणं ह्रौं सर्वविघ्नशान्तिं कुरु कुरु।

(५) ओं अ ह्रां, सि ह्रीं, आ ह्रूं, उ ह्रौं, सा ह्रः जगदातप विनाशनाय ह्रीं श्री शान्तिनाथाय नमः सर्वशान्तिं कुरु कुरु।

(६) ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय अशोकतरुसत्प्रातिहार्य मण्डिताय अशोकतरुसत्प्रातिहार्य शोभनपद प्रदाय ह्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रवशान्तिकराय नमः सर्व शान्तिं कुरु कुरु।

(७) ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय सुरपुष्पवृष्टि सत्प्रातिहार्य मण्डिताय सुरपुष्पवृष्टि सत्प्रातिहार्य शोभनपदप्रदाय म्ल्व्र्यूंबीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नमः सर्वशान्तिं कुरु कुरु।

(८) ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय दिव्यध्वनि सत्प्रातिहार्य मण्डिताय दिव्यध्वनि सत्प्रातिहार्य शोभनपदप्रदाय म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रवशान्तिकराय नमः सर्वशान्तिं कुरु कुरु।

(९) ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय चामरोज्ज्वल सत्प्रातिहार्य मण्डिताय चामरोज्ज्वल सत्प्रातिहार्य शोभनपदप्रदाय र्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नमः सर्वशान्तिं कुरु कुरु।

(१०) ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय सिंहासनसत्प्रातिहार्य मण्डिताय सिंहासन सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय घ्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रवशान्तिकराय नमः सर्वशान्तिं कुरु कुरु।

---

१ - शान्तिधारा शान्ति विधान के मंत्रों से ली गई है।

(११) ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय दुन्दुभिसत्प्रातिहार्यमण्डिताय दुन्दुभि सत्प्रातिहार्य शोभनपद प्रदाय झ्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नमः सर्वशान्तिं कुरु कुरु।

(१२) ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय छत्रत्रय सत्प्रातिहार्य मण्डिताय छत्रत्रय सत्प्रातिहार्य शोभनपद प्रदाय स्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नमः सर्वशान्तिं कुरु कुरु ।

(१३) ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय भामण्डल सत्प्रातिहार्य मण्डिताय भामण्डल सत्प्रातिहार्य शोभनपद प्रदाय ख्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नमः सर्वशान्तिं कुरु कुरु ।

(१४) ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय प्रातिहार्याष्टसहिताय बीजाष्टमण्डनमण्डिताय सर्वविघ्नशान्ति कराय नमः सर्व शान्तिं कुरु कुरु।

ऋद्धि मंत्र [१]

१५. ओं ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

१६. ओं ह्रीं अर्हं णमो ओहि जिणाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

१७. ओं ह्रीं अर्हं णमो परमोहि जिणाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

१८. ओं ह्रीं अर्हं णमो सव्वोहि जिणाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

१९. ओं ह्रीं अर्हं णमो अणंतोहि जिणाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

२०. ओं ह्रीं अर्हं णमो कोट्ठबुद्धीणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

२१. ओं ह्रीं अर्हं णमो बीजबुद्धीणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

२२ ओं ह्रीं अर्हं णमो पादाणुसारीणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

२३. ओं ह्रीं अर्हं णमो संभिण्णसोदाराणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

२४. ओं ह्रीं अर्हं णमो सयंबुद्धीणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

२५. ओं ह्रीं अर्हं णमो पत्तेयबुद्धीणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

२६. ओं ह्रीं अर्हं णमो बोहियबुद्धीणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

२७. ओं ह्रीं अर्हं णमो उजुमदीणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

२८. ओं ह्रीं अर्हं णमो विउलमदीणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

---

१ आचार्य भगवन्त भूतवलि कृत महाबंध - मंगलाचरण पृष्ठ ८

२९. ओं ह्रीं अर्ह णमो दसपुव्वीणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
३०. ओं ह्रीं अर्ह णमो चउदसपुव्वीणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
३१. ओं ह्रीं अर्ह णमो अट्ठांगमहाणिमित्तकुसलाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
३२. ओं ह्रीं अर्ह णमो विउव्वण पत्ताणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
३३. ओं ह्रीं अर्ह णमो विज्जाहराणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
३४. ओं ह्रीं अर्ह णमो चारणाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
३५. ओं ह्रीं अर्ह णमो पण्णसमणाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
३६. ओं ह्रीं अर्ह णमो आगासगामीणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
३७. ओं ह्रीं अर्ह णमो आसीविसाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
३८. ओं ह्रीं अर्ह णमो दिट्ठिविसाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
३९. ओं ह्रीं अर्ह णमो उग्गतवाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
४०. ओं ह्रीं अर्ह णमो दित्ततवाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
४१. ओं ह्रीं अर्ह णमो तत्ततवाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
४२. ओं ह्रीं अर्ह णमो महातवाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
४३. ओं ह्रीं अर्ह णमो घोरतवाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
४४. ओं ह्रीं अर्ह णमो घोरगुणाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
४५. ओं ह्रीं अर्ह णमो घोरपरक्कमाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
४६. ओं ह्रीं अर्ह णमोऽघोरगुण वंभचारीणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
४७. ओं ह्रीं अर्ह णमो आमोसहिपत्ताणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
४८. ओं ह्रीं अर्ह णमो खेलोसहिपत्ताणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
४९. ओं ह्रीं अर्ह णमो जल्लोसहिपत्ताणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
५०. ओं ह्रीं अर्ह णमो विट्ठो सहिपत्ताणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
५१. ओं ह्रीं अर्ह णमो सव्वोसहिपत्ताणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
५२. ओं ह्रीं अर्ह णमो मणवलीणं सर्वशान्तिर्भवतु ।
५३. ओं ह्रीं अर्ह णमो वचवलीणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

५४. ओं ह्री अर्ह णमो कायवलीणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

५५. ओ ह्रीं अर्ह णमो खीररसवीणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

५६. ओं ह्री अर्ह णमो सप्पिरवीणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

५७. ओं ह्री अर्ह णमो महुरसवीणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

५८. ओं ह्रीं अर्ह णमो अमइ रवीणं-सर्वशान्तिर्भवतु ।

५९. ओं ह्री अर्ह णमो अक्खीणमहाणसाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

६०. ओ ह्री अर्ह अमो वड्ढमाण वुद्धिरिसिस्स सर्वशान्तिर्भवतु ।

६१. ओं ह्रीं अर्ह णमो सव्वसिद्धायदणाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

६२. ओ ह्री अर्ह णमो भगवदो महति महावीर वड्ढमाणवुद्धिरिसाणं सर्वशान्तिर्भवतु ।

(इसके बाद धारा यंत्र पर करे)

६३. तव भक्तिप्रसादाल्लक्ष्मी पुरराज्यगेह पदभ्रष्टोपद्रव दारिद्रयोद्भवोपद्रव स्वचक्रपर-चक्रोद्भवोपद्रव प्रचण्डपवनानलजलोद्भवोपद्रव शाकनीडाकनी भूतपिशाचकृतोपद्रव दुर्भिक्षव्यापार वृद्धिरहितोपद्रवाणां विनाशनं भवतु ।

६४. श्री शांतिरस्तु, शिवमस्तु, जयोऽस्तु, नित्यमारोग्यमस्तु, सर्वेषाम् (यजमानानां) तुष्टिरस्तु, पुष्टि रस्तु समृद्धिरस्तु, कल्याणमस्तु, सुखमस्तु, अभिवृद्धिरस्तु,कुलगोत्रधनधान्यंसदास्तु, श्रीसद्धर्मबलायुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्धिरस्तु ।

ओं ह्री अर्ह णमो सम्पूर्णकल्याण मंगलरूप मोक्षपुरुषार्थश्च भवतु ।

शांतिधारा के पश्चात् प्रतिमा प्रक्षालन, अर्घ, बिम्ब-स्थापन और गंधोदक आदि का पाठ एवं मंत्र बोलना चाहिए पश्चात् जिन बिम्ब को सिंहासन पर विराजमान करे ।

हिन्दी अभिषेक पाठ [१]

श्रीमत् स्याद्वाद के नायक तीन लोक में पूजित ईश ।
चार अनत चतुष्टयराजित श्रीजिनभव्य नमावत शीश ।।

शुद्धदृष्टि से गुन चिन्तन में कारण आतमरूप गिरीश ।
कायोत्सर्ग नवकार मंत्र जप करूं त्रियोग कर्म की खीश ।।

अथ पौर्वाह्निक, (माध्याह्निक, अपराह्निक) देव वन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजा वंदनास्तव समेतं श्री पंचमहागुरु भक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम् (नौ बार णमोकार मन्त्र पढ़े)

पावन शीतल केशर चन्दन सलिल संग दीजे घिसवाय ।
नव स्थान पर तिलक लगावें तब जिनवर का न्हवन कराय ।।

शिखा कंठ अरु हृदय भुजा शिर कान कुक्षि कर नाभि लगाय ।
तिलक लगाकर जिनवर पूजें बने पुजारी भाग्य सुपाय ।।

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः मम सर्वांगशुद्धिं कुरु कुरु स्वाहा

क्षीर सिंधु सम निर्मल पावन, प्रासुक जल कर मे लाया ।
न्हवन पीठ के प्रक्षालन हित भक्ति भाव मन में आया ।

वीतराग जिनवर की मूरति के अभिषेक विधी के काज ।
देवेन्द्रों से अनुपम अवसर भाग्योदय से पाया आज ।।

ओं ह्रीं पीठप्रक्षालनं करोमि ।

शारद मुख से निर्गत 'श्री' है विघन विनाशक मंगल रूप ।
सब जीवों को शान्ति प्रदाता स्वस्तिक मय है आत्म स्वरूप ।।

भद्र पीठ पर लिखकर 'श्री' को स्थापन जिनवर जगभूप ।
विधि अभिषेक करू जिनवर का होवेगा तन मन सुख रूप ।।

ओं ह्रीं श्रीं अर्ह श्री लेखनं करोमि

ऐसे जिनपद-पकज को नमि नित्य सही विधि न्हवन प्रसारे ।
तिनपद सन्मुख तिष्ठत उज्ज्वल, द्रव्यसुधार यहां विस्तारे ।।
कंचन सिहासन श्री लिखकर निर्मल प्रासुक द्रव्य संभारे ।
ता मधि बिम्ब शिवालय नायक हो अभिषेक हितार्थ सुधारे ।।

ओं ह्रीं श्री भगवन्निह स्नपनपीठे तिष्ठ तिष्ठ

---

१ पं० गुलाब चन्द्र 'पुष्प' द्वारा रचित

रत्न स्वर्णमय कलश मनोहर क्षीरोदधि से लिए भराय ।
केशर स्वस्तिक लिखकर सुन्दर चार कोण पर चार धराय ।।
भाग्य उदय है आज हमारा जिनवर न्हवन करुं हरषाय ।
सम्यग्दर्शन साधन पाकर यह मिथ्यात्व करम नश जाय ।।

ओं ह्रीं चतुः कोणेषु स्वस्तये चतुः कलश स्थापनं करोमि

प्राशुक निर्मल द्रव्य मनोहर हर्षित मन से सुरगण आय ।
वादित्रों के अनुपम स्वर से श्री जिनवर के गुण को गाय ।।
नीर गंध चरुपुष्प सु अक्षत दीप धूप फल अर्घ बनाय ।
अर्चन करता प्रभु चरणों का अवसर आज मिला है आय ।।

ओं ह्रीं स्नपनपीठस्थितजिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा

१ अभिषेक मंत्र

कृत्रिम और अकृत्रिम बिम्ब सनातन राजत श्री जिन तेरे ।
तासु तनी नित भव्य उपासन ठानत भानत कर्म करेरे ।।
क्षीर समुद्र नदी नद तीरथ तासु तनों जल प्रासुक हेरे ।
कंचन कुंभ भरे परिपूरित त्याय यथाक्रम उत्थित टेरे ।।

ओं ह्रीं श्रीमंतं भगवन्तं कृपालु सन्तं श्रीवृषभादि महावीरान्त चतुर्विंशति तीर्थंकर परमदेवं आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे............प्रान्ते.......मण्डलान्तर्गते ....नगरे (ग्रामे)................मंदिरे (मण्डपे) वीर निर्वाण संवत्सरेमासानामुत्तमे............मासे..............पक्षे..............पुण्यतिथौ......... वासरे मुनि आर्यिका श्रावक श्राविकाणां सकलकर्मक्षयार्थ जलेनाभिषेंचयामः।

लघुमंत्र

ओं ह्रीं श्री वृषभादिवीरान्तान् जलेन स्नपयामः

२

कर्म जंजीर जुरयो यह जीव शुभाशुभ भोगत ज्ञान न पायो ।
पै अब कालसुलब्धि प्रसाद लह्यो तव दर्शन आनंद आयो ।।
हो तुम कर्म कलंक विनाशक प्रेमभक्ति रत प्रेरित लायो ।
हो गुनकार करूँअभिषेक वरों शिवनारि समय अब आयो ।।

ओं ह्रीं श्री वृषभादिवीरान्तान् जलेन स्नपयामः

(उदकचन्दन आदि बोलकर अर्घ चढ़ाना)

३

यो कहि दीप चहू दिश जोय कियो बहु धूप सुधूपक केरो ।
बाजत ताल सुबीन मृदग सुजिनगुण गावत भाव सुटेरो ॥
जय जिनराज सु विरद उचार कियो अभिषेक जिनेश्वर तेरो ।
भावन शक्ति प्रमाण यहा हम ठानत मानत कर्म करेरो ॥

ओं ह्रीं श्री वृषभादिवीरान्तान् जलेन स्नपयामः

४

अष्टादशदोष रहित तुम पावन अमल चिदानंद ज्योति स्वरूपी ।
वीतराग सर्वज्ञ हितैषी शुद्धातम तन-रहित अरूपी ॥
मैं आतमस्वरूप नहिं जाना राग द्वेष की परनति ठानी ।
इसी मलिनता धोने को प्रभु करता नह्वन त्रिभुवन ज्ञानी ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तान् जलेन स्नपयामः ।

५

तनबिन सहज पवित्र प्रभूवर मज्जन तन बिन बनता नाहीं ।
तुम पवित्रता कारण भगवन् न्हवन करने की विधि नाही ॥
मैं मलीन रागादिक मल से दुःख उपजाया बन अज्ञानी ।
मिले नाथ सद्ज्ञान आत्मका इसीलिए मज्जन विधि ठानी ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तान् जलेन स्नपयामः ।

६

पावन जल को लेकर आया न्हवन करने को हे स्वामी ।
सब विभाव का नाश होय जब तभी बनूं मैं अन्तर्यामी ॥
जैसा पावन पद तुम पाया मैं कब ऐसा अवसर पाऊं ।
भक्ति भावना सुदृढ बने मम भवसागर से अब तिर जाऊं ॥

ओं ह्रीं श्री वृषभादिवीरान्तान् जलेन स्नपयामः ।

७

बीताऽनन्तानन्तकाल नहि शुचिता अब तक मन में आई ।
पुण्यसंयोग मिला यह नर तन भक्ति भावना आतम पाई ।।
जलाभिषेक मैं करूंआपका पाप न कण मन में रह जाए ।
शरण आपका पाकर भगवन् जनम मरण के दुख नश जाए ।।

ओं ह्रीं श्री वृषमादिवीरान्तान् जलेन स्नपयामः ।

८

अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय साधू मुनिवर आतमज्ञानी ।
जग में मंगलमय सुखदायक भविजन को शिवमारग दानी ।।
उत्तम जग में शरण सदा ही जीवन में सब विधि सुखदानी ।
श्री विनायक सिद्धयंत्र का न्हवन करते हैं भवि प्राणी ।।

ओं भूर्भुवः स्वरिह एतद् विघ्नौघवारकं यंत्रं जलेन अभिषिंयामः ।

९

र्ह्र बीजाक्षर मध्य विराजे अष्टरूप है कमलाकार ।
स्वरव्यंजन से शोभित वसुदिशि मंत्र अनाहत है सुखकार ।।
अन्त ह्रीं से वेष्टित यंत्र है सिद्धचक्र अनुपम गुणधार ।
कर्म नाश के कारण न्हवन सिद्धयंत्र का करूं निहार ।।

ओं ह्रीं अर्ह सिद्धचक्रयंत्रं जलेन अभिषिञ्चयामः । (यहां शान्तिधारा करें)

अर्घ मंत्र (शांतिधारा करने के बाद)

नीर महाशुचि गंधित चन्दन पुष्प सु अक्षत ले अनियारे ।
व्यंजन संयुत ले चरुउत्तम दीप धूप फल अर्घ सुधारे ।।
यो वसुंद्रव्य तनो कर अर्घ उतारि उतारि जजों पदथारे ।
द्यो मोहि शीघ्र शिवालय वास सदा तुम भव्य उतारनहारे ।।

ओं ह्री अभिषेकान्ते वृषभादिवीरान्तेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

ले शुचि निर्मल स्वर्ग समुद्भव वस्त्र अलौकिक हाथ मझारे ।
तब तन ऊपर नीर निहार सतत परिमार्जन को विस्तारे ॥

पुलकित भक्ति भाव से भविजन निरखत पावन रूप तिहारे ।
धन्य धन्य जिनराज लोक में वसुविध कर्म जलावन हारे ॥॥

ओं अमलांशुकेन जिनबिम्बं मार्जनं करोमि ।

दोहा - मार्जनकरि वेदी विषैं सिहासन पर थाप ।
प्रातिहार्य युत निरख जिन यजन करूँगुण जाप ॥

विनय सहित अभिषेक करि धारा शांति कराय ।
प्रक्षालन करि बिम्ब को सिहासन पधराय ॥

ओं ह्रीं अर्ह सिंहासने जिनबिम्बं स्थापनम् करोमि ।

अर्घ मंत्र

यों अभिषेक कियो अब पूरन पूजन के हित अर्घ सुधारो ।
तीरथ को जल प्रासुक चन्दन अक्षय अक्षत पुष्प सुधारो ॥

ले चरु उत्तम दीप सुधूप फलार्घ करो वर मंत्र उचारो ।
वार धरों तुम चरणन के ढिग हो जिन तारक मोहि उबारो ॥

ओं ह्रीं सिंहासन स्थित जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

गन्धोदक लेने का मंत्र

जिन तन परस पवित्र भयो गंधोदक जन जन शुचि कर तारौ ।
ले चरणोदक शीश धरें हम भीषण रोग व्यथा निरवारौ ॥

कर गुणगान नमावत मस्तक, जनम जनम के दुख निरवारों ।
जीवन मेरा धन्य हुआ प्रभु भक्ति भाव सम्यक् निधि धारों ॥

(गन्धोदक मस्तक पर लगावें)

अभिषेक के पश्चात् विनयपाठादि पढकर नित्य मह पूजा करके फिर प्रतिष्ठा पात्रों के द्वारा यागमंडल विधान करना चाहिए ।

पूजा करने के अधिकारी [1]

शुचि प्रसन्नो गुरुदेवभक्तो दृढव्रती सत्य-दयासमेतः ।
दक्ष पटुर्बीजपदावधारी जिनेन्द्रपूजासु सर्वे प्रशस्तः ॥

पूजा के अनधिकारी [2]

नाकुलीनो न दुर्दृष्टिर्न पापी नाप्यपण्डितः ।
न निकृष्टक्रियावृत्तिर्नातपः परदूषितः ॥

नाधिकांगो न हीनांगो नातिदीर्घो न वामनः ।
न विरूपो न मूढात्मा नातिवृद्धो न बालकः ॥

न मायावी न मोही वा न चेष्टी वाऽदृढव्रतः ।
नार्थार्थी न च पाखण्डी न रोगी न चविनीतकः ॥

न साहसिकवेशाशीर्नाशास्त्रो न च लोभवान् ।
नातिक्रोधो न दुष्टात्मा नाभक्तो न विकल्पकः ॥

आरती

आनंद अपार है भक्ति का प्रसार है
देखो बिम्ब प्रतिष्ठा का, केसा जयजयकार है । टेक ।
मंगल आरती लेकर स्वामी, आया तेरे द्वार जी ।
गुण गाता हूँ आदि प्रभू का, होगा बेड़ा पार जी ॥ १
इन्द्र इन्द्राणी नाचें भगवन, आज तुम्हारे द्वार जी ।
आदि प्रभू का करके न्हवन, बोलें जय जयकार जी ॥ २
पर परणति से अब तक भटका, शरण कहीं नहीं पाया जी ।
तारन तरन विरद सुनकर के, सिद्ध शरण में आया जी ॥ ३
अब तो पार लगा दो भगवन, 'पुष्प' चरण शिर नाया जी ।
अजर अमर पद पा जाऊं मैं, सिद्ध शरण में आया जी ॥ ४

[illegible] [illegible] चर्चा समाधान पृष्ठ ५० (२) वाले

विनयपाठ

इह विधि ठाड़ो होय के, प्रथम पढै जो पाठ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशे कर्म जु आठ ॥१॥

अनंत चतुष्टय के धनी, तुम ही हो सिरताज
मुक्ति बधू के कंत तुम तीन भुवन के राज॥२॥

तिहुं जग की पीड़ा हरन, भवदधि शोषणहार।
ज्ञायक हो तुम विश्व के, शिवसुख के करतार॥३॥

हरता अघ अंधियार के, करता धर्म प्रकाश।
थिरतापद दातार हो, धरता निजगुण रास॥४॥

धर्मामृत उर जलधिसों, ज्ञानभानु तुम रूप।
तुमरे चरण सरोज को, नावत तिहुं जग भूप॥५॥

मैं वंदौं जिनदेव को, कर अति निर्मल भाव।
कर्मबंध के छेदने, और न कछु उपाव॥६॥

भविजन को भवकूप तें, तुम ही काढनहार।
दीनदयाल अनाथ पति, आतमगुण भंडार॥७॥

चिदानंद निर्मल कियो , धोय कर्म रज मैल।
सरल करी या जगत में, भविजन को शिवगैल॥८॥

तुम पद पंकज पूजते, विघ्न रोग टर जाय।
शत्रु मित्रता को धरैं, विष निर्विषता थाय॥९॥

चक्री खगसुर इन्द्रपद, मिलें आप तें आप।
अनुक्रम कर शिवपद लहैं, नेम सकल हनि पाप॥१०॥

तुम बिन मैं व्याकुल भयो, जैसे जल बिन मीन।
जन्म जरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन॥११॥

पतित बहुत पावन किये, गिनती कौन करेव।
अंजन से तारे कुधी, जय जय जय जिनदेव॥१२॥

थकी नाव भवदधि विषैं, तुम प्रभु पार करेव।
खेवटिया तुम हो प्रभु, जय जय जय जिनदेव॥१३॥

राग सहित जग में रुल्यो, मिले सरागी देव।
वीतराग भेंट्यो अबै, मेटो राग कुटेव।।१४।।

किंत निगोद कित नारकी, कित तिर्यंच अज्ञान।
आज धन्य मानुष भयो, पायो जिनवर थान।।१५।।

तुमको पूजैं सुरपति, अहिपति नरपति देव।
धन्य भाग्य मेरो भयो, करन लग्यो तुम सेव।।१६।।

अशरण के तुम शरण हो, निराधार आधार।
मैं डूबत भवसिंधु मे, खेव लगाओ पार।।१७।।

इन्द्रादिक गणपति थके, कर विनती भगवान।
अपनो विरद निहारिके, कीजै आप समान।।१८।।

तुमरी नेक सुदृष्टि सों, जग उतरत है पार।
हा हा डूबो जात हों, नेक निहारि निकार।।१९।।

जो मैं कहहूं और सों, तो न मिटे उरझार।
मेरी तो तोसौं बनी, तातैं करों पुकार।।२०।।

वंदों पांचों परमगुरु, सुरगुरुवंदत जास।
विघन हरन मंगलकरन, पूरन परम प्रकाश।।२१।।

चौबीसों जिनपद नमों, नमों शारदा माय।
शिवमग साधक साधु नमि, रच्यो पाठ सुखदाय।।२२।।

मंगल मूरति परम पद, पंच धरों नित ध्यान।
हरो अमंगल विश्व का, मंगलमय भगवान।।२३।।

मंगल जिनवर पद नमों, मंगल अर्हत देव।
मंगलकारी सिद्धपद, सो वंदों स्वयमेव।।२४।।

मंगल आचारज मुनि, मंगल गुरुउवज्झाय।
सर्वसाधु मंगलकरो, वंदों मन वच काय।।२५।।

मंगल सरस्वती मात का, मंगल जिनवर धर्म।
मंगलमय मंगल करो, हरो असाता कर्म।।२६।।

या विधि मंगल करन से, जग मे मंगल होत।
मंगल "नाथूराम" यह भवसागर दृढ़ पोत।।२७।।

अथ अर्हत्पूजाप्रतिज्ञायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेतं कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

श्री पुष्पदंतः स्वस्ति स्वस्ति श्री शीतलः।

श्री श्रेयान्सः स्वस्ति स्वस्ति श्री वासुपूज्यः।

श्री विमलः स्वस्ति स्वस्ति श्री अनंतः।

श्री धर्मः स्वस्ति स्वस्ति श्री शांतिः।

श्री कुंथुः स्वस्ति स्वस्ति श्री अरनाथः।

श्री मल्लिः स्वस्ति स्वस्ति श्री मुनिसुव्रतः।

श्री नमिः स्वस्ति स्वस्ति श्री नेमिनाथः।

श्री पार्श्वः स्वस्ति स्वस्ति श्री वर्द्धमानः।

इति स्वस्तिमंगलविधानं (पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

नित्याप्रकंपाद्‌भुत - केवलौघाः स्फुरन्मनः पर्ययशुद्धबोधाः।
दिव्यावधिज्ञान - बलप्रबोधाः स्वस्ति क्रियासुःपरमर्षयो नः।।१।।

(प्रत्येक श्लोक के अंत में पुष्प क्षेपण करें)

कोष्ठस्थधान्योपममेकबीज संभिन्नसंश्रोतृ-पदानुसारि।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः स्वस्ति क्रियासुपरमर्षयो नः।।२।।

संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादनघ्राण - विलोकनानि।
दिव्यान्मतिज्ञान - बलाद्वहंतः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।३।।

प्रज्ञाप्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः प्रत्येकबुद्धा दशसर्वपूर्वैः
प्रवादिनोऽष्टांगनिमित्तविज्ञाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।४।।

जंघानलश्रेणिफलाबुतलु - प्रसूनबीजांकुरचारणाह्वाः।
नभोऽङ्गणस्वैर-विहारिणश्च, स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो नः।।५।।

अणिम्नि दक्षाः कुशला महिम्नि लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि।
मनो वपुर्वाग्बलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।६।।

सकामरूपित्व - वशित्वमैश्यं प्राकाम्यमन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः, स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो नः।।७।।

दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं, घोरं तपो घोर पराक्रमस्थाः।
ब्रह्मापरं घोरगुणाश्चरन्तः, स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो नः।।८।।

आमर्षसर्वौषधयस्तथाशी - र्विषाविषा दृष्टिविषाविषाश्च।
सखिल्लविड्जल्ल-मलौषधीशाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥९॥

क्षीरं स्रवंतोऽत्र घृतं स्रवंतो, मधु स्रवंतोऽप्यमृतं स्रवंतः।
अक्षीणसंवास महानसाश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥१०॥

॥इति परमर्षि स्वस्तिमंगलविधानम् ॥ (पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

देव शास्त्र गुरु पूजा

अडिल्ल - प्रथम देव अरहंत सुश्रुत सिद्धांत जू,
गुरु निर्ग्रंथ महन्त मुकतिपुर पन्थ जू।
तीन रतन जग मांहि सो ये भवि ध्याइये,
तिनकी भक्तिप्रसाद परमपद पाइये ॥

दोहा - पूजों पद अरहंत के पूजो गुरुपद सार,
पूजों देवी सरस्वती, नितप्रति अष्टप्रकार ॥१॥

ओं ह्रीं देव-शास्त्र-गुरु-समूह ! अत्र अवतर अवतर, संवौषट् आह्वाननं। ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ , ठः ठः स्थापनं। ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

सुरपति उरग नरनाथ तिनकर, वन्दनीक सुपद-प्रभा।
अति शोभनीक सुवरण उज्ज्वल, देख छवि मोहित सभा ॥
वर नीर क्षीरसमुद्र घट भरि अग्र तसु बहुविधि नचूं।
अरहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निरग्रन्थ नित पूजा रचूं ॥

मलिन वस्तु हर लेत सब, जल स्वभाव मलछीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरुतीन ॥१॥

ओं ह्रीं देव-शस्त्र-गुरुभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्व० ॥

जे त्रिजग उदर मंझार प्राणी, तपत अति दुद्धर खरे।
तिन अहित-हरन सुवचन जिनके, परम शीतलता भरे ॥
तसु भ्रमर-लोभित घ्राण पावन, सरस चंदन घिसि सचूं।
अरहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचूं ॥

चंदन शीतलता करे, तपत वस्तु परवीन।
जासों पूजो परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥२॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः, संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं निर्व० ॥२॥

यह भवसमुद्र अपार तारण, के निमित्त सुविधि ठई।
अति दृढ परमपावन जथारथ, भक्ति वर नौका सही ।।
उज्ज्वल अखडित शालि तंदुल, पुज धरि त्रयगुण जचूं।
अरहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचूं।

तंदुल सालि सुगध अति, परम अखडित बीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ।।३।।

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपा० स्वाहा ।।

जे विनयवंत सुभव्य-उर-अंबुज प्रकाशन भान हैं।
जे एक मुख चारित्र भाषत, त्रिजगमांहि प्रधान हैं ।।

लहि कुंन्द कमलादिक पहुप, भव भव कुवेदन सों बचूं।
अरहत श्रुत-सिद्धांत गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचूं ।।

विविध भांति परिमल सुमन, भ्रमर जास आधीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरुतीन ।।४।।

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्व० ।।४।।

अति सबल मद-कंदर्प जाको, क्षुधा-उरग अमान है।
दुस्सह भयानक तासु नाशन, को सु गरुड़ समान है ।।
उत्तम छहों रसयुक्त नित, नैवेद्य करि घृत मे पचूं।
अरहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचूं ।।

नानाविधि संयुक्तरस, व्यंजन सरस नवीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ।।५।।

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधा-रोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्व० ।।५।।

जे त्रिजगउद्यम नाश कीने, मोहतिमिर महाबली।
तिहि कर्मघाती ज्ञानदीप, प्रकाश जोति प्रभावली ।।
इह भॉति दीप प्रजाल कंचन, के सुभाजन में खचूं।
अरहत श्रुतसिद्धांत गुरु ,निरग्रन्थ नित पूजा रचूं ।।

स्वपरप्रकाशक ज्योति अति, दीपक तमकरि हीन।
जासों पूजो परमपद, देव शास्त्र गुरुतीन ।।६।।

ओं ह्री देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्व० ।।६।।

जिनकी ध्वनि ह्वै ओंकाररूप, निर-अक्षरमय महिमा अनूप ।
दश अष्ट महाभाषा समेत, लघुभाषा सात शतक सुचेत ।।४।।

सो स्याद्वादमय सप्तभंग, गणधर गूंथे बारह सुअंग ।
रवि शशि न हरै सो तम हराय, सो शास्त्र नमों बहु प्रीति ल्याय ।।५।।
गुरु आचारज उवझाय साध, तन नगन रतनत्रय-निधि अगाध ।
संसारदेह वैराग्य धार, निरवांछि तपें शिवपद निहार ।।६।।

गुण छत्तिस पच्चिस आठबीस, भवतारन तरन जिहाज ईस ।
गुरुकी महिमा वरनी न जाय, गुरु-नाम जपों मन-वचन-काय ।।७।।

सोरठा- कीजे शक्ति प्रमान, शक्ति बिना सरधा धरें ।
द्यानत सरधावान, अजर अमरपद भोगवें ।।८।।

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा- श्री जिनके परसाद तें सुखी रहें सब जीव ।
यातें तन मन वचन तें सेवो भव्य सदीव ।।

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

अर्घावली

विद्यमान विंशति तीर्थकर अर्घ-

जलफल आठों दर्व अरघकर प्रीतिधरी है,
गणधर इन्द्रनहूं तें थुति पूरी न करी है ।
द्यानत सेवक जानकें जगतें लेहुनिकार,
सीमंधर जिन आदिदे बीस विदेह मंझार
श्री जिनराज हो, भवतारण तरण जहाज ।

ओं ह्रीं विद्यमान विशंतितीर्थकरेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सिद्धपरमेष्ठी अर्घ

गन्धाढ्यं सुपयो मधुव्रतगणैः संगं वरं चन्दन,
पुष्पौघ विमलं सद्क्षतचयं रम्यं चरुदीपकम् ।
धूपं गन्धयुतं ददामि विविध श्रेष्ठ फलं लब्धये,
सिद्धाना युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वाञ्छितम् ।

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

कृत्रिमाकृत्रिम जिनचैत्य चैत्यालय अर्घ

कृत्याकृत्रिम - चारुचैत्यनिलयान् नित्यं त्रिलोकीगतान्।
वंदे भावन व्यन्तरान् द्युतिवरान् स्वर्गामरावासगान्-
सद्‌गंधाक्षत-पुष्पदाम-चरुकैः सद्दीप-धूपैः फलैः,
नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा दुष्कर्मणां शांतये।।

ओं ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिम चैत्यालयस्थ सर्वजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

वर्षेषु वर्षान्तर-पर्वतेषु, नन्दीश्वरे यानि च मन्दरेषु ।
यावन्तिचैत्यायतनानि लोके, सर्वाणि वंदे जिन-पुंगवानाम् ।।

अवनि तल गतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,
वन भवन गतानां दिव्य वैमानिकानाम्।
इह मनुज कृतानां देवराजार्चितानां,
जिनवर निलयानां भावतोऽहं स्मरामि।।

जम्बू-धातकि-पुष्करार्द्ध-वसुधा क्षेत्र-त्रये ये भवा -
श्चन्द्राम्भोज-शिखण्डि-कण्ठ-कनक-प्रावृड्घनाभा जिनाः ।
सम्यग्ज्ञान-चरित्र-लक्षणधरा, दग्धाष्ट-कर्मेन्धनाः,
भूतानागत वर्तमान समये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ।।

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे;
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकर-रुचिके कुण्डले मानुषांके ।
इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ दधिमुख-शिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके,
ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे भवन-महितले यानि चैत्यालयानि ।।

द्वौ कुन्देन्दु-तुषार-हार-धवलौ द्वाविन्द्रनील-प्रभौ,
द्वौ बन्धूक-सम-प्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ ।
शेषाः षोडश जन्म-मृत्यु-रहिताः सन्तप्त-हेम-प्रभा -
स्ते संज्ञान-दिवाकराः सुर नुताः सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ।।

नवकोडि सया पण वीसा, त्रेपण लक्खा सहस सत्ताईसा ।
नव से दे अडियाला जिन पडिमा किट्टिमा वन्दे ।।

ओं ह्रीं त्रिलोक संबंधि कृत्रिमाकृत्रिम चैत्यालयेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

इच्छामि भंते ! चेइयभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं अहलोय-तिरियलोय-उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि तीसु वि

लोएसु भवणवासिय वाणवितर-जोइरिय-कप्पवासिय त्ति चउव्विहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण धूवेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण वासेण दिव्वेणण्हाणेण णिच्चकालं अच्चंति, पुज्जंति, वदंति णमंस्संति, अहमवि इह संतो तत्थ संताई णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ वोहिलाहो, सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं इति पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री पंचमहागुरु भक्ति-कायोत्सर्गम् करोम्यहम् । (नौ बार णमोकार मन्त्र की जाप करें)

तीस चौबीसी अर्घ

दरब आठों जु लीना है, अर्घ कर में नवीना है,
पूजते पाप छीना है "भानुमल" जोर कीना है।
द्वीप ढाई सरस राजे, क्षेत्र दश ता विषें छाजे,
सात शत बीस जिनराजे, पूजता पाप सब भाजे ॥

ओं ह्रीं सार्द्धद्वयद्वीप सम्बन्धि त्रिंशजिनचतुर्विंशतिजिनेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

चौबीस तीर्थंकर अर्घ

जल फल आठों शुचि सार, ताको अर्घ करों ।
तुमको अरपों भवतार, भवतरि मोक्ष वरो ॥
चौबीसों श्री जिनचंद, आनन्द कन्द सही ।
पद जजत हरत भव फन्द, पावत मोक्ष मही ॥

ओं ह्रीं श्री वृषभादि वीरान्तेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा ।

पंच परमेष्ठी अर्घ

मणुयणाइंद सुरधरियछत्तत्तया, पंचकल्लाणसोक्खावली पत्तया ।
दंसणं णाण झाणं अणंतं वलं, ते जिणा दितु अम्हं वरं मंगलं ॥१॥
जेहिझाणग्गि वाणेहि अइदड्ढयं, जम्मजरमरण णयरत्तयं दड्ढयं ।
जे हिं पत्तं सिवं सासयं ठाणयं, ते महं दितु सिद्धा वरं णाणयं ॥२॥
पंचहाचार, पंचग्गि संसाहया, वार संगाइ सुअ जलहि अवगाहया ।
मोक्खलच्छी महती महंते सया, सूरिणो दितु मोक्खं गया संगया ॥३॥
घोर संसार भीमाडवी काणणे, तिक्ख वियराल णहपाव पंचाणणे ।
णट्ठ मग्गाण जीवाण पहदेसया, वदिमो ते उवज्झाय अम्हे सया ॥४॥
उग्ग तव चरण करणेहिं खीणं गया, धम्मवर झाण सुक्केक्क झाणं गया ।
णिब्भरं तवसिरिय ये समालिगया, साहवो ते महामोक्खपह मग्गया ॥५॥

एण थोत्तेण जो पंचगुरु वंदए, गुरुय संसार घणवल्ली सो छिंदये।
लहइ सो सिद्ध सुक्खाइ वहु माणणं, कुणइ कम्मिं घणं पुंजपज्जालणं ।।६।।

अरुहासिद्धाइरिया, उवज्झाया साहु पंचपरमेट्ठी।
एयाण णमुक्कारो भवे भवे मम सुहं दितु ।।७।।

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

श्री आदिनाथ अर्घ

शुचि निर्मल नीरं गंध सुअक्षत, पुष्प चरु ले मन हरषाय।
दीप, धूप फल अर्घ सु लेकर, नाचतताल मृदंग बजाय ।।

श्री आदिनाथ के चरण कमल पर बलि बलि जाऊँ मन वच काय।
हो करुणानिधि भव दुख मेटो, यातें मैं पूजों प्रभु पाय ।।

ओं ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अजितनाथ अर्घ

जलफल सब सज्जै, वाजत वज्जै, गुनगनरज्जै मनमज्जै।
तुम पदजुगमज्जै सज्जन जज्जै, ते भव भज्जै निजकज्जै ।।

श्री अजितजिनेशं, नुतनक्रेशं चक्रधरेशं खग्गेशं।
मन वांछित दाता त्रिभुवन त्राता, पूजों ख्याता जग्गेशं ।।

ओं ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

श्री संभवनाथ अर्घ

जल चंदन तन्दुल पुष्प चरु, दीप धूप फल अर्घ किया।
तुमको अरपों भावभगतिधर, जै जै जै शिवरमनि पिया ।।

संभवजिनके चरन चरचतें, सब आकुलता मिट जावै।
निज निधि ज्ञान-दरश-सुख-वीरज, निराबाध भविजन पावै ।।

ओं ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अभिनन्दननाथ अर्घ

अष्ट द्रव्य संवारि सुन्दर, सुजस गाय रसाल ही।
नचत रजत जजों चरन जुग, नाय नाय सुभाल ही ।।
कलुषताप निकन्द श्री अभिनन्द, अनुपम चन्द हैं।
पदवंद वृन्द जजे प्रभू भवद्वन्द-फन्द निकन्द हैं ।।

ओं ह्री श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सुमितनाथ अर्घ

जल चंदन तन्दुल प्रसून चरु दीप धूप फल सकल मिलाय ।
नाचिराचि शिरनाय समरचों, जय जय जय जय जयजिनराय ।।
हरिहर वंदित पाप निकंदित, सुमतिनाथ त्रिभुवन के राय ।
तुम पद पद्म सद्म शिवदायक, जजत मुदित मन उदित सुभाय ।।

ओं ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री पद्मप्रभ अर्घ

जलफल आदि मिलाय गाय गुन, भगति भाव उमगाय ।
जजों तुमहिं शिवतियवर जिनवर, आवागमन मिटाय ।।
पूजों भाव सों श्री पद्मनाथ पद सार, पूजों भाव सों ।।

ओं ह्रीं श्री पद्म प्रभ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री सुपार्श्वनाथ अर्घ

आठों दरव सांजि गुनगाय, नाचत राचत भगति बढ़ाय ।
दया निधि हो, जय जगबन्धु दयानिधि हो ।।
तुम पद पूजों मन वच काय, देव सुपारस शिवपुरराय ।
दयानिधि हो जय जगबन्धु दयानिधि हो ।।

ओं ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री चन्द्रप्रभ अर्घ

वसु विधि अर्घ बनाय मनोहर, श्री जिन मंदिर जावो ।
अष्टकर्म के नाश करन को, श्री जिन चरण चढावो ।।
चंचल चित को रोक, चतुर्गति चक्रभ्रमण निरवारो ।
चारुचरण आचरण चतुरनर, चन्द्रप्रभ चितधारो ।

ओं ह्री श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री पुष्पदन्त अर्घ

जलफल सकल मिलाय मनोहर मनवचतन हुलसाय ।
तुम पद पूजों प्रीति लायकें जय जय त्रिभुवनराय ।।
मेरी अरज सुनीजे, पुष्पदन्त जिनराय मेरी अरज सुनीजे ।

ओं ह्रीं श्री पुष्पदन्त जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री शीतलनाथ अर्घ

कंश्री फलादि वसु प्रासुक द्रव्य साजे ।
नाचे रचे मचत वज्जत सज्ज बाजे ।।
रागादिदोष मलमर्दन हेतु येवा ।
चर्चो पदाब्ज तव शीतलनाथ देवा ।।

ओं ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री श्रेयांसनाथ अर्घ

जलमलयतंदुलसुमनचरुअरुदीपधूपफलावली ।
करि अर्घ्य चरचों चरनजुग प्रभु मोहि तार उतावली ।।
श्रेयांसनाथ जिनेन्द्र त्रिभुवन वन्द आनंद कन्द हैं ।
दुख द्वन्दफन्द निकन्द पूरनचन्द्र जोति अमन्द है ।।

ओं ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री वासुपूज्य अर्घ

जलफल दरब मिलाय गाय गुन, आठो अंग नमाई ।
शिवपदराज हेतु हे श्री पति ! निकट धरो यह लाई ।।
वासुपूज्य वसुपूज तनुज पद, वासव सेवत आई ।
बाल ब्रह्मचारी लखि जिनको, शिवतिय सनमुख धाई ।।

ओं ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री विमलनाथ अर्घ

आठों दरव संवार, मनसुखदायक पावने ।
जजों अर्घ भर थार विमल विमल शिवतिय रमन ।।

ओं ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री अनंतनाथ अर्घ

शुचि नीर चन्दन शालिनंदन, सुमन चरुदीपक धरों ।
धूप फल जुत अरघ करके, कर जोर जुग विनती करों ।।
जगपूज परमपुनीत मीत, अनन्त संत सुहावनें ।
शिवचंद्रावंत महंत ध्यावो, भ्रमणतंत नशावनें ।।

ओं ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री धर्मनाथ अर्घ

आठों दरब साज शुचि चितहर, हरषि हरषि गुन गाई।
वाजत दृमदृम दृम मृदगगत, नाचत ता थेई थाई ॥
परम धरम शमरमण धरम - जिन अशरनशरन तिहारी।
पूजूँ पाय गाय गुन सुन्दर, नाचूँ दै दै तारी ॥

ओं ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री शान्तिनाथ अर्घ

वसु द्रव्य संवारी, तुम ढिंग धारी, आनन्दकारी दृग प्यारी।
तुम हो भवतारी, करुणाधारी, यातें थारी शरनारी ॥
श्री शान्ति जिनेशं, नुतशक्रेशं, वृषचक्रेशं चक्रेशं।
हनि अरि चक्रेशं हे गुन धेशं दया मृतेशं मक्रेशं ॥

ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री कुन्थुनाथ अर्घ

जल चंदन तन्दुल प्रसून चरु दीप धूप लेरी।
फलजुतजजन करों मन सुखधरि, हरो जगत फेरी ॥
कुन्थु सुन अरज दासकेरी, नाथ सुनि अरज दासकेरी।
भवसिन्धु परयो हों नाथ, निकारो बाँह पकर मेरी ॥

ओं ह्रीं श्री कुन्थुनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अरनाथ अर्घ

शुचि स्वच्छ पटीरं, गंधगहीरं, तंदुलशीरं पुष्प चरुं।
वर दीपं धूपं, आनन्दरूपं, लै फल भूपं अर्घ्य करुं॥
प्रभु दीनदयालं अरिकुलकालं, विरद विशालं सुकुमालम्।
हनि मन जंजालं, हे जगपालं, अरगुनमालं वरमालम् ॥

ओं ह्रीं श्री अरनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मल्लिनाथ अर्घ

जलफल अरघ मिलायगाय गुन पूजों भगति बढाई ।
शिवपदराज हेत हे श्रीधर, शरनगही मैं आई ॥

राग रोष मद मोह हरन कों, तुम ही हौ वरवीरा ।
याते शरन गही जगपतिजी, वेग हरो भव पीरा ॥

ओं ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री मुनिसुव्रतनाथ अर्घ

जलगंध आदि मिलाय आठो, दरव अरघ सजों वरों ।
पूजों चरनरज भगत जुत, जातें जगत सागर तँरों ॥
शिवसाथ करत सनाथ सुव्रतनाथ मुनिगुनमाल है ।
तुम चरन आनन्दभरन तारन, तरन विरद विशाल है ॥

ओं ह्रीं मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री नमिनाथ अर्घ

जल फलादि मिलाय मनोहरं, अरघ धारत ही भय भौ हरं ।
जजतु हो नमि के गुन गाय कें जुगपदांबुज प्रीति लगाय कें ॥

ओं ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री नेमिनाथ अर्घ

जलफल, अर्घ बनाय गाय गुन रतन थाल भरिये सुखदान ।
आठकर्म के नाशक प्रभु को पूजूँ निजगुणदायक जान ॥
बाल ब्रह्मचारी अनगारी नेमीश्वर जिनराज महान ।
मैं नित ध्यान धरूं प्रभु तेरा, मोकू दीजे अविचल थान ॥

ओं ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री पार्श्वनाथ अर्घ

संघर्षो में उपसर्गो मे तुमने समता का भाव धरा।
आदर्श तुम्हारा अमृत - बन भक्तों के जीवन में बिखरा ॥
मैं अष्टद्रव्य से पूजा का शुभथाल सजाकर लाया हूँ।
जो पदवी तुमनें पाई है मैं भी उस पर ललचाया हूँ।

ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

श्री महावीर अर्घ

जल फल वसु सजि हिमथार तनमन मोद धरों।
गुणगाऊँ भवदधि तार पूजत पाप हरों ॥
श्री वीर महा अतिवीर, सन्मति नायक हो।
जय वर्द्धमान गुणधीर सन्मतिदायक हो।

ओं ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीबाहुबलि अर्घ

वसु विधि के बस बसुधा सब ही परवश अति दुख पावें,
तिहिं दुख दूर करन को भविजन अर्घ जिनाग्र चढावें।
परम पूज्य वीराधिवीर जिन बाहुबलि बलधारी,
तिनके चरण कमल को नित प्रति धोक त्रिकाल हमारी ॥

ओं ह्रीं श्री बाहुबलि जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

सोलहकारण अर्घ

जल फल आठों दरब चढाय, द्यानत वरत करों मनलाय।
परम गुरुहो जय जय नाथ परम गुरुहो ॥
दरश विशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थंकर पद पाय।
परम गुरुहो, जय जय नाथ परम गुरुहो ॥

ओं ह्रीं दर्शन विशुद्ध्यादिषोड़शकारणेभ्योअनर्घपद प्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

पञ्चमेरु अर्घ

आठ दरबमय अरघबनाय, 'द्यानत' पूजों श्री जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ।।
पाँचों मेरुअसी जिन धाम, सब प्रतिमा को करों प्रणाम।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ।।

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसंबंधिजिन चैत्यालयस्थ जिन बिम्बेभ्यो अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

नंदीश्वरद्वीप अर्घ

यह अरघ कियो निज हेत, तुमको अरपतु हों।
'द्यानत' कीज्यो शिवखेत, भूमि समरपतु हों ।।
नन्दीश्वर श्री जिनधाम बावन पुंज करों।
वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनंद भाव धरों ।।
नन्दीश्वर द्वीप महान चारों दिश सोहे।
बावन जिन मंदिर जान सुरनरमन मोहे ।।

ओं ह्रीं नन्दीश्वर द्वीपे, द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दशलक्षण अर्घ

आठों दरब संवार, 'द्यानत' अधिक उछाहसों।
भव आताप निवार, दश लक्षण पूजों सदा ।।

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षण धर्मेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय अर्घ

आठ दरब निरधार, उत्तम सो उत्तम लिये।
जनम - रोग निरवार, सम्यक् रत्नत्रय भजूँ ।।

ओं ह्रीं सम्यक् रत्नत्रयाय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धचक्र अर्घ

निर्मल सलिल शुभ वास चंदन धवल अक्षतयुत अनी।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं, चरुप्रचुर स्वाद सुविधि घनी ।।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले।
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजित कर्ममल सब दलमले ।।

ते क्रमावर्त नशांयं युगपत ज्ञान निर्मल रूप हैं।
दुःख जन्म टार अपार गुण सूक्षम सरूप अनूप हैं ।।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य अदूज शिवकमलापती ।
मुनि ध्येय सेय अमेय चहुंगुण, गेय द्यो मो शुभमती ।।

ओं ह्रीं अर्हं अनाहत पराक्रमाय सकल कर्म विमुक्ताय श्री सिद्धचक्राधिपतये श्री सम्मत्तणाण दंसणवीर्य सुहमत्त अवग्गहणं अगुरुलघु अव्वावाहं अष्ट गुण संयुक्ताय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

विनायक यंत्र अर्घ

सुवरण के पात्र धराये, शुचि आठों द्रव्य मिलाये ।
गुरुपंच परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई

ओं ह्रीं अर्हं मंगलोत्तम शरण्यभूतेभ्यो अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

नवदेवता अर्घ

मध्येकर्णिकमर्हदार्यमनघं बाह्येष्ट पत्रोदरे,
सिद्धान् सूरिवरांश्च पाठकगुरुन् साधूंश्च दिक्पत्रगान् ।
सद्धर्मागमचैत्यचैत्यनिलयान् कोणस्थदिक्पत्रगान्,
भक्त्या सर्वसुरासुरेन्द्रमहितान् तानष्टधेष्ट्या यजे ।।

ओं ह्रीं अर्हदादि नवदेवेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सप्तर्षि अर्घ

जल गंध अक्षत पुष्प चरुवर दीप धूप सु लावना ।
फल ललित आठो द्रव्य मिश्रित अर्घ कीजे पावना ।।
मन्वादि चारण ऋद्धि धारी मुनिन की पूजा करूं।
ता करे पातक हटे सारे, सकल आनद विस्तरूं।।

ओं ह्री श्री मन्वादि सप्तऋषिभ्यो अर्घ निवपामीति स्वाहा ।

निर्वाण क्षेत्र अर्घ

जल गंध अक्षत पुष्प चरुवर दीप धूपायन धरो,
द्यानत करो निर्भय जगत सों, जोरकर विनती करों ।
सम्मेदगढ गिरनार चम्पा, पावापुरि कैलाश को,
पूजों सदा चौबीस जिन, निर्वाण भूमि निवास को ।

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।

नोट :यदि समय हो याग मण्डल विधान करें अन्यथा मध्यान्ह यागमण्डल विधान करें। महार्घ, शांति विसर्जन कर पूजा समाप्त करें।

महार्घ

मैं देव श्री अर्हन्त पूजूं, सिद्ध पूजूं चाव सों,
आचार्य श्री उवझाय पूजूं साधु पूजूं भाव सों।

अरहंत भाषित वैन पूंजूं, द्वादशांग रचे गनी
पूजूं दिगम्बर गुरुचरन, शिवहेत सब आशा हनी।

सर्वज्ञ भाषित धर्म दशविधि, दयामय पूजू सदा,
जजुं भावना षोडश रत्नत्रय, जा बिना शिव नहि कदा।

त्रैलोक्य के कृत्रिम अकृत्रिम चैत्य चैत्यालय जजूं,
पंचमेरुनन्दीश्वर जिनालय खचर सुर पूजित भजूं।
कैलाश श्री सम्मेदगिरि, गिरनार मैं पूजूँ सदा।
चम्पापुरी पावापुरी पुनि और तीरथ सर्वदा,

चौबीस श्री जिनराज पूजूं बीस क्षेत्र विदेह के,
नामावली इक सहसवसु, जय होय पति शिव गेह के।

जल गंधाक्षत पुष्प चरुदीप धूपफललाय,
सर्वपूज्य पद पूजहूं बहुविधि भक्ति बढ़ाय।

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यो, द्वादशांगजिनागमेभ्यो, दशलक्षणधर्मेभ्यो, षोडशकारणेभ्यो, सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो, त्रिलोक स्थित कृत्रिमाकृत्रिमजिनचैत्य -चैत्यालयेभ्यो, नन्दीश्वरद्वीप स्थित द्विपंचाशत् जिनालयस्थ जिनेभ्यो, श्री सम्मेदाष्टापदूर्जयंत- गिरि, चम्पापावापुरादिसिद्धक्षेत्रेभ्यो, सातिशय क्षेत्रेभ्यो, विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो, अष्टाधिकजिनसहस्त्रनामभ्यो, श्रीवृषभादि चतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो जलादि महार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

卐 शान्ति - पाठ 卐

(शान्ति पाठ पढते समय पुष्पक्षेपण करें)

शांतिनाथ मुख शशि उनहारी, शील गुणव्रत संयमधारी ।
लखन एक सौ आठ विराजे, निरखत नयन कमल दल लाजे ॥१॥

पंचम चक्रवर्ती पद धारी, सोलम तीर्थंकर सुखकारी ।
इन्द्रनरेन्द्र पूज्यजिननायक, नमों शांतिहित शांति विधायक ॥२॥

दिव्य विटप पहुपन की वरषा, दुन्दुभि आसनवाणी सरसा ।
छत्र चमर भामण्डल भारी, ये तुम प्रातिहार्य मनहारी ॥३॥

शांति जिनेश शांति सुखदाई, जगत पूज्य पूजों शिरनाई ।
परमशांति दीजे हम सबको, पढ़ें तिन्हें पुनि चार संघ को ॥४॥

वसंततिलका छंद

पूजें जिन्हें मुकुट हार किरीट लाके इन्द्रादि देव अरुपूज्य पदाब्ज जाके ।
सो शांतिनाथ वर वंश जगत प्रदीप, मेरे लिए करहि शांति सदा अनूप ॥५॥

इन्द्रवज्रा छंद

सम्पूजकों को प्रतिपालकों को, यतीनको को यति नायकों को ।
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेश को, ले कीजे सुखी हे जिन शांति को दे ॥६॥

स्रग्धरा छंद

होवे सारी प्रजा को सुख, बलयुत हो धर्म धारी नरेशा ।
होवे वर्षा समय पर, तिल भर न रहे व्याधियों का अंदेशा ॥

होवे चोरी न मारी, सुसमय वरते, हो न दुष्काल भारी ।
सारे ही देश धारें, जिनवर वृष को जो सदा सौख्यकारी ॥७॥

दोहा - घाति कर्म जिन नाश करि, पायो केवलराज ।
शांति करो सब जगत में, वृषभादिक जिनराज ॥

(यह तीन बार पढें और तीन बार शान्ति धारा देवें)

मंदाक्रांता छंद (सब हाथ जोड़ लें)

शास्त्रो का हो पठन सुखदा, लाभ सत्संगति का ।
सद्वृत्तों का सुजस कहके, दोष ढाकूं सभी का ।।
बोलू प्यारे वचन हितके, आपका रूप ध्याऊँ ।
तोलों सेऊँ चरण जिनके, मोक्ष जोलों न पाऊँ ।।

आर्या छन्द

तब पद मेरे हिय में, मम हिय तेरे पुनीत चरणों में ।
तब लों लीन रहों प्रभु, जबलो न पाया मुक्तिपद मैंने ।।
अक्षर पद मात्रा से दूषित, जो कुछ कहा गया मुझ से ।
क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणाकरि पुनि छुड़ाहु भवदुख से ।।
हे जगबंधु जिनेश्वर पाऊँ, तब चरण शरण बलिहारी ।
मरण समाधि सुदुर्लभ, कर्मो का क्षय सुबोध सुखकारी ।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

(नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप करें ।)

विसर्जन पाठ

बिन जाने व जान के, रही टूट जो कोय ।
तुम प्रसाद ते परमगुरु, सो सब पूरण होय ।।१।।
पूजा विधि जानूं नहीं, नहीं जानूं आह्वान ।
और विसर्जन हूं नहीं, क्षमा करो भगवान ।।२।।
मन्त्रहीन धनहीन हूँ, क्रियाहीन जिनदेव ।
क्षमा करहु राखहु मुझे, देहु चरण की सेव ।।३।।
चौवीसों जिनराज पद, पूजे शक्ति प्रमाण ।
पूजा विसर्जन मैं करूं, सदा करो कल्याण ।।

ठोने पर पुष्प क्षेपण कर विसर्जन करें तथा ठोने पर जल डालकर संकल्प के पुष्पों को थाली में डाल देवें (अग्नि में नहीं डालें) ।

यागमण्डल
विधान

यागमण्डल - विधान

यागमण्डल रचना [1]

मुक्ताचूर्णमुदीर्णपूर्णकनकस्थाल्यर्पितं शुद्धिभृद् ।
व्यस्त्रोद्भासितपेषणीषु युवतीश्लाघ्याभिरुत्पेषितम् ।।
चंचच्चन्द्रकला कलापहृदयाहंकारनिर्वापकं ।
स्थाप्याग्रे विधिमंजुलं धनद भो सन्मंडलं संलिख ।।
इति श्वेतचूर्ण स्थापनम्

पीतचूर्ण स्थापन

हारिद्रपीतमणिचूर्णकृताधिवासोस्वर्णावखंडपरिमंडलभृद्विकल्पः ।
त्वं भो कुबेर जिनसद्मनि चित्रशोभे सन्मंडलं रदशुभायति पुण्यहेतोः ।।
इति पीतचूर्ण स्थापनम्

हरिच्चूर्ण स्थापन

वैडूर्यरत्नकृतचूर्णमनर्घ्यजातं वास्तोष्पतीयवनभूसदृशं मनोज्ञं ।
उड्डीयमानशुकपक्षवदाप्लुतांगं संगृह्य गुह्यकपते रदमंडलानि ।।
इति हरिच्चूर्ण स्थापनम् ।

रक्तचूर्ण स्थापन

माणिक्यताम्रमणिचूर्णसुपांशुमंत्रैः हस्ते प्रगृह्य समवसृतिचित्रकार ।
सन्मंडलं जिनपतेः प्रतिपातनेष्टौ संलिख्य निर्जरगणे कृतिमान् भवेथाः ।।
इति रक्तचूर्णस्थापनम्

कृष्णचूर्ण स्थापन

गारुत्मताश्मशिखिकंठमणिप्रवाहजातः सुकौशलकृता हृदयापहारी ।
चूर्णोलिपक्षसमतामुपनीय यक्ष राजेन मंडलविधौ विनियोक्तुमिष्टः ।।
इति कृष्णचूर्ण स्थापनम्

हीरक स्थापन

कोणेषु वेद्याश्चतुरस्रदेशे संस्थाप्य गाढं घनघातयोगात् ।
सद्धीरकान् शंकुवदासितांश्च काष्ठाविमूर्ध्नी शिथिलीकरोतु ।।
इति वेद्याः कोणे हीरक स्थापनम् ।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ३३३ से ३३८

लघुपताका स्थापन

स्थाने स्थाने सं निवेश्याः पताका लघ्वः स्थूला उन्नतांशामहोर्व्याम् ।
वादित्राणां नादपूर्व वरस्त्रीगीतध्वानै मंगलार्थैरनूनैः ॥

इति वेद्यग्रभूमौ च वेदीपरितो पंच वर्णकाः पीत, हरित, शुक्ल, नील श्याम, लघुपताकाः स्थापनम् ।

इस यज्ञ में दो वेदी आवश्यक हैं एक तो यागमंडल के लिये मुख्यवेदी और दूसरी अन्तरकर्म जप ध्यान मंत्र आदि के निमित्त उत्तर वेदी ।

अथोत्तरस्मै कृति कर्मणे कृती वेदीं द्वितीयां विनिवर्त्य पावनीं ।
यागीयमंत्राणि तथोत्तरं पृथक् कर्मारंभतां यजनक्रियोचितं ॥

अथ यागमण्डल प्रयोगः

अचिंत्यचिंतामणिकल्पवृक्षरसायनाधीश्वरमादिदेवम् ।
वंदामहे सृष्टिविधानमूढप्राणिप्रणेतारमबाध्यवाक्यम् ॥१॥

स्याद्वादविद्यामृततर्पणेन सुप्तं जगद्बोधयितारमर्च्यम् ।
श्रीकुंदकुंदादिमुनि प्रणम्य श्रीमूलसंघे प्रणमामि यज्ञम् ॥२॥

एवं समासादितवेदिकादिप्रतिष्ठयोपक्रियया दृढार्थः ।
पुष्पांजलिक्षेपणमत्रसार्थे वितीर्य यागोद्धरणे यतेऽहम् ॥३॥

परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्

अथ यागमण्डलोद्धारः

मंगलाष्टक, पात्रशुद्धि, दिग्बंधन, रक्षामंत्र शान्तिमंत्राराधन कर यागमण्डल विधान करें इसके प्रारंभ में यागमण्डल का उद्धार कहते हैं

ओं जय जय जय, नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु, नदं नदं नदं, पुनीहि पुनीहि पुनीहि । ओं णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।

मध्ये तेजस्तदंगे वलयितसरणौ पंच पूज्योत्तमादि –
द्वादश्यर्चा द्वितीये चतुरधिकसुविशा जिना भूतकालाः
अग्रेष्ट योर्वर्तमाना अवरतणकृत्तोऽग्रे विदेहस्थपूज्या,
आचार्याः पाठकाः स्युर्मुनिवरसुगुणा वन्हिवृत्ते निवेश्याः ॥[1]

मध्य में ओंकार, प्रथम वलय में पंचपरमेष्ठी और मंगलादिक द्वादश पूजा, और

(1) आ. ज. से. कृत. प्रतिष्ठा पाठ श्लोक ४३८ से ४४१

द्वितीय वलय मे चौबीस तीर्थंकर भूत काल के, तृतीय वलय में चौबीस तीर्थंकर वर्तमान काल के, चतुर्थ वलय में चौबीस तीर्थंकर भविष्यकाल के, पंचम वलय में विदेह के बीस जिन, षष्ट वलय में आचार्य, सप्तम वलय में उपाध्याय, अष्टम वलय में साधु परमेष्ठी की पूजा करना ।

तेषामग्रिमवृत्तके गणधरा ऋद्धि प्रशस्ताश्चतुः -
दिक्षु स्यु क्षितिमण्डले जिनगृहं चैत्यागमौ सद्वृषाः ।

एव स्युर्निधयो नवा पर विधैर्युक्ता इहाभ्युद्धृते,
सद्यागार्चनमंडले विलिखिताः पूज्याः स्वमंत्रैः सदा ।।

नवमे वलय में ऋद्धिधारी गणधर और चतुर्दिशा में चैत्य, चैत्यालय, जिनागम, जिनधर्म ऐसे नव वलय में बनावें इस यागमंडल में लिखे हुये अपने-अपने मंत्रों द्वारा सदा पूज्य है ।

प्रथमे १७, द्वितीये २४, तृतीये २४, चतुर्थे २४, पंचमे २०, षष्ठे ३६, सप्तमे २५, अष्टमे २८ नवमे ४८, कोणचतुष्के ४ एवं कोष्ठक्रमः ।

द्विशतोत्तरतः पंचाशत्स्थानं सूपूजयति यो धीमान् ।
निर्धूतकलुषनिकरो जिनबिम्बस्थापको भवति ।।

ऐसे जो सुबुद्धि प्राणी है वे दो सौ पचास अर्घो से पूज्य हैं, सो सर्व पापमल धोकर जिनबिंब को स्थापन करने वाले होते हैं ।

वेद्यामूले पंचरत्नोपशोभं कंठे लंबान्माल्यमादर्शयुक्तं ।
माणिक्याभं कांचन पूगदर्भस्रक् वासोभं सद्घटं स्थापयेद् वै ।।
ओं ह्रीं अर्हं मंगलकलशस्थापनं करोमि

यागमण्डल (माड़ना) के चारो कोनों पर चारआराधना स्वरूप (सम्यक् दर्शन, ज्ञान चारित्र एव तप) चार मंगल कलश स्थापित करें । तथा मौली (पंचवर्णी सूत्र से चारों कलशो को (एक साथ) तीन बार वेष्टित करें ।

श्वेतेन पीतेन चलोहितेन धर्मानुरागात् प्रविकल्पितेन ।
जिनस्य मन्त्रेण पवित्रतेन सूत्रेण कुम्भं अनिवेष्टयामि ।।[१]

ओं नमो भगवते अ सि आ उ सा ऐं ह्रीं ह्रां ह्रीं सः संवौषट् त्रिवर्ण सूत्रेण शान्तिकुम्भं वेष्टयामि ।

(१) जैन सिद्धांत भवन ग्रंथावलि आरा ३७७

यागमण्डल विधान [1]

प्रत्यर्थिव्रजनिर्जयान्निजगुणप्राप्तावनंताक्रम-
दृष्टिज्ञानचरित्रवीर्यसुखचित् संज्ञास्वभावाः परम्।
आगत्यात्र निवेशितांकितपदैः संवौषडा द्विष्ठतो,
मुद्रारोपणसत्कृतैश्च वषडा गृह्णीध्वमर्चाविधिम् ।।

ओं ह्रीं अत्र जिनप्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमंडलोक्ता जिनमुनय अत्रावतर अवतर। तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ममात्रसंनिहितो भव भव वषट् इत्यादि त्रिवारं कुर्यात्। मण्डलमध्ये सुप्रतीकपीठे स्वास्तिकोपरि स्थापयेत्। (मण्डल में स्वास्तिक बनाकर ठोना रखकर स्थापना करें)

प्रांशुस्वर्णमणिप्रभाततिभृताभृगारनालोच्छ्लद्-
गंगासिन्धुसरिन्मुखोपचितसत्पाथो भरेण त्रिधा।
जन्मारातिविभंजनौषधिमितेनोद्भूतगंधालिना
चाये यागनिधीश्वरानवहृते निःश्रेयसः प्राप्तये ।।

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वर जिन मुनिभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

घुसृणमलयजातैश्चंदनैः शीतगंधैर्भवजलनिधिमध्ये दुःखदोवाडवाग्निः।
तदुपशमनिमित्तंबद्धकक्षैर्निमज्जद् भ्रमरयुवभिरीडत् सांद्रसार्द्रप्रवाहैः ।।

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वर जिनमुनिभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शशांकस्पर्द्धिभिः कमलजननैरक्षतपदा-
धिरूढैः श्रामण्यं शुचिसरलताद्यैर्गुणवरैः।
हसद्भिः साम्राज्याधिपतिचमनार्हैः सुरभिभि -
र्जिनार्चान्हि प्रांची विपुलतरपुंजैः परियजे ।।

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वर जिन मुनिभ्योऽक्षतम् निर्वपामीति स्वाहा।

दुरंतमोहानलदीप्यदंशुकामेन नष्टीकृतमाशुविश्वम्।
तद्वाणराजीशमनाय पुष्पैर्यजामि कल्पद्रुमसंगतैर्वा ।।

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वर मुनिभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पीयूषपिंडनिवहैर्घृतशर्करान्न, योगोद्भवैर्नयनचित्तविलासदक्षैः।
चामीकरादिशुचिभाजनसंस्थितैर्वा संपूजयाम्यशनबाधनबाधनाय ।।

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा श्लोक ४४२ से ७७२

अमितमोहतमोविनिवृत्तये घटितरत्नमणिप्रभवात्मभिः।
अयमहं खलु दीपकनामकैर्जिनपदाग्रभुवं परिदीपये ।।

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वर जिनमुनिभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूपोद्घ्राणैर्यजनविधिषु प्रीणिताशेषदिक्कै-
रुद्यद्वह्नवगुरु मलयापीडकान् संदहद्भिः।
अर्चे कर्मक्षपणकरणे कारणैराप्तवाक्यै -
र्यज्ञाधीशानिह बहुविधैर्धूपदानप्रशस्तैः ।।

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

निःश्रेयसपदलब्ध्यै कृत्तावतारैः प्रमाणपटुभिरिव ।
स्याद्वादभंगनिकरैर्यजामि सर्वज्ञमनिशममरफलैः ।।

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

पात्रे सौवर्णे कृतमानंदजयषट्पूजार्हतं विस्फुरितानां हृदयेऽत्र ।
तोयाद्यष्टद्रव्यसमेतैर्भृतमर्घ शास्तृणामग्रे विनयेन प्रणिदध्मः ।।

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ प्रत्येकार्घाणि

अनंतकालसंपद्भवभ्रमणभीतितो निर्वार्य संदधन् स्वयं शिवोत्तमार्यसद्मनि ।
जिनेश-विश्वदर्शि-विश्वनाथ-मुख्यनामभिःस्तुतं जिनं महामि नीरचंदनैः फलैरहं ।।

ओं ह्रीं अनंतभवार्णवभयनिवारकानंतगुणस्तुतायार्हतेऽर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्मकाष्ठहुतभुक् स्वशक्तितः संप्रकाश्य महनीयभानुभिः ।
लोकतत्त्वमचले निजात्मनि संस्थितं शिवमहीपतिं यजे ।।

ओं ह्रीं अष्टकर्मविनाशकनिजात्मतत्त्वविभासकसिद्धपरमेष्ठिनेऽर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

सार्थवाहमनवद्यविद्यया शिक्षणान्मुनिमहात्मनां वरम् ।
मोक्षमार्गमलघुप्रकाशकं संयजे गुरुपरंपरेश्वरम् ।।

ओं ह्रीं अनवद्यविद्याविद्योतनायाचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

द्वादशांगपरिपूर्णसच्छ्रुतं यः परानुपदिशेत पाठतः ।
बोधयत्यभिहितार्थ सिद्धये तानुपास्य यजयामि पाठकान् ।।

ओं ह्रीं द्वादशांगपरिपूर्णश्रुतपाठनोद्यतबुद्धिविभवोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

उग्रमर्घ्यतपसाभिसंस्कृति ध्यानमानतिनिवेशितात्मक,
साधक शिवरमासुखामृते साधुमीड्यपदलब्धयेऽर्चये ।
ओं ह्रीं घोरतपोऽभिसंस्कृतध्यानस्वाध्यायनिरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घम् ।

अर्हन्नेव त्रिभुवनजनानंदनान्मङलाग्र्यो विघ्नध्वसं निजमतिकृत्तादस्त्रसघोपनोदात् ।
संकुर्वस्तत् प्रकृतिरपि स्पष्टमानददायि न्येव स्मृत्वा जलचरु फलैरर्चयामि त्रिवारम् ॥
ओं ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिमंगलायार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

स्मारं स्मारं गुणगणमणिस्फारसामर्थ्यमुच्चै यत्प्राप्त्यर्थ प्रयतति जनो मोक्षतत्त्वेऽनवद्ये ।
प्रत्यूहान्तं भवभवगतानां प्रघातप्रक्लृप्त्यै सिद्धानेव श्रुतिमतिबलादर्चये संविचार्य ॥
ओं ह्रीं सिद्धमंगलेभ्योऽर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

रागद्वेषोरगपरिशमे मंत्ररूपस्वभावा मित्रे शत्रौ समकृतहृदानंदमांगल्यरूपा ।
येषां नामस्मरणमपि सन्मगलं मुक्तिदायी त्यर्चे यज्ञे वसुविधविधि प्रीणनै॰ प्राणिपूज्यम् ॥
ओं ह्रीं साधुमंगलायार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

मूर्च्छां मूर्च्छां गुरुलघुभिदा द्वैधवर्त्म प्रदिष्टो जैनो धर्म सुरशिवगृहद्वारदर्शीनितातम् ।
सेव्यो विघ्नप्रहणनविधावुत्तमार्थै॰ प्रशस्त सपूजेऽह यजनमननोद्यामसिद्ध्यर्थमह्यग् ॥
ओं ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्ममंगलायार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

येषां पादस्मृतिसुखसुधायोगतस्तीर्थनाम प्रापु पुण्यं यदवनतिना जन्मसार्थं लभते ।
लोका धात्र्यां वनगिरिभुवश्चोत्तमत्व जिनेंद्रा नर्चे यज्ञप्रसवविधिषु व्यक्तये मुक्तिलक्ष्म्या ॥
ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमेभ्योऽर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

दृष्टिज्ञानप्रतिभटतया कर्ममीमासयाऽन्यान् श्वभ्रे संपादयति विविधा वेदना॰ सकरोति ।
तेषा मूलं निविडपरमज्ञानखड्गेन हत्वा नि॰कर्मत्व समधिगतवानर्च्यते सिद्धनाथ ॥
ओं ह्रीं सिद्धलोकोत्तमायार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

सूर्याचंद्रौ मरुदधिपतिर्भूमिनाथोऽसुरेंद्रो यस्याहृदब्जे प्रणतशिरसा लोलुठीति त्रिशुद्ध्या ।
सोऽयं लोकेप्रवरगणना पूजित॰ किनवा स्याद् यस्मादर्चे मुनिपरिवृढंस्वानुभावप्रसत्त्या ॥
ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमेभ्योऽर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

यत्र प्राणि प्रवरकरुणा यत्र मिथ्यात्वनाशो यत्रोपांते शिवपदसमान्वेषणा कामनष्टि॰ ।
यत्र प्रोक्ता दुरितविरति सोयमग्र्य कथन यस्माद् धर्मो निखिलहितकृत् पूज्यतेऽसौम याऽपि ॥
ओं ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्मलोकोत्तमायार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

जीवाजीवद्विविधशरणान्वेषणस्थैर्यभगं ज्ञात्वा त्यक्त्वाऽन्यतरशरणं नश्वरं मद्विधानाम् ।
इद्रादीनामिति परिचयादात्मरत्नोपलब्धि र्मिष्टै॰ प्राप्तु निचितमनसा पूज्यतेऽर्हन् शरण्य ॥
ओं ह्रीं अर्हच्छरणेभ्योऽर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

यावद्देहे स्थितिरुपचय· कर्मणामास्रवेण तावत्सौख्यं कुत्र उपलभेऽतरस्ततस्त्रोट नेच्छुः ।
एतत्कृत्यं न भवति विना सिद्धभक्तिः यतो मे पूर्णार्घौघप्रयजनविधावाश्रितोऽहं शरण्यम् ॥
ओं ह्रीं सिद्धशरणायार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

रागद्वेषव्यपगमनतो निःस्पृहा धीरवीराः संसाराब्धौ विषमगहने मज्जतां निर्निमित्तम् ।
दत्त्वा धर्मोद्धरणतरणि पारयंतो मुनीशा स्तानर्घेण स्थिरगुणधिया प्रा र्चयामि त्रिगुप्त्या ॥
ओं ह्रीं साधु शरणेभ्योऽर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

मित्रं सम्यक् परभवयथाचक्रमे सार्थदायि नान्यो धर्माद्दुरितदहनप्लोषणेऽबुप्रवाहः ।
जानंतं मां समदृशिधियां संनिधानाच्छरण्यं त्रायस्व त्वं त्वयि धृतिगतिं पूजनार्घेणयुक्तम् ॥
ओं ह्रीं धर्मशरणायार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

सर्वानेतान् तत्त्वचंद्रप्रमाणान् जापध्यानस्तोत्रमंत्रैरुदर्च्य ।
द्रव्यक्षेत्रस्फूर्तिसज्जावकाशं नत्वार्घेण प्रांशुना संस्मरामि ॥
ओं ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिप्रभृतिधर्मशरणांतप्रथमवलय स्थितसप्तदशजिनाधीशयज्ञ देवताभ्योऽर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ द्वितीयवलये चतुर्विंशतिभूत जिनपूजा

निर्वाणदेवं श्रितभव्यलोकनिर्वाणदातारमनंत सौख्यम् ।
सपूजयेऽहं मखसिद्धिहेतोरधीश्वरं प्राथमिकं जिनेन्द्रम् ॥
ओं ह्रीं निर्वाणजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीसागरं वीतममत्वरागद्वेषं कृताशेषजनप्रसादम् ।
समर्चये नीरचरुप्रदीपैरुद्दीपिताशेषपदार्थमालम् ॥
ओं ह्रीं सागरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीमन्महासाधुजिनं प्रमाणनयप्रगाणीकृतजीवतत्त्वं ।
स्याद्वादभंगप्रणिधानहेतुं समर्चये यज्ञविधानसिद्ध्यै ॥
ओं ह्रीं महासाधुजिनायार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

यस्यातिसाज्ज्ञानविशालदीपे प्रभासमानं जगदल्पसारं ।
विलोक्यते सर्षपवत्कराग्रे समर्चयेऽहं विमलप्रभाख्यं ॥
ओं ह्रीं विमलप्रभायार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

समाश्रितानां मनसो विशुद्ध्यै कृतावतारं मुनिगीतकीर्तिम् ।
प्रणम्य यज्ञेऽहमुदर्चयामि शुद्धाभदेवं चरुभिः प्रदीपैः ॥
ओं ह्रीं शुद्धाभदेवायार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

लक्ष्मीद्वयं वाह्यगतांतरगभेदात्पदाग्रे विलुलोठ यस्य ।
यस्मात्सदा श्रीधरकीर्तिमापत्तमर्चयेऽद्याश्रितभव्यसार्थम् ।।

ओं ह्रीं श्रीधराय अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रियं ददातीह सुभक्तिभाजां वृंदाय यस्मादिह नाम जातम् ।
श्रीदत्तदेवं भवभीतिमुक्त्यै यजामि नित्याद्‌भुतधामलक्ष्म्यै ।।

ओं ह्री श्रीदत्तजिनायार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

सिद्धाप्रभांगस्य विसर्पिणी तन्मध्ये जनु : सप्तकदर्शनेन ।
सम्यग्विशुद्धिर्मनसो यतस्त्वा सिद्धाभ ! यज्ञेऽर्चयितुं समीहे ।।

ओं ह्रीं सिद्धाभजिनायार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रभामतिः शक्तिरनेकधा सद्ध्यानलक्ष्म्या यत उत्तमार्थैः ।
संगीयते त्वं ह्यमलां विभर्षि यतोऽर्चये त्वाममलप्रभाख्यम् ।।

ओं ह्रीं अमलप्रभजिनायार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

अनेकसंसारगतं भ्रमेभ्य उद्धारकर्तेति बुधैरवादि ।
यतो मम भ्रांतिमपाकुरु त्वमुद्धारदेवं प्रयजे भवंतम् ।।

ओं ह्रीं उद्धारजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

दुष्टाष्टकर्मेधनदाहकर्ता यतोऽग्निनामाभ्युदितं यथार्थम् ।
ततो ममासाततृणव्रजेऽपि तिष्ठार्चये त्वां किमु पौनरुक्त्या ।।

ओं ह्रीं अग्निदेवजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

प्राणेंद्रियद्वैधसुसंयमस्य दातारमुच्चै कथयामि सर्वम् ।
मद्दत्तमर्घ जिन संगृहाण सुसंयमं स्वीयगुणं प्रदेहि ।।

ओं ह्रीं संयमजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वयं शिव. शाश्वतसौख्यदायि स्वयंप्रभुः स्वात्मगुणप्रपन्नः ।
तस्मात्तदर्थप्रतिपन्नकामस्त्वमर्चये प्रांजलिना नतोऽस्मि ।।

ओं ह्रीं शिवजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सत्कुंदमल्लीजलजादि-पुष्पैरभ्यर्च्यमान. श्रियमादधाति ।
नाम्नाऽप्यसौ तादृश एव यस्मात् पुष्पांजलि त्वां प्रतिपूजयामि ।।

ओं ह्रीं पुष्पांजलिजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा

उत्साहयन् ज्ञानधनेश्वराणां शाम्याम्बुधि संयमचंद्रकीर्तेः ।
उत्साहनाथो यजनोत्सवेऽस्मिन् संपूजितो मे स्वगुणं ददातु ।।

ओं ह्रीं उत्साहजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

नमोऽस्तु नित्यं परमेश्वराय कृपा यदीया क्षणसंनिधानात् ।
करोति चिंतामणिरीप्सितार्थमिवार्चये तं परमेश्वराख्यम् ।।

ओं ह्रीं परमेश्वरजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यज्ज्ञानरत्नाकरमध्यवर्ती जगत्त्रयं बिंदुसमं विभाति ।
तं ज्ञानसाम्राज्यपतिं जिनेन्द्रं ज्ञानेश्वरं संप्रति पूजयामि ।।

ओं ह्रीं ज्ञानेश्वरजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

तपोवृहद्भानुसमूढतापवृत्त्यात्मनैर्मल्यमनिर्मलानाम् ।
अस्मादृशां तद्गुणमाददानं संपूजयामो विमलेश्वरं तम् ।।

ओं ह्रीं विमलेश्वरजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यशः प्रसारे सति यस्य विश्वं सुधामयं चंद्रकलावदातम् ।
अनेकरूपं विकृतैकरूपं जातं समर्चे हि यशोधरेशम् ।।

ओं ह्रीं यशोधरजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

क्रोधस्मराशातविघातनाय संजाततीव्रक्रुधिवात्मनाम ।
प्राप्तं तु कृष्णेति नु शुद्धियोगात् तं कृष्णमर्चेशुचिता प्रपन्नम् ।।

ओं ह्रीं कृष्णमतये जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ज्ञान मतिर्भाव उपाश्रयादिरेकार्थ एव प्रणिधानयोगात् ।
ज्ञानेमतिर्यस्य समासजातेर्यथार्थनामानमहं यजामि ।।

ओं ह्रीं ज्ञानमतये जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

समस्य मानान्यपदार्थजातं धुरंधरं धर्मरथांगनेमिः ।
जिनेश्वरं शुद्धमतिं यजेत प्राप्नोति शुद्धां मतिमेव ना सः ।

ओं ह्रीं शुद्धमतये जिनायार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

संसारलक्ष्म्या अतिनश्वराय जन्मर्क्षमुद्रामिव कुत्सयन्वा ।
भद्रा शिवश्रीरिति योगयुक्त्या श्रीभद्रमीशं रभसार्चयामि ।।

ओं ह्रीं श्रीभद्रजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अनंतवीर्यादिगुणप्रसन्नमात्मप्रभावानुभवैकगम्यम् ।
अनंतवीर्यं जिनपं स्तवीमि यज्ञार्थभागैरुपलाल्यमानम् ।।

ओं ह्रीं अनंतवीर्यजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पूर्वं विसर्पिण्यथ कालमध्ये संजातकल्याणपरंपराणाम् ।
संस्मृत्य सार्थं प्रगुणं जिनानां यज्ञे समाहूय यजे समस्तान् ।।

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठामहोत्सवे याज्ञमंडलेश्वरद्वितीयवलयोन्मुद्रितनिर्वाणाद्यनंत-वीर्यान्तेभ्यो भूतजिनेभ्योऽर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ तृतीयवलयस्थापित वर्तमान जिनपूजा

मनुनाभिमहीधरजात्मभुव मरुदेव्युदरावतरंतमहम्।
प्रणिपत्य शिरोऽभ्युदयाय यजे कृत्तगुख्यजिन वृषभ वृषभम् ॥
ओं ह्रीं ऋषभजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

जितशत्रुगृह परिभूषयितु व्यवहारदिशा तनुभूप्रभवम्।
नयनिश्चयत. स्वयमेवभुवमजितं जिनमर्चतु यज्ञधरं ॥
ओं ह्रीं अजितजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

दृढराजसुवंशनभोमिहिरं त्रिजगत्त्रयभूषणमभ्युदयम्।
जिनसंभवमूर्ध्वगतिप्रदमर्चनया प्रणमामि पुरस्कृत्तया ॥
ओं ह्रीं संभवजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

कपिकेतनमीश्वरमर्थयतो मृतिजन्मजरापदनोदतः।
भविकस्य महोत्सवसिद्धिमियादतएव यजे ह्यभिनंदनकम् ॥
ओं ह्रीं अभिनन्दननाथ जिनायार्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

सुमति श्रितमर्त्यमतिप्रकरार्पणतोऽर्थकराख्यमवाप्तशिवम्।
महयामि पितामहमेतदधिजगतीत्रयमूर्जितभक्तिनुत.॥
ओं ह्रीं सुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

धरणेशभव भवभावमित जलजप्रभमीश्वरमानमताम्।
सुरसंपदियर्ति न केति यजे चरुदीपफलै' सुरवासभवै ॥
ओं ह्रीं पद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

शुभपार्श्वजिनेश्वरपादभुवां रजसां श्रयत कमलाततय.।
कति नाम भवंति न यज्ञभुवि नयितुं महयामि महध्वनिभिः ॥
ओं ह्रीं सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

मनसा परिचित्य विधुः स्वरसात् मम कांतिहृतिर्जिनदेहघृणेः।
इति पादभुवं श्रितवानिव तं जिनचंद्रपदाबुजमाश्रयत ॥
ओं ह्रीं चन्द्रप्रभजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

सुमदतजिनं नवमं सुविधीतिपराहमखडमनंगहरम्।
शुचिदेहततिप्रसरं प्रणुतात् सलिलादिगणैर्यजतां विधिना ॥
ओं ह्रीं पुष्पदंतजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

शीत सुखं लाति सदा सुजीवान्, तं शीतलं प्रणिगदंति यतीश्वराद्याः।
तं शीतलं श्रयत भव्यजनाहि भक्त्या, यस्याश्रयेणभवतीहममापि सौख्यम् ॥
ओं ह्रीं शीतलजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेयो जिनस्य चरणौ परिधार्य चित्ते संसारपंचतयदुर्भ्रमणव्यपायः ।
श्रेयोऽर्थिना भवति तत्कृतये मयाऽपि संपूज्यते यजनसद्विधिषु प्रशस्य ।।
ओं ह्री श्रेयोजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

इक्ष्वाकुवंशतिलको वसुपूज्यराजा यज्जन्मजातकविधौ हरिणार्चितोऽभूत् ।
तद्वासुपूज्यजिनपार्चनया पुनीतः स्यामद्य तत्प्रतिकृतिं चरुभिर्यजामि ।।**ओं ह्री वासुपूज्यजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।**

कापिल्यनाथकृतवर्मगृहावतारं श्यामाजयाहजननीसुखदं नमामि ।
कोलध्वजं विमलमीश्वरमध्वरेऽस्मिन्नर्चे द्विरुक्तमलहापनकर्मसिद्ध्यै ।।
ओं ह्रीं विमलनाथजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

साकेतनायकनृपस्य च सिंहसेननाम्नस्तनूजममरार्चितपादपद्मं ।
संपूजयामि विविधार्हणया ह्यनंतनाथं चतुर्दशजिनं सलिलाक्षतौधैः ।।
ओं ह्रीं अनंतनाथजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

धर्मं द्विधोपदिशता सदसीद्धधार्ये किं किं न नाम जनताहितमन्वदर्शि ।
श्रीधर्मनाथ! भवतेति सदर्थनाम संप्राप्तयेऽर्चनविधिं पुरतः करोमि ।।
ओं ह्रीं धर्मनाथजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री हस्तिनागपुरपालकविश्वसेनः स्वांके निवेश्य तनयामृतपुष्टितुष्टः ।
ऐराऽपि सा सुकुरुवंशनिधानभूमिर्यस्माद् बभूव जिनशांतिमिहाश्रयामि ।।
ओं ह्रीं शांतिनाथ जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीकुंथुनाथजिनजन्मनि षट्निकायजीवाः सुखं निरुपमं बुभुजुर्विशंकम् ।
किं नाम तत्स्मृतिनिराकुलमानसोऽहं भुञ्वे न सत्वरमतोऽर्चनमारभेय ।।
ओं ह्री कुंथुनाथजिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सद्दर्शनप्लुतसुदर्शनभूपपुत्रं, त्रैलोक्यजीववररक्षणहेतुमित्रम्।
श्रीमित्रसेनजननीखनिरत्नमर्चे श्रीपुष्पचिह्नमरनाथजिनेन्द्रमर्च्यम् ।।
ओं ह्रीं अरनाथजिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

कुंभोद्भवं धरणिदुःखहरं प्रजावत्यानंदकारकमतंद्रमुनींद्रसेव्यम् ।
श्रीमल्लिनाथविभुमध्वरविघ्नशांत्यै संपूजये जलसुचंदनपुष्पदीपैः ।।
ओं ह्रीं मल्लिनाथजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

राजत्सुराजहरिवंशनभोविभास्वान् वप्राबिकाप्रियसुतो मुनिसुव्रताख्यः ।
संपूज्यते शिवपथप्रतिपत्यहेतुर्यज्ञे मया विविधवस्तुभिरर्हणेऽस्मिन् ।।
ओं ह्रीं मुनिसुव्रतजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सन्मैथिलेशविजयाह्वगृहेऽवतीर्णकल्याणपचकसमर्चितपादपद्मम्।
धर्माबुवाहपरिपोषितभव्यशस्य नित्यं नमि जिनवरं महसार्चयामि ॥
ओं ह्रीं नमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

द्वारावतीपतिसमुद्रजयेशमान्यश्रीयादवेशबलकेशवपूजिताघ्रिम्।
शंखांकमंबुधरमेचघ्रदेहमर्चे सद्ब्रह्मचारिमणिनेमिजिनं जलाद्यैः ॥
ओं ह्री नेमिनाथजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

काशीपुरीशनृपभूषणविश्वसेननेत्रप्रिय कमठशाठ्यविखडमेन।
पद्माहिराजविबुधव्रजपूजनांकं वन्देऽर्चयामि शिरसानतमौलिनीतः ॥
ओं ह्रीं पार्श्वनाथ जिनायार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

सिद्धार्थभूपतिगणेन पुरस्क्रियायामानंदतांडवविधौ स्वजनुः शशंसे।
श्रीश्रेणिकेन सदसि ध्रुवभूपदाप्त्यै यज्ञेऽर्चयामि वरवीरजिनेद्रमस्मिन् ॥
ओं ह्रीं वर्धमानजिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अत्राहूतसुपर्वपर्वनिकरे बिबप्रतिष्ठोत्सवे-
सपूज्याश्चतुरुत्तरा जिनवरा विशप्रमाः सप्रति ।
'संजाग्रत्समयादयैकसुकृतानुद्धार्य मोक्षं गता -
स्तेऽत्रागत्य समस्तमध्वरकृतं ग्रहणतु पूजाविधिम् ॥

ओं ह्रीं अस्मिन् यागमंडले मखमुख्यार्चिततृतीयवलयोन्मुद्रितवर्तमानचतुर्विंशतिजिनेभ्यः पूर्णार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ चतुर्थवलयस्थापितभविष्यज्जिनपूजा

पद्मा चलेत्यंकनलुप्तिकामा जिनस्य पादावचलौ विचार्य ।
यत्पादपद्मवसति चकार सोऽयं महापद्मजिनोऽर्च्यतेऽर्घै ॥
ओं ह्री महापद्मजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

देवाश्चतुर्भेदनिकायभिन्नास्तेषा पदौ मूर्धनि संदधानः ।
तेनैव जात सुरदेवनाम तमर्चये यज्ञविधौ जलाद्यैः ॥
ओं ह्रीं सुरप्रभजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सेवार्थमुत्प्रेक्ष्य न भूतिदाता कारुण्यबुद्धयैव ददाति लक्ष्मीम् ।
यतो जिनः सुप्रभुरायसार्थ तमर्चयेऽह विधिनाध्वरीयै ॥
ओं ह्री सुप्रभजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

न केनचित्पट्टविधायि मोक्षसाम्राज्यलक्ष्म्याः स्वयमेव लब्धम् ।
स्वयं प्रभत्वं स्वयमेव जातं यस्यार्च्यते पादसरोजयुग्मं ॥

ओं ह्रीं स्वयंप्रभदेवाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सर्वं मनः कायवचः प्रहारे कर्मागसां शस्त्रमभूद् यतो यः ।
सर्वायुधाख्यामगमन्मयाद्य संपूज्यतेऽसौ कृतुभागभाज्यैः ॥

ओं ह्रीं सर्वायुधदेवाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्मद्विषां मूलमपास्य लब्धोजयोऽन्यमर्त्यैरपि योऽनवाप्यः ।
ततो जयाख्यामुपलभ्यमानो मयार्हणाभिः परिपूज्यते ऽसौ ॥

ओं ह्रीं जयदेवाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

आत्मप्रभावोदयनान्नितांतं लब्धोदयत्वादुदयप्रभाख्याम् ।
समाप यस्मादपि सार्थकत्वात् कृतार्चनं तस्य कृती भवामि ॥

ओं ह्रीं उदयप्रभजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रभा मनीषा प्रकृतोर्गतिर्ज्ञाप्रभृत्युदीर्णैकफलेति मत्वा ।
जाता प्रभादेव इति प्रशस्तिस्ततोऽर्चनातोऽहमपि प्रयामि ॥

ओं ह्रीं प्रभादेवजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

उदंकदेव त्वयि भक्तिभोग्या घटीघटीसा न तदुच्यते हा ।
त्वामेव लब्ध्वा जननं प्रयातं वरं यतस्त्वामिह तं महामि ॥

ओं ह्रीं उदंकदेवजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सुरासुरस्वांतगतभ्रमैकविध्वंसने प्रश्नकृतोपपत्त्या ।
कीर्तिं ययौ प्रोष्ठिलमुख्यनामस्तवैर्निरुक्तोऽहमुदंचयामि ॥

ओं ह्रीं प्रश्नकीर्तिजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

पापाश्रयाणां दलनाद् यशोभिर्व्यक्तेर्जयात् कीर्तिसमागमेन ।
निरुक्तलक्ष्म्यै जयकीर्तिदेवं स्तवस्रजा नित्यमुपाचरामि ॥

ओं ह्रीं जयकीर्तिदेवजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

कैवल्यभानातिशये समग्रा बुद्धिप्रवृत्तिर्यत उत्तमार्था ।
तत्पूर्णबुद्धेश्चरणौ पवित्रावर्घ्येन यायज्मि भवप्रणष्ट्यै ॥

ओं ह्रीं पूर्णबुद्धिजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

क्रोधादयश्चात्मसपत्नभावं स्वधर्मनाशान्नजहत्युदीर्णं ।
तेषां क्षतिर्येन कृता स्वशस्त्रैरतं निःकषाय प्रयजामि नित्यं ॥

ओं ह्रीं निःकषायजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

मलव्यपायान्मननात्मलाभाद् यथार्थशब्द विमलप्रभेति ।
लब्ध कृतौ स्वीयविशुद्धिकामा· सपूजयामस्तमनर्घ्यजातम् ।।

ओं ह्रीं विमलप्रभदेवजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

भास्वद्गुणग्रामविभासनेन पौरस्त्यसप्राप्तविभावितान ।
सस्मृत्य कामं बहुलप्रभ त समर्चये तद्गुणलुब्धिलुब्धः ।।

ओं ह्रीं बहुलप्रभदेवजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

नीराभ्ररत्नानि सुनिर्मलानि प्रवाद एषोऽनृतवादिनां वै ।
येन द्विधा कर्ममलो निरस्त· स निर्मल· पातु सदर्चितो माम् ।।

ओं ह्री निर्मलजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

मनोवच कायनियंत्रणेन चित्राऽस्ति गुप्तिर्यदवाप्तिपूर्ते· ।
त चित्रगुप्ताह्वयमर्चयामि गुप्तिप्रशसाप्तिरियं मम स्यात् ।।

ओं ह्रीं चित्रगुप्तिजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अपारससारगतौ समाधिर्लब्धो न यस्माद् विहितः स येन ।
समाधिगुप्तिजिनमर्चयित्वा लभे समाधि त्विति पूजयामि ।।

ओं ह्रीं समाधिगुप्तिजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वयं विनाऽन्यस्य सुयोगगात्तारवशक्तिमुद्भाव्यनिजस्वरूपे ।
व्यक्तो बभूवेति जिन· स्वयंभूर्दध्यात् शिव पूजनयानयार्च्य ।।

ओं ह्रीं स्वयंभूजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

कंदर्पनामस्मरराद्भटस्य मुधैव नामेति तदर्दनोद्घ ।
प्रशस्तकंदर्प इयाय शक्ति यतोऽर्चयेऽह तदयोगबुद्ध्यै ।

ओं ह्रीं कंदर्पजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अनेकनामानि गुणैरनंतैर्जिनस्य बोध्यानि विचारवद्भि· ।
जयं तथा न्यासमथैकविशमनागत संप्रति पूजयामि ।।

ओं ह्री जयनाथजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अभ्यर्हितात्मप्रगुणस्वभाव मलापह श्री विमलेशमीशम् ।
पात्रे निधायार्घ्यमफल्गुशीलोद्धरप्रशक्त्यै जिनमर्चयामि ।।

ओं ह्री विमलजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अनेकभाषा जगति प्रसिद्धा परन्तु दिव्यो ध्वनिरर्हतो वै ।
एव निरूप्यात्मनि तत्त्वबुद्धिमभ्यर्चयामो जिनदिव्यवादम् ।।

ओं ह्रीं दिव्यवादजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

शक्तेरपारश्चित एव गीतस्तथापि तद्व्यक्तिमियर्ति लब्ध्या ।
अनंतवीर्य त्वमगा सुयोगात्त्वामर्चये त्वत्पदघृष्ट मूर्ध्ना ।।

ओं ह्री अनंतवीर्यजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

काले भाविनि ये सुतीर्थधरणात् पूर्व प्ररूप्यागमे
विख्याता निजकर्म संततिमपाकृत्य स्फुरच्छक्तयः ।
तानत्र प्रतिकृत्यगावृतमखे संपूजिता भक्तितः
प्राप्ताशेषगुणास्तदीप्सितपदावाप्त्यै तु संतु श्रिये ।।

ओं ह्री विंबप्रतिष्ठोद्यापने मुख्यपूजार्हचतुर्थवलयोन्मुद्रितानागतचतुर्विंशतिमहापद्माद्यनंतवीर्यान्तेभ्यो जिनेभ्यः पूर्णार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा ।

अथपंचमवलयस्थापित विदेहजिनपूजा

सीमधर मोक्षमहीनगर्याः श्रीहंसचित्तोदयभानुमन्तम् ।
यत्पुंडरीकाख्यपुरस्वजात्या पूतीकृतं तं महसार्चयामि ।।

ओं ह्री सीमंधरजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

युग्मंधरं धर्मनयप्रमाणवस्तुव्यवस्थादिषु युग्मवृत्तेः।
सधारणात् श्रीरुहभूपजातं प्रणम्य पुष्पांजलिनार्चयामि ।।

ओं ह्री युग्मंधरजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सुग्रीवराजोद्भवमेणचिन्हं सुसीमपुर्या विजयाप्रसूतं ।
बाहु त्रिलोकोद्धरणाय बाहुं मखे पवित्रेऽर्चितमर्घयामि ।।

ओं ह्री बाहुजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा

निःशल्यवंशाभ्रगभस्तिमंतं सुनदया लालितमुग्रकीर्तिम् ।
अबध्यदेशाधिपति सुबाहुं तोयादिभि पूजितुमुत्सहेऽहम् ।।

ओं ह्री सुबाहुजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीदेवसेनात्मजमर्यमांकं विदेहवर्षेप्यलकापुरिस्थम् ।
सजातकं पुण्यजनुर्धरत्वात् सार्थाख्यमर्चेऽत्र मखे जलाद्यैः ।।

ओं ह्री संजातकजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वयंकृतात्मप्रभवत्वहेतोः स्वयंप्रभुं सद्धृदयस्वभूतम् ।
सन्मंगलापूः स्थमनुष्णकांतिचिन्हं यजामोऽत्र महोत्सवेषु ।।

ओं ह्रीं स्वयंप्रभजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीवीरसेना प्रसवं सुसीमाधीशं सुराणामृषभाननं तम् ।
ईशं सुसौभाग्यभुवं महेशमर्चे विशालैश्चरुभिर्नवीनैः ।।

ओं ह्री ऋषभाननदेवजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

यस्यास्ति वीर्यस्य न पारमभ्रे तारागणस्येव नितांतरम्यम् ।
अनंतवीर्यप्रभुमर्चयित्वा कृतीभवाम्यत्र मखे पवित्रे ।।

ओं ह्रीं अनंतवीर्यजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

वृषाकमुच्चैश्चरणे विभाति यस्या परस्ताद् वृषभूतिहेतुः ।
सूरिप्रभुं तं विधिना महामि वार्मुख्यतत्त्वै शिवतत्त्वलब्ध्यै ।।

ओं ह्रीं सूरिप्रभजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

वीर्येशभूमीरुहपुष्पमिद्रसल्लाछनं पुंडरपूस्किरीटम् ।
विशालमीशं विजयाप्रसूतमर्चामि तद्ध्यानपरायणोऽहम् ।।

ओं ह्रीं विशालप्रभजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सरस्वतीपद्मरथांगजातं शखाकमुच्चै. श्रियमीशितारम् ।
संमान्यतं वज्रधरं जिनेन्द्रं जलाक्षतैरर्चितमुत्करोमि ।।

ओं ह्री वज्रधरजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा

वाल्मीकवंशांबुधिशीतरश्मिं दयावतीमातृकमंक्यगावम् ।
सत्पुंडरीकिण्यवनं जिनेन्द्रं चंद्राननं पूजयताज्जलाद्यैः ।।

ओं ह्रीं चंद्राननजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा

श्रीरेणुकामातृकमब्जचिन्हं देवेशमुत्पुत्रमुदारभावम् ।
श्रीचंद्रबाहुं जिनमर्चयामि क्रतुप्रयोगे विधिना प्रणम्य ।।

ओं ह्रीं चंद्रबाहुजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा

भुजगम स्वीयभुजेन मोक्षपंथावरोहाद्धृतनामकीर्तिम् ।
महाबलक्ष्मापतिपुत्रमर्चे चद्रांकयुक्तं महिमाविशालम् ।।

ओं ह्रीं भुजंगमजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा

ज्वालाप्रसूर्येन सुशांतिमाप्ता कृतार्थतां वा गलसेनभूपः ।
सोऽयं सुसीमापतिरीश्वरो मे बोधि ददातु त्रिजगद्विलासाम् ।।

ओं ह्रीं ईश्वरजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा

नेमिप्रभं धर्मरथांगवाहे नेमिस्वरूपं तपनाकमीडे ।
वाश्चन्दनैः शालिसुमप्रदीपैः धूपैः फलैश्चारुस्वाप्रतानैः ।।

ओं ह्रीं नेमिप्रभजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीवीरसेनाप्रभवं प्रदुष्ट कर्मारिसेनाकरिणे मृगेन्द्रः ।
यः पुंडरीशं जिनवीरसेनं सद्भूमिपालात्मजमर्चयामि ॥

ओं ह्रीं वीरसेनजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

यो देवराजक्षितिपालवंशदिवामणिः पूर्विजयेश्वरोऽभूत् ।
उमाप्रसूनो व्यवहारयुक्त्या श्रीमन्महाभद्र उदर्च्यतेऽसौ ॥

ओं ह्रीं महाभद्रजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

गंगास्वनिस्फारमणि सुसीमापुरीश्वरं वै स्तवभूतिपुत्रम् ।
स्वस्तिप्रदं देवयशोजिनेंद्रमर्चामि सत्स्वस्तिकलांछनीयम् ॥

ओं ह्रीं देवयशोजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

कनकभूपतिलोकमकोपकं कृततपश्चरणार्दितमोहकम् ।
अजितवीर्यजिनं सरसीरुहविशदचिन्हमहं परिपूज्यते ॥

ओं ह्रीं अजितवीर्यजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

एवं पंचमकोष्ठपूजितजिनाः सर्वे विदेहोद्भवा,
नित्यं ये स्थितिमादधुः प्रतिपतत्तन्नाममंत्रोत्तमाः ।
कस्मिंश्चित्समयेऽ भ्रषट्विधुमितं पूर्ण जिनानां मतं,
ते कुर्वंतु शिवात्मलाभमनिशं पूर्णार्घसंमानिताः ॥

ओंह्रीं विंब प्रतिष्ठाध्वरोद्यापने मुख्य पूजार्हपंचमवलयोन्मुद्रितविदेहक्षेत्रे सुषष्टिसहितैकशत-जिनेशसंयुक्तनित्यविहरमाणविंशतिजिनेभ्यः पूर्णार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ षष्ठवलयस्थापिताचार्यगुणपूजा

मोहात्ययादाप्तदृशोः स पंचविंशातिचारत्यजनादवाप्ताम् ।
सम्यक्त्वशुद्धि प्रतिरक्षतोऽर्चे आचार्यवर्यान् निजभावशुद्धान् ।

ओं ह्रीं दर्शनाचारसंयुक्ताचार्य परमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

विपर्ययादिप्रहृतेः पदार्थज्ञानं समासाद्य परात्मनिष्ठं ।
दृढप्रतीति दधतो मुनींद्रानर्चे स्पृहाध्वंसनपूर्णहर्षान् ॥

ओं ह्रीं ज्ञानाचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

आत्मस्वभावे स्थितिमादधानांश्चारित्रचारुव्रतधैर्यधर्तॄन् ।
द्विधा चरित्रादचलत्वमाप्तानार्यान् यजे सद्गुणरत्नभूषान् ॥

ओं ह्रीं चारित्राचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

बाह्यांतरद्वैधतपोऽभियुक्तान् सुदर्शनाद्रि हसतोऽचलत्वात्।
गाढावरोहात्मसुखस्वभावान् यजामि भक्त्या मुनिसंघपूज्यान् ॥

ओं ह्री तपाचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वात्मानुभावोद्भटवीर्यशक्तिदृढाभियोगावनतः प्रसक्तान्।
परीषहापीडनदुष्टदोषागतौ स्ववीर्यप्रवणान् यजेऽहम् ॥

ओं ह्रीं वीर्याचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

चतुर्विधाहारविमोचनेन द्वित्र्यादिघस्त्रेषु तृषाक्षुधादे ।
अम्लानभावं दधतस्तपस्थानर्चामि यज्ञेप्रवरावतारान् ॥

ओं ह्रीं अनशनतपोयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

त्रिभागभोज्ये क्षितिवेदवह्निग्रासाशने तुष्टिमतो मुनींद्रान्।
ध्यानावधानाद्यभिवृद्धिपुष्टान् निद्रालसौ जेतुमितान् यजामि ॥

ओं ह्रीं अवमौदर्यतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

शृंगाग्रलग्नं वसनं नवीनं रक्तं निरीक्ष्यैव भुजि करिष्ये ।
इत्यादिवृत्तौ निरतानलक्ष्यभावान् मुनीद्रानहमर्चयामि ॥

ओं ह्रीं वृत्तिपरिसंख्यातपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

मिष्टाज्यदुग्धादिरसापवृत्तेः परस्य लक्ष्येऽप्यवभासनेन।.
त्यागे मुदं चेष्टितमत्ययोगाद् धर्तॄन् गणेशाधिपतीन् यजामि।

ओं ह्रीं रसपरित्यागतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

दरीषु भूध्रोपरिषु श्मशाने दुर्गे स्थले शून्यग्रहावलीषु ।
शय्यासने योग्यदृढासनेन संधार्यमाणान् परिपूजयामि ॥

ओं ह्रीं विविक्तशय्यासनतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

ग्रीष्मे महीध्रे सरितां तटेषु शरत्सुवर्षासु चतुष्पथेषु ।
योगं दधानान् तनुकष्टदाने प्रीतान् मुनींद्रांश्चरुभिः पृणामि ॥

ओं ह्रीं कायक्लेशतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

संभाव्य दोषानुनयं गुरुभ्य आलोचनापूर्वमहर्निशं ये ।
तच्छुद्धिमात्रे निपुणा यतीशा संत्वर्घदानेन मुदर्चितारः ॥

ओं ह्रीं प्रायश्चितपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सद्दर्शनज्ञानचरित्ररूपप्रभेदतश्चात्मगुणेषु पंच।
पूज्येष्वशल्यं विनयं दधाना मां पांतुयज्ञेऽर्चनया पटिष्ठाः ॥

ओं ह्रीं विनयतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽअर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

दिक्संख्यसंघे खलु वातपित्तकफादिरोगक्रमजार्तिसंधौ।
दयार्द्रचित्तानमुनिरिंगितज्ञांस्तद्दुःख हंतृनहमाश्रयामि ॥
ओं ह्रीं वैयावृत्यतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रुतस्यबोधं स्वपरार्थयोर्वा स्वाध्याययोगादवभासमानान्।
आम्नाय पृच्छादिषु दत्तचित्तान् संपूजयामोऽर्घविधानमुख्यैः ॥
ओं ह्रीं स्वाध्यायतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

विनश्वरे देहकृते ममत्वत्यागेन कायोत्सृजतोऽपि पद्मा -
सनादियोगानवधार्य चात्मसंपत्सु संस्थानहमर्चयामि ॥
ओं ह्रीं व्युत्सर्ग तपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

येषां मनोऽहर्निशमार्तरौद्रभूमेरनंगीकरणाद्विधर्म्ये।
शुक्लोपकंठे परिवर्त्तमानं तानाश्रये बिबविधानयज्ञे ॥
ओं ह्रीं ध्यानावलंबननिरताचार्य परमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

येषा भ्रुवः क्षेपणमात्रतोऽपि शक्रस्य शकृत्वविघातनं स्यात्।
एवं विधा अप्युदितक्रुध्यालांन्क्षमां भजंतेननुतान् महामि ॥
ओं ह्रीं उत्तमक्षमापरमधर्मधारकाचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

न जातिलाभैश्यविदंगरू पमदाः कदाचिज्जननं प्रयांति।
येषां मृदिम्ना गुरुणार्द्रचित्तास्तेदघ्रुरीशाः स्तवनाच्छिवं मे ॥
ओं ह्रीं उत्तममार्दवधर्मधुरंधराचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वत्र निश्छद्मदशासु वल्लीप्रतानमारोहति चित्तभूमौ।
तपोयमोद्भूतफलैरबंध्या शाम्यांबुसिक्ता तु नमोऽस्तु तेभ्यः ॥
ओं ह्रीं उत्तमार्जवधर्मपरिपुष्ठाचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

भाषासमित्या भयलोभमोहमूलंकषत्वादनुभूतया च।
हितं मितं भाषयता मुनीनां पादरविदद्वयमर्चयामि ॥
ओं ह्रीं उत्तमसत्यधर्मप्रतिष्ठिताचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

न लोभरक्षोऽभ्युदयो न तृष्णागृधी पिशाच्यौसविधं सदेतः।
तस्मात् शुचित्यात्मविभाचकास्ति येषां तु पादस्थलमर्चयेऽहं ॥
ओं ह्रीं उत्तमशौचधर्मधारकाचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

मनोवच कायभिदानुमोदादिभंगतश्चेंद्रियजंतुरक्षा।
वर्वर्ति सत्संयमवुद्धिधीरास्तेषां सपर्याविधिमाचरामि ॥
ओं ह्रीं उत्तमद्विविधसंयमपात्राचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

तपोविभूषा हृदयं बिभर्त्ति येषां महाघोरतपोगुणाग्र्याः ।
इन्द्रादिधैर्यच्च्यवनं स्वतस्त्यं तपो युता एव शिवैषिणः स्यु ॥
ओं ह्रीं उत्तमतपोऽतिशयसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

समस्तजंतुष्वभयं परार्थसंपत्करी ज्ञानसुदत्तिरिष्टा ।
धर्मौषधीशा अपि ते मुनीशास्त्यागेश्वरा पांतुमनोमलानि ॥
ओं ह्रीं उत्तमत्यागधर्मप्रवीणाचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

आत्मस्वभावादपरे पदार्थान् मेऽथवाऽहं न परस्य बुद्धिः ।
येषामिति प्राणयति प्रमाणं तेषां पदार्चा करवाणि नित्यम् ॥
ओं ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्म संयुक्ताचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

रंभोर्वशी यन्मनसोविकार कर्तु न शक्ताऽत्मगुणानुभावान् ।
शीलेशतामादधुरुत्तमार्था यजामि तानार्यवरान् मुनींद्रान् ॥
ओं ह्रीं ब्रह्मचर्यमहानुभावधर्ममहनीयाचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

संरोधनान्मानसभंगवृत्तेः विकल्पसंकल्पपरिक्षयाच्च ।
शुद्धोपयोगं भजतां मुनीनां गुप्ति प्रशंस्यात्र यजामहे तान् ॥
ओं ह्रीं मनोगुप्तिसंपन्नाचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

धर्मोपदेशात्तदृते कथाया अभाषणात् संभ्रमतादिदोषैः ।
वियोजनाद् ध्यानसुधैकपानाद् गुप्तिं वचोगामटितान् यजामि ॥
ओं ह्रीं वचनगुप्तिधारकाचार्य परमेष्ठिनेऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

वन्याः समिद्भीरचितां दृषत्सूत्कीर्णमिवांगप्रतिमां निरीक्ष्यः ।
कंडूतिनांगानि लिहंति येषां धाराग्रमर्घेण यजामि सम्यक् ।
ओं ह्रीं कायगुप्तिसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सामायिकं ज्ञाहति नोपदिष्टं त्रिकालजातं ननु सर्वकाले ।
रागक्रुधोर्मूल निवारणेन यजामि चावश्यककर्मधातॄन् ॥
ओं ह्रीं सामायिकावश्यककर्मधारिभ्य आचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सिद्धश्रुति देवगुरुश्रुतानां स्मृति विधायापि परोक्षजातम् ।
सद्वंदनं नित्यमपार्थहानं कुर्वंति तेषा चरणौयजामि ॥
ओं ह्रीं वंदनावश्यकनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

तेषां गुणानां स्तवनं मुनीद्रा वचोभिरुद्धूमनोमलांकैः ।
कुर्वंति चावश्यकमेव यस्मात् पुष्पांजलि तत्पुरतः क्षिपामि ॥
ओं ह्रीं स्तवनावश्यकसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

मलोत्सृजादौ क्वचनाप्तदोषं प्रतिक्रमेणापनुदति वृद्ध।
साधु समुद्दिश्य निशादिवीयदोषान् जहत्यर्चनयाधिनौगि ।।
ओं ह्री प्रतिक्रमणावश्यकनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वोनामचात्माऽध्ययते यदर्थ स्वाध्याययुक्तो निजभानुबुध्दः ।
श्रुतस्य चिताऽपि तदर्थबुद्धिस्तामाश्रये स्वाभिमतार्थसिद्ध्यै ।।
ओं ह्री स्वाध्यायावश्यक कर्मनिरताचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

भुजप्रलंबादिविधिज्ञतायाः पौरस्त्यमाप्याधिगमं वहंतः।
व्युंत्सर्गमात्रावशिनः कृतार्था अस्मिन् मखे यांतु विधिज्ञपूजां ।।
ओं ह्रीं व्युत्सर्गावश्यकनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

गुणोद्देशादेषा प्रणिधिवशतोऽनंतगुणिनां कृता ह्याचार्याणामपचितिरियं भावबहुला ।
समस्तान् संस्मृत्य श्रमणमुकुटानर्घमलघु प्रपूर्त संदृब्ध मम मखविधि पूरयतुवै ।।
ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोद्यापने पूजार्हमुख्यषष्ठवलयोन्मुद्रित आचार्यपरमेष्ठिभ्यस्तद् गुणेभ्यश्च पूर्णार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ सप्तमवलयस्थापितोपाध्याय गुण पूजा प्रारंभ

आचारागं प्रथगं सागारमुनीशचरणभेदः कथम् ।
अष्टादशसहस्रपदं यजामि सार्वोपकारसिद्ध्यर्थ ।।
ओं ह्रीं अष्टादशसहस्रपदाचारांगज्ञाता उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्य ।।

सूत्र कृतांगं द्वितय षट्त्रिशत्सहस्रपदकृत्तमहितं ।
स्वपरसमयविधानं पाठकपठितं यजामि पूजार्हं ।।
ओं ह्रीं षट्त्रिंशत्सहस्रपदसंयुक्तसूत्रकृतांगज्ञाता उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्य ।।

स्थानांगं द्विकचत्वारिंशत्पदकं षड्र्थदशसरणेः ।
एकादिसुभेदयुजः कथकं परिपूजये वसुभिः ।।
ओं ह्री द्विचत्वारिंशत्पदसंयुक्तस्थानांगज्ञाता उपाध्याय परमेष्ठिभ्योऽर्घ्य ।।

समवायांगं लक्षैकं चतुरितषष्टीसहस्रपदविशदं।
द्रव्यादिचतुष्टयेन तु साम्योक्तिर्यत्र पूजये विधिना ।।
ओं ह्री एकलक्षषष्टि पदन्याससहस्रसमवायांगज्ञाता उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्य ।।

व्याख्याप्रज्ञप्त्यंगं द्विलक्षसहिताष्टविंशतिसहस्रपदम्।
गणधरकृतषष्टि सहस्रप्रश्नोक्तिर्यत्र पूज्यते महसा ।।
ओं ह्रीं द्विलक्षअष्टविंशति - सहस्रपद - रंजितव्याख्याप्रज्ञप्त्यंगज्ञाता - उपाध्याय - परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्य ।।

ज्ञातृधर्मकथांगं शरलक्षसषट्कपंचाशत् ।
पदमहितं वृषचर्चा प्रश्नोत्तरपूजितं महये ॥

ओं ह्रीं पंचलक्षषट्पंचाशत्सहस्रपदसंगतज्ञातृधर्मकथांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं ॥

उपासकपाठकशिवलक्षससप्ततिसहस्रपदभंगं।
व्रतशीलाधानादिक्रियाप्रवीणं यजामि सलिलाद्यैः ॥

ओं ह्रीं एकादशलक्षसप्ततिसहस्रपदशोभितोपासकाध्ययनांगधारकोपाध्याय परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं ॥

अंतकृद्दंगं दश दश साधुजनोपसर्गकथकमधितीर्थम् ।
तेषां निः श्रेयसलंभनमपि गणधरपठितं यजामि मुदा ॥

ओं ह्रीं त्रिविंशतिलक्षअष्टविंशतिसहस्रपदशोभितांतःकृतदशांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं ॥

उपपादानुत्तरकं द्विचत्वारिंशल्लक्षसहस्रपदं।
विजयादिषु नियमेन मुनिगतिकथकं यजामि महनीयं ॥

ओं ह्रीं द्विनवतिलक्षचतुर्चत्वारिंशत्पदशोभितानुत्तरोपपादिकांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं ॥

प्रश्नव्याकरणांगं त्रिणवतिलक्षाधिषोडशसहस्रपदम् ।
नष्टोद्दिष्टं सुखलाभगतिभाविकथं पूजये चरुफलाद्यैः ॥

ओं ह्रीं त्रिनवतिलक्षषोडशसहस्रपदशोभितप्रश्नव्याकरणांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥

अंगं विपाक सूत्रं कोट्येकचतुरशीतिसहस्रपदं ।
कर्मोदयसत्वानानोदीर्णादिकथं यजनभागतोऽर्चामि ॥

ओं ह्रीं एककोटि चतुरशीतिसहस्रपदशोभितविपाकसूत्रांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं ॥

उत्पादपूर्वकोटीपदपद्धतिजीवमुखषट्कम् ।
निजनिज स्वभावघटितंकथयत्यांचामि भक्तिभरः ॥

ओं ह्रीं उत्पादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अग्रायणीयपूर्वषण्णवति कोटिपदं तु यत्र तत्वकथा ।
सुनयदुर्णयतत्त्वप्रामाण्यप्ररूपकं प्रयजे ॥

ओं ह्रीं अग्रायणीयपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

वीर्यानुवादमधिसप्ततिलक्षपादं द्रव्यस्वतत्त्वगुणपर्ययवादमर्थ्यम्।
तत्तत्स्वभावगतिवीर्यविधानदक्षं संपूज्ये निजगुण प्रतिपत्तिहेतोः ।।

ओं ह्रीं वीर्यानुवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

नास्त्यस्तिवादमधिषष्टि सुलक्षपादं सप्तोद्भभंगरचनाप्रतिपत्तिमूलं।
स्याद्वादनीतिभिरुदस्तविरोधमात्रं संपूजयेजिनमतप्रसवैकहेतुम्।।

ओं ह्रीं अस्तिनास्तिप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

ज्ञानप्रवादमभिकोटि पदं तु हीनमेकेनवाणमितभान विवर्णनांकं।
कुज्ञानरूपतिमिरौघहर समर्चेयत्पाठकै: क्षणमिते समये विचार्यम् ।।

ओं ह्रीं आत्मज्ञानप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

सत्यप्रवादमधिकं रसपादजातैः कोटीपदं निखिलसत्यविचारदक्षं।
श्रोतृप्रवक्तृगुणभेदकथापियत्र तं पूर्वमुख्यमभिवादय उत्तमंत्रैः ।।

ओं ह्री सत्यप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

आत्मप्रवादरसविंशतिकोटिपादान् जीवस्य कर्तृगुणभोक्तृगुणादिवादान् ।
शुध्देतरप्रणयतत्त्वकथनं तु येषु बंदामहे तदभिलाप्यगुणप्रवृत्त्यै ।।

ओं ह्री आत्मप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

कर्म प्रवादसमये विधुसंख्यकोटी संख्यानशीतिलयुतान् वसुकर्मणां च ।
सत्वापकर्षणनिधत्तिमुखानुवादे पद्यान् स्थितानमितपूजनयाधिनोमि ।

ओं ह्री कर्मप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

प्रत्याहृतेश्चतुरशीतिसुलक्षपद्यान् निक्षेपसंस्थितिविधानकथ्यप्रसिद्धान्।
न्यासप्रमाणनयलक्षणसंयुजोऽर्चे यागार्चने श्रुतधरस्तवनोपयुक्तान् ।।

ओं ह्री प्रत्याहारपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

विद्यानुवादभुविचंद्रसुकोटि काष्ठालक्षाः पदायदधिमंत्रविधि प्रकारः
संरोहिणी प्रभृतिदीर्घविदां प्रसंगस्तं पूजये गुरुमुखांबुजकोशजातं ।।

ओं ह्रीं विद्यानुवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

कल्याणवादमननश्रुतमंगमुख्यं षड्विंशतिप्रमितकोटिपदं समर्चे।
यत्रास्तितीर्थकरकामबलत्रिखंडिजन्मोत्सवाप्तिविधिरुत्तमभावना च ।।

ओं ह्री कल्याणवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

प्राणप्रवादमभिवादयतां नराणां विश्वप्रमाणमितकोटिपदाभियुक्तम ।
काऽऽर्तिर्भवेन्निरयघोरभवस्य चायुर्वेदादिसुस्वरभृतं परिपूजयामि ।।

ओं ह्रीं प्राणप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

क्रियाविशालं नवकोटिपद्यैर्युक्तं सुसंगीतकलाविशिष्ट ।
छंदोगणाद्यानुभावयंतमध्यापकानत्र विधौ यजामि ॥

ओं ह्री क्रियाविशालपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥

त्रैलोक्यविंदौ शिवतत्त्वचिता, सार्द्धा सुकोटि द्विदश्राप्रमाणा ।
पदास्त्रिलोकीस्थिति सद्विधानमत्रार्चये भ्राति विनाशनाय ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यविन्दुपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥

इत्थ श्रीश्रुतदेवता जिनवरांभोध्युद्गतामृद्धिभृ -
न्मुख्यैर्ग्रंथ निबंधनाक्षरकृतामालोकयंती त्रयम् ।
लोकानां तदवाप्तिपाठन धियोपाध्यायशुद्धात्मनः
कृत्वाराधनसद्विधि धृतमहार्घेणार्चये भक्तितः ॥

ओं ह्रीं अस्मिन् बिंबप्रतिष्ठोत्सवसद्विधाने मुख्यपूजार्ह सप्तमवलयोन्मु - द्रितद्वाशांगश्रुतदेवताभ्यस्तदाराधकोपाध्याय परमेष्ठिभ्यश्च पूर्णार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अथाष्टमवलयस्थापित साधुपरमेष्ठि गुणपूजाप्रारम्भः

जीवाजीवद्विरधिकरणव्याप्तदोषव्युदारात् सूक्ष्मस्थूलव्यवहृतिहते सर्वथात्यागभावात् ।
मूर्धन्यासं सकलविरति सदधानान्मुनीद्रा नाहिसाख्यव्रतपरिवृतान् पूजये भावशुद्ध्या ॥

ओं ह्रीं अहिंसामहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

मिथ्याभाषासकलविगमात् प्राप्तवाक्शुद्ध्युपेतान् स्याद्वादेशान् विविधसनयैर्धर्ममार्गप्रकाशम् ।
संकुर्वाणानतिचरणधीदूर गानात्मसवित् सम्राजस्तांश्चरु फलगणे पूजयाम्यध्वरेऽस्मिन् ॥

ओं ह्रीं अनृतपरित्यागमहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

आकर्तव्ये (ध्वनि ?) शिवपदगृहे रंतुकामा. पृथक्त्वं देहात्मीय करगतमिवाध्यक्षमादर्शयंत.)
प्राणग्राहं तृणमपि परैरप्रदत्तं त्यजंत स्तापंतां मां चरणवरिवस्याप्रशक्त मुनीद्राः ॥

ओं ह्रीं अचौर्यमहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

तिर्यग्मर्त्यामरगतिगताया· स्त्रियः काष्ठचित्रा -
लेप्याश्मान्याश्चिदचिदुदधिस्थास्तवस्ता स्त्रियोग ।
स्वप्ने जाग्रद्दिशि कतिचिदप्यर्तिमुद्रा· स्मरंतो (?)
ये वै शील परिदृढमगुरतान्यजेऽह त्रिशुद्ध्या ॥

ओं ह्रीं ब्रह्मचर्यव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

रागद्वेषाद्यभिकृतपरावृत्तदोषातरगा ये बाह्या अप्युदितदशधातेह्यकिंचन्यभावात् ।
नापि स्थैर्य दधुरु रु गुणाग्राहिणि स्वातमध्ये ग्रंथा येषा चरण धरणि पूजयाम्यादरेण ।

ओं ह्रीं आकिंचन्यभावधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

ईर्यापंथास्तिमितचकितस्तब्धदृष्टिप्रयोगा भावाच्छु द्धोयुगमितधरालोकनेनापियेषाम्।
वर्षाकालावनियवसभूजंतुजाति विहाय तीर्थ श्रेयोगुरु नतिवशाद् गच्छतोऽर्चे यतींद्रान्॥

ओं ह्रीं ईर्यासमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

लोभक्रोधाद्यरिगणजयाद्भीतिमोहापमर्दान्निः शल्याद्यान् जिनवचिसुधाकंठ पानप्रपुष्टान्
याथातथ्यं श्रुतनिगमयोर्जानतः प्रश्नकर्तु र्वाभिप्रायंवचनसमिती धरिकान् पूजयामि ॥

ओं ह्रीं भाषासमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

षट् चत्वारिंशदतिचरणा म्रेडितत्यागयोगात्
दोष्नांचातुर्दशमलभुवां हापनात् कायहानिम्
अध्यासीनाममृतधिषणाभ्यासतोऽग्रे कृतार्था - (?)
मन्वानास्तेऽशनविरतयः पांतु पादाश्रितं माम् ।

ओं ह्रीं एषणासमिति धारकसाधु परमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

वस्तुग्राहं त्वपरिणामाद्दाननिक्षेपयोगा (?)-
भावः पूर्व दृढपरिचयाद्विद्यते शुद्ध एव ।
पिच्छकुंडी ग्रहणमपि ये रक्षणाचारहेतोः
कुर्वतोऽप्यत्र निहितदृशस्तान्यजेसत्समित्यै ॥

ओं ह्रीं आदाननिक्षेपणसमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

व्युत्सर्गाख्यां समितिमघृणांनासिकानेत्रपायू परस्थरस्थानान् मलहृतिविधौ सूत्रमार्गानुकूलम् ।
रक्षंतोऽन्यानपि सदयतां पोषयंतोप्युदग्रां धन्या दांतेन्द्रियपरिकरा आददंत्वर्चनां मे ॥

ओं ह्रीं व्युत्सर्गसमितिपालकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

उष्णः शीतो मृदुलकठिनौ स्निग्धरूक्षौ गुरुर्वा
स्तोकः स्पर्शोष्टतय उदितस्पर्शनात् सप्रमादम् ।
रागद्वेषावपि न दधतश्चेतनाचेतनेषु
किंच स्त्रीणां वपुषि विषये तान्यजेऽहं मुनींद्रान् ॥

ओं ह्रीं स्पर्शेंद्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

मिष्टस्तिक्तो लवणकटकामम्ल एवं रसज्ञा ग्राही प्रोक्तो रसनविषयस्तत्ररागक्रुधोर्वा ।
त्यागात्सर्वप्रकृतिनियतेः पुद्गलस्य स्वभावं संजानंतो मुनिपरिवृढाः पांतु मामर्चितास्ते ॥

ओं ह्रीं रसनेंद्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

वातद्वेषस्तुहिनविकृतेरुष्णताद्वेष ऊष्म्य व्याप्तांगस्य प्रकृतिनियमात् सुप्रसिद्धोऽप्रतर्क्यः ।
साम्यस्वामी ह्यशुभसुभगद्वैगंधौ विजानन् वस्तुग्राहं भजति समतांतं यतींद्रं यजेऽहम् ॥

ओं ह्रीं घ्राणेंद्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ स्वाहा ।

यद्यद् दृश्यं नयनविषये तेषु तेष्वात्मना वै
जन्माग्राहि त्रिजगदभितश्चक्रमावर्तपातात् ।
कृष्णे पीते हरिदरुणयोरर्जुने पौद्गलेक्ष्णो
र्व्यापारोऽ सन्निति परिणतः पूज्यतेऽसौ मयात्र ॥

ओं ह्रीं चक्षुरिंद्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

एकः स्तोत्रं रचयितु मुदा गद्यपद्यानवद्य -
र्वाक्यैरन्यः श्वपचजननी तेऽद्य भार्या ममेति ।
श्रुत्वा शब्द श्रवसि जडतामेत्य तोषं न कोपं
धत्ते शक्तो ऽप्यमरमहितस्तस्य पूजां विदध्म. ॥

ओं ह्रीं श्रोत्रेंद्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

साम्यं यस्य स्फुरति हृदये निर्व्यलीक कदाचि-
द्दायातेऽपि ध्रुवमशुभसमयाबद्धपाकावतारे (?)
घोरापीडासदसि वपुषि स्पृङ्मृति सदधानो
बाहुभ्यामंबुधिमिव तरत्येष साधुर्मयार्च्य ॥

ओं ह्रीं सामायिकावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

स्मारं स्मारं प्रकृतिमहिमानं तु पंचेश्वराणां प्रत्यक्षं वा मननविषयं वंदमानस्त्रिकालं ।
कर्मव्यूहक्षपणमसमं चर्करीत्यात्मवंत शुद्धस्फारं गमयति शिवं लं महांतं यजामि ॥

ओं ह्रीं वन्दनावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

चेतोरक्षः प्रसरणनिराकर्मणो तीर्थनाथ पादाब्जेषु प्रतिगुणगणे दत्तचित्तो मुनीन्द्र ।
तेषां स्तोत्र पठति परमानंदमात्मानुभावं किं वा शुद्ध सृजति स मया पूज्यते तद्गुणाप्त्यै ॥

ओं ह्रीं स्तवनावश्यकगुणधारक साधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

दोषाभावेऽप्यथ निशिदिवाहारनीहारकृत्ये ज्ञाताज्ञातप्रमदवशतो जतुरभ्यर्दितः स्यात् ।
नित्यं तस्य प्रतिभयलव व्युत्सृजानः स्वयंयो दोषव्रातैर्नहिजुडति तं धीरवीर यजामि ॥

ओं ह्रीं प्रतिक्रमणावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

नित्यं चेतः कपिरचलतांनैति तद्यंत्रणार्थ स्वाध्यायाख्यैः प्रगुणनिगडैर्बध्मानीय भद्रे ।
मार्गे युंज्याच्छ्रुतपरिणतात्मीय मोदावधानो वृत्ति शुद्धां श्रयति स महानर्घ्यते ऽनर्घ्यबुद्धि ॥

ओं ह्रीं स्वाध्यायावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ स्वाहा ।

आमे भांडे कुथित कुणपे यादृशी नश्यहेय बुद्धिः कायेसततनियला वीतरागेश्वराणाम् ।
व्यक्तीकर्तुं शिखरिविपिनांतस्तनोर्निर्ममत्वे कायोत्सर्ग रचयति मुनि सोऽत्र पूजा प्रयातु ॥

ओं ह्रीं व्युत्सर्गावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

पूर्व हर्म्ये मणिगणचितानेकपर्यकशायी सोऽयं घोरस्वनमृगपतित्रस्तनागेंद्र कारे ।
भूध्रग्रावोपरितनभुवि स्वप्नवत्किंचिदात्त निद्रो यस्य स्मरणमपि संहंति पापं समेऽर्च्यः ।।
ओं ह्रीं भूशयननियमधारक साधु परमेष्ठि भ्योऽर्घ निर्वपामीलि स्वाहा ।

ग्रीष्मे रेणूत्करविकरणव्यग्रवातप्रसर्पद् धूलिपुंजे मलिनवपुषि त्यक्तसंस्कारवांछः ।
अस्नानत्वं विजनसरसीसंनिधानेऽ पि येषां तेषां पादांबुजयुगमहं पारिजातैरु दर्चे ।।
ओं ह्रीं अस्नाननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

वाल्कं फालं वसनमुपसंव्यानकोपीनखंड कादाचित्केऽ प्युपधिसमयेनैव वांछंस्तपस्वी ।
दैगंवर्य परमकुशलं जातरूपप्रबुद्धं संधार्यैवं नयति परमानंद धात्रीं तमर्चे ।।
ओं ह्रीं सर्वथावस्त्रपरित्यागनियमधारकसाधु परमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षौरं शस्त्रोज्जनिपराधीनता पात्रमेव (?)
जूडा मूर्धन्यतुलकृमिदा भूतशीर्षाकृतिस्था ।
दोषायैवेति विहितकचोत्पाटनो मुष्टि मात्रात्
साक्षान्मोक्षाध्वनिधृतिपदः पूज्यते श्रौतकर्मा ।।

ओं ह्री कृतकेशलोचननियमधारकसाधुपरमेष्ठि भ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

एकद्वित्रिप्रभृतिदिवसप्रोषधादिप्रकर्तु रास्यम्लानिर्भवति नितरां दंतशुद्धिं विनाऽत्र ।
दौर्गंध्यांधुं वपुषमकृत्त स्थैर्यमापन्निदानं जानन् योगं मलिनयति नो तं समर्चे मुनीन्द्रम् ।।
ओं ह्रीं दंतधावनवर्जननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

यांचादैन्योदरविघटनादींगितादीनि येषां
निर्मूलंतो मनसि चमनालाभलाभांतराये ।
तुल्या दृष्टिस्तदपि सकृदेकाह्निभुक्ति प्रमाणं
तेषां धर्म्यावगमसुगमत्वाय पादौ यजामि ।।

ओं ह्रीं एकभुक्तनियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

यावद्देहं स्थितिधृतिधराशक्तिमंगीकरोति यावज्जंघाबलमचलतां नोज्जिहीते मुनित्वे ।
यावत्स्थाप्ये तदपगमने भोजनत्याग एवं संन्यासस्य ग्रहणमितियद् यस्यनीतिस्तमर्चे ।।
ओं ह्रीं आस्थितभोजननियमधारकसाधु परमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा

अष्टाविंशतिसद्गुणग्रथितसद्रत्नत्रयाभूषणं शीलेशित्वतनुत्ररक्षितवपुः कामेषुभिर्नाहतम् ।
आर्हत्यादिपदस्य बीजमनघं येषां परं पावनं साधूनां समुदायमुत्तमकुलालंकरमाशास्महे ।।
ओं ह्रीं अस्मिन् बिंबप्रतिष्ठोत्सवे मुख्य पूजार्ह अष्टमवलयोन्मुद्रित साधुपरमेष्ठि भ्यस्तन्ममूलगुण -ग्रामेभ्यश्च पूणार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ नवमवलयस्थापिताष्टचत्वारिंशद् ऋद्धिधारक पूजा प्रारंभः

त्रैलोक्यवर्तिसकलं गुणपर्ययाढ्य यस्मिन्करामलकवत् प्रतिवस्तुजातम्।
आभासते त्रिसमयप्रतिबद्धमर्चे कैवल्यभानुमधिपं प्रणिपत्य मूर्ध्ना ॥

ओं ह्रीं सकललोकालोकप्रकाशकनिरावरणकैवल्यलब्धिधारकेभ्योऽर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

वक्रर्जुभावघटितापरचित्तवर्तिभावावभासनपरं विपुलर्जुभेदात्।
ज्ञान मनोऽधिगतपर्ययमस्य जात तं पूजयामि जलचंदन पुष्पदीपै ॥

ओं ह्रीं ऋजुमतिविपुलमतिमनः पर्ययधारकेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

देशावधि च परमावधिमेव सर्वावध्यादि भेदमतुलावमदेशपृक्तं।
ज्ञानं निरूप्य तदवाप्तियुतं मुनीद्रं संपूज्य चित्तगवसंशयमाहरामि ॥

ओं ह्रीं अवधिज्ञानधारकेभ्योऽअर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

अन्योपदेशमनपेक्ष्य यथा सुकोष्ठे
बीजानि तद्गृहपतिर्विनियुज्यमानः।
ग्रथार्थबीजबहुलान्यनतिक्रमाणि
सधारयन्नृषिवरोऽर्च्यत उवस्थमन्त्रैः॥

ओं ह्रीं कोष्ठ बुद्ध्यर्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

एकपदार्थमुपगृह्य मुखान्तमध्यस्थानेषु तच्छ्रुतसमस्तपदग्रहोक्तिम्।
पादानुसारिधिषणाद्यभियोगभाजासपूज्यतन्मतिधरंतु समर्चयामि ॥

ओं ह्रीं पादानुसारिबुद्धिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

कालादियोगमनुसृत्य यथाप्तमन्त्रकोटिप्रद भवति बीजमनिन्द्रियादि।
वीर्यांतरायशमनक्षयहेत्वनेक पादावधारणमतीन् परिपूजयामि ॥

ओं ह्रीं बीजबुद्धिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

ये चक्रि सैन्य गजवाजिखरोष्ट्रमर्त्य नानाविधस्वनगणं युगपत् पृथक्त्वात्।
गृह्णति कर्णपरिणामवशान्मुनीद्रास् तानर्घयामि कृतुभागसमर्पणेन ॥

ओं ह्रीं संभिन्नश्रोत्रऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

दूरस्थितान्यपि सुमेरु विधुप्रभास्वत् सन्मडलानि करपादनखागुलीभिः।
संस्पर्शशक्तिसहितर्द्धिवशात् स्पृशंतस्तान्शक्तियुक्तपरिणामगतान् यजागि ॥

ओं ह्रीं दूरस्पर्शशक्ति ऋद्धि प्राप्तेभ्योऽर्घनिर्वपामीति स्वाहा।

नास्वादयति न च तत्सदने समीहा तत्रापिशक्तिरमितेति रसाग्रहादौ।
ऋद्धिप्रवृद्धिसहितात्मगुणान् सुदूर स्वादावभासनपरान् गणपान् यजामि ।।ॐ
ह्लीं दूरास्वादनशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

उत्कृष्टनासिकहृषीकगति विहाय तत्स्थोर्ध्वगंधसमवायनशक्ति युक्तान् ।
उत्कृष्ट भागपरिणामविधौ सुदूरगंधावभासनमतौ नियतान् यजामि ।।
ओं ह्लीं दूरघ्राणविषयग्राहकशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

निर्णीतपूर्णनयनोत्थहृषीकवार्ता चक्रेश्वरस्य नियता तदधिक्यभावात् ।
दूरावलोकनजशक्तियुतान् यजामि देवेंद्रचक्रधरणीद्र समर्चितांह्रिम् ।
ओं ह्लीं दूरावलोकनशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्यो ऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रोत्रेंद्रियस्य नवयोजनशक्तिरिष्टा नातःपरं तदधिकावनिसंस्थशब्दान् ।
श्रोतुं प्रशक्तिरुदयत्यतिशायिनीच येषां तु पादजलजाश्रयणं करोमि ।।
ओं ह्लीं दूरश्रवणशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अभ्यासयोग विहृतावपि यन्मुहूर्त मात्रेण पाठयति दिग्प्रमपूर्वसार्थम् ।
शब्देन चार्थपरिभावनयाश्रुत तच्छक्तिप्रभूनधियजामि मखस्य सिद्ध्यै ।।
ओं ह्लीं दशपूर्वित्वऋद्धिप्राप्तेभ्यो ऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

एव चतुर्दशसुपूर्वगतश्रुतार्थ शब्देन ये ह्यमितशक्तिगुदाहरंति ।
तानत्र शास्त्रपरिलब्धिविधानभूति संपत्तयेऽत्रगधुगार्हणया धिनोमि ।।
ओं ह्लीं चतुर्दशपूर्वित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अन्योपदेशविरहे ऽपि सुसंयमस्य चारित्रकोटि विधयः स्वयमुद् भवंति ।
प्रत्येक बुद्धमतय. खलुते प्रशस्यास् तेषां मनाक् स्मरणतो मम पापनाशः ।।
ओं ह्लीं प्रत्येकबुद्धत्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

न्यायागमस्यस्मृतिपुराणपठित्यभावेऽप्याविर्भवंति परवादविदारणोद्धाः ।
वादित्वबुद्धय इतिश्रमणा. स्वधर्म निर्वाहयंति समये खलुतान् यजामि ।।
ओं ह्लीं वादित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जघाग्निहेतिकुसुमच्छदतंतुबीज श्रेणीसमाजगमना इति चारणांकाः ।
ऋद्धिक्रियापरिणता मुनय. स्वशक्ति संभावितास्त इह पूजनमालभंतु ।।
ओं ह्लीं जलजंघातंतुपुष्पपत्रबीजश्रेणीवह्न्यादि निमित्ताश्रयचारणऋद्धि प्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

आकाशयाननिपुणा जिनमंदिरेषु मेर्वाद्यकृत्रिमधरासु जिनेशचैत्यान् ।
बंदत उत्तमजनानुपदेशयोगा नुद्धारयंति चरणौ तु नमामि तेषाम् ॥

ओं ह्रीं आकाशगमनशक्तिचारणर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

ऋद्धि: सुविक्रियगता बहुलप्रकारा तत्र द्विधाविभजनेष्वणिमादिसिद्धिः।
मुख्यास्ति तत्परिचयप्रतिपत्तिमंत्रान् यायज्मि तत्कृतविकारविवर्जितांश्च ॥

ओं ह्रीं अणिमांमहिमालघिमागरिमाप्राप्तिप्राकाम्यवशित्वेशित्वऋद्धि प्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अतर्दधि प्रमुखकामविकीर्णशक्ति येषां स्वय तपस उद्भवति प्रकृष्टा ।
तद्विक्रियाद्वितयभेदमुपागतानां पादप्रधावन विधिर्मम पातु पाणिम् ॥

ओं ह्रीं विक्रियायां अंतर्धानादिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

षष्ठाष्टमद्विदशपक्षकमासमात्रा नुष्ठेयभुक्ति परिहारमुदीर्य योगम् ।
आमृत्युमुग्रतपसा ह्यनिवर्तकास्ते पांत्वर्चनाविधिमिमं परिलंभयंतु ॥

ओं ह्रीं उग्रतपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

घोरोपवासकरणे ऽपि बलिष्ठ योगान् दौर्गध्यविच्युतमुखान् महदीप्तदेहान् ।
पद्मोत्पलादिसुरभिस्वसनान्मुनीद्रान् यायज्मि दीप्ततपसो हरिचंदनेन ॥

ओं ह्रीं दीप्ततपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

वैश्वानरौघ पतितांबुकणेन तुल्य माहारमाशु विलयं ननु याति येषाम् ।
विण्मूत्रभावपरिणाममुदेति नो वा ते संतु तप्ततपसो मम सद्विभूत्यै ॥

ओं ह्रीं तप्ततपऋद्धि प्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

हारावलीप्रभृतिघोरतपोऽ भियुक्ताः कर्मप्रमाथनधियो यत उत्सहंते ।
ग्रामाटवीष्वशनमप्यतिपातयति ते रातु कार्मणतृणाग्निचयाः प्रशांत्यै ॥

ओं ह्रीं महातपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

कासज्वरादि विविधोग्ररुजादिसत्त्वे ष्वप्यच्युतानशनकायदमान् श्मशाने ।
भीमादिगह्वरदरीतटिनीषु दुष्ट संक्लृप्तबाधनसहानहमर्चयामि ॥

ओं ह्रीं घोरतपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

पूर्वोदितासु विधियोगपरंपरासुस्फारीकृतोत्तरगुणेषुविकाशवत्सु ।
येषां पराक्रमहतिर्न भवेत्तमर्चे पादस्थली मिहसुघोरपराक्रमाणाम् ॥

ओं ह्रीं घोरपराक्रमगुणऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

दुःस्वप्नदुर्गतिसुदुर्मतिदौर्मनस्त्व मुख्याःक्रिया वृतविघातकृते प्रशस्ताः ।
तासां तपोविलसनेन समूलकाषं घातो ऽस्ति ते सुरसमर्चितशीलपूज्याः ॥

ओं ह्रीं घोरब्रह्मचर्यगुणऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अंतर्मुहूर्तसमये सकलश्रुतार्थ संचितनेऽपि पुनरुद्भटसूत्रपाठाः ।
स्वच्छ मनोऽभिलषिता रुचिरस्ति येषां कुर्यान्मनोबलिन उत्तममांतरं मे ॥

ओं ह्रीं मनोबलऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जिह्वाश्रुतावरणवीर्यशमक्षयाप्ता वंतर्मुहूर्त समयेषु कृतश्रुतार्थाः ।
प्रश्नोत्तरोत्तरचयैरपि शुद्धकंठ, देशाःसुवाक्यबलिनो मम पांतु यज्ञम् ॥

ओं ह्रीं वचनबलऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

मेर्वादिपर्वतगणोद्धरणेषुशक्ता रक्षःपिशाचशतकोटिबलाधिवीर्याः ।
मासर्तुवत्सरयुगाशनमोचनेऽपि हानिर्न कायबलिनः परिपूजयामि ॥

ओं ह्रीं कायबलऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

स्पर्शात्करांह्रि जनिताद् गदशांतनं स्या दामर्षजा यव इति प्रतिपत्तिमाप्तान् ।
येषा च वायुरपि तत्स्पृशतां रुजार्ति नाशाय तन्मुनिवराग्रघरां यजामि ॥

ओं ह्रीं आमर्षौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्यो ऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

निष्ठीवनं हि मुखपद्मभवं रुजानां शांत्यर्थमुत्कट तपोविनियोगभाजाम् ।
क्ष्वेलौषधास्त इह संजनितावताराः कुर्वन्तु विघ्ननिचयस्य हतिं जनानाम् ॥

ओं ह्रीं क्ष्वेलौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वेदावलंबितरजो निचयो हि येषा मुत्क्षिप्य वायुविसरेण यदंगमेति ।
तस्याशु नाशमुपयाति रुजां समूहो जल्लौषधीशमुनयस्त इमे पुनन्तु ॥

ओं ह्रीं जल्लौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

नासाक्षिकर्णरदनादिभवं मलं यन्नैरोग्यकारि वमनज्वरकासभाजाम् ।
तेषां मलौषधसुकीर्तिजुषां मुनीनां पादार्चनेन भवरोगहतिर्नितांतम् ॥

ओं ह्रीं मलौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

उच्चार एव तदुपाहितवायुरेणू अंगस्पृशौ च निहतः किल सर्वरोगान् ।
पादप्रधावनजलं मम मूर्ध्निपातं किं दोष शोषणविधौ न समर्थमस्तु ॥

ओं ह्रीं विडौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्यो ऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रत्यंगदंतनखकेशमलादिरस्य सर्वो हि तन्मिलितवायुरपिज्वरादि ।
कासापतान वमिशूलभगंदराणां नाशाय ते हि भविकेन नरेण पूज्याः ॥

ओं ह्रीं सर्वौषधि ऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

येषां विषाक्त मशनं मुखपद्मयातं स्यान्निर्विषं खलुतदंह्रिघरापि येन ।
स्पृष्टा सुधा भवति जन्मजरापमृत्यु ध्वंसो भवेत्किमु पदाश्रयणे न तेषाम् ॥

ओं ह्रीं आस्याविषऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

येषां दूरमपि दृष्टि सुधानिपातो यस्योपरिस्खलति तस्य विषं सुतीव्रम् ।
अप्याशु नाशमयते नयनाविषास्ते कुर्वत्वनुग्रहममी कृतुभागभाजः।।

ओं ह्रीं दृष्ट्यविषऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

येयं ब्रुवंति यतयोऽ कृपया म्रियस्व सद्यो मृतिर्भवति तस्य च शक्तिभावात् ।
येषां कदापि न हि रोषजनिर्घटेत व्यक्ता तथापि यजतास्यविषान् मुनींद्रान् ।।

ओं ह्रीं आशीविषऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

येषामशातनिचयः स्वयमेव नष्टोऽन्येषां शिवोपचयनात्सुखमाददानाः।
ते निग्रहात्तमनसो यदि संभवेयु र्दृष्टयैव हंतुमनिशं प्रभवो यजे तान् ।।

ओं ह्री दृष्टि विषऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षीराश्रवर्द्धि मुनिवर्य पदांबुजात द्वंद्वाश्रयाद् विरसभोजनमप्युदश्वित् ।
हस्तार्पितं भवति दुग्धरसात्तवर्ण स्वादं तदर्चनगुणामृतपानपुष्टाः।।

ओं ह्रीं क्षीरस्त्राविऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

येषां वचांसि बहुलार्तिजुषां नराणां दुःखप्रघातनतयापि च पाणिसंस्था ।
भुक्तिर्मधुस्वदनवत् परिणामवीर्या स्तानर्चयामि मधुसंश्रविणो मुनीन्द्रान् ।।

ओं ह्रीं मधुश्राविऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

रुक्षान्नमर्पितमथो करयोस्तु येषां सर्पि· स्ववीर्यरसपाकवदाविभाति ।
ते सर्पिराश्रविण उत्तमशक्तिभाजः पापाश्रवप्रमथन रचयंतु पुंसाम् ।।

ओं ह्रीं घृतश्राविऋद्धिप्राप्तेभ्यो ऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

पीयूषमाश्रवति यत्करयोर्धृतं सद् रूक्षंतथा कटुकमम्लतरं कुभोज्यम् ।
येषां वचोऽप्यमृतवत् श्रवसो र्निधत्तं संतर्पयत्यसुभृतामपितान् यजामि ।।

ओं ह्रीं अमृतश्रावि ऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

यद्दत्तशेषमशनं यदि चक्रवर्ति सेनाऽपि भोजयति सा खलु तृप्तिमेति ।
तेऽक्षीण शक्ति ललिता मुनयो दृगाध्व जाता ममाशु वसु कर्महरा भवन्तु ।।

ओं ह्रीं अक्षीणमहानसर्द्धि प्राप्तेभ्योऽर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

यत्रोपदेशसरसि प्रसरच्युते ऽपि तिर्यग्मनुष्यविबुधाः शतकोटि संख्याः।
आगत्य तत्र निवसेयुरबाधमाना स्तिष्ठन्ति तान्मुनिवरानहमर्चयामि ।।

ओं ह्रीं अक्षीणमहालयऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

इत्थं सत्तपसः प्रभावजनिताः सिद्ध्यर्धिसंपत्तयो
येषां ज्ञान सुधा प्रलीढहृदयाः संसारहेतुच्युताः

रोहिण्यादिविधा विदोदितचमत्कारेषु संनिःस्पृहाः
नो वांछंति कदापि तत्कृत्तविधि तानाश्रये सन्मुनीन् ।

ओं ह्रीं सकलऋद्धिसंपन्नसर्वमुनिभ्यः पूर्णार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अत्रैव चतुर्विशतितीर्थेशां चतुर्दशशतं मतम् ।
सत्रिपंचाशता युक्तं गणिनां प्रयजाम्यहम् ।।

ओं ह्रीं चतुर्विशति तीर्थेश्वराग्रिमसमावर्तिसत्रिपंचाशच्चतुर्दशशतगणधरमुनिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

मदवेदनिधिद्वयग्रखत्रयांकान्मुनीश्वरान् ।
सप्तसंघेश्वरांस्तीर्थकृत्सभानियतान्यजे ।।

ओं ह्री वर्तमानचतुर्विशतितीर्थकरसभासंस्थायिएकोनत्रिंशल्लक्षाष्ट चत्वारिंशत्सहस्त्रप्रमितमुनींद्रेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ चतुर्दिक्षु जिनचैत्यचैत्यालयागम धर्माणां चत्वार्यर्घाणि देयानि तथाहि

अकृत्रिमाः श्रीजिनमूर्त्तयोनव सपंचविंशाः खलु कोटयस्तथा ।
लक्षास्त्रिपंचा शमितास्त्रिसगुणाः कृष्णाः सहस्राणि शतं नवानाम् ।।
द्विहीनपंचाशदुपात्तसंख्यकाः प्रणम्यताः पूजनया महाम्यहम् ।
.... ।।

ओं ह्रीं नवशतपंचविंशतिकोटित्रिपंचाशल्लक्षसप्त विंशतिसहस्त्रनवशताष्टचत्वारिंशत् प्रमित अकृत्रिम जिनबिंबेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अष्टौ कोट्यस्तथा लक्षाः षट पंचाशमितास्तथा ।
सहस्रं सप्तनवतेरे काशीतिश्चतुः शतम् ।।
एतत्संख्यान् जिनेंद्राणामकृत्रिमजिनालयान् ।
अत्राहूय समाराध्य पूजयाम्यहमध्वरे ।।

ओं ह्रीं अष्टकोटिषट् पंचाशल्लक्षसप्तनवति सहस्त्रचतुः शत एकाशीति संख्याकृत्रिम -जिनालयेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

यो मिथ्यात्वमतंगजेषु तरुणक्षुन्नन्न सिंहायते
एकान्ता तपतापितेषु समरुत्पीयूषमेघायते ।
श्वभ्रांधप्रहिसंपतत्सु सदयं हस्तावलंबायते
स्याद्वादध्वजमागमं तमभितः संपूजयामो वयम् ।।

ओं ह्रीं स्याद्वादमुद्रांकित परमजिनागमायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जिनेंद्रोक्तंधर्म सुदशयुतभेदं त्रिविधया स्थितं सम्यक् रत्नत्रयलतिकयाऽपि द्विविधया ।
प्रगीतं सागारेतर चरणतोह्येकमनघं दयारूपं वंदे मखभुवि समास्थापितमिमम् ।।

ओं ह्रीं दशलक्षणोत्तमादित्रिलक्षणसम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्ररूप तथा मुनिगृह स्थाचारभेदेन-द्विविध तथा दयारूपत्वेनैकरूपजिनधर्माय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

यागमडंलसमुद्धृता जिनाः सिद्धवीतमदनाः श्रुतानि च ।
चैत्यचैत्यगृहधर्ममागमं संयजामि सुविशुद्धिपूर्तये ।।

ओं ह्रीं सर्वयागमंडल देवताभ्यः पूर्णार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

शांतिः पुष्टिरनाकुलत्वमुदित भ्राजिष्णुताविष्कृतिः
संसारार्णवदुःखदावशमनं निःश्रेयसोद्भूतिता ।
सौराज्यं मुनिवर्यपादवरिवस्याप्रक्रमो नित्यशो-
भूयादभ्रशराक्षिनायकमहापूजा प्रभावान्मम ।।

इत्याशीर्वादं पठित्वा पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

अब यहां यजमान और आचार्य दोनों आचार्य भक्ति, अर्हद्भक्ति, सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति, चारित्रभक्ति, पाठ करे ।

महार्घ के पश्चात् शांतिभक्ति पढकर विधान समाप्त करें ।

यागमण्डल विधान पूजन

स्थापना (गीता)

कर्मतम को हननकर निजगुण प्रकाशन भानु हैं,
अन्त अर क्रम रहित दर्शन-ज्ञान-वीर्य निधान हैं।
सुखस्वभावी द्रव्य चित् सत् शुद्ध परिणति में रमें,
आइये सब विघ्न चूरण पूजते सब अघ वमें ॥

ओं ह्रीं अत्र प्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमण्डलोक्ता जिनमुनय अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ओं ह्रीं अत्र प्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमण्डलोक्ता जिनमुनय अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ओं ह्रीं अत्र प्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमण्डलोक्ता जिनमुनय अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

अष्टक (चाल)

गंगा-सिंधू वर पानी, सुवरणझारी भर लानी ।
गुरुपञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥१॥

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुद्ध गन्ध लाय मनहारी, भवताप शमन करतारी
गुरुपञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥२॥

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

शशिसम शुचि अक्षत लाए, अक्षयगुण हित हुलसाए ।
गुरुपञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥३॥

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वर जिनमुनिभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभकल्पद्रुम सुमना ले, जग वशकर काम नशा ले ।
गुरुपञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥४॥

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

पकवान मनोहर लाए, जारो क्षुधा रोग भगाए ।
गुरुपञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥५॥

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिन मुनिभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मणि रत्नमयी शुभ दीपा, तममोह हरण उद्दीपा ।
गुरुपञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥६॥

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभ गंधित धूप चढ़ाऊँ, कर्मो के वंश जलाऊँ ।
गुरुपञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥७॥

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुन्दर दिव भव फल लाए, शिव हेतु सुवरण चढ़ाये ।
गुरुपञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥८॥

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुवरण के पात्र धराये, शुचि आठों द्रव्य मिलाए ।
गुरुपञ्च परम सुखदाई, हम पूजे ध्यान लगाई ॥९॥

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(अडिल्ल)

काल अनन्ता भ्रमण करत जग जीव हैं । तिनको भव तें काढ़ि करत शुचि जीव है ॥
ऐसे अर्हत् तीर्थनाथ पद ध्याय के । पूजूँ अर्घ बनाय सुमन हरषाय के ॥

ओं ह्रीं अनन्तभवार्णभयनिवारकानन्तगुणस्तुताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्व० स्वाहा ॥

(हरिगीता)

कर्म-काष्ठ महान जाले ध्यान-अग्नि जलायके ।
गुण अष्ट लह व्यवहारनय निश्चय अनंत लहायके ॥
निज आत्म में थिररूप रह के, सुधा स्वाद लखायके ।
सो सिद्ध हैं कृतकृत्य चिन्मय, भजूँ मन उमगायके ॥

ओं ह्रीं अष्टकर्मविनाशकनिजात्मतत्त्वविभासकसिद्धपरेष्ठिने अर्घ्यम् निर्वपा० स्वाहा ॥

(त्रिभंगी)

मुनिगण को पालत आलस टालत आप सँभालत परम यती ।
जिनवाणी सुहानी शिवसुखदानी भविजन मानी धर सुमती ॥
दीक्षा के दाता अघ से त्राता समसुखभाता ज्ञानपती ।
शुभ पञ्चाचारा पालत प्यारा है आचारज कर्महती ॥

ओं ह्रीं अनवद्य विद्याविद्योतनाय आचार्यपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

(त्रोटक)

जय पाठक ज्ञान कृपाण नमो, भवि जीवन हत अज्ञान नमो ।
निज आत्म महानिधि धारक हैं, संशय वन दाह निवारक हैं ॥

ओं ह्रीं द्वादशांगपरिपूरणश्रु तपाठनोद्यत बुद्धिविभवोपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

(द्रुतविलंबित)

सुभग तप द्वादश कर्तार हैं, ध्यान सार महान प्रचार हैं ।
मुकति वास अचल यति साधते, सुख सु आतम जन्य सम्हारते ॥

ओं ह्रीं घोरतपोऽभिसंस्कृत्तध्यानस्वाध्यायनिरतसाधुपरमेष्ठिने अर्घ्य निर्व० स्वाहा ॥

(मालिनी)

अरि हनन सु अरिहनन् पूज्य अर्हन् बताये, मं पाप गलन हेतु मंगलं ध्यान लाये ।
मंगं सुखकारण मंगलीकं बताये, ध्यानी छवि तेरी देखते दुःख नशाये ॥

ओं ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिमंगलाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

(चौपाई)

जय जय सिद्ध परम सुखकारी । तुम गुण सुमरत कर्म निवारी ॥
विघ्नसमूह सहज हरतारे । मगलमय मंगल करतारे ॥

ओं ह्रीं सिद्धमंगलाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

(शार्दूलविक्रीडित)

राग-द्वेष महान सर्प शमनेशम मंत्रधारी यती ।
शत्रु-मित्र समान भाव करके भवताप हारी यती ॥
मंगल सार महानकार अघहर सत्त्वानुकम्पी यती ।
संयम पूर्ण प्रकार साध तप को संसारहारी यती ॥

ओं ह्रीं साधुमंगलाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

(शंकर)

जिनधर्म है सुखकार जग में धरत भवभयवंत ।
स्वर्ग-मोक्ष सुद्वार अनुपम धरें सो जयवन्त ॥
सम्यक्त्व-ज्ञान-चरित्र लक्षण भजत जग में संत ।
सर्वज्ञ रागविहीन वक्ता हैं प्रमाण महन्त ॥

ओं ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्ममंगलाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

(झूलना)

चर्ण संस्पर्शते वन गिरि शुद्ध हो, नाम सत्तीर्थ को प्राप्त करते भए ।
दर्श जिनका करे पूजते दुख हरे, जन्म निज सार्थ भविजीव मानत भए ।।
देव तुम लेखके देव सब छोड़के, देव तुम उत्तमा सन्त ठानत भए ।
पूजते आपको टालते ताप को, मोक्षलक्ष्मी निकट आप जानत भए ।।

ओं ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१।।

(भुजंगप्रयात)

दरश ज्ञान वैरी करम तीव्र आए, नरक पशुगती माँहि प्राणी पठाए ।
तिन्हें ज्ञान असितें हनन नाथ कीना, परम सिद्ध उत्तम भजूँ रागहीना ।।

ओं ह्रीं सिद्धलोकोत्तमाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।११।।

(चौपैया)

सूरज चन्द्र देवपति नरपति पद सरोज नित वंदे ।
लोट-लोट मस्तक धर पग में पातक सर्व निकंदे ।।
लोकमाँहि उत्तम यतियन में जैनसाधु सुखकंदे ।
पूजत सार आत्मगुण पावत होवत आप स्वच्छंदे ।।

ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१५।।

(सृग्विणी)

जो दया धर्म विस्तारता विश्व में,
नाश मिथ्यात्व अज्ञान हर विश्व में ।।
काम भाव दूर कर, मोक्षकर विश्व में,
सत्य जिनधर्म यह धार ले विश्व में ।।

ओं ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्मलोकोत्तमाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१३।।

(मरहठा)

भव-भ्रमण नशाया शरण कराया जीव-अजीवहि खोज ।
इन्द्रादिक देवा जाको पूजें जग गुण गावें रोज ।।
ऐसे अर्हत् की शरणा आये, रत्नत्रय प्रकटाय ।
जासे ही जन्ममरण भय नाशे नित्यानन्दी थाय ।।

ओं ह्रीं अर्हत्शरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१४।।

(नाराच)

सुखी न जीव हो कभी जहाँ कि देह साथ है।
सदा हि कर्म आस्रवें, न शांतता लहात है ।।
जो सिद्ध को लखाय भक्ति एक मन करात है।
वही सुसिद्ध आप ही स्वभाव आत्मपात है ।।

ओं ह्रीं सिद्धशरणाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।१५।।

(त्रोटक)

नहि राग न द्वेष न काम धरे, भवदधि नौका भवि पार करें।
स्वारथ बिन सब हितकारक हैं, ते साधु जजूँ सुखकारक हैं ।।

ओं ह्रीं साधुशरणाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।१६।।

(चामर)

धर्म ही सु मित्रसार साथ नाहि त्यागता,
पापरूप अग्नि को सुमेघ सम बुझावता ।
धर्म सत्य शर्ण यही जीव को सम्हारता,
भक्ति धर्म जो करें अनन्त ज्ञान पावता ।।

ओं ह्री धर्मशरणाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।१७।।

(दोहा)

पञ्च परमगुरुसार है, मंगल उत्तम ज्ञान ।
शरणा राखन को बली, पूजूँ कर उर ध्यान ।।

ओं ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिप्रभृतिधर्मशरणांतप्रथमवलयस्थितसप्तदशजिनाधीशयागदेवताभ्यः पूर्णार्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

द्वितीय वलय में भूतकाल के २४ तीर्थंकरों की पूजा

(पद्धड़ी)

भवि लोक शरण निर्वाणदेव, शिव सुखदाता सब देव देव ।
पूजूँ शिवकारण मन लगाय, जासे भवसागर पार जाय ।।

ओं ह्री निर्वाणजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।१८।।

तज राग-द्वेष ममता विहार, पूजक जन सुख अनुपम लहाय ।
गुणसागर सागर जिन लखाय, पूजूँ मन-वच अर काय नाय ।।

ओं ह्री सागरजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।१९।।

नय अर प्रमाण से तत्त्व पाय, निज जीव तत्त्व निश्चय कराय ।
साधो तप केवलज्ञान दाय, ते साधु महा वन्दो सुभाय ।

ओं ह्री महासाधुजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२०॥

दीपक विशाल निज ज्ञान पाय, त्रैलोक लखे बिन श्रम उपाय ।
विमलप्रभ निर्मलता कराय, जो पूजे जिनको अर्घ लाय ॥

ओं ह्रीं विमलप्रभाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२१॥

भवि शरण गेह मन शुद्धिकार, गावे थुति मुनिगण यश प्रचार ।
शुद्धाभदेव पूजूँ विचार, पाऊँ आतम गुण मोक्ष द्वार ॥

ओं ह्रीं शुद्धाभदेवाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२२॥

अतर बाहर लक्ष्मी अधीश, इन्द्रादिक सेवत नाय शीश ।
श्रीधर चरण श्री शिव कराय, आश्रयकर्त्ता भवदधि तराय ॥

ओं ह्रीं श्रीधराय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२३॥

जो भक्ति करें मन-वचनकाय, दाता शिवलक्ष्मी के जिनाय ।
श्रीदत्त चरण पूजूँ महान, भवभय छूटे लहूँ अमल ज्ञान ॥

ओं ह्रीं श्रीदत्तजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२४॥

भामण्डल छवि वरणी न जाय, जहँ जीव लखे भव सप्त आय ।
मन शुद्ध करे सम्यक्त्व पाय, सिद्धाभ भजे भवभय नसाय ॥

ओं ह्रीं सिद्धाभजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२५॥

अमलप्रभ निर्मल ज्ञान धरे, सेवा में इन्द्र अनेक खड़े ।
नित संत सुमंगल गान करे, निज आतमसार विलास करें ॥

ओं ह्रीं अमलप्रभजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२६॥

उद्धार जिनं उद्धार करें, भव कारण भाँति विनाश करें ।
हम डूब रहे भवसागर में, उद्धार करो निज आत्म रमें ॥

ओं ह्रीं उद्धारजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२७॥

अग्निदेव जिनं हो अग्निमई, अठ कर्मन ईधन दाह दई ।
हम असात तृणं कर दग्ध प्रभो, निजसम करले जिनराज प्रभो ॥

ओं ह्रीं अग्निदेवजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२८॥

संयम जिन द्वैविध संयम को, प्राणी रक्षण इन्द्रिय दम को ।
दीजे निश्चय निज सयम को, हरिये हम सर्व असंयम को ॥

ओं ह्रीं संयमजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२९॥

शिव जिन शाश्वत सौख्यकरी, निज आत्मविभूति स्वहस्त करी ।
शिव वाञ्छक प्रभु कर जोड़ नमें, शिवलक्ष्मी दो नहि काहू नमें ।।

ओं ह्रीं शिवजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।३०।।

पुष्पांजलि पुष्पनितें जजिये, सब कामव्यथा क्षण में हरिये ।
निज शील स्वभाव हि रम रहिये, आत्म जनित सुख को लहिये ।।

ओं ह्रीं पुष्पाञ्जलिजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।३१।।

उत्साह जिनं उत्साह करें, निज संयम चन्द्रप्रकाश करें ।
समभाव समुद्र बढ़ावत हैं, हम पूजत तव गुण पावत हैं ।।

ओं ह्रीं उत्साहजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।३२।।

चिन्तामणि सम चिन्ता हरिये, निज सम करिये भव तम हरिये ।
परमेश्वर जिन ऐश्वर्य धरें, जो पूजें ताके विघ्न हरें ।।

ओं ह्रीं परमेश्वरजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।३३।।

ज्ञानेश्वर ज्ञान समुद्र पाय, त्रैलोक बिन्दु सम जहं दिखाय ।
निज आतमज्ञान प्रकाशकार, वन्दूँ पूजूँ मैं बार-बार ।।

ओं ह्रीं ज्ञानेश्वरजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।३४।।

कर्मो ने आत्म मलीन किया, तप अग्नि जला निज शुद्ध किया ।
विमलेश्वर जिन मो विमल करो, मम ताप सकल ही शांत करो ।।

ओं ह्रीं विमलेश्वरजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।३५।।

यश जिनका विश्वप्रकाश किया, शशि कर इव निर्मल व्याप्त किया ।
भट मोह-अरी को शांत किया, यशधारी सार्थक नाम किया ।।

ओं ह्रीं यशोधरजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।३६।।

समता भयक्रोध विनाश किया, जग कामरिपू को शान्त किया ।
शुचिताधर शुचिकर नाथ जजूँ, श्री कृष्णमती जिन नित्य भजूँ ।।

ओं ह्रीं कृष्णमतये जिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।३७।।

शुचि ज्ञानमती जिन ज्ञान धरें, अज्ञान तिमिर सब नाश करें ।
जो पूजें ज्ञान बढ़ावत हैं, आतम अनुभव सुख पावत हैं ।।

ओं ह्रीं ज्ञानमतये जिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।३८।।

शुद्धमती जिनधर्म धुरन्धर, जानत विश्व सकल एकीकर ।
शुद्ध बुद्धि होवे जो पूजें, ध्यान करे भवि निर्मल हूजे ।।

ओं ह्रीं शुद्धमतये जिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।३९।।

ससार विभूति उदास भये, शिवलक्ष्मी सार सुहात भए ।
निज योग विशाल प्रकाश किया, श्रीभद्र जिनं शिववास लिया ॥

ओं ह्री श्रीभद्रजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥४०॥

सतवीर्य अनन्त प्रकाश किये, निज आतमतत्त्व विकास किये ।
जिन वीर्य अनन्त प्रभाव धरे, जो पूजें कर्म-कलक हरे ॥

ओं ह्रीं अनन्तवीर्यजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥४१॥

(दोहा)

भूत भरत चोबीरा जिन, गुण सुमरुँहर बार ।
मंगलकारी लोक मे, सुख-शांति दातार ॥

ओंह्रींअस्मिन् प्रतिष्ठामहोत्सवे यागमण्डलेश्वर द्वितीयवलयोन्मुद्रितनिर्वाणाद्यनन्तवीर्यान्त भूतजिनेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तृतीय वलय में वर्तमानकाल के २४ तीर्थकरों की पूजा

(चाल)

मनु नाभि महीधर जाये, मरुदेवि उदर उतराए ।
युग आदि सुधर्म चलाया, वृषभेष जजों वृष पाया ॥

ओं ह्री ऋषभनाथजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥४२॥

जित शत्रु जने व्यवहारा, निश्चय आयो अवतारा ।
सब कर्मन जीत लिया है, अजितेश सुनाम भया है ॥

ओं ह्री अजितनाथजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥४३॥

दृढराज सुयश आकाशे, सूरजसम नाथ प्रकाशे ।
जग-भूषण शिव गति दानी, सभव जज केवलज्ञानी ॥

ओं ह्री सम्भवनाथजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥४४॥

कपिचिन्ह धरे अभिनदा, भवि जीव करे आनन्दा ।
जन्मन मरणा दुःख टारें, पूजे ते मोक्ष सिधारें ॥

ओं ह्रीं अभिनन्दननाथजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥४५॥

सुमतीश जजों सुखकारी, जो शरण गहें मतिधारी ।
मति निर्मल कर शिव पावें, जग-भ्रमण हि आप मिटावे ॥

ओं ह्रीं सुमतिनाथजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥४६॥

कुरुवशी श्री विश्वसेना, ऐरादेवी सुख देना ।
श्री हस्तिनागपुर आए, जिन शांति जजों सुख पाए ।।

ओं ह्री शांतिनाथजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।५७।।

श्री कुन्थु दयामय ज्ञानी, रक्षक षट्कायी प्राणी ।
सुमरत आकुलता भाजे, पूजत ले दर्व सु ताजे ।।

ओं ह्रीं कुन्थुनाथजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।५८।।

शुभदृष्टी राय सुदर्शन, अर जाए त्रय भू पर्शन ।
माता सेना उर रत्न, धर चिन्ह मच्छ जज यत्न ।।

ओं ह्रीं अरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।५९।।

नृप कुम्भ धरणि से जाए, जिन मल्लिनाथ सुत पाये ।
जिन यज्ञ विघ्न हरतारे, पूजूँ शुभ अर्घ्य उतारे ।।

ओं ह्रीं मल्लिनाथजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।६०।।

हरिवंश सु सुन्दर राजा, पद्मा माता जिनराजा ।
मुनिसुव्रत शिवपथ कारण, पूजूँ सब विघ्न निवारण ।।

ओं ह्री मुनिसुव्रतजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।६१।।

मिथिलापुर विजय नरेन्द्रा, कल्याण पाँच कर इन्द्रा ।
नमि धर्मामृत वर्षायो, भव्यन खेती प्रफुलायो ।।

ओं ह्री नमिनाथजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।६२।।

द्वारावति विजयसमुद्रा, जन्में यदुवश जिनेन्द्रा ।
हरिबल पूजित जिनचरणा, शंखाक अंबुधर वरणा ।।

ओं ह्रीं नेमिनाथजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।६३।।

काशी अश्वसेन नरेशा, उपजायो पार्श्व जिनेशा ।
पद्मा अहिपति पग वन्दे, रिपु कमठ मान निःकंदे ।।

ओं ह्रीं पार्श्वनाथजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।६४।।

सिद्धार्थराय त्रय ज्ञानी, सुत वर्द्धमान गुणखानी ।
समवसृत श्रेणिक पूजे, तुम सम है देव न दूजे ।।

ओं ह्रीं वर्द्धमानजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।।६५।।

दोहा – वर्तमान चौबीस जिन, उद्धारक भवि जीव ।
बिम्ब प्रतिष्ठा साधने, यजूँ परम सुख नीव ।।

ओं ह्रीं अस्मिन् यागमण्डले मखमुख्यार्चिततृतीयवलयोन्मुद्रित वर्तमानचतुर्विंशतिजिनेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

चतुर्थ वलय में भविष्यकाल के २४ तीर्थंकरों की पूजा

(चौपाई)

महापद्म जिन भावीनाथ, श्रेणिक जीव जगत विख्यात ।
लक्ष्मी चञ्चल लिपटी आन, ता चरणा पूजूँ भगवान ॥

ओं ह्रीं महापद्मजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६६॥

देव चतुर्विध पूजे पाय, नाय नाय सुरप्रभ जिनराय ।
सब सुमरण करके हरषांय, पूजें हर्ष न अंग समाय ॥

ओं ह्रीं सुरप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६७॥

सुप्रभ जिनके वंदूँ पाय, सेवकजन सुखसार लहाय ।
करुणाधारी धन दातार, जो अविनाशी जिय सुखकार ॥

ओं ह्रीं सुप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६८॥

मोक्ष राज्य देवे नहि कोय, स्वयं आत्मबल लेवें सोय ।
देव स्वयंप्रभ चरण नमाय, पूजूँ मन-वच ध्यान लगाय ॥

ओं ह्रीं स्वयंप्रभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६९॥

मन-वच-काय गुप्ति धरतार, तीव्र शस्त्र अघ मारणहार ।
सर्वायुध जिन साम्य प्रचार, पूजत जग मंगल करतार ॥

ओं ह्रीं सर्वायुधदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७०॥

कर्म शत्रु जीतन बलवान, श्री जयदेव परम सुखखान ।
पूजत मिथ्यातम विघटाय, तत्त्व कुतत्त्व प्रकट दर्शाय ॥

ओं ह्रीं जयदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७१॥

आत्मप्रभाव उदय जिन भयो, उदयप्रभ जिन तातें थयो ।
पूजत उदय पुण्य का होय, पापबन्ध सब डालें खोय ॥

ओं ह्रीं उदयप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७२॥

प्रभा मनीशा बुद्धिप्रकाश, प्रभादेव जिन छूटी आश ।
पूजत प्रभा ज्ञान उपजाय, संशयतिमिर सबै हट जाय ॥

ओं ह्रीं प्रभादेवजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७३॥

भव्यभक्ति जिनराज कराय, सफल काल तिनका हो जाय ।
देव उदंक पूज जो करें, मनुषदेह अपनी वर करें ॥

ओं ह्रीं उदंकदेवजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७४॥

सुरविद्याधर प्रश्न कराय, उत्तर देत भरम टल जाय।
प्रश्नकीर्ति जिन यश धार, पूजत कर्मकलंक निवार ॥

ओं ह्रीं प्रश्नकीर्तिजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥७५॥

पापदलन तें जय को पाय, निर्मल यश जग मे प्रकटाय।
गणधरादि नित वन्दन करें, पूजत पापकर्म सब हरे ॥

ओं ह्रीं जयकीर्तिजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥७६॥

बुद्धिपूर्ण जिन वन्दूँ पाय, केवलज्ञान ऋद्धि प्रकटाय।
चरण पवित्र करण सुखदाय, पूजत भवबाधा नश जाय ॥

ओं ह्रीं पूर्णबुद्धिजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥७७॥

हैं कषाय जग मे दुःखकार, आत्मधर्म के नाशनहार।
निःकषाय होंगे जिनराज, ताते पूजूँ मंगल काज ॥

ओं ह्रीं निःकषायजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥७८॥

कर्मरूप मल नाशनहार, आत्म शुद्ध कर्त्ता सुखकार।
विमलप्रभ जिन पूजूँ आय, जासे मन विशुद्ध हो जाय ॥

ओं ह्रीं विमलप्रभदेवाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥७९॥

दीप्तवन्त गुण धारण हार, बहुलप्रभ पूजो हितकार।
आतमगुण जासै प्रगटाय, मोहतिमिर क्षण में विनशाय ॥

ओं ह्रीं बहुलप्रभदेवाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥८०॥

जलनभ रत्न विमल कहवाय, सो अभूत व्यवहार वसाय।
भावकर्म अठकर्म महान, हत निर्मल जिन पूजूँ जान ॥

ओं ह्रीं निर्मलजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥८१॥

मन-वच-काय गुप्ति धरतार, चित्रगुप्ति जिन हैं अविकार।
पूजूँ पग तिन भाव लगाय, जासे गुप्तित्रय प्रगटाय ॥

ओं ह्रीं चित्रगुप्तिजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥८२॥

चिरभव भ्रमण करत दुःख सहा, मरण समाधि न कबहूँ लहा।
गुप्ति समाधि शरण को पाय, जजत समाधि प्रगट हो जाय ॥

ओं ह्रीं गुप्ति समाधि जिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥८३॥

अन्य सहाय बिना जिनराज, स्वयं लेय परमातम राज।
नाथ स्वयंभू मग शिवदाय, पूजत बाधा सब टल जाय ॥

ओं ह्रीं स्वयंभूजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥८४॥

मानदर्प के नाशनहार, जिन कंदर्प आत्मबल धार ।
दर्प अयोग बुद्धि के काज, पूजूँ अर्घ लिए जिनराज ॥

ओं ह्रीं कन्दर्पजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८५॥

गुण अनंत ते नाम अनंत, श्री जयनाथ धरम भगवंत ।
पूजूँ अष्टद्रव्य कर लाय, विघ्न सकल जासे टल जाय ॥

ओं ह्रीं जयनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८६॥

पूज्य आत्म गुणधर मलहार, विमलनाथ जग परम उदार ।
शील परम पावन के काज, पूजूँ अर्घ लेय जिनराज ॥

ओं ह्रीं विमलजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८७॥

दिव्यवाद अर्हन्त अपार, दिव्यध्वनि प्रगटावन हार ।
आत्मतत्त्व ज्ञाता सिरताज, पूजूँ अर्घ लेय जिनराज ॥

ओं ह्रीं दिव्यवादजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८८॥

शक्ति अपार आतम धरतार, प्रगट करें जिनयोग संभार ।
वीर्य अनन्तनाथ को ध्याय, नतमस्तक पूजूँ हरषाय ॥

ओं ह्रीं अनन्तवीर्यजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥८९॥

दोहा - तीर्थराज चौबीस जिन, भावी भव हरतार ।
बिम्ब प्रतिष्ठा कार्य में, पूजूँ विघ्न निवार ॥

ओं ह्रीं प्रतिष्ठोद्यापने मुख्यपूजार्ह चतुर्थवलयोन्मुद्रितानागत-चतुर्विंशतिमहापद्माद्यनंतवीर्यांत जिनेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पंचम वलय में विदेहक्षेत्र के २० तीर्थंकरों की पूजा

मोक्षनगरी पति हंस राजा सुतं, पुण्डरीका पुरी राजते दुखहतम् ।
सीमन्धर जिना पूजते दुखहना, फेर होवे न या जगत में आवना ॥

ओं ह्रीं सीमन्धरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९०॥

धर्मद्वय वस्तुद्वय नय-प्रमाणद्वय, नाथ जुगमन्धरं कथितं व्रतद्वयं ।
भूपश्री रुह सुतं ज्ञानकेवलगतं, पूजिये भक्ति से कर्मशत्रु हतं ॥

ओं ह्रीं जुगमन्धरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९१॥

भूप सुग्रीव विजया से जाए प्रभु, हिरन चिन्हं धरें जानते तीन भू ।
स्वच्छसीमापुरी राजते बाहुजिन, पूजिये साधु को राग-रुष दोष बिन ॥

ओं ह्रीं बाहुजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९२॥

वश जिन निर्मल सूर्य सम राजते, कीर्तिमय बंध बिन क्षेत्र शुभ शोभते।
मात सुन्दर सुनन्दा सु भवभयहत, पूजते बाहुशुभ भवभयं निर्गतं ॥

ओं ह्रीं सुबाहुजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥९३॥

जन्म अलकापुरी देवसेनात्मजं, पुण्यमय जन्मए नाथ सञ्जातकं।
पूजिये भाव से द्रव्य आठों लिये, और रस त्याग कर आत्मरस को पिये ॥ओं

ओं ह्रीं सञ्जातकजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥९४॥

जन्म पुर मंगला चन्द्र चिन्हं धरे, आप से आप से भव उदधि उद्धरे।
प्रभस्वयं पूजते विघ्न सारे टरें, होय मगल महा कर्मशत्रू डरे ॥

ओं ह्री स्वयंप्रभजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥९५॥

वीरसेना सुमाता अयोध्यापुरी, देवदेवी परमभक्ति उर मे धरी।
देव ऋषभाननं आनन सार हैं, देखते पूजते भव्य उद्धार है ॥

ओं ह्रीं ऋषभाननदेवाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥९६॥

वीर्य का पार ना ज्ञान का पार ना, सुक्ख का पार ना ध्यान का पार ना।
आप में राजते शान्तमय छाजते, अन्त बिन वीर्य को पूज अघ भाजते ॥

ओं ह्री अनन्तवीर्यजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥९७॥

अकवृष धारते धर्मवृष्टी करें, भाव सन्तापहर ज्ञानसृष्टी करे।
नाथ सूरि प्रभ पूजते दुखहनं, मुक्तिनारी वरं राजते निजघनं ॥

ओं ह्रीं सूरिप्रभजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥९८॥

नगर सीमापुरी मात विजया जने, विजयु राजा पिता ज्ञानधारी तने।
जुग्मचरण भजे ध्यान इकतान हो, जिनविशालप्रभ पूज अघहान हो ॥

ओं ह्री विशालप्रभजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥९९॥

वज्रधर जिनवरं पद्मरथ के सुतं, शंखचिन्हं धरे मानरुष भय गतं।
मात सरसुति बड़ी इन्द्र सम्मानिता, पूजते जास को पाप सब भाजता ॥

ओं ह्रीं वज्रधरजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥१००॥

चन्द्र आनन जिन चन्द्र को जयकरं, कर्म विध्वंसकं साधुजन शमकरं।
मात पद्मावती नग्र विनीता बनी, पूजते मोह की राजधानी छिनी ॥

ओं ह्रीं चन्द्राननजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥१०१॥

श्रीमती रेणुका मात है जास की, पद्मचिन्हं धरे मोह को मात दी।
चन्द्रबाहुजिनं ज्ञानलक्ष्मी धरं, पूजते जास को मुक्तिलक्ष्मी वरं ॥

ओं ह्री चन्द्रबाहुजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥१०२॥

नाथ निज आत्मबल मुक्तिपथ पग दिया, चन्द्रमा चिन्हधर मोहतम हर लिया ।
बलमहाभूपती हैं पिता जास के, पूजते जिन भुजंगम न भव में छके ॥

ओं ह्रीं भुजंगमजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥१०३॥

मात ज्वाला सती सेन गल भूपती, पुत्र ईश्वर जने पूजते सुरपती ।
शुभ अयोध्यानगर धर्म विस्तार कर, पूजते हो प्रगट बोधिमय भास्कर ॥

ओं ह्रीं ईश्वरजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥१०४॥

नाथ नेमिप्रभं नेमि हैं धर्मरथ, वृषभचिन्हं धरें चालते मुक्तिपथ ।
अष्ट द्रव्यों लिये पूजते अघ हनें, ज्ञान वैराग्य से बोधि पावें घनें ॥

ओं ह्रीं नेमिप्रभजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥१०५॥

भानुमति माँ सुतं कर्मसेना हतं, वीरसेनं जिनं इन्द्रसे वन्दितं ।
नगर विजयावरं भूमिपालक नृपं, हैं पिता ज्ञानसूरा करूँ मैं जपं ॥

ओं ह्रीं वीरसेनजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥१०६॥

नगर सीमा तने देव राजा पती, अर उमामात के पुत्र संशय हती ।
जिन महाभद्र को पूजिये भद्रकर, सर्व मंगल करें मोह सन्ताप हर ॥

ओं ह्रीं महाभद्रजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥१०७॥

है अयोध्यानगर भूप भूतस्त्रवं, मात गंगाजने द्योतते त्रिभुवनं ।
लांछनं स्वस्तिक जिनयशोदेव को, पूजिये वन्दिये मुक्ति गुरुदेव को ॥

ओं ह्रीं देवयशोजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥१०८॥

पद्मचिन्हं धरे मोह को वश करें, नृप सुबोधं सुतं क्रोध को क्षय करें ।
ध्यान मण्डित महावीर्य अजितं धरें, पूजते जास को कर्मबन्धन टरें ॥

ओं ह्रीं अजितवीर्यजिनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥१०९॥

दोहा - राजत बीस विदेह जिन, कबहि साठ शत होय ।
पूजत वन्दत जास को, विघ्न सकल क्षय होय ॥

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठाध्वरोद्यापने मुख्यपूजार्हपञ्चमवलयोन्मुद्रितविदेहक्षेत्रे - सु पष्ठि सहितैकशतजिनेशसंयुक्तनित्यविहरमाणविंशतिजिनेभ्यः पूर्णार्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

षष्ठ वलय में आचार्य परमेष्ठी के ३६ गुणों की पूजा

(भुजंगप्रयात)

हटाये अनन्तानुबंधी कषाये, करण से है मिथ्यात तीनो खपाये।
अतीचार पच्चीस को है बचाये, सु आचार दर्शन परम गुरुधराये॥

ओं ह्री दर्शनाचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥११०॥

न संशय विपर्यय न है मोह कोई, परग ज्ञान निर्मल धरें तत्त्व जोई।
स्व-पर ज्ञान से भेदविज्ञान धारे, सु आचार ज्ञानं स्व-अनुभव सम्हारे॥

ओं ह्रीं ज्ञानाचार संयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१११॥

सुचारित्र व्यवहार निश्चय सम्हारे, अहिंसादि पॉचो महाव्रत सुधारे।
अचल आत्म में शुद्धता सार पाए, जजूँ पद गुरु के दरब अष्ट लाए॥

ओं ह्री चरित्राचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥११२॥

तपें द्वादशो तप अचल ज्ञानधारी, सहे गुरु परिषह सुसमता प्रचारी।
परम आत्मरस पीवते आप ही ते, भजूँ मै गुरु छूट जाऊँ भवो तें॥

ओं ह्री तपाचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥११३॥

परम ध्यान मे लीनता आप कीनी, न हटते कभी घोर उपसर्ग दीनी।
सु आतमबली वीर्य की ढाल धारी, परम गुरु जजूँ अष्ट द्रव्य सम्हारी॥

ओं ह्री वीर्याचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥११४॥

तपः अनशन जो तपे धीर-वीरा, तजे चारविध भोजन शक्ति धीरा।
कभी मास पक्षं कभी चार त्रय दो, सु उपवास करते जजूँ आप गुण दो॥

ओं ह्री अनशनतपोयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥११५॥

सु ऊनोदरी तप महास्वच्छकारी, करें नींद आलस्य का नहि प्रचारी।
सदा ध्यान की सावधानी सम्हारे, जजूँ मैं गुरु को करम घन विदारें॥

ओं ह्री अवमोदर्यतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥११६॥

कभी भोजना हेतु पुर में पधारे, तभी दृढ़प्रतिज्ञा गुरुआप धारे।
यही वृत्ति-परिसख्य तप आशहारी, भजूँ जिन गुरु जो कि धारे विचारी॥

ओं ह्री वृत्तिपरिसंख्यातपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥११७॥

कभी छ रसों को कभी चार त्रय दो, तजे राग वर्जन गुरु लोभजित हो।
धरें लक्ष्य आतम सुधा सार पीते, जजूँ मैं गुरु को सभी दोष बीते॥

ओं ह्रीं रसपरित्यागतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥११८॥

कभी पर्वतों पर गुहा वन मशाने, धरें ध्यान एकांत में एकताने।
धरें आसना दृढ़ अचल शांतिधारी, जजूँ मैं गुरु को भरम तापहारी ॥

ओं ह्रीं विविक्तशय्यासनतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥११९॥

ऋतु उष्ण पर्वत शरदरितु नदी तट, अधोवृक्ष बरसात में या कि चउ पथ।
करें योग अनुपम सहें कष्ट भारी, जजूँ मैं गुरु को सुशम दम अपारी ॥

ओं ह्रीं कायक्लेशतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१२०॥

करें दोष आलोचना गुरुसकाशे, भरें दण्ड रुचिसों गुरुजो प्रकाशे।
सुतप अन्तरंगं प्रथम शुद्ध कारी, जजूँ मैं गुरु को स्व आतम विहारी ॥

ओं ह्रीं प्रायश्चित्ततपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१२१॥

दरश ज्ञान चारित्र आदि गुणों में, परम पद मयी पाँच परमेष्ठियों में।
विनय तप धरें शल्यत्रय को निवारें, हमें रक्ष श्री गुरु जूजूँ अर्घ धारें ॥

ओं ह्रीं विनयतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१२२॥

यती संघ दस विध यदि रोग धारे, तथा खेद पीड़ित मुनी हों विचारे।
करें सेव उनकी दया चित्त ठानें, जजूँ मैं गुरु को भरम ताप हानें ॥

ओं ह्रीं वैय्यावृत्तितपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१२३॥

करें बोध निजतत्त्व परतत्त्व रुचि से, प्रकाशें परम तत्त्व जग को स्वमति से।
यही तप अमोलक करम को खिपावे, जजूँ मैं गुरु को कुबोधं नशावे ॥

ओं ह्रीं स्वाध्यायतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१२४॥

अपावन विनाशीक निज देह लखके, तजें सब ममत्वं सुधा आत्म चखके।
करें तप सु व्युत्सर्ग सन्तापहारी, जजूँ मैं गुरु को परम पद विहारी ॥

ओं ह्रीं व्युत्सर्गपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१२५॥

जु है आर्तरौद्रं कुध्यानं कुज्ञानं, उन्हें नहि धरें ध्यान धर्म प्रमाणं।
करें शुद्ध उपयोग कर्मप्रहारी, जजूँ मैं गुरु को स्वअनुभव सम्हारी ॥

ओं ह्रीं ध्यानावलम्बननिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१२६॥

करें कोइ बाधा वचन दुष्ट बोले, क्षमा ढाल से क्रोध मन में न कुछ ले।
धरें शक्ति अनुपम तदपि साम्यधारी, जजूँ मैं गुरु को स्वधर्मप्रचारी ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमापरमधर्मधारकाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१२७॥

धरें मद न तप ज्ञान आदी स्व मन में, नरम चित्त से ध्यान धारें सु वन में।
परम मार्दवं धर्म सम्यक् प्रचारी, जजूँ मैं गुरु को सुधा ज्ञान धारी ॥

ओं ह्रीं उत्तममार्दवधर्मधुरन्धराचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१२८॥

परम निष्कपट चित्त भूमी सम्हारे, लता धर्म वर्धन करें शान्ति धारे।
करम अष्ट हन मोक्ष फल को विचारें, जजूँ मैं गुरु को श्रुत ज्ञान धारे॥

ओं ह्रीं उत्तमार्जवधर्मपरिपुष्टाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१२९॥

न रुष लोभ भय हास्य नहि चित्त धारे, वचन सत्य आगम प्रमाणी उचारे।
परम हितमित मिष्ट वाणी प्रचारी, जजूँ मैं गुरु को सु समता विहारी॥

ओं ह्रीं उत्तमसत्यधर्मप्रतिष्ठिताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१३०॥

न है लोभ राक्षस न तृष्णा पिशाची, परम शौच धारें सदा जो अजाची।
करें आत्म शोभा स्व संतोष धारी, जजूँ मैं गुरु को भवातापहारी॥

ओं ह्रीं उत्तमशौचधर्मधारकाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१३१॥

न संयम विराधे करे प्राणिरक्षा, दमें इन्द्रियों को मिटावें कु-इच्छा।
निजानंद राचे खरे संयमी हो, जजूँ मैं गुरु को यमी अरु दमी हो॥

ओं ह्रीं उत्तमद्विविधसंयमपात्राचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१३२॥

तपो भूषणं धारते यदि विरागी, परमधाम सेवी गुणग्राम भागी।
करे सेव तिनकी सु इन्द्रादि देवा, जजूँ मै गुरु को लहूँ ज्ञान मेवा॥

ओं ह्रीं उत्तमतपोऽतिशयधर्मसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१३३॥

अभयदान देते परम ज्ञान दाता, सुधर्मौषधी बाँटते आत्म त्राता।
परम त्याग धर्मी परम तत्त्व गर्मी, जजूँ मै गुरु को शमूँ कर्म गर्मी॥

ओं ह्रीं उत्तमत्यागधर्मप्रवीणाचार्य परमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१३४॥

न परवस्तु मेरी न संबंध मेरा, अलख गुण निरञ्जन शर्मी आत्म मेरा।
यही भाव अनुपम प्रकाशे सुध्यान, जजूँ मैं गुरु को लहूँ शुद्ध ज्ञानं॥

ओं ह्रीं उत्तमाकिंचनधर्मसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१३५॥

परम शील धारी निजाराम चारी, न रंभा न नारी करें मन विकारी।
परम ब्रह्मचर्या चलत एक तान, जजूँ मैं गुरु को सभी पापहान॥

ओं ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्ममहनीयाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१३६॥

मन गुप्ति धारी विकल्प प्रहारी, परम शुद्ध उपयोग मे नित विहारी।
निजानन्द सेवी परम धाम देवी, जजूँ मैं गुरु को धरम ध्यान टेवी॥

ओं ह्रीं मनोगुप्तिसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१३७॥

वचन गुप्तिधारी महासौख्यकारी, करें धर्म उपदेश संशय निवारी।
सुधा सार पीते धरम ध्यान धारी, जजूँ मैं गुरु को सदा निर्विकारी॥

ओं ह्रीं वचनगुप्तिधारिकाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१३८॥

अचल ध्यान धारी खड़ी मूर्ति प्यारी, खुजावें मृगी अंग अपना सम्हारी ।
धरी काय गुप्ति निजानन्द धारी, जजूँ मैं गुरु को सु समता प्रचारी ।।

ओं ह्रीं कायगुप्तिसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१३९।।

परम साम्यभावं धरें जो त्रिकालं, भरम राग द्वेषं मदं मोह टालं ।
पिये ज्ञान रस शांति समता प्रचारी, जजूँ मैं गुरुको निजानंद धारी ।।

ओं ह्रीं सामायिकावश्यककर्मधारि आचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१४०।।

करे वन्दना सिद्ध अरहन्त देवा, मगन तिन गुणों में रहें सार लेवा ।
उन्हीं-सा निजातम जु अपने विचारें, जजूँ मैं गुरुको धरम ध्यान धारें ।।

ओं ह्रीं वन्दनावश्यकनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१४१।।

करें संस्तव सिद्ध अरहंत देवा, करें गान गुण का लहें ज्ञान मेवा ।
करें निर्मलं भाव को पाप,नाशे, जजूँ मैं गुरु को सु समता प्रकाशें ।।

ओं ह्रीं स्तवनावश्यकसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१४२।।

लगे दोष तन मन वचन के फिरन से, कहें गुरुसमीपे परम शुद्ध मन से ।
करें प्रतिक्रमण अर लहें दण्ड सुख से, जजूँ मैं गुरुको छुटूँ सर्व दुःख से ।।

ओं ह्रीं प्रतिक्रमणावश्यकनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१४३।।

करें भावना आत्म की ज्ञान ध्यावें, पढ़ें शास्त्र रुचि से सुबोधं बढ़ावें ।
यही ज्ञान सेवा करम मल छुड़ावे, जजूँ मैं गुरुको अबोधं हटावे ।।

ओं ह्रीं स्वाध्यायावश्यककर्मनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१४४।।

तजें सब ममत्वं शरीरादि सेती, खडें आत्म ध्यावे छुटे कर्म रेती ।
लहें ज्ञान भेदं सु व्युत्सर्ग धारें, जजूँ मैं गुरुको स्व-अनुभव विचारें ।।

ओं ह्रीं व्युत्सर्गावश्यकनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१४५।।

दोहा-
गुण अनन्त धारी गुरु शिवमग चालनहार ।
संघ सकल रक्षा करे, यज्ञ विघ्न हरतार ।।

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोद्यापने पूजार्हमुख्यषष्ठवलयोन्मुद्रिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सप्तम वलय में उपाध्याय परमेष्ठी के २५ गुणों की पूजा

(द्रुतविलम्बित)

प्रथम अंग कथित आचार को, सहस अष्टादश पद धारतो ।
पढत साधु सु अन्य पढ़ावते, जजूँ पाठक को अति चाव से ॥

ओं ह्रीं अष्टादशसहस्रपदाचारांगज्ञाता उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥१४६॥

द्वितीय सूत्रकृतांग विचारते, स्व पर तत्त्व सु निश्चय लावते ।
पद छत्तीस हजार विशाल हैं, जजूँ पाठक शिष्य दयाल है ॥

ओं ह्रीं षट्त्रिंशत्सहस्रपदसंयुक्तसूत्रकृतांगज्ञाता उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥१४७॥

तृतीय अंग स्थान छः द्रव्य को, पद हजार बियालिस धारतो ।
एक द्वै त्रय भेद बखानता, जजूँ पाठक तत्त्व पिछानता ॥

ओं ह्रीं द्विचत्वारिंशत्पदसंयुक्तस्थानांगज्ञाता उपाध्याय परमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥१४८॥

द्रव्य क्षेत्र समय अर भाव से, साम्य झलकावे विस्तार से ।
लख सहस्र चौसठ पद धारता, जजूँ पाठक तत्त्व विचारता ॥

ओं ह्रीं एकलक्षषष्टि पदन्याससहस्रसमवायांगज्ञाता उपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ॥१४९॥

प्रश्न साठ हजार बखानता, सहस अठविंशति पद धारता ।
द्विलख और विशद परकाशता, जजूँ पाठक ध्यान सम्हारता ॥

ओं ह्रीं द्विलक्षअष्टविंशतिसहस्रपदरंजितव्याख्याप्रज्ञप्त्यंगज्ञाताउपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं ॥१५०॥

धर्मचर्चा प्रश्नोत्तर करे, पाँच लाख सहस छप्पन धरे
पद सु मध्यम ज्ञान बढावता, जजूँ पाठक आतम ध्यावता ॥

ओं ह्रीं पंचलक्षषट्पंचाशत्सहस्रपदसंगतज्ञातृधर्मकथांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं ॥१५१॥

व्रत सुशील क्रिया गुण श्रावका, पद सुलक्षण ग्यारह धारका ।
सहस सप्तति और मिलाइये, जजूँ पाठक ज्ञान बढाइये ॥

ओं ह्रीं एकादशलक्षसप्ततिसहस्रपदशोभितोपासकाध्ययनांगधारकोपाध्याय परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं ॥१५२॥

दश यती उपसर्ग सहन करे, समय तीर्थकर शिवतिय वरे ।
सहस अट्ठाइस लख तेइसा, पद जजूँ पाठक जिन सारिसा ॥

ओं ह्रीं त्रिविंशतिलक्षअष्टविंशतिसहस्रपदशोभितांतःकृतदशांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं ॥१५३॥

दश यती उपसर्ग सहन करें, समय तीर्थ अनुत्तर अवतरें ।
सहस चव चालिस लख बानवे, पद धरें पाठक बहु ज्ञान दे ।।

ओं ह्री द्विनवतिलक्षचतुर्चत्वारिंशत्पदशोभितानुत्तरोपपादिकांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं ।।१५४।।

प्रश्नव्याकरणांग महान ये, सहस्र सोलह लाख तिरानवे ।
पद धरे सुख दुःख विचारता, जजूँ पाठक धर्म प्रचारता ।।

ओं ह्री त्रिनवतिलक्षषोडशसहस्त्रपदशोभितप्रश्नव्याकरणांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।।१५५।।

सहस चुरासि कोटी एक पद, धरत सूत्रविपाक सुज्ञान पद ।
करम-बन्ध उदय सत्वादि कथ, जजूँ पाठक जीते कामरथ ।।

ओं ह्रीं एककोटि चतुरशीतिसहस्त्रपदशोभितविपाकसूत्रांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं ।।१५६।।

कथित षट् द्रव्यों की सारता, एककोटि पद को धारता ।
पूर्व है उत्पाद सु जानकर, जजूँ पाठक निज रुचि ठान कर ।।

ओं ह्री उत्पादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१५७।।

सुनय दुर्नय आदि प्रमाणता, नवति छह कोटी पद धारता ।
पूर्व अग्रायण विस्तार है, जजूँ पाठक भवदधि तार है ।।

ओं ह्रीं अग्रायणीयपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१५८।।

द्रव्य गुण पर्यय बल कथत है, लाख सत्तर पद यह धरत है ।
पूर्व है अनुवाद सु वीर्य का, जजूँ पाठक यति पद धारका ।।

ओं ह्री वीर्यानुवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१५९।।

अस्ति नास्ति प्रवाद सुअंग है, साठ लख मध्यम पद संग है ।
सप्तभंग कथत जिनमार्ग कर, जजूँ पाठक मोह निवारकर ।।

ओं ह्रीं अस्तिनास्तिप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१६०।।

ज्ञान आठ सुभेद प्रकाशता, एक कम कोटी पद धारता ।
सतत ज्ञानप्रवाद विचारता, जजूँ पाठक संशय टारता ।।

ओं ह्री आत्मज्ञानप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१६१।।

कथित सत्य असत्य सुभाव को, कोटि अरुपद धारी पूर्व को ।
पढत सत्यप्रवाद जिनागमा, जजूँ पाठक ज्ञाता आगमा ।।

ओं ह्री सत्यप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१६२।।

सकल जीव स्वरूप विचारता, कोटि पद छब्बीस सुधारता।
पढ़त आत्मप्रवाद महान को, जजूँ पाठक दुर्मति हान को॥

ओं ह्रीं आत्मप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१६३॥

कर्मबंध विधान बखानता, कोटि पद अस्सीलख धारता।
पठत कर्म प्रवाद सुध्यान से, जजूँ पाठक शुद्ध विधान से॥

ओं ह्रीं कर्मप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१६४॥

नय प्रमाण सुन्यास विचारता, लाख पद चौरासी धारता।
पूर्व प्रत्याहार जु नाम है, जजूँ पाठक रमताराम है॥

ओं ह्रीं प्रत्याहारपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१६५॥

मंत्र विद्याविधि को साधता, लक्ष दशकोटी पद धारता।
पूर्व है अनुवाद सुज्ञान का, जजूँ पाठक सन्मति दायका॥

ओं ह्रीं विद्यानुवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१६६॥

पुरुष त्रेशठ आदि महान का, कथत वृत्त सकल कल्याण का।
कोटि छब्बिस पद को धारता, जजूँ पाठक अघ सब टारता॥

ओं ह्रीं कल्याणवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१६७॥

कथत भेद सुवैद्यक शास्त्र का, कोटि तेरह पदका धारका।
पूर्व नाम सुप्राण प्रवाद है, जजूँ पाठक सुर नत पाद है।

ओं ह्रीं प्राणप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१६८॥

कथत छंदकला संगीत को, कोटि नव पद मध्यम रीत को।
पूर्व नाम सु क्रिया विशाल है, जजूँ पाठक दीनदयाल है।

ओं ह्रीं क्रियाविशालपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१६९॥

तीन लोक विधानविचारता, कोटि अर्द्ध सु द्वादश धारता।
पूर्वविन्दु त्रिलोक विशाल है, जजूँ पाठक करत निहाल है।

ओं ह्रीं त्रैलोक्यविन्दुपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१७०॥

दोहा – अंग इकादश पूर्वदश, चार सुज्ञायक साध।
जजूँ गुरुके चरण दो, यजन सु अव्याबाध॥

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठामहोत्सवविधाने मुख्यपूजार्हसप्तमवलयोन्मुद्रित द्वादशांगश्रुतदेवताभ्यस्तदाराधकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यःपूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम वलय में साधुपरमेष्ठी के २८ मूल गुणों की पूजा

(नाराच)

तजे सु राग-द्वेष भाव शुद्धभाव धारते, परम स्वरूप आपका समाधि से विचारते।
करें दया सुप्राणि जंतु चर अचर बचावते, जजों यति महान प्राणिरक्षव्रत निभावते ॥
ओं ह्रीं अहिंसामहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७१॥

असत्य सर्व त्याग वाक् शुद्धता प्रचारते, जिनागमानुकूल तत्त्वसत्य सत्य धारते।
अनेक नय प्रकार से वचन विरोध टारते, जजों यति महान सत्यव्रत सदा सम्हारते ॥
ओं ह्रीं अनृतपरित्यागमहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७२॥

अचौर्यव्रत महान धार शौचभाव भावते, जजों यति सदा सुज्ञान ध्यान मन रमावते।
सुतृप्त हैं महान आत्मजन्य सौख्य पावते, जजों यती सदा सु ज्ञान ध्यान मन रमावते ॥
ओं ह्रीं अचौर्यमहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७३॥

सु ब्रह्मचर्य व्रत महान धार शील पालते, न काष्ठमय कलत्र देव भामिनी विचारते।
मनुष्यणी सु पशुतियां कभी न मन रमावते, जजों यती न स्वप्नमाहि शील को गमावते ॥
ओं ह्रीं ब्रह्मचर्यव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७४॥

न राग द्वेष आदि अंतरंग संग धारते, न क्षेत्र आदि ब्रह्म संग रंग भी सम्हारते।
धरे सु साम्यभाव आप पर पृथक् विचारते, जजों यती ममत्त्व हीन साम्यता प्रचारते ॥
ओं ह्रीं परिग्रहत्यागधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७५॥

सुं चार हाथ भूमि अग्र देख पाँव धारते, न जीवघात होय यत्न सार मन विचारते।
सु चारमास वृष्टि काल एक थल विराजते, जजूँ यती सु सन्मती जो ईर्या सम्हारते ॥
ओं ह्रीं ईर्यासमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७६॥

न क्रोध लोभ हास्य भय कराय साम्य धारते, वचन सुमिष्ट इष्ट मित प्रमाण ही निवारते।
यथार्थ शास्त्र ज्ञान का सुधा सु आत्म पीवते, जजूँ यतीश द्रव्य आठ तत्त्व माहिं जीवते ॥
ओं ह्रीं भाषासमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७७॥

महान दोष छ्यालिसों सु टार ग्रास लेत हैं, पड़े जु अन्तराय तुर्त ग्रास त्याग देत हैं।
मिले जु भोग पुण्य से उसी में सब्र धारते, जजूँ यतीश काम जीत रागद्वेष टारते ॥
ओं ह्रीं एषणासमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७८॥

धरे उठाय वस्तु देख शोध खूब लेत हैं, न जन्तु कोय कष्ट पाय, यह विचार लेत हैं।
अतः सु मोर पिच्छिका सुमार्जिका सुधारते, जजूँ यती दयानिधान, जीव दुःख टारते ॥
ओं ह्रीं आदाननिक्षेपणसमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१७९॥

धरें जु अंग नेत्र नासिकादि मल सु देख के, न होय जतु घात थान शुद्धता सुपेख के।
परम दया विचार सार व्युत्सर्ग साधते, जजूँ यतीश चाह दाह शांति पय बुझावते ॥
ओं ह्री व्युत्सर्गसमितिपालकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८०॥

न उष्ण शीत मृदु कठिन गुरु लघु सपर्शते, न चीकनेऽरु रुक्ष वस्तु से मिलाप पावते।
न राग द्वेष को करें समान भाव धारते, जजूँ यती दमी स्पर्श ज्ञान भाव सारते ॥
ओं ह्रीं स्पर्शनेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८१॥

न मिष्ट तिक्त लौण कटुक, आत्म स्वाद चाहते, करत न रागद्वेष शौच भाव को निवारते।
सु जान के सुभाव पुद्गलादि साम्य धारते, जजूँ यती सदा जु चाह दाह को निवारते ॥
ओं ह्रीं रसनेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८२॥

जगत पदार्थ पुद्गलादि आत्म गुण न त्यागते, सुगन्ध गन्ध दु:खदाय साधु जहा पावते।
न रागद्वेष धार घ्राण का विषय निवारते, जजूँ यतीश एक रूप शांतता प्रचारते ॥
ओं ह्रीं घ्राणेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८३॥

श्वेत रक्त कृष्ण पीत नील रग देखते, स्वरूप आ कुरूप देख वस्तु रूप पेखते।
करें न रागद्वेष साम्यभाव को सम्हारते, जजूँ यती महान चक्षु राग को निवारते ॥
ओं ह्री चक्षुरिन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८४॥

करे थुती बनाय एक गद्य पद्य सारते, कहे असभ्य बात एक क्रूरता प्रसारते।
न रोष तोष धारते पदार्थ को विचारते, जजूँ यती महान कर्ण रागद्वेष टारते ॥
ओं ह्री श्रोत्रेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८५॥

धरे महान शांतता न रागद्वेष भावते, चले नही सुयोग से विराट कष्ट आवते।
तरें समुद्र कर्म को जहाज ध्यान खेवते, यजूँ यती स्वरूप मॉहि बैठ तत्त्व बेवते ॥
ओं ह्रीं सामायिकावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८६॥

करे त्रिकाल वन्दना सुपूज्य सिद्ध साधु को, विचार बार-बार आत्म शुद्ध गुण स्वभाव को।
करें जु नाश कर्म जो कि मोक्षमार्ग रोकते, यजूँ यती महान माथ नाय नाय ढोकते ॥
ओं ह्री वन्दनावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८७॥

करें सुगान गुण अपार तीर्थनाथ देव के, मन पिशाच को विडार स्वात्मसार सेन के।
बनाय शुद्ध भाव माल आत्मकण्ठ डारते, जजूँ यती महान कर्म आठ चूर डारते ॥
ओं ह्रीं स्तवनावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८८॥

करे विचार दोष होय नित्य कार्य साधते, क्षमा कराय सर्व जन्तु जाति कष्ट पावते।
आलोचना सुकृत्य से स्वदोष को मिटावते, जजूँ यती महान ज्ञान अम्बु मे नहावते ॥
ओं ह्री प्रतिक्रमणावश्यकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१८९॥

रखें सुबांध मन कपी महान है जु नटखटा, बनाय सांकलान शास्त्र पाठ मे जुटावता ।
धरें स्वभाव शुद्ध नित्य आत्म को रमावते, जजूँ यती उदय महान ज्ञानसूर्य पावते ॥
ओं ह्रीं स्वाध्यायावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९०॥

तजे ममत्व काय का इसे अनित्य जानते, जु काँच खण्ड मृत्तिका सु पिण्ड सम प्रमाणते ।
खड़े वनी गुफा महा स्व-ध्यान सार धारते, जजूँ यती महान मोह राग द्वेष टारते ॥
ओं ह्रीं कायोत्सर्गावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९१॥

करे शयन सु भूमि में कठोर कंकड़ानि की, कभी नहीं विचारते, पलंग खाट पालकी ।
मुहूर्त एक भी नहीं गमावते कुनींद में, जजूँ यतीश सोचते सु आत्मतत्त्व नींद में ॥
ओं ह्रीं भूशयननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९२॥

करे नही नहान सर्व राग देह का हते, पसेव ग्रीष्म में पड़ें न शीत अम्बु चाहते ।
बनी प्रबल पवित्र और मन्त्र शुद्ध धारते, जजूँ यतीश शुद्ध पाद कर्म मैल टारते ॥
ओं ह्रीं अस्नाननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९३॥

करे नही कबूल छाल वस्त्र खण्ड धोवती, दिगानि वस्त्र धार लाज संग त्याग रोवती ।
बने पवित्र अंग शुद्ध बाल से विचार हैं, जजूँ यतीश काम जीत शील खड्ग धार हैं ॥
ओं ह्रीं सर्वथावस्त्रत्यागनियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९४॥

करे सु केशलोच मुष्टि मुष्टि धैर्य भावते, लखाय जन्म जन्तु का स्व केश ना बढावते ।
ममत्व देह से नहीं न शस्त्र से नुचावते, जजूँ यती स्वतंत्रता विहार चित रमावते ॥
ओं ह्री कृतकेशलोंचननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९५॥

करें न दन्तवन कभी तजा सिंगार अंग का, लहें स्व खान पान एकबार साध्य अंग का ।
तथापि दंत कर्णिका महान ज्योति त्यागती, जजूँ यतीश शुद्धता अशुद्धता निवारती ॥
ओं ह्री दन्तधोवनवर्जननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९६॥

धरें न चाह भोग रोग के समान जानते, शरीर रक्ष काज एक बार भुक्त ठानते ।
सकलदिवससुध्यानशास्त्रपाठ मेंवितावते, जजूँयतीअलाभअन्न लाभसानिभावते ॥
ओं ह्री एकभुक्तनियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९७॥

खड़े रहें सुलेय अन्न देहशक्ति देखते, न होय बल विहार तब मरण समाधि पेखते ।
करे सु आत्म ध्यान भी खड़े खड़े पहाड़ पर, जजूँयती विराजते निजानुभव चटान पर ॥
ओं ह्री आस्थितभोजननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१९८॥

दोहा – अठविंशति गुण धर यती, शील कवच सरदार ।
रत्नत्रय भूषण धरे, टारें कर्मपहार ॥

ओं ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवेमुख्य पूजार्ह अष्टमवलयोन्मुद्रित साधुपरमेष्ठिभ्यस्तन्मूलगुणग्रामेभ्यः पूर्णार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

नवम वलय में ४८ ऋद्धिधारी मुनीश्वरों की पूजा

दोहा – लोकालोक प्रकाश कर, केवलज्ञान विशाल ।
जो धारें तिन चरण को, पूजूँ नमू निज भाल ॥

ओं ह्रीं सकललोकालोकप्रकाशनिरावरणकैवल्यलब्धिधारकेभ्योऽर्घ्य ॥१९९॥

वक्र सरल पर चित्तगत, मनपर्यय जानेय ।
ऋजू विपुलमति भेद धर, पूजूँ साधु सुध्येय ॥

ओं ह्रीं ऋजुमतिविपुलमतिमनःपर्ययधारकेभ्योऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२००॥

देश परम सर्वा अवधि, क्षेत्र काल मर्याद ।
द्रव्य भाव को जानता, धारक पूजूँ साध ॥

ओं ह्रीं अवधिधारकेभ्योऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२०१॥

कोष्ठ धरे बीजानिको, जानत जिम क्रमवार ।
तिम जानत ग्रन्थार्थ को, पूजूँ ऋषिगुण सार ॥

ओं ह्रीं कोष्ठ बुद्धिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२०२॥

ग्रन्थ एक पद ग्रह कही, जानत सब पद भाव ।
बुद्धि पाद अनुसारि धर, सार जजूँ धर भाव ।

ओं ह्रीं पादानुसारीबुद्धिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२०३॥

एक बीज पद जानके, कोटिक पद जानेय ।
बीज बुद्धि धारी मुनी, पूजूँ द्रव्य सुलेय ॥

ओं ह्रीं बीजबुद्धिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२०४॥

चक्री सेना नर पशू नाना शब्द करात ।
पृथक् पृथक् युगपत सुनें, पूजूँ यति भय जात ॥

ओं ह्रीं संभिन्नश्रोत्रऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२०५॥

गिरि सुमेरु रविचन्द्र को, कर पद से छू जात ।
शक्ति महत् धारी यती, पूजूँ पाप नशात ॥

ओं ह्रीं दूरस्पर्शशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२०६॥

दूरक्षेत्र मिष्टान्न फल, स्वाद लेन बल धार ।
न वांछा रस लेनकी, जजूँ साधु गुणधार ॥

ओं ह्रीं दूरास्वादनशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२०७॥

घ्राणेन्द्रिय मर्याद से, अधिक क्षेत्र गन्धान ।
जान सकल जो साधु हैं, पूजूँ ध्यान कृपान ॥

ओं ह्रीं दूरघ्राणविषयग्राहकशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२०८॥

नेत्रेन्द्रिय का विषय बल, जो चक्री जानन्त ।
तातें अधिक सुजानते, जजूँ साधु बलवन्त ॥

ओं ह्रीं दूरावलोकनशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२०९॥

कर्णेन्द्रिय नवयोजना, शब्द सुनत चक्रीश ।
ताते अधिक सुशक्तिधर, पूजूँ चरण मुनीश ॥

ओं ह्रीं दूरश्रवणशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२१०॥

विन अभ्यास मुहूर्त में, पढ जानत दश पूर्व ।
अर्थ भाव सब जानते, पूजूँ यती अपूर्व ॥

ओं ह्रीं दशपूर्वित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२११॥

चोदह पूर्व मुहूर्त में, पढ जानत अविकार ।
भाव अर्थ समझें सभी, पूजूँ साधु चितार ॥

ओं ह्रीं चतुर्दशपूर्वित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२१२॥

विन उपदेश सुज्ञान लहि, संयम विधि चालन्त ।
बुद्धि अमल प्रत्येक धर, पूजूँ साधु महन्त ॥

ओं ह्रीं प्रत्येकबुद्धित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२१३॥

न्याय शास्त्र आगम बहुत, पढे बिना जानन्त ।
परवादी जीते सकल, पूजूँ साधु महन्त ॥

ओं ह्रीं वादित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२१४॥

अग्नि पुष्प तंतू चलें, जंघा श्रेणी चाल ।
चारण ऋद्धि महान धर, पूजूँ साधु विशाल ॥

ओंह्रीजलजंघातंतुपुष्पपत्रबीजश्रेणिवह्न्यादिनिमित्ताश्रयचारणऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं ॥२१५॥

नभ मे उड़कर जात हैं, मेरुआदि शुभ थान ।
तिन वन्दत भविबोधते, जजूँ साधु सुगुण खान ॥

ओं ह्रीं आकाशगमनशक्तिचारणऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२१६॥

अणिमा महिमा आदि बहु, भेद विक्रिया रिद्धि ।
धरें करें न विकारता, जजूँ यती समृद्धि ॥

ओं ह्रीं अणिमामहिमालघिमागरिमाप्राप्तिप्राकाम्यईशत्ववशित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्य ॥२१७॥

अंतर्दधि कामेच्छु बहु, ऋद्धि विक्रिया जान ।
तप प्रभाव उपजे स्वयं, जजूँ साधु अघहान ॥

ओं ह्रीं विक्रियायांअंतर्धानादिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२१८॥

मास पक्ष दो चार दिन, करत रहें उपवास ।
आमरणं तप उग्र धर, जजूँ साधु गुणवास ॥

ओं ह्रीं उग्रतपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२१९॥

घोर कठिन उपवास धर, दीप्तमई तन धार ।
सुरभि श्वास दुर्गन्ध बिन, जजूँ यती भाव पार ॥

ओं ह्रीं दीप्तऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२२०॥

अग्नि माहि जल सम विलय भोजन पय हो जाय ।
कफ मल मूत्र न परिणमें, जजूँ यती उमगाय ॥

ओं ह्रीं तप्ततपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२२१॥

मुक्तावली महान तप, कर्मन नाशन हेतु ।
करत रहें उत्साह से, जजूँ साधु सुख हेतु ॥

ओं ह्री महातपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२२२॥

कास श्वास ज्वर ग्रसित हों, अनशन तप गिरि साध ।
दुष्टन कृत उपसर्ग सह, पूजूँ साधु अवाध ॥

ओं ह्रीं घोरतपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२२३॥

घोर घोर तप करत भी, होत न बल से हीन ।
उत्तर गुण विकसित करें, जजूँ साधु निज लीन ॥

ओं ह्रीं घोरपराक्रमऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२२४॥

दुष्ट स्वप्न दुर्मति सकल, रहित शील गुण धार ।
परमब्रह्म अनुभव करें, जजूँ साधु अविकार ॥

ओं ह्रीं घोरब्रह्मचर्यगुणऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२२५॥

सकल शास्त्र चिन्तन करें, एक मुहूर्त मंझार ।
घटत न रुचि मन वीरता, जजूँ यती भवतार ॥

ओं ह्रीं मनोबलऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥२२६॥

सकल शास्त्र पढ़ जात हैं, एक मुहूर्त मंझार ।
प्रश्नोत्तर कर कण्ठ शुचि, धरत यजूँ हितकार ॥

ओं ह्रीं वचनबलऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२२७॥

मेरुशिखर राखन वली, मास वर्ष उपवास ।
घटे न शक्ति शरीर की, यजूँ साधु सुखवास ॥

ओं ह्रीं कायबलऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२२८॥

अंगुलि आदि सपर्शते, श्वास पवन छू जाग ।
रोग सकल पीड़ा टले, जजूँ साधु सुखपाय ॥

ओं ह्रीं आमर्षौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२२९॥

मुखते उपजे राल जिन, शमन रोग करतार ।
परम तपस्वी वैद्य शुभ, जजूँ साधु अविकार ॥

ओं ह्रीं क्ष्वेलौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२३०॥

तन पसेव सह रज उड़े, रोगीजन छू जाय ।
रोग सकल नाशे सही, जजूँ साधु उमगाय ॥

ओं ह्रीं जलौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२३१॥

नाक आंख कर्णादि मल, तन स्पर्श हो जाय ।
रोगी रोग शमन करें, जजूँ साधु सुख पाय ॥

ओं ह्रीं मलौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२३२॥

मल निपात पर्शी पवन, रजकण अंग लगाय ।
रोग सकल क्षण में हरे, जजूँ साधु अघ जाय ॥

ओं ह्रीं विजौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२३३॥

तन नख केश मलादि बहु, अंग लगी पवनादि ।
हरे मृगी सूलादि बहु, जजूँ साधु भववादि ॥

ओं ह्रीं सर्वौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२३४॥

विष मिश्रित आहार भी, जहं निर्विष हो जाय ।
चरण धरें भू अमृती, जजूँ साधु दुःख जाय ॥

ओं ह्रीं आस्याविषऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२३५॥

पड़त दृष्टि जिनकी जहाँ, सर्वहि विष टल जाय ।
आत्म रमी शुचि संयमी, पूजूँ ध्यान लगाय ॥

ओं ह्रीं दृष्ट्यविषऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२३६॥

मरण होय तत्काल यदि, कहें साधु मर जाव ।
तदपि क्रोध करते नहीं, पूजूँ बल दरशाव ॥

ओं ह्रीं आशीविषऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२३७॥

दृष्टि क्रूर देखें यदी, तुरत काल वश थाय ।
निज पर सुखकारी यती, पूजूँ शक्ति धराय ॥

ओं ह्रीं दृष्टिविषऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२३८॥

नीरस भोजन कर धरे, क्षीर समान बनाय ।
क्षीरस्त्रावी ऋद्धि धरें, जजूँ साधु हरषाय ॥

ओं ह्रीं क्षीरस्त्रावीऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२३९॥

वचन जास पीडा हरें, कटु भोजन मधुराय ।
मधुश्रावी वर ऋद्धि धरें, जजूँ साधु उमगाय ॥

ओं ह्रीं मधुश्राविऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२४०॥

रूक्ष कटुक भोजन धरें, अमृत सम हो जाय ।
अमृत सम वच तृप्ति कर, जजूँ साधु भय जाय ॥

ओं ह्रीं अमृतश्राविऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२४२॥

दत्त साधु भोजन बचे, चक्री कटक जिमाय ।
तदपि क्षीण होवे नहीं, जजूँ साधु हरषाय ॥

ओं ह्रीं अक्षीणमहानसर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२४३॥

सकुडे थानक में यती, करते वृष उपदेश ।
बैठे कोटिक नर पशू, जजूँ साधु परमेश ॥

ओं ह्रीं अक्षीणमहालयऋद्धिधारकेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२४४॥

या प्रमाण ऋद्धीन को, पावत तप परभाव ।
चाह कछू राखत नहीं, जजूँ साधु धर भाव ॥

ओं ह्रीं सकलऋद्धिसंपन्नसर्वमुनिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२४५॥

दोहा - चौदासे त्रेपन मुनी, गणी तीर्थ चौबीस ।
जजूँ द्रव्य आठों लिये, नाय नाय निज शीश ॥

ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थेश्वराग्रिमसभावर्तित्रिपंचाश्चतुर्दशशतगणधरमुनिभ्योऽर्घ्यं ॥२४६॥

अडतालीश हजार अरु उन्निस लक्ष प्रमान ।
तीर्थंकर चौबीस यति, संघ यजूँ धर ध्यान ॥

ओं ह्रीं वर्तमानचतुर्विंशतितीर्थंकरसभा संस्थायि विशंल्लक्षाष्ट चत्वारिंशत्सहस्त्रप्रमितमुनीन्द्रेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

चार कोनों मे स्थापित जिनप्रतिमा मंदिर, शास्त्र व जिनधर्म के अर्घ्य

दोहा - नौसे पच्चिस कोटि लख त्रेपन अठ्ठावीस ।
सहस ऊन कर बावना, बिंब प्रकृत्त नम शीश ।।

ओं ह्रीं नवशतपंचविंशतिकोटि त्रिपंचाशल्लक्षसप्तविंशतिसहस्त्रनवशताष्ट चत्त्वारिशत्प्रमितअकृत्रिमजिनविम्बेभ्योऽर्घ्यं ।।२४७।।

आठ कोड़ लख छप्पने, सत्तानवे हजार ।
चार शतक इक असी जिन, चैत्य प्रकृत्त भज सार ।।

ओं ह्री अष्ट कोटि षट् पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्त्रचतुःशतएकाशीति संख्याकृत्रिमजिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।२४८।।

चोपाई - जय मिथ्यात्व नाग को सिंहा, एक पक्ष जल धरको मेहा ।
नरक कूपते रक्षक जाना, भज जिन आगम तत्त्व खजाना ।।

ओं ह्री स्याद्वादअंकितजिनागमाय अर्घ्यं ।।२४९।।

(भुजंगप्रयात छन्द)

जिनेन्द्रोक्त धर्म दयाभाव रूपा, यही द्वैविधा संयमं है अनूपा ।
यही रत्नत्रय मय क्षमा आदि दशधा, यही स्वानुभव पूजिये द्रव्य अठधा ।।

ओंह्री दशलक्षणोतमादित्रिलक्षणसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूप तथामुनिगृहस्थाचारभेदेन द्विविधं तथा दयारूपत्वेनैकरूपजिनधर्मायऽर्घ्यं ।।२५०।।

दोहा - अर्हत्सिद्धाचार्य गुरु, साधु जिनागम धर्म ।
चैत्य चैत्य ग्रह देव नव, यज मंडल कर शर्म ।।

ओ ह्री सर्वयागमण्डलदेवताभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाल

दोहा - पंचरत्न मंगलशरण, उत्तम जिन चौबीस ।
विद्यमान ऋद्धी गुनी, गुण गाऊँ नम शीश ।।

पद्धडी - अरहंत सिद्ध आचार्य जान, पाठक साधू पाँचों महान ।
जग मे इन सम नहिं और कोय, वन्दत मंगल अघ नशे सोय ।।१।।
हैं जग मे मंगलमय स्वरूप, जग जन ध्यावे लहि सुख अनूप ।
तिहुंलोक मांहि उत्तम सुजान, कर कर्म नाश शिवरूप मान ।।२।।

परमेष्ठीजग मे शरण आन, जो पाते जाते परम थान ।
आगत नागत जिन वर्तमान, चौबीस जिनेश्वर जग प्रधान ॥३॥

जग जन पायो है तीर्थधाम, तिन चरणो में शत शत प्रणाम ।
श्री बीस तीर्थकर विहरमान, सीमधर आदिक सुख निधान ॥४॥

आचार्योपाध्याय साधु जान, तपज्ञान ध्यान करते महान ।
ऋद्धि अनेक तपकर सुपाय, जग जीवन को आनंददाय ॥५॥

ये यागसुमण्डल सुख स्वरूप, वन्दित अर्चित मंगल अनूप ।
मैं शरण गही मन वचन काय, भव भ्रमण मिटे शिव सौख्य पाय ॥६॥

दोहा - पंच परम मंगल करन, उत्तम शरण जिनेश ।
चौबिस विंशति साधुत्रय, पूजो जिन परमेश ॥७॥

ओं ह्रीं सर्व याग मण्डल देवताभ्यः पूर्णार्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥

(अडिल्ल)

सर्व विघ्न क्षय जाय शांति बाढ़े सही, भव्य पुष्टता लहें क्षोभ उपजे नही ।
पञ्चकल्याणक होय सबहि मगलकरा । जासे भवदधि पार लेय शिवधर शिरा ॥
(इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्) ।

गर्भ कल्याणक

गर्भकल्याणक

मंत्र - (१) मातृका मंत्र

(२) सुरेन्द्र मंत्र

मण्डल - चौबीस तीर्थंकर मण्डल

यंत्र - (१) मातृका यंत्र

(२) सुरेन्द्र यंत्र

भक्तियां - (१) सिद्ध भक्ति

(२) तीर्थंकर भक्ति

(३) चारित्र भक्ति

(४) शान्ति भक्ति

सामग्री - (१) षट्कोण शिला

(२) विधिनायक प्रतिमा

(३) पूजा सामग्री

(४) काँच मंजूषा

(५) माता का पलंग एवं बिस्तर

(६) मंच व्यवस्था

(७) भेंट सामग्री

(८) मलमल

(९) वाद्यघोष

(१०) हवन सामग्री

गर्भकल्याणक पूर्वरूप

(सिद्ध भक्ति पढ़कर कार्य आंरभ करें)

पचकल्याणक प्रतिष्ठा की यज्ञ वेदी पर याग मण्डल के समीप परदा लगाकर बंद कर लें उसके बाद सौधर्मइन्द्र की सुधर्मा सभा की रमणीक व्यवस्था कराना चाहिए बीच में एक तखत या उच्च आसन पर दो सिहासन लगाना चाहिए । जिस पर सौधर्मइन्द्र और शची इन्द्रानी को बैठाना चाहिए । सौधर्मेन्द्र की आसन से दोनों ओर समस्त इन्द्र, इन्द्रानियां, यज्ञनायक, कुबेर, देवादि के बिठाने की व्यवस्था करा देना चाहिए । इन्द्र सभा की साज सज्जा बहुत ही सुंदर हो, इस इन्द्र सभा के सामने वेदी पर परदा हो जिसके बाद देवियों के गायन के लिए नृत्य एवं मंगलाचरण आदि की व्यवस्था की जा सके और इससे आगे एक परदा होना चाहिए । परदायें खुलने वाली हो ।

मंगलाचरण

श्री मज्जिनेन्द्र के पंच कल्याणक का यह उत्सव प्यारा,
करता है भव का किनारा ।
श्री गर्भजन्म तप ज्ञान मोक्ष का, देखो उत्सव सारा,
करता है भव का किनारा । टेक ।

इस संसार अनादि वास को, जिनने सतत मिटाया ।
सम्यक्त्व सहित सोलहकारण को, जीवन में है ध्याया ।।
अपने समान ही जगत जीव सब, मार्ग बताया प्यारा,
करता है भव का किनारा.... **श्री मज्जिनेन्द्र ।।१।।**

हम भूल रहे हैं शिवपथ नित ही, आकर हमें बताओ
मोक्ष प्राप्त करने वाला, सद्ज्ञान नाथ दे जाओ,
हम भक्त तुम्हारे शरण में आये, हरो अज्ञान हमारा,
करता है भव का किनारा.... **श्री मज्जिनेन्द्र ।।२।।**

शुभ आशिष यह मिले नाथ, हम भी कब अवसर पायें
संसार वास सब मिटे हमारा, आतम ज्योति जगायें ।
नर से नारायण बनकर के, पावें शिव सुखसारा,
करता है भव का किनारा.... **श्री मज्जिनेन्द्र ।।३।।**

मंगल गीत के पश्चात् देवियां चली जाय परदा बंद करना चाहिए। तदनंतर इन्द्र सभा की परदा खोलना चाहिए।

इन्द्र सभा में तत्त्वचर्चा (दृश्य १)

इन्द्र :- धर्मनिष्ठ सभासदो, चारगति और चौरासी लाखयोनियों में अनादि काल से परिभ्रमण करने वाले प्राणियों को कभी सुख एवं शान्ति प्राप्त नही हुई, क्योंकि इसने अपने यथार्थ कर्त्तव्य का ज्ञान नही कर पाया। जिसके बिना संसार का अन्त नही।

प्रश्न देव (१) इस असार संसार में, कौन कार्य है सार।
आज तलक पाया नही, समय गया बेकार ॥

देवेन्द्र ! संसार परिभ्रमण करने वाले प्राणी का मुख्य कर्त्तव्य क्या है ? जिसे करने के बाद जीवन सफल बनाया जा सके। कृपया कल्याण मार्ग का निर्देशन दीजिए।

(१) उत्तर सौधर्मेन्द्र - बहुत ही ध्यान से आत्मोद्धारक उत्तर सुनो,

इस भव में दुर्लभ महा, सम्यग्दर्शन दर्शन जान,
सुखकारी कल्याणमय, अन्य न कोई मान।

हे तत्त्व जिज्ञासु ! इस असार संसार में सुख और दुख की भूल मे परिभ्रमण करने वाले इस प्राणी ने, आज तक सम्यग्दर्शन प्राप्त नही किया जो अत्यन्त दुर्लभ है। सम्यक्त्व प्राप्त किए बिना, संसार से उद्धार होना असंभव है। अतएव प्रयत्न पूर्वक उसे प्राप्त करना चाहिए।

(२) प्रश्न देव - कृपया नाथ बताइये, क्या है सम्यक्दर्श,
किस विधि से वह प्राप्त हो, सुनकर होवे हर्ष।

देवेन्द्र ! जिस सम्यग्दर्शन को आपने महान कहा है क्या उसे प्राप्त करने का भी कोई मार्ग है। हम सब जिज्ञासु हैं और संसार बन्धन से मुक्ति मार्ग की ओर भावनारत हैं।

(२) सौधर्मेन्द्र - परद्रव्यों से भिन्न जो, लखता आत्म स्वरूप,
कर्मरहित विज्ञानधन, ध्याता निज चिद्रूप।
देवागम निर्ग्रंथगुरु, सप्त तत्त्वश्रद्धान,
आतम निष्ठावान के, सम्यग्दर्शन मान।

सभाषद, सम्यग्दर्शन प्राप्त करने के लिए, परपदार्थो से अत्यन्त भिन्न ज्ञायक स्वभावपूर्ण आत्मा की श्रद्धा होना, एवं जीवादि सात तत्त्व और देव-शास्त्र गुरुकी

यथार्थ श्रद्धा परम आवश्यक है । अतः प्रत्येक जीव को सम्यग्दर्शन प्राप्त कराने वाले कारण मिलाना चाहिए ।

(३) प्रश्न देव - **इसका क्या माहात्म्य है, दीजे हमें बताय,**
दुर्लभ क्यों इसको कहा, मुनियों ने गुण गाय ।

सुरेन्द्र ! सम्यग्दर्शन महान है, यह सिद्धान्त में कहा है, ऐसा क्यों? यदि दुर्लभ ही है तो प्राणी इसे प्राप्त कर सकता या नहीं? कृपया सम्यग्दर्शन की दुर्लभता समझाइये ।

(३) सौधर्मेन्द्र - देव ! स्थिर चित्त से सम्यग्दर्शन का माहात्म्य सुनो;

सम्यग्दर्शन, की महिमा अपार, पाकर के प्राणी होता भवपार ।टेक।
अल्प भ्रमण भव का रह जाता, तब ही भव्य इसे प्रगटाता ।
नारायण बल चक्रपद धारी, सुर अहमिन्द्र होय सुखकारी ।
होता है तीर्थंकर सुखकार, पाकर के प्राणी होता भवपार ।।१।।
भवनत्रिक षट् नरक नपुंसक, थावर नारी पशु विकलान्तक ।
जन्म न पाता कभी दृगधारी, मानव बनकर शिव अधिकारी ।
शाश्वत शिव सुख हो भवपार । पाकर के प्राणी होता भवपार ।।२।।

संसारोद्धारक सम्यग्दर्शन की महानता नहीं समझ पाये, ध्यानपूर्वक सुनिये, सम्यग्दर्शन की महिमा अत्यधिक महान है । इसे प्राप्त करने वाला जीव, अधिक काल तक संसार परिभ्रमण नहीं करता और जब तक वह संसार में है, तो नारायण, बलभद्र, चक्रवर्ती, देव, अहमिन्द्रादिक में जन्म लेता रहता है । सम्यग्दृष्टीजीव भवनत्रिकदेव, नरक गति, नपुंसक, स्थावर, स्त्रीपर्याय एवं तिर्यचगति में जन्म नही लेता । उत्तमोत्तम पदों से दिगम्बर मुद्रा धारण कर, तपस्या करके कर्मो का नाश करके, निर्वाण प्राप्त करता है एवं तीर्थंकर प्रकृति को बांध कर तीर्थंकर बनकर संसार के प्राणीमात्र को कल्याण मार्ग का उपदेश देकर मोक्ष प्राप्त करता है ।

(४) प्रश्न देव - **तीर्थंकर कैसे बनें, दीजे हमें बताय,**
किस विध यह प्रकृती बंधे, नाथ हमें समझाय ।

देवेन्द्र ! तीर्थंकर बनने के लिए क्या कोई विशेष कार्य करना पड़ता है ? क्या संसार के सब प्राणी तीर्थंकर नहीं बन सकते ? कृपया जिज्ञासा का समाधान कीजिए ।

(४) सौधर्मेन्द्र - **सोलह कारण भावना, शुद्ध हृदय से ध्याय,**
केवलि के पद मूल में, इसको प्राप्त कराय ।

सुनो देव ! सम्यग्दर्शन प्राप्त करने के पश्चात्, केवली, श्रुतकेवली के पादमूल में, लोकोपकारी सोलह कारण भावनाओं का चितवन कर, जीव तीर्थंकर प्रकृति का

बंध करता है। लेकिन मानव को ही यह अवसर मिलता है, अन्य किसी जीव को नहीं, अब समझ गए।

(५) प्रश्न देव - **सोलह कारण कौन हैं, पृथक्‌पृथक्‌ समझाय,**
क्या इनका माहात्म्य है, दीजे शीघ्र बताय।

देवेन्द्र! बारह भावनायें तो सुनी हैं, जिनके द्वारा संसार शरीर और भोगों से विरक्तता होती है। किंतु यह सोलह कारण भावनाये कौन कौन हैं? जिनका चितवन तीर्थंकर प्रकृति का बंध कराता है। कृपया इन भावनाओ के नामों से अवगत कराइये।

(५) सौधर्मेन्द्र - **दरश विशुद्धि विनययुत, शील ज्ञान संवेग,**
त्याग तपस्या साधुव्रत, अर्हद्‌भक्ति समेत।१।

श्रुत प्रवचन आचार्य गुरु, छह आवश्यक जान,
धर्म भाव वात्सल्यता, सोलह भावना मान।२।

जग जीवन करुणा धरे, ध्यावे भावना सार,
तीर्थंकर प्रकृति बंधे, काटे करम पहार।३।

देव सुनिये, इन सोलह कारन भावनाओं के चितवन से, आत्मा में विश्व के कल्याण करने वाली भावना के साथ, परम विशुद्धि होती है। उसी से तीर्थंकर प्रकृति का बंध होता है।

(६) प्रश्न देव - देवेन्द्र, आश्चर्य! महान आश्चर्य!! क्या कह रहे हैं आप। दर्शन विशुद्धि आदि भावना से बंध!

यह सुनकर स्वामी मुझे, संशय उपजा आय,
दरश विशुद्धि से बंध हो, मोक्ष कौन विधि पाय।

इन्द्रराज! विचार तो करिये यदि दर्शन विशुद्धि आदि भावनाओ से, बंध मान लिया जाय, तो फिर मोक्ष प्राप्ति कौन साधनों से होगी। अपनी बुद्धि में यह आया नही।

(६) सौधर्मेन्द्र - देव, आश्चर्य की बात नही, मनोयोग से ध्यानपूर्वक सुनना चाहिए था। सुनो -

दरश विशुद्धि बंध का, कारण बनता नांहि,
रागभाव में बंध है, यह भव नाश कराहि।

देव, विशेष ध्यान पूर्वक सुनो - दर्शन विशुद्धि के काल में, जो प्राणि मात्र के कल्याण करने वाला राग आता है, वह बंध में कारण होता है। दर्शन विशुद्धि तो मोक्ष का ही कारण है, बंध का कारण नहीं।

(७) प्रश्न देव - तीर्थकर कितने कहां, कौन समय में होय,
यह सब आप बताइये, सुन सुख उपजे मोय ।

देवेन्द्र ! तीर्थकर कितने, कहां और कब होते हैं कृपया विस्तार पूर्वक, मेरी जिज्ञासा का समाधान कीजिए ?

(७) सौधर्मेन्द्र - भरतैरावत क्षेत्र में, उत अवसर्पिणीकाल,
तृतिय चतुर्थ में होत हैं, चौबीसों नमिभाल ।

देव ! कालचक्र का परिणमन सदैव होता रहता है, जिस काल में प्रत्येक प्राणी, सुख, आयु, शरीर, एवं साधन विशेष पाता है, वह उत्सर्पिणी काल कहलाता है और जिस काल में इनका अभाव पाया जाता है, वह अवसर्पिणी काल कहलाता है। इन मे उत्सर्पिणी का तीसरा एवं अपसर्पिणी का चौथा काल आता है, तब भरत और ऐरावत क्षेत्रों में तीर्थकरों का जन्म हुआ करता है ।

(८) प्रश्न देव - स्वामी जम्बूद्वीप में, अभी कौन सा काल,
कब तीर्थकर दर्श हो, कहिए सुखमय हाल ?

देवराज ! जम्बूद्वीप भरतैरावत क्षेत्रों में, इस समय कौन सा काल चल रहा है। क्या इस समय हम सबको तीर्थकर के दर्शन का लाभ होगा ?

(८) सौधर्मेन्द्र - काल तीसरे पल्यका, रहे आठवां भाग,
कर्मभूमि तब ही लगे, तीर्थकर बड़भाग ।

सुनिये देव ! जब तीसरे काल के समय का, पल्यका आठवां भाग बाकी रहता हे तब ही त्रेषठ शलाका पुरुष होते हैं और कर्मभूमि प्रारंभ होती है । उसी समय तीर्थकरों का अवतरण होता है ।

(इन्द्र का आसन हिलना)

(आश्चर्यमय चितन) अरे ! यह क्या ? अत्यन्त आश्चर्य !! क्या कारण है सिहासन कंपित होने का (कुछक्षण चिंतन अर्थात् अवधिज्ञान का उपयोग) तब इन्द्र प्रसन्न मुद्रा मे सिहासन से उठकर सात पद चलकर नमोऽस्तु वृषभाय, नमोऽस्तु नाभिनंदनाय, नमोऽस्तु ऋषभनाथाय (इन्द्र झुककर नमस्कार करता है)

सोधर्मेन्द्राणी (शची) प्राणेश ! किसे नमस्कार कर रहे हैं आप, ये कौन हैं? कहां हे? अपने अन्तः कक्ष में आसीन हैं क्या? (इधर उधर देखकर)

यहां तो कोई नहीं दिख रहा है। आसन छेड़कर किसे नमस्कार किया है आपने? आश्चर्य है !

सौधर्मेन्द्र :- प्रिये आश्चर्य मत करो, यह तो तुम जानती हो कि मेरा शिर, उस महाशक्ति के सामने ही झुकता है, जिसमें संसार के अनंत प्राणियों को, मोक्षमार्ग बताने की क्षमता होती है। विषय विकारो से उठकर, जिसका अन्तर्मानस अतीन्द्रिय सुखो का भण्डार होता है। ऐसे महापुरुष को मैं हृदय से नमस्कार करता हूँ।

शची :- किंतु नाथ ! यहां तो मुझे कोई महापुरुष नही दिख रहा है।

सौधर्मेन्द्र :- प्राणप्रिये ! यहां अभी तो नहीं है किंतु होने वाले हैं।

वही समय अब आ गया, जम्बू भरतमझार,
आदि तीर्थंकर आयेंगे, सब जीवन सुखकार।

प्रिये जिस प्रकार विदेह क्षेत्रो मे, विद्यमान विंशति भगवान भव्यों के अज्ञान तिमिर को दूर कर रहे हैं, उसी प्रकार भरत एवं ऐरावत क्षेत्र में भी, चतुर्विंशति तीर्थंकर अवतार लेकर, प्राणियों का संसार भ्रमण मिटाने वाला मार्ग दर्शन करेंगे।

शची :- प्रभो ! धन्य है आपको, आपका ज्ञान एव जिनेन्द्र गुणानुराग, आपका हृदय निरन्तर महा मानवों की गवेषणा किया करता है। इसी से तो आप स्वर्गों के इन्द्र माने जाते हैं।

सौधर्मेन्द्र :- देव ! इस सुधर्मासभा में मेरे परममित्र कार्य-कुशल कोषाध्यक्ष (कुबेर) को आमंत्रित किया जाय।

धनपति को बुलवाइये, यह संदेश सुनाय,
नगर अयोध्या की करे, रचना अति सुखदाय।

देव :- जो आज्ञा देवेन्द्र (जाता है)

(कुबेर का आगमन)

उसी समय इन्द्र हाथ जोड़ कर नतमस्तक हो कर भगवान ऋषभदेव की जय तीन बार बोलता है।

(कुबेर का धर्मसभा मे प्रवेश)

माननीय देवेन्द्र, अभी आपने जिस महापुरुष का जयघोष किया है, कृपया उस महामना का परिचय देकर, सुधर्मा सभा के समस्त सदस्यों को निर्विकल्प कीजिये।

सौधर्मेन्द्र :- प्रियदर्शन कोषाध्यक्ष, आज का दिन इस धर्मसभा के लिये परमाल्हाद का है। विश्वधर्म के प्रवर्तक, इस काल के आद्य तीर्थंकर, भगवान ऋषभनाथ का, सर्वार्थसिद्धि नामक कल्पातीत विमान से महामनायुगप्रवर्तक महाराजा नाभिराय के यहां जन्म, आज से पन्द्रह माह बाद होगा। हम सबको प्रभु की सेवा का, सर्वप्रथम स्वर्णावसर प्राप्त होने वाला है।

(सभी धर्मसभा के सदस्य खडे होकर भगवान आदिनाथ की जय, महाराजा नाभिराय की जय, माता मरुदेवी की जय बोलकर अपने स्थान पर बैठ जाते हैं)

कुबेर :- (आल्हादित होकर)

प्रिय देवेन्द्र ! आपके प्रसाद से ही मुझे, समय-समय पर ऐसे स्वर्णावसर प्राप्त हुआ करते हैं, अन्यथा मेरा व्यक्तित्व ही क्या है।

सौधर्मेन्द्र :- धनाधिप, सुधर्मासभा आप जैसा कार्य-कुशल पाकर अतीव भाग्यशालिनी है। आपके सभी कार्य सुव्यवस्थित एवं प्रभावशाली हुआ करते हैं।

कुबेर :- अब मुझे क्या आज्ञा दे रहे हैं देवेन्द्र ! यथा शीघ्र दीजिये। आपकी आज्ञा आत्मोत्कर्ष सम्पादिका है।

सौधर्मेन्द्र :- आपकी कार्य कुशलता एवं नैतिकता पर मुझे पूर्ण विश्वास है, आप शीघ्र जाकर अनादि निधन स्वस्तिक पर, अयोध्या नगरी की स्वर्ग सदृश रचना कीजिए और उस नगर में महाराजा नाभिराय एवं माता मरुदेवी के लिए, सर्वतोभद्र महल का निर्माण कर, सर्वश्रेष्ठ विभूतियों से मण्डित स्थान पर निवास दीजिए और माता मरुदेवी की सेवार्थ, देवियों को नियुक्त कीजिए और आज से ही पन्द्रह महिनों तक, रत्नों की वर्षा राज्यभवन में कीजिए।

सौधर्मेन्द्राणी (शची से) प्रिय शची तुम भी अपना परिकर लेकर, मध्यलोक के अयोध्या नगर में जावो और माता मरुदेवी के सुख साधन का इतना मन मोहक प्रबंध करो, कि जिससे वह प्रसन्न रहें। उन्हें रंच मात्र भी कष्ट न होने पावे।

कुबेर:- धन्यनाथ जीवन मेरा, सुनकर हुआ है आज,
आज्ञा का पालन करूं, जाकर के महाराज।

(तत्काल देवियों को बुलाकर आदेश देता है षट्कुमारी देवियों को बुलाना और कार्यभार समर्पित करना)

श्री जिनमाता सेवनित, करत रहो सुखपाय,
पुण्यलाभ हो जास में, पातक जाय पलाय।

कुबेर रत्नवृष्टि करता है।

इन्द्र शची एवं देवियों सहित आदिनाथ का स्तवन करते हैं।

गायन

आदिनाथ का आवन होगा, नगर अयोध्या पावन होगा,
सब जग दुख के नाश करन का साधन होगा । टेक ।
धनपति सुर मिल नगर बनाया, महलसर्वतोभद्र सुहाया,
चारों दिशा में बने जिन मंदिर, अर्चन वन्दन करते सब नर ।
पुण्य बंध में कारण होगा, नगर अयोध्या ॥१॥
इन्द्र इन्द्राणी हर्ष मनायें, मात-पिता के गुण मिल गायें,
गर्भोत्सव सब करने आये, भांति-भांति वादित्र बजायें ।
राजद्वार पर तोरण होगा - नगर अयोध्या ॥२॥
सारे नगर की शोभा बनायें, रतन नृपति आंगन बरसायें ,
षट्कुमारिका सेवा करनें, मातामन को प्रमुदित करनें ।
हर आंगन सुखपूरित होगा । नगर अयोध्या० ॥३॥

रत्नवृष्टिमंत्र[1]

मासान्षडादौ परतो नवार्हद्गर्भावताराद्धनदो ववर्ष
यां रत्नवृष्टिं जिनतालसौधे कुर्वे तदारोपणपुष्पवृष्टिं
ओं ह्रीं धनाधिपते अर्हत्प्रतिसौधेरत्नवृष्टिं मुंचतु मुंचतु स्वाहा । (कुबेर रत्नवृष्टि करें)

देवियों की कल्पना[2]

स्वयोग्यसेवाकरणान्निजानुभावार्पणाद्गर्भविशोधनाच्च ।
उपास्स्वकल्येन्द्र नियोगतश्च श्रीदेवि विश्वेश्वरमातर त्वम् ॥१॥
ओं महति महसां श्रीदेवि महादेवि ऐं ह्री श्री ह्रैं श्रीं नित्यै स्वं सं क्लीं इवीं स्वां लां झ्रौं तीर्थंकर सवित्रीं स्नापय स्नापय गर्भशुद्धिं कुरुकुरुवं मं हं सं तं पं श्री देव्यैस्वाहा (श्रीदेवी पर पुष्पक्षेपण करें) पूर्वदिशा में खड़ी हो ।

स्वयोग्यसेवाकरणान्निजानुभावार्पणाद्गर्भविशोधनाच्च
उपास्स्वक्येयेन्द्रनियोगतश्च ह्री देवि विश्वेश्वरमातरं त्वम् ॥२॥
ओं महति महसां ह्री देवि महादेवि ऐं ह्री श्रीं ह्रैं ह्रीं नित्यै स्वं सं क्लीं इवी स्वां लां झ्रौं तीर्थंकर सवित्रीं स्नापय स्नापय गर्भशुद्धिं कुरुकुरुवं मं हं सं तं पं ह्री देव्यैस्वाहा (ह्री देवी पर पुष्प क्षेपण करे) "आग्नेय दिशा में खड़ी हो"

---

(१) श्री ने. देव, प्र ति पृष्ठ ३९०
(२) श्री ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ ३९५ से ३९८

स्वयोग्यसेवाकरणान्निजानुभावार्पणाद्गर्भविशोधनाच्च

उपास्सवक्रयेयेन्द्रनियोगतश्च धृत्याख्यदेवि त्वमिहार्हदंबाम् ॥३॥

ओं महति महसां धृति देवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं ह्रैं धृतिं नित्यै रवं सं क्लीं इवीं स्वां लां झ्रौं तीर्थंकर सवित्रीं स्नापय स्नापय गर्भशुद्धिं कुरु कुरु वं मं हं सं तं पं धृति देव्यै स्वाहा (धृति देवी पर पुष्प क्षेपण करें) "दक्षिण दिशा में खड़ी हो"

स्वभोग्यसेवाकरणान्निजानु-भावार्पणाद्गर्भविशोधनाच्च ।

उपास्स्वक्रयेयेन्द्रनियोगतश्च कीर्त्याख्यदेवि त्वमिहार्हदंबाम् ॥४॥

ओं महति महसां कीर्ति देवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं ह्रैं कीर्तिं नित्यै रवं सं क्लीं इवीं स्वां लां झ्रौं तीर्थंकर सवित्रीं स्नापय स्नापय गर्भशुद्धिं कुरु कुरु वं मं हं सं तं पं कीर्ति देव्यै स्वाहा (कीर्ति देवी पर पुष्प क्षेपण करें) नैऋत्य दिशा में खडी हों ।

स्वयोगसेवाकरणान्निजानुभावार्पणाद्गर्भविशोधनाच्च ।

उपास्स्व भक्त्येन्द्रनियोगतश्च बुद्धयाख्यदेवि त्वमिहार्हदंबाम् ॥५॥

ओं महति महसां बुद्धि देवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं ह्रैं बुद्धिं नित्यै रवं सं क्लीं इवीं स्वां लां झ्रौं तीर्थंकर सवित्रीं स्नापय स्नापय गर्भशुद्धिं कुरु कुरु वं मं हं सं तं पं बुद्धि देव्यै स्वाहा (बुद्धि देवी पर पुष्प क्षेपण करें) (पश्चिम दिशा में खड़ी हो)

स्वयोग्यसेवाकरणान्निजानुभावार्पणाद्गर्भविशोधनाच्च ।

उपास्स्व क्येन्द्रनियोगतश्च लक्ष्म्याख्यदेवि त्वमिहार्हदम्बाम् ॥६॥

ओं महति महसां लक्ष्मी देवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं ह्रैं लक्ष्मीं नित्यै रवं सं क्लीं इवीं स्वां लां झ्रौ तीर्थंकर सवित्रीं स्नापय स्नापय गर्भशुद्धिं कुरु कुरु वं मं हं सं तं पं लक्ष्मी देव्यै स्वाहा (लक्ष्मी देवी पर पुष्प क्षेपण करें) (वायव्य दिशा में खडी हो)

स्वयोग्यसेवाकरणान्निजानुभावार्पणाद्गर्भविशोधनाच्च ।

उपास्स्वभक्त्येन्द्र नियोगतश्च शान्त्याख्यदेवि त्वमिहार्हदम्बाम् ॥७॥

ओं महति महसां शान्ति देवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं ह्रैं शान्तिं नित्यै रवं सं क्लीं इवीं स्वां लां झ्रौं तीर्थंकर सवित्रीं स्नापय स्नापय गर्भशुद्धिं कुरु कुरु वं मं हं सं तं पं शान्ति देव्यै स्वाहा । (शान्ति देवी पर पुष्प क्षेपण करें ।) (उत्तर दिशा में खड़ी हो)

स्वयोग्यसेवाकरणान्निजानुभावार्पणाद्गर्भविशोधनाच्च् ।

उपास्स्व भक्त्येन्द्रनियोगतश्च पुष्ट्याख्यदेवि त्वमिहार्हदम्बाम् ॥८॥

ओं महति महसां पुष्टि देवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं ह्रैं पुष्टिं नित्यै रवं सं क्लीं इवीं स्वां लां झ्रौं तीर्थंकर सवित्री स्नापय स्नापय गर्भशुद्धिं कुरु कुरु वं मं हं सं तं पं पुष्टि देव्यै स्वाहा । (पुष्टि देवी पर पुष्प क्षेपण करें) (ईशान में खड़ी हो पुष्प क्षेपण करे)

याः श्रीजिनांबां सुखयन्ति नित्यं सेवाविशेषैर्विविधैर्विनोदैः ।
क्रीडाविशेषैर्बहुभक्तियुक्ता साक्षादिमास्ता वरदिक्कुमार्यः ।
ओं दिक्कुमार्यो जिनमातरमुपेत्य परिचरत परिचरत इति स्वाहा (सब देवियों पर पुष्प क्षेपण करें)

देवियों का स्वरूप और कार्य [1]

१. चतुर्भुजा श्रीर्धृतपुष्पकुंभसच्चामरैर्मातरमुत्सहंती ।
शोभां जगत्यामपुनर्भ विन्द्वीं दध्रे चलत्कंकणचारुहस्तैः ॥
(श्री देवी माता की सेवा के लिए चमर धारण करे)

२. लज्जाकुलोद्भूतनितंबिनीनामाभूषणं तां द्विगुणीचकार ।
मातुः पदांभोरूहसेवनानि छत्रेण चक्रे वरिवस्यमाना ॥
(ह्री देवि माता की सेवा के लिए छत्र धारण करे)

३. धैर्य विदध्रे धृतिनामदेवी सिंहासनस्यार्पणतः सवित्र्याः ।
त्रैलोक्यनाथप्रसवेन लोके मान्यसि संसूचनताकरस्य ॥
(धृतिदेवी माता की सेवा हेतु सिंहासन धारण करे)

४. विस्तारयामास यशोभिवृद्धि कीर्तिः समासादितपुष्यकार्या ।
जयस्तवौ मातुरुदीर्य यष्टिं द्वारोपकण्ठे स्थितिमादधौ सा ॥
(कीर्ति देवी माता का यशगान करती हुई स्तुति करे)

५. स्वयं प्रबुद्धस्य जनुर्विधात्र्या मातुः कुतश्चित्परिबृद्धबुद्धिः ।
नेति स्वयं चास्तिदधार बुद्धिर्बुद्धिप्रकाशं जनतार्थनीयम् ॥
(बुद्धि देवी माता की बुद्धि को प्रकाश करने वाली स्तुति करे)

६. रत्नावली यस्य गृहे पपात त्रिकालमाशार्थिजनस्य पूर्णा ।
यत्रेति लक्ष्मीः स्वयमागतानामभ्यर्थितार्थादधिकं ददेऽर्थम् ॥
(लक्ष्मी देवी त्रिकालरत्नवृष्टि के रत्नों को याचकों को देवे)

७. यस्योद्भवे नारकसंगतानां मुहूर्तमात्रा किलशांतिरासीत् ।
तन्मातुरीशित्वविधा प्रपूर्तौ शान्तिः स्वयं शान्तितति ततान ॥
(शांति देवी जिनेन्द्र की उत्पत्ति समय नरक के जीवों को माता की भावनानुसार शांति विस्तारती है)

८. सर्वत्रजीवाभयदानदत्तेः पुष्टिः स्वयं जीवगणस्य चासीत् ।
चित्रं यतो ऽचेतनरत्नराशिः पुष्टीबभूवात्मगणेन सार्धम् ॥
(पुष्टि देवी प्राणीमात्र को अभयदान देने में नियुक्त होती है)

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ७४० से ७५२

९. रोगाः क्षपायामपि यत्र लोकान्न प्रापुरेवं स्वत एव तुष्टिः ।
परन्तु तुष्टिः स्वनियोगसिद्धये पादद्वयं नैव जहौ जनन्याः ॥
(तुष्टि देवी माता के चरणों में रहकर तुष्ट होती है)

एवं कुमार्योऽ मरनाथशिष्टि विनैव मातुश्चरणार्चनायाम् ।
प्रशक्तिभाजो हि बभूवुरीशप्रभाव एव प्रतिपत्तिहेतुः ॥

ताम्बूलदायीव परांघ्रिसेवासंवाहने कापि सुमज्जनेऽन्या ।
महानसे कापि सुमंगलार्थ गानेऽन्यका नृत्यविधौ नियुक्ता ॥

प्रसाधनानि व्यजनं सुवस्त्रं सौगंध्यमुर्वी प्रतिमार्जनं च ।
आदर्शपात्राब्जविभूषणानि काप्यादधौ मातुरुदग्रभूम्याम् ॥

छन्दः कलागोष्ठिपुराणचर्चा मनोहरा याभिरहर्निशं तु ।
प्रवर्तते यत्र सरस्वती हि स्वयं प्रबुद्धा न जहाति पार्श्वम् ॥
(दिक्कुमारियां माता की सेवार्थ भोगोपभोग सामग्री से सेवा करें)

कुबेरः- श्री जिन माता सेवनित करत रहो सुखदाय,
पुण्यलाभ हो जासमें पातक जाय पलाय ॥

देवियो ! माता मरुदेवी की सेवा एवं गर्भशोधन करते हुए माताश्री को निरंतर प्रसन्न रखना और उनकी आज्ञा का पालन करते रहना, उन्हें किसी प्रकार असुविधा न हो यह ध्यान रखना आवश्यक है । समय-२ पर मैं एवं शची गुप्त रूप से निरीक्षण करेंगे किसी प्रकार लापरवाही न होने पावे ।
(देवियां मस्तक नवा हाथ जोड़कर स्वीकार करती हैं)

इन्द्र की आज्ञा से देवियां माता की विविध प्रकार से सेवा करती हैं । माता को ताम्बूल देना, पाद मर्दन कराना, स्नान कराना, रसोई बनाना, मंगल गान, नृत्य, श्रृंगार करना, पंखा चलाना, वस्त्र समर्पण, सुगंध द्रव्य, बुहारी लगाना, दर्पण दिखाना, आभूषण धारण कराना, छन्द, शास्त्र, कला, चातुर्य, गोष्ठी, पुराण एवं तत्त्व चर्चा आदि कार्यो द्वारा माता की सेवा करती हैं ।

महारानी मरुदेवी का दरबार एवं तत्त्व चर्चा

स्टेज पर पलंग लगा दिया जाय । उस पर माता मरु देवी विश्राम कर रही हों । देवियां तलवार लेकर खड़ी हों । दो देवी चमर ढुला रही हों कोई पंखा हिला रही हो । तभी शेष देवियां स्वागत सामग्री लेकर आती हैं और गीत गाती हैं ।

आई हैं सेवा करने स्वीकार करो मां
त्रैलोक्य की माता हो, भव दुख दूर करो मां
हे मां मरुदेवी हे मां मरुदेवी ।।टेक।।

अवसर मिला है हमको तेरी सेवा के लिए
जीवन सफल हमारा हो कल्याण के लिए ।
दर्शन तुम्हारा पाया कल्याण करो माँ
त्रैलोक्य की माता हो भव दुख दूर करो माँ ।।१।।

दिविलोक के वस्त्राभरण स्वीकार करो माँ
दर्पण इतर भोजन विविध स्वीकार करो माँ
भवसिधु से हमारा उद्धार करो माँ
त्रैलोक्य की माता हो भव दुख दूर करो माँ ।।२।।

हो धन्य माँ तुम धन्य भगवन् गर्भ में आया
संसार के सब जीवों को यह हर्ष दिन आया
प्रमुदित करें गुनगान हम स्वीकार करो माँ
त्रैलोक्य की माता हो भव दुख दूर करो माँ ।।३।।

यह गर्भकल्याणक उत्सव सब मिलके मनाये
आशीष दो माँ अवसर तेरे जैसा हम पायें
कल्याण कर हमारा दुख दूर करो माँ
त्रैलोक्य की माता हो भव दुख दूर करो माँ ।।४।।

देवियां गायन एवं नृत्य करती हुई माता की सेवा करती है। छप्पन कुमारी देवियां क्रम से भेंट समर्पण करती हैं। वस्त्राभरण, दर्पण, इत्र, अंजन, मुकुट, माला, चमर, छत्र, हार, मेंहदी, बिन्दी, रिबन, आदि भोगोपभोग की सामग्री भेंट करती हैं। उसी समय देवियां आरती करती हुई नृत्य करती हैं।

आरती गीत

मै तो आरती उतारूं रे मरु देवी माता की
जय जय मरु देवी माता जय जय मां ।टेक।
तीर्थकर की मात जग कल्याणी हो । जग०
पुत्र जगत विख्यात आतम ज्ञानी हो । आतम०
बार बार नमन करूं चरणन में शीश धरूं
सेवा सम्हारू रे माता तेरी सेवा सम्हारूं रे
मै तो आरती० जय जय मरु देवी० ।१।
घर घर में मगलगान बजत बधाई है । बजत०
गूज रही स्वरतान अरु शहनाई है । अरु०
हाथन में दीप धरें झूम झूम नृत्य करें
चरणा निहारूं रे माता तेरे चरणा निहारूं रे
मैं तो आरती उतारूं रे जय जय मरु देवी० ।२।

परदा गिरता है । पश्चात् माता मरु देवी का राजमहल और देवियां इन्द्राणियां माता मरु देवी के साथ धार्मिक चर्चा प्रश्नोत्तर के रूप में प्रारंभ करती हैं ।
माता पलग पर बैठी है देवियां प्रश्न करती हैं ।

(१) प्रश्न देवी - **मेरे मन में प्रश्न है, हे मरु देवी माय,**
मोक्ष प्राप्ति हो कौन विधि, दीजे हमें बताय ।

सौभाग्यशालनी मातेश्वरी ! संसार में परिभ्रमण करने वाले प्राणी को, भवबंधन से छूटने ओर मुक्ति प्राप्ति के कौन से साधन हैं, कृपया मेरी जिज्ञासा का समाधान कीजिए ।

(१) उत्तर माता मरु देवी - प्रिय देवी ध्यान से सुनना,
मानव की पर्याय में, अल्प होय संसार,
संज्ञी पर्याप्ति कर्मभू, संयम मोक्ष का द्वार ।

देवी सुनो ! मोक्ष प्राप्त कराने वाली यह चर्चा, जिस प्राणी का संसार परिभ्रमण अत्यल्प रह गया हो वह कर्मभूमि का मानव, पर्याप्त, संज्ञी अवस्था प्राप्त कर, दिगम्वर मुद्रा धारण कर, तेरह प्रकार का चारित्र पालन करता हुआ, शुद्धोपयोग के साधन से कर्म संतति नाश करता हुआ, मोक्ष प्राप्त करता है लेकिन स्त्री पर्याय में मोक्ष नही होता ।

(२) प्रश्न सहेली- समझ नही पाई अभी इसका कारण माय,
मोक्ष न तिय पर्याय में दीजे हमें बलाय ।

हे त्रिलोक शिरोमणि मां ! स्त्री की पर्याय से मोक्ष प्राप्त नही होने का कारण विशद रूपेण बतलाने की कृपा कीजिए । •

(२) माता मरु देवी - वज्रवृषभ नाराच को पाय न तिय पर्याय,
दृढ़ता ध्यान न बन सके मोक्ष कौन विधिपाय ।

हे सहेली ! इस आगम कथन की महानता को सुनो, स्त्री पर्याय में वज्रवृषभ नाराच संहनन नहीं होता और उसके बिना ध्यान मे स्थिरता नहीं हो सकती, क्योंकि ध्यान एवं तपश्चरण के बिना मोक्ष मिलना सर्वथा असंभव है। यह योग्यता स्त्री पर्याय मे नहीं हो सकती । (सहेलियां परस्पर चर्चा करती है)
हे सखि इससे भी विशेष बात सुनो –

(३) सहेली- नारी की पर्याय में, सम्यग्दृष्टि जीव,
जनम नही धारन करे, आगम रीत सदीव ।

सखि, स्त्री पर्याय से मोक्ष की बात तो बहुत दूर है। अरे इस पर्याय में तो सम्यग्दृष्टि जीव भी जन्म नही लेता ।

(४) सहेली - सम्यग्दृष्टि जीव का, जनम न इसमें होय,
सत् दर्शन प्रगट करे, अवसर इसको सोय ।

प्रिय सखि नारी पर्याय में सम्यग्दृष्टि जन्म नहीं लेता, किंतु नारी को सम्यग्दर्शन पैदा करने का अधिकार सिद्धान्त कहता है। इसे इतना निंद्य मत कहो ।

(५) सहेली- चारों गति के जीव को, है समान अधिकार,
भेदज्ञान को प्राप्त कर, होवे भवदधिपार ।

विवेकशील सखि । चारों गतियों मे परिभ्रमण करने वाले जीवों को, सम्यग्दर्शन प्राप्त करने का अधिकार आगम कहता है, तो स्त्री पर्याय में सम्यक्त्व प्राप्त होने में क्या बाधा आती है । अर्थात् नहीं ।

(६) सहेली - **क्यों इसको निंदित कहो, आगम कथन बताय,**
पदवी धर को जन्म दे, बनती सबकी माय ।

सरल हृदय सखि ! नारी पर्याय इतनी निंद्य नहीं क्योंकि आगम ने बताया है कि महापुरुषों को जन्म देने वाली यही पर्याय तो है ।

तीर्थंकर बलभद्रहरि, प्रतिहरि श्रेष्ठपुमान,
गौतम जम्बू सुधर्म से, पुष्पमूलवलिमान ।
कुंन्द कुंन्द उमा शांति, विद्यासिंधु महान,
प्रमदा जन पैदा करें, गौरव जग में मान ।

स्त्री पर्याय की महानता भी सुनो सखी तीर्थंकर, नारायण, प्रतिनारायण, बलभद्र, चक्रवर्ती, कामदेव आदि महापुरुषों को जन्म देती है समस्त आचार्यों के साथ वर्तमान मे आध्यात्म योगी युवासंत बालब्रह्मचारी विद्यासागर जी इन्ही स्त्री रत्नों की देन हैं ।

(७) सहेली- सखियों बहुत क्या, तीर्थंकर जैसे पुत्ररत्न को पैदा करने वाली यह महाभाग्यशालनी मां हमारे बीच विराजमान हैं ।

भाग्यशालिनी मात यह, तीर्थंकर प्रगटाय,
मां की शोभा पुत्र से, गौरव जग में पाय ।

तीर्थंकर पुत्र को जन्म देनेवाली माता, त्रिलोक श्रेष्ठ एवं पूज्य होती है, किंतु ऐसा अवसर सबको प्राप्त नहीं होता ।

(८) सहेली - **तीर्थंकर को जन्म दे, जग में माता धन्य,**
रवि को पूर्व दिशा धरे, यह सौभाग्य न अन्य ।

सखी, सूर्य को प्रगट करने वाली पूर्व दिशा ही है, उसी प्रकार तीर्थंकर पुत्र रत्न को उत्पन्न करने का सौभाग्य माता मरुदेवी को प्राप्त हुआ है (बोलो मरुदेवी माता की जय) ३

निद्रा देवी की गोद में, शयन करो सब जाय,
चर्चा अन्त करें यहीं, आलस्य सबको आय ।

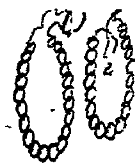
(परदा गिरना सबका यथास्थान जाना माता मरुदेवी अपने शयनकक्ष में लेट जाती हैं तथा रात्रि के अंतिम चतुर्थ पहर में सोलह स्वप्नों का अवलोकन करती हैं ।)



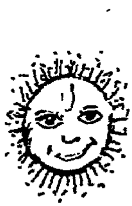


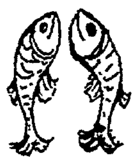








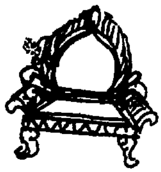




















सोलह स्वप्न

१. ऐरावत हाथी
२. श्वेत बैल
३. सिह
४. हाथी द्वारा लक्ष्मी का अभिषेक
५. कल्पवृक्ष पर लटकती दो पुष्पमाला
६. पूर्ण चन्द्रमा
७. उदित होता सूर्य
८. क्रीड़ा करती हुई मछली
९. कमल पत्र से ढका स्वर्ण कलश
१०. कमल सहित सरोवर
११. लहराता हुआ समुद्र
१२ रत्नजड़ित सिहासन
१३. स्वर्ग से आता स्वर्ग विमान
१४. पृथ्वी से निकलता धर्मेन्द्रभवन
१५. रत्नराशि
१६. निर्धूमअग्नि

षोडशस्वप्नस्थापन [1]

माद्यंत मिन्द्रकरिण शरदभ्र शुभ्र पर्जन्यगर्जन निभोर्जित बृंहित तम्
त्रैलोक्यपूज्यसुतलाभनिवेददक्षं जैनी निशांतसमये जननी निदध्यौ।
स्वप्नदर्शनार्थ स्थापयामि (स्वप्नों पर पुष्प क्षेपण करे)

(रील द्वारा सोलह स्वप्न दिखलाये जाय) प्रातः काल होने को है माता मरुदेवी को जगाने के लिए देवियां मगल गीत प्रारभ करती हैं।)

गीत[2]

अर्हन्त सिद्धाचार्य पाठक, साधुपद वंदन करो,
निर्मल निजातम गुण मनन कर, पाप ताप शमन करो।

अब रात्रितम विघटा सकल, यह प्रात होत सुकाल है,
अब भानु उदयाचल पै आयो, नभ कियो सब लाल है ॥१॥

पंछी मनोहर शब्द बोले, गंध पवन चलात है,
चहुं ओर है भगवान सुमरण, वृक्ष प्रफुल्लित गात है ॥२॥

बाजे बजें रमणीक माता, गीत मगल हो रहे,
तजिये शयन उठि जगत जननी, वीनती हम कर रहे ॥३॥

है समय सामयिक मनोहर, ध्यान आतम कीजिए,
है कर्म नाशन समय सुन्दर, लाभ निज सुख लीजिए ॥४॥

(माता शैय्या से उठकर णमोकार मंत्र का जाप करती हैं। माता रात्रि में देखे गये स्वप्नों की चर्चा देवियों से करती हैं।)

(१) ने. दे., प्र. ति पृष्ठ ३९८ (२) ब्र. शीतल प्रसाद, प्रतिष्ठा सार सग्रह, पृष्ठ ८१

मातागीत (दादरा)[१]

मैंने देखे सखी सोलह स्वप्नें, मैंने देखे ।टेक।
शुकल सुगज ऐरावत देखो ऐरावत देखो,
मेघसमान सुगरज घने । मैंने देखे०

द्वितिय सफेद बैल दृढ़ देखा, बैल दृढ़ देखा
उन्नत कंधा शब्द भनें । मैंने देखे०

तीजे सिंह धवल शुभ देखा, धवल शुभ देखा
कंधालाल सुवर्ण बनें । मैंने देखे०

सिंहासन स्थित लक्ष्मी देखी हो लक्ष्मी देखी
नाग सूंडघट न्हवन सनें । मैंने देखे०

पाचें फूलमाल है गंधित, माल है गंधित
भ्रमर भ्रमण गुण नाथ तनें । मैंने देखे०

छट्टे शशि पूरन तारायुत, पूरन तारायुत
अमृत झरता जगत तनें । मैंने देखे०

सप्तम सूर्य निशातमहारी, निशातमहारी
पूर्वदिशातें उदित ठनें । मैंने देखे०

सुवरण कलश दोय जल पूरण, दोयजल पूरण
कमल पत्रतें ढके सनें । मैंने देखे०

नवमें मीन युगल कर रमते, युगल कर रमते
देखे चंचल भाव जनें । मैंने देखे०

दशवें भ्रमर रमणयुत सरवर, रमणयुत सरवर
कमलगंधयुत लहर ठनें । मैंने देखे०

सागर दर्पणसम निर्मललख, सम निर्मललख
उठत उत्तुंग तरंग घनें । मैंने देखे०

बारम सिंहासन सुवरणमय, हां सुवरणमय
सिंह पीठ मणिजड़ित बनें । मैंने देखे०

तेरम स्वर्ग विमान रतनमय, विमान रतनमय
भेजत सुर अनुराग घनें । मैंने देखे०

(१) ब्र. शीतल प्रसाद, प्रतिष्ठा सार संग्रह, पृष्ठ ८२

चौदम नाग भवन भू उठते, भवन भू उठते
देखा काति अपार बने। मैने देखे०

पन्द्रम रतन राशि द्युति पूरण, राशि द्युति पूरण
दुख दारिद्र संसार हनें। मैने देखे०

सोलम धूमरहित अगनी शिख, हो अगनी शिख
कर्म बंधजलजात घने। मैने देखे०

उच्च वृषभ सुवरणमय आयो, सुवरणमय आयो
मुख प्रवेश करत अपनें। मैंने देखे०

ऐसे स्वप्न कभी नही देखे, कभी नहि देखे
अचरज होत, हृदय अपने। मैंने देखे०

देवियों आज रात्रि के चतुर्थ पहर में, अत्यन्त सुखद एव मनोहर स्वप्न जीवन में प्रथम बार देखने में आये है।

(देविया माता मरुदेवी की जय बोलती है एव आनद विभोर हो गीत गाती हैं)

माता सोलह स्वपने सखि देखे पिछली रैन
जन्मेंगे आदीश्वर स्वामी करने सब जग चैन। टेक।

रतन जड़ित अब कलश मंगावो, क्षीर समुद्र का नीर भरावो।
माणिक मोंतिन चौक पुरावो, माता मरुदेवी नह्वन करावो।
यह गर्भकल्याणक उत्सव, मनावो दिन रैन। जन्मेंगे आदीश्वर स्वामी० ।१।

सखियो सबका भाग्य जगेगा, आदिनाथ का दर्श मिलेगा।
तीन लोक का हित अब होगा, सब दुख हरने का मार्ग मिलेगा।
दर्शन कर भगवन का, सफल होंगे नैन। जन्मेंगे आदीश्वर स्वामी० ।२।

देविया आनंद मग्न हो गीत गाती हुई नृत्य करती है। और माता मरुदेवी की आज्ञानुसार सब अपने कार्य में लग जाती है। माता अपनी दैनिकचर्या को करती हैं। (परदा गिरता है)

गर्भकल्याणक का पूर्वरूप समाप्त!

चौबीस तीर्थंकर विवरण

क्रमांक	तीर्थंकर का नाम	चिह	नक्षत्र	राशि	पिता का नाम
१	ऋषभनाथ (आदिनाथ)	बेल	उत्तराषाढ	धनु	नाभिराय
२	अजितनाथ	हाथी	रोहणी	वृष	जितशत्रु
३	संभवनाथ	घोड़ा	मृगासिर	मिथुन	जितारी
४	अभिनन्दननाथ	बन्दर	पुनर्वसु	मिथुन	स्वयंवर
५	सुमतिनाथ	चकवा	मघा	सिंह	मेघराथ
६	पद्मप्रभ	लालकमल	चित्रा	कन्या	धरण
७	सुपार्श्वनाथ	सांथिया	विशाखा	तुला	सुप्रतिष्ठ
८	चन्द्रप्रभ	चन्द्रमा	अनुराधा	वृश्चिक	महासेन
९	पुष्पदंत (सुविधनाथ)	मगर	मूल	धनु	सुग्रीव
१०	शीतलनाथ	कल्पवृक्ष	पूर्वाषाढ	धनु	दृढ़रथ
११	श्रेयांशनाथ	गेंड़ा	श्रवण	मकर	विष्णु
१२	वासुपूज्य	भैंसा	शतभिषा	कुम्भ	वसुपूज्य
१३	विमलनाथ	सूकर	उत्तराभाद्रपद	मीन	कृतवर्मा
१४	अनन्तनाथ	सेही	रेवती	मीन	सिंहसेन
१५	धर्मनाथ	वज्रदण्ड	पुष्य	कर्क	भानु
१६	शान्तिनाथ	हरिन	भरणी	मेष	विश्वसेन
१७	कुन्थुनाथ	बकरा	कृत्तिका	वृष	सूर्यसेन
१८	अरनाथ	मच्छ (मीन)	रेवती	मीन	सुदर्शन
१९	मल्लिनाथ	कलश	अश्विनी	मेष	कुम्भ
२०	मुनिसुव्रतनाथ	कछुआ	श्रवण	मकर	सुमित्र
२१	नमिनाथ	कमल	अश्विनी	मेष	विजय
२२	नेमिनाथ	शंख	चित्रा	कन्या	समदविजय
२३	पार्श्वनाथ	सर्प	विशाखा	तुला	अश्वसेन
२४	वर्द्धमान (महावीर)	सिंह	उत्तराफाल्गुनी	कन्या	सिद्धार्थ

माता का नाम	गर्भावतरण से पूर्व स्थान	जन्मस्थान	वर्ण	यक्ष	यक्षिणी
मरुदेवी	सर्वार्थसिद्धि	अयोध्या	पीला	गोमुख	चक्रेश्वरी
विजयासेना	वैजयन्त	अयोध्या	पीला	महायक्ष	अजिता
सुसेना	अधोग्रैवेयक	श्रावस्ती	पीला	त्रिमुख	प्रज्ञप्ति
सिद्धार्था	वैजयन्त	अयोध्या	पीला	यक्षेश्वर	वज्रश्रंखला
मगला	अधोग्रैवेयक	अयोध्या	पीला	तुम्बर	खंगवरा
सुसीमा	वैजयन्त	कौसम्बी	लाल	पुष्पयक्ष	मनोनेमा
पृथ्वी	मध्यग्रैवेयक	वाराणसी	नील	मातंग	काली
सुलक्षणा	वैजयन्त	चन्द्रपुरी	श्वेत	श्याम	ज्वालमलिनी
जयरामा	अपराजित	काकन्दी	श्वेत	अजित	महाकाली
सुनन्दा	आरण स्वर्ग	भद्रपुर	पीला	ब्रह्म	मानवी
नन्दा	अच्युत स्वर्ग	सिहपुरी	पीला	ईश्वर	गौरी
जयावती	महाशुक्र स्वर्ग	चम्पापुरी	लाल	कुमार	गांधारी
जयश्यामा	सहस्त्रार स्वर्ग	कम्पिला	पीला	चतुर्मुख	वैरोटी
सर्वयशा	अच्युत स्वर्ग	अयोध्या	पीला	पाताल	अनंतमती
सुव्रता	सर्वार्थसिद्धि	रत्नपुर	पीला	किन्नर	मानसी
ऐरा	सर्वार्थसिद्धि	हस्तिनापुर	पीला	गरुड़	महामानसी
श्रीकन्ता	सर्वार्थसिद्धि	हस्तिनापुर	पीला	गंधर्व	जया
मित्रसेना	अपराजित	हस्तिनापुर	पीला	रवेन्द्र	तारावती
प्रभावती	प्राणत स्वर्ग	मिथला	पीला	कुबेर	अपराजिता
पद्मावती	अपराजित	राजगृह	श्याम	वरुण	बहुरूपिनी
विपला	जयन्त	मिथलापुरी	पीला	भृकुटी	चामुण्डा
शिवादेवी	प्राणत स्वर्ग	शोरीपुर	श्याम	गोमेद	अंबादेवी
वामादेवी	अच्युत स्वर्ग	वनारस	नील	धरणेन्द्र	पद्मावती
त्रिसला	पुष्पोत्तर	कुण्डलपुर	पीला	मातंग	सिद्धायिका

चौबीस तीर्थंकरों की पंचकल्याणक तिथियां

क्रमांक	नामतीर्थंकर	गर्भ कल्याणक	जन्म कल्याणक	तप कल्याणक	ज्ञान कल्याणक	निर्वाण कल्याणक
१	आदिनाथ	आषाढ कृ०२	चैत्र कृ० ९	चैत्र कृ० ९	फा कृ० ११	माघ कृ० १४
२	अजितनाथ	ज्येष्ठ कृ०३०	माघ शु० १०	मा०शु० ९	पौ०शु० ११	चैत्र शु० ५
३	सम्भवनाथ	फा०शु० ८	का०शु० १५	मार्ग०शु०१५	का०कृ० ४	चैत्र शु० ६
४	अभिनंदननाथ	वैशाख शु० ६	मा०शु० १२	मा०शु० १०	पौ०शु० १४	वै० शु० ६
५	सुमतिनाथ	श्रा०शु० २	चैत्रशु०११	वै०शु०९	चै०शु० ११	चैत्र शु०११
६	पद्मप्रभ	माघ कृ० ६	का०कृ० १३	का०कृ०१३	चै०शु०१५	फा०कृ०४
७	सुपार्श्वनाथ	भा०शु०६	ज्ये०शु०१२	ज्ये०शु०१२	फा०कृ०६	फा०कृ०७
८	चन्द्रप्रभ	चैत्रकृ०५	पौ०कृ०११	पौ०कृ०११	फा०कृ०७	फा०कृ०७
९	पुष्पदंत	फा०कृ०९	मार्ग०शु०१	मार्ग०शु०१	का०शु०२	भा०शु०८
१०	शीतलनाथ	चैत्रकृ०८	मा०कृ०१२	माघकृ०१२	पौ०कृ०१४	आश्वि०शु०८
११	श्रेयांसनाथ	ज्ये०कृ०६	फा०कृ०११	फा०कृ०११	मा०कृ०३०	श्रा०शु०१५
१२	वासुपूज्य	आषा०कृ०६	फा०कृ०१४	फा०कृ०१४	माघशु०२	भा०शु०१४
१३	विमलनाथ	ज्येष्ठ कृ०१०	माघशु०४	मा०शु०४	मा०शु०६	आषा०कृ०८
१४	अनंतनाथ	का०कृ०१	ज्ये०कृ०१२	ज्ये०कृ०१२	चैत्रकृ०३०	चैत्रकृ०४
१५	धर्मनाथ	वै०कृ०१३	मा०शु०१३	मा०शु०१३	पौ०शु०१५	ज्ये०शु०४
१६	शांतिनाथ	भा०कृ०७	ज्ये०कृ०१४	ज्ये०कृ०१४	पौ०शु०१०	ज्ये०कृ०१४
१७	कुन्थुनाथ	श्रा०कृ०१०	वै०शु०१	वै०शु०१	चै०शु०३	वै०शु०१
१८	अरनाथ	फा०शु०३	मार्ग०शु०१४	मार्ग०शु०१०	का०शु०१२	चै०कृ०३०
१९	मल्लिनाथ	चै०शु०१	मार्गशु०११	मार्ग०शु०११	पौ०कृ०२	फा०शु०५
२०	मुनिसुव्रतनाथ	श्रा०कृ०२	वै०कृ०१०	वै०कृ०१०	वै०कृ०९	फा०कृ०१२
२१	नमिनाथ	आश्विन०कृ०२	आषा०कृ०१०	आषा०कृ०१०	मार्ग०शु०११	वै०कृ०१४
२२	नेमिनाथ	का०शु०६	श्राव०शु०६	श्रा०शु०६	आश्वि०शु०१	आषा०शु०७
२३	पार्श्वनाथ	वै०कृ०२	पौ०कृ०११	पौ०कृ०११	चैत्रकृ०४	श्रा०शु०७
२४	वर्द्धमान	आ०शु०६	चैत्रशु०१३	मार्ग०कृ०१०	वै०शु०१०	का०कृ०३०

नोट . पंचकल्याणक की तिथियां आचार्यों ने विभिन्न ग्रंथों से अलग-अलग दी है । यह तिथियां कल्याणकों की संस्कृत पूजा से ली है ।

भगवान आदिनाथ के पूर्वभव

१. राजपुत्र जयवर्मा – मुनिमुद्रा धारण करके तप करते हुए सर्प ने डसा, शांतिपूर्वक समाधि के साथ प्राण त्याग दिये ।

२ महावल नरेश – मन्त्रियों से चर्चा स्वयं बुद्ध मंत्री द्वारा संबोधन एवं मुनि मुद्रा गृहण की ।

३. ललितांगदेव – देवांगनाओं के भोग भोगते हुए आत्मदृष्टि एवं स्वयं प्रभा देवी से विरक्ति ।

४ राजा वज्रजंघ – ललितांग देव स्वर्ग से आकर वज्रजंघ हुआ और स्वयंप्रभा श्रीमती हुई वन में मुनिराजों को आहारदान दिया ।

५. उत्तमभोगभूमि में उत्पन्न हुये एवं स्वयंबुद्ध मंत्री मुनि हुए उन्होंने युगल दंपति को संबोधन दिया ।

६. दूसरे स्वर्ग में श्रीधर देव एवं श्रीमती का जीव भी स्वयं प्रभदेव हुआ तत्त्वचर्चा करते हुए समय व्यतीत किया ।

७. श्रीधर देव सुसीमा नगर में राजपुत्र हुआ और स्वयंप्रभदेव केशव पुत्र हुआ मुनिमुद्रा धारण कर सल्लेखना धारण की ।

८. अच्युत स्वर्ग में इन्द्र, केशव प्रतीन्द्र हुए। दोनों ने तत्त्व चर्चा करते हुए आयु पूर्ण की ।

९. वज्रनाभि चक्रवर्ती के वज्रसेन राजपुत्र हुआ और प्रतीन्द्र का जीव गृहपति धनदेव हुआ । वज्रसेन ने तीर्थंकर के पादमूल में १६ कारण भावनाओं का चिंतवन कर तीर्थंकर प्रकृति का बंध किया ।

१० सर्वार्थ सिद्धि में अहमिन्द्र हुआ और तैतीस सागर तक तत्त्व चर्चा में काल व्यतीत किया वहां से चलकर तीर्थंकर आदिनाथ हुए ।

गर्भ क्रिया

(यह क्रिया मध्य रात्रि के समय की जावे)

मंगलाष्टक, दिग्बंधन, रक्षा मंत्र, शांति मंत्र, एवं पंचकल्याणस्तोत्र एवं भक्तियां पढ़कर कार्य आरंभ करें।

(सामग्री-सूची केअनुसार)

आकर शुद्धि विधि

कल्याणपंचकमनुक्रमतः सुरेन्द्राः कृत्या स्वजन्मवहनं सफलं गणतः।
तत्पंचकावतरणे विधृतिक्रियार्था धन्या भवाम इति तान्यनुभावयामः ॥[१]

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं। ओं जय जय जय। नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु। नंद नंद नंद। अनुसाधि अनुसाधि अनुसाधि। पुनीहि पुनीहि पुनीहि। मांगल्यं मांगल्यं मांगल्यं। शान्तिरस्तु।

(पुष्पांजलि क्षेपण करना)

दीपक स्थापन

त्रैलोक्यदीपस्य जिनेश्वरस्य बिम्बं निवेश्यो चितदर्भतल्पे।
तस्याग्रतोऽहं प्रतिबोधयामि द्वौ जाज्वलज्ज्वालयुतौ प्रदीपौ ॥[२]

ओं अज्ञानतिमिरहरं दीपद्वयस्थापनं करोमीति।

श्रीवत्स लांछन स्थापन (टंकियारोपण) [३]

अत्रैव शैलानयन विधाय मुहूर्तवर्ये विधिवेदिशिल्पी
पद्मासनकाय विरार्जनांकं बिम्बं जिनेन्द्रस्य घटेत युक्त्या।

ओं टंकियादूषण निर्नाशनाय सर्वायुधभिन्नदाय वज्रदेहाय जगन्नाथाय ह्म्ल्व्र्यूं विघ्नविनाशकाय झ्रां झ्रीं झ्रूं झ्रौं झ्रः क्षां क्षी क्षूं क्षौं क्षः अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय स्वाहा।

(टांकी हथौड़ी द्वारा श्रीवत्सलाछन बनावें)

विधिनायक स्थापन मंत्र

ओं नमः श्री तीर्थेशाय सर्वविघ्न विनाशनाय नमोऽर्हते स्वाहा।

(षट्कोण शिला पर विधिनायक प्रतिमा स्थापित करे)

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ७१४ (२) श्री. ने. दे., प्र. ति. श्लोक १२ पृष्ठ ४२२ (३) आ. ज. से, प्र. पा. श्लोक ३४३

दिव्ये द्रव्यविशुद्ध एव जठरे यो रत्नविष्टिक्षण –
प्रीतायाः पयसीव पद्ममवसन्मातुः स्वयंशुद्धिमान्
यन्नामापि विशुद्धयेऽस्ति जगतो ध्यायन्ति यं योगिनः
तस्याप्याकरशुद्धिमेष विधिरित्यातन्वतां देवताः । (१)

ओं आकरशुद्धिविधाने पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

(विधिनायक और सब प्रतिमाओं पर पुष्प क्षेपण करें)

प्रतिमास्पर्शन क्रिया (२)

अनन्यसाधारणसद्गुणानां तव स्मरन्नस्तमितस्मरार्तेः ।
जिनेन्द्रसाक्षात्कृतसर्वतत्वं त्वामात्मनः सन्निहितं करोमि ।।

ओउसहाय दिव्यदेहाय सज्जोजादाय महप्पण्णाय अनंत चउठ्ठयाय परमसुहपइठियाय णिम्मलाय स्वयंभवे अजरामर परमपद- पत्ताय मम हिदि अविसण्णिहिदाय स्वाहा ।
(सौधर्मेन्द्र सात बार विधिनायक का स्पर्श करें)

प्रतिमा का स्नपन (३)

शिल्प्यादिसंस्पर्शनदोषशुद्धयै साक्षात्परब्रह्म च सन्निधातुं ।
जिनादिमंत्रेण जिनेन्द्र बिम्बं सप्तैव वारानभि मंत्रयामि ।

ओं अर्हद्भ्योनमः केवललब्धिभ्यो नमः क्षीर स्वादुलब्धिभ्योनमः
मधुरस्वादुलब्धिभ्यो नमः सभिन्नश्रोतृभ्यो नमः पादानुसारिभ्यो नमः
कोष्ठबुद्धिभ्यो नमः बीजबुद्धिभ्यो नमः सर्वावधिभ्यो नमः
परमावधिभ्यो नमः ओं ह्रीं वल्गु- वल्गु निवल्गु निवल्गु ओं वृषभादि वर्धमानान्तेभ्यो वषट् संवौषट् स्वाहा । (प्रतिमा पर पुष्प क्षेपण करें)

ओं क्षीरसमुद्र वारिपूरितेन मणिमय मंगलकलशेन भगवदर्हत्प्रतिकृतिं स्नपयामः ।
सब प्रतिमाओं पर जल से धारा करें फिर इन्द्रानी उबटन लगावें ।

उबटन लगाना

पिष्टैश्च कल्कचूर्णैश्च गंधद्रव्यसमुद्भवैः
जिनांगसंगताज्याद्यैः स्नेहपूतं करोम्यहम् ।

ओं झं वं हः पः क्ष्वीं क्ष्वीं पवित्रतर कल्कचूर्णेन जिनांगोद्वर्तनं करोमीति स्वाहा ।
(इन्द्राणी सब प्रतिमाओं पर उबटन लगावें)

---

(१) पं. आ. ध., प्र. सा. अध्याय ४ श्लोक ३८ (२) श्री. ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ ४५७ श्लोक २२
(३) वही, पृष्ठ ४५८ श्लोक २३

सर्वौषधि अभिषेक[1]

कत्कूलैलाजातिपत्रलवगश्रीखण्डोग्राकुष्ठसिद्धार्थमय्या।
सर्वौषध्या वासितैस्तीर्थतोयै कुम्भोद्‌गीर्णैः स्नापयाम्यह मर्चाम् ॥

ओं णमो अरिहंताणं सव्व शरीरा वच्छिदे महाभूय आय आय आय गिह्ण गिह्ण गिह्ण स्वाहा।

(सर्वौषधि से अभिषेक करें)

जलाभिषेक

ओं ह्रीं श्रीं भगवदर्हत प्रतिकृतिं स्नपयामः।
(विधिनायक एवं सब प्रतिमाओं का जल से अभिषेक करें)

शांतिधारा [2]

ज्वलितसकललोकालोकलोकोत्तरश्रीकलितललितमूर्तेः कीर्तितेन्द्रैर्मुनीन्द्रैः।
जिनवरतव पादौ पान्ततः पातयामः भवदवशमनार्थामर्थतः शान्तिधाराम् ॥

ओं ह्रीं श्रीं भगवदर्हत्प्रतिकृतिं शान्तिधारां गृहीध्वं गृहीध्वं अर्ह नमः भद्रं भवतु जगतां शान्ति- धारां निःपातयामि शान्तिकृद्भ्यः स्वाहा। (शान्तिधारा करें)

मंगलं जिननामानि मंगलं मुनिसेवनं
मंगलं श्रुत मध्येयं मंगलं बिम्बनिर्मितिः। [3]

ओं णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं, ओं जय जय जय, नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु, नंद नंद नंद, अनुसाधि अनुसाधि अनुसाधि, पुनीहि पुनीहि पुनीहि, मांगल्यं मांगल्यं मांगल्यं, शान्तिरस्तु।

यह मंत्र पढ़कर समस्त प्रतिमाओं पर पुष्प क्षेपण करना। पश्चात् गर्भावधारण की क्रिया करें। मंजूषा को शुद्ध जल, सर्वौषधि के जल से शुद्ध कर फिर अष्टगंध को जल में घिसकर मंजूषा में लगावें (पश्चात् मंजूषा में माता की कल्पना करे)

अम्बाः सर्वाः सवित्र्यस्त्रिजगदधिपति प्राप्त पूजाधिकारा,
अत्रागत्या ध्वरोर्व्या यजनकृतमिह स्वादरेण वृणंतु।
अध्वर्यू पत्निका वाघृततनु कुलयोर्दोष हीनां प्रकल्प्य,
वादित्रोद्घोषपूर्व विहित यमदमां भूषयेत्पुण्यमूर्तिम् ॥
कदाचिदेषा न भवेद् गुणाढ्या मंजूषिकां कल्पतु मातृकार्ये,
एवं चतुर्विंशतिजिनप्रसूनां नामानि पुण्यानि कृती वहेत। [4]

---

(1) पं. आ. ध., प्र. सा. अध्याय ४/७५ (२) श्री ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ ४८९
(३) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ७७५ (४) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ७७८, ७७९

चौबीस तीर्थंकरों की माताओं के नाम [1]

मरु देवीं वृषस्याका विजयामजितस्य च ।
सुषेणां संभवेशस्य सिद्धार्थां नन्दनप्रभोः ॥

सुमंगला ह्वां सुमतेः सुसीमां पद्मरोचिषः ।
वसुन्धरां सुपार्श्वस्य लक्ष्मणां चन्द्र लक्ष्मणः ॥

रामां श्री पुष्पदन्तस्य सुनन्दां शीतलार्हतः ।
विष्णुश्रिय श्रेयसश्च वासुपूज्यप्रभोर्जयाम् ॥

सुशर्मलक्ष्मीं विमलार्हतोऽनन्तस्य सुव्रताम् ।
एरिणीं धर्मनाथस्य कमलां शान्त्यधीशनः ॥

सुमित्रां कुंथुनाथस्य अरभर्तुः प्रभावतीम् ।
मल्लेः पद्मावतीं वप्रां सुव्रतस्य मुनीशिनः ॥

विनतां नमिनाथस्य शिवां नेमि जिनेशिनः ।
देवदत्तां च पार्श्वस्य वीरस्य प्रियकारणीम् ॥

ओं मरुदेव्यादि जिनेन्द्र मातरोऽत्र सुप्रतिष्ठिता भवंत्विति स्वाहा ।
(मंजूषा पर पुष्प क्षेपण करें)

गर्भावतरण क्रिया (गर्भशोधन मंत्र)

ओं भूर्भुवः श्रीं अर्हं मातृगर्भाशयं पवित्रं कुरु कुरु झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः स्वाहा ।
(इन्द्राणी या देवियां मंजूषा में केशर का लेपन कर शुद्ध करें ।)
(मंजूषा के अंदर बीच में स्वस्तिक बनावें और चांदी का स्वस्तिक रखें उस पर भद्रासन रखकर मातृका यंत्र और सुरेन्द्र यंत्र की स्थापना करें)

१. मातृका मंत्र (१०८ वार जाप)

ओं नमोऽर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः, क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व, श ष स ह ह्रीं क्लीं क्रौं स्वाहा ।

२. सुरेन्द्र मंत्र (१०८ वार जाप)

ओं ह्रां वषट् णमो अरिहंताणं संवौषट् ओं ब्लूं क्लीं द्रीं द्रां ह्रीं क्रौं आ सः
ओं नमोऽर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः, क ख ग घ ङ,

---

(१) प. आ. ध., प्र. सा. ४/१२ से १७

च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब, भ म, य र ल व श ष स ह ल क्षः क्ली ह्री क्रौं स्वाहा ।

नंद्यावर्त स्वस्तिक स्थापन मंत्र

ओं ह्रीं अर्ह नंद्यावृत वलयाय स्वाहा । (स्वस्तिक स्थापना)

भद्रासन स्थापन मंत्र (१)

भद्रासनं निवेश्यात्र विश्वकर्मसमक्षत:
गर्भावतारकल्याण स्थापया मीदमर्हताम् ।

ओं ह्रीं पूर्वस्यां पीठस्य पुरस्ताद् भद्रासनं निवेशयामि । (भद्रासन स्थापित करें तथा भद्रासन पर मातृका एवं सुरेन्द्र यत्रों को स्थापित करे)

ओं ह्री गर्भक्रिया समये मंजूषायां मातृकायंत्रं सुरेन्द्रयंत्रं च स्थापयामि ।

विधिनायक प्रतिमा पर केशर लगाने का मंत्र

ओं ह्रां ह्री ह्रूं ह्रौं ह्रः भगवदर्हत्प्रतिकृतिं सर्वांगशुद्धिं कुरु कुरु स्वाहा । (विधिनायक और सब प्रतिमाओं को केशर लगावें)

प्रतिमा मंजूषा में स्थापित करने का मंत्र (२)

योगंगाम्बुसुरत्नपुष्पकृत्तभूपस्कारमिद्रासन
द्रवकूपं प्रमदाकुलीकृतजगद्गर्भप्रविशोत्तमे ।

लग्ने वामतिरजयन् रविरिह प्राची परानुग्रह -
ग्राहोद्यद्धृतिवर्द्धतेस्म सुदृशां सोऽयं जिनस्तन्मुदे ।

ओं नमोऽर्हते केवलिने परमयोगिने अनंतविशुद्ध परिणाम परिस्फुरच्छुक्लध्यानाग्नि निर्दग्ध कर्मबीजाय प्राप्तानंतचतुष्टयाय सौम्याय शान्ताय मंगलाय वरदाय अष्टादशदोष- वर्जिताय स्वाहा । (गर्भावतारणार्थ पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्)

गर्भावतारण मंत्र

ओं ह्री सर्वार्थसिद्धि अहमिन्द्रमरुदेव्यां कुक्षौ अवतरणं कुरुकुरु। (यह मंत्र पढकर विधिनायक को मंजूषा में स्थापित करें प्रतिमा को वस्त्र न लगावे किंतु मजूषा को वस्त्र से आच्छादित करे प्रत्येक तीर्थकर के अवतरण का स्थान और माता के नाम उच्चारण करना) (२५०-२५१ पृष्ठ के चार्ट के अनुसार)

---

(१) पं. आ. ध., प्र. सा. ४/९ (२) प. आ. ध., अध्याय ४ श्लोक २८

मंजूषा को वस्त्र से आच्छादित करने का मंत्र [१]

तां मूलप्रतियातनां सुरपतिर्गधात्तवर्ष्यप्रभां
मंजूषानिहितां विधाय विनयान्मातुः प्रसूतिस्थले।
आनीयापि निधापयेत् शुचितरैर्वस्त्रैरहस्येरज -
न्यर्धेचाल्पतनौतु तत्र वसनाच्छन्नां क्रियान्मंत्रवित्।

इतिपठित्वा मंजूषा वस्त्रेण आच्छादयामि।

(मजूषा को कपड़ा से आच्छादित कर प्रसूतिस्थान में (गर्भगृह) स्थापित करें। **यह क्रिया अर्धरात्रि में ही की जाती है)**

(तत्पश्चात् सब प्रतिमाओ को वस्त्र से अलग-अलग आच्छादित करें)

माता मरु देवी को गर्भगृह मे ही विराजमान करें। अर्थात् गर्भगृह में ही शयन कराने की व्यवस्था की जाय।

ओं धनाधिपते राजप्रासादे रत्नवृष्टिं मुञ्चतु मुञ्चतु स्वाहा।

(कुबेर राजमहल मे रत्नवृष्टि करें)

सर्वर्तुजानि फलपुष्पविलेपनानि गंधासनोपकरणानि पवित्रतानि। [२]
सस्थापयत्वधिगृहं जिनमातृकाया भोगोपभोगरुचिराणि मनोहराणि ॥

इदं पठित्वा जिनमातृसौधे वस्त्राभूषणमण्डनसर्वर्तुज-फलपुष्पचन्दनमालादिमनोहरद्रव्याणि स्थापयेत्।

गर्भगृह को अनेक शोभा संयुक्त करें और सुन्दर पदार्थो की स्थापना करें। तत्पश्चात शान्ति भक्तिपढकर कार्य समाप्त करें।

देवियों द्वारा माता की सेवा [३]

ताम्बूलदायिन्यपरांघ्रिसेवा संवाहनेकापि सुमज्जनेऽन्या-
महानसे कापि सुमंगलार्थ गानेऽन्यका नृत्यविधौ नियुक्ता।
प्रसाधनानि व्यंजनं सुवस्त्रं सौगन्ध्यमुर्वीप्रतिमार्जनं च
आदर्शपात्राब्जविभूषणानि काप्यादधौ मातुरु दग्रभूम्याम् ॥
छन्दःकलागोष्ठिपुराणचर्चा मनोहरा याभिरहर्निशंतु।
प्रवर्त्यते यत्र सरस्वतीहि स्वयं प्रबुद्धा न जहाति पार्श्वम् ॥

गर्भ की क्रिया पश्चात् देवियां माता की सेवा अनेक प्रकार से करती हैं और अपना अहोभाग्य मानती हैं। अहर्निशि माता साथ में समय व्यतीत करती क्षणमात्र को भी माता से पृथक् नहीं रहना चाहती। विविध प्रकार तत्त्व चर्चा और मनोरंजन करती है। (इस प्रकार गर्भावतरण क्रिया समाप्त हुई)

---

(१) आ. ज. रो., प्र. पा. श्लोक ७२९ (२) आ. ज. रो., प्र. पा. श्लोक ७२३
(३) आ. ज. रो., प्र. पा. श्लोक ७५० से ७५२

गर्भकल्याणक पूजा (संस्कृत)

स्थापना

(नित्यमह अभिषेक पूजा के पश्चात् गर्भकल्याणक पूजा करे)

विबुधपतिपदेसान्मासषट् पूर्वमेत्य धनदधनसुवृष्टिं कारयामासयेषां
जनकसदनभूम्या दर्शस्वप्नान् यतस्तान् जननि विमलगर्भे संस्थितान् स्थापयामि

ओं ह्रीं गर्भकल्याणक प्राप्त चतुर्विंशति जिनेन्द्रा अत्र अवतर अवतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्

अष्टक

कनककुंभगतैः कमलैः वरैः कदलिगर्भगतेन सुवासितै ।
त्रिदशसुन्दरशोभितगर्भगान् त्रिदशनाथकृतोत्सवकान् यजे ।।

ओं ह्रीं गर्भकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो जलम् निर्वपामीति स्वाहा ।

मलयचन्दनचन्दनसद्भवैर्वरसुवर्णसुवर्णसुवर्णकैः ।
त्रिदशसुन्दरशोभितगर्भगान् त्रिदशनाथकृतोत्सवकान् यजे ।।

ओं ह्रीं गर्भकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यः चन्दनम् निर्वपामीति स्वाहा ।

कमलशालिजकंजसुवासितै· सुकृतसुन्दरकैरिवतण्डुलैः ।
त्रिदशसुन्दरशोभितगर्भगान् त्रिदशनाथकृतोत्सवकान् यजे ।।

ओं ह्रीं गर्भकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो अक्षतम् निर्वपामीति स्वाहा ।

वरसुचंपककेतकिकंजकैः जिनगुणैरिवजातजपुष्पकैः ।
त्रिदशसुन्दरशोभितगर्भगान् त्रिदशनाथकृतोत्सवकान् यजे ।।

ओं ह्री गर्भकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यः पुष्पम् निर्वपामीति स्वाहा ।

रसरसान्वितभोज्यशुभैर्वरैः सुरद्रुमोद्भवकैश्च सुधोपमैः ।
त्रिदशसुन्दरशोभितगर्भगान् त्रिदशनाथकृतोत्सवकान् यजे ।।

ओं ह्रीं गर्भकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा ।

मणिसुवर्तिसुतैलप्रदीपकैः प्रवरबोधनिभैर्हतध्वान्तकैः ।
त्रिदशसुन्दरशोभितगर्भगान् त्रिदशनाथकृतोत्सवकान् यजे ।।

ओं ह्रीं गर्भकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो दीपम् निर्वपामीति स्वाहा ।

अगरचन्दनचन्द्रसुधूपकैः भ्रमरमण्डलमोहितविष्टपैः ।
त्रिदशसुन्दरशोभितगर्भगान् त्रिदशनाथकृतोत्सवकान् यजे ।।

ओं ह्रीं गर्भकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो धूपम् निर्वपामीति स्वाहा ।

क्रमुकलांगलचारणमुख्यकैर्वृषफलैरिव मिष्टवरैर्फलैः।
त्रिदशसुन्दरशोभितगर्भगान् त्रिदशनाथकृतोत्सवकान् यजे ।।·

ओं ह्रीं गर्भकल्याणक प्राप्त चतुर्विंशति जिनेभ्यः फलम् निर्वपामीति स्वाहा ।

कनकपात्रगतैर्विविधार्घकै जननि सिंधुजलाञ्जलिरूपकैः।
त्रिदशसुन्दरशोभितगर्भगान् त्रिदशनाथकृतोत्सवकान् यजे ।।

ओं ह्री गर्भकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रत्येक अर्घ

आषाढकृष्णपक्षे च द्वितीयायां जनोत्तमं ।
मरु देवीगर्भजातं पूजयाम्यष्टकार्चनम् ।।१।।

ओं ह्री आषाढ कृष्णपक्षे द्वितीयायां गर्भकल्याणकप्राप्तवृषभदेवायार्घ्यम् ।

ज्येष्ठमासे त्वमावस्यां रोहिणी सुनक्षत्रके ।
देव्या विजयसेनाया गर्भप्राप्तं जिनं यजे ।।२।।

ओं ह्री ज्येष्ठ कृष्णामावस्यायां गर्भकल्याणकप्राप्तअजितदेवायार्घ्यम् ।

फाल्गुने सितपक्षे च ह्यष्टम्यां संभवं जिनं ।
सुषेणाया महागर्भे यजेऽहं जिनपुंगवम् ।।३।।

ओं ह्री फाल्गुनशुक्लाष्टम्यां गर्भकल्याणकप्राप्तसंभवजिनायार्घ्यम् ।

वैशाखशुक्लपक्षे च तिथिषष्ठयां जिनोत्तमं ।
सिद्धार्था गर्भसंजातं यजेऽहमभिनन्दनम् ।।४।।

ओं ह्री वैशाखशुक्लाषष्ठ्यां गर्भकल्याणकप्राप्तअभिनन्दनदेवायार्घ्यम् ।

श्रावणे चार्जुनेपक्षे सुमति मतिदायकं ।
द्वितीयायां मुदा गर्भे, मंगलायां यजे सदा ।।५।।

ओं ह्री श्रावणशुक्लाद्वितीयायां गर्भकल्याणकप्राप्तसुमतिदेवायार्घ्य ।

माघमासे शुभे कृष्णे, षष्ठ्यां गर्भे यजाम्यहं ।
सुसीमाया महादेव्याः, पद्मप्रभजिनेशिनः ।।६।।

ओं ह्रीं माघकृष्णाषष्ठ्यां गर्भकल्याणकप्राप्तपद्मप्रभायार्घ्यम् ।

पुण्ये भाद्रपदे मासे, शुक्ले षष्ठ्यां सुपार्श्वकं ।
मातृवसुन्धरागर्भे यजामि नृपनायकं ।।७।।

ओं ह्री भाद्रपदशुक्लाषष्ठ्यां गर्भकल्याणकप्राप्तसुपार्श्वदेवायार्घ्यम् ।

चैत्रकृष्णे सुपंचम्या चन्द्राभ चन्द्रलाच्छन ।
जातं सुलक्ष्मणागर्भे, महामि वसुद्रव्यकै ॥८॥

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णापंचम्यां गर्भकल्याणकप्राप्तचन्द्रप्रभायार्घ्यम् ।

नवम्या फाल्गुने कृष्णे, रमादेवि शुभोदरे ।
पुष्पदंतं यजे नित्यमष्टद्रव्यसमुच्चयै ॥९॥

ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णानवम्यां गर्भकल्याणकप्राप्तपुष्पदंतायार्घ्यम् ।

चैत्रमासे सुकृष्णे च, पक्षेऽष्टम्या सुशीतलं ।
यजामि विधिना गर्भे, सुनदा मातृसौख्यद ॥१०॥

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णाष्टम्यां गर्भकल्याणकप्राप्तशीतलायार्घ्यम् ।

ज्येष्ठकृष्णातिथौ षष्ठ्यो, विमलोदरगर्भक ।
यजे महोत्सव कृत्वा, सुरासुरनमस्कृत ॥११॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाषष्ठ्यां गर्भकल्याणकप्राप्तश्रेयांसनाथाऽर्घ्यम् ।

आषाढकृष्णपक्षे च, षष्ठ्या गर्भे जिनेशिन ।
जयावत्युदरे जात, चर्चे नृसुरसेवित ॥१२॥

ओं ह्रीं आषाढ़कृष्णाषष्ठ्यां गर्भकल्याणकप्राप्तवासुपूज्यायार्घ्यम् ।

कपिलायां सुरामाया, सहस्त्रारात्समागत ।
ज्येष्ठकृष्णदशम्या च, यजे गर्भगतं जिन ॥१३॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णदशम्यां गर्भकल्याणकप्राप्तविमलायार्घ्यम् ।

कार्तिके कृष्णपक्षे च, सुदिने प्रतिपत्तिथौ ।
जयश्यामोदरेऽनत, यजेऽहं सुमहोत्सवै ॥१४॥

ओं ह्रीं कार्तिककृष्णाप्रतिपदायां गर्भकल्याणकप्राप्तअनन्तनाथायार्घ्यम् ।

वैशाखस्यासिते पक्षे, त्रयोदश्या सुधर्मक ।
सुप्रभाया सुगर्भे च, यजे श्रीगुणसागरं ॥१५॥

ओं ह्रीं वैशाख कृष्णा त्रयोदश्यां गर्भकल्याणकप्राप्तधर्मनाथायार्घ्यम् ।

भाद्रे सुश्यामपक्षे च, सप्तम्यां सुमहोत्सवै ।
ऐरादेव्युदरे जातं, यजेऽहं गर्भसंगतं ॥१६॥

ओं ह्रीं भाद्रकृष्णासप्तम्यां, गर्भकल्याणकप्राप्तशान्तिनाथायार्घ्यम् ।

श्रावणे कृष्णपक्षे च, दशम्यां कुन्थुनाथक ।
श्रीकातागर्भसभूतं, यजे कृत्वा महोत्सवं ॥१७॥

ओं ह्रीं श्रावणकृष्णादशम्यां गर्भकल्याणकप्राप्तकुंथुनाथायार्घ्यम् ।

फाल्गुने शुक्लपक्षे च, तृतीयायां जिनोत्तमं ।
मित्रसेनोदरे जातं, गर्भ संपूजये मुदा ॥१८॥

ओं ह्रीं फाल्गुनशुक्लातृतीयायां गर्भकल्याणकप्राप्तअरनाथायार्घ्यम् ।

चैत्रमासे शुक्ल पक्षे, प्रतिपद्दिवसे शुभं ।
प्रजावत्युदरे जातं, यजे गर्भोत्सवं मुदा ॥१९॥

ओं ह्रीं चैत्रशुक्लाप्रतिपदायां गर्भकल्याणकप्राप्तमल्लिजिनायार्घ्यम् ।

श्रावणे कृष्णपक्षे च, द्वितीयायां सुराधिपैः ।
कृतं गर्भोत्सवं यस्य, तं यजे मुनिसुव्रतम् ॥२०॥

ओं ह्रीं श्रावणकृष्णाद्वितीयायां, गर्भकल्याणकप्राप्तमुनिसुव्रतनाथायार्घ्यम् ।

आश्विने कृष्णपक्षे च, द्वितीयायां जिनोत्तमम् ।
सुभद्रां गर्भसंभूतं, नमिनाथमहं यजे ॥२१॥

ओं ह्रीं आश्विनकृष्णाद्वितीयायां गर्भकल्याणकप्राप्तनमिनाथायार्घ्यम् ।

कार्तिके शुभ्रपक्षे च, षष्ठ्यां श्री नेमिनाथकं ।
शिवादेव्याः सुतं गर्भे, संयजामि जलादिकैः ॥२२॥

ओं ह्रीं कार्तिकशुक्लाषष्ठयां गर्भकल्याणकप्राप्तनेमिनाथायार्घ्यम् ।

वैशाखकृष्णपक्षे च, द्वितीयायां जिनोत्तमम् ।
यजे वामोदरे पार्श्वं, विश्वानंदकरं परम् ॥२३॥

ओं ह्रीं बैशाखकृष्णद्वितीयायां गर्भकल्याणकप्राप्तपार्श्वनाथायार्घ्यम् ।

आषाढे शुभ्रपक्षे च, षष्ठ्यां तिथौ सुसन्मतिम् ।
त्रिशला देव्युदरजं, संयजे वसुद्रव्यकैः ॥२४॥

ओं ह्रीं आषाढशुक्लाषष्ठ्यां गर्भकल्याणकप्राप्तमहावीरायार्घ्यम् ।

जयमाला

गीर्वाणी सुरप्रेरितामरमहा रूपांगनाभिः सुषट्-
पंचाशत्सु प्रमाणकाभिरमला एषां जनन्या चिरं ।
गर्भशोध्य च वस्त्रमण्डलभरैः स्नानादिभिः सेविता-
स्तेमीगर्भगता जयन्तु सुजिनाः शक्रैश्च सम्मानिताः ॥१॥

भुक्तिस्वेदा. सदा रोगशोकाहरा, जल्लमुक्तांगका निर्मलाशकरा ।
ते जयन्तु जिनाभव्यह्लल्लादिका, शुद्धगर्भस्थिता ये च बोधात्रिका. ॥२॥

क्षीरसिन्ध्वोज्ज्वल शुभ्र देहस्तका॰, गर्भदुःखत्यागया मद्य संस्थानका॰ ।
ते जयन्तु जिनाभव्यह्लल्लादिका., शुद्धगर्भस्थिता ये च बोधात्रिकाः ॥३॥

वज्रसर्वागका वज्रसेव्यासदा, शुद्धसौरप्यगाः सुन्दरा सौख्यका
ते जयन्तु जिनाभव्यह्लल्लादिका, शुद्धगर्भस्थिता ये च बोधात्रिकाः ॥४॥

लक्षणो लक्षणा अष्टयुक्त शते, व्यंजनैर्शोभनैर्नागसंख्यै॰ शतैः
ते जयन्तु जिनाभव्य ह्लल्लादिकाः, शुद्धगर्भस्थिता ये च बोधात्रिकाः ॥५॥

चन्द्रश्रीखण्डितं श्रेष्ठगंधांकिता, पुण्यपात्रा परापूति गंधोज्झिता.
ते जयन्तु जिनाभव्यह्लल्लादिका, शुद्धगर्भस्थिता ये च बोधात्रिकाः ॥६॥

निर्भया नोपमानंतवीर्यापरा, भव्यभावाशुभा विश्वतत्वं कराः
ते जयन्तु जिनाभव्यह्लल्लादिका, शुद्धगर्भस्थिता ये च बोधात्रिकाः ॥७॥

सर्वलोकप्रिया भूततोषंकराः, स्पष्टमिष्टाक्षरा दिव्यभाषोत्तराः
ते जयन्तु जिनाभव्यह्लल्लादिका, शुद्धगर्भस्थिता ये च बोधात्रिकाः ॥८॥

मातृगर्भे महाबोधित्रिभूषिताः, श्रेष्ठसौख्याप्तका दुःखदोषोज्झिताः ।
ते जयन्तु जिनाभव्यह्लल्लादिका, शुद्धगर्भस्थिता ये च बोधात्रिकाः ॥९॥

सर्वदेवार्चिताः पितृपादाब्जका, दिव्यदेवांगणोपास्तसुमातृकाः ।
ते जयन्तु जिनाभव्यह्लल्लादिका, शुद्धगर्भस्थिता ये च बोधात्रिकाः ॥१०॥

रैदवृष्टैर्धनै पूर्णपितृगृहा, देवदेवै कृता गर्भपूजावहाः
ते जयन्तु जिनाभव्यह्लल्लादिका, शुद्धगर्भस्थिता ये च बोधात्रिकाः ॥११॥

भुवनजनशरण्याः पापपंकप्रमुक्ताः विशदगुणगरिष्ठा देवनागेन्द्रवद्या ।
विमलजननिगर्भे बाकुलं सस्थितायै वृषधनप्रतिवद्यां सन्तु सौख्याय तेऽद्य ॥१२॥

ओं ह्रीं गर्भकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनाय अर्घ्यं स्वाहा ।

दशातिशयसम्पन्ना ज्ञानत्रितयविभूषिताः
गर्भगागुणगम्भीराः कुर्वन्तु मगलं शतम् ।

इत्याशीर्वादः (पुष्पाञ्जलिंक्षिपेत्)

गर्भकल्याणक पूजन

दोहा - माता गर्भ विषें चये तीर्थंकर चौबीस ।
जगजीवन कल्याण हित पूजों नावत शीश ।।

ओं ह्री गर्भकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतितीर्थंकराः अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ओं ह्री गर्भकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतितीर्थंकराः अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ओं ह्री गर्भकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतितीर्थंकराः अत्र मम सन्निहतो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

चाली - निजभाजन जल अविकारी, त्रय योग शुद्धता धारी ।
जिनमात गर्भ में आये, हम पूजत मंगल पाये ।।

ओं ह्रीं गर्भकल्याणकप्राप्तवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यो जलम् निर्वपामीति स्वाहा ।

शीतल स्वभाव निज पावें, भव का आताप नशावें ।
जिनमात गर्भ में आये, हम पूजत मंगल पाये ।।

ओं ह्री गर्भकल्याणकप्राप्तवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अक्षय अखण्ड गुणधारी, अक्षत अक्षय सुखकारी ।
जिनमात गर्भ में आये, हम पूजत मंगल पाये ।।

ओं ह्री गर्भकल्याणकप्राप्तवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्योअक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

निज आत्म सुवासित कीना, मद काम अरी दुख छीना ।
जिनमात गर्भ में आये, हम पूजत मंगल पाये ।।

ओं ह्री गर्भकल्याणकप्राप्तवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

आतम अमृत रसलीना, क्षुधरोग निवारण कीना ।
जिनमात गर्भ में आये, हम पूजत मंगल पाये ।।

ओं ह्री गर्भकल्याणक प्राप्तवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मोहान्धकार नशजावे, आतम उद्योत सुहावे ।
जिनमात गर्भ में आये, हम पूजत मंगल पाये ।।

ओं ह्री गर्भकल्याणकप्राप्तवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्माष्टक धूप बनाऊँ, शुक्लध्यानाग्नि जलाऊँ ।
जिनमात गर्भ में आये, हम पूजत मंगल पाये ।।

ओं ह्री गर्भकल्याणकप्राप्तवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

दिविफल ले शिवफल पानें, आतम गुण निर्मल पानें।
जिनमात गर्भ में आये, हम पूजत मंगल पाये ॥
ओं ह्रीं गर्भकल्याणकप्राप्तवृषभादि चतुर्विंशतिजिनेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

समकित वसु गुण सुखकारी, आतम अनर्घ हितधारी।
जिनमात गर्भ में आये, हम पूजत मंगल पाये ॥
ओं ह्रीं गर्भकल्याणकप्राप्तवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

२४ तीर्थंकरों की गर्भकल्याणक तिथि के २४ अर्घ्य

सर्वारथ विमान से चयकर मरुदेवी के गर्भ में आय,
आषाढकृष्ण की द्वितीया प्यारी ता दिन नरनारी हर्षाय।
सोलहकारण भाव पवित्र से तीर्थंकर पद पाय महान,
सकल इन्द्र मिल गर्भकल्याणक उत्सव करते दिव से आन ॥
ओं ह्रीं अषाढकृष्णपक्षे द्वितीयायां मरुदेविगर्भावतरिताय वृषभदेवायार्घ्यम् ॥१॥

विजय विमान से विजयामाता गरभ मांहि आये भगवान्,
जेठ अमावस दिन अवतारे करने को जन जन कल्याण।
सोलहकारण भाव पवित्र से तीर्थंकर पद पाय महान,
सकल इन्द्र मिल गर्भकल्याणक उत्सव करते दिव से आन ॥
ओं ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णाऽमावस्यां विजयसेनागर्भावतरितायाजितदेवायार्घ्यं ॥२॥

मात सुषेणा गरभ पधारे ग्रैवेयक विमान को त्याग,
फाल्गुन सित अष्टम दिन आये संभव पूजें नर बढभाग।
सोलहकारण भाव पवित्र से तीर्थंकर पद पाय महान,
सकल इन्द्र मिल गर्भकल्याणक उत्सव करते दिव से आन ॥
ओं ह्रीं फाल्गुनशुक्लाष्टम्यां सुषेणागर्भावतरिताय संभवदेवायार्घ्यं ॥३॥

अभिनंदन विजय विमान से सिद्धार्था माता उर आन,
अष्टम सित वैशाख मास की पूजत नर सुर श्री भगवान।
सोलहकारण भाव पवित्र से तीर्थंकर पद पाय महान,
सकल इन्द्र मिल गर्भकल्याणक उत्सव करते दिव से आन ॥
ओं ह्रीं वैशाखशुक्लाषष्ट्यां सिद्धार्थागर्भावतरितायाभिनन्दनदेवायार्घ्यं ॥४॥

सुमति सुमति को देने आये मात मंगला गरभ मंझार,
श्रावण शुक्ला द्वितीया के दिन तीन लोक मंगल सुखकार ।
सोलहकारण भाव पवित्र से तीर्थंकर पद पाय महान,
सकल इन्द्र मिल गर्भकल्याणक उत्सव करते दिव से आन ॥

ओं ह्रीं श्रावणशुक्लाद्वितीयायां मंगलागर्भावतरितायसुमतिदेवायार्घ्य ॥५॥

माघ वदी षष्टम सुखकारी मात सुसीमा गरभ में आय,
पद्मप्रभ जिनवर जग स्वामी पूजों भक्तिभाव मन लाय ।
सोलहकारण भाव पवित्र से तीर्थंकर पद पाय महान,
सकल इन्द्र मिल गर्भकल्याणक उत्सव करते दिव से आन ॥

ओं ह्रीं माघकृष्णाषष्ठ्यां सुसीमागर्भावतरितायपद्मप्रभायार्घ्य ॥६॥

श्री सुपारस पारस मणिसम पृथ्वीमहारानी जिनमात,
भादव सित षष्टम दिन आये सुप्रतिष्ठत जिनके तात ।
सोलहकारण भाव पवित्र से तीर्थंकर पद पाय महान,
सकल इन्द्र मिल गर्भकल्याणक उत्सव करते दिव से आन ॥

ओं ह्रीं भाद्रपदशुक्लाषष्ठ्यां पृथ्वीगर्भावतरितायसुपार्श्वदेवयार्घ्य ॥७॥

पांचें असित चैत्र की जानो चन्द्रप्रभ जिन चन्द्र किरण,
महासेन पितु मात लक्ष्मणा गरभ पधारे चन्द्र वदन ।
सोलहकारण भाव पवित्र से तीर्थंकर पद पाय महान,
सकल इन्द्र मिल गर्भकल्याणक उत्सव करते दिव से आन ॥

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णा पंचम्यां सुलक्षणागर्भावतरितायचन्द्रप्रभायार्घ्य ॥८॥

अपराजित विमान से आये माता जिन की रामा जान,
नवमी कृष्णा फाल्गुन महिना गर्भ कल्याणक जिनका मान ।
सोलहकारण भाव पवित्र से तीर्थंकर पद पाय महान,
सकल इन्द्र मिल गर्भकल्याणक उत्सव करते दिव से आन ॥

ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णानवम्यां जय रामादेविगर्भावतरितायपुष्पदन्तायार्घ्य ॥९॥

मात सुनंदा गरभ में आये चैतवदी अष्टम सुखदान,
आरण दिव भूलोक पधारे शीतल प्रभु त्रिभुवन भगवान ।
सोलहकारण भाव पवित्र से तीर्थंकर पद पाय महान,
सकल इन्द्र मिल गर्भकल्याणक उत्सव करते दिव से आन ॥

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णाअष्टम्यां सुनंदागर्भावतरितायशीतलायार्घ्य ॥१०॥

जेठ वदी छठ गरभ में आये नंदा श्री जिनमाता जान,
पिता विष्णु श्रेयांसनाथ गृह रत्न वृष्टि करते सुर आन ।
सोलहकारण भाव पवित्र से तीर्थंकर पद पाय महान,
सकल इन्द्र मिल गर्भकल्याणक उत्सव करते दिव से आन ॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाषष्ठ्यां नन्दाश्रीगर्भावतरितायश्रेयांसनाथायार्घ्य ॥११॥

चम्पापुर नगरी सुखकारी छठ आषाढ अंधियारी जान,
वसुपूज तात सुजया जिनमाता आये वासुपूज्य भगवान । सोलह..

ओं ह्रीं आषाढ़कृष्णाषष्ठ्यां जयावतिगर्भावतरितायवासुपूज्यायार्घ्य ॥१२॥

विमल विमलमति करने आये जेठ वदी दशमी तिथिमान,
जयश्यामा गरभ पधारे नगर कंपिला अति सुख खान । सोलह..

ओं ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णादशम्यां जयश्यामागर्भावतरितायविमलायार्घ्य ॥१३॥

एकम कार्तिक कृष्ण पक्ष की सर्वयशा माँ गर्भ में आय,
सिंहसेन पितु नगर अयोध्या नमूं अनन्तनाथ प्रभु पाय । सोलह..

ओं ह्रीं कार्तिककृष्णाप्रतिपदायांसर्वयशागर्भावतरितायअनन्तायार्घ्यम् ॥१४॥

तेरस वदि वैशाख मास की मात सुव्रता मंगलदाय,
धर्मनाथ जिन धर्म प्रचारें तीन ज्ञानधारी सुखदाय । सोलह..

ओं ह्रीं वैशाखकृष्णात्रयोदश्यां सुव्रतागर्भावतरितायधर्मनाथायार्घ्य ॥१५॥

शांतिनाथ जगशांति करन को सातें वदि भादव को आय,
ऐरा माता जिन की जानों नगर हस्तिनापुर सुखदाय । सोलह..

ओं ह्रीं भाद्रपदकृष्णासप्तम्यां ऐरादेविगर्भावतरितायशान्तिनाथायार्घ्य ॥१६॥

श्रीकांता माता के गरभ में आये कुंथुनाथ भगवान,
कामदेव चक्री तीर्थंकर सावन वदि दशमी तिथिमान । सोलह..

ओं ह्रीं श्रावणकृष्णादशम्यां श्री कान्तागर्भावतरितायकुन्थुनाथायार्घ्य ॥१७॥

नगर हस्तिनापुर अति प्यारा माता मित्रा जगत प्रसिद्ध,
फाल्गुन शुक्ला तृतीया के दिन स्वर्गलोक से आई ऋद्धि । सोलह..

ओं ह्री फाल्गुनशुक्लातृतीयायां मित्रसेनागर्भावतरितायारनाथायार्घ्य ॥१८॥

एकम शुक्ला चैत्रमास की प्रजावति माता उर आय,
मल्लिनाथ पद पूजत जो जन दारिद्र सभी टल जाय । सोलह..

ओं ह्रीं चैत्रशुक्लप्रतिपदायां प्रभावतीगर्भावतरितायमल्लिजिनायार्घ्य ॥१९॥

अपराजित विमान तज आये श्रावण कृष्णा द्वितीया मान,
पद्मामाता गरभ पधारे पितु सुमित्र सुर पूजत आन ।
सोलहकारण भाव पवित्र से तीर्थंकर पद पाय महान,
सकल इन्द्र मिल गर्भकल्याणक उत्सव करते दिव से आन ॥

ओं ह्रीं श्रावणकृष्णाद्वितीयायां पद्मावतिगर्भावतरितायमुनिसुव्रतनाथायार्घ्य ॥२०॥

विपला माता गरभ में आये प्राणत स्वर्ग का छोड़ विमान,
अश्विन कृष्णा द्वितीया के दिन उत्सव किया स्वर्ग सुर आन ।
सोलहकारण भाव पवित्र से तीर्थंकर पद पाय महान,
सकल इन्द्र मिल गर्भकल्याणक उत्सव करते दिव से आन ॥

ओं ह्रीं आश्विनकृष्णापक्षे द्वितीयायां विपुलागर्भावतरितायनमिनाथायार्घ्यं ॥२१॥

नगर द्वारिका नगरी प्यारी, मात शिवा के गर्भ में आय,
कार्तिक मास सुदी छठ मानो नेमिनाथ के पूजों पाय ।
सोलहकारण भाव पवित्र से तीर्थंकर पद पाय महान,
सकल इन्द्र मिल गर्भकल्याणक उत्सव करते दिव से आन ॥

ओं ह्रीं कार्तिकशुक्लाषष्ठ्यां शिवागर्भावतरितायनेमिनाथायार्घ्यं ॥२२॥

वैशाख मास की वदी द्वितीया आये पार्श्वनाथ भगवान,
माता वामा गरभ पधारे नगर बनारस उत्तम थान ।
सोलहकारण भाव पवित्र से तीर्थंकर पद पाय महान,
सकल इन्द्र मिल गर्भकल्याणक उत्सव करते दिव से आन ॥

ओं ह्रीं वैशाखकृष्णाद्वितीयायां वामागर्भावतरितायपार्श्वनाथायार्घ्यं ॥२३॥

सिद्धारथ पितु माता त्रिशला गर्भ में आये श्री वर्धमान,
सुरगण मिलकर हर्ष मनाया मास अषाढ़ सुदी छठ आन ।
सोलहकारण भाव पवित्र से तीर्थंकर पद पाय महान,
सकल इन्द्र मिल गर्भकल्याणक उत्सव करते दिव से आन ॥

ओं ह्रीं आषाढ़शुक्लाषष्ठ्यां त्रिशलादेविगर्भावतरितायमहावीरायार्घ्यं ॥२४॥

जयमाल

दोहा :–त्रिभुवन मात शिरोमणी, शीलादिक गुणखान,
तीर्थंकर सुत अवतरे, महिमा करें बखान॥

जय धन्य धन्य जिन मात जान, इंद्रादि रची नगरी महान
छप्पन कुमारि सेवा करंत, स्वर्गीय विभव लाती तुरंत
धनपति पन्द्रह महिना निधान, रतनन वृष्टि करता महान
नाना प्रकार साधन प्रधान, अहिर्निश सेवा में सावधान
जय सुंदर तन है शीलखान, परमोज्ज्वल गुणधारी महान
आहार करें नित नहिं निहार, आगम में कथन किया विचार
जय पुण्यवान सुख की निधान, जयधर्म ज्ञान अद्‌भुत बखान
जय भेदज्ञान पायो महान, दर्शन करते मिथ्यात्व हान
सोलह स्वप्नें देखे महान, जिनका फल पति से सुना आन।
पितृ–मात पुण्य आया महान, तीर्थंकर सुत रविसम प्रधान
किया गर्भकल्याणक देव आन, उत्सव विशिष्ट आगम बखान
हम सब मिल पूजा करें आज, पावें जासे सम्यक् समाज

गर्भ–कल्याणक होय मम, सकल अमङ्गल दूर।
मुक्ति–मार्ग पावें महा, अष्ट–करम चकचूर॥

ऊँ ह्रीं गर्भ–कल्याणक प्राप्त चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो: अर्घं
निर्वपामीति स्वाहा

हवन विधि [1]

होमार्थकुंडानि पुरोत्तरस्याः क्रियान्नवोत्कृष्टतया च पंच ।
मध्याद्विधेर्वा त्रयमेव तत्र वृत्तं त्रिकोणं चतुरस्रमेव ।।

तन्मेखलानां त्रयमत्र कुंडप्रशस्तमार्यैः पृथुनोन्नतत्वे ।
वाणानुयोगाग्निमितं वितस्तिप्रमावगाहा यतिरूढपक्षात् ।।

वेद्याः कुंडीयभूम्याश्चांतर हस्तद्वयाधिकं ।
तत्र पीठे छत्रचक्रत्रयं पूजार्हमादिशेत् ।।

गार्हपत्याहवीयाख्यौ दाक्षिणाग्निरु दाहृताः ।
आहूतिकार्ये तीर्थेशान्यकेवलिगणोद्धृतः ।।

शांतिकृन्मनुभिस्तत्रान्नाहूतिव्याहृतीष्टिभिः ।
अग्निसंस्कारपूर्व तत्प्रकारस्त्वग्रिमे विधौ ।।

वास्तुप्रमाणेन तु गात्रकेन वामेन शेते खलु नित्यकालः ।
त्रिभिस्तु कालौ परिवर्त्य भूमौ तं वास्तुनागं प्रवदंति संतः ।।

भाद्रादिके वासवदिक्शिरस्को मार्गादिषु स्यात्रिषु याम्यमूर्धा ।
प्रत्यक् शिरस्कः खलु फाल्गुनादौ ज्येष्ठादिमासेषु कुबेरदृश्यः ।।

मूलवेद्याविधानेऽपि मुख्याकालव्यवस्थितिः. ।
यथार्ह शोधयेद् वास्तुशास्त्रं नोल्लंघयेत् कदा ।।

अथवाऽपि मृदा सुवर्णभासा करमानं चतुरंगुलोच्चमल्पे ।
हवने विदधीत कार्यमूलं विबुधः स्थंडिलमेव वेदकोणे ।।

हवनकार्य

हवन स्थल पर टेबिल लगाकर विनायक यंत्र स्थापित करें । मंगलाष्टक, शान्त्यष्टक, दिग्बंधन, रक्षामंत्र, शांतिमंत्र, पात्रों के दाहिने हाथ में रक्षा-सूत्र बांधना, यंत्राभिषेक एव हवन स्थल, पात्र, कुण्ड, सामग्री शुद्धि, मंगलकलश स्थापन, दीप स्थापन हेतु सामग्री की व्यवस्था करना चाहिये ।

विनायक यंत्र एवं नवदेव पूजा कर कार्य प्रारंभ करें । सिद्धभक्ति नवदेव मंत्राहुति पीठकादि मंत्राहुति, शांति मंत्राहुति करके जाप मंत्र की दशांश आहुति करें । पश्चात् पुण्याहवाचन से शांतिधारा, शांतिभक्ति, शांतिपाठ, विसर्जन, यज्ञदीक्षा समापन विधि कर शान्ति हवन का कार्य समाप्त करें ।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. पृष्ठ १०८-१०९

होम कार्य में पुरुष शुद्ध धुली हुई धोती, दुपट्टा, बनियान पहनें, महिलाएं पेटीकोट, साडी, ब्लाउज पहनकर बैठें। अन्य वस्त्रों से हवन नही करे। वस्त्र सूती एव शुद्ध हों एक वस्त्र से जप, पूजा, हवन और दान नही करना चाहिये।

वस्त्रों का उपयोग [१]

शान्तौ श्वेतं जये श्याम भद्रे रक्त भये हरित्।
पीतं घ्यानादिसलाभे पंचवर्ण तु सिद्धये।

जैसा कार्य हो उसी अनुसार वस्त्र, माला एव आसन भी वैसा ही होना चाहिये। जप, पूजा एवं हवन सबमे यह विधि है।

वस्त्रनिषेध [२]

खण्डिते गालिते छिन्ने मलिने चैव वाससि।
दानपूजाजपो होम स्वाध्यायो विफल भवेत्॥

कषायं धूम्रवर्ण च केशजं केशभूषितम्।
छिन्नाग्रं चोपवस्त्र च कुत्सितं ना चरेन्नरः॥

दग्धं जीर्ण च मलिनं मूषकोपहत तथा।
खादित गोमहिष्याद्यैस्तत्त्याज्यं सर्वथा द्विजै॥

वस्त्र विचार [३]

नीले वस्त्रे परमदुःखं हरिते मानभगता श्वेतवस्त्रे यशोवृद्धिर्हारिद्रे हर्षवर्धन।
रक्त वस्त्रं परंश्रेष्ठं प्राणायामविधौ ततः सर्वेषां धर्मसिद्ध्यर्थ दर्भासन तु चोत्तमम्

दर्भ के भेद

कुशाः १ कासा २ यवा ३ दूर्वा ४ उसीराश्च ५ ककुन्दरा ६ गेधूमा ७ ब्रीहयो ८ मुजा ९ दशदर्भा १० प्रकीर्तिता.

जप हवन में आसन [४]

वशासने दरिद्रोस्यात्पाषाणे व्याधिपीडितः धरण्यां दु खसभूतिर्दौभाग्य दारुकासने॥
तृणासने यशोहानिः पल्लवे चित्तविभ्रमः आजिने ज्ञाननाश स्यात्कंवले पापवर्धनम्॥

---

(१) उमास्वामीश्रावकाचार (२) धर्म रसिक ग्रथ (३) धर्म रसिक ग्रथ (४) धर्म रसिक ग्रथ

साकिल्ल

शुद्ध धूप (बाजार की अशुद्ध धूप नहीं लें) तत्काल बनवाना, कपूर, शुद्ध घृत मिलाकर साकिल्ल बनाना चाहिए। धूप में धान्य, मेवा आदि का प्रयोग नहीं करें।

समिधा

आचार्यो ने समिधा में विशेष वृक्षों की लकड़ी लेना बताया है, परन्तु शुद्ध लकड़ी उपलब्ध न होने के कारण तथा लकड़ी में जीव हो जाने के कारण हिंसा हो सकती है। अतः मैं कपूर जलाकर हवन का कार्य कराता हूँ। जिससे जीवों की विराधना न हो।

भूमि शुद्धि मंत्र

ओं ह्री मही पूतां कुरुकुरु हूं फट् स्वाहा। (जल के छींटे लगावें)
ओ ह्री श्री क्षीं भूः स्वाहा। (पुष्प क्षेपण करें)

यंत्र स्थापन मंत्र -

अर्ह मंत्रं नमस्कृत्य रत्नत्रय तपोनिधि,
सिद्ध यंत्रं स्थापयामि सर्वोपद्रव शान्तये।
ओं ह्री श्रीं क्ली ऐं अर्ह जगतां सर्वशान्तिं कुर्वन्तु।
श्रीपीठे विनायक यंत्र स्थापनं करोमि। (यंत्र स्थापित करें)

कुण्ड शुद्धि मंत्र

भो मेघकुमारधरां प्रक्षालय प्रक्षालय अं हं सं तं पं स्वं झं यं क्ष्वीं क्षः भूः फट् स्वाहा।
(जल से भूमि शुद्ध करें)
भो वायुकुमारसर्वविघ्नविनाशनाय महीपूतां कुरुकुरु हूं फट् स्वाहा।
(वस्त्र से कुण्ड साफ करें)
भो अग्निकुमार ह्म्ल्व्र्यूं ज्वलय तेजः पतये अमित तेजसे स्वाहा।
(कपूर जलाकर कुण्ड शुद्ध करें)

कुण्डों पर मौली बंधन

ओं ह्रीं अर्ह पंचवर्णसूत्रेण त्रीन् वारान् वेष्टयामि। (कुण्डों की कटनी पर सूत बांधें)

आसन मंत्र -

ओं ह्रीं हुं हूं णिस्सहि आसने उपविशामि स्वाहा। (आसन पर बैठें)

पात्रशुद्धि मंत्र -

शोधये सर्वपात्राणि पूजार्थानपि वारिभिः ।
समाहितो यथाम्नायं करोमि सकलीक्रियाम् ।।

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते श्रीमते पवित्रतरजलेन पात्रशुद्धिं करोमि ।
(जल द्वारा पात्रों की शुद्धि करे)

मौली बंधन मंत्र -

ओं नमोऽर्हते सर्व रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा ।
(हवन मे बैठनें वाले पात्रों के दाहिने हाथ मे मौली बाधे)

मंगल कलश में जल भरने का मंत्र -

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते पद्म महापद्म तिगिंच्छ केसरिपुण्डरीक महापुण्डरीक गंगा सिन्धुरोहिद्रोहितास्याहरिद्धरिकांतासीतासीतोदानारीनरकान्ता स्वर्णरूप्य कूलारक्तारक्तोदापयोधिशुद्ध जलसुवर्ण घट प्रक्षालित नव रत्नगंधाक्षतपुष्पार्चितमामोदकं पवित्रं कुरुकुरुझं झं झौं झौं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं द्रां द्रां द्रीं द्री हं सः स्वाहा । (कलश मे जल भरे)

मंगलकलश स्थापन -

ओं ह्रीं अर्ह स्वस्ति विधानाय पुण्याहवाचनार्थ मंगलकलश स्थापयामि ।
(ईशान कोण मे मगलकलश स्थापित करे)

दीपक स्थापन मंत्र -

रुचिर दीप्तिकरं शुभदीपक सकललोकसुखाकरमुज्ज्वलम् ।
तिमिरजालहरं प्रकरं सदा किल धरामि सुमंगलकं मुदा ।।

ओं ह्रीं अज्ञानतिमिरहरं दीपकं स्थापयामि (दीपक स्थापित करे)
विनायक यत्र पूजा करके हवन का कार्य प्रारंभ करें ।

सर्वशुद्धिमंत्र -

ओं ह्रीं नमः सर्वज्ञाय सर्वलोकमान्यानन्यधर्म तीर्थकराय श्रीशांतिनाथाय परमपवित्राय पवित्रजलेन होमकुण्ड शुद्धिं, स्थलशुद्धिं पात्रशुद्धिं, समिधाशुद्धिं, साकिल्लशुद्धिं च करोमि ।

(समयाभाव में विनायक यंत्र पूजा के स्थान पर अर्घ चढ़ावे)

ओं ह्रीं अर्ह नमः परमेष्ठिभ्यः स्वाहा (जलम्)

ओं ह्री अर्ह नमः परमात्मेभ्यः स्वाहा (चन्दनम्)

ओं ह्रीं अर्ह नमोऽनादिनिधनेभ्यः स्वाहा (अक्षतम्)

ओं ह्री अर्ह नमो नृसुरासुरपूजितेभ्यः स्वाहा (पुष्पम्)

ओं ह्रीं अर्ह नमोऽनन्तदर्शनेभ्यः स्वाहा (नैवेद्यम्)

ओं ह्री अर्ह नमोऽनन्तज्ञानेभ्यः स्वाहा (दीपम्)

ओं ह्री अर्ह नमोऽनन्त वीर्येभ्यः स्वाहा (धूपम्)

ओं ह्रीं अर्ह नमोऽनन्त सुखेभ्यः स्वाहा (फलम्)

द्रव्याणि सर्वाणि विधाय पात्रे ह्यनर्घ्यमर्घ्य वितरामि भक्त्या ।
भवे भवे भक्तिरु दारभावाद् येषां सुखायास्तु निरन्तराय।।

ओं ह्री विनायक सिद्धयंत्रेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

मध्ये कर्णिकमर्हदार्यमनघं वाह्येऽष्ट पत्रोदरे
सिद्धान् सूरिवराश्च पाठकगुरून्साधूंश्च दिक्पत्रगान् ।
सद्धर्मागमचैत्यचैत्यनिलयान् कोणस्थदिक्पत्रगान्
भक्त्या सर्वसुरासुरेन्द्रमहितान् तानष्टधेष्ट्या यजे ।।

ओं ह्रीं अर्हदादि नवदेवेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्री समिधां (कर्पूरं) स्थापयामि होमद्रव्यमादधामीति च स्वाहा ।

(कुण्ड में कपूर एव सामने पाटा पर साकिल्ल रखें)

अग्निस्थापन मंत्र

जिनेन्द्रवाक्यैरिव सुप्रसन्नैः संशुष्कदर्भाग्रधृताग्निकीलैः
कुण्डस्थिते सेंधनशुद्धवह्नौ संधुक्षणं संप्रति संतनोमि ।

उसहायि जिणे पणमामि सया अमलो वरजोवर कप्पतरु।
सअकामदुहा मम रक्खसया पुर विज्जुणुहीपुर विज्जुणुही ।।

ओं ह्रीं श्री ओं ओं ओं ओं रं रं रं रं अग्निं स्थापयामि ।

(अग्नि प्रज्वलित करें)

श्रीतीर्थनाथ परिनिर्वृत्तिपूतकाले ह्यागत्यवह्निसुरपामुकुटोल्लसद्भिः।
वह्निवृजैर्जिनपदेहमुदारभक्त्या देहुस्तदग्निमहमर्चयितुं दधामि ॥

ओं ह्री चतुरस्त्रे तीर्थकरकुण्डे गार्हपत्याग्नौ कृत संस्काराय तीर्थकर परमदेवाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा । (चौकोर कुण्ड के पास अर्घ चढावें)

गणाधिपानां शिवयातिकालेऽग्नीन्द्रोत्तमागस्फुरदुग्ररोचि ।
संस्थाप्य पूज्यश्च समाह्वनीयो विघ्नौघशान्त्यै विधिना हुताशः ॥

ओं ह्रीं श्री वृत्ते द्वितीयगणधरकुण्डे आहवनीयाग्नौ कृत संस्काराय गणधरदेवाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा । (गोल कुण्ड के पास अर्घ चढावे)

श्रीदक्षिणाग्निः परिकल्पितश्च किरीटदेशात् प्रणिताग्निदेवै
निर्वाणकल्याणकपूतकाले तमर्चये विघ्नविनाशनाय ।

ओं ह्री श्री त्रिकोणे तृतीय सामान्य केवलि कुण्डे दक्षिणाग्नौ कृत संस्काराय सामान्य केवलिनेऽर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा । (त्रिकोण कुण्ड के पास अर्घ चढावें)

नवदेव आहुतियां

**ओं ह्री अर्हद्भ्यः स्वाहा, ओं ह्रीं सिद्धेभ्यः स्वाहा,
ओं ह्रीं सूरिभ्यः स्वाहा, ओं ह्रीं पाठकेभ्यः स्वाहा,
ओं ह्री साधुभ्यः स्वाहा, ओं ह्री जिनधर्मेभ्यः स्वाहा,
ओं ह्री जिनागमेभ्यः स्वाहा, ओं ह्री जिनबिम्बेभ्यः स्वाहा,
ओं ह्री जिनचैत्यालयेभ्यः स्वाहा, ओं ह्री सम्यग्दर्शनाय नमः स्वाहा,
ओं ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय नमः स्वाहा, ओं ह्री सम्यक्चारित्राय नमः स्वाहा ।**

१. पीठिका मंत्र - (३६)

षट् त्रिशत्पीठकामत्रै काम्यमत्रावसानकै
इज्यावशिष्टहव्याद्यै कुर्वे तावतिथाहुति ॥१॥

१. ओं सत्यजाताय नमः स्वाहा
२. ओं अर्हज्जाताय नमः स्वाहा
३. ओं परमजाताय नमः स्वाहा
४. ओं अनुपमजाताय नमः स्वाहा
५. ओं स्वप्रधानाय नमः स्वाहा
६. ओं अचलाय नमः स्वाहा
७. ओं अक्षयाय नमः स्वाहा
८. ओं अव्यावाधाय नमः स्वाहा
९. ओं अनंतज्ञानाय नमः स्वाहा
१०. ओं अनंतदर्शनाय नमः स्वाहा
११. ओ अनंतवीर्याय नमः स्वाहा
१२. ओं अनंतसुखाय नमः स्वाहा

१३. ओं नीरजसे नमः स्वाहा
१४. ओं निर्मलाय नमः स्वाहा
१५. ओं अच्छेद्याय नमः स्वाहा
१६. ओं अभेद्याय नमः स्वाहा
१७. ओं अजराय नमः स्वाहा
१८. ओं अमराय नमः स्वाहा
१९. ओं अप्रमेयाय नमः स्वाहा
२० ओं अगर्भवासाय नमः स्वाहा
२१. ओं अक्षोभ्याय नमः स्वाहा
२२. ओं अविलीनाय नमः स्वाहा
२३. ओं परमघनाय नमः स्वाहा
२४. ओं परमकाष्ठयोगरूपाय नमः स्वाहा
२५. ओं लोकाग्रवासिने नमो नमः स्वाहा
२६. ओं परमसिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा
२७. ओं अनादिपरमसिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा
२८. ओं अर्हत्सिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा
२९. ओं केवलिसिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा
३०. ओं अन्तःकृत् सिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा
३१. ओं परम्परसिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा
३२. ओंअनादिपरंपरसिद्धेभ्योनमो-नमः स्वाहा
३३. ओं परमार्थसिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा
३४. ओं अनाद्यनुपमसिद्धेभ्यो नमो-नमः स्वाहा
३५. ओं त्रिकालसिद्धेभ्यो नमो नमः स्वाहा
३६. ओं सम्यग्दृष्टे - सम्यग्दृष्टे, आसन्नभव्य आसन्नभव्य, निर्वाणपूजार्ह निर्वाणपूजार्ह अग्नीन्द्राय स्वाहा ।

(आशीष मन्त्र) सेवा फलं षट्परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु, समाधिमरणं भवतु । (हवन के सब पात्रो पर पुष्प क्षेपण करें)

२ जातिमंत्राः (८)

अष्टभिर्जातिमंत्रैश्च तावद् व्यग्रमानसः ।
इज्यावशिष्टहव्याद्यैः कुर्वेतावतिथाहुतिः ॥२॥

१. ओं सत्यजन्मनः शरणं प्रपद्ये स्वाहा ।
२. ओं अर्हज्जन्मनः शरणं प्रपद्ये स्वाहा ।
३. ओं अर्हन्मातुः शरणं प्रपद्ये स्वाहा ।
४. ओं अर्हत्सुतस्य शरणं प्रपद्ये स्वाहा ।
५. ओं अनादिगमनस्य शरणं प्रपद्ये स्वाहा ।
६. ओं अनुपमजन्मनः शरणं प्रपद्ये स्वाहा ।

नोट : आहुति मंत्र आचार्य जिनसेन कृत महापुराण, श्री नेमिचन्द्र देव कृत प्रतिष्ठातिलक एवं आचार्य जयसेन कृत प्रतिष्ठापाठ से लिए गये हैं ।

७. ओं रत्नत्रयस्य शरणं प्रपद्ये स्वाहा।

८. ओं सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे, ज्ञानमूर्ते ज्ञानमूर्ते, सरस्वति सरस्वति स्वाहा।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु, समाधिमरणं भवतु।

(प्रतिष्ठाचार्य हवन करने वालों पर पुष्प क्षेपण करे)

३. निस्तारक मंत्राः (११)

निस्तारकादिभिर्मन्त्रैः एकादशमितैरयम्।
इज्यावशिष्टहव्याद्यैः कुर्वेतावतिथाहुतिः ॥३॥

१. ओं सत्यजाताय स्वाहा
२. ओं अर्हज्जाताय स्वाहा
३. ओं षट्कर्मणे स्वाहा
४. ओं ग्रामयतये स्वाहा
५. ओं अनादिश्रोत्रियाय स्वाहा
६. ओं स्नातकाय स्वाहा
७. ओं श्रावकाय स्वाहा
८. ओं देवब्राह्मणयो स्वाहा
९. ओं सुब्राह्मणाय स्वाहा
१०. ओं अनुपमाय स्वाहा
११. ओं सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे, निधिपते निधिपते, वैश्रमण वैश्रमण स्वाहा।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु, अपमृत्यु विनाशनं भवतु, समाधिमरणं भवतु।

(पात्रों पर पुष्प क्षेपण करें)

४ ऋषिमंत्राः (१५)

ऋषिमन्त्रैर्महव्युत्तैः पञ्चदशभिवैरथ।
इज्यावशिष्टहव्याद्यैः कुर्वेतावतिथाहुतिः ॥४॥

१. ओं सत्यजाताय नमः स्वाहा
२. ओं अर्हज्जाताय नमः स्वाहा
३. ओं निर्ग्रंथाय नमः स्वाहा
४. ओं वीतरागाय नमः स्वाहा
५. ओं महाव्रताय नमः स्वाहा
६. ओं त्रिगुप्ताय नमः स्वाहा
७. ओं महायोगाय नमः स्वाहा
८. ओं विविधयोगाय नमः स्वाहा
९. ओं विविर्द्धये नमः स्वाहा
१०. ओं अंगधराय नमः स्वाहा
११. ओं पूर्वधराय नमः स्वाहा
१२. ओं गणधराय नमः स्वाहा
१३. ओं परमर्षिभ्योः नमो नमः स्वाहा
१४. ओं अनुपमजाताय नमो नमः स्वाहा
१५. ओं सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे, भूपते भूपते, नगरपते नगरपते, कालश्रमण कालश्रमण, स्वाहा।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु अपमृत्युविनाशनं भवतु, समाधिमरणं भवतु।

(हवन के सब पात्रों पर पुष्प क्षेपण करें)

५. सुरेन्द्रमंत्राः (१३)

अथ त्रयोदशभिर्मंत्रैः सुरेन्द्रादिभिर्राजसैः ।
इज्यावशिष्टहव्याद्यैः कुर्वेतावतिथाहुतिः ।।५।।

१. ओं सत्यजाताय स्वाहा
२. ओं अर्हज्जाताय स्वाहा
३. ओं दिव्यजाताय स्वाहा
४. ओं दिव्यार्च्यजालाय स्वाहा
५. ओं नेमिनाथाय स्वाहा
६. ओं सौधर्माय स्वाहा
७. ओं कल्पाधिपतये स्वाहा
८. ओं अनुचराय स्वाहा
९. ओं परम्परेन्द्राय स्वाहा
१०. ओं अहमिन्द्राय स्वाहा
११. ओं परमार्हताय स्वाहा
१२. ओं अनुपमाय स्वाहा
१३. ओं सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे, कल्पपते कल्पपते, दिव्यमूर्ते दिव्यमर्ते, वज्रनामन् वज्रनामन् स्वाहा ।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु अपमृत्युविनाशनं समाधिरणं भवतु ।
(हवन करने वालों पर पुष्प क्षेपण करें)

६. परमराजादि मंत्राः (९)

मंत्रैर्परमराज्याद्यैरथनवसुसंख्यकैः ।
इज्यावशिष्टहव्याद्यैः कुर्वेतावतिथाहुतिः ।।६।।

१. ओं सत्यजाताय स्वाहा
२. ओं अर्हज्जाताय स्वाहा
३. ओं अनुपमेन्द्राय स्वाहा
४. ओं पिजयार्च्यजाताय स्वाहा
५. ओं नेमिनाथाय स्वाहा
६. ओं परमजाताय स्वाहा
७. ओं परमार्हताय स्वाहा
८. ओं अनुपमाय स्वाहा
९. ओं सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे, उग्रतेजः उग्रतेजः, दिशाञ्जय दिशाञ्जय, नेमि विजय नेमि विजय स्वाहा ।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु अपमृत्यु विनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु ।
(हवन के पात्रो पर पुष्प क्षेपण करें)

७ परमेष्ठि मंत्राः (२३)

परमेष्ठ्यादिभिर्मंत्रैः त्रयोविंशतिमितैरथ ।
इज्यावशिष्टहव्याद्यैः कुर्वेतावतिथाहुतिः ।।७।।

१. ओं सत्यजाताय नमः स्वाहा
२. ओं अर्हज्जाताय नमः स्वाहा
३. ओं परमजाताय नमः स्वाहा
४. ओं परमार्हताय नमः स्वाहा
५. ओं परमरूपाय नमः स्वाहा
६. ओं परमतेजसे नमः स्वाहा
७. ओं परमगुणाय नमः स्वाहा
८. ओं परमस्थानाय नमः स्वाहा
९. ओं परमयोगिने नमः स्वाहा
१०. ओं परमभाग्याय नमः स्वाहा
११. ओं परमर्द्धये नमः स्वाहा
१२. ओं परमप्रसादाय नमः स्वाहा
१३. ओं परमविज्ञानाय नमः स्वाहा
१४. ओं परमदर्शनाय नमः स्वाहा
१५. ओं परमवीर्याय नमः स्वाहा
१६. ओं परमसुखाय नमः स्वाहा
१७. ओं परमकांक्षिताय नमः स्वाहा
१८. ओं परम विजयाय नमः स्वाहा
१९. ओं परमसर्वज्ञाय नमः स्वाहा
२०. ओं परम अर्हते नमः स्वाहा
२१. ओं परमेष्ठिने नमो नमः स्वाहा
२२. ओं परमनेत्रे नमो नमः स्वाहा
२३. ओं सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे, त्रैलोक्यविजय त्रैलोक्यविजय, धर्ममूर्ते धर्ममूर्ते, धर्मनेमे धर्मनेमे, स्वाहा ।
सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु । अपमृत्यु विनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु ।

(हवन के सब पात्रों पर पुष्प क्षेपण करें)

वृहच्छांति मंत्राः

नव्येन गव्येन घृतेन सम्यक् स्रुवार्पिते नाहुतभिः कृताभिः ।
होमं विधास्यामि समित्समान्संख्याभिरत्यूर्जितशांति मंत्रैः ।।

१. णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं । चत्तारि मंगलं - अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा - अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो, चत्तारि सरणं पव्वज्जामि - अरिहंते सरणं पवज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि । ओं ह्री अनादिमूलमंत्रेभ्यः सर्वशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ।।१।।

२. ओं नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषदोषकल्मषाय दिव्यतेजोमूर्तये नमः श्रीशान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वविघ्नप्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्युविनाशनाय सर्वपरकृच्छ्रोपद्रवनाशनाय सर्व क्षामडामर विघ्न विनाशनाय ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सर्वशान्तिं कुरुकुरु स्वाहा ।।२।।

३. ओं हूं क्षूं फट् किरिटिं किरिटिं, घातय घातय, परविघ्नान् स्फोटय स्फोटय, सहस्रखण्डान् कुरुकुरु ,परमुद्रां छिन्द छिन्द, परमंत्रान् भिन्द भिन्द, क्षां क्षः वाः वाः हूं सर्व शान्तिं कुरु कुरु फट् स्वाहा ।।३।।

४. ओं ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं अ सि आ उ सा अनाहत विद्यायै णमो अरिहंताणं ह्रौं सर्वविघ्नशान्तिर्भवतु स्वाहा ।।४।।

५. ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो नमः सर्वशान्तिं कुरुकुरु स्वाहा ।।५।।

६. ओं ह्रीं क्लीं श्री अर्हं श्रीवृषभनाथतीर्थकराय नमः सर्वशान्तिं तुष्टिं पुष्टिं च कुरुकुरु स्वाहा ।।६।।

७. ओं अ ह्रां, सि ह्रीं, आ ह्रूं, उ ह्रौं, सा ह्रः जगदातप विनाशनाय ह्रीं शान्तिनाथाय नमः सर्वशान्तिं कुरुकुरु स्वाहा ।।७।।

८. ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय अशोकतरु सत्प्रातिहार्य मण्डिताय अशोकतरु सत्प्रातिहार्य शोभनपदप्रदाय ह्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नमः सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा ।।८।।

९. ओं ह्री श्री शान्तिनाथाय सुरपुष्पवृष्टि सत्प्रातिहार्यमण्डिताय सुरपुष्पवृष्टि सत्प्रातिहार्य-शोभनपद प्रदाय भ्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रवशान्तिकराय नमः सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा ।।९।।

१०. ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय दिव्यध्वनि सत्प्रातिहार्य मण्डिताय दिव्यध्वनि सत्प्रातिहार्य- शोभन पदप्रदाय म्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नमः सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा ।।१०।।

११. ओं ह्री श्री शान्तिनाथाय चामरोज्ज्वल सत्प्रातिहार्य मण्डिताय चामरोज्जवल-सत्प्रातिहार्य शोभनपदप्रदाय र्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नमः सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा ।।११।।

१२. ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय सिंहासन सत्प्रातिहार्य मण्डिताय सिंहासन सत्प्रातिहार्य- शोभनपदप्रदाय घ्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोद्रव शान्तिकराय नमः सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा ।।१२।।

१३. ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय दुन्दुभिसत्प्रातिहार्य मण्डिताय दुन्दुभि सत्प्रातिहार्य- शोभनपदप्रदाय झ्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नमः सर्व - शान्तिर्भवतु स्वाहा ।।१३।।

१४. ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय छत्रत्रय सत्प्रातिहार्य मण्डिताय छत्रत्रय सत्प्रातिहार्य- शोभनपदप्रदाय स्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नमः सर्व - शान्तिर्भवतु स्वाहा ।।१४।।

१५. ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय भामण्डल सत्प्रातिहार्य मण्डिताय भामण्डल सत्प्रातिहार्य- शोभनपदप्रदाय ख्म्ल्व्र्यूं बीजायसर्वोपद्रव शान्तिकराय नमः सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा ।।१५।।

१६. ओं ह्री श्री शान्तिनाथाय प्रातिहार्याष्ट सहिताय बीजाष्ट मण्डन मण्डिताय सर्वविघ्न- शान्तिकराय नमः सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा ।।१६।।

१७. तव भक्तिप्रसादाल्लक्ष्मी पुरराज्यगेह पदभ्रष्टोपद्रवदारिद्रोयोद्भवोपद्रव स्वचक्र- परचक्रोद्भवोपद्रव प्रचण्डपवनानल जलोद्भवोपद्रव शाकिनी डाकिनी भूतपिशाच - कृत्रोपद्रवदुर्भिक्षव्यापारवृद्धिरहितोपद्रवाणां विनाशनं भवतु स्वाहा ।।१७।।

१८. सम्पूर्णकल्याणमंगलरूपमोक्षपुरुषार्थश्च भवतु स्वाहा ।।१८।।

(तत्पश्चात् जप मंत्र की दशांश आहुतियां करें)

वृहच्छांतिमंत्राः (विशेष कार्य हेतु)[1]

आत्मपवित्रीकरणार्थ, सकलदोषनिराकरणार्थ, सर्वमलातिचारविशुद्ध्यर्थ, सर्वशान्त्यर्थ, कायोत्सर्ग करोम्यहं । (नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ें)

१. ओं नमः सिद्धेभ्यः । श्री वीतरागाय नमः । ओं ह्रीं णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं । चत्तारि मंगलं - अरिहंतामंगलं सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा - अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि - अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे

१. पं. मन्नूलाल जैन प्रतिष्ठाचार्य की हस्तलिखित डायरी से ।

सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि । ओं ह्रीं अनादि सिद्ध मंत्र पूजन भक्ति प्रसादात् सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा ॥१॥

२. ओं ह्री श्री क्ली अर्ह अ सि आ उ सा अनाहतविद्यायै णमो अरिहंताणं ह्रौं सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा ॥२॥

३. ओं ह्री श्रीं क्ली ऐं अर्ह वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं झ्वी झ्वीं क्ष्वी क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं नमोऽर्हते भगवते सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा ॥३॥

४. ओं ह्री श्री सिद्धचक्राधिपतये सर्वकर्मविमुक्ताय अष्टगुण समृद्धाय फट् सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा ॥४॥

५. ओं ह्री अर्हन्मुखकमल निवासिनि पापमलक्षयंकरि श्रुतज्वाला सहस्र प्रज्ज्वलते सरस्वति तव भक्ति प्रसादात् मम पापविनाशनं भवतु स्वाहा ॥५॥

६. ओं क्षां क्षी क्षूं क्षौं क्षः क्षीरधवले अमृत संभवे वं वं हूं हूं सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा ॥६॥

७. ओं ह्रां ह्री ह्रूं ह्रौं ह्रः सरस्वति तव भक्ति प्रसादात् सुज्ञानं भवतु स्वाहा ॥७॥

८. ओं णमो भयवदो वड्ढमाणस्सरिसहस्स जस्स चक्कं जलं तं गच्छइ आयासं पायालं लोयाणं भूयाणं जये वा विवादे वा रणांगणे वा थंभणे वा मोहणे वा सव्वजीवसत्ताणं अपराजिदो भवदु मे रक्ख रक्ख स्वाहा। वर्धमानमंत्रेण सर्वरक्षा भवतु स्वाहा ॥८॥

९. ओं क्षां क्षी क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्षं क्षः नमोऽर्हते सर्व रक्ष रक्ष हूं फट् सर्वरक्षा भवतु स्वाहा ॥९॥

१०. ओं उसहाइ जिणं पणमामि सया अमलो विमलो विरजोवरया,
कप्पतरुसकामदुहा मम रक्ख सहा पुरुविज्जणिही ।

अट्ठेवय अट्ठसया अट्ठसहस्साय अट्ठकोडीओ ।
रक्खं तुम्हसरीरं देवासुरपणमिया सिद्धा ॥

ओं ह्री श्रीं अर्ह नमः स्वधा सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा ॥१०॥

११. ओं ह्रां ह्री ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा नमः एतन्मंत्र प्रसादात् सर्वभूतव्यन्तरादि बाधाविनाशनं भवतु सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा ॥११॥

१२. ओं ह्रीं श्री क्ली महालक्ष्म्यै नमः स्वाहा ॥१२॥

१३. ओं नमोऽर्हते सर्व रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा ॥१३॥

१४. ओं ह्रां ह्री ह्रूं ह्रौं ह्रः सर्वदिशागत विघ्नविनाशनं भवतु स्वाहा ॥१४॥

१५. ओं क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः सर्वोपद्रव विघ्नं च विनाशनं भवतु स्वाहा ॥१५॥

१६. ओं सम्प्रतिकाल श्रेयस्कर स्वर्गावतरण जन्माभिषेक परिनिष्क्रमण केवलज्ञान-निर्वाणकल्याणक विभूषित महाभ्युदयाः श्रीवृषभादि महावीरपर्यन्त परमदेवा पूजनभक्ति- प्रसादात् सर्वशान्तिर्भवतु तुष्टिः पुष्टिश्च भवतु स्वाहा ॥१६॥

१७. ओं ह्री लोकोद्योतनकरा, अतीतकालसंजाताः निर्वाणसागरादि श्रीभद्रशान्ताश्चेति चतुर्विंशति भूतपरमदेवाः पूजनभक्ति प्रसादात् सर्वशान्तिर्भवतु तुष्टिः पुष्टिश्च भवतु स्वाहा ॥१७॥

१८. ओं भविष्यत्कालाभ्युदय प्रभवाः महापद्मादि अनंतवीर्याश्चेति चतुर्विंशति भविष्यत परमदेवापूजन भक्ति प्रसादात् सर्वशान्तिर्भवतु तुष्टिः पुष्टिश्च भवतु स्वाहा ॥१८॥

१९. ओं त्रिकालवर्ति परमधर्माभ्युदयाः सीमंधरादि अजितवीर्याश्चेति पंचविदेह क्षेत्र विद्यमान विंशतिपरमदेवपूजनभक्तिप्रसादात् सर्वशान्तिर्भवतु तुष्टिः पुष्टिश्च भवतु स्वाहा ॥१९॥

२०. पूजिता भरताद्यैश्च भूपेन्द्रैर्भूरिभूतिभिः ।
चतुर्विधस्य संघस्य शान्तिं कुर्वन्तु शाश्वतीम् ॥
विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति शाकिनीभूतपन्नगाः ।
विषं निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ॥
दुर्भिक्षादिमहादोषनिवारणपरम्पराः ।
कुर्वन्तु जगतः शान्तिं जिनश्रुतमुनीश्वराः ॥
यत्संस्मरणमात्रेण विघ्ना नश्यन्ति मूलतः ।
कुर्वन्तु जगतः शान्तिं जिनश्रुतमुनीश्वराः ॥
यदार्थान् लभते प्राणी यत्प्रसादात्प्रसादतः ।
कुर्वन्तु जगतः शान्ति जिनश्रुतमुनीश्वराः ।
ओं ह्रां ह्री ह्रूं ह्रौं ह्रः सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा ॥२०॥

२१. ओं ह्रीं णमो अरिहंताणं णमो जिणाणं अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं विशूचिका-ज्वरादि रोग विनाशनं भवतु स्वाहा ॥२१॥

२२. ओं ह्रीं अर्हं णमो ओहि जिणाणं शिरोरोगविनाशनं भवतु स्वाहा ॥२२॥

२३. ओं ह्रीं अर्हं णमो परमोहि जिणाणं नासिकारोगविनाशनं भवतु स्वाहा ॥२३॥

२४. ओं ह्रीं अर्हं णमो सव्वोहि जिणाणं अक्षिरोगविनाशनं भवतु स्वाहा ॥२४॥

२५. ओं ह्रीं अर्हं णमो अणंतोहि जिणाणं कर्णरोगविनाशनं भवतु स्वाहा ॥२५॥

२६. ओं ह्रीं अर्हं णमो कोट्ठ बुद्धीणं ममात्मनि विवेकज्ञानं भवतु स्वाहा ॥२६॥

२७. ओं ह्रीं अर्हं णमो वीजबुद्धीणं हृदयरोगविनाशनं भवतु स्वाहा ॥२७॥

२८. ओं ह्रीं अर्हं णमो पादानुसारीणं परस्परविरोधविनाशनं भवतु स्वाहा ॥२८॥

२९. ओं ह्रीं अर्हं णमो संभिण्ण सोदाराणं श्वासरोगविनाशनं भवतु स्वाहा ॥२९॥

३०. ओं ह्रीं अर्हं णमो सयं बुद्धीणं कवित्वं पाण्डित्वं च भवतु स्वाहा ॥३०॥

३१. ओं ह्रीं अर्हं णमो पत्तेय बुद्धीणं प्रतिवादविद्याविनाशनं भवतु स्वाहा ॥३१॥

३२. ओं ह्रीं अर्हं णमो वोहिय बुद्धीणं अन्यगृहीतंश्रुतज्ञानंभवतु स्वाहा ॥३२॥

३३. ओं ह्रीं अर्हं णमो उजुमदीणं सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा ॥३३॥

३४. ओं ह्रीं अर्हं णमो विउलमदीणं वहुश्रुतज्ञानं भवतु स्वाहा ॥३४॥

३५. ओं ह्रीं अर्हं णमो दशपुव्वीणं सर्ववादिनो भवतु स्वाहा ॥३५॥

३६. ओं ह्रीं अर्हं णमो चउदशपुव्वीणं स्वसमयपरसमयवादिनो भवतु स्वाहा ॥३६॥

३७. ओं ह्रीं अर्हं णमो अट्ठांगमहानिमित्तकुसलाणं जीवितमरणादिज्ञानं भवतु स्वाहा ॥३७॥

३८. ओं ह्रीं अर्हं णमो विउव्वणपत्ताणं कामितवस्तु प्राप्तिर्भवतु स्वाहा ॥३८॥

३९. ओं ह्रीं अर्हं णमो विज्जाहराणं उपदेशप्रदेशमात्र ज्ञानं भवतु स्वाहा ॥३९॥

४०. ओं ह्रीं अर्हं णमो चारणाणं नष्टपदार्थचिंताज्ञानं भवतु स्वाहा ॥४०॥

४१. ओं ह्रीं अर्हं णमो पण्ण समणाणं आयुष्यावसानज्ञानं भवतु स्वाहा ॥४१॥

४२. ओं ह्रीं अर्हं णमो आगासगामीणं अन्तरीक्षगमनं भवतु स्वाहा ॥४२॥

४३. ओं ह्रीं अर्हं णमो आसीविषाणं विद्वेषप्रतिहतं भवतु स्वाहा ॥४३॥

४४. ओं ह्रीं अर्हं णमो दिट्ठिविसाणं स्थावर जंगमकृतविघ्नविनाशनं भवतु स्वाहा ॥४४॥

४५. ओं ह्रीं अर्हं णमो उग्गतवाणं वचःस्तंम्भनं भवतु स्वाहा ॥४५॥

४६. ओं ह्री अर्ह णमो दित्ततवाणं सेनास्तंम्भनं भवतु स्वाहा ॥४६॥
४७. ओं ह्री अर्ह णमो तत्ततवाणं अग्निस्तंम्भनं भवतु स्वाहा ॥४७॥
४८. ओं ह्री अर्ह णमो महातवाणं जलस्तंम्भनं भवतु स्वाहा ॥४८॥
४९. ओं ह्री अर्ह णमो घोरतवाणं विषरोगादिविनाशनं भवतु स्वाहा ॥४९॥
५०. ओं ह्री अर्ह णमो घोरगुणाणं दुष्टमृगादिभयविनाशनं भवतु स्वाहा ॥५०॥
५१. ओं ह्री अर्ह णमो घोरपरक्कमाणं लूतागर्भान्तिका बलिविनाशनं भवतु स्वाहा ॥५१॥
५२. ओं ह्रीं अर्ह णमोऽघोरगुणबंभचारिणं भूतप्रेतादिभयविनाशो भवतु स्वाहा ॥५२॥
५३. ओं ह्रीं अर्ह णमो सव्वोसहिपत्ताणं मनुष्यामरोपसर्ग विनाशो भवतु स्वाहा ॥५३॥
५४. ओं ह्रीं अर्ह णमो खेलो सहिपत्ताणं सर्वापमृत्युविनाशो भवतु स्वाहा ॥५४॥
५५. ओं ह्रीं अर्ह णमो जल्लोसहिपत्ताणंजन्मान्तरवैरभावविनाशो भवतु स्वाहा ॥५५॥
५६. ओं ह्री अर्ह णमो आमोसहिपत्ताणं अपस्मारप्रलापनचिन्ताविनाशो भवतु स्वाहा ॥५६॥
५७. ओं ह्री अर्ह णमो विट्ठोसहिपत्ताणं गजमारीविनाशनं भवतु स्वाहा ॥५७॥
५८. ओं ह्री अर्ह णमो सव्वोसहिपत्ताणं मनोवांछितसिद्धि भवतु स्वाहा ॥५८॥
५९. ओं ह्री अर्ह णमो मणवलीणं गोमारींविनाशो भवतु स्वाहा ॥५९॥
६०. ओं ह्री अर्ह णमो वचिवलीणं अजमारी विनाशो भवतु स्वाहा ॥६०॥
६१. ओं ह्रीं अर्ह णमो कायवलीणं महिषमारी विनाशो भवतु स्वाहा ॥६१॥
६२. ओं ह्रीं अर्ह णमो खीरसवीणं अष्टादशकुष्टगण्डमालादिकविनाशनं भवतु स्वाहा ॥६२॥
६३. ओं ह्रीं अर्ह णमो सप्पिसवीणं सर्वशीतज्वरविनाशनं घृतश्रावि ऋद्धिर्भवतु स्वाहा ॥६३॥
६४. ओं ह्री अर्ह णमो महुसवीणं समस्तोपसर्गविनाशनं मधुरश्रावि ऋद्धिर्भवतु स्वाहा ॥६४॥
६५. ओं ह्री अर्ह णमो अमइसवीणं सर्वव्याधि विनाशनं अमृतश्राविऋद्धिर्भवतु स्वाहा ॥

६६. ओं ह्रीं अर्ह णमो अक्खीणमहाणसाणं अक्षीणऋद्धिर्भवतु स्वाहा ॥६६॥

६७. ओं ह्री अर्ह णमो वड्ढमाणबुद्धिरिसस्स राजपुरुषादिभयविनाशनं भवतु स्वाहा ॥६७॥

६८. ओं ह्रीं अर्ह णमो सव्वसिद्धायदणाणं धनधान्यसमृद्धिर्भवतु रत्नत्रयं भवतु स्वाहा ॥६८॥

६९. ओं ह्री अर्ह णमो भगवदो महति महावीर वड्ढमाण बुद्धिरिसीणं समाधिसुखं भवतु स्वाहा ॥६९॥

७०. ओं ह्री अर्ह णमो अक्खर धणप्पयालं विउव्वगपत्ताणं सर्वज्वरादिरोग विनाशनं भवतु स्वाहा ॥७०॥

७१. ओं ह्री अर्ह णमो सव्वराजवशीकरणकुसलाणं श्रीजिणाणं सर्वराज्यप्रजावशीभूतं भवतु स्वाहा ॥७१॥

७२. ओं ह्रीं अर्ह णमो दुस्सहकट्ठनिवारयाणं श्री जिणाणं सर्व दुःख निवारणं भवतु स्वाहा ॥७२॥

७३. ओं ह्रीं अर्ह णमो इत्थितरो अविणासयाणं विट्ठोसहिपत्ताणं समस्त स्त्रीरोग विनाशनं भवतु स्वाहा ॥७३॥

७४. ओं ह्रीं अर्ह णमो तक्खरभय पणासयाणं श्री जिणाणं समस्त चौरादिभयविनाशनं भवतु स्वाहा ॥७४॥

७५. ओं ह्रीं अर्ह णमो अपुव्वल पठाइयाणं बलद्धिपत्ताणं समस्तमनोवांछित सिद्धिर्भवतु स्वाहा ॥७५॥

७६. ओं ह्री अर्ह णमो मृगीरोग वारयाणं सव्वोसहिपत्ताणं सर्वमृगीरोगविनाशनं भवतु स्वाहा ॥७६॥

७७. ओं ह्रीं अर्ह णमो वंदिओ अप्पाणं सव्वसिद्धापदणाणं समस्तबन्धन भय विनाशनं भवतु स्वाहा ॥७७॥

७८. ओं ह्री अर्ह णमो दव्वकराए सर्वार्थ सिद्धिर्भवतु स्वाहा ॥७८॥

७९. ओं ह्री अर्ह णमो धम्मराए जपतिए गर्भपतन निवारणं भवतु स्वाहा ॥७९॥

८०. ओं ह्री अर्ह णमो धणवड्ढिकराए धनगोधन लाभं भवतु स्वाहा ॥८०॥

८१. ओं ह्री अर्ह णमो पुत्त इत्थिकराए सन्तानवर्धनं भवतु स्वाहा ॥८१॥

८२. ओं ह्री अर्ह णमो उण्हगदहारिए सर्वेषां रोग विनाशनं भवतु स्वाहा ॥८२॥

८३. ओं ह्रीं अर्हं णमो आगालमववज्जणाए अग्निभयनिवारणं भवतु स्वाहा ॥८३॥

८४. ओं ह्रीं अर्हं णमो इक्खवज्जणाए मधुरजलं भवतु स्वाहा ॥८४॥

८५. ओं ह्रीं अर्हं णमो णगभयपणासए वन नगमेदिनीकृतोपद्रवविनाशनं भवतु स्वाहा ॥८५॥

८६. ओं ह्रीं अर्हं णमो पासे सिद्धासुणंतिए सर्पविष विनाशनं भवतु स्वाहा ॥८६॥

८७. ओं ह्रीं अर्हं णमो अक्खिगदनासए नेत्र पीड़ा निवारणं भवतु स्वाहा ॥८७॥

८८. ओं ह्रीं अर्हं णमो पुप्फियतरुपत्ताए सर्ववृक्षलतामारीनिवारणं भवतु स्वाहा ॥८८॥

८९. ओं ह्रीं अर्हं णमो जयदेव पासे पत्ताए राज्यसन्मानं भवतु स्वाहा ॥८९॥

९०. ओं ह्रीं अर्हं णमो जावित्ता परिवत्ताए दुर्भिक्षकृतोपद्रवविनाशनं भवतु स्वाहा ॥९०॥

९१. ओं ह्रीं अर्हं णमो इट्ठि मिट्ठि भक्ख कराए सर्वांग पीड़ा निवारणं भवतु स्वाहा ॥९१॥

९२. ओं ह्रीं अर्हं णमो चतुः षष्ठिऋद्धि मंत्र पूजन भक्ति प्रसादात् चतुःसंघानां सर्वशान्तिर्भवतु तुष्टिः पुष्टिश्च भवतु स्वाहा ॥९२॥

९३. ओं ह्रीं अर्हं णमो ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः धनधान्यसमृद्धिर्भवतु रत्नत्रयं भवतु स्वाहा ॥९३॥

९४. ओं नमोऽर्हते भगवते श्रीमते श्रीमत्पार्श्वतीर्थकराय श्रीमद् रत्नत्रयरूपाय दिव्य तेजोमूर्तये प्रभामण्डलमण्डिताय द्वादशगण सहिताय अनंतचतुष्टय सहिताय समवसरण केवलज्ञान - लक्ष्मीशोभिताय अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसंयुक्ताय परमेष्ठिपवित्राय सम्यग्ज्ञानाय स्वयंभुवे सिद्धाय बुद्धाय परमात्मने परमसुखाय त्रैलोक्यमहिताय अनंतसंसारचक्रपरिमर्दनाय अनंतज्ञान दर्शनवीर्य सुखास्पदाय त्रैलोक्यवशंकराय सत्यब्रह्मणे उपसर्ग विनाशनाय घातिकर्मक्षयंकराय अजराय अभवाय ऋष्यार्यिका श्रावक-श्राविका प्रमुखचतुः संघोपसर्ग विनाशनाय अघातिकर्म विनाशनाय देवाधिदेवाय नमो नमः स्वाहा ॥९४॥

९५. पूर्वोक्त मंत्राणां पूजन भक्ति प्रसादात् ऋष्यार्यिका श्रावक-श्राविकाणां सर्वक्रोध मान-माया लोभ हास्यरत्यरतिशोक भय जुगुप्सा स्त्रीपुरुषनपुंसक वेद विनाशनं भवतु स्वाहा ॥९५॥

९६. मिथ्यात्व रागद्वेष मोहमत्सरासूयेर्ष्या विभावविकारविषादप्रमादकषाय विकथा विनाशनं भवतु स्वाहा ॥९६॥

९७. सर्वपंचेन्द्रिय विषयेच्छस्नेहाशा रौद्राकुलताव्याधिदीनता पाप दोष विरोधविनाशनं भवतु स्वाहा ॥९७॥

९८. सर्वममकार विकल्प निद्रा तृष्णाधितापदुःखवैराहंकार संकल्प विनाशो भवतु स्वाहा ॥९८॥

९९. सर्वाहारभयमैथुनपरिग्रह संज्ञा विनाशो भवतु स्वाहा ॥९९॥

१००. सर्वोपसर्ग विघ्न गज चोर दुष्ट मृगेहलोक परलोकाकस्मान्मरण वेदनाशरणात्राणभय विनाशो भवतु स्वाहा ॥१००॥

१०१. सर्वक्षयरोग कुष्टरोग ज्वरातिसारादिरोग विनाशनं भवतु स्वाहा ॥१०१॥

१०२. सर्वनरगज गोमहिषधान्य - वृक्षगुल्मपत्रपुष्प - फलमारीं, राष्ट्रदेशमारीं, विश्वमारीं विनाशो भवतु स्वाहा ॥१०२॥

१०३. सर्वमोहनीय ज्ञानावरणीय दर्शनावरणीय वेदनीय नाम गोत्रायु अन्तरायकर्म विनाशनं भवतु स्वाहा ॥१०३॥

१०४. ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा नमः मंत्रभक्ति प्रसादात्सर्वेषां यजमानानां शान्तिर्भवतु स्वाहा ॥१०४॥

१०५. ओं ह्रीं श्री शांतिनाथाय जगच्छांतिकराय सर्वोपद्रव शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ॥१०५॥

१०६. ओं णमो अरिहंताणं ओं णमो जिणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय ओं ह्री अर्ह अ सि आ उ सा झ्रौं झ्रौं नमः सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा ॥१०६॥

१०७. ओं ह्री र्हं क्रौं श्री ह्रीं क्लीं शान्तिं तुष्टिं पुष्टिं कुरुकुरुअ सि आ उ सा झ्वी क्ष्वी हं सं तं पं द्रां द्रीं द्रावय द्रावय श्रीं ह्रीं सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा ॥१०७॥

१०८. ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा संपूर्ण कल्याण मंगलरूप मोक्षपुरुषार्थश्च भवतु स्वाहा ॥१०८॥

इति शांतिमंत्राः

पुण्याहवाचन (शांतिधारा) (१)

शांति हवन का कार्य करने के पश्चात् प्रमुख इन्द्र कुण्ड पर या कुण्ड के समीप थाली रखे। फिर मंगलकलश से पुण्याहवाचन के मंत्रों द्वारा शांतिधारा करे और हवन करने वाले सब पात्र णमोकार मंत्र का शातिपूर्वक मन मे स्मरण करते रहें।

ओं पुण्याहं पुण्याहं लोकोद्योतनकरा अतीतकालसंजातानिर्वाणसागर प्रभृतयश्चतुर्विंशति भूत परमदेवाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्तां (धारा)

ओं सम्प्रतिकाल संभवावृषभादिवीरान्ताश्चतुर्विंशति परमदेवाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्तां (धारा)

ओं भविष्यतिकालाभ्युदय प्रभवामहापद्मादि चतुर्विंशति भविष्यत्परमदेवाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्तां (धारा)

ओं त्रिकालवर्ति परमधर्माभ्युदयाः सीमंधर प्रभृतयोविदेहगतविंशति परमदेवाः वः प्रीयन्तां प्रीयन्तां (धारा)

ओं वृषभसेनादिगणधरदेवाः वः प्रीयन्तां प्रीयन्तां (धारा)

ओं सप्तर्द्धि विशोभिताः कुन्दकुन्दाद्यनेक दिगम्बर साधु चरणाः वः प्रीयन्तां प्रीयन्तां (धारा)

इह वान्य नगर ग्राम देवता मनुजाः सर्वेगुरु भक्ता जिनधर्मपरायणा भवन्तु। दान तपो -वीर्यानुष्ठानं नित्यमेवास्तु सर्वजिनभक्तानां धनधान्यैश्वर्यबलद्युतियशः प्रमोदोत्सवाः प्रवर्धन्ताम्। तुष्टिरस्तु पुष्टिरस्तु वृद्धिरस्तु कल्याणमस्तु अविघ्नमस्तु आयुष्यमस्तु आरोग्यमस्तु कर्मसिद्धिरस्तु इष्ट सम्पत्तिरस्तु। काम मांगलोत्सवाः सन्तु, पापानि शाम्यन्तु घोराणि शाम्यन्तु पुण्यंवर्धताम् धर्मो वर्धताम् श्रीवर्धताम् कुलगोत्रं चाभिवर्धताम्। स्वस्ति भद्रं चास्तु इवी क्ष्वीं हं सः स्वाहा। श्रीमज्जिनेन्द्र चरणारविन्देष्वानंद भक्तिः सदाऽस्तु। (इति शांतिधारा)

पुण्याहवाचन (२)

ओं पुण्याहं पुण्याहं प्रीयन्ताम् प्रीयन्ताम् भगवदोऽर्हन्त सर्वज्ञाः सर्वदर्शिनः त्रैलोक्यनाथाः त्रिलोकप्रद्योतनकराः वृषभादिवर्द्धमानांताश्चतुर्विंशति परमदेवाः शान्ताः शान्तिकराः सकलकर्मरिपुविजयकान्तारदुर्गविषमेषु रक्षन्तु वो जिनेन्द्राः ।

सर्वविदश्च नित्यमर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधवश्च भगवन्तो नः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् । इह चान्यग्रामनगरादिषु सर्वे देवताश्चतेसर्वे गुरुभक्ताः अक्षीणकोषकोष्ठागारा भवेयुर्दानतपोवीर्यनित्यमेवास्तु नः ।

मातृ पितृ भ्रातृ सुहृत्सुजन संबंधि बन्धु वर्ग सहितानां धनधान्यैश्वर्यद्युति बल यशोवृद्धिरस्तु । प्रमोदोऽस्तु शान्तिर्भवतु । पुष्टिर्भवत ु। सिद्धिर्भवतु । काममांगलोत्सवाःसन्तु । शाम्यन्तु घोराणि । शाम्यन्तु पापानि । पुण्यंवर्धताम् धर्मोवर्धताम् । श्वायुषी वर्द्धेताम् । कुलं गोत्रं चाभिवर्द्धेताम् । स्वस्तिभद्रं चास्तु नः । हस्ताते परिपंथिनः । शत्रवः समं यान्तु । निस्प्रतिघमस्तु । शिवमतुलमस्तु । सिद्धा सिद्धं प्रयच्छंतु नः स्वाहा । ओं कर्मणः पुण्याहं भगवतो ब्रुवन्तु । इति प्रार्थयेत् । पुण्याहं कर्मणोऽस्तु । इति ब्रुयुः । अनेन प्रकारेण ओं कर्मणि स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु । स्वस्तिकर्मणेऽस्तु च । कर्म सिद्धिं ऋद्धिं च भवन्तो ब्रुवन्तु । एतद्वाक्यत्रयोच्चारणान्ते त्रिवार पात्रान्तर पातित पूर्णकलशजलेन सभां शान्ति मंत्रेण सिंचेत् ।

शांतिधारा पश्चात् शान्त्यष्टक, शांतिभक्ति, शातिपाठ व विसर्जन करें ।

सीमन्तनी क्रिया

मध्यान्ह - सभी महिला पात्र (इन्द्राणियाँ) माता मरुदेवी के राजमहल में जाकर गीत, नृत्य पूर्वक यह क्रिया करती हैं ।

इसमें प्रथम गर्भधारण करनें के मांगलिक अवसर पर प्रायः ८वें माह में रिस्तेदार स्वजनो (महिलाओ) द्वारा गोद भरने, भेट (वस्त्र, आभूषण, मिष्ठान्न आदि) समर्पित करने की क्रिया की जाती हे । जिसे क्षेत्रीय (जहां पंचकल्याणक हो रहा हो) प्रथा के अनुसार उत्साहपूर्वक सम्पन्न किया जावे ।

गर्भकल्याणक का उत्तररूप

रात्रि में आरती, प्रवचन पश्चात् यज्ञवेदिका पर गर्भकल्याणक उत्तर रूप किया जाय।

महाराजा नाभिराय का दरबार

अयोध्या के राजप्रासाद में राजदरबार लगा हो।

महाराजा नाभिराय सिंहासन पर आसीन है दक्षिण की ओर प्रधानमंत्री और बांई ओर सेनापति बैठे हैं दोनों तरफ सभासद बैठे हों।

महाराज नाभिराय राज्य व्यवस्था समझने के लिए मंत्री से ज्ञात करना चाहते है।

महाराजा नाभिराय:- मंत्री महोदय, अयोध्या निवासी समस्त प्रजा मे किसी प्रकार असुविधायें तो नही हैं। क्योंकि राजा का धर्म है कि, प्रजा का पुत्रवत् ध्यान रखे। अतएव राज्य की स्थिति का निर्भय अवलोकन कराइये। नीति शास्त्र का कथन है-

विनश जाय वह मंत्री जो मन शंकाखाय,
विनश जाय वह कामनी आज्ञा से टल जाय।

अतएव राज्य स्थिति को स्पष्ट कीजिए।

१. प्रधानमंत्री:- महाराजा, दीनबंधु, प्रजावत्सल, नीतिनिपुण, कुशल राज्य संचालक, धर्मप्रतिपालक आपके राज्य की व्यवस्था और औचित्य दण्डनीति को देखकर अन्य प्रशासक आश्चर्य करते हैं आपके शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक अनुशासन का प्रभाव है कि जहां सिंह और गाय एक साथ पानी पीते है।

राज्य में कहीं भी अत्याचार, अनैतिकता, अभद्र व्यवहार और अनुशासनहीनता नहीं पाई जाती। राज्य में प्रजाजन सदा ही भगवद्भक्ति अर्चना, व्रत नियम से संयम साधना, अनेकांत सिद्धान्त तत्त्वचर्चा, साधुवन्दना करके जीवन पवित्र करते है। अतएव चरितार्थ है कि "यथा राजा तथा प्रजा"।

राज्य में सुख शान्ति एवं समृद्धि निरंतर निर्बाधरूपेण पाई जाती है। महाराज राज्य की व्यवस्था अति सुन्दर है। रहेगी ऐसी कामना है।

महाराजा नाभिराय:- अत्युत्तम मंत्री जी, राज्यव्यवस्था का निरंतर ध्यान रखना। भोग भूमि की समाप्ति पर प्रजाजनों को अशांति न हो, प्रजा कर्तव्य परायण रहे आप मार्गदर्शन समुचित देते रहिये।

(बांई ओर देखकर) कहिए सेनापति महोदय, राज्य में शांति स्थापित करने और आकस्मिक स्थिति को नियंत्रण करने हेतु आपकी सैन्य व्यवस्था किस प्रकार है, यथाशीघ्र अवगत कराइये ।

सेनापतिः- महाराजाधिराज, प्रजापालक, नरोत्तम, अवध नरेश आप सैन्य व्यवस्था से निरन्तर निश्चित रहिए। कारण कि सेना की व्यवस्था निम्न प्रकार की गई है, जिसमें, गजसेना, अश्वसेना, रथसेना, पैदलसेना, जलसेना के साथ सभी प्रदेशों की अनेक सेनायें नाना प्रकार के अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित की गई हैं जिनके नाम सुनते ही अन्य राजागण दांतो के नीचे अंगुली दबा लेते हैं । महाराजा एक तो आकस्मिक ऐसी स्थिति ही असभव है और यदि कदाचित् कोई अवसर ही आ जाय तो हमारी सैन्य व्यवस्था सुदृढ एवं सतर्क है आप निश्चित रहिए ।

महाराजनाभिरायः- बहुत ही प्रसन्नता है सेनापति, निरन्तर सावधानी रखना अपना कर्तव्य है । आप लोग राज्य के असीम शुभचितक हो । अपने कर्तव्य का पालन करना ही श्रेष्ठ है । प्रत्येक नगर निवासी सानंद जीवनयापन करे ऐसी कामना है ।

१. समासदः- श्रीमान् की अत्यधिक अनुकपा से अभी तक तो शान्ति है । परन्तु भारत निवासियो का भविष्य समुज्जवल दिखाई नहीं दे रहा है ।

१. महाराज नाभिरायः- महानुभाव इसका कारण क्या प्रतीत होता है निसंकोच कहिये?

२. सभासदः- नरपुंगव ! कारण स्पष्ट है तृतीय काल के केवल चौरासी लाख पूर्व तीन वर्ष साढे आठ महिना शेष रह गए हैं, अतएव कल्पवृक्षों का अभाव क्रमशः होने लगा है । अन्न और वस्त्र के अभाव में जीवन संकटापन्न हो रहा है ।

२. महाराज नाभिरायः- सज्जनो ! स्थिति अवगत होते ही मैं भी अत्यधिक चिन्तित था । किंतु धनाधिप द्वारा सुनाये गए शुभ सन्देश एवं रत्नवृष्टि से समस्यायें आसानी से सुलझ जावेगी ।

३. सभासदः- प्रजापालक नरोत्तम ! हम सब वह सन्देश सुनने को अत्यन्त उत्सुक हैं । आप दया कर विस्तारपूर्वक जानकारी देकर हमारी अभिलाषा पूर्ण करिये ।

३. महाराज नाभिरायः- यह विषम संकट काल हमारे जीवन मरण की समस्या बना है। उस विषमता को मिटाने के लिए सर्वार्थ सिद्धि कल्पातीत विमान से आदि ब्रह्मा अवतार लेने वाले हैं ।

४. सभासदः- अवसर अब आया निकट सुना सुखद संदेश,
पुण्य पुरुष का अवतरण होगा अपने देश ।

आर्य श्रेष्ठ ! आपके इस अभूतपूर्व सन्देश से हम समस्याओं को विधिवत् समाप्त करने वाले पुरुषोत्तम के स्वागत हेतु पलक पावड़े बिछा प्रतीक्षारत हैं।

महाराजा नाभिराय की जय ३ बार । आदिब्रह्मा आदिनाथ की जय ३ बार ।

(द्वारपाल महारानी मरुदेवी के आगमन की सूचना देता है। देवियों सहित माता मरुदेवी राजदरबार में प्रवेश करती हैं।)

सभासद खड़े होकर स्वागत करते हैं और महाराजा नाभिराय एव महारानी मरुदेवी की जय बोलते है।

महाराज नाभिरायः- स्वागत महादेवी स्वागत महारानी,

मरुदेवीः प्रणाम करती हूँ प्राणनाथ !

नाभिराय (अर्द्धासन बिठाते हुए) कारण जानना चाहते हैं अकस्मात् आगमन का,

हो प्रसन्न मुद्रा प्रिये पुलकित वदन दिखाय,
कारण क्या आगमन का दीजे शीघ्र बताय ।

प्रिये प्रसन्नता का कारण जानना चाहता हूँ।

महारानी मरुदेवीः- माननीय आर्यसत्तम, आज मै अपने शयन कक्ष में निद्रा मग्न थी अचानक रात्रि के अतिम चतुर्थ पहर मे मुझे एक से एक सुंदर सोलह स्वप्न दृष्टि गोचर हुए। उसके बाद ऐसा प्रतीत हुआ कि मेरे मुख मे एक दिव्य वृषभ प्रवेश कर रहा है।

गीता -

हे नाथ पिछली रात मे हम स्वप्न सोलह देखिया ।
गज, बैल, सिह, सुदेविकमला न्हवन करता पेखिया ।
द्वय पुष्पमाल, सुचन्द्रपूरण, सूर्य, सुवरन कलश दो
युग मीन, सरवर कमलयुत, सागर, सुसिंहासन भलो ।
रमणीक स्वर्ग विमान उतरत नागभवन सु आवतो
सुरतन राशि सुक्राति पूरन अगनि धूम न पावतो ।
तब अत मे इक वृषभ मेरे मुख प्रवेश करता भया
इनका सुफल कहिए प्रभू मुझ दीन पर करके दया ।

माननीय प्राणेश्वर ! यह सोलह स्वप्न देखे हैं कृपया यथाशीघ्र स्वप्नों का फलादेश बतलाकर मेरी जिज्ञासा का समाधान कीजिए ।

महाराज नाभिराय:- धन्य हो प्रिये, एक साथ सोलह स्वप्न उसी सौभाग्यवती को आते हैं जिसकी विशाल कुक्षि को पावन करने वाले तीर्थंकर अवतार लेने आते हैं । आनंद स्वरूप स्वप्नों का फलादेश सुन लीजिए ।

महाराजा नाभिराय (स्वप्नफल गीत)

सुनो प्रिये मैं तुम्हें सुनाऊं स्वप्नों का फल प्यारा है,
धर्ममूर्ति तीर्थंकर सुत हो जागा भाग्य हमारा है ।
गज देखन से सुत उत्तम हो वृषभ से जगगुरु होवेगा
सिंह देखने से पराक्रमी माला तीर्थंकर होवेगा
कमला न्हवन से गिरि न्हवन करें देव मिल प्यारा है
धर्ममूर्ति तीर्थंकर सुत हो० १ ।
शशि पूरण बतलाता ऐसा सर्वजगत में शांति भरे,
सूर्यप्रतापी कुंभयुगल से निधिपति वन भण्डार भरे ।
सरवर अवलोकन से होगा सर्वगुणी भण्डारा है,
धर्ममूर्ति तीर्थंकर सुत हो० २ ।
मीन युगल को देखा तुमने आनंदकारक होवेगा,
सागर का फल यह प्रिय जानो सर्वज्ञानमय होवेगा।
सिंहासन से प्रजापालक बन नीतिवन्त जग प्यारा है,
धर्ममूर्ति तीर्थंकर सुत हो० ३ ।
स्वर्गविमान स्वर्गसे आये नागेन्द्र अवधिज्ञानी होगा,
रत्नराशि से सर्वगुणों का अधिकारी वह सुत होगा।
निर्धूम अग्नि से कर्मजला किया शुद्ध चिदानंद प्यारा है,
धर्ममूर्ति तीर्थंकर सुत हो० ४ ।
वृषभप्रवेश से वृषभनाम सर्वार्थ सिद्धि तजकर आये,
करें महोत्सव सुरसुरपति मिल निधिपति रतन सुवरषाये।
धन्य दिवस तीर्थंकर जननी यह धनभाग्य हमारा है,
धर्ममूर्ति तीर्थंकर सुत हो० ५ ।

प्रिय महादेवी आपने एक दो नहीं किंतु सोलह स्वप्न देखे हैं उनका फलादेश बतला रहा हूँ कि आपकी पावन कुक्षि को आलोकित करता हुआ एक महाभाग्य विश्व का उद्धार करने वाला अवतरित होगा।

सोलह स्वप्नों का फलादेश

१.	ऐरावत हाथी	पुण्याधिकारी सर्वश्रेष्ठ पुत्र होगा
२.	श्वेत बैल	धर्माधिकारी जगत पूज्य
३.	सिंह	अनन्तशक्ति धारण करने वाला
४.	लक्ष्मी अभिषेक	इन्द्रों द्वारा पाण्डुक शिला पर अभिषेक
५.	दो पुष्पमाला	तीर्थ प्रवर्तन करने वाला
६.	पूर्णचन्द्रमा	तीन लोक मे शांति करने वाला
७.	उदित सूर्य	सर्वजगत में प्रतापवान
८.	क्रीड़ारतमछली	अनुपम आनद करने वाला
९.	स्वर्णकलश	अनेक अमूल्य निधियों का स्वामी
१०.	सरोवर	एक हजार आठ लक्षण सहित
११.	समुद्र	संपूर्णज्ञानी (केवलज्ञानी)
१२.	रत्नसिंहासन	तीन लोक का अधिपति
१३.	देव विमान	सर्वार्थसिद्धि विमान से अवतरण
१४.	धर्णेन्द्र भवन	जन्म से तीन ज्ञान का धारी
१५.	रत्नराशि	संपूर्ण गुणो को धारण करने वाला
१६.	निर्धूम अग्नि	आठ कर्मो का नाश करने वाला

मरुदेवी:- कुशल मार्गदर्शक प्राणनाथ ! आज मेरी नारी पर्याय सफल हो गई, आप के द्वारा स्वप्नों का फलादेश सुनकर मेरा अन्तर्मानस हर्ष विभोर हो गया, धन्य हो महापुरुष! आप जयवन्त हो। (रील द्वारा पृथक् पृथक् स्वप्न दिखलाकर स्वप्नो का फल बतलाना चाहिए)

(देवियों द्वारा गीत)

सुनकर प्रभु का अवतार, मन में आनंद अपार.
उत्सव अवधमझार, सब ही मनावो अति प्यार से । टेक ।
धन पिता मात तुम धन हो शुभदिन धन तन अरुमन हो ।
सुना फल सुखकार, मन में आनंद अपार । सब ही.. १
धनपति ने नगर सजाया निज जीवन सफल बनाया ।
रत्नवरषें मूसलधार मन में आनंद अपार । सब ही.. २
क्या महिमा तुम्हारी गावें कब जिनवर दर्शन पावें ।
बोलें प्रभु की जयजयकार, मन में आनंद अपार । सब ही.. ३

(सब मिलकर बोलती हैं महाराजा नाभिराय की जय, माता महारानी मरुदेवी की जय) पुनः सौधर्मेन्द्र, इन्द्रानी स्वर्ग से अनुपम भेंट लाते हैं और महाराजा नाभिराय एवं महारानी मरुदेवी को समर्पित कर आनंद विभोर स्तुति करते हैं ।

इन्द्र, इन्द्रानी स्तुतिकर महाराजा नाभिराय एवं माता महारानी मरुदेवी की जयजयकार करते हैं। कुबेर देवियों को सेवा करने एवं गर्भशोधन करते हुए माता को निरंतर प्रसन्न रखने का आदेश देता है (देवियां आज्ञा शिरोधार्य करती हैं)

इन्द्र यथास्थान प्रस्थान करता है । महारानी माता मरुदेवी देवियों सहित महल में आती हैं । देवियां सेवा एवं नृत्य करती हुई गीत गाती हैं ।
(राजदरबार समाप्त कर माता को पलंग पर बिठाया जाय तब देवियां गीत के साथ सेवा करती हुई नृत्य करती हैं)

सब मिल मनायें खुशियां, ललन माता को मिलेंगे "टेक"
जब प्रभु गरममांहि आवेगें नभ से रतन बरसेंगे ॥१॥
तीन ज्ञानधारी जन्मेंगे जग अज्ञान हरेंगे । ललन० ॥२॥
प्रथमदरशइन्द्रानी कर हैं गोद में मोद भरेंगे ॥३॥ ललन०
ललना जी की छवि हरि देखन नेत्र हजार धरेंगे ॥४॥ ललन०
ऐरावत पर बैठा प्रभु को पाण्डुक वन में चलेंगे ॥५॥ ललन०
एक हजार आठ कलशों से ललना का न्हवन करेंगे ॥६॥ ललन०
पुनः सौंपकर मातपिता को ताण्डव नृत्य करेंगे ॥७॥ ललन०
राज्यभोग वैभव त्यागेंगे भेषदिगम्बर धरेंगे ॥८॥ ललन०
पांच महाव्रतधारी होगें वन में जाय बसेंगे ॥९॥ ललन०
चारघातिया नाश करेंगे ज्ञान के दीपक जलेंगे ॥१०॥ ललन०
आठ करम को नाश प्रभू जी मोक्ष महल में बसेंगे ॥११॥ ललन०

इस प्रकार माता की सेवा, नृत्य, गीत, वाद्य बजाकर मनोरजन कर देविया प्रश्नोत्तर करती है।

देवियों द्वारा प्रश्न, माता द्वारा उत्तर

१ प्रश्न - पूज्य महादेवी मां मेरा समाधान कीजिए, ससार मे किसकी शरण लेना चाहिए ?

१ उत्तर - देवी सुनिये, संसार में पंच परमेष्ठी की शरण लेना चाहिए।

२ प्रश्न - हे त्रिजगोत्तमे ! संसार में उत्तम रत्न कौन है?

२ उत्तर - संसार में सम्यग्दर्शन ही उत्तम रत्न है।

३ प्रश्न - हे जगत्पूज्य मां ! तपस्या करते हुए ससार किसका नही मिटता?

३ उत्तर - आतमज्ञान बिना जो तपस्या करते है उनका संसार नही मिटता।

४ प्रश्न - त्रिलोकचूड़ामणि मा ! मनुष्य पशु समान कैसे कहलाता है?

४ उत्तर - धर्म के अभाव से ही मनुष्य पशु समान कहलाता है।

५ प्रश्न - हे पुरन्ध्रिश्रेष्ठे ! किसको नाश करने वाला त्रिलोक पूज्य हो जाता है ?

५ उत्तर - मोह, रागद्वेष, विषय-कषाय को नाश करने वाला ही त्रिलोक पूज्य हो जाता है।

६ प्रश्न - हे जगत्पूज्यजननी ! ससार मे गृहस्थ दुखी क्यो रहता है?

६ उत्तर - विषय कषाय सम्पत्ति की तीव्र अभिलाषा से ही गृहस्थ संसार मे दुखी रहता है।

७ प्रश्न - मानव को पुरुष क्यो कहा जाता है?

७ उत्तर - विरोध रहित पुरुषार्थो के पालन करने से मानव पुरुष कहा जाता है।

८ प्रश्न - पुत्र को मृतक समान क्यो कहा जाता है?

८ उत्तर - विद्या, विनय, सदाचार से रहित पुत्र को मृतक समान कहा जाता है।

९ प्रश्न - जीव को किसकी भक्ति करना चाहिए?

९ उत्तर - जीव को पंचपरमेष्ठी की भक्ति निरतर करना चाहिए।

१० प्रश्न - मानव अपनी उन्नति कैसे कर सकता है?

१० उत्तर - विषय - कषाय से अनुरंजित विचार रहित आत्मानुभूति करने वाला मानव अपनी उन्नति कर सकता है।

११ प्रश्न - प्रातः समय में मनुष्य को क्या करना चाहिए ?

११ उत्तर - प्रातः काल शुद्ध वस्त्रों से सामायिक करते हुए आत्म चितवन करना चाहिए।

१२ प्रश्न - संसार में कौन स्त्रियां सुमति बढ़ाती हैं ?

१२ उत्तर - जो स्त्रियां मधुर वचन के साथ सबका आदर करती हैं वे सुमति बढ़ाती हैं।

१३ प्रश्न - संसार में सबसे उत्तम कार्य कौन है?

१३ उत्तर - निरंतर बुद्धिपूर्वक आत्मचिंतवन करना ही संसार में उत्तम कार्य माना गया है।

१४ प्रश्न - कौन सी कथायें पाप नाश करती हैं?

१४ उत्तर - संसार में धर्मकथायें ही सब पापों का नाश करती हैं।

१५ प्रश्न - उत्तमधर्म किसे कहा गया है ?

१५ उत्तर - अहिसा को सर्वश्रेष्ठ एवं सर्वमान्य उत्तम धर्म कहा गया है।

१६ प्रश्न - कौन धनवान संसार में सुखी रहता है?

१६ उत्तर - जिस धनवान को सदा सन्तोष रहता है और निरन्तर दान में संपत्ति का उपयोग करता है वह संसार में सुखी रहता है।

१७ प्रश्न - समस्त संसार किसके आधीन रहता है?

१७ उत्तर - जो सत्य वचन बोलता है परधन का अपहरण नहीं करता संसार की समस्त स्त्रियों को मां, बहिन, बेटी मानता है समस्त संसार उसके आधीन रहता है।

१८ प्रश्न - मन को बदलने का क्या उपाय है?

१८ उत्तर - अनेकांत सिद्धान्त का पठन, मनन, चितन एवं धारण करना ही मन को बदलने का उपाय है।

१९ प्रश्न - कर्मो का अंत कैसे हो सकता है?

१९ उत्तर - आत्म स्वभाव में स्थित, शुक्लध्यानी साधु अवस्था से ही कर्मो का अंत हो सकता है।

२० प्रश्न - अविरति का अभाव कैसे हो सकता है ?

२० उत्तर - पंचेन्द्रियों के विषयों का दमन, छहकाय के जीवों की रक्षा के साथ समता परिणाम से अविरति का अभाव हो सकता है।

२१ प्रश्न - गृहस्थ का उत्तम धन कौन है?

२१ उत्तर - न्याय के साथ कमाया गया धन ही गृहस्थ का उत्तम धन माना है।

२२ प्रश्न - कौन सा जीव रोगी नहीं होता?

२२ उत्तर - जो विवेक पूर्वक सदाचार के साथ प्रकृति अनुकूल आहार विहार करता है वह जीव रोगी नहीं होता।

२३ प्रश्न - संकट में साथ देने वाला कौन है?

२३ उत्तर - संसार में धर्म, धैर्य और तत्वचिंतन ही संकट में साथ देने वाला है।

२४ प्रश्न - मरण समय क्या करना चाहिए?

२४ उत्तर - संसार शरीर भोगों से विरक्त होकर समता भाव धारण कर पंच परमेष्ठी का स्मरण करना चाहिए।

२५ प्रश्न - संसार में सच्चामित्र कौन माना जाता है?

२५ उत्तर - जो कुमार्ग से निकालकर आत्मकल्याण के मार्ग में लगाता है वही सच्चा मित्र है।

२६ प्रश्न - संसार में शत्रु कौन माना जाता है?

२६ उत्तर - आत्मोद्धारक मार्ग से हटाकर कुमार्ग की ओर लगाने वाला ही बड़ा शत्रु माना जाता है।

२७ प्रश्न - कौन की शरण सुख देने वाली है?

२७ उत्तर - पंच परमेष्ठी एव अपनी आत्मा की शरण ही शाश्वत सुख देने वाली है।

२८ प्रश्न - जीव को शाश्वत सुख कब मिल सकता है ?

२८ उत्तर - जिस समय जीव रत्नत्रय प्राप्त कर तपश्चरण पूर्वक कर्मो का अभाव करता है उस समय उसे शाश्वत सुख मिल सकता है।

२९ प्रश्न - हमारा सच्चा पिता कौन है?

२९ उत्तर - सन्मार्गोपदेशक, वीतरागी, विश्व के समस्त पदार्थो को जानने वाला, अनन्त चतुष्टय वाला अरहंत परमात्मा ही हमारा सच्चा पिता है।

३० प्रश्न - हमारी सच्ची माता कौन है?

३० उत्तर - वीतराग भगवान के सर्वांग से निकलकर सन्मार्ग बतलाने वाली जिन वाणी ही हमारी सच्ची माता है।

३१ प्रश्न - हमारा सच्चा बन्धु कौन है?
३१ उत्तर - रत्नत्रय मार्ग पर चलने एवं चलाने वाला आरंभ, परिग्रह रहित साधु ही हमारा सच्चा बंधु है।

३२ प्रश्न - हमारा वास्तविक कर्तव्य क्या है?
३२ उत्तर - अपनी आत्मा की श्रद्धा ज्ञान एव चर्चा ही हमारा सच्चा कर्तव्य है।

३३ प्रश्न - संसार में अहित करने वाला कौन है?
३३ उत्तर - तीनलोक और तीन काल में मिथ्यात्व अर्थात् आत्मा की श्रद्धा नहीं होना संसार में सबसे अधिक अहित करने वाला है।

३४ प्रश्न - संसार में हित करने वाला कौन है?
३४ उत्तर - तीन लोक और तीन काल में आत्मविश्वास (श्रद्धा) ही सबका हित करने वाला है।

३५ प्रश्न - ससार में दुख देने वाला कौन है?
३५ उत्तर - हमारी विषय – कषाय पूर्ण अभिलाषायें ही संसार में दुख देने वाली हैं।

३६ प्रश्न - संसार मे सुख देने वाला कौन है?
३६ उत्तर - सम्यग्दर्शन, सम्यक् ज्ञान, सम्यक् चारित्र और सम्यक् तप ही संसार में यथार्थ सुख देने वाले हैं।

३७ प्रश्न - मेरा शाश्वत स्थान कौन है?
३७ उत्तर - समस्त जन्म – मरण की आकुलता रहित नित्य अविनाशी मोक्ष धाम ही शाश्वत स्थान है।

३८ प्रश्न - यह आत्मा संसार परिभ्रमण क्यों कर रहा है?
३८ उत्तर - अपने ज्ञायक स्वभाव को भूलकर विकारी भावों को अपना मानने वाला आत्मा ससार परिभ्रमण करता है।

प्रश्न ३९ - आत्मा का स्वरूप क्या है?
उत्तर ३९ - बन्धरहित स्पर्शरहित, द्रव्यकर्म, भावकर्म, नो कर्म से रहित चैतन्यस्वरूपी होना आत्मा का स्वरूप है।

४० प्रश्न - संसार परिभ्रमण मिटाने का उपाय क्या है?
४० उत्तर - परभावो का स्वामित्व, कर्तृत्व, भोक्तृत्व परिणामों से हटकर अपने ज्ञायक शुद्ध स्वरूप का आश्रय करने से संसार परिभ्रमण मिटता है।

४१ प्रश्न - संसार में उत्तम गति कौन है?

४१ उत्तर - जहां जाने के बाद फिर न आना पडे अर्थात् जन्म मरण का अभाव करने वाला पद अरहत सिद्ध गति ही संसार में उत्तम गति है।

४२ प्रश्न - संसार में जीव सुखी कैसे बन सकता है?

४२ उत्तर - संसार की व्यवस्था में अहंकार ममकार का संबंध तोड़कर कर्मो से नाता छोड़कर ज्ञायक स्वभाव से बुद्धि जोड़कर समता भाव वाला जीव संसार में सुखी बन सकता है ।

४३ प्रश्न - जीवों के साथ किस प्रकार वचन प्रयोग करें?

४३ उत्तर - समस्त प्राणियों के हित करने वाले, मर्यादित और मधुर वचनो का प्रयोग जीवों के साथ करना चाहिए ।

४४ प्रश्न - भोजन कैसा करना चाहिए?

४४ उत्तर - अभक्ष्य पदार्थो को छोड शरीर को निरोग रखने एवं धर्मसाधन के लिए उपयोगी सात्विक भोजन करना चाहिए।

४५ प्रश्न - शरीर निरोग कैसे हो सकता है?

४५ उत्तर - प्रकृति के अनुकूल शुद्ध भूख से कम समयानुसार आहार करने वाला शरीर निरोगी रह सकता है।

४६ प्रश्न - संसार मे किस प्रकार चलना चाहिए?

४६ उत्तर - भूमि को देखते हुए जीवों की विराधनारहित सावधानी पूर्वक चलना चाहिए ।

४७ प्रश्न - आत्मा अबंध कैसे रह सकता है?

४७ उत्तर - ससार को अजायबघर जैसा मान लो इसमे जो पदार्थ हैं उनमें न राग करो न द्वेष करो किंतु ज्ञायक बनकर रहने वाला आत्मा अबंध रह सकता है।

४८ प्रश्न - आत्मा परमात्मा कैसे बन सकता है?

४८ उत्तर - अनादि काल से हम शरीर को आत्मा मान रहे हैं उसे आत्मा से पृथक मान लें और आत्मा के स्वभाव में स्थिर हो जावे पश्चात् आत्म स्वभाव की निर्विकल्प दशा से आत्मा परमात्मा बन सकता है ।

४९ प्रश्न - यह जीव नरकगति में कैसे जाता है?

४९ उत्तर - बहुत आरम्भ और बहुत परिग्रह की भावना (परिणाम) करनें वाला जीव नरक गति जाता है।

५० प्रश्न - यह जीव तिर्यंच गति में कैसे जाता है?

५० उत्तर - कुटिलता की भावना अर्थात् कहना कुछ और करना कुछ ऐसा जीव तिर्यंच गति में जाता है।

५१ प्रश्न - मनुष्य गति में जीव कैसे जाता है?

५१ उत्तर - परिणामों की सरलता रखने वाला जीव मनुष्यगति में जाता है।

५२ प्रश्न - देवगति में यह जीव कैसे जाता है?

५२ उत्तर - व्रताचरण करनेवाला, मिथ्यात्वसहित तप करनेवाला कषाय की मंदता वाला जीव देवगति में जाता है।

५३ प्रश्न - श्रावक का कर्तव्य क्या है?

५३ उत्तर - देवदर्शन व पूजा, गुरु वंदना, स्वाध्याय संयम, तपश्चरण एवं दान करना, पानी छानकर पीना, रात्रि भोजन नहीं करना सामायिक करना श्रावक का कर्तव्य हैं।

५४ प्रश्न - जीव नीच कुल में कैसे जाता है?

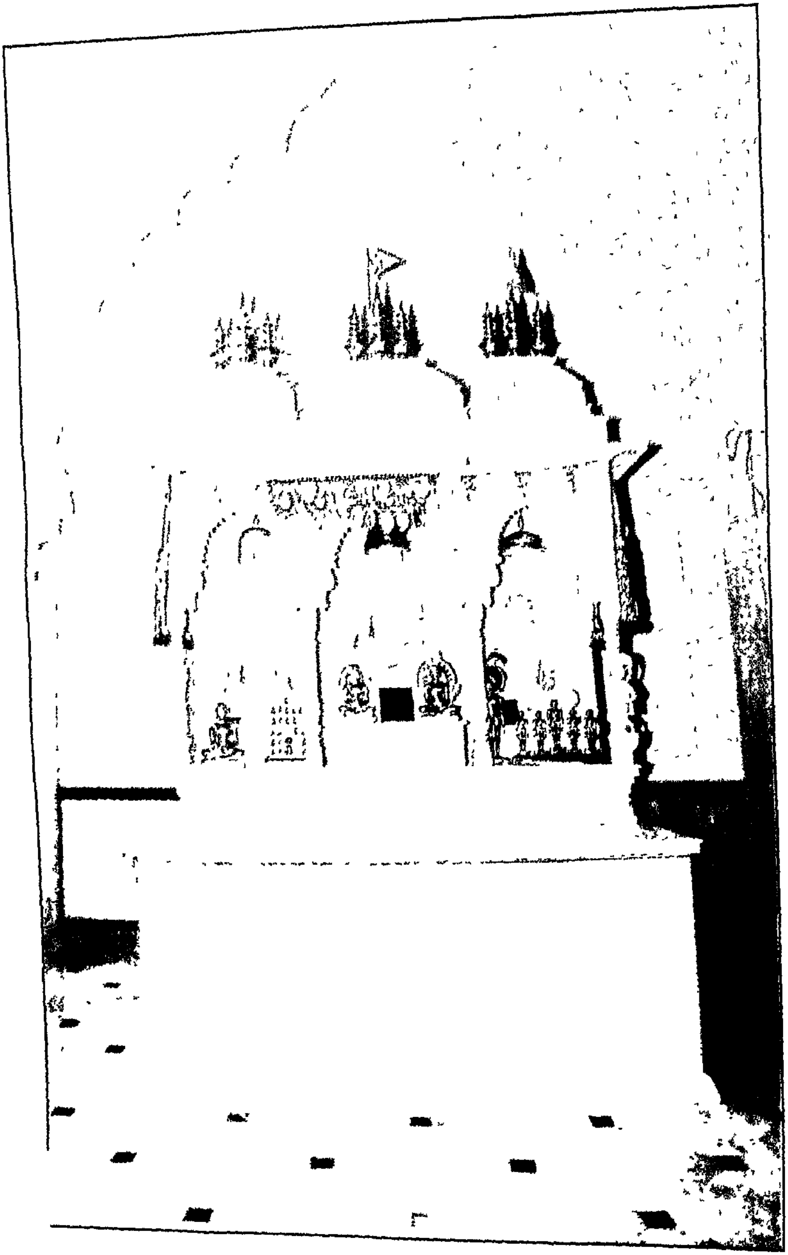
५४ उत्तर - परकी निन्दा और अपनी प्रशंसा करने वाला जीव नीच गोत्र में जाता है।

५५ प्रश्न - जीव ऊंच कुल का बंध कैसे करता है?

५५ उत्तर - अपनी निन्दा और परकी प्रशंसा करने वाला जीव ऊंच गोत्र का बंध करता है।

५६ प्रश्न - भोगोपभोग की सामग्री होते हुए भी उन्हें भोग क्यों नहीं पाता?

५६ उत्तर - जिस जीव ने दूसरे प्राणी के भोगोपभोग करते देखकर ईर्ष्या की है वह साधन पाकर भी भोग नही सकता।



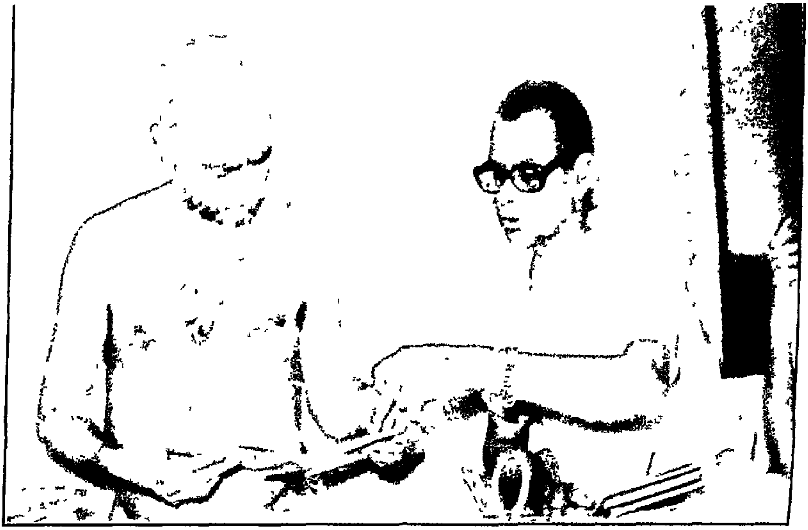
पंडाल वेदी



[illegible] शिरोमणि श्रमण सूर्य आचार्य श्री १०८ विद्यासागरजी महाराज

एक बूँद सागर को

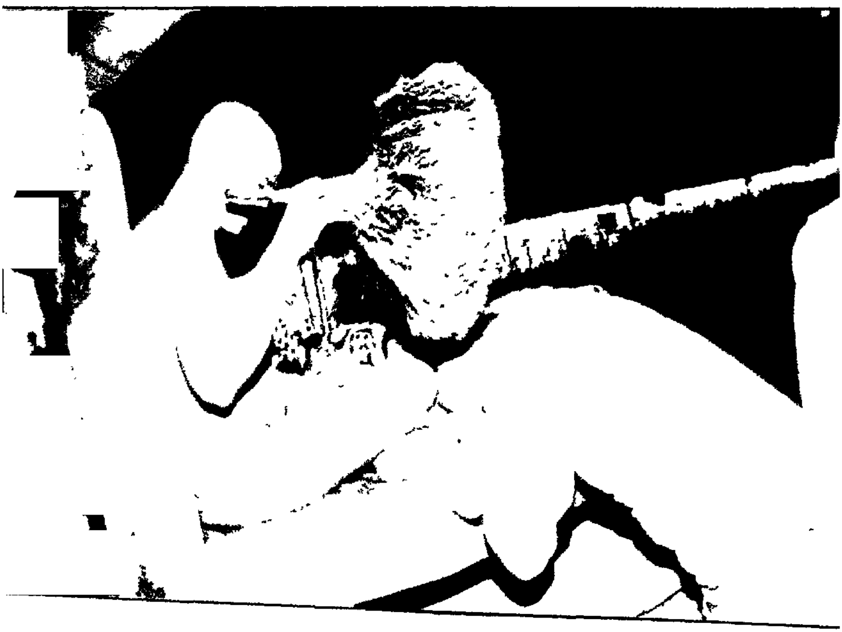
श्रमण परम्परा के सूर्य सत शिरोमणि
आचार्य श्री १०८ विद्यासागरजी महाराज
की रजत जयंती के पुण्य प्रसंग में
उनके अमृतमय सारश्वत वरद हस्तों में
शत शत नमन"



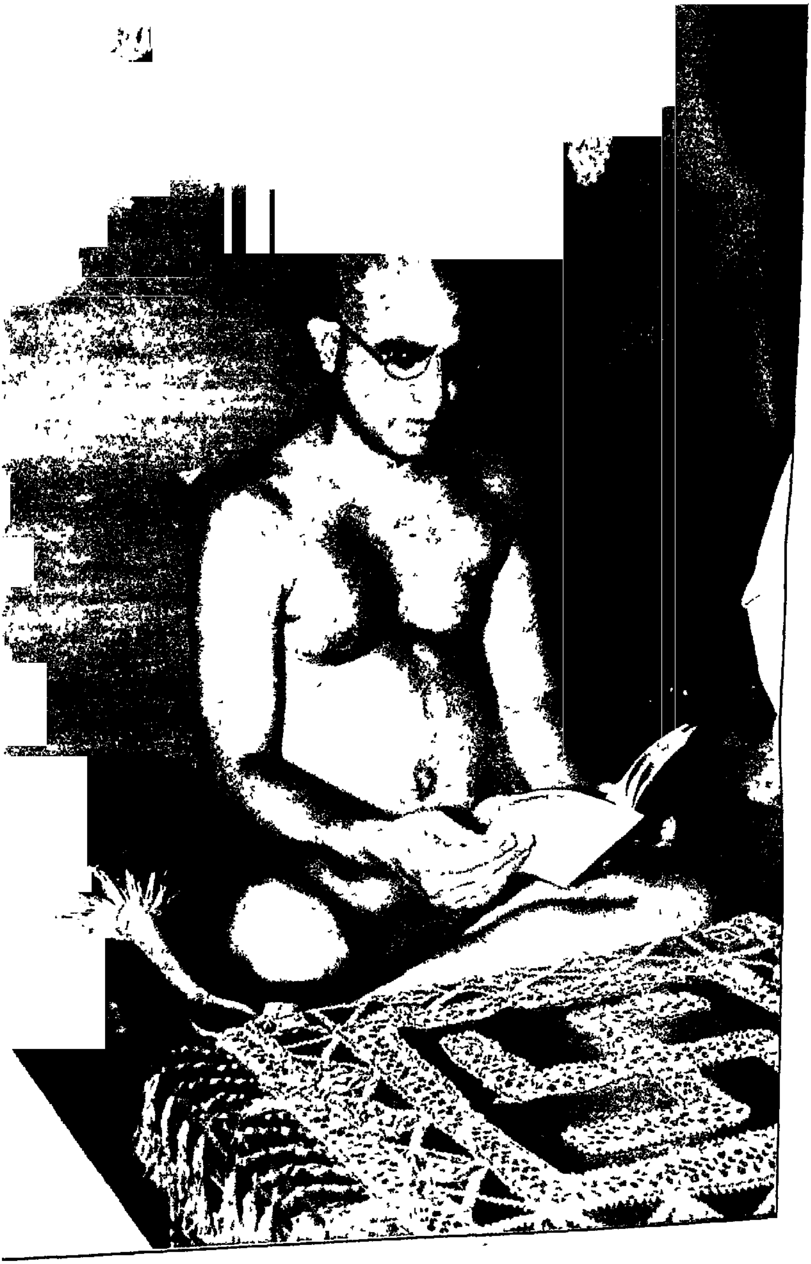


गुरु आशीष...





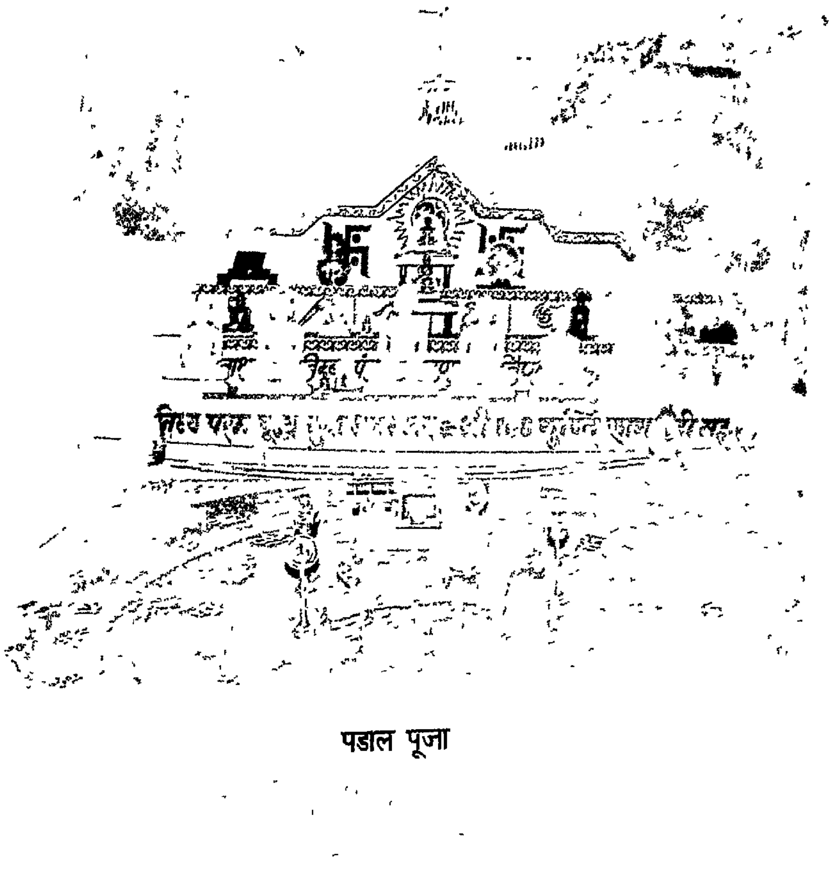
मिला ऐसे



पूज्य उपाध्याय श्री गुप्तिसागरजी महाराज



वन अवसर—नव निर्माण एवं पंच कल्याणक महोत्सव श्री महावीर जिनालय, प्रीत वि



पडाल पूजा



गर्भ कल्याणक



जन्म कल्याणक



जन्माभिषेक

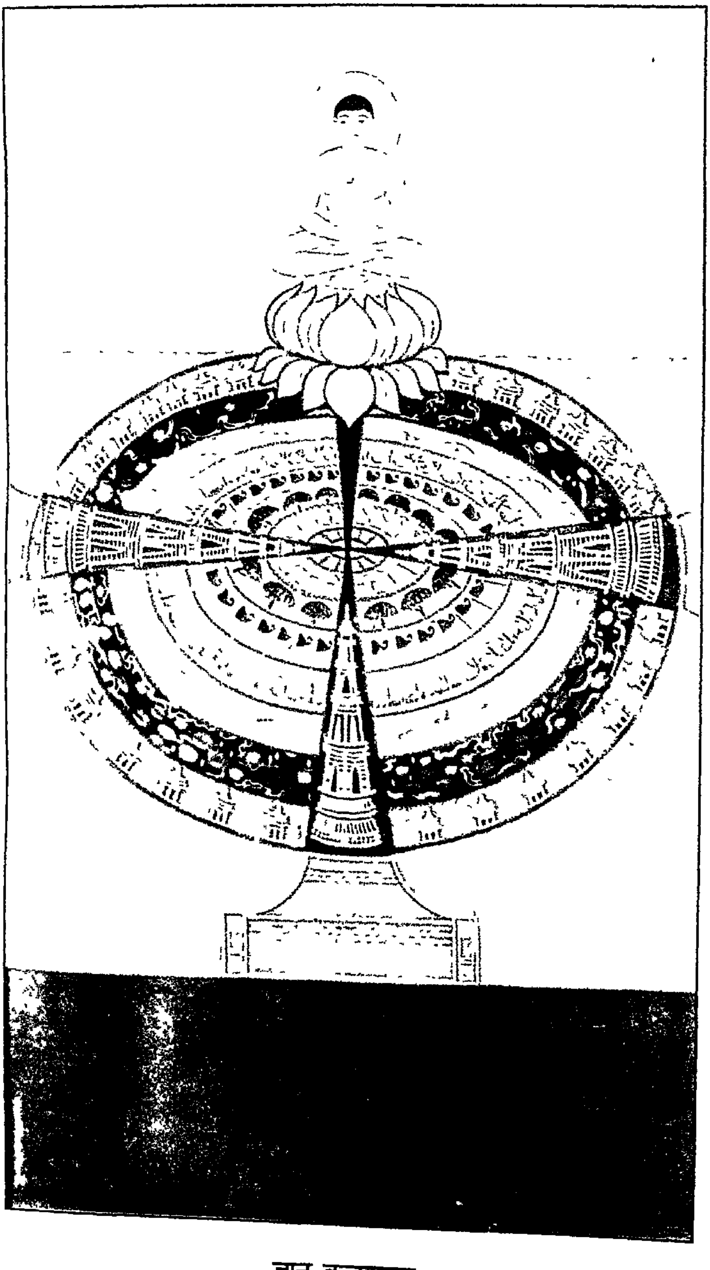


बालक वर्धमान महावीर के धैर्य और बल की परीक्षा

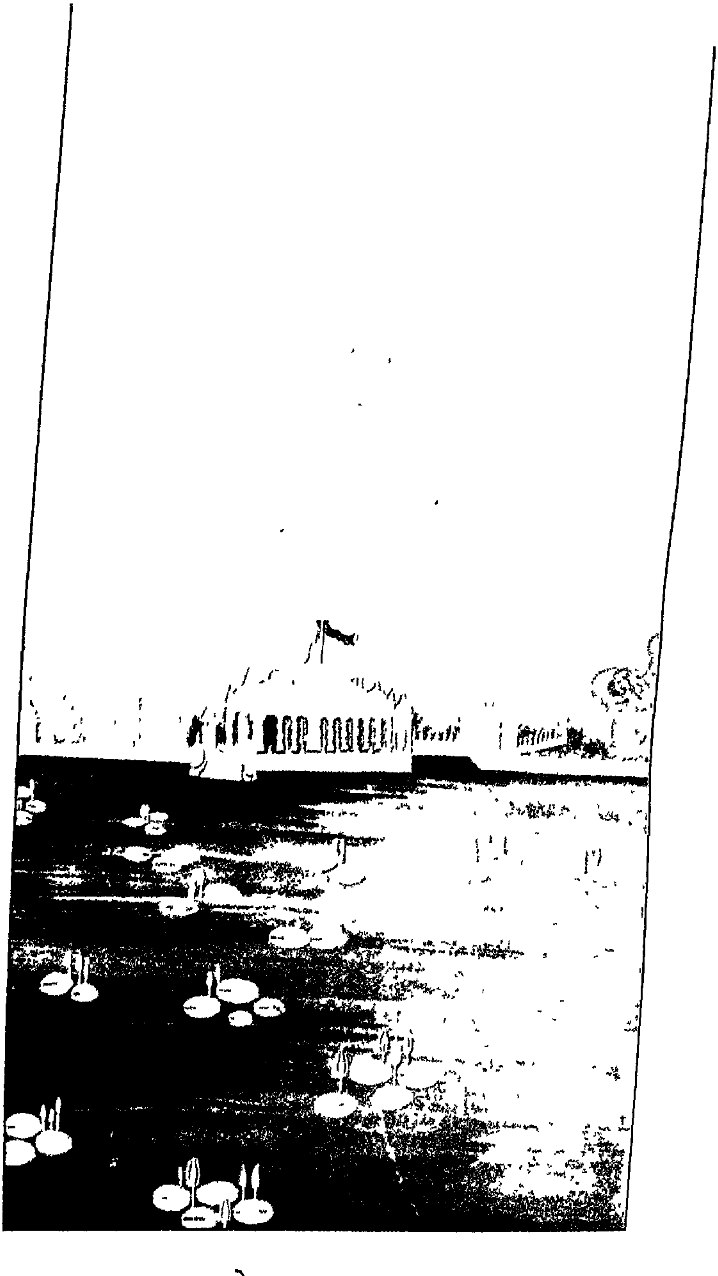




भगवान् महावीर का पूर्व भव



ज्ञान कल्याणक



मोक्ष कल्याणक

जन्म
कल्याणक

जन्म कल्याणक

मंत्र - (१) मातृका मंत्र
(२) सुरेन्द्र मंत्र
(३) वर्धमान मंत्र

मण्डल - चौबीस तीर्थंकर मण्डल

यंत्र - (१) मातृका यंत्र
(२) सुरेन्द्र यंत्र
(३) वर्धमान यंत्र

भक्तियाँ - (१) सिद्ध भक्ति
(२) तीर्थंकर भक्ति
(३) चारित्र भक्ति
(४) शान्ति भक्ति

सामग्री - (१) अर्धचन्द्राकार शिला
(२) पूजा सामग्री
(३) विधिनायक के वस्त्राभूषण
(४) घंटा, झालर, शंख, तुरही
(५) ऐरावत हाथी
(६) जुलूस व्यवस्था
(७) पालना (तैयार)
(८) बाल क्रीड़ा के खिलौना
(९) वाद्य घोष

जन्मकल्याणक

गर्भकल्याणक के पश्चात् प्रातः (सूर्योदय के बाद) नित्यमहपूजा करके शुभलग्न में जन्म क्रिया होना चाहिए। राजभवन (गर्भगृह) में आवश्यक सामग्री की व्यवस्था सूची अनुसार करें।

१. राजभवन (यज्ञवेदी) के ईशान कोण में कल्पवासी देव की स्थापना करें। (उस दिशा से घण्टा की ध्वनि होना)

२. आग्नेय कोण में ज्योतिषी देव की स्थापना करें। (सिंहनाद की ध्वनि होना)

३. नैऋत्य कोण में व्यन्तरदेव की स्थापना करें। (पटह, ढोल की ध्वनि होना)

४. वायव्य कोण में भवनवासी देव की स्थापना करें। (शंख की ध्वनि होना)

५. चारो दिशाओं में चार देवियां सफेद ध्वजाएं लेकर खड़ी हों, जो तीर्थंकर कुमार के जन्म की सूचना ध्वजा को ऊपर उठाकर दें, जिससे सबको ज्ञात हो जावे। जयकारा हो, वादित्रों की ध्वनि एवं महाराजा नाभिरायजी के राजभवन में इन्द्र-इन्द्रानी एवं मनुष्यों द्वारा बधाइयां, नृत्य महाराजा द्वारा जन्मोत्सव, जिसमें याचकों को दान दिया जाय। कुबेर द्वारा रत्नवृष्टि की जाय। आनन्दोत्सव मनाया जाय।

मातृका मंत्र, सुरेन्द्र मंत्र, वर्धमान मंत्र का जाप करना।

१. मातृका मंत्रः-

ओं नमोऽर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व श ष स ह क्ली ह्री क्रौं स्वाहा। (मंत्राराधन १०८ बार)

२. सुरेन्द्र मंत्र

ओं ह्लां वषट् णमो अरहंताणं संवौषट् ओं ब्लूं क्लीं द्रीं द्रां ह्रीं क्रौं आ सः ओं नमोऽर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व, श ष स ह, ल क्षः क्ली ह्रीं क्रौं स्वाहा। (मन्त्राराधन १०८ वार करें)

३. वर्धमान मंत्र

ओं णमो भयवदो वड्ढमाणस्स रिसहस्स जस्स चक्कं जलं तं गच्छइ आयासं पायालं लोयाणं भूयाणं जये वा विवादे वा रणांगणे वा थंभणे वा मोहणे वा सव्वजीवसत्ताणं अपराजिदो भवदु मे रक्ख रक्ख स्वाहा। (मंत्राराधन १०८ वार करें)

मंगलाष्टक, दिग्बंधन, रक्षामंत्र, शांतिमंत्राराधन पात्रशुद्धि, नित्यमह पूजन विसर्जन के पश्चात् पंचकल्याणकस्तोत्र पाठ एवं भक्तियां पढ़कर जन्म की क्रिया करना चाहिए।

प्रथम चारों इन्द्राणी, कुबेर इन्द्राणी, अष्टदेवियां थालियों में पूजा सामग्री पीले सरसों, अष्टगंध, सर्वौषधि, आरती आदि लेकर माता की तीन प्रदक्षिणा करें। देवियां माता की सेवा कर रही हों। इन्द्राणियां माता की आरती करें और जल द्वारा स्थान की शुद्धि करें।

देवियों में जातिकर्मस्थापना [1]

भृगाराब्दातपत्रोज्ज्वलचमरुहाण्युद्वहंत्योष्टशो या
द्वात्रिंशद्दिक्कुमार्यो जिनवपुषिभजंत्यंविकायाश्चतस्रः।
गेहं विद्युत्कुमार्यो रुचककवरनगा ग्रास्पदाद्योतयंते
या चाष्टौ जातकर्मादधति तदनुगास्ताः स्फुरंत्वत्रधरन्याः ॥

ओं रुचिकवर गिरीन्द्र शिखरनिवासिन्यो विजयादिदेव्यो यथास्वमर्हत्प्रभुमिहेदानी परिचरंत्विति स्वाहा। (मंजूषा और देवियों पर पुष्प क्षेपण करें)

'वस्त्रापनयन क्रिया' [2]

यस्मिन्नुत्पद्यमाने सकल मघवता मुत्तमांगानि नेमुः
चेलुश्चित्तानि पीठान्यपिचलदचलाभूतधात्रीचकंपे।
अंभोधिश्चोज्जजृंभे सुरकुजनिकरः संववर्षप्रसूनम्
मत्वार्हन्तं तमेनां प्रतिकृति मधुनावस्त्रमुत्सारयामि ॥

ओं नमोऽर्हते भगवते श्रीमते त्रिभुवन तिलकोत्तमांगाय दिगंवरायज्योतिर्मण्डलाय देवेन्द्रवरमुकुटमणिगणकिरण सलिलधाराकृतपदाभिषेकायद्वादशगणसमन्वितसमग्र समवसरणसंपत्सहितायवृषभादिवर्द्धमानपर्यन्त तीर्थकराय, ऊर्ध्वमुख मोक्षनायकाय नमः (इति पठित्वा प्रतिमाच्छादित वस्त्रमपनयेत्)

मंजूषा के ऊपर का वस्त्र अलग करे।

किं तां सवित्रीमिह वर्णयामि किं चर्चये लग्नमथास्पदं तत्।
यदेषदेवो भुवनत्रयैकगुरुः स्वयं स्वजसवेधिचक्रे ॥
पुण्याहमद्याद्य मनोरथा नः पूर्णा जगंत्यद्य सनायकानि
प्रमोदते कोऽद्य न चेतनोस्मिन्नृजेपिजन्मांत्यमिदं प्रपन्ने ॥

जिनजन्म स्थापनाय तस्या अन्यासां च प्रतिष्ठेय - प्रतिमानामुपरि पुष्पाक्षतं क्षिपेत् [3]

(जन्मकल्याणक स्थापन हेतु सब प्रतिमाओं पर पुष्प क्षेपण करें)

---

(1) पं. आ. ध., प्रतिष्ठा सारोद्धार ४/९१/३७ (२) श्री जे. दे., प्रतिष्ठा तिलक पाठ ४४३ श्लोक

(2) पं. आ. ध., प्रतिष्ठा सारोद्धार ४/९०/३३ एव ३४

(3) पं. आ. ध., प्रतिष्ठा सारोद्धार ४/९०/...

जन्म क्रिया

(मंजूषा से प्रतिमा निकालने की विधि)

शुभे विलग्ने सुनवांशके वा जिनेन्द्रजन्मप्रबभूवयद्वत् ।
मंजूषकान्तर्गतमाशुबिम्बं निष्काशयेदार्यवरः कराभ्यां ।। [१]

आचार्य सावधानी पूर्वक दोनों हाथों से विधिनायक को मंजूषा से बाहर निकालें एवं भद्रासन मातृकायंत्र सुरेन्द्रयंत्र भी निकालकर मंजूषा पर दोनों यंत्र रखकर प्रतिमा स्थापित करें । देवियां सफेद ध्वजायें ऊपर उठायें और चतुर्निकाय देव वादित्रों की ध्वनि करें । तीन दीपक जलाकर जन्म से तीन ज्ञान की कल्पना करें ।

(समस्त प्रतिमाओं के वस्त्रापनयन)

देवानां नमयन् शिरांसि समनांस्याकंपयन्नासना -
न्यभ्र निर्मलयन् सदिक् सुमनसो देवद्रुमैर्वर्षयन् ।
जन्यन् शीत सुगंधिमंदमनिलं यः सिन्धुमुद्वेलप -
न्नाधुन्वन् स धराधरां च निरगात् कुक्षेः शुभेह्नोषसः ।।

ओं प्रतिष्ठेय प्रतिमायां वस्त्रापनयनम् [२] (समस्त प्रतिमाओं के वस्त्र निकाल दें)

विधिनायक और समस्त प्रतिमाओं की जन्म की क्रिया करें ।

ओं ह्री श्रीं क्षीं भूः स्वाहा (भूमि शुद्धि करें)

ओं ह्रीं अर्ह क्ष्मं ठः ठः स्वाहा (पीठ स्थापन करें)

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतर जलेन पीठ प्रक्षालनं करोमि (पीठ प्रक्षालन करें)

नाकेन्द्रनागेन्द्रनरेन्द्रभास्वत्कोटीरधृष्टोज्ज्वलपादपीठं
आरोपये लोकजितं जिनेन्द्रं श्रीवर्णकीर्णाक्षतमध्यपीठं ।।

ओं ह्रीं अर्ह श्रीलेखनं करोमि (पीठ पर श्री लिखें) [३]

वादित्रनालोल्वणनंद नंद जयेति शब्दप्रभृतीनुदीर्य ।
भद्रासने स्थाप्यसुसिद्धमंत्रैः पुष्पप्रकीर्णावलिमुत्क्षिपेत् ।।

ओं ह्री त्रैलोक्योद्धरणधीरं जिनेन्द्रस्यप्रतिकृतिं भद्रासने उपवेशयामि [४]

(विधिनायक को भद्रासन पर स्थापित करें)

अनन्यसाधारणसद्गुणानां तव स्मरन्नस्तमितस्मरार्तेः ।
जिनेन्द्रसाक्षात्कृतसर्वतत्त्वं त्वमात्मनः सन्निहितं करोमि ।।

---

(१) आ. ज. से., प्रतिष्ठा पाठ श्लोक ७५८ (२) पं. आ. ध., प्रतिष्ठा सारोद्धार ४/९०/३२
(३) श्री ने. दे. प्रतिष्ठा तिलक पृष्ठ ४८ (४) आ. ज. से , प्रतिष्ठा पाठ श्लोक ७५९

ओं उसहाय दिव्व देहाय सज्जोजादाय महप्पण्णाय अणंत चउट्ठाय परमसुह पइट्ठयाय णिम्मलाय सयंभवे अज्जरामर परमपदपत्ताय परमपदाय मम इत्थविसण्णि हिदाय स्वाहा[१] (इन्द्र विधिनायक का सात बार स्पर्श करे)

ओं ह्रीं क्षीरसमुद्रवारिपूरितेनमणिमयमंगलकलशेन भगवदर्हत्प्रतिकृतिं स्नपयामः (सब प्रतिमाओं का अभिषेक करे)

इन्द्रो जिनेन्द्र स्नपनावसाने दिव्यांगरागेणयमालिलेप ।
कर्पूरकालागुरु कुंकुमाढ्यं श्रीचन्दनेनास्य समालभें ऽगम् ।।[२]

ओं ह्रीं सहजसौगन्ध्यबंधुरांगस्यगंधलेपनं करोमि
(इन्द्राणी सब प्रतिमाओं को उबटन लगावें)

ओं ह्रीं श्रीं भगवदर्हत्प्रतिकृतिं शांतिधारां गृह्णीध्वं गृह्णीध्वं अर्हं नमः भद्रं भवतु जगतां शान्तिधारां निःपातयामि । शांतिकृद्भ्यः स्वाहा (सौधर्म इन्द्र अभिषेक एवं शांतिधारा करे)

सत्यजाताय स्वाहा ।	अर्हज्जाताय स्वाहा ।	दिव्यजाताय स्वाहा ।
दिव्यार्चजाताय स्वाहा ।	नेमिनाथाय स्वाहा ।	सौधर्माय स्वाहा ।
कल्पाधिपतये स्वाहा ।	अनुचराय स्वाहा ।	परम्परेन्द्राय स्वाहा ।
अहमिंद्राय स्वाहा ।	परमार्हजाताय स्वाहा ।	अनुपमाय स्वाहा ।

सम्यग्दृष्टे२ कल्पपते २ दिव्यमूर्ते२ वज्रनामन्२ स्वाहा ।
सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु । [३]
(मंत्र पढ़ते हुये पुष्प क्षेपण करें)

क्रियाकलाप संवेत्तुरीश्वरस्येश्वरक्रियाः ।
सस्कारयामास पुनर्मंत्रप्रांशुभिरुत्तमैः ।।[४]

ओं ह्रीं इक्ष्वाकुकुले - नाभिभूपतेर्मरुदेव्यामुत्पन्नस्यादि - देवपुरुषस्य ऋषभदेवस्वामिनोऽत्रबिम्बे वृषभांकितत्वात्तद् गुणस्थापनं तेजोमयं करोमि ।
(प्रत्येक तीर्थकर के कुल, माता पिता का नामोच्चारण करना चाहिये ।)

ओं ऋषभादि दिव्यदेहाय सद्योजाताय महाप्रज्ञाय अनंतचतुष्टयाय परमसुखप्रतिष्ठिताय निर्मलाय स्वयंभुवे अजरामर पदप्राप्ताय चतुर्मुखपरमेष्ठिनेऽर्हते त्रैलोक्यनाथाय त्रैलोक्यपूज्याय अष्टदिव्यनागप्रपूजिताय देवाधिदेवाय परमार्थ सन्निहितोऽसि स्वाहा ।
(आस्यां प्रतिमाया अंगानि संस्पृशन् गुणाधिरोपणं कुर्यात् ।)
(आस्यां प्रतिमाया अंगानि संस्पृशन् गुणाधिरोपणं कुर्यात् ।) विधिनायक और समस्त प्रतिमाओ पर गुण आरोपण के लिए पुष्प क्षेपण करें । पश्चात् सब प्रतिमाओं को स्पर्श करते हुये गुणो की स्थापना करें एवं दश दीपक क्रम से जलावें ।

---

(१) श्री ने. दे., प्रतिष्ठा तिलक पृष्ठ ४५७ (२) वही, पृष्ठ ५१३ (३) आ. ज. से., प्रतिष्ठा पाठ पृष्ठ १३७ (४) वही, श्लोक ७९०

जन्मातिशय संस्कारारोपण

निः स्वेदत्वमनारत विमलतासंस्थानमाद्यं शुभं ।
तद्वत्संहननं भृशं सुरभिता सौरूप्यमुच्चैः परम् ॥
सौलक्षण्यमनंतवीर्यमुदितिः पथ्यप्रियासृक्य यः ।
शुभ्रं चातिशया दशेह सहजाः सन्त्वर्हदंगानुगाः ॥
सनवव्यंजनशतैरष्टाग्रशतलक्षणैः ।
विचित्रं जगदानंदि यज्जिनांगं तदस्त्विदं ॥ (१)

१. ओं अस्मिन् बिम्बे निःस्वेदत्वगुणो विलसतु स्वाहा ।
२. ओं अस्मिन् बिम्बे मलरहितत्वगुणो विलसतु स्वाहा ।
३. ओं अस्मिन् बिम्बे क्षीरवर्णरुधिरत्वगुणो विलसतु स्वाहा ।
४. ओं अस्मिन् बिम्बे समचतुरस्रसंस्थानगुणो विलसतु स्वाहा ।
५. ओं अस्मिन् बिम्बे वज्रवृषभनाराचसंहननगुणो विलसतु स्वाहा ।
६. ओं अस्मिन् बिम्बे अद्भुतरूपगुणो विलसतु स्वाहा ।
७. ओं अस्मिन् बिम्बे सुगंधितशरीरगुणो विलसतु स्वाहा ।
८. ओं अस्मिन् बिम्बे अष्टोत्तरसहस्रलक्षणव्यंजनत्वगुणो विलसतु स्वाहा ।
९. ओं अस्मिन् बिम्बे अतुलबलवीर्यत्वगुणो विलसतु स्वाहा ।
१०. ओं अस्मिन् बिम्बे हितमितप्रियवचनत्वगुणो विलसतु स्वाहा । (२)

इन्द्र समस्त प्रतिमाओं का स्पर्श कर पुष्प क्षेपण करें और समीप में एक एक मंत्र पढकर दीपक की स्थापना करें। गुणारोपण क्रिया प्रत्येक प्रतिमा में होना चाहिये । (एवं दशातिशयान् संस्थाप्य तदनंतरं मंत्राभ्यां अंगानि संस्पृशेत् ।[१])

ओं अर्हद्भ्यो नमः, नवकेवललब्धिभ्यो नमः, क्षीरस्वादुलब्धिभ्यो नमः, मधुरस्वादुलब्धिभ्यो नमः, संभिन्नश्रोतृभ्यो नमः, पादानुसारिभ्यो नमः, कोष्ठबुद्धिभ्यो नमः, बीजबुद्धिभ्यो नमः, सर्वावधिभ्यो नमः, परमावधिभ्यो नमः ।

ओं ह्रौं वल्गु वल्गु निवल्गु निवल्गु सुश्रवणे ओं ऋषभादिवर्धमानांतेभ्यो वषट् वषट् स्वाहा । (इति मंत्राभ्यां अंगानि संस्पृशेत् ।)

ओं णमो भयवदो वड्ढमाणस्स रिसहस्स जस्स चक्कं जलंतं गच्छइ आयासं पायालं लोयाणं भूयाणं जये वा विवादे वा रणांगणे वा थंभणे वा मोहणे वा सव्वजीवसत्ताणं अपराजिदो भवदु मे रक्ख रक्ख स्वाहा । (इति वर्धमानमंत्रेण चांगानि संस्पृशेत् ।)

इस वर्धमान मंत्र द्वारा वर्धमान यंत्र पर धारा करें और प्रतिमाओं का स्पर्श करें तथा वर्धमान यंत्र प्रतिमा के सामने स्थापित करें ।

---

(१) पं. आ. ध., प्रतिष्ठा सारोद्धार ४/९१/३५, ३६
(२) आ. ज. से., प्रतिष्ठा पाठ पृष्ठ - २५५-५६

नामकरण

गृह्णन्ति यस्य समयामृतधौतचित्ता नामानि कोटिमृषयः कलुषक्षयाय ।
मेरौ महेन्द्र इव संव्यवहारहेतोस्तंव्याहरेहमिहयष्टमतेन नाम्ना ॥ [१]

(नामकरणार्थ प्रतिमोपरि पुष्पाक्षतं क्षिपेत्)

ओं अयं महानुभावः परमेश्वरो यजमानामि मतेननाम्ना वृषभेश्वरो भवतु (इन्द्रेण वक्तव्यम्) वृषभेश्वरो भवतु । इति सर्वैः प्रति वक्तव्यम् ।

(वृषभनाथ नाम रखा गया यह घोषणा करें) [२]

तदनंतर शांतिभक्ति पढकर कार्य समाप्त करें । महाराज नाभिराय द्वारा जन्मोत्सव किया जाय । याचकों को दान दिया जाय, इन्द्र इन्द्राणियों द्वारा बधाइयां एवं गीत नृत्य किए जायें । सामूहिक बधाइयां होना चाहिए । शांतिहवन करके कार्य समाप्त करें । प्रातः या मध्याह्न भोजनोपरांत सौधर्मेन्द्र इन्द्र परिवार सहित ऐरावत हाथी पर आरूढ होकर अयोध्या नगर (मण्डप) की तीन प्रदक्षिणा बैण्ड बाजों के साथ करे । पश्चात् सौधर्मेन्द्र व इन्द्राणी, हाथी से उतर कर राजमहल (यज्ञवेदी) में आये । राजमहल में सौधर्मेन्द्र विचार मग्न होता है कि तीर्थकर कुमार के प्रथम दर्शन करने का मुझे सौभाग्य इसलिए नहीं कि प्रसूति-गृह में पुरुष का जाना निषेध है । अतएव विवश होकर इन्द्राणी को आज्ञा देता है ।

देवी जाहु प्रसूतिगृह, लावो तीर्थकुमार ।
माता को दुख होय ना, रखना यही विचार ॥

देवी शीघ्र प्रसूतिगृह मे जाकर, माता को मायामयी निद्रा में सुलाकर और एक मायामयी बालक माता के पास लिटाकर, तीर्थकर कुमार का दर्शन करावो । शची, आज्ञानुसार कार्य होगा यह कहती हुई कुमार तीर्थकर को लाती है। इन्द्र हाथ बढाता है इन्द्रानी पीछे हट जाती है । बहुत प्रतीक्षा के बाद तीर्थकर कुमार के हजार नेत्रों से दर्शन कर आनंदविभोर होता हुआ, शची सहित तीर्थकर कुमार को ऐरावत हाथी पर बैठा पाण्डुक वन की ओर प्रस्थान करता है । पाण्डुक शिला की तीन प्रदक्षिणा कर उसके ऊपर मध्य के सिंहासन पर विराजमान कर जन्माभिषेक की तैयारी करता है ।

(१) पं. आ. ध., प्रतिष्ठा सारोद्धार ४/९८/७७
(२) किन्हीं आचार्यों ने नामकरण पाण्डुक शिलापर अभिषेक पश्चात् लिखा है ।

जन्माभिषेक

(पाण्डुक शिला की क्रियाएं)

मंगलाष्टकपाठ ,दिग्बंधन, रक्षामंत्र, शांतिमंत्राराधन करें। सिद्ध, चारित्र, तीर्थकर एवं शांति भक्तियां पढ़ें।

पाण्डुक शिला की क्रियायें

यस्यार्थ क्रियते कर्म सः प्रीतो नित्यमस्तु मे।
शान्तिकं पौष्टिकं चैव सर्वकार्येषु सिद्धिदः ॥
(पाण्डुक शिला स्थल पर पुष्प क्षेपण करें)

श्रीभद्राशालकं सौमनसमुरु वनं नन्दनं पाण्डुकाख्यं
यस्योच्चैरंतरीयं परिवृत्तरसनामुत्तरीयं क्रमेण।
उष्णीषं चानुकुर्यान्नवनवति सहस्रोन्नतिर्योजनानां
ख्यातो मेरु:स साक्षान्मणिकनकमयोस्त्वेतदेवोच्चपीठम्।[1]

(महामेरु भाव स्थापनाय तन्मण्डपे सर्वतः पुष्पाञ्जजलिं क्षिपेत्)

यो योजनानिशतमायतिमेतदर्ध व्यासं विभर्ति विशदाष्ट तदुच्छ्रयं च
अर्धेन्दु बिब सदृशी सुरभिः सुरम्या सा पाण्डुकाव्हय शिलेय मिहास्तुवेदी।[2]

(पाण्डुका शिला स्थापनार्थ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

पाण्डुक शिलाशुद्धिमंत्र

ओं क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः पाण्डुक शिलाशुद्धिं करोमि।

(जल से पाण्डुक शिला की शुद्धि करें)

ओं जन्माभिषेक प्रतिज्ञायै पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

ओं ह्रीं पवित्रतर जलेन पीठ प्रक्षालनं करोमि।

ओं ह्रीं श्रीं अर्ह श्री लेखनं करोमि

(पाण्डुक शिला पर श्री लिखें)

ओं त्रैलोक्योद्धरणधीरजिनेन्द्रस्यप्रतिकृतिः पाण्डुक शिला पीठे तिष्ठ तिष्ठ

(विधिनायक प्रतिमा अर्धचन्द्राकार शिला पर विराजमान करें)

कुन्देन्दुहारधवलोत्तमदुग्धपूरतत्पंचमाम्बुनिधिभूरिपयःप्रपूर्णाः।
ये योजनास्य ततयोष्ट च तानि निम्नास्तेमी भवन्तु कलशाः कलधौतजाताः।
स्वस्तये कलशस्थापनं करोमि (कलश स्थापन करें)

---

(१) श्री ने. दे., प्रतिष्ठा तिलक पृष्ठ ४५५, श्लोक १८ (२) वही, श्लोक १९
(३) वही पृष्ठ ४५९ श्लोक २५

ओं ह्रीं श्रीं वं मं हं सं तं पं झ्वी क्ष्वीं हं सः नमोऽर्हते मणिमय मंगल कलशेन भगवदर्हत्प्रतिकृतिं सुगंधजलेन स्नपयामः

(जल से अभिषेक करें) तत्पश्चात् निम्न मंत्र द्वारा १००८ कलशों से अभिषेक करें

ओं ह्रीं मणिमय मंगल कलशेन भगवदर्हत्प्रतिकृतिं सुगंधजलेन स्नपयामि (स्नपयामः)

गंधलेपनमंत्र (यहां से क्रिया परदा लगाकर करें)

इन्द्रो जिनेन्द्रस्नपनावसाने दिव्यांगरागेणयमालिलेप
कर्पूरकालागुरु कुंकुमाढ्यं श्रीचन्दनेनास्य समालभेंऽगम् [१]
ओं ह्रीं सहजसौगन्ध्य बंधुरांगस्यगंधलेपनं करोमि ॥
(इन्द्राणी केशरयुक्त उबटन करे)

ओं ह्रीं श्रीं वं मं हं सं तं पं झ्वीं क्ष्वीं हं सः नमोऽर्हते स्वाहा

(इन्द्र जल से अभिषेक करें)

इन्द्रानी द्वारा प्रक्षालन एवं वस्त्राभरण पहनाना

अतिशयिशरीरे तीर्थभर्तु पवित्रे जलकणलवलेशो नांगलग्नो बभूव ।
स्फटिक इव तथापि स्वामिसेवात्तचित्ता क्रतुपतिललनांगं मार्जयामास भर्तु. ॥ [२]

ओं शुद्धांशुकेन मार्जनं करोमि (इन्द्रानी मार्जन करें)

विभूषयामास जगत्त्रयस्य विभूषणं दिव्यविभूषणाद्यै ।
पुरंदरोऽयं जिनचन्द्रबाल स एव देवो जिन बिम्ब एष ॥ [३]

ओं श्री जिनांगं वस्त्रेण विभूषयामि (वस्त्र पहिनावें)

यस्योन्मील्य निसर्गजे श्रवणयो वज्रेण रन्ध्रे हरिः ।
शच्या सेचनकं वपुस्त्रिजगतां भक्त्याभि संस्कारयेत् ॥
त्रैवर्ण्योज्ज्वलसूत्र दृब्धयवमत्सिद्धार्थरत्नश्रिय ।
श्चर्याचारु भुजेऽस्य भूषणमयं बध्नन्तु ताः कंकणम् ॥ [४]

सद्गंधैरनुलिप्य मूर्ध्नि मुकुटं चूडामणि कौशिके ।
भाले सत्तिलकं श्रुतौ मणिचिते सत्कुण्डले लंबिकाम् ॥
मुक्तावल्यथ कण्ठिकां गलतटेष्वाबापकाश्चागदः ।
....॥
....

केयूरं भुजयोः पदेऽस्तु कटके मंजीरयुग्मादिकाः ।
आभूषाः परधापने नवमहामूलेसुरेन्द्रालयात् ॥
आनीतानि दधाति न क्षिति भवानीन्द्र प्रियेत्यादरा ।
दाविर्भूतिमतिर्नतोत्तमतनुर्भूषां चकार स्वयं ॥ [५]

---

(१) श्री ने. दे., प्रतिष्ठा तिलक पृष्ठ ५१३ श्लोक ७ (२) आ. ज. से., प्रतिष्ठा पाठ श्लोक - ८६९
(३) श्री ने. दे., प्रतिष्ठा तिलक पृष्ठ ५०० (४) पं. आ. ध. प्रतिष्ठा सारोद्धार ४/९८/७६
(५) आ. ज. से., प्रतिष्ठा पाठ पृष्ठ २५० श्लोक ७७० - ७७१

इन्द्राणी तीर्थकर कुमार को कुण्डल, कंकण, मुकुट, चूड़ामणि, तिलक, माला, बाजूबंद, कटि-मेखला, कटक आदि आभूषण पहिनावें, तिलक करें, अंजन लगावें।

आरार्तिकेषु मणिरत्नशिखोच्चयेषु, पुष्पांजलिप्रकर इन्द्रमखाधिराड्भ्यां।
निक्षिप्यमाण उदभात् कनकाचलेषु स्नानीयनीर निकरोऽथ जिनांगकांतौ। [1]

(इन्द्राणी आरती करें)

आरती

सुरपति ले अपने शीश, जगत के ईश गये गिरराजा,
जा पाण्डुक शिला विराजा।टेक।

शिल्पी कुबेर वहां आकर के, क्षीरोदधि मेरुलगाकर के
रचि पैड ले आये सागर का जल ताजा,
फिर नह्वन कियो जिनराजा ॥१॥

नीलम पन्ना वैडूर्यमणि, कलशा लेकर के देवगणी
इक सहस आठ कलशा लेकर नभ राजा,
फिर नह्वन कियो जिनराजा ॥२॥

वसुयोजन गहराई वाले, वऊ योजन चौड़ाई वाले
इक योजन मुख के कलश ढरे शिशुनाथा,
नहि जरा डिगे शिशुनाथा ॥३॥

सौधर्म इन्द्र अरु ईसाना, प्रभु कलश करें धर युगपाना,
अरु सनत कुमार महेन्द्र दोई दिविराजा
शिर चंवर ढुरावें साजा ॥४॥

शेष दिविज जयकार किया इन्द्राणी प्रभुतन पौंछ लिया,
शुभ तिलक दृगांजन शची कियो जिनराजा
नाना भूषण से साजा ॥५॥

ऐरावत पुनि प्रभु लाकर के, माता की गोद बिठाकर के
अति अचरज ताण्डव नृत्य कियो दिविराजा
स्तुति करके जिनराजा ॥६॥

चाहत मन 'मुन्नालाल' शरण, वसु कर्म जाल दुःख दूरकरन
शुभ आशिषमय वरदान देहु जिनराजा,
मम नह्वन होय गिरिराजा ॥७॥

---

(1) आ. ज. से., प्रतिष्ठा पाठ श्लोक ७९४

इन्द्र द्वारा स्तवन[1]

त्वं देववीतरागोऽसि नार्थ स्तवन निन्दने । तथापिभक्ति वशगः स्तवीमि कतिचित्पदैः ॥१॥
मंगलंशरणं लोकोत्तमोऽर्हन् जिनराड्जिनः । सिद्ध आचार्य संपूज्यः साधु साधुपितामहः ॥२॥
प्राग्यः पापहरोऽधीशो निः कषायो गुणाग्रणीः । पावन परमं ज्योतिः परमेष्ठी सनातनः ॥३॥
अव्यक्तोव्यक्त मूर्तिस्वम लक्ष्यो लक्षणातिगः । सुलक्ष्यो लक्षणज्ञेयः पापशत्रुरु दारधीः ॥४॥
प्रणीतार्थः प्रमाणात्मा सुनयो नयतत्त्ववित् । प्रणधिः प्रणवो नाद्यो ज्ञानदर्शननायकः ॥५॥
पुराणपुरुषो ऽहार्यरूपोरूपातिगो कामहा । कमनो काम्यः कामगामी कलानिधिः ॥६॥
क्रम्रः क्रमयिता कान्तः क्रमनातीत कामुकः । कालुष्यहन्ताकामारिः कोपावेश हरोहरः ॥७॥
स्वयंभूर्विधिरु त्साहो धीरः सुकृत्भावनः । स्रष्टाभूतपतिः साक्षी त्रैलोक्यपरमेश्वरः ॥८॥
प्रभूष्णुरधिदेवात्मा विश्वराड् विश्वतोमुखः । विश्वयोनिर्जिष्णुरीशः संवदः पुण्यनायकः ॥९॥
धर्माबुवाहो धर्मज्ञो वेदविद् वदतांवरः । भव्यभानुर्मखज्येष्ठस्त्वंहि ब्रह्मपदेश्वरः ॥१०॥
भूष्णुः स्थिरतरः स्थाष्णुरचलो विमलोविभुः । महीयान् जातिसंस्करः कृतकृत्योमहस्पतिः ॥११॥
वाग्मी वाचस्पतिः प्राज्ञो गुणरत्नाकरोनिधिः । शास्ता सर्वज्ञईशान आप्तः सर्वत्रलोचनः ॥१२॥
कूटस्थो निर्विकारोऽस्ति नस्त्यवाच्य गिरांपतिः । स्याद्वादनायकोनेता मोक्षमार्गोपदेशकः ॥१३॥
निरीहः सुगतोभास्वान् लोकालोकविभावसुः । अनंतगुणसंपूज्योनित्ययज्ञोऽसि विश्वराड् ॥१४॥
एवमष्टोत्तरशता नाम्नां पातु बंधनात् । मोचय स्वात्मसंभूति देहि देहि महेश्वर ॥१५॥
निर्गलत्प्रेमधारांबुक्षालितांघ्रिसरोरुहः । मांगल्यपावनत्वादिलुब्धो विधिनियाकमः ॥१६॥

॥ इति स्तवन ॥

भाषा स्तवन[2]

पद्धरी- जय वीतराग हत रागद्वेष, क्षायिक दर्शन क्षायिक अदोष ।
तुम पार हरन हो निः कषाय, पावन परमेष्ठी गुण निकाय ॥
तुम नय प्रमाण ज्ञाता अशेष, श्रुतज्ञान सकल जानो विशेष ।
तुम अवधिज्ञानधारी विशाल, मतिज्ञान धरण सुखकर कृपाल ॥
तुम काम रहित हो काम जीत, तुम विद्या निधि हो कर्मजीत ।
तुम शांत स्वभावी स्वयंबुद्ध, तुम करुणानिधि धर्मी अक्रुद्ध ॥
तुम वदतांवर कृतकृत्यईश, वाचस्पति गुण निधि गिराईश ।
तुम मोक्षमार्ग उपदेशकार, महिमा तुम्हरी को लहे पार ॥

दोहा- नाम लिए थुति के किए, पातक सर्वपलाय ।
मंगल होवे लोक में स्वात्मभूति प्रगटाय ॥

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ७७४ से ७८९ (२) ब्र. शी. प्र., प्रतिष्ठा सार संग्रह पृष्ठ १०७

अमृत स्थापन [१]

अंगुष्ठयोरमृतदुग्धविधिं प्रक्लृप्य बालार्यमप्रतिभुवः सविधे कुमारान् ।
संयोज्य पंचशतकान् वसनान्नपान - भूषाफलादिभिरुपास्य जगाम कामं ॥

ओं ह्रीं श्री तीर्थंकरकुमारांगुष्ठेऽमृतं स्थापयामि ।

इन्द्र तीर्थकर कुमार के दाहिने पांव के अंगुठे में इक्षुरस द्वारा अमृत स्थापन करें ।

यदि समयाभाव से समस्त इन्द्र एवं इन्द्राणियों सहित पूजा पाण्डुक शिला पर जन्माभिषेक के समय न हो सके, तो दूसरे दिन सामूहिक पूजा जन्मकल्याणक की करना चाहिए । **जन्माभिषेक के समय सौधर्मेन्द्र इन्द्राणी द्वारा पूजा करा लेना आवश्यक है।**

जन्मकल्याणक-पूजा

स्वस्वस्थानकवन्दिताः सुरवरैर्गत्वा स्वपक्षैः सम-
मागत्यामर-वाहनैः सुविमलैर्मेरोर्मु मुदा मस्तके ।
नीत्वा मातृगृहात् सुक्षीरसलिलैर्येनाप्य संपूजिताः,
जन्माप्तान् वृषभादिवीरजिनपान् संस्थापयामो वयं ॥

ओं ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रा अत्र अवतर अवतर संवौषट् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ, ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

मंदाकिनीजातसुनीरपूरैः शीताप्तमोदागतभृंगवृन्दैः ।
ये स्नाप्य शक्रैर्महिता सुमेरौ तान् संयजे हृत्पदजन्मजातान् ॥

ओं ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीचन्दनैश्चन्दनसद्रवैश्च, वरेन्द्रयोग्याप्तसुवर्णवर्णैः ।
ये स्नाप्य शक्रैर्महिता सुमेरौ तान् संयजे हृत्पदजन्मजातान् ॥

ओं ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

नरेन्द्रभोगादिषु शालिजातैरभंगकोट्याक्षतपुंजकैश्च ।
ये स्नाप्य शक्रैर्महिता सुमेरौ तान् संयजे हृत्पदजन्मजातान् ॥

ओं ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

सहस्रपद्मैः सितपर्णकाभिः श्रीसंगकुन्दादिसुकेतकीभिः ।
ये स्नाप्य शक्रैर्महिता सुमेरौ तान् संयजे हृत्पदजन्मजातान् ॥

ओं ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

(१) आ. ज. से. प्र. पा. श्लोक ७९७

सद्योऽत्र पक्वान्नसुमोदकैश्च, शताज्यमुद्‌गंधसुव्यजनैश्च ।
ये स्नाप्य शक्रैर्महिता सुमेरौ तान् संयजे हृत्पदजन्मजातान् ॥
ओं ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दशेधने दर्शितविश्वसार्थैस्तमो विनाशैर्वरदीपकैश्च ।
ये स्नाप्य शक्रैर्महिता सुमेरौ तान् संयजे हृत्पदजन्मजातान् ॥
ओं ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीखण्डकालागुरुधूपधूम्रैः सामोदिताशेषसुरेन्द्रलोकैः ।
ये स्नाप्य शक्रैर्महिता सुमेरौ तान् संयजे हृत्पदजन्मजातान् ॥
ओं ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

घोटाभद्राक्षार्चफलावलीभिः रेवारुकर्कारिसुमोचचोचैः ।
ये स्नाप्य शक्रैर्महिता सुमेरौ तान् संयजे हृत्पदजन्मजातान् ॥
ओं ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

नीराक्षतैश्चंदनपुष्पदीपैनैवेद्यधूपैश्च फलार्घ्यकैश्च ।
ये स्नाप्य शक्रैर्महिता सुमेरौ तान् संयजे हृत्पदजन्मजातान् ॥
ओं ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रत्येक अर्घ्य

पवित्रे चैत्रमासे च कृष्णे सुनवमी दिने ।
जातमादिजिनं चर्चे शुद्धधर्मप्रकाशकम् ॥
ओं ह्रीं चैत्रकृष्णानवम्यां जन्मकल्याणकप्राप्तवृषभदेवायार्घ्यम् ॥१॥

माघमासे शुचौ पक्षे पवित्रे दशमीदिने ।
सुलग्ने ह्यजितं देवं पूजयामि सुजन्मजम् ॥
ओं ह्रीं माघशुक्लादशम्यां जन्मकल्याणकप्राप्तअजितदेवायार्घ्यं ॥२॥

शोभने कार्तिके मासे पूर्णिमायां तु संभवं ।
पूजयामि जिनाधीशमष्टद्रव्यसमुच्चकैः ॥
ओं ह्रीं कार्तिकशुक्लापूर्णिमायां जन्मकल्याणकप्राप्तसंभवजिनायार्घ्यं ॥३॥

माघमासे शुभ्रपक्षे विशुद्धे द्वादशीदिने ।
पूजयाम्यहमर्घेण चाभिनंदनस्वामिनम् ॥
ओं ह्रीं माघशुक्लाद्वादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तअभिनंदनायार्घ्यं ॥४॥

चैत्रमासे शुक्लपक्षे विशुद्धैकादशीदिने ।
सुमति बुद्धिदातारं यजामि जन्मसंगतम् ॥

ओं ह्रीं चैत्रशुक्लाएकादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तसुमतिदेवायार्घ्यं ॥५॥

कार्तिके श्यामपक्षे च त्रयोदश्यां सुवासरे ।
पद्मप्रभं महादेवं जगत्सर्वसुखास्पदम् ॥

ओं ह्री कार्तिककृष्णात्रयोदश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तपद्मप्रभायार्घ्यं ॥६॥

ज्येष्ठमासे शुभे शुक्ले, द्वादशे दिवसे शुचौ ।
मेरौ शक्रकृतस्नानं यजे सुपार्श्वदेवकम् ॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठशुक्लद्वादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तसुपार्श्वनाथायार्घ्यं ॥७॥

पौषकृष्णे शुभेघस्त्रे चैकादश्यां जिनोत्तमं ।
महासेनात्मजं चर्चे स्नापितं क्षीर सज्जलैः ॥

ओं ह्री पौषकृष्णैकादाश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तचन्द्रप्रभजिनायार्घ्यं ॥८॥

शुभ्रमार्गशिरे मासे पवित्रे प्रतिपद्दिने ।
पुष्पदन्तं यजे नित्यमिक्ष्वाकुकुलसंभवम् ॥

ओं ह्री मार्गशीर्षशुक्लाप्रतिपदायां जन्मकल्याणकप्राप्तपुष्पदन्तायार्घ्यं ॥९॥

माघकृष्णे सुद्वादश्यां जयजन्मजिनेशिनः ।
सुनंदादृढरथावासे कृतोत्सवसुराधिपैः ॥

ओं ह्रीं माघकृष्णाद्वादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तशीतलनाथायार्घ्यं ॥१०॥

फाल्गुने कृष्णपक्षे च ह्येकादश्यां सुतोत्तमं ।
यजे स्वर्णगिरौ स्नानं विमलाख्यनृपालये ॥

ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तश्रेयोजिनायार्घ्यं ॥११॥

फाल्गुने श्यामले पक्षे चतुर्दश्यां यजे मुदा ।
स्नापितं मेरुशिखरे जन्मजातं नृपालये ॥

ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णाचतुर्दश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तवासुपूज्यायार्घ्यं ॥१२॥

माघार्जुनचतुर्थ्याच कृतवर्मनृपालये ।
जन्मोत्सवं कृतं देवै मेरौ चर्चे जिनाधिपम् ॥

ओं ह्री माघशुक्लाचतुर्थ्या जन्मकल्याणकप्राप्तविमलनाथायार्घ्यं ॥१३॥

ज्येष्ठकृष्णे सुद्वादश्यां सिंहसेननृपालये ।
जन्मोत्सवं कृतं शक्रैश्चर्चेऽनन्तजिनेश्वरम् ॥

ओं ह्री ज्येष्ठकृष्णाद्वादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तनन्तनाथायार्घ्यं ॥१४॥

पवित्रे माघमासे च शुक्ले त्रयोदशीदिने ।
धर्मनाथ यजे मेरौ जन्मस्नानं सुरैः कृतम् ।।

ओं ह्रीं माघशुक्लात्रयोदश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तधर्मनाथायार्घ्य ।।१५।।

ज्येष्ठमासे सुकृष्णेऽह चतुर्दश्यां जिनोत्तमं ।
विश्वसेनालये जन्मप्राप्त शाति यजे मुदा ।।

ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तशान्तिनाथायार्घ्य ।।१६।।

वैशाखार्जुनपक्षे च प्रतिपद्दिवसे शुभे ।
सूर्यराजगृहे जन्मप्राप्तं चर्चे हरिप्रियम् ।।

ओं ह्रीं वैशाखशुक्लाप्रतिपदायां जन्मकल्याणकप्राप्तकुंथुनाथायार्घ्य ।।१७।।

मार्गशीर्षे सुशुक्लाया चतुर्दश्या सुराधिपैः ।
मेरौ जन्मोत्सवं यस्य तमरं संयजेऽनिशम् ।।

ओं ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लाचतुर्दश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तअरनाथायार्घ्य ।।१८।।

मार्गशीर्षे शुचौ पक्षे विशुद्धैकादशीदिने ।
कुंभराजगृहे यस्य जन्मोत्सवं यजे मुदा ।।

ओं ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लैकादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तमल्लिनाथायार्घ्य ।।१९।।

वैशाखे कृष्णपक्षे च दशम्यां जन्मजातकं ।
पद्मावती सुमित्रस्य गृहे श्रीसुव्रतं यजे ।।

ओं ह्रीं वैशाखकृष्णादशम्यां जन्मकल्याणकप्राप्तमुनिसुव्रतनाथायार्घ्य ।।२०।।

आषाढे कृष्णपक्षे च दशम्यां विजयालये ।
नमिनाथसुजन्मान यजेऽह सज्जलादिकैः ।।

ओं ह्रीं आषाढकृष्णादशम्यां जन्मकल्याणकप्राप्तनमिनाथायार्घ्य ।।२१।।

श्रावणे शुक्लपक्षे च सुषष्ठ्यां जन्मजातकं ।
स्नानं सुराधिपैर्मेरौ कृतमर्चे सुहर्षतः ।।

ओं ह्रीं श्रावणशुक्लाषष्ठ्यां जन्मकल्याणकप्राप्तनेमिनाथायार्घ्य ।।२२।।

पौषमासे सुकृष्णे च विशुद्धैकादशी दिने ।
विश्वसेनालये जन्म यजे जातं महोत्सवम् ।।

ओं ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तपार्श्वजिनायार्घ्य ।।२३।।

चैत्रशुक्ले त्रयोदश्यां जन्मप्राप्तं महोत्सवैः ।
यजे जिनं महावीरं सिद्धार्थ च नृपांगणे ।।

ओं ह्रीं चैत्रशुक्ला त्रयोदश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तमहावीरायार्घ्य ।।२४।।

जयमाला

जन्मकालं परं प्राप्य येषां सुराः, सांगनाः सेन्द्रकाश्चागताः सत्वरं ।
पान्तु ते तीर्थपा जन्मजातावरा, जन्मदुःखहरा जन्मसौख्याकराः ॥

प्रेक्ष्य भक्त्यावरं पाणिनाचोद्धता, देवराजस्य याने सुखं स्थापिताः ।
पान्तु ते तीर्थपा जन्मजातावरा, जन्मदुःखहरा जन्मसौख्याकराः ॥

देवशैलस्य पांडुकवने स्थापितं पांडुकाविष्टरे स्थापिता वा वने ।
पान्तु ते तीर्थपा जन्मजातावरा, जन्मदुःखहरा जन्मसौख्याकराः ॥

स्वर्णकुंभैश्च ये क्षीरसिंधुभृतैर्दशशताष्टसंख्याचितैः क्षीरकाः ।
पान्तु ते तीर्थपा जन्मजातावरा, जन्मदुःखहरा जन्मसौख्याकराः ॥

स्वर्गजैर्भूषणैः श्रृंगशच्यांशुकैर्भूषिताः पूजिताश्चन्द्रश्रीखंडकैः ।
पान्तु ते तीर्थपा जन्मजातावरा, जन्मदुःखहरा जन्मसौख्याकराः ॥

अष्टसहस्रकैर्देवनामस्तुता, इन्द्रदत्ताख्यकाः सहस्त्रनेत्रेक्षिताः ।
पान्तु ते तीर्थपा जन्मजातावरा, जन्मदुःखहरा जन्मसौख्याकराः ॥

मातापित्रोः करे मेरुतो नीनुता शक्रवाद्यादिकैः सोत्सवे चर्चिताः ।
पान्तु ते तीर्थपा जन्मजातावरा, जन्मदुःखहरा जन्मसौख्याकराः ॥

घत्ता- अमरनिकरनारीपालितादेवबालैः, विविधशिशुर्विनोदैः क्रीडिताबृद्धिमाप्ताः ।
दिविजतरुजभोग्यंभोजकाश्चाष्ट मेदे, भजतगुणगतासां सन्तुमेद्यै शशिद्यैः ॥

ओं ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यम् ।

ये मेरौ स्नापिताः शक्रैः जन्मजातीनपुंगवाः ।
पूजिताः पांतु वो नित्यं शमसौख्याय संस्तुवे ॥

इत्याशीर्वादः

जन्मकल्याणक पूजा (हिन्दी)

जिननाथ चौबिस चरण पूजा करत हम उमगाय,
जग जन्म लेके जग उधारो जजे हम चित लाय।
तिन जन्म कल्याणक सु उत्सव इन्द्र आय सुकीन,
हम हूँ सुमरता समय को पूजत हिये शुचि कीन ॥

ओं ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतितीर्थकरा अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ओं ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतितीर्थकरा अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ओं ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतितीर्थकरा अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जल निर्मल धार कटोरी, पूजूँ जिन निज कर जोड़ी।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई ॥

ओं ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेभ्योजलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

चन्दन केशरमय लाऊं, भव की आताप शमाऊं।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई ॥

ओं ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

अक्षत शुभ धोकर लाऊ, अक्षय गुण को झलकाऊँ।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई ॥

ओं ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर पुहपनि चुनि लाऊं, निज काम व्यथा हटवाऊ।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई ॥

ओं ह्री जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेभ्योपुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान मधुर शुचि लाऊँ, हनि रोग क्षुधा सुख पाऊँ।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई ॥

ओं ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक करके उजियारा, निज मोह तिमिर निरवारा।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई ॥

ओं ह्री जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपायन धूप खिवाऊं, निज अष्ट करम जलवाऊं।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई ॥

ओं ह्री जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

फल उत्तम उत्तम लाऊं, शिवफल जासे उपजाऊं।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई ॥

ओं ह्री जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नर्व ० स्वाहा ।

सब आठो द्रव्य मिलाऊं, मैं आठों गुण झलकाऊं।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई ॥

ओ ह्री जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

२४ तीर्थकरों की जन्मकल्याणक तिथि के २४ अर्घ्य

वदि चैत नवमि शुभ गाई, मरुदेवि जने हरषाई।
श्री वृषभनाथ युग आदी, पूजूँ भव मेट अनादी ॥

ओं ह्री चैत्रकृष्णानवम्यां जन्मकल्याणकप्राप्त श्रीवृषभनाथजिनेंद्राय अर्घ्य ॥१॥

दशमी शुभ माघ सुदी की, विजया माता जिनजी की।
उपजे श्री अजित जिनेशा, पूजूँ मेटो सब क्लेशा ॥

ओं ह्री माघशुक्लादशम्यां जन्मकल्याणकप्राप्त श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय अर्घ्य ॥२॥

कार्तिक सुदि पूरणमासी, माता सुसैन हुल्लासी।
श्री सम्भवनाथ प्रकाशे, पूजत आपा पर भासे ॥

ओंह्री कार्तिकशुक्ला पूर्णमास्यांजन्मकल्याणकप्राप्त श्री संभवनाथजिनेन्द्राय अर्घ्य ॥३॥

शुभ बारस माघ सुदी की, अभिनन्दननाथ विवेकी।
उपजे सिद्धार्था माता, पूजूँ पाऊं सुख साता ॥

ओंह्री माघशुक्ला द्वादश्यांजन्मकल्याणकप्राप्त श्री अभिनन्दनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्य ॥४॥

ग्यारस है चैत सुदी की, मंगला माता जिनजी की।
श्री सुमति जने सुखदाई, पूजूँ में अर्घ्य चढाई ॥

ओं ह्री चैत्रशुक्लाएकादश्यां श्री जन्मकल्याणकप्राप्तसुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्य ॥५॥

कार्तिक वदि तेरसि जानो, श्री पद्मप्रभ उपजानो ।
है मात सुसीमा ताकी, पूजूँ ले रुचि समता की ॥

ओं ह्रीं कार्तिककृष्णात्रयोदश्यां जन्मकल्याणकप्राप्त श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्य ॥६॥

शुचि द्वादश जेठ सुदी की, पृथ्वी माता जिनजी की ।
जिननाथ सुपारस जाए, पूजें हम मन हरषाए ॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठशुक्लाद्वादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्त श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्य ॥७॥

शुभ पूस वदी ग्यारस को, है जन्म चन्द्रप्रभ जिनको ।
धन्य मात सुलखनादेवी, पूजूँ जिनको मुनिसेवी ॥

ओं ह्रीं पौषकृष्णा एकादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्त श्रीचन्दप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्य ॥८॥

अगहन सुदि एकम जानी, जिन जयरामा सुख दानी ।
श्री पुष्पदंत उपजाए, पूजतहूँ ध्यान लगाये ॥

ओं ह्रीं अगहनशुक्लाप्रतिपदायां जन्मकल्याणप्राप्तश्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय अर्घ्य ॥९॥

द्वादश वदि माघ सुहानी, सुनंदा मां सुखदानी ।
श्री शीतल जिन उपजाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥

ओं ह्रीं माघकृष्णाद्वादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तश्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्य ॥१०॥

फागुन वदि ग्यारस नीकी, जननी नन्दा जिनजी की ।
श्रेयांसनाथ उपजाए, हम पूजत ही सुख पाये ॥

ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णा एकादश्यांजन्मकल्याणकप्राप्त श्रीश्रेयांशनाथजिनेन्द्राय अर्घ्य ॥११॥

वदि फाल्गुन चौदसि जानी, जयवति माता सुखदानी ।
श्री वासुपूज्य भगवाना, पूजूँ पाऊँ निज ज्ञाना ॥

ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णाचतुर्दश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तश्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घ्य ॥१२॥

शुभ चतुर्थी माघ सुदी की, श्यामा माता जिनजी की ।
श्री विमलनाथ उपजाए, पूजत हम ध्यान लगाए ॥

ओं ह्रीं माघशुक्लाचतुर्थ्यां जन्मकल्याणकप्राप्तश्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्य ॥१३॥

द्वादशि वदि जेठ प्रमाणी, सर्वयशा मात सुखदानी ।
जिननाथ अनन्त सुजाए, पूजत हम नाहि अघाए ॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णा द्वादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तश्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ॥१४॥

तेरसि सुदि माघ महीना, श्री धर्मनाथ अघ छीना ।
माता सुव्रता उपजाए, हम पूजत ज्ञान बढाए ॥

ओं ह्रीं माघशुक्लात्रयोदश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तश्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ॥१५॥

वदि चौदस जेठ सुहानी, ऐरा देवी गुन खानी ।
श्री शान्ति जने सुख पाए, हम पूजत प्रेम बढ़ाए ।।

ओं ह्रीं ज्येष्टकृष्णाचतुर्दश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तश्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।।१६।।

पडिवा वैसाख सुदी की, श्रीकान्ता माता नीकी ।
श्री कुन्थुनाथ उपजाए, पूजत हम अर्घ्य बढ़ाए ।।

ओं ह्रीं वैशाखशुक्लाप्रतिपदायां जन्मकल्याणकप्राप्तश्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।।१७।।

अगहन सुदि चौदस मानी, मित्रा देवी हरषानी ।
अर तीर्थकर उपजाये, पूजे हम मन वच काये ।।

ओं ह्रीं अगहनशुक्लाचतुर्दश्यां जन्मकल्याणकप्राप्त अरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।।१८।।

अगहन सुदि ग्यारस आए, श्री मल्लिनाथ उपजाए ।
है मात प्रभावति प्यारी, पूजत अघ विनशे भारी ।।

ओं ह्रीं अगहनशुक्ला एकादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्त श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।।१९।।

दशमी वैसाख वदी की, पद्मावती माता जिन की ।
मुनिसुव्रत जिन उपजाए, पूजत हम ध्यान लगाए ।।

ओं ह्रीं वैसाखकृष्णादशम्यां जन्मकल्याणकप्राप्त श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।।२०।।

दशमी आषाढ़ वदी की, विपुला माता जिनजी की ।
नमि तीर्थकर उपजाए, पूजत हम ध्यान लगाए ।।

ओं ह्रीं आषाढकृष्णादशम्यां जन्मकल्याणकप्राप्त श्रीनमिजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।।२१।।

श्रावण शुक्ला छठि जानो, उपजे जिन नेमि प्रमाणो ।
जननी सुशिवा जिनजी की, हम पूजत है थल शिवकी ।।

ओं ह्रीं श्रावणशुक्लाषष्ठयां जन्मकल्याणकप्राप्तश्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।।२२।।

वदि पूस एकादशि जानी, वामादेवी हरषानी ।
जिन पार्श्व जने गुणखानी, पूजें हम नाग निशानी ।।

ओं ह्रीं पौषकृष्णा एकादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तश्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।।२३।।

शुभ चैत्र त्रयोदश शुक्ला, माता गुणखानी त्रिशला ।
श्री वर्द्धमान जिन जाए, हम पूजत विघ्न नशाए ।।

ओं ह्रीं चैत्रशुक्लात्रयोदश्यां जन्मकल्याणकप्राप्तश्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।।२४।।

जयमाल

(भुजंगप्रयात)

नमो जै नमो जै नमो जै जिनेशा, तुम्हीं ज्ञान सूरज तुम्ही शिव प्रवेशा ।
तुम्हे दर्श करके महामोह भाजे, तुम्हे पर्श करके सकल ताप भाजे ।।१।।

तुम्हे ध्यान मे धारते जो भी भाई, परम आत्म अनुभव छटा सार पाई ।
तुम्हें पूजते नित्य इन्द्रादि देवा, लहे पुण्य अद्भुत परम ज्ञान मेवा ।।२।।

तुम्हारो जनम तीन भू दुख निवारी, महा मोह मिथ्यात हिय से निकारी ।
तुम्हीं तीन बोध धरे जन्म ही से, तुम्हें दर्शन क्षायिकं जन्म ही से ।।३।।

तुम्हें आत्मदर्शन रहे जन्म ही से, तुम्हे तत्त्व बोधं रहे जन्म ही से ।
तुम्हारा महा पुण्य आश्चर्यकारी, सु महिमा तुम्हारी सदा पापहारी ।।४।।

करा शुभ न्ह्वन क्षीरसागर जु जल से, मिटी कालिमा पाप की अग पर से ।
हुआ जन्म सफलं करी सेव देवा, लहूँ पद तुम्हारा इसी हेतु सेवा ।।५।।

दोहा - श्री जिन चौबीस जन्म की, महिमा उर मे धार ।
पूज करत पातक टले, बढे ज्ञान अधिकार ।।

ओं ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो महार्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

पश्चात् शांतिभक्ति, शांतिपाठ , और विसर्जन करे और पाण्डुकशिला पर क्रियाएं समाप्त कर हाथी पर तीर्थंकर कुमार को बैठाकर राजभवन को प्रस्थान करें ।

राजभवन मे इन्द्राणी मोती के चूर्ण से मांडना (चौक) बनावें ।

तत्रागतौ प्रवरमौक्तिकचूर्णपूर्ण, रंगावलीलिखितपुष्पकमण्डनानि ।
राजांगणप्रथमतोरणयोरधस्तात् शच्या पुरध्रिषु पुरस्कृतया कृतानि (१)

(इन्द्राणी रत्नों के चौक बनावें)

श्रीमातरं लसितवक्त्रसरोरुहां च राजानमुद्भट महासुकृतानुभावं ।
नत्वा शताध्वरपतिर्जिनराजमंके संस्थाप्य ताण्डवमकाण्डभवं ततान ।। (२)

(इन्द्र तीर्थंकर कुमार को माता पिता की गोद में सौंपे)

सौधर्म इन्द्र कुमार को गोद मे सौंपकर ताण्डव नृत्य करे समस्त इन्द्र इन्द्राणी एवं दर्शक बधाइयां नृत्य पूर्वक जन्मोत्सव मनावें ।

---

(१) आ. ज. से , प्र. पा श्लोक ७९३ (२) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ७९५

संवृद्धहर्षफलिताविव तौ स्ववंशमुच्चैर्धृतं यदधिजन्म जिनाधिभर्त्रा।
भूपावृते सदसि तुष्टुवतुः प्रमोदः पूर्वं कृत्तार्चनविधिश्च ननर्त शक्रः ।। (१)

इति ताण्डवानन्तरं जिनं वेद्यामारोप्यजन्मकल्याणक चतुर्विंशति तिथीनुद्दिश्य सपर्या कर्तव्या।

अत्र मातापित्रोरंक निवेश स्थानीय पूर्व प्रक्लृप्त मण्डोपस्कृत्त वेदिकायां भद्रासने मूलविम्बस्थापनं विदध्यात् (२)

माता पिता की गोद से तीर्थंकर कुमार को गर्भ ग्रह में भद्रासन पर स्थापित करें

पालना एवं बाल क्रीड़ा

पश्चात् रात्रि में आरती एवं शास्त्र प्रवचन के बाद दोलना क्रीडा (पालना) का कार्यक्रम करना चाहिए।

दोलनारूढक्रीडां च विदध्युः पुरंध्रयस्तथा त्रैवान्या अपि प्रतिष्ठेयाः प्रतिकृत्तयः स्थाप्या इतिदिक् (३)

पालना के पश्चात् बाल क्रीड़ा की क्रिया की जाय देवकुमार तीर्थंकर कुमार के साथ सुन्दर सुन्दर खिलौनों के साथ क्रीडा करें।

देवकुमार स्थापना (४)

मनोनुकूलं च वयोनुकूलं नानाविधी क्रीडनमाचरन्ति ।
ये शक्रपुत्रा जिनबालकेन्न ते सन्तु चामी कुलजाः कुमाराः ।

ओं त्रायस्त्रिंशदेवभावस्थापनार्थं कुमारेषु पुष्पाक्षतं क्षिपेत्

भोगोपभोगवस्तु स्थापना (५)

भोगोपभोगोचितवस्तु सर्वं दिव्यं च संपादयतिस्म काले।
काले धनेशो भगवज्जिनेशो यः सोयमेवास्तु विशिष्टयष्टा ।।

भोगोपभोगार्थसंपादकधनेशस्थापनाय तत् संपादनीययजमाने पुष्पाक्षतं क्षिपेत्।

वालक्रीड़ा के लिए सुन्दर खिलौना मंगाना चाहिये और देवकुमार बनकर खेलने वाले वच्चो को एक एक खिलौना देकर बालक्रीड़ा का कार्यक्रम समाप्त करें।

।। ओं शान्तिः ।।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ७९६ (२) (३) आ. ज. से.. प्र. पा. पृष्ठ २५९
(४) श्री जे दे, प्र. ति. पृष्ठ ५०१/१३ (५) श्री जे. दे., प्र. ति पृष्ठ ५००/१४

तप कल्याणक

तपकल्याणक

मंत्र - (१) गणधर वलय मंत्र,
(२) चौसठ ऋद्धि मंत्र

मण्डल - चौबीस तीर्थकर मण्डल

यंत्र - (१) गणधर वलय यंत्र
(२) चौसठ ऋद्धि यंत्र
(३) वर्धमान यंत्र

भक्तियां - (१) सिद्ध भक्ति
(२) तीर्थकर भक्ति
(३) चारित्र भक्ति
(४) योगि भक्ति
(५) शान्ति भक्ति

सामग्री - (१) सर्वतोभद्र स्वस्तिक
(२) गोल शिला
(३) पिच्छी एवं कमंडलु
(१) पूजा सामग्री
(२) विधिनायक के वस्त्राभूषण
(३) भेंट सामग्री
(४) असि मसि कृषि की सामग्री
(५) मंच व्यवस्था
(६) वाद्य घोष

तीर्थंकर राज्याभिषेक
(सामग्री सूची अनुसार)

तपकल्याणक के दिन प्रातः अभिषेक, शांतिधारा, नित्यमह, जन्मकल्याणक पूजा एवं शांति हवन करें। मध्यान्ह यज्ञ वेदी पर राजमहल की सजावट कर महाराजा नाभिराय का दरबार लगाना।

महाराजा नाभिराय सिंहासन पर विराजमान हों मंगलाष्टक पाठ, दिग्बंधन, रक्षामंत्र, शांतिमंत्राराधन के साथ कार्य प्रारंभ करना चाहिए।

अभिषेक व पूजा सामग्री की व्यवस्था हो। भगवान को राज्य योग्य वस्त्राभरण खड्ग शस्त्र आदि की व्यवस्था हो। यदि बालब्रह्मचारी तीर्थंकर की प्रतिष्ठा हो रही हो तो केवल युवराज पद की घोषणा करें। यदि अन्य तीर्थंकरों की प्रतिष्ठा हो रही हो तो राज्याभिषेक कराने की व्यवस्था करें। राज्य सिंहासन पर विराजमान महाराजा नाभिराय के दरबार में सर्वोत्तम वस्त्राभूषण माणिक-मोती आदि रत्न एक थाली मे सजाकर सौधर्मेन्द्र दरबार में आकर भेंट समर्पण कर नमस्कार कर के जयघोष करता है (महाराजा नाभिराय की जय तीन बार बोलें) महाराजा नाभिराय सौधर्मेन्द्र के सहयोग से आदिकुमार का पाणिग्रहण संस्कार कच्छ एवं महाकच्छ की बहिन नंदा सुनंदा से संपन्न करते हैं। सौधर्मइन्द्र से महाराजा ने अपने विचार प्रगट किए :-

तन धन यौवन राज में, विषम वेदना याहि।
त्याग सकल कल्याण पथ, गृहण करन की चाह।

देवेन्द्र! मानव पर्याय की आयु विषय भोगों में व्यतीत हो रही है इन्हें त्यागकर आत्मकल्याण करना चाहता हूँ। तीर्थंकर आदिकुमार योग्य हैं। अतएव राज्य का पूर्ण वैभव उन्हें समर्पण कर जिनमुद्रा धारण करके आत्मशांति चाहता हूं। तब सौधर्मेन्द्र मस्तक नवाकर अनुमोदना करता है-

श्री तीर्थंकर राज्यपद, देने का उत्साह।
किया आपने नाभिजी, है यह उत्तम राह ॥[१]
प्रभु समर्थ पालन प्रजा, न्याय मार्ग में आज।
राज्यार्पण की सकल विधि, करना है सुखसाज ॥[२]

महाराज तीर्थंकर आदिकुमार इस योग्य हो गए हैं आपने सर्वोत्कृष्ट विचार किया धन्य हैं आप।

१-२, शी. प्र., प्र. सा. सं. पृष्ठ ११२-११३

तब महाराज नाभिराय कहते हैं :-

राजतिलक अर्पण विधि कीजे हे दिविराज ।
होय सुखी सारी प्रजा होय अटल यह राज ।।[१]

दिविराज राज्याभिषेक एवं राज्यतिलक के लिए आदिकुमार को लाइये । और सब व्यवस्था कीजिए । (राज्याभिषेक के लिए ऊँची आसन बनाई जावे जिससे समस्त नर-नारी अच्छी तरह देख सकें)

सौधर्मेन्द्र राजभवन से तीर्थकर आदिकुमार को राजदरबार में ले आते हैं, सब स्वागत करते हैं और पुष्पवर्षा करते हुए महाराजा नाभिराय एवं आदिकुमार की जय बोलते हैं। इन्द्र राज्याभिषेक करने के लिए सिंहासन पर थाली में विराजमान करते हैं ।

ओं ह्रीं अस्मिन् बिम्बे राज्याभिषेकं आरोपयामि (प्रतिमा के आगे पुष्पक्षेपण करें)

विशेष - वासुपूज्य - मल्लि - नेमि - पार्श्व - वर्धमान तीर्थकराणां कुमार दीक्षाभिषेकक्रिया कुर्यात् ।

(१) तीर्थकर वासुपूज्य, मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ एवं महावीर ने राज्य नहीं किया है अतः इनकी प्रतिमा का राज्याभिषेक नहीं करना । इनका केवल दीक्षाभिषेक ही होगा

(२) तीर्थकर शान्तिनाथ, कुंथुनाथ एवं अरनाथ ने चक्रवर्ती के रूप में राज्य किया है अतः इनकी प्रतिमा का चक्रवर्ती अभिषेक होगा राज्याभिषेक नहीं ।

चक्रवर्तिराज्याभिषेक

उद्यद्रत्ननिधीश्वरः स्वजनतो यश्चक्रलाभ क्रियां ।
लेभे सर्वदिशां जयं नृपवरैश्चक्राभिषेकोत्सव ।।

पंच क्षत्रिय वृत्तदेशनपरः साम्राज्यरूढक्रियां ।
षट्खण्डक्षिति शासनेद्धविभवः साक्षात्स एवास्त्वयम्[२] ।।

चक्रलाभादिचतुष्टयस्थापनाय प्रतिमोपरि पूर्ववच्चतुपुष्पीमावपेत् । शांतिकुंथ्वर-तीर्थकराणां चक्रलाभादिचतुष्टयपर्यन्तं अभिषेकविधिं विदध्यात् ।

तब अष्ट कुमारियां देवी राज्यभिषेक के लिए जलपूर्ण मंगलकलश पीले वस्त्र से ढके श्रीफल सहित पाण्डाल के प्रमुख द्वार से लाती हैं और गीत गाती है ।

शुचिनाथ हम जल शुद्ध लाये क्षीरसागर से भला ।
गंगा महानद सिन्धु आदि कुण्ड गंगा से भला ।। [३]

(१-३) ब्र. शी. प्र., प्र. सा. सं. पृष्ठ ११२-११३ (२) श्री ने. दे, प्र. ति. पृष्ठ ५०४

शुचि द्वीप नन्दी वापिका सागर स्वयंभू से भला
अभिषेक कारण राजपट हो तीर्थनायक के भला ।।

अभिषेक के लिए कलशों की स्थापना करें । इन्द्र, तीर्थकर आदि कुमार के वस्त्राभूषण शरीर से अलग कर लें एवं राज्यभिषेक करें ।

कुमारकाले किलयस्य पट्ट बंधाभिषेकांचित यौवराज्यम्
वितेनिरे स्वीयनृपाः सुरेन्द्राः स एव साक्षादयमस्तुबिम्बः
ओं ह्री श्री तीर्थराजस्य राज्याभिषेकं करोमि (१) ।

सौधर्मेन्द्र अभिषेक करके शरीर प्रक्षालन कर वस्त्राभरण पहिनावें। देवियां आरती करती हुई गीत गाती हैं ।

चौ० जय जय तीर्थंकर अविकारी, जय जय मुक्त वधु वर भारी
जय जय प्रजा न्याय विस्तारी, जय जय अनुपम बल अधिकारी
जय जय शस्त्र शास्त्र गुणधारी, जय जय विद्या निपुण अपारी
जय जय पन्द्रहवें मनुभारी, जय जय जगत करन उद्धारी
जय जय कर्मभूमि विस्तारी, जय जय आदिजिनं भवतारी (२)

आरती के पश्चात् इन्द्र राज्यतिलक करें । तब महाराज नाभिराय अपना मुकुट समर्पण करते समय कहते हैं ।

सर्वराज महाराज के पालक दीन दयाल ।
तुम ही हो जगपूज्य प्रभु, वृषभदेव जगपाल (३) **।।**

महाराज अपना मुकुट समर्पण करते हैं । सब महाराजा आदिकुमार की जय बोलते है ।

इन्द्र प्रतिमा के पास राज्योचित सामग्री की स्थापना करें ।

यस्याधिराज्याभिषवं वितेनुर्भूत्या सुरेन्द्राः सकला नरेन्द्राः ।
यः सागरान्तां पृथिवीं शशास क्षात्रेण धर्मेण स एष देवः ।।

ओं पुण्यविपाकसंपादितस्वराज्यसंपदुपभोग स्थापनाय पुष्पाणि प्रतिमोपरि विकिरेत् (पुष्प क्षेपण करें)(४)

और राज्योचित सामग्री की स्थापना करें । (यौवराज्य स्थापनाम्)

इन मंत्रों को पढ़ता हुआ पुष्प क्षेपण करें (५)

ओं सत्यजाताय स्वाहा	**ओं अर्हज्जाताय स्वाहा**
ओं अनुपमेन्द्राय स्वाहा	**ओं विजयार्च्यजाताय स्वाहा**

---

(१) श्री ने दे, प्र. ति. पृष्ठ ५०३ (२) ब्र. शी. प्र., प्र. सार सं. पृष्ठ ११३ (३) ब्र. शी. प्र., प्र. सार स पृष्ठ ११३ (४) श्री ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ ५०३ (५) आ. ज. से., प्र. पा. पृष्ठ १३७

ओं नेमिनाथाय स्वाहा ओं परमजाताय स्वाहा

ओं परमार्हताय स्वाहा ओं अनुपमाय स्वाहा

ओं सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे, उग्रतेजः उग्रतेजः, दिशांजय दिशांजय, नेमिविजय, नेमिविजय स्वाहा।

(सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधिमरणं च भवतु)

पश्चात् इन्द्र देवादि अपने स्थान पर बैठ जावें। महाराजा नाभिराय आत्मकल्याणार्थ प्रस्थान करें और महाराजा आदिकुमार को महामण्डलेश्वर, मण्डलेश्वर एवं मुकुटबद्ध राजाओं द्वारा भेंट समर्पण की व्यवस्था हो।

राज्यव्यवस्था, राजाओं द्वारा भेंट समर्पण

१. कुरुदेश महाराजा अभिचन्द्र
२. मगधदेश के महाराजा चाणूर
३. काश्मीरदेश रतिवल्लभ
४. कामरूपदेश वेणुधारी
५. कच्छदेश महायश
६. कालदेश स्वरूप
७. कलिंगदेश उद्यत
८. कुरुजांगलदेश मकरध्वज
९. किष्किंधादेश मयूरकंठ
१०. मल्लदेश अजितंजय
११. काशीदेश धर्मरथ
१२. बंगदेश कीर्तिधर
१३. अंगदेश यशोधर
१४. आंध्रदेश ज्ञानमति
१५. उलिकदेश सूर्याभ
१६. उसीनरदेश मौर्यविजय
१७. मलयदेश पीतंकर
१८. विदर्भदेश पद्मानन
१९. गौंडदेश मृगेन्द्रराज
२०. सुसह्यदेश क्षेमंधर
२१. पांचालदेश हरिवाहन
२२. केरलदेश सीमंधर
२३. मन्द्रदेश ज्ञानबाहु
२४. चेदीदेश शुद्धाभ
२५. दशार्ण देश मंजुलि
२६. पुन्नाट देश विजय
२७. चौलदेश अपराजित
२८. मौर्यदेश कुंभाभ
२९. सौराष्ट्रदेश विपुलमति
३०. मध्यदेश आनंद
३१. किरातदेश श्रीधर
३२. कौशलदेश चन्द्राभ

महामण्डलेश्वर राजाओं में वंश स्थापना

भेंट समर्पण के पश्चात् महामण्डलेश्वर राजाओं में वंश स्थापना

१. राजा हरिकांत - आपको हरिवंश का अधिपति नियुक्त करते हैं। (मस्तक नवाकर स्वीकार करना)

२. राजा सोमप्रभ - आपको कुरुवंश का अधिपति नियुक्त करते हैं।

३. राजा काश्यप - आपको उग्रवंश का अधिपति नियुक्त करते हैं।
४. राजा अकंपन - आप को नाथ वंश का अधिपति नियुक्त करते हैं।

मण्डलेश्वर राजाओं की राज्य व्यवस्था

१. मण्डलेश्वर को कच्छ का अधिकारी बनाते हैं।
२. मण्डेलश्वर को महाकच्छदेश का अधिकारी बनाते हैं।
३ मण्डलेश्वर को तुलुव देश का अधिकारी बनाते हैं।
४ मण्डलेश्वर को तंजोर देश का अधिकारी बनाते हैं।

पश्चात् सेनापति सलामी करते हैं उन्हे सेनानायक नियत करते हैं, कल्पवृक्षों की समाप्ति से पीड़ित प्रजाजनों को जीवनयापन करने के लिये असि, मसि, कृषि, शिल्प, विद्या एव वाणिज्य की क्रिया बताते हैं।

ब्राह्मी सुन्दरी द्वारा व्रत संकल्प

(यदि कोई बहिनें ब्रह्मचर्य व्रत लेनें को तैयार हों या कोई ब्रह्मचारिणी बहिनें हों तो यह दृश्य प्रस्तुत करें)

ब्राह्मी एव सुन्दरी का दरबार में प्रवेश

दोनों - प्रणाम पिताजी।

आदिनाथ - आओ बेटी, सदा प्रसन्न रहो।

दोनों - हमें क्यो याद किया है पिताजी ?

आदिनाथ - बेटी, मैं तुम्हें विद्या देना चाहता हूँ, जिनके द्वारा तुम स्वयं का एवं समाज का कल्याण करो।

दोनों - जो आज्ञा पिताजी, यह तो बहुत प्रसन्नता की बात है।

आदिनाथ - बेटी सुन्दरी ! आपको अंक विद्या ग्रहण करना है, अतः तुम्हें गणित का पूर्ण अभ्यास कर उसमें पारंगत होना है।

सुन्दरी - मैं पूर्ण लगन पूर्वक यह विद्या ग्रहण करूंगी।

आदिनाथ - बेटी ब्राह्मी ! आपको लिपि विद्या ग्रहण करना है अतः आपको समस्त लिपियो का अध्ययन करना होगा।

ब्राह्मी - आपकी आज्ञा का पालन करूंगी पिताजी।

सुन्दरी - पिताजी यह राजा महाराजा आपके दरबार में क्यों आये हैं?

आदिनाथ - बेटी, यह हमारे अधीनस्थ राजा हैं, यह सब राज्य व्यवस्था की जानकारी देनें आये है ।

ब्राह्मी - पिताजी, यह आपको भेंट समर्पित करके प्रणाम क्यो कर रहे हैं?

आदिनाथ - बेटी यह लोकरीति है कि अपने शासक के पास जब भी जाते हैं बहुमूल्य सामग्री भेंट करके प्रणाम करते हैं ।

सुन्दरी – पिताजी आप तो सर्वोच्च्व शासक है आपके दरबार में सभी राजा महाराजा भेंट समर्पित करते हैं ।

आदिनाथ - नही बेटी,

दोनों एक साथ (आश्चर्य पूर्वक) – क्यों पिताजी?

आदिनाथ - लोक व्यवहार के अनुसार, जब हम तुम्हारा विवाह जिस राजकुमार से करेंगे वह मेरा पूज्य होगा और मैं उस राजा को यथा शक्ति भेंट समर्पित करके प्रणाम करूंगा ।

ब्राह्मी - नही पिताजी नहीं, कदापि नही, मेरे कारण आप अपने अधीनस्थ राजा को प्रणाम करें, यह कभी नही हो सकता ।

सुन्दरी – हॉ पिताजी हमारे कारण आपको किसी के सामने सिर नही झुकाना पड़ेगा ।

दोनों (एक साथ) – हम आज प्रतिज्ञा करते है कि हम कभी विवाह नहीं करेंगी तथा आजीवन ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा करती हैं ।

आदिनाथ - धन्य हो बेटियो !! पिता के मान के लिये इतना बड़ा त्याग । धन्य हो गया मैं, कितना भाग्यशाली हूँ मैं । जाओ पुत्रियो जाओ तुम्हारा जीवन धर्ममय हो, मंगलमय हो, मोक्षमार्ग पर चलकर अविनाशी सुख प्राप्त करो ।

दोनों (प्रणाम कर) जो आज्ञा पिताजी ।

(दोनों दरबार से जाती हैं)

वैराग्य

महाराजा आदिकुमार की राज्यनीति एवं दण्ड व्यवस्था पर प्रकाश डाला जाय । इसी समय सौधर्मेन्द्र विचार करता है कि महाराज का अत्यधिक समय राज्य करते २ निकल गया । वैराग्य की ओर परिणाम कैसे आवें, अतः जिसकी आयु अन्तर्मुहूर्त की शेष थी, उसी नीलाजना देवी को नृत्य करने राज दरबार में प्रस्तुत करता है । आयुपूर्ण होते ही नीलाजना का शरीर विलीन हो जाता है इन्द्र तत्काल वैसी ही दूसरी नीलाजना भेज देता है। आदिकुमार जन्म से ही तीन ज्ञान के धारी थे अवधिज्ञान

द्वारा सब ज्ञात करते हैं, और वैराग्य भावना अन्तर में प्रगट होती है, तत्काल पाण्डाल के प्रमुख द्वार से लौकांतिक देव आ जाते हैं और वैराग्य स्तवन प्रारंभकर विराग भावना को सुदृढ बनाते हैं।

लौकान्तिक देवों द्वारा स्तवन (१)

स्वामिन्नद्य जगत्त्रये प्रसरता मांगल्यमालायतः,
सर्वेभ्यः सुकृतं भविष्यति भवत्तीर्थामृतांभोधरात्।
घोरापज्ज्वलनापनोदनमितो भव्यात्मनां जायतां,
वैराग्यावगमस्त्वया परिचितस्तस्मै नमस्ते पुनः ॥

संसारदुःखविनिवृत्तिपरायणः स्वयं, बुद्ध्वा भवस्थितिमिमां स्वपरात्मनां शिवं।
कर्तेत्यसावभिमतस्वनियोगभावुकानस्मान् प्रपंचयति निःक्रमणोत्सवस्तव ॥
के वा वयं त्वदुपदेश विधानदक्षाः, स्वायंभवस्य सकलागमपूतदृष्टेः।
आत्मैव केवलमथो प्रतिबुद्धमार्गं, नीतः स्वयं न खलु भव्यगणोऽपि तात ॥

अयं पितेयं जननीतवेति लोकामुधार्थ व्यवहारयंति।
विश्वेशिता विश्वपितामहस्त्वं माताऽसि सर्वप्रतिपालनेच्छुः ॥
अवाप्तसंसारतटः स्वलब्ध्या निमित्तमन्यात्समुपस्थितोऽसि,।
स्वयं प्रबुद्धः प्रभविष्णुरीशः कदापि नास्मत्स्तवनेन बुद्धः ॥

प्रकाशितं सूर्य मुदीक्ष्य दीपः स्वयं स्वदीप्त्या किमुभासयेत्तं,।
गंगास्वयं शीतलतोयदात्री कि पल्लवेन स्वतृषां भनक्ति ॥
जयकल्याणपरंपर मदनमयंकर जय जय जय निजशक्तिपते,।
जय शाश्वतसुखकरत्रिभुवनमहिधर जय जय जय गुणरत्नपते ॥

इति स्तुत्वा जिनेशानां नतमस्तकमौलयः।
मन्दारकुसुमोद्दाममालयार्चा व्यधुः सुराः ॥

इति बिम्बोपरि लौकान्तिकदेवर्षिकृत- पुष्पाञ्जलिः।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ८२३ से ८३०

लौकान्तिक स्तवन

तन धन यौवन नाशवान सब, जगत रैन का सपना
है ज्ञायक भाव ही अपना । टेक ।

सब ही अनित्य अशरण जग में, जनम मरण दुख भरना,
यह शरीर भी नही हमारा किससे मतलब सरना ।
सुख दुख भोगे जीव अकेला तन है मल का झरना
है ज्ञायक भाव ही अपना -१-

आश्रव जग निर्माण कराता, संवर शिव सुख देता,
कर्म निर्जरा जब हो जाती, लोकवास तज देता ।
आत्म बोध पा रमन धर्म से करें कर्म का खपना
है ज्ञायक भाव ही अपना -२-

जग आडम्बर छोड़ दिगम्बर, मुद्रा जब धर लेता
चिदानंद का शास्वत सुख, तबही 'पुष्प' पा लेता ।
मुक्ति नगर का पा स्वराज सब मिटता जग का सपना
है ज्ञायक भाव ही अपना -३-

१- हे महाभाग्य :-

आपने ससार शरीर भोगो से विरक्त होने का विचार किया वह सर्वोत्तम है ।

२- हे त्रिलोकीनाथ भगवान :-

संसार मे समस्त पदार्थ नाशवान है, अतः उनका त्याग करना ही सर्वोत्कृष्ट है ।

३- हे महानपुण्यपुरुष :-

आप स्वयंबुद्ध हैं, आपको कौन समझाये, किन्तु वीतराग मुद्रा के बिना मुक्ति नहीं आप उसे धारण कर रहे है इसलिए आप धन्य हो ।

४- हे आत्मोद्धारक प्रभुवर :-

आपकी त्यागभावना सर्वोत्कृष्ट एवं अनुकरणीय है ।

५- हे मोक्षमार्ग प्रवर्तक :-

ससार बंधन से मुक्तिप्रदायिनी दिगम्बर मुद्रा ही परमावश्यक है। जिसे आप स्वीकार करने वाले हैं ।

६- हे तीन ज्ञान युक्त भगवन् :-

आत्मा निर्विकार दोष मुक्त है, किन्तु संसारावस्था में मोह भ्रमण करा रहा है। आप उसे नाश करने को तत्पर हैं, आप धन्य हो।

७- हे स्वयंबुद्ध :-

आप तो जन्म से ही विज्ञ हैं, आपको मार्ग-दर्शन की आवश्यकता नहीं, शाश्वत अविनाशी सुख पाने वाला आपका विचार अनुकरणीय है।

८- हे कर्मविजयी सुभट :

संसार की अनेक विषमताएं ही आत्मोत्थान में बाधक हैं। उनके अभाव करने की क्षमता आप में है, आप महान सुभट हैं, आपकी भावना प्रशंसनीय है।

इस प्रकार स्तवन करके लौकान्तिक देव अपने स्थान पर जाते हैं। तब चतुर्णिकाय के देव दीक्षाविधि करने के लिए शिविका लेकर पाण्डाल के अंदर आ जाते हैं।

बुद्ध्वा स्वस्वनियोगेन तपः कल्याणमूर्जितम्।
चतुर्णिकाया देवेन्द्रा आजग्मुः कृतसंस्तवाः [१]॥

इन्द्र और देवगण दीक्षा की सामग्री एवं पालकी लाते हैं।

दृढोरुवैराग्यभरः स्वराज्यं पुत्राय वा भूपतिसाक्षि दत्त्वा।
यः क्षात्रधर्म श्रितपंचभेदं दिदेश साक्षाच्च स एष बिम्बः॥

(स्वराज्यत्यागस्थापनाय प्रतिमोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)[२]

दीक्षाभिषेक

आचार्य या सौधर्मेन्द्र भरत और बाहुबलि का तिलक करके भगवान का मुकुट इन्हें प्रदान करें, और भरत को अयोध्या नगर व बाहुबलि को पोदनपुर का शासन देने की घोषणा करें (एक टेबिल पर चौका लगाकर इतनी ऊंची करके कि सब दर्शक अपने स्थान से देख सकें) थाली मे स्वस्तिक बनाकर रख दें पश्चात् मंत्र पढ़कर आदि कुमार की स्थापना करें।

ओं ह्रीं अर्ह तीर्थकरप्रतिकृतिः स्नपनपीठे तिष्ठ तिष्ठ।

(दीक्षाभिषेक के लिए प्रतिमा विराजमान करें)।

दीक्षोद्यमं मोक्षसुखैकसक्तं यं स्नपनं चक्रुरशेषशक्राः।
समेत्य सद्यः परया विभूत्या तं स्नपयाम्यष्टशतैश्चकुम्भैः॥

ओं जय जय जय तीर्थकरप्रतिकृतिं स्नपयामि। [३]

(जल से अभिषेक करें) पश्चात् गंधलेपन करें।

---

(१) आ. प्र. से., प्र. पा. श्लोक ८३१ (२) श्री ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ ५१२ श्लोक ५
(३) श्री ने. दे., प्र. ति पृष्ठ ५१२ श्लोक ६

इन्द्रो जिनेन्द्रस्नपनावसाने दिव्यांगरागेण यमालिलेप ।
कर्पूरकालागुरुकुंकुमाढ्य श्रीचन्द्रनेनास्य समालभेऽगम् ॥

ओं ह्रीं सहज सौगन्ध्यबंधुरांगस्य गंधलेपनं करोमि (१) ।

(गंध लेपन करें) (पश्चात् जल से अभिषेक करें)

ओं ह्री श्रीमन्तं तीर्थंकरप्रतिकृतिं शुद्धोदकेन स्नपयामि ।

(जल से अभिषेक कर प्रक्षालन करें, वस्त्राभरण पहिनावे)

विभूषयामास जगत्त्रयस्य विभूषणं दिव्यविभूषणाद्यै ।
पुरंदरोऽय भगवज्जिनेन्द्र स एव देवो जिनबिम्ब एषः ॥

(ओं ह्रीं जिनांगं विविधवस्त्रामरणैः विभूषयामि) (२)

श्रीवर्द्धमानाह्वयदिव्यमंत्रसजप्तपुष्पैर्जिनराजबिम्ब ।
नि शेषविघ्नप्रतिघातनार्थ सप्तैव वारानधिवासयामि ॥ (३)

ओं णमो भयवदो वड्ढणमाणस्स रिसहस्सजस्स चक्कं जलं तं गच्छइ आयासं पायालं लोयाणं भूयाणं जये वा विवादे वा रणांगणे वा थंभणे वा मोहणे वा सव्व जीव सत्ताणं अपराजिदो भवदु मे रक्ख रक्ख स्वाहा ।

सात बार वर्धमान मंत्र पढकर प्रतिमा को स्पर्श करते हुये पुष्प क्षेपण करें ।

सुदुर्गमं मुक्तिपुर त्रिलोकीसारं सुखांभोधिमनन्यसाध्यं ।
सद्यः प्रभो साधयितु प्रवृत्तस्तीर्थकरत्व विजयस्व देव ॥१॥

आत्यन्तकी दुःख निर्वृत्तिरुच्चैरनतमात्मोत्थसुखं च यत्र ।
तां दुर्लभां मुक्तिपुरी प्रयातः पथा शिवस्ते जिननाथ भूयात् ॥२॥

यस्यामुपाधेः परिहाररिद्धिश्चैतन्यमात्रानुभवप्रवृद्धे ।
प्रतिक्षण सा मनसो विशुद्धिरामुक्तिलाभादभिवर्द्धतां ते ॥३॥

यैर्भूषितस्यैवहि मुक्तिलक्ष्मीर्वशप्रयाति प्रणयेन देव ।
सम्यक्त्वमुख्याष्टगुणाश्च तेऽमी भवन्तु तेद्याभिमुखा प्रसन्नाः ॥४॥

जिनप्रभोर्द्वादशभिस्तपोभि स्वमोघशस्त्रैरथ य क्षतानाम् ।
कषायनाम्ना द्विषता जयस्ते भूयाच्चभूयो जितकर्मशत्रोः ॥५॥

मुमुक्षवो ये सह दीक्षितास्ते क्षगामया रक्षितजीवलोकाः ।
अपेक्ष्यमाणा भवदीयलक्ष्मीमुपासतां त्वामुचितोपचारैः ॥६॥

गुप्ति गुप्तित्रयं तज्जिन तव तनुता शर्म तन्वन्तु धर्माः ।
कर्मारातिप्रघात दधतु समितयस्तुभ्यमभ्यर्हितास्ताः ॥७॥

---

(१) श्री ने. दे., प्र. ति पृष्ठ ५१३ श्लोक ७ (२) श्री ने. दे., प्र. ति पृष्ठ ५१३ श्लोक ८
(३) श्री ने दे, प्र ति पृष्ठ ५१४

देवानुप्रेक्षणान्यक्षयपदपथिकाभीक्ष्णरक्षां विदध्यु-
र्भूत्यारीषहार्ति· सपदि भवतु ते मोक्षलक्ष्मीविवाहः [१] ।।

(तपकल्याणकस्थापनार्थं पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

दीक्षोन्मुखस्तीर्थकरो जनेभ्यः किमिच्छकं दानमहो ददौ यः ।
दानं च मुक्त्यंगमितीव वक्तुं स एव देवो जिनबिम्ब एषः ।।

(निष्क्रमणादौ तीर्थकरकृतमहादानस्थापनाय प्रतिमाग्रे पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्) [२]

महीतलायातदिनेशबिम्बशंकावहादीप्रमणिप्रभाढ्या ।
जिनेनं या श्रीशिवकाधिरूढा दिव्यात्रसाक्षादियमस्तुसैव ।।

दिव्यशिविकास्थापनायात्र शिविकायां पुष्पं क्षिपेत् [३]

(पालकी को जल से शुद्ध कर पुष्प क्षेपण करें और केशर से स्वस्तिक बनावें)

मरु देवी आशीष

(आदि नाथ के वैराग्य के समय, पालकी ले जानें के पूर्व मॉ मरु देवी का आशीष)

माता का आशिष आदिनाथ, तुमको मुक्ति का द्वार मिले,
जिस पद के लिये ये भेष धरा, उस पद का सब अधिकार मिले ।

तीर्थंकर बनकर के जन्में, मुक्ति पद तुमको पाना था,
इक्ष्वांकु कुल में जन्म लेकर, माता का मान बढ़ाना था
नारी का मान बढाया है, तुम्हें जन जन का सम्मान मिले ।।१।।

यह मोह का बन्धन है हम पर, तुमको उस पथ से रोक रहे,
हम भी जायेंगे उस पथ पर, यह अवसर कब से देख रहे ।
जीवन ये तुम्हारा उज्जवल हो, सब जग को इसका ज्ञान मिले ।।२।।

माता की गोद हुई सूनी, तुम्हें कैसे अब मैं भूलूंगी,
जब याद तुम्हारी आयेगी, तब कहां मैं तुमको ढूंढूंगी,
सूनी आंखों में अब आदि, केवल संयम की धार मिले ।।३।।

संबोध्य पितॄन् स्वकुटुम्बलोकान् पौरांस्तथान्तः पुरमाशु याने ।
विनिर्मितं वा शिविकादिरूपे समारुरोह प्रतिपन्नमूर्तिः ।।

अत्रैवान्यासां प्रतिमानामुपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् [४]

(विधिनायक प्रतिमा एवं सब प्रतिमाओं पर पुष्प क्षेपण करें)

---

(१) श्री ने. दे, प्र. ति. पृष्ठ ५७४ (२) श्री ने. दे, प्र. ति. पृष्ठ ५७६
(३) श्री ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ ५७६ (४) आ. ज से, प्र. पाठ श्लोक ८३२

आपृच्छ्य बंधूनुचितं महेच्छ किमिच्छकं दानविधि विधाय ।
निष्क्रामति स्मावस्थाध्वनो यः स एव देवो जिनबिम्ब एषः (१)॥

ओं ह्रीं अर्ह श्री धर्मतीर्थाधिनाथ भगवन्निह शिविकायां तिष्ठ तिष्ठेति स्वाहा ।

विधिनायक प्रतिमा को पालकी में विराजमान करें ।

वादित्रगंधर्वजयेति शब्दैः स्तब्धीकृताशानिचये मुहूर्ते ।
शुभे दिनार्धोत्तरभाजि जिष्णोर्नैग्रंथ्यकालः शुभदो विधेयः (२) ॥

पालकी में बैठाते समय वादित्र बजावे, जय जय शब्द बोले दिनार्द्ध के अपर भाग में ही दीक्षा विधि करें ।

यदाश्रितां श्रीशिविकां धुरीणाः स्कंधे समारोप्य पदानि सप्त ।
जग्मुः पृथिव्यां प्रथमं नरेन्द्राः स एव देवो जिनबिम्ब एषः ॥ (३)

नरेन्द्रोढशिविकास्थितजिनस्थापनायप्रतिमाग्रे पुष्पं क्षिपेत् ।

यदाश्रितां श्रीशिविकां धुरीणाः स्कंधे समारोप्य पदानि सप्त ।
जग्मुः पृथिव्यामथखेचरेन्द्राः स एव देवो जिनबिम्ब एषः (४) ॥

विद्याधरराजोढशिविकास्थितजिनस्थापनाय पुष्पं क्षिपेत्

(अपरेऽपि केचिद्भव्याः शिविकां धृत्वा सप्तपदानि गच्छेयुः)

यस्य प्रभोः श्रीशिविकां प्रमोदात् स्कन्धे समारोप्य वियत्पथेन ।
तपोवनं निन्युरथामरेन्द्राः स एव देवो जिन बिम्ब एषः (५) ॥

सुरेन्द्रोढशिविकास्थितजिनस्थापनाय पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

(सभी इन्द्र शिविका पालकी को दीक्षावन की ओर ले जाते हैं)

---

(१) श्री ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ ५१७ (२) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ८३३
(३-४-५) श्री ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ ५१८

दीक्षावन क्रिया
(सूची अनुसार सामग्री)

तत्रैव पूर्वत्र दिशासु दीक्षावनं विशालां गणकल्पशाखं ।
दीक्षातरुस्तत्र शिलाप्रदेशः संस्कारवाटीकृतगूढमध्या [1] ।।

गणधरवलय मंत्र

(१) ओं ह्रीं इवीं श्रीं अर्ह अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः
(२) ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः
(दोनों में से एक १०८ बार पढ़े)

चौंसठ ऋद्धि मंत्र

ओं, ह्रीं चतुः षष्ठी ऋद्धिसमृद्धगणधरेभ्यो नमः (१०८ बार पढ़ें)

तप कल्याणक विधि -

मंगलाष्टक, दिग्बंधन, रक्षामंत्र, शांतिमंत्र पंच कल्याणक स्त्रोत एवं भक्तियां पढ़कर पाण्डाल से पूर्वदिशा या पाण्डाल के पूर्वदिशा में दीक्षावन की व्यवस्था करना। वट वृक्ष के नीचे दीक्षा स्थान बनाया जाय। स्टेज इतनी ऊंची हो, कि जनता शांतिपूर्वक देख सके। षट्कोण पत्थर की शिला जल से शुद्ध करके रखें, उस पर सर्वतोभद्र स्वस्तिक बनावें। मंत्र द्वारा स्थानशुद्धि, पात्र शुद्धि करें।

श्रीगणधरदेवस्तवन [2]

जिनान् जितारातिगणान् गरिष्ठान् देशावधीन् सर्वपरावधींश्च ।।
सत्कोष्ठबीजादिपदानुसारीन् स्तुवे गणेशानपि तद् गुणाप्त्यै ।।१।।
संभिन्नश्रोतान्वितसन्मुनीन्द्रान् प्रत्येकसंबोधितबुद्धधर्मान् ।।
स्वयं प्रबुद्धांश्च विमुक्तमार्गास्तुवे गणेशानपि तद् गुणाप्त्यै ।।२।।
द्विधामनःपर्ययचित्प्रयुक्तान् द्वि पंच सप्तद्वय पूर्वसक्तान् ।।
अष्टागं नैमित्तिकशास्त्रदक्षान् स्तुवे गणेशानपि तद् गुणाप्त्यै ।।३।।
विकुर्वणाख्यर्द्धिमहाप्रभावाद् विद्याधराश्चारणऋद्धिप्राप्तान् ।।
प्रज्ञाश्रितान् नित्य खगामिनश्च स्तुवे गणेशानपि तद् गुणाप्त्यै ।।४।।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा.श्लोक ३६७ (२) आ. रा. की. ग. व. वि.

आशीर्विषान् दृष्टिविषान् मुनीन्द्रानुग्रातिदीप्तोत्तमतप्ततप्तान् ।।
महातिघोर प्रतप: प्रसक्तान् स्तुवे गणेशानपि तद् गुणाप्त्यै ।।५।।

वन्द्यान् सुरैर्घोरगुणाञ्च लोके पूज्यान्बुधैर्घोरपराक्रमांश्च ।।
घोरादिसंसद्गुणब्रह्मयुक्तान् स्तुवे गणेशानपि तद् गुणाप्त्यै ।।६।।

आमर्द्धिखेलर्द्धिप्रजल्लविट्प्रसर्वर्द्धिप्राप्तांश्च व्यथादिहन्तृन् ।।
मनो वचः कायवलोपयुक्तान् स्तुवे गणेशानपि तद् गुणाप्त्यै ।।७।।

सत्क्षीरसर्पिमधुरामृतार्द्धीन् यतीन् वराक्षीणमहानसांश्च ।।
प्रवर्धमानांस्त्रिजगत्सुपूज्यान् स्तुवे गणेशानपि तद् गुणाप्त्यै ।।८।।

सिद्धालयान् श्री महतोऽतिवीरान् श्रीवर्धमानर्द्धिविबुद्धिदक्षान्
सर्वान् मुनीन् मुक्तिवरानृषीन्द्रान् स्तुवे गणेशानपि तद् गुणाप्त्यै ।।९।।

नृसुरखचरसेव्या विश्वश्रेष्ठर्द्धिभूषा
विविधगुणसमुद्रा मारमातंगसिंहाः ।।
भवजलनिधिपोता वन्दिता मे दिशन्तु
मुनिगणसकलान् श्रीसिद्धदाः सदृषीन्द्रा ।।१०।।

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

दीक्षा वृक्षों के नाम (१)

न्यग्रोधो मदगंधिसर्जमशन श्यामे शिरीषोर्हता -
मेते ते किल नागसर्जजटिनः श्रीस्तिंदुकः पाटलाः ।।
जंब्वश्वत्थकपित्थनंदिकविटाम्राबंजुलश्चंपको
जीयाः सर्वकुलोऽत्र वांशिकधवौ शालश्च दीक्षाद्रुमाः ।।

तीर्थकरों के दीक्षा प्रधान वृक्ष

१. वट २. सप्तच्छद ३. साल ४. साल ५ प्रियंगु ६. प्रियगु ७ श्रीखंड (सिरस) ८. नागवृक्ष ९. साल १०. पलास ११. तिन्दुक १२. पाटल १३. जम्बू १४. पीपल १५. दधिपर्ण १६. नंदी १७. तिलक १८. आम्र १९. अशोक २०. चंपा २१. मौलसरी (बकुल) २२. बांस २३. धव २४. साल अनुक्रम से जानना।

दीक्षा पालकी

१ सुदर्शन २. सुप्रभा ३. सिद्धार्था ४. हस्तचित्रा ५. अभयकारी ६. निर्वृतकारी ७. सुमनोगति ८. विमला ९ सूर्यप्रभा १०. शुक्रप्रभा ११ विमलप्रभा १२. पुष्पभा १३. देवदत्ता १४ सागरदत्ता १५. नागदत्ता १६. सिद्धार्था १७ विजया १८. वैजयन्ति १९. जयन्ति २०. अपराजिता २१ उत्तरकुरु २२. देवकुरु २३. विमला २४. चन्द्रप्रभा

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ८३७

दीक्षावन

१. सिद्धार्थ २. सहेतुक (सहसाम्र) ३. सहेतुक ४ उग्रोद्यान ५. सहेतुक ६. मनोहर ७. सहेतुक ८ सर्वार्थ ९. पुष्पक १०. सहेतुक १२. मनोहर १३. सहेतुक १४. सहेतुक १५. शाल १६. आम्रवन १७. सहेतुक १८. सहेतुक १९. श्वेत २०. नील २१. चित्र २२. सहकार २३ अश्व २४. ज्ञात्र (नाथ)

दीक्षा विधि

वटवृक्षस्थापना(१)

शाखाच्छयेन योऽ सौ हरति खलु सतां कर्मधर्माशुतापं
य: सौख्योदारसारं फलति शुभफलं मोक्षनाकादिभेदं।
सेवन्ते य तदर्थं विबुधजनखगा यस्य चैवं प्रभावः
संगाजातो हि तस्य त्रिभुवनमहितः सोस्तु दीक्षाद्रुमोऽयं ॥

ओंह्रींणमोअरिहंताणंवृषभजिनस्यवटाख्यदीक्षावृक्षअत्रअवतरअवतरपुष्पाक्षतंक्षिपेत्

एवं विनिष्क्रम्य यमाससाद पुण्याश्रमं तीर्थकरः प्रशान्तः ।
स एव चायं जिनमण्डपोऽस्तु श्रीमूलवेद्यां विहितप्रतीच्यां ॥ (२)

तपोवनपुण्याश्रमस्थापनाय दीक्षाग्रहणमंडपे पुष्पाक्षतं क्षिपेत् ।

स्वचित्तकल्पे विपुले विशुद्धे शिलातले यत्र तु चन्द्रकांते ।
सुरेन्द्रकल्पे भगवान्निविष्टस्तदेव पीठं दृढमेतदस्तु ॥ (३)

सुरेन्द्ररचितचन्द्रकांतशिलास्थापनाय पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जिनबिम्बं समुत्तार्य पाषाणे वाथ पट्टके
दीक्षातरोरधोभागे प्राङ्मुखं चोत्तरोन्मुखं ॥ (४)

ओं ह्री धर्मतीर्थाधिनाथभगवन्निह सुरेन्द्रविरचितचन्द्रकांतशिलोपरि तिष्ठ तिष्ठ ।

शिला पर प्रतिमा विराजमान करें ।

तपोवन यत्तदिहास्तु दीक्षा वृक्षोऽपि सोयं च शिलापि सेयं ।
स पुण्यकालोऽप्ययमेव यद्यद्दीक्षोचितं तत्तदिहास्तु सर्वं ॥ (५)

दीक्षोचितसामग्रीस्थापनाय पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

(यहां तपकल्याणक की भक्तियां और मंत्रों का जाप करना चाहिए) ।

नोट - दीक्षा की क्रिया परदा लगाकर करना चाहिए ।

---

(१) श्री ने. दे, प्र. ति. पृष्ठ ५११ (२) श्री ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ ५१९ (३) वही, (४) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ८३७ (५) श्री ने. दे. प्र. ति. पृष्ठ ५२०

य सर्वसिद्धान्प्रणिपत्यकेशानुत्पाट्यदिव्याम्बरमालभूषाः।
त्यक्त्वा प्रवव्राज निजात्मलब्ध्यै स एव देवो जिन बिब एषः ॥ (१)

ओं णमो भगवतेऽर्हते सद्यः सामायिक प्रपन्नाय वस्त्राभूषणमपनयामि ।

(वस्त्राभरण उतारकर थाली में रखे) ।

विधिनायक प्रतिमा के सिर पर घिसी हुई गाढी केशर या पिसी हुई लवंग लगाकर फूल अलग कर लवंग लगा देवे ।

अत्र बिम्बस्याचेतनत्वाज्जिन कार्य केशलोचादि आचार्येणैव विधातव्यं तथा च अहं सर्वसावद्यविरतोऽस्मीति प्रतिज्ञायार्हद्‌भक्ति, सिद्धभक्ति, पाठो जिनोद्देशेनाचार्येण कार्यः । विधिमुद्दिश्यत्वाचार्यश्रुतभक्तिपाठः कर्तव्यः । अत्र कमंडलुपिच्छिकादानं तीर्थकरस्य शौचक्रियाजीवघाताभावाच्च न कर्तुं प्रभवति केवलं साधुत्वेव उपयोगि न तु प्रतिमायामर्हति च इत्याम्नायविदः ।

यदि साधु हैं तो केशलुंच उनसे ही करावे । यदि मुनिराज न हो तो प्रतिष्ठाचार्य सर्वपापों से रहित हूं ऐसी कल्पना के साथ अर्हत्, सिद्ध, श्रुत भक्ति करता हुआ केशलुंचन का कार्य करें ।

तत्र "नमः सिद्धेभ्यः" । इति मंत्रेण केशोत्पाटनं ।

ओं ह्रीं श्री अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः शिरप्रक्षालनं करोमि (सिर पर लगी केशर धोना चाहिए)

पिच्छिका प्रदान मंत्र

ओं णमो अरिहंताणं षट्‌जीवनिकाय रक्षणाय क्षमा- मार्दवादि गुणोपेतमिदं पिच्छिकोपकरणं गृहाण गृहाण ।

कमण्डलु प्रदान मंत्र

ओं णमो अरिहंताणं रत्नत्रय पवित्राय कृतोतमंगाय बाह्याभ्यन्तरमल विशुद्धाय नमः इदं शौचोपकरणं गृहाण गृहाण । जनता को धर्मोपदेश दिया जाय ।

नामकरणमंत्र

ओं ह्रीं दिगम्बराम्नाये तव वृषभनाथ नाम भवसि ।

तत्रोपदेशविधिना तु सभासदः स्युराचार्यकृतश्रुतवराग्रिमवाक्यपुष्टाः।
शीलं यमं शमदमेन्द्रियरोधनानि गृह्णीयुरिगितफलेषु यतो निपातः ॥(२)

एवं समासद्‌भ्यो धर्मोपदेशं दत्वातत्रापवरकेन जिनबिम्बं केशुचिदेव जनेषु योग्येषु दीक्षाविधिं नियुंज्यात् ।

---

(१) श्री जे दे., प्र ति पृष्ठ ५२० (२) आ. ज. से, प्र. पा. श्लोक ८४०

यः सर्वसावद्यनिवृत्तरूपं चारित्रमाद्यं विगतप्रमादं।
आसेदिवान्सिद्धगुणानुरक्तः स एव देवो जिन बिम्ब एषः [1]॥

ओं सामायिकचारित्रातिशयस्थापनाय पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

मनः पर्ययज्ञानोत्पत्ति।

तस्मिन्क्षणे त्वर्थ विबोधमुद्गमन्निव स्मरप्राणहरो जिनाधिपः।
उत्तार्यते यज्वभिरूढदीपकज्योतिर्भिरारद्युगसंख्यसत्फलैः॥[2]

ओं ह्रीं अर्ह णमो अ सि आ उ सा ज्योतिर्मयाय मनः पर्ययज्ञान प्राप्ताय नमः

(चार दीपक या कपूर की चार डली जलाकर प्रतिमा के सामने रखें और मनः पर्ययज्ञानोत्पत्ति बतावें।)

केश विसर्जन

यस्य प्रभो केशकलापमिन्द्रः संपूज्य निक्षिप्य च रत्नपात्रम्।
निक्षेपयामास पयः पयोधौ स एव देवो जिन बिम्ब एषः॥[3]

भगवत्केशकलापस्येन्द्रकृतार्चनरत्नपात्रस्थापनक्षीराब्धिनिक्षेपणस्थापनाय प्रतिमाग्रे पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

अंकन्यास

सालोकलोकत्रितयैकनित्यज्योतिः परब्रह्ममहोदयस्य।
साक्षादभिव्यंजनमेव शब्दब्रह्मेति मंत्रानिह तान्न्यसामि॥[4]

इति मंत्रन्यासप्रतिज्ञापनाय प्रतिमोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

तत्र तावदंकन्यासविधिः। कर्पूरचन्दनकाश्मीरादि सुगन्धद्रव्यैः सुवर्णशलाकया प्रतिमाया अंगेअंकन्यासो विधेयः।

तत्र तावदाचार्यः स्वशरीरे मातृकामंत्रं जपन् अंकानि संन्यस्य तदुत्तरं प्रतिमायां लेखनद्वारा कार्यो विधिः।

तथाहि -

ओं अ नमः ललाटे,	ओं आं नमः मुखवृते
ओं इ नमः दक्षनेत्रे,	ओं ई नमः वामनेत्रे
ओं उं नमः दक्षकर्णे,	ओं ऊं नमः वामकर्णे
ओं ऋ नमः दक्षनसि,	ओं ॠं नमः वामनसि
ओं लृं नमः दक्षगण्डे	ओं ॡं नमः वामगण्डे
ओं एं नमः अधःओष्ठे	ओं ऐं नमः उर्ध्वओष्ठे

(१) श्री ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ ५२४ (२) आ. ज. से., प्र. पाठ श्लोक ८४१
(३) श्री. ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ ५२३ (४) श्री. ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ ५५२

ओं ओं नमः अधोदन्ते
ओं अं नमः मूर्ध्नि
ओं कं नमः दक्षिणबाहुदण्डे
ओं गं नमः दक्षबाहुनाड़ी संधौ
ओं ङं नमः दक्षकराग्रे
ओं छं नमः वामबाहु मध्य संधौ
ओं झं नमः हस्तांगुलि संधौ
ओं टंनमः दक्षपाद मूले (जंघा)
ओं डं नमः दक्ष पाद गुल्फे
ओं णं नमः दक्ष पदाग्रे
ओं थं नमः वाम पाद मूले (जंघा)
ओं धं नमः वाम पाद गुल्फे
ओं पं फं नमः दक्ष पार्श्व दिवुक्ष्यतं,
ओं मं नमः उदरे
ओं रं नमः दक्ष स्कन्धे
ओं वं नमः वाम स्कंधे
ओं षं नमः हृदयादि वाम करे
ओं हं नमः हृदयादि वाम पादे
न्यसेत् स्थापयेच्च।

ओं औं नमः उर्ध्व दन्ते
ओं अः नमः जिह्वाग्रे
ओं खं नमः दक्षबाहुमध्य संधौ
ओं घं नमः दक्षकरांगुलि सधौ
ओं चं नमः वामबाहुदण्डे
ओं जं नमः वामहस्व नाड़ी सन्धौ
ओं ञं नमः वाम हस्ताग्रे
ओं ठं नमः दक्ष पाद मूले (जंघा)
ओं ढं नमः दक्ष पाद गुल्फे
ओं तं नमः वाम पाद मूले (जंघा)
ओं दं नमः वाम पाद गुल्फे
ओं नं नमः वाम पदाग्रे
ओं बं भं नमः वाम पार्श्व दिवुक्ष्यंतं
ओं यं नमः हृदि
ओं लं नमः ग्रीवाया
ओं शं नमः हृदयादि दक्षिण करे
ओं सं नमः हृदयादि दक्षिण पादे
ओं क्षं नमः हृदयादि जठरे

हिन्दी

अ ललाट में
इ दाहिन नेत्र
उ दक्षिण कान
ऋ दक्षिण नाक
लृ दक्षिण गाल
ए नीचे होंठ
ओ नीचे दात
अं मस्तक पर
क दाहिनी भुजा
ग दाहिने हाथ की नाड़ी सधी

आ मुखवृत मे
ई वाम नेत्र
ऊ वाम कान
ॠ वाम नाक
ॣ वाम गाल
ऐ ऊपर होंठ
औ ऊपर दांत
अः जिव्हा के अग्र भाग पर
ख दाहिनी भुजा मध्य सधी
घ दाहिने हाथ की अंगुली सधी

ङं दाहिने कराग्रे	च वाम भुजा
छ वाम भुजा मध्य संधी	ज वाम हाथ नाडी संधी
झ वाम हाथ अंगुली संधी	ञ वाम कराग्रे
ट दक्षिण पाद मूल (जघा)	ठँ दक्षिण पाद मूल (जंघा)
ड दक्षिण पाद गुल्फ	ढ दक्षिण पाद गुल्फ
ण दक्षिण पादाग्रे	त वाम पाद मूल (जंघा)
थ वाम पाद मूल (जंघा)	द वाम पाद गुल्फ
ध वाम पाद गुल्फ	न वाम पदाग्रे
पफ दक्षिण कुक्षि के पार्श्व मे	बभ वाम कुक्षि के पार्श्व में
म नाभि पर	य हृदय पर
र दाहिना कंधा	ल गला पर
व बायां कधा	श हृदय एवं दाहिने हाथ के मध्य
ष हृदय एवं बायें हाथ के बीच	स हृदय एवं दाहिने पांव के बीच
ह हृदय एवं बायें पाव के बीच	क्ष हृदय एवं नाभि के बीच

संस्कारमालारोपणम्

ततः अनादिसिद्धमंत्र जपेत् ।

णमो अरिहंताणं इत्यादि धम्मं सरणं पव्वज्जामि इति अन्तं स्वाहा । इत्यष्टोत्तरशतं जपः ततः पुष्पाणि सुवर्ण लवंग जात्यादि भवानि संगृह्यैकैक संस्कारमंत्रमुच्चार्य प्रतिमोपरि क्षेपः । (१)

सद्दृष्टिलाभाद्यपवर्गलक्ष्मीपर्यंततत्तत्पदसंभवंतीम् ।
संस्कारमालां निदधेष्ट चत्वारिंशन्मितामत्र जिनेन्द्रबिम्बे ।।(२)

(संस्कारमालारोपणप्रतिज्ञायै प्रतिमोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।)

प्रवर्द्धमानामलदर्शनस्य निर्बाधबोधस्य सदासमीचः ।
पवित्रचारित्रविधेः क्रमेण संस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे ।।(२)

१. ओं ह्रीं इहार्हति सद्दर्शनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

२. ओं ह्रीं इहार्हति सज्ज्ञानसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

३. ओं ह्रीं इहार्हति सच्चारित्रसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

द्विषट्प्रकारोग्रतपोभरस्य चतुर्विधाराधनगोचरत्वात् ।
विशिष्टवीर्यस्य चतुर्विधस्य संस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे ।

(१) आ. ज. से., प्र. पा पृष्ठ २७२ (२) श्री ने. दे, संस्कार माला पृष्ठ ५४४ से ५५१

४. ओं ह्रीं इहार्हति सत्तपः संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

५. ओं ह्री इहार्हति सद्वीर्यचतुष्टयसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

गुप्तित्रयास्याथ स पंचभेदसमित्युपेतस्य विशुद्धिहेतोः ।
मतेऽत्र मात्राष्टकसंज्ञितस्य संस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे ॥

६. ओं ह्री इहार्हति अष्टप्रवचनमातृकासंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

भैक्षेर्यकावान् शयनासनांगव्युत्सर्गचेतो विनयेषु सम्यक् ।
शुद्धे विशुद्ध्यष्टकसंचितायाः संस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे ॥

७. ओं ह्रीं इहार्हति शुद्ध्यष्टकावष्टंभ संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

परीषहाघोर्जितनिर्जयस्य त्रियोगजा सयमवर्जनस्य ।
कृत्तादिजासंयमसह्वतेश्च संस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे ॥

८. ओं ह्रीं इहार्हति परीषहजयसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

९. ओं ह्रीं इहार्हति त्रियोगेन संयमाच्युतिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

१०. ओं ह्रीं इहार्हति कृत्तकारितानुमोदनैरतिचारनिवृतिः संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

प्राणेन्द्रियाः सयमशीलनस्य दशप्रकारस्य तु शीलनस्य ।
पञ्चेन्द्रियाणा दृढनिश्चयस्य संस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे ।

११. ओं ह्री इहार्हति दशसंयमो परमः संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

१२. ओं ह्रीं इहार्हति पंचेन्द्रियजयः संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

अनादिसंवृत्तदुरन्तसंज्ञा चतुष्टयस्याति विनिग्रहस्य ।
दशप्रभेदोत्तमधर्मवृत्त्या सस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे ।

१३. ओं ह्री इहार्हति संज्ञानचतुष्टयनिग्रहसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

१४. ओं ह्रीं इहार्हति दशविधिधर्मधारणसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

अष्टादशाश्लिष्टसहस्रमानशीलावलेर्लक्षचतुष्कभाजां ।
अशीतिलक्षामितसद्गुणाना सस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे ॥

१५. ओं ह्रीं इहार्हति अष्टादशसहस्रशीलपरिशीलनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

१६. ओं ह्रीं इहार्हति चतुरशीतिलक्षोत्तरगुणसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

ध्यानस्य धर्मस्य सतोऽप्रमत्तवृत्तस्य चैकांततयायुतस्य ।
श्रुतोपयोगस्य दृढस्य बाढं संस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे ॥

१७. ओं ह्री इहार्हति अतिशयविशिष्टधर्मध्यानसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

१८. ओं ह्रीं इहार्हति अप्रमत्तसंयमसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

१९. ओं ह्रीं इहार्हति अतिदृढश्रुतोपयोगसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

अथास्खलत्सत्परिणामजाल समुल्लसच्छ्रेण्यधिरोहणस्य ।
शुद्धेरस्त थानंतगुणात्मिकायाः संस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे ।।

२०. ओं ह्री इहार्हति अप्रकंपक्षपकश्रेण्यारोहणसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

२१. ओं ह्रीं इहार्हति अनंतगुणशुद्धिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

अधःप्रवृत्तादिकृते पृथकत्ववितर्कवीचारमहासमाधेः ।
अपूर्वसम्यक्करणस्य तस्य संस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे ।

२२. ओं ह्री इहार्हति अधःप्रवृत्तिकरणप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

२३. ओं ह्रीं इहार्हति पृथक्त्ववितर्कवीचारशुक्लध्यानसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

२४. ओं ह्रीं इहार्हति अपूर्वकरणप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

ततोऽनिवृत्याधिकृतेश्च तस्याः कषायकाणामथबादराणां ।
निःसारिता किट्टिकृतेश्च तस्याः संस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे ।

२५. ओं ह्री इहार्हति अनिवृत्तिकरणप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

२६. ओं ह्री इहार्हति बादरकषायकिट्टिकरण संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

ततः परं सूक्ष्मकषायकिट्टिकृतेश्च तेषामथबादराणाम् ।
तत्किट्टिनिर्लेपनसंविधेश्च संस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे ।

२७. ओं ह्रीं इहार्हति सूक्ष्मकषायकिट्टिकरण संस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

२८. ओं ह्रीं इहार्हति बादरकषायकिट्टिकानिर्लेपनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

तत क्रमात्सूक्ष्मकषायकिट्टिनिर्लेपनंसूक्ष्मकषायवृत्तम् ।
इत्येतयोः क्षीणकषायतायाः संस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे ।

२९. ओं ह्री इहार्हति सूक्ष्मकषायकिट्टिकानिर्लेपनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

३०. ओं ह्री इहार्हति सूक्ष्म साम्परायचारित्रसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

३१. ओं ह्री इहार्हति प्रक्षीणमोहसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

क्रमाद्यथाख्यातचरित्रमैक्य-श्रुताद्यवीचारकशुक्लयोगः ।
निःशेषघातिक्षयइत्यमीषां संस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे ।।

३२. ओं ह्री इहार्हति यथाख्यातचारित्रप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

३३. ओं ह्रीं इहार्हति एकत्ववितर्कवीचारशुक्लध्यानसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा ।

३४. ओं ह्रीं इहार्हति घातिकर्मनिर्मूलनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा।

श्रीकेवलज्ञानदृगुद्भवस्य तीर्थप्रवृत्याख्यविधेः समाधेः।
सूक्ष्मक्रियाद्यप्रतिपातिनश्च संस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे।

३५. ओं ह्रीं इहार्हतिकेवलज्ञानदर्शनोद्भवसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा।

३६. ओं ह्रीं इहार्हतिधर्मतीर्थप्रवृत्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा।

३७. ओं ह्रीं इहार्हति सूक्ष्मक्रियाप्रतिपातिशुक्लध्यानपरिणत्व संस्कारः स्फुरतु स्वाहा।

शैलेश्यनुख्यातकृतेः प्रकर्षकृत्संवरस्यापि च योगकिट्टे।
कृत्तेश्च निर्लेपनसद्विधेश्च सस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे॥

३८. ओं ह्रीं इहार्हति शैलेषीकरणसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा।

३९. ओं ह्रीं इहार्हति परमसंवरसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा।

४०. ओं ह्रीं इहार्हति योगकिट्टिकाकरणसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा।

४१. ओं ह्रीं इहार्हति योगकिट्टिकानिर्लेपनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा।

ततः समुच्छिन्नमुखक्रियानिवृत्याख्ययोगस्य सुनिर्जरायाः।
निःशेषकर्मप्रकरक्षयस्य संस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे॥

४२. ओं ह्रीं इहार्हति समुच्छिन्नक्रियानिवृत्तिशुक्लध्यानप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा।

४३. ओं ह्रीं इहार्हति परमनिर्जरासंस्कारः स्फुरतु स्वाहा।

४४. ओं ह्रीं इहार्हति सकलकर्मक्षयाप्ति संस्कारः स्फुरतु स्वाहा।

अनंतदुर्वारदुरतदुखसंसारपर्यायपरक्षयस्य।
अनतसिद्धत्वसुपर्ययाप्ते संस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे॥

४५. ओं ह्रीं इहार्हति अनादिभवपरावर्तनविनाशसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा।

४६. ओं ह्रीं इहार्हति अनंतसिद्धपर्यायोपलब्धि संस्कारः स्फुरतु स्वाहा।

अदेहसम्यक्सहजाद्वितीयज्ञानोपयोगैश्वर्योपलब्धे।
तद्वत्सुदृष्टैश्वर्यस्य साक्षात् सस्कार एषोऽत्र चकास्तु बिम्बे॥

४७. ओं ह्रीं इहार्हति अदेहसहज ज्ञानोपयोगैश्वर्य संस्कारः स्फुरतु स्वाहा।

४८. ओं ह्रीं इहार्हति अदेह सहजदर्शनोपयोगैश्वर्य संस्कारः स्फुरतु स्वाहा।

एवमष्ट चत्वारिंशत्संस्काराधारित्वं प्रतिपाद्य एतदर्थारो पणान्तः करणेन आचार्येण सर्वप्रतिमासु पुष्पाञ्जलिःक्षेप्यः

नोट-प्रतिष्ठा तिलक एवं प्रतिष्ठासारोद्धार में अंकन्यास और संस्कार मालारोपण केवल ज्ञानकल्याणक मे लिखे है। सस्कारारोपण के पश्चात् तपकल्याणक पूजा करना।

तपकल्याणक पूजा

अथासिधाराव्रतमद्वितीय, निर्वाणदीक्षाग्रहणं दधानं ।
यमर्चयामासुरशेषशक्रास्तमर्चयामो जगदर्चनीयम् ।।

ओं ह्रीं तपकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशति जिनेन्द्राः अत्रावतरावतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

सारशान्तरसनिर्जितात्मवस्त्वत्पदाग्रप्रति तेन वारिणा ।
तीर्थकृन्मुनिललामः तावकं, यायजीमि पदपंकजद्वयम् ।।

ओं ह्रीं तीर्थकृन्मुनिललामं जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।।१।।

सद्गुणप्रणुतचन्दनेन ते, कीर्तिवत्सकलतोपपोषिणा ।
तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं, यायजीमि पदपंकजद्वयम् ।।

ओं ह्रीं तीर्थकृन्मुनिललामं संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।।२।।

त्वन्मुखेदुभाजनार्थमागतैःभव्रजैरिव वलक्षकाक्षतैः ।
तीर्थकृन्मुनिललामः तावकं, यायजीमि पदपंकजद्वयम् ।।

ओं ह्रीं तीर्थकृन्मुनिललामं अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।।३।।

सुप्रसादसुकुमारतादिभिः त्वद्वचोभिरिव नव्यपुष्पकैः ।
तीर्थकृन्मुनिललामः तावकं, यायजीमि पदपंकजद्वयम् ।।

ओं ह्रीं तीर्थकृन्मुनिललामं कामवाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।।४।।

चारुनाथ चरुणामृतांशुवद्धयं जनेरपि तदंकशंकिभिः ।
तीर्थकृन्मुनिललामः तावकं, यायजीमि पदपंकजद्वयम् ।।

ओं ह्रीं तीर्थकृन्मुनिललामं क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।५।।

धर्मदीपक न ते वयं समा भक्तुमित्थमितवत्प्रदीपकैः ।
तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं, यायजीमि पदपंकजद्वयम् ।।

ओं ह्रीं तीर्थकृन्मुनिललामं मोह अंधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।।६।।

सेव्यपाद न पथेद्वभृगंवत् स्यान्मतोपमसुधूपधूमकैः ।
तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं, यायजीमि पदपंकजद्वयम् ।।

ओं ह्रीं तीर्थकृन्मुनिललामं अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।।७।।

नम्रभव्यसुपुष्पानुकारिभिः सारभूत सहकारकादिभिः ।
तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं, यायजीमि पदपंकजद्वयम् ।।

ओं ह्रीं तीर्थकृन्मुनिललामं मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।।८।।

गुणमणिगणसिन्धून्भव्यलौकैकबंधून्। प्रकटितजिनमार्गान्ध्वस्तमिथ्यात्वमार्गान् ॥
परिचित निजतत्त्वान्पालिताशेषसत्वान्। समरसजितचन्द्रानर्घ्ययामोमुनीन्द्रान् ॥

ओं ह्रीं तीर्थकृन्मुनिललामं अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

श्री मद्बोधत्रयाढ्यप्रविमलचरितस्वात्मसद्ध्याननिष्ठ।
स्याद्वादांभोजभानो त्रिजगदुपकृतिव्यग्रयोगीश्वर त्वा ॥
अर्घ्य चानर्घ्यनानाविधविधिविहित द्रव्यमुद्धार्य वर्य।
प्रक्षिप्योदारपुष्पांजलिमलिकलितं भूरि भक्त्या नमाम ॥

ओं ह्रीं तीर्थकृन्मुनिललामं अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ ॥१०॥

प्रत्येक अर्घ

शोभने चैत्रमासे च कृष्णे सुनवमी दिने।
सर्वोपाधीन्परित्यज्य धारितं चोत्तम तपः ॥

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णानवम्यां तपकल्याणकप्राप्तात्रृषभायार्घ ॥१॥

माघमासे शुक्लपक्षे विशुद्धे नवमी दिने।
अजितं जितकर्मौघं महाभिषवसारथि ॥

ओं ह्रीं माघ शुक्ला नवम्यां तपकल्याणकप्राप्ताजितनाथायार्घ ॥२॥

मासे मार्गशिरे शुभ्रे शोभने पूर्णिमातिथौ।
संभवं व्रतदातारं यजे चारित्रभूषणं ॥

ओं ह्रीं मार्गशीर्ष शुक्ला पूर्णिमायां तपकल्याणकप्राप्तसंभव जिनायार्घ ॥३॥

निर्मले माघमासे च विशुद्धे न्दशमी दिने।
यजेऽभिनन्दन देवं लोकालोकप्रकाशकं ॥

ओं ह्रीं माघ शुक्ला दशम्यां तपकल्याणकप्राप्ताभिनन्दननाथायार्घ ॥४॥

वैशाखशुभ्रपक्षे च पवित्रे नवमी दिने।
यजामि सुमति देवं, तपोभारविभूषित ॥

ओं ह्रीं वैशाख शुक्ला नवम्यां तपकल्याणकप्राप्तासुमतयेऽर्घ ॥५॥

कार्तिकेमेचके पक्षे त्रयोदश्यां दिने वरे।
तपोलक्ष्मीसुभर्तार संसारांबुधितारकं ॥

ओं ह्रीं कार्तिककृष्णात्रयोदश्यां तपकल्याणकप्राप्तपद्मप्रभायार्घ ॥६॥

ज्येष्ठमासार्जुने पक्षे, सुलग्ने द्वादशी दिने।
श्रीसुपार्श्व महादेवं, तपोऽधीश समर्चये ॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठशुक्लाद्वादश्यां तपकल्याणकप्राप्तसुपार्श्वनाथायार्घ ॥७॥

पौषे च श्यामले पक्षे चैकादश्यां तपोर्जितं ।
चन्द्रप्रभं यजे नित्यं कर्माष्टकविनाशकं ।।
ओं ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपकल्याणकप्राप्तचन्द्रप्रभायार्घ ।।८।।

मासे मार्गशिरे शुक्ले शोभने प्रतिपत्तिथौ ।
श्री सुविधि यजे नित्यं सच्चारित्रमहोदधिं ।।
ओं ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लाप्रतिपदायां तपकल्याणकप्राप्तपुष्पदन्तायार्घ ।।९।।

माघमासे श्यामपक्षे द्वादश्यां सुतपोर्जितं ।
शीतलेशं मुदा चर्चे सुद्रव्यैः तपसेऽधुना ।।
ओं ह्रीं माघकृष्णाद्वादश्यां तपकल्याणकप्राप्तशीतलजिनायार्घ ।।१०।।

फाल्गुने श्यामले पक्षे चैकादश्यां जिनेशिनं ।
तपस्तप्तं द्विधा सम्यक् वाह्याभ्यन्तरशुद्धिदं ।।
ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णाएकादश्यां तपकल्याणकप्राप्तश्रेयोजिनायार्घ ।।११।।

फाल्गुने कृष्णपक्षे च, चतुर्दश्यां जिनेशिनं ।
अर्चे महातपस्तप्तं कर्माष्टक सुहानये ।।
ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णाचतुर्दश्यां तपकल्याणकप्राप्तवासुपूज्यायार्घ ।।१२।।

माघशुक्ले चतुर्थ्यां वै द्विधा संगपरित्यजन् ।
नानाभेदं तपस्तप्तं चर्चे श्रीविमलेश्वरं ।।
ओं ह्रीं माघशुक्लाचतुर्थ्यां तपकल्याणकप्राप्तविमलदेवायार्घ ।।१३।।

ज्येष्ठस्य श्यामले पक्षे, द्वादश्यां कर्महानये ।
द्वादशधा तपस्तप्तं यजेऽनंततपोनिधिं ।।
ओं ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णाद्वादश्यां तपकल्याणकप्राप्तानंतजिनायार्घ ।।१४।।

माघशुक्ले त्रयोदश्यां द्विधा संगं परित्यजन् ।
यजे भक्त्या शुभैर्द्रव्यैः धर्मनाथं तपोभरं ।।
ओं ह्रीं माघशुक्लात्रयोदश्यां तपकल्याणकप्राप्तधर्मनाथायार्घ ।।१५।।

ज्येष्ठ कृष्ण सुपक्षे च चतुर्दशी दिने मुदा ।
द्विधा परिग्रहं त्यक्तं शांतिचर्चेतपोर्जितं ।।
ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां तपकल्याणकप्राप्तशांतिनाथायार्घ ।।१६।।

वैशाखे शुक्ले प्रतिपद्दिने तपोर्जितं महत् ।
द्विधा मूर्च्छा परित्यज्य संयजामि दिगम्बरम् ।।
ओं ह्रीं वैशाखशुक्लाप्रतिपदायां तपकल्याणकप्राप्तकुन्थुनाथायार्घ ।।१७।।

मार्गशीर्षे शुक्लपक्षे दशम्यां च जिनोत्तम ।
कर्माष्टकविनाशाय तमरं पूजये त्वह ॥

ओं ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लदशम्यां तपकल्याणकप्राप्तारनाथायार्घ ॥१८॥

मार्गशीर्षे शुचौ पक्षे विशुद्धैकादशी दिने ।
द्विधा तपो धृतं संगंत्यक्तं चार्चे जिनं मुदा ॥

ओं ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लैकादश्यां तपकल्याणकप्राप्तमल्लिनाथायार्घ ॥१९॥

वैशाखे मेचके पक्षे दशम्या सुव्रतं जिनं ।
तपस्तप्तं महाघोरं सयजे कर्महानये ॥

ओं ह्रीं वैशाखकृष्णादशम्यां तपकल्याणकप्राप्तमुनिसुव्रतनाथायार्घ ॥२०॥

आषाढे कृष्णपक्षे च दशम्यां शुभवासरे ।
द्विधातप्तं तपो येन नमिनाथमहं यजे ॥

ओं ह्रीं आषाढकृष्णादशम्यां तपकल्याणकप्राप्तनमिनाथायार्घ ॥२१॥

नभसि श्वेतपक्षे च षष्ट्या तपोऽर्जित महत् ।
द्विधा संग विमुच्याशु संयमाप्त यजे मुदा ॥

ओं ह्रीं श्रावणशुक्लाषष्ठयां तपकल्याणकप्राप्तनेमिनाथायार्घ ॥२२॥

पौषमासे सुकल्याणे, मेचकैकादशी दिने ।
द्विधा तप्त तपो येन सयजे त तपोनिधि ॥

ओं ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपकल्याणकप्राप्तपार्श्वनाथायार्घ ॥२३॥

मार्गशीर्षदशम्या च कृष्णपक्षे तपोगत ।
द्विधातप्तं तपो येन सयजे भवहानये ॥

ओं ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णादशम्यां तपकल्याणकप्राप्तमहावीरायार्घ ॥२४॥

जयमाला

वनभवनपतीना दिव्यसार्ध किरीटं मनुजविशदभाश्चंदश्चसंघातशुद्ध ।
सलिलसुभगधाराधौतपादारविन्दचरणधृतिगृहीततुर्यज्ञानाय जन्तु. ॥१॥

छन्दस्त्रग्विणी

राज्यभोगाहितं मानसाकारण, किंचिदाप्य परित्यचराजादिक
ते पुनतु जिनाभूजना हितकराश्चारुचारित्रसंभूषिता भासुराः ॥२॥

ब्रह्मलौकान्तिकैर्बोधिता सत्सुरैः, सद्वचोभिर्नतिपूर्वकै भाषितैः ।
ते पुनतु जिनाभूजना हितकराश्चारुचारित्रसंभूषिता भासुरा ॥३॥

स्वर्णभौमे सुरैनाथनाथैररं, सोत्सवं स्नापये संस्तुता सादरों ।
ते पुनंतु जिनाभूजना हितकराश्चारुचारित्रसंभूषिता भासुराः ।।४।।

भूचरैः खेचरैः सर्वशक्रैर्घनैः, धृत्यकंधे सुरैः वने संस्थापितैः ।
ते पुनंतु जिनाभूजना हितकराश्चारुचारित्रसंभूषिता भासुराः ।।५।।

सिद्धदेवं नमस्कृत्य यैर्मूर्धजा, लुंचिताः पाणिना मुक्तिसंगंव्रजाः ।
ते पुनंतु जिनाभूजना हितकराश्चारुचारित्रसंभूषिता भासुराः ।।६।।

लुंचकेशादि ये स्वर्णपात्रैर्मलैः, स्थाप्य शक्रैर्धृता क्षीरशुद्धैर्जलैः ।
ते पुनंतु जिनाभूजना हितकराश्चारुचारित्रसंभूषिता भासुराः ।।७।।

शुद्धपंचव्रतगुप्तित्रयधारका, पंचसमितिधरा मानमुक्ताधिकाः ।
ते पुनंतु जिनाभूजना हितकराश्चारुचारित्रसंभूषिता भासुराः ।।८।।

गुणैः सुमूलैर्युता अष्ट विशंकै, तेन्यसर्वैगुणैर्युक्तिसंख्यादिकैः ।
ते पुनंतु जिनाभूजना हितकराश्चारुचारित्र संभूषिता भासुराः ।।९।।

शुद्धशीला महातुर्यज्ञानादिका, नग्नरूपा महासंयमैर्भूषिताः ।
ते पुनंतु जिनाभूजना हितकराश्चारुचारित्र संभूषिता भासुराः ।।१०।।

ग्रीष्मप्रावृड् हिमे निश्चले ये स्थिता योगसंसाधिका शुक्लध्यानेरताः ।
ते पुनंतु जिना भूजना हितकराश्चारुचारित्र संभूषिता भासुराः ।।११।।

शुद्धवृतैर्महायोगभिर्ये नुता, इत्यनेकैर्गुणैर्दीक्षताः शोभिताः ।
ते पुनंतु जिना भूजना हितकराश्चारुचारित्र संभूषिता भासुराः ।।१२।।

घत्ताछंद- परमगुणगरिष्ठं स्वात्मज्ञानप्रविष्टाः प्रहतसकलदोषा जन्मदुःखातिभीताः ।
भुवनपतिजपुष्टाः सर्वकार्येषु तुष्टाः धनपतिवृत्तिवंद्याः पान्तु भव्यान् सदैव ।।१३।।

ओं ह्रीं तपकल्याणक प्राप्तेभ्यः चतुर्विंशततीर्थकरेभ्यः अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

चतुर्विंशतितीर्थेशा अनेकगुणरत्नकाः ।
चारित्रमतिकोपाराः पान्तु यस्मान् सदैव ते ।।१४।। **इत्याशीर्वादः।**

तपकल्याणक पूजन

गीता- श्री रिषभदेव सु आदि जिन श्रीवर्द्धमान जु अंत हैं।
वन्दुहुं चरण वारिज तिन्होंके जयत तिनको संत हैं ॥
करके तपस्या साधु व्रत ले मुक्ति के स्वामी भए।
तिन तपकल्याणक यजनको द्रव्य आठों हैं लए ॥

ओं ह्रीं श्रीऋषमादि वर्धमानजिनाः अत्रावतरावतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्रमम सन्निहितो भव भव वषट्।

(चाली)

शुचि गंगाजल भर झारी, रुज जन्म मरण क्षयकारी।
तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥

ओं ह्रीं तपकल्याणकप्राप्त ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल चंदन घसि लाऊँ, भवका आताप शमाऊँ।
तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥

ओं ह्रीं तपकल्याणकप्राप्त ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत ले शशि द्युतिकारी, अक्षयगुण के करतारी।
तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥

ओं ह्रीं तपकल्याणकप्राप्त ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बहूफूल सुवर्ण चुनाऊँ, निज काम व्यथा हटवाऊँ।
तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥

ओं ह्रीं तपकल्याणकप्राप्त ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

चरु ताजे स्वच्छ बनाऊँ, निज रोग क्षुधा मिटवाऊँ।
तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥

ओं ह्रीं तपकल्याणकप्राप्त ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक ले तम हरतारा, निज ज्ञानप्रभा विस्तारा।
तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥

ओं ह्रीं तपकल्याणकप्राप्त ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपायन धूप खिवाऊँ, निज आठों कर्म जलाऊँ।
तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥

ओं ह्रीं तपकल्याणकप्राप्त ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल सुन्दर ताजे लाऊँ, शिवफल ले चाह मिटाऊँ ।
तपसी जिन चोविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ।।

ओं ह्री तपकल्याणकप्राप्त ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभ आठों द्रव्य मिलाऊँ, करि अर्घ्य परम सुख पाऊँ ।
तपसी जिन चोविस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ।।

ओं ह्री तपकल्याणकप्राप्त ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

२४ तीर्थकरों की तपकल्याणक तिथि के २४ अर्घ्य

नौमी वदि चेत प्रमाणी, वृषभेश तपस्या ठानी ।
निज मे निज रूप पिछाना, हम पूजत पाप नशाना ।।

ओ ह्री चैत्रकृष्णानवम्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ ।।१।।

नवमी शुभ माघ सुदी को, अजितेश लियो तप नीको ।
जग का सब मोह हटाया, हम पूजत पाप भगाया ।।

ओं ह्री माघ शुक्ला नवम्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीअजितनाथ जिनेन्द्राय अर्घ ।।२।।

मगसिर सुदि पूरणमासी, सभव जिन होय उदासी ।
केशलोच महातप धारो, हम पूजत भय निरवारो ।।

ओं ह्री अगहनशुक्लापूर्णमास्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय अर्घ ।।३।।

दशमी शुभ माघ सुदी की, अभिनंदन वन चलने की ।
चित ठान परम तप लीना, हम पूजत हे गुण चीन्हा ।।

ओं ह्री माघशुक्लादश्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीअभिन्दननाथजिनेन्द्राय अर्घ ।।४।।

नौमी वैसाख सुदी मे, तप धारा जाकर वन मे ।
श्री सुमतिनाथ मुनिराई, पूजूँ मैं ध्यान लगाई ।।

ओं ह्री वैशाखशुक्लानवम्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ ।।५।।

कार्तिक वदि तेरसि गाई, पद्मप्रभ समता भाई ।
वन जाय घोर तप कीना, पूजे हम सम सुख भीना ।।

ओं ह्री कार्तिककृष्णात्रयोदश्यां तपकल्याणप्राप्त श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ ।।६।।

वदि द्वादश जेठ सुहाई, बारह भावन प्रभु भाई ।
तप लीना केश उखाडे, पूजूँ सुपार्श्व गति ताडे ।।

ओं ह्री ज्येष्ठशुक्लाद्वादश्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीसुपार्श्वजिनेन्द्राय अर्घ ।।७।।

एकादश पौष वदी को, चन्द्रप्रभ धारा तप को।
वन में जिन ध्यान लगाया, हम पूजत ही सुख पाया ॥

ओं ह्रीं पौषकृष्णाएकादश्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ ॥८॥

अगहन सुदि एकम जाना, श्री पुष्पदंत भगवाना।
तप धार ध्याय निज कीना, पूजूँ आतम गुण चीन्हा ॥

ओं ह्रीं अगहनशुक्ला प्रतिपदायां तपकल्याणकप्राप्त श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय अर्घ ॥९॥

द्वादशि वदी माघ महीना, शीतल प्रभु समता भीना।
तप राखो योग सम्हारो, पूजें हम कर्म निवारो ॥

ओं ह्रीं माघकृष्णाद्वादश्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ ॥१०॥

वदि फाल्गुन ग्यारस गाई, श्रेयासनाथ सुखदाई।
हो तपसी ध्यान लगाया, हम पूजत है जिनराया ॥

ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णाएकादश्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अर्घ ॥११॥

वदि फाल्गुन चौदसि स्वामी, वासुपूज्य शिवगामी।
तपसी हो समता साधी, हम पूजत धार समाधी ॥

ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णा चतुर्दश्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घ ॥१२॥

शुदि माघ चौथ हितकारी, श्री विमल सुदीक्षा धारी।
निज परिणति में लय पाई, हम पूजत ध्यान लगाई ॥

ओं ह्रीं माघशुक्लाचतुर्थ्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ ॥१३॥

द्वादशि वदि जेठ सुहानी, वन आए जिन त्रय ज्ञानी।
धर सामायिक तप साधा, हम पूजूँ अनंत हर बाधा ॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णाद्वादश्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय अर्घ ॥१४॥

तेरस सुदि माघ महीना, श्री धर्मनाथ तप लीना।
वन में प्रभु ध्यान लगाया, हम पूजत मुनिपद ध्याया ॥

ओं ह्रीं माघशुक्लात्रयोदश्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ ॥१५॥

चौदस शुभ जेठ वदी में, श्री शांति पधारे वन में।
तंह परिग्रह तज तप लीना, पूजूँ आतमरस भीना ॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णाचतुर्दश्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घ ॥१६॥

करि दूर परिग्रह सारी, वैसाख शुदी पड़िवारी।
श्री कुन्थु स्वात्मरस जाना, पूजन से हो कल्याणा ॥

ओं ह्रीं वैसाखशुक्लाप्रतिपदायां तपकल्याणकप्राप्त श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय अर्घ ॥१७॥

अगहन शुदि दशमी गाई, अरनाथ छोड़ गृह जाई ।
तप कीना होय दिगंबर, पूजें हम शुभ भावों कर ॥

ओं ह्रीं अगहनशुक्लादशम्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अर्घ ॥१८॥

अगहन सुदि ग्यारस कीना, सिर केशलोंच हित चीन्हा ।
श्रीमल्लि यती व्रतधारी, पूजें नित साम्य प्रचारी ॥

ओं ह्रीं अगहनशुक्लाएकादश्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अर्घ ॥१९॥

वैसाख वदि दशमी को, मुनिसुव्रत धारा व्रत को ।
समतारस में लौ लाए, हम पूजत ही सुख पाए ॥

ओं ह्रीं वैसाखकृष्णादशम्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय अर्घ ॥२०॥

दशमी आषाढ वदी की, नमिनाथ हुए एकाकी ।
वन में निज आतम ध्याये, हम पूजत ही सुख पाये ॥

ओं ह्रीं आषाढकृष्णादशम्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ ॥२१॥

छठि श्रावण शुक्ला आई, श्री नेमिनाथ वन जाई ।
करुणा धर पशु छुडाए, धारा तप पूजूँ ध्याये ॥

ओं ह्रीं श्रावणशुक्लाषष्ट्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ ॥२२॥

लखि पौष इकादशि श्यामा, श्री पार्श्वनाथ गुणधामा ।
तप ले वन आसन आना, हम पूजत शिवपद पाना ॥

ओं ह्रीं पौषकृष्णाएकादश्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीपार्श्वजिनेन्द्राय अर्घ ॥२३॥

अगहन वदि दशमी गाई, बारह भावन शुभ भाई ।
श्री वर्द्धमान तप धारा, हम पूजत हों भव पारा ॥

ओं ह्रीं अगहनकृष्णादशम्यां तपकल्याणकप्राप्त श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अर्घ ॥२४॥

जयमाल

(भुजंगप्रयात)

नमस्ते नमस्ते नमस्ते मुनिन्दा । निवारें भली भाँति से कर्म फन्दा ॥
संवारे सुद्वादश तपं वन मझारी । सदा हम नमत हैं तिन्हें मन सम्हारी ॥१॥

त्रयोदश प्रकारं सु चारित्र धारा । अहिंसा महा सत्य अस्तेय प्यारा ॥
परम ब्रह्मचर्य परिग्रह तजाया । सु धारा महा संयमं मन लगाया ॥२॥

दया धार भू को निरखकर चलत हैं । सुभाषा महाशुद्ध मीठी वदत हैं ।
करैं शुद्ध भोजन सभी दोष टालें । दया को धरें वस्तु ले मल निकालें ॥३॥

वचन काय मन गुप्ति को नित्य धारें । धरम ध्यान से आत्म अपना विचारें ।
धरें साम्य भावं रहें लीन निज में । सुचारित्र निश्चय धरें शुद्ध मन में ॥४॥

ऋषभ आदि श्री वीर चौबिस जिनेशा । बड़े वीर क्षत्री गुणी ज्ञान ईशा ।
खड्ग ध्यान आतम कुबल मोह नाशा । जजें हम यतन से स्व आतम प्रकाशा ॥५॥

दोहा - धन्य साधु सम गुण धरें, सहें परीषह धीर ।
पूजत मंगल हो महा, टलें जगतजन पीर ॥

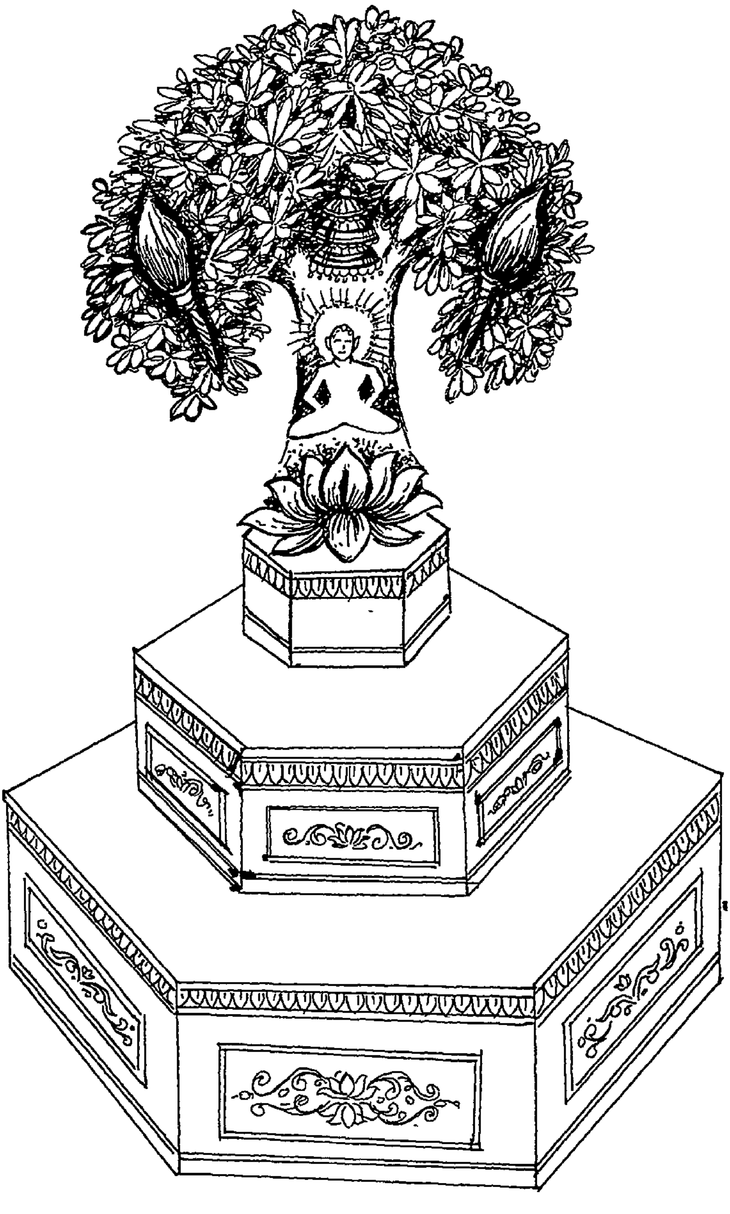
ओं ह्रीं तपकल्याणकप्राप्तवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्योमहार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पश्चात् पूर्णार्घ चढ़ाकर शांतिभक्ति शांति पाठ पढ कर विसर्जन करें ।

ततः सभा विसर्जनं वादित्राद्युपस्करविसर्जनं च कृत्वा एकाकी आचार्यो वा इन्द्रश्च प्रतिमां वेदिकायां नयेत्

सभा विरार्जन कर आचार्य या इन्द्र गुप्त रीति से प्रतिमा को वेदिका पर विराजमान करें ।

(नौ बार णमोकार मंत्र पढे)



ज्ञान कल्याणक

मंत्र - (१) मातृका मंत्र
(२) वर्धमान मंत्र
(३) बोधि समाधि मंत्र
(४) तिलकदान मंत्र
(५) सिद्धचक्र मंत्र
(६) नयनोन्मीलन मंत्र
(७) सूर्यकला मंत्र
(८) चन्द्रकला मंत्र
(९) प्राण प्रतिष्ठा मंत्र
(१०) सूरि मंत्र
(११) मोक्षमार्ग मंत्र

मण्डल - चौवीस तीर्थंकर मण्डल,

यंत्र - (१) मातृका यंत्र
(२) वर्धमान यंत्र
(३) बोधिसमाधि यंत्र
(४) सिद्ध चक्र यंत्र
(५) नयनोन्मीलन यंत्र
(६) श्रुतस्कंध यंत्र
(७) सर्व सम्पत्तिकर यंत्र
(८) मोक्ष मार्ग यंत्र

भक्तियां - (१) सिद्ध भक्ति
(२) श्रुत भक्ति
(३) तीर्थंकर भक्ति
(४) चारित्र भक्ति
(५) योगि भक्ति
(६) शान्ति भक्ति

अन्य - (१) चौकोर शिला

ज्ञान कल्याणक

ज्ञान कल्याणक के दिन प्रातः काल यज्ञ वेदिका पर प्रतिष्ठा पात्रों द्वारा अभिषेक शांतिधारा, नित्यमह एवं तपकल्याणक पूजा, शांतिहवन पुण्याहवाचन, शांतिपाठ, विसर्जन करे।

यज्ञ वेदी से दक्षिण दिशा में आहारगृह की पूर्ण तैयारी करें ऊपर चन्दोवा लगा हो। आहार देखने वालो को बैठने की व्यवस्था हो एव आहार देने वाले दान तीर्थ के प्रवर्तक राजा सोम व श्रेयांस की व्यवस्था बोली द्वारा नहीं करें। वह आहार दान के उपलक्ष्य में जो दान दे वह ग्रहण करें। अन्य दातार भी आहार देने के लिए शक्ति अनुसार राशि अवश्य दे। तीर्थकर को आहार देने की महानता सबको नहीं मिलती महान पुण्योदय से यह अवसर मिलता है। आहार वाली स्टेज ऊंची हो कि देखने वाले शांति के साथ आहार क्रिया देख सके। सिद्ध भक्ति पाठ पढ़कर नौ बार णमोकार मंत्र पढें पश्चात् विधिनायक प्रतिमा जो मुनिराज के रूप में हैं। सिर पर रखकर ईर्यासमिति से धीरे धीरे चलें। आहार को जाते समय या आहार लेते समय जयकारा न लगावें। शांति के साथ शुद्ध वस्त्र पहन कर एवं सयम पालन योग्य प्रतिज्ञा लेकर आहार दान दें। राजा सोम व श्रेयास पत्नी सहित पडगाहन क्रिया करें। उच्चासन पर विराजमान कर नवधा भक्ति पूर्वक पूजा करें।

आहार क्रिया

पूजा (आहार समय)

गीता- श्री ऋषभदेवसु आदि जिन युग आदि के तीर्थेश हैं
वन्दहु चरण वारिज जिन्हों के जपत तिनहि सुरेश हैं
यह साधुव्रत लेकर तपस्या ध्यान धर मौनी भये
लघु शक्ति मुनि के हेतु विधि आहार आचरते भये।

दोहा - धन्य धन्य ऋषभेश मुनि धन्य धन्य तप साज।
गृह पवित्र तुम चरण से हुआ नाथ यह आज ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभनाथमुनीन्द्र अत्र अवतर अवतर, तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, सन्निधिकरणम् पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

अष्टक (चाल छन्द)

सुन्दर शुभ नीर सुल्याये, मुनि चरणन पास चढ़ाये।
तपसी वृषभेश सुहाये, हम पूजत मंगल गाये ॥

ओं ह्रीं श्री वृषभनाथमुनीन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ब्र शीतल प्रसाद, प्रतिष्ठा सार सग्रह पृष्ठ १३२

कुंकुम चन्दन घिसलाऊं, भव का आताप नशाऊं।
तपसी वृषभेश सुहाये, हम पूजत मंगल गाये ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभनाथमुनीन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

शशि सम अक्षत सुखकारी, अक्षय गुण के करतारी।
तपसी वृषभेश सुहाये, हम पूजत मंगल गाये ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभनाथमुनीन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

शुचि सुन्दर पुष्प सुल्यायो, शरवाण तुरत नशायो।
तपसी वृषभेश सुहाये, हम पूजत मगल गाये ॥

ओं ह्रीं श्री वृषभनाथमुनीन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

चरु ताजे मिष्ट बनाये, निजरोग क्षुधा विनशाये।
तपसी वृषभेश सुहाये, हम पूजत मंगल गाये ॥

ओं ह्रीं श्री वृषभनाथमुनीन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक तम नाशनहारा, सत ज्ञानप्रभा विस्तारा।
तपसी वृषभेश सुहाये, हम पूजत मंगल गाये।

ओं ह्रीं वृषभनाथमुनीन्द्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दश गंध सु धूप खिवाऊं, निज आठों कर्म जलाऊं।
तपसी वृषभेश सुहाये, हम पूजत मंगल गाये ॥

ओं ह्रीं श्री वृषभनाथमुनीन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल सुंदर सुखद अनूपा, पाऊं शिवथल निज रूपा।
तपसी वृषभेश सुहाये, हम पूजत मंगल गाये ॥

ओं ह्रीं श्री वृषभनाथमुनीन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वसु द्रव्य मिलाकर लाऊं, कर अर्घ परम सुखपाऊं।
तपसी वृषभेश सुहाये, हम पूजत मंगल गाये ॥

ओं ह्रीं श्री वृषभनाथमुनीन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाल (सृग्विणी छंद)

जय मुदा रूप तेरे सदा दोषना ज्ञान श्रद्धान पूरित धरें शोकना ॥
राज्य को त्याग वैराग्य धारी भये मुक्ति का राज्य लेने परम मुनि भये ॥१॥
आत्म को जानके, पाप को भानके तत्त्व को पायके ध्यान उर आन के।
क्रोध को हान के मान को हान के लोभ को जीत के मोह को भान के ॥२॥

धर्म मय होय के साधते मोक्ष को बाधते मोक्ष को जीतते द्वेष को ॥
शांतता धारते साम्यता पालते आप पूजन किए सर्व अघ बालते ॥३॥

धन्य है आज हम दान सम्यक् करें पात्र उत्तम महापाप के दुख हरें ॥
पुण्य संपत्ति भरे काज हमरे सरे आप सम होयके जन्म सागर तरें ॥४॥

ओं ह्रीं श्री वृषभनाथमुनीन्द्राय जयमालार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

पश्चात् आहार मुद्रा अंजुली बनाकर प्रतिष्ठाचार्य इक्षु रस लेकर थाली में छोड़ते जायें, प्रतिमा पर कोई क्रिया न करें। प्रतिमा के सामने विधि करें। आहार के बाद प्रतिमा शिर पर रखकर पुनः वन स्थान में विराजमान करें। मध्यान्ह में ज्ञानकल्याण की क्रिया करें। वन में ध्यानस्थ मुद्रा से निर्विकल्प अवस्था को प्राप्तकर घातिया कर्मो के अभाव करने का मार्ग चल रहा है, ऐसा ज्ञान दर्शकों को कराया जावे।

मंगलाष्टक, दिग्बंधन, पात्रशुद्धि, रक्षा मंत्र, शांति मंत्र, पूजा प्रस्तावना, विनायक यंत्र, नवदेव अर्घ चढ़ाकर पंचकल्याणक स्त्रोत एवं भक्तियां पढ़नें के पश्चात् कार्य आरंभ करें। निम्न मंत्रों की जाप करें। इन मंत्रों की समस्त इन्द्र इन्द्राणी णमोकार मंत्र की जाप करें।

मातृका मंत्र

ओं नमोऽर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः । क ख ग घ ङ। च छ ज झ ञ । ट ठ ड ढ ण । त थ द ध न । प फ ब भ म । य र ल व । श ष स ह । क्लीं ह्रीं क्रौं स्वाहा (१०८ बार जाप करना)

वर्धमान यंत्र

ओं णमो भयवदो वड्ढमाणस्स रिसहस्स जस्स चक्कं जलंतं गच्छई, आयासं पायालं लोयाणंभूयालंजयेवा विवादेवा रणांगणेवा थंभणेवा मोहणेवा सव्वजीव सत्ताणंअपराजिदो भवदु मे रक्ख रक्ख स्वाहा (१०८ बार जाप करना)

वन स्थापन [१]

शाखाच्छ्रयेन योऽसौ हरति खलु सतां कर्म धर्मांशु तापं
यः सौख्योदारसारं फलति शुभफलं मोक्षनाकादिभेदम् ।
सेवंते यं तदर्थं विबुधजनखगा यस्य चैवं प्रभावः
संगाज्जातो हि तस्य त्रिभुवनमहितः सोऽस्तु बोधिद्रुमोऽयं ॥

वन स्थापनार्थं पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

(१) श्री. ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ ५७३

मातृका यंत्र का अभिषेक करके बाजौटा पर चौकोर शिला रखे और उसके ऊपर मातृका यंत्र की स्थापना कर विधिनायक प्रतिमा को यागमंडल की वेदी पर विराजमान करें ।

बिम्ब स्थापन मंत्र

ओं णमो सिद्धाणं भगवान स्वयंभू रत्न सुनिविष्टो भवत्विति स्वाहा ।

विधिनायक एव प्रतिष्ठेय प्रतिमाओ पर पुष्प क्षेपण करे। उनको ध्यानमग्न मुद्रा की कल्पना करें ।

ध्यानस्थमुद्रा एवं स्तवन (मोतियादाम)[1]

नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु मुनीश, परम तप के करतार मुनीश ।
न मोह न मान न क्रोध न लोभ, न हास्य न खेद न द्रोह न क्षोभ ॥१॥

ममत्व न राग पदारथ सर्व, चिदातम वेदत छोड़त गर्व ।
सुभेद विज्ञान जग्यो जग बीच, सु आतम अनुभव लावतखीच ॥२॥

स्वतत्त्व रमन्त करत निज काज, कषाय रिपू दलने को आज ।
लियो सतध्यान मई असिधार, नमूं जिनको तुम कर्म निवार ॥३॥

बाह्याभ्यंतरभेदतो द्विविधता तत्रापि षट्भेदकं
बाह्यावान्तरमेधितस्वविभवप्रत्यूहनिर्णाशनात् ।
भक्ष्याभावतदूनताव्रतपरीसंख्यानषट्स्वादना-
मोहैकान्तशयासनांगकदनान्येवं तु बाह्यं तपः ॥

ओं ह्रीं अनशनावमौदर्यवृत्तिपरिसंख्यान रसपरित्यागैकान्त शय्यासनकायक्लेशषट् प्रकार बाह्यतपोधारक जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अन्त्ये दोषविसगतो न भवति प्रायश्चिताना क्रमो
नो वा यत्र विनेयता व्युपरमादौपाधिकस्योद्भवः ।
नान्यत्र स्थितिमत्सु साधुषु तथा वैयावृतेः प्रक्रमो
नो वा शास्त्रसुशीलन त्विति परं पार्येण बोध्य जिने ॥
व्युत्सर्ग प्रतिवारारं प्रसरतो ध्यानं स्वमाध्यायत
आख्यामात्रमुपाचरत्प्रतिकृतेर्मार्गप्रलंभावनात् ।
गाढोत्कृष्टसुसहनस्य जिनपस्यास्येति संरूढितः
क्लृप्त तच्छुचिनामतत्फलगणै सपूजयाम्यादरात् ।[२३]

ओं ह्रीं प्रायश्चित्त विनय वैयाव्रत स्वाध्याय व्युत्सर्ग ध्यान षट् प्रकारांतरंगतपोनिष्ठाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

विधिनायक प्रतिमा के सामने थाली मे बोधिसमाधि यंत्र स्थापित कर अभिषेक करे ।

---

(१) ब्र. शी. प्र., प्र. सा. स. पृष्ठ १३४ (१) आ. ज. से, प्र. पा. श्लोक ८४४
(२-३) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ८४५-४६

बोधिसमाधि मंत्र

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा श्रीं र्हं ममेष्टं शुभं कुरु कुरु अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः । क ख ग घ ङ । च छ ज झ ञ । ट ठ ड ढ ण । त थ द ध न । प फ ब भ म । य र ल व । श ष स ह क्षं पं वं क्षिं स्वाहा ।
(१०८ बार जाप करें)

गुणस्थान आरोहरण[१]

धर्मध्यानप्रभावेन तेषु स्थानेषु वा क्वाचित्, मिथ्यात्वप्रकृतीस्त्रेधा चतस्रो दुःकषायजाः ।
देवायुर्नारकायुश्च पश्वायुः पापकारणं, दशैताः प्रकृतीर्हत्वा पूर्वमेव मुनीश्वरः ॥
ओं ह्रीं अप्रमत्तगुणस्थानारूढाधःकरण - प्रवृत्तिमिथ्यात्वादिदशकर्मसत्तारहिताय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अष्टमे च गुणस्थाने क्षपकश्रेणिमाश्रितः, अपूर्वकरणो भूत्वा स्थित्वा च नवमे सुधीः ।
शुक्लध्यानस्य पूर्वेण पादेन परमार्थवित्, नाम्ना पृथक्त्ववीतर्कवीचारेण विचारवान् ॥
ओं ह्रीं अपूर्वकरणगुणस्थानारूढाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

समातपचतुर्जातित्रिनिद्राश्वभ्रयुग्मकं, स्थावरत्वं च सूक्ष्मत्वं पशुद्वयुद्योतकं तथा ।
अनिवृत्तगुणस्थानपूर्वभागे च षोडश, क्षयं नीत्वाद्वितीये च कषायाष्टकमुच्चकैः ॥
क्लैव्यं परे ततः स्त्रैणं चतुर्थे भागके ततः, परे हास्यादिषट्कं च षष्ठे पुंवेदकं तथा ।
क्रोधं मानं च मायां च त्रिभागेषु पृथक् पृथक्, षट्त्रिंशत्प्रकृतीर्हत्वा नवमे चैवमादिकम् ॥
ओं ह्रीं अनिवृत्तिकरणगुणस्थानारूढषट्त्रिंशत्प्रकृतिविदारणाय श्री जिनाय अर्घ ।

सूक्ष्मसांपरायकेऽपि सूक्ष्मलोभं निहत्य च ।
क्षीणमोहगुणस्थाने द्वितीयशुक्लमाश्रितः ॥

ओं ह्रीं सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानारूढलोभप्रकृतिविदारणाय श्रीजिनाय अर्घ ।

निद्रां सप्रचलां हित्वा चोपान्त्यसमये सुधीः ।
अंतिमे समये तत्र चतस्रो दृष्टि घातिकाः ॥
पञ्चधा ज्ञानहाः पञ्चप्रकृतीः पञ्चविघ्नकाः ।
इत्येवं प्रकृतीः प्रोक्तास्त्रिषष्टि घातिकर्मणाम् ॥

ओं ह्रीं क्षीणकषाय गुणस्थानारूढैकत्ववितर्कवीचारशुक्लध्यानधारकाय श्रीजिनाय अर्घ ।

यस्याश्रयेण सकलाघतृणौघदाहशक्तित्वमाप चरितं चरितं जनेन ।
तच्चारुपंचतयरूपमपास्य चारमंत्यं यथाख्यमगमत्परि पूर्णतांगं ॥[२]

ओं ह्रीं यथाख्यातचारित्रधारक जिनाय अर्घ ।

---

(१) श्री विद्यानन्दि, सुदर्शन चरित्र ११/१९८/४७-५७
(२) आ. ज. रो., प्र. पा. श्लोक ८४७

तिलक दान विधि

आचार्य इन्द्रानी द्वारा तिलकदान की सामग्री बनाने हेतु व्यवस्था करावें। सिल, लोढ़ी, दीपक, तिलक सामग्री को मंत्रों द्वारा स्थापित करें।

शिला स्थापन [१]

वितानमाल्यांबरपूर्णकुंभरंगावलीचारुचतुष्कमध्ये।।
संस्थापयाम्यत्र शिलां विशालां जिनप्रतिष्ठा तिलकार्थपिष्ट्यैः ।।
ओं ह्रीं र्हं क्ष्मं ठः ठः शिला स्थापनं करोमि।

शिलाशुद्धि दीपक स्थापन विधि [२]

कोणोज्ज्वलद्दीपचतुष्कदीप्रा चतुष्कमध्यस्थशिलां विशालां।
जांबूनदोच्चैः कलशप्रपूर्णैः प्रक्षालयाम्युत्तमतीर्थवारिभिः ।।
शिलाशुद्धिं दीपकस्थापनं च करोमि।

तिलक द्रव्य [३]

पिगाप्रियंगुफलदध्यमृतप्रदूर्वा सिद्धार्थका हिममहागुरुरत्नसिक्तं।
तीर्थाम्बुकानकघटोद्धृतदुग्धधारा संपन्नमाशु विदधीत निजाभिषिक्त्यै ।।

स्नात्वा कुसुंभवसनाधृतहेमभूषा सन्मौक्तिकोद्धृतचतुष्कविराजभाना।
मंत्रं ह्यनादिनिधनं परिजप्यशुद्धा यष्टीसुचन्दनरसं परिषेचयेत्तु ।।

भर्त्रे चलात्तवसनायुगकोणभासि दीपावलीद्युति विशालशिलोपरिष्टात्।
संघृष्य चन्दनमनर्थसमूहनष्ट्यै भाले विधातृ सवितुः कृतमण्डितस्य ।।

ओं ह्रीं णमो अरिहंताणं इत्यादि पठित्वा याजक पत्नी वादित्रनाद पुरस्सरं जय जय शब्दाकुलं सुमंगलगानरम्य प्रकाशं तिलकं आचार्य मूर्ध्नि कुर्यात्। तत्र आचार्योऽपि चारित्रभक्तिं पाठित्वा सुलग्ने रेचक स्वरोदये विशुद्धमना परिहृत सकल संकल्पामुख जिनबिंबनामो र्हं बीजं स्थापयेत्।

तेजोस्त्रिमूर्तीश्वरदेशकानु, जनिप्रिया स्नातकबीजपूर्व।
सस्यादिकः सार्हतनाम नाममंत्रेण बिम्बे तिलकं न्यसामि ।।[४]

ओं ह्रीं श्रीं र्हं अ सि आ उ सा ऽर्हतां वृषभनाथस्य नामौ तिलकं न्यसामि।
ओं ह्रीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिहतशक्तिर्भवतु ह्रीं स्वाहा।

तिलक दान मंत्र १०८ बार जपना।

इति मंत्र अष्टोत्तर शतं लवंगकैर्जप्त्वा पुनरप्येकवारमिममेव मंत्र मुच्चरन स्वर्णशलाकया 'र्हं' इति बीजं स्थापयेत इदमेव तिलकदानं प्रकृतो बोध्यं। [५]

---

(१) श्री ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ ५५९ (२) श्री ने. दे, प्र. ति. पृष्ठ ५५९ (३) आ. ज. से., प्र पा. श्लोक ८४९ से ८५१ (४) श्री. ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ ५६२ (५) श्री. शि. र. प्र. च.

आचार्य तिलक मंत्र का स्मरण करता हुआ सब प्रतिमाओं की नाभि में "र्ह्रं" ऐसा बीजाक्षर लिखे। यह तिलकदान प्रतिष्ठा का मुख्य कार्य है। केशर द्वारा प्रत्येक प्रतिमा में यह क्रिया करना चाहिए।

मंत्रन्यास विधि [1]

आवाहनादिकं कृत्वा सम्यगेवं समाहितः।
स्थिरात्माष्टप्रदेशाना स्थाने बीजाक्षरं न्यसेत् ॥१॥

ओं ह्रां ललाटे, ओं ह्रीं वामकर्णे, ओं ह्रूं दक्षिणकर्णे, ओं ह्रौं शिरः पश्चिमे, ओं ह्रः मस्तकोपरि, ओं क्ष्मां नेत्रयोः, ओं क्ष्मीं मुखे, ओं क्ष्मूं कण्ठे, ओं क्ष्मौं हृदये, ओं क्ष्मः वाह्यौ, ओं क्रौं उदरे, ओं ह्री कटयां, ओं ब्लूं जंघयोः, ओं क्षूं पादयोः, ओं क्षः हस्तयोः श्रीखण्ड कर्पूरेण प्रतिमांगे बीजाक्षराणि विन्यसेत्।

अधिवासना विधि [2]

गंधाक्षतस्रग्वस्त्रान्नयवाली कंकणेषुभिः
चरुधूपारार्त्तिकफलै र्विरूढकयवारकैः ॥१॥
सवर्णपूरेक्षुबलिवर्तिभृंगारकैरिभै
मंत्राभिमंत्रितैश्चित्तैः सार्घ स्वरस्त्ययनैः क्रमात् ॥२॥
एष निष्प्रतिघो देष्यत्केवलज्ञाननिर्वृतिं।
प्रतिष्ठितमहार्चायां जिनेन्द्रंअधिवासये ॥३॥

अधिवासना के लिए गंध, अक्षत, पुष्प, परदा, सप्तधान्य, जुबाली, चरु, दीप, धूप, फल, दीपक, स्वर्णकलश, पूजा सामग्री एकत्रित कर पुष्पक्षेपण करें। प्रतिमाओं को नमस्कार करें।

नूत्नं निरावृत्तिचमत्कृतिकारितेजो नोशक्यमीक्षितवतामपि भावुकानां ॥
इत्येवमर्पितनयानयनेन शम्भो रग्रे मुखाग्र महवस्त्रमुपाकरोमि। [3]

ओं श्रीं ह्रीं र्हं श्री णमो अरिहंताणं झ्रौं नमः स्वाहा।

(वेदिकायामतर्गृहे मुखवस्त्रमेवं कुर्यात्)

अर्थ- नवीन और निरावरण चमत्कार करने वाला प्रभु का तेज है भव्यों को देखने की शक्ति नहीं है। ऐसे भगवान के आगे परदा करता हूं।

विम्ब स्थापन

तत्प्रतिमां भद्रासनोपरि मातृकायंत्रे स्थापयित्वाऽष्टोत्तर शतवारं तीर्थजलधारा निपातिनेनाभिमंत्र अग्रेविधिं कुर्यात्।

---

(१) आ. व. नं., प्र. पा. (२) पं. आ. ध, प्र. सा. अध्याय ४ श्लोक १७७ से १७६
(३) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ८७७

प्रतिमा को (भद्रासन पर मातृकायंत्र रख) विराजमान करना और तीर्थजल से धारा करना। प्रतिमा के सामने वर्धमान यंत्र एवं बोधि समाधि यंत्रों को रखकर मंत्रों को पढ़कर धारा करके पुष्प क्षेपण करें।

अधिवासनामंत्र (१)

प्रतिष्ठेय प्रतिमाओं पर पुष्पक्षेपण करें।

(१) ओं सत्यजाताय नमः (२) ओं अर्हज्जाताय नमः (३) ओं परमजाताय नमः
(४) ओं परमार्हताय नमः (५) ओं परमरूपाय नमः (६) ओं परमतेजसे नमः
(७) ओं परमगुणाय नमः (८) ओं परमस्थानाय नमः (९) ओ परमयोगिने नमः
(१०) ओं परमभाग्याय नमः (११) ओं परमर्द्धये नमः (१२) ओं परमप्रसादाय नमः
(१३) ओं परमकांक्षिताय नमः (१४) ओ परमविजयाय नमः (१५) ओं परमविज्ञानाय नमः
(१६) ओं परमदर्शनाय नमः (१७) ओ परमवीर्याय नमः (१८) ओं परमसुखाय नमः
(१९) ओं परमसर्वज्ञाय नमः (२०) ओं परमार्हते नमः (२१) ओं परमेष्ठिने नमो नमः
(२२) ओं सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे त्रिलोकविजय त्रिलोकविजय, धर्ममूर्ते धर्ममूर्ते स्वाहा।
सेवाफलं षट् परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधिमरणं च भवतु।

प्राणप्रतिष्ठाप्याधिवासना च सस्कारनेत्रोच्छ्रति सूरिमंत्राः।
मूलं जिनत्वाऽधिगमे क्रियाऽन्याभक्तिप्रधाना सुकृतोद्भवाय ॥२॥

प्राणप्रतिष्ठा अधिवासना मंत्र संस्कार नेत्रोन्मीलन एवं सूरि मंत्र,
सभी क्रियायें प्रत्येक प्रतिमा पर करना आवश्यक है।

अधिवासना पूजा - विधि [३]

आहूताभवनामरैरनुगता य सर्वदेवास्तथा
तस्थौ यस्त्रिजगत्सभातर-महापीठाग्र-सिंहासने।
यं हृद्यं हृदि सन्निधाप्य सततं ध्यायन्ति योगीश्वराः
तं देवं जिनमर्चितं कृतधियामावाहनाद्यैर्भजे ॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा एहि संवौषट्। एहि तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। एहि मम सन्निहितो भव भव वषट्।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. पृष्ठ १३७ (२) आ. ज. से., प्र. पा श्लोक ३४९
(३) श्री. ने. दे, प्र. ति पृष्ठ ५६१

अष्टक

सुगंधशीतलैःस्वच्छैः साधुभिर्विमलैर्जलैः ।
अनंतज्ञानदृग्वीर्य सुखरूपं जिनं यजे ॥१॥[१]

ओं ह्रीं नमः परमेष्ठिभ्यः जलं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

काश्मीरचन्दनरसेन विलुब्धशुम्भत्सौरभ्यमत्तमधुपावलिझंकृतेन ।
पीठस्थलीं जिनपतेरधिपादपद्मं संचर्चयामि मुनिभिः परितः पवित्रां ॥२॥[२]

ओं ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु चन्दनं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

मुक्ताफलच्छवि पराजित कामकांति प्रोद्भूतमोहतिमिरैकफलौघहेतुः
शाल्यक्षतार्थपरिपूर्णपवित्रपात्रमुत्तारयामि भवतो जिनपस्य पार्श्वे ॥३॥

ओं ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु अक्षतं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

सौरभ्यसान्द्रमकरंदमनोऽभिरामपुष्पैःसुवर्णहरिचन्दनपारिजातैः ।
श्रीमोक्षमानिवनितांपरिलंभनाय माल्यादिभिश्चरणधोरणिमुत्सृजामि ॥४॥

ओं ह्रीं अर्हते शरीरावस्थिताय पृथु पृथु पुष्पं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

षष्ठोपवासविधये नवसर्पिषाक्तनैवेद्यभाजनमिदं परिवर्त्य सप्त ।
वारं तदीय परिहृयभिधा प्रसिद्ध्यै संस्थापयेज्जिनवराग्रिमभूतधात्र्यां ॥५॥

ओं ह्री अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु नैवेद्यं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

स्फूर्जन्मयूखविततिप्रहतांधकारं दीपं घृतादिमणिरत्नविशातशोभं ।
उद्भिन्नयुगलान्तिमभागभाजो देहद्युतिंद्विगुणकोटियुतां करोमि ॥६॥

ओं ह्रीं प्रज्ज्वल प्रज्ज्वल अमिततेजसे दीपं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

कर्पूरचन्दनपरागसुरम्यधूपक्षेपोऽस्तु मे सकलकर्महतिप्रधानः ।
इत्येव भावमभिधाय हसंतिकायामुत्क्षेपयामिकिलधूपसमूहमेनं ॥७॥

ओं ह्रीं सर्वतो दह दह तेजोऽधिपतये समूहभूताय धूपं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

कर्माष्टकापहरणं फलमस्ति मुख्यं तत्प्राप्तिसम्मुखतयास्थितवानसि त्वं ।
यस्मादनेकगुणलास्यकलानिधान- धाम्नस्तव स्थलमदभ्रफलैर्यजामि ॥८॥

ओं ह्रीं आश्रितजनायाभिमत फलानि ददातु ददातु स्वाहा ।

त्रैलोक्याभयदंत्रिकालपतिताशेषार्थपर्यायजानंतानंतविकल्पनस्फुटकरंसंसारचक्रोत्तरं ।
ज्योतिः केवलनामचक्रमवतोव्यानावतानप्रमोर्योऽयं तूर्यविशंशनक्षणमहः कोप्येष जीयात्पुनः ॥९॥

ओं ह्रीं नमोऽर्हतेभगवतेद्वितीयशुक्लध्यानोपान्तसमयप्राप्ताय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

---

(१) श्री. नै. दे., प्र. ति. ५६५ (१) आ. ज. से., प्र. पा. पृष्ठ २७९ से २८२

यस्याश्रयेण सकलाघतृणौघदाहशक्तित्वमाप चरितं चरितं जनेन ।
तच्चारु पंचतयरूपमयास्यचारमन्त्यं यथाख्यमगमत्परिपूर्णतांगम् ।।
ओं ह्रीं यथाख्यातचारित्रधारकाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा । (१)

यवमालारोपण (२)

मदनफललसन्त्या मालयैषां यवानां सुखफलगुणमाला मार्हतीं सूचयन्त्या ।
विगलदखिलदोषं प्रार्चयामो जिनेन्द्रं जनयतु जनतानां क्षेमवृद्धिं सुभिक्षम् ।।
मदनफल यवमाला च जिनपादाग्रतः स्थापयेत्

सप्तधान्यस्थापन (३)

जिनेश्वरश्रीचरणांबुजाग्रे सप्तोद्धधान्यानि समुच्चितानि ।
अनंतधर्मेष्वपि सभवन्तीं अर्हन्तु दिव्यध्वनिसप्तभंगीम् ।।
ओं जिनपादाग्रतः सप्तधान्यं स्थापनं करोमि ।

मुखोद्‌घाटन

सर्वान् जनानपसृत्य दिगंबरत्वावगत आचार्यः "ओं नमः सिद्धेभ्यः" ।। इति मंत्र मुच्चारयन् भृंगारधारां विष्वग्निपात्य डामरादिक्षुद्रोपद्रवशान्त्यै सिद्धचक्र यंत्राभ्यर्णे सन्निधाय प्रथमतः स्वस्त्ययनं पठेत् (प्रतिष्ठाचार्य को यहां वस्त्र उतारने को कहा है किंतु कब वस्त्र पहिने यह नही लिखा)

सिद्धचक्रमंत्राराधन (वृहत्)

(१) ओं अ सि आ उ सा ह्र ह्रा ह्रि ह्री ह्रु ह्रू ह्रे ह्रै ह्रो ह्रौ ह्रं ह्रः णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं । सम्यग्दर्शनाय नमः सम्यक्ज्ञानाय नमः सम्यक्चारित्राय नमः सम्यक्तपसे नमः ठः ठः ओं ह्रीं अनाहतविद्यायै अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण तथ द ध न प फ ब भ म य र ल व श ष स ह क्षः ठः ठः नमः स्वाहा ।

(२) ओं ह्रीं अर्हं अनाहत विद्यायै णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं सम्यक्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यः सम्यक्तपसे नमः स्वाहा ।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ८४७ (२) श्री ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ ५६३ (३) वही, पृष्ठ ५६४

(३) ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः श्री सिद्धचक्राधिपतये अष्टगुणसमृद्धाय फट् स्वाहा।

इन तीनों मंत्रों में से किसी एक मंत्र को १०८ बार जपना चाहिये।

स्वस्त्ययन [१]

स्वस्ति श्री वृषभो देवोऽजितः स्वस्त्यस्तु संभवः।
अभिनन्दननामा च स्वस्ति श्री सुमतिः प्रभुः।।

पद्मप्रभः स्वस्ति देवः सुपार्श्वः स्वस्ति जायतां।
चन्द्रप्रभः स्वस्तिनोऽस्तु पुष्पदंतश्च शीतलः।।

श्रेयान् स्वस्ति वासुपूज्यो विमलः स्वस्त्यनंतजित्।
धर्मो जिनः सदा स्वस्ति शान्ति कुंथुश्च स्वस्त्यरः।।

मल्लिनाथः स्वस्ति मुनिसुव्रतः स्वस्ति वै नमिः।
नेमिर्जिनः स्वस्ति पार्श्वो वीरः स्वस्ति च जायतां।।

भूतभाविजिनाः सर्वे स्वस्ति श्री सिद्धनायकाः।
आचार्यः स्वस्त्युपाध्यायः साधवः स्वस्ति संतु नः।।

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

सर्वोपद्रव शांति के लिए सिद्ध चक्र यंत्र को थाली में स्थापना कर **"ओं नमः सिद्धेभ्यः"** मंत्र द्वारा १०८ बार धारा करें।

अथाख्यातं प्रान्तोदय धरणिधृन्मूर्धिनि
प्रकाशोल्लासाभ्यां युगपदुपयुंजंस्त्रिभुवनं
दधज्ज्योतिः स्वायं भवमपगता वृत्यपपथो
मुखोद्घाटं लक्ष्म्या व्रजतु यवनीं दूरमुदयेत्।[२]

ओं अट्ठविह कम्ममुक्को तिलोय पुंजोय सथुवोभयवं।
अमरण रणाह महिओ अणाहिणिहणो सिवंदिसओ।। [३]

ओं उसहादि वड्ढमाणाणं पंचमहा कल्लाण संपण्णाणं महइ महावीर वड्ढमाणसामीणं सिज्जउ मे महइ महाविज्जा अट्ठमहापाडिहेर सहियाणं सयल कलाधराणं सज्जोजादरूवाणं चउतीसातिसय विसेस संजुत्ताणं वत्तीस देवेंद मणिमत्थय महियाणं सयललोयस्स संति पुट्ठिकल्लाणाउ आरोग्ग कराणं वलदेव वासुदेव चक्कहर रिसि मुणि जदि अणगारोव गूढाणं उहयलोय सुहफल यराणं थुइसय सहस्सणिलयाणं परापर परमप्पाणं अणाहि णिहणाणं वलि वाहुवलि सदाणं वीरे वीरे ओं हां क्षां सेणवीरे

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. पृष्ठ २८२ (२) वही, पृष्ठ २८३ श्लोक ८६६
(३) पं. आ. ध., प्र. सा. ४/१०९

वड्ढमाणवीरे णह संजयं तवराईए वज्जसिल थंभमयाणं सस्सदवंमपइट्ठियाणं उसहाइ वीर मंगल महापुरिसाणं णिच्चकालपइट्ठियाणं इत्थ संणिहिया मे भवंतु मे भवंतु ठः ठः क्षं क्षं स्वाहा[१] ।

इति मंत्रेण मुखादग्रे वस्त्रयवनिकां दूरमुत्सारयेत्

परदा अलग कर दें ।

ओं सत्तक्खर गब्भाणं अरिहंताणं णमोत्थिभावेण
जो कुणइ अणण्णमणो सो गच्छइ उत्तमं ठाणं [२]

इति पादाग्रस्थापितयववलयापसरणं कुर्यात् (यवमालादि अलग कर दें)

नयनोन्मीलन

विधिनायक प्रतिमा के सामने नयनोन्मीलन यंत्र की स्थापना कर नयनोन्मीलन मंत्र से धारा करें ।

तदंनतरमेवरुक्मपात्रस्थित कर्पूरयुक्त स्वर्णशलाकां दक्षिणपाणौ विधृत्य सोऽहं स इति ध्यायन्नाचार्यो नयनोन्मीलनयंत्रे प्रदर्श्य श्लोकमिमं पठेत् -

येनाबद्धनिरूढकर्मविकृतिप्रालंविका निर्घृणं।
छिन्नात्मानमजं स्वयंभुवमपूर्वीयं स्वयं प्राप्तवान् ।
सो ऽ यं मोक्षरमाकटाक्षसरणिप्रेमास्पदः श्रीजिनः।
साक्षादत्र निरूपतः स खलु मां पायादपायात्सदा ।। [३]

ओं णमो अरिहंताणं णाण दंसण चक्खुमयाणं अमियरसायणं विमल तेयाणं संति तुट्ठि पुट्ठि वरद सम्मादिट्ठीणं वं झं अमिय वरसीणं स्वाहा ।

(१०८ बार जाप करना) (इति स्वर्णशलाकया नेत्रोन्मीलनं कुर्यात् ।)

चांदी के पात्र में कपूर, केशर, चंदन घिसकर रख लें और स्वर्ण सलाई से दाहिने हाथ द्वारा रेचक स्वर में "सोऽहं स" ऐसा ध्यान करता हुआ समस्त प्रतिमाओं के नेत्रों में लगावे यह नेत्रोन्मीलन क्रिया है। पश्चात् सूरिमंत्र की विधि करें ।

प्रतिष्ठा तिलक और प्रतिष्ठासारोद्धार मे सूरि मंत्र विधि न लिखकर अनंतचतुष्टय की स्थापना के लिए श्लोक एवं मंत्र लिखे हैं। सूरिमंत्र नहीं लिखा ।

जयसेन प्रतिष्ठापाठ में भी विधितो नहीं लिखी गई किंतु इतना उल्लेख किया है नयनोन्मीलन के बाद "**ततः सद्यैव सूरिमंत्रेण सर्वज्ञत्वोपलंभनं विदध्यात् ।**

इसके नीचे नयनोन्मीलन वाला ही मंत्र लिखा है वचनिका मे लिखा यह मंत्र पढे ता पीछे तत्काल सूरिमंत्र है उसकर सर्वज्ञपना प्राप्त करें ।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. पृष्ठ २८३-८४ (२) आ. ज. से., प्र. पा., पृष्ठ २८५
(३) आ. ज. से., प्र. पा. पाठ श्लोक ८६७

पश्चात् केवल ज्ञानोत्पति की विधि लिखी और अनंत चतुष्टम देवकृत्त चौदह अतिशय और समवसरण की रचना एंव अष्टप्रातिहार्यों की स्थापना की विधि है।

सूर्यकला मंत्र

ओं ह्रीं स्फ्रां स्फ्रीं ओं वं झ्रौं सं श्रीं एहि एहि अस्मिन् बिम्बे सूर्य कलां स्थापय स्थापय श्रु: नमः । (१०८ बार जाप करना)

चन्द्रकला मंत्र

ओं ह्रीं श्रीं अर्ह पुनीहि पुनीहि ओं श्रीं क्लीं अस्मिन् बिम्बे चन्द्रकलां स्थापय स्थापय ह्रीं झ्रौं नमः। (१०८ बार जाप करना)

प्राणप्रतिष्ठा मंत्र

ओं आं क्रौं ह्रीं य र ल व श ष स ह अ सि आ उ सा क्षों सः हं सः आयुष्य प्राणा इह प्राणा आयुष्य जीवः इह स्थितः सर्वेन्द्रियाणां काय वाङ्मनश्चक्षुश्रोत्रं मुख घ्राण जिव्हान् स्थापय स्थापय शब्द स्पर्श वर्ण रस गंधान् अस्य आत्मघटं वायुं च पूरय - पूरय संवौषट् तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः चिरकालं नन्दतु । (१०८ बार जाप करना)

सूरिमंत्र (प्रथम)

ओं ह्रीं णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं। चत्तारि मंगलं अरिहंता मंगलं सिद्धा मंगलं साहू मंगलं केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा अरिहंता लोगुत्तमा सिद्धा लोगुत्तमा साहू लोगुत्तमा केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो। चत्तारि सरणं पव्वज्जामि अरिहंते सरणं पव्वज्जामि सिद्धे सरणं पव्वज्जामि साहूसरणं पव्वज्जामि केवलि पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि क्रौं ह्रीं स्वाहा ।

सूरिमंत्र (द्वितीय)

ओं परमब्रह्मणे नमोनमः स्वस्ति स्वस्ति जीव जीव नंद नंद वर्धस्व वर्धस्व विजयस्व विजयस्व अनुसाधि अनुसाधि पुनीहि पुनीहि पुण्याहं पुण्याहं मांगल्यं मांगल्यं वर्धयेत् वर्धयेत् एवं जिन बिम्बे आत्मघटं वायुं पूरय पूरय आगच्छ आगच्छ संवौषट् तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः चिरकालं नन्दतु वज्रमयां प्रतिमां कुरु कुरु ग्रौं ग्रौं स्वाहा स्वधा ।

इन दो मंत्रों में से एक का जाप १०८ बार करें तथा आचार्य वही मंत्र प्रतिमा को देवें। सूर्यकला मंत्र, चंद्रकला मंत्र, प्राणप्रतिष्ठा मंत्र, सूरिमंत्र सभी पं मन्नूलाल जैन प्रतिष्ठाचार्य की हस्तलिखित डायरी से उद्धरित किये हैं।

शुक्लद्वयेन परिहृत्य तपोवितान
मात्मानमाशु परिक्लृप्य कृतावकाश- ।
ज्ञानावलोकनसमत्ययनाशमाप-
न्मोहस्य पूर्वदलनेन समस्तभावात् ॥ (१) .

ओं ह्रीं मोहनीयज्ञानदर्शनावरणान्तराय निर्णासकाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

केवलज्ञानोत्पत्ति(२)

ओं केवलणाण दिवायर किरण कलावप्प णासि अण्णाणो ।
णव केवललद् धुग्गमसुजणिय परमप्पव वएसो ॥
असहाय णाण दंसण सहिओ इदि केवलीऽजोयेण ।
जुत्तोत्ति सजोग जिणो अणाइ णिहणारिसे उत्तो ॥

इत्येषोऽर्हन् साक्षादवतीर्णो विश्वं पातु इति स्वाहा ।
अयं महानुभावः परमेश्वरो वृषभेश्वरो भवतु । इति प्रतिमाग्रे पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

केवल ज्ञानोत्पत्ति क्रिया में पॉच दीपक जलावे या कपूर की पॉच डली जलाकर प्रकट करें कि भगवान को केवल ज्ञान उत्पन्न हो गया । वादित्रों की ध्वनि हो ।
ओं णमो अरिहंताणं रत्नत्रय पवित्र कृतोन्तमाङ्गाज्योतिर्मयाय मतिश्रुतावधिमनः पर्यय केवलज्ञानाय अ सि आ उ सा नमः स्वाहा ।

पाँच दीपक से आरती एवं अर्घ (पॉच दीपक रखे)

कैवल्यसूचिशरसख्यकवर्तिकाभि रारार्तिकं बहुलवाद्यनिनादपूर्वम् ।
श्रीमज्जिनप्रतिकृते शतयज्ञयज्वा चार्या विदध्युरमल जयघोषणाग्र ॥(३)

ओं ह्रीं ज्ञानकल्याणकप्राप्तजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

पंचवर्तिका द्योतन च कुर्यात अत्रैव चतुर्विंशति तीर्थकृज्ज्ञान कल्याणक तिथीनुद्दिश्य अर्घ पाद्यानि कार्याणि ॥

केवल ज्ञान स्तुति (पद्धरी छन्द)(४)

जय केवलज्ञानप्रकाशधरं, ज्ञानावरणीयविनाशकरं ।
जय केवलदर्शननायक हो, दर्शन आवरणी घातक हो ॥
जय वीर्य अनंत प्रकाशक हो, जय अंतराय अघनाशक हो ।
तुम मोहबली क्षय कारक हो, क्षायिक समकित के धारक हो ॥

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ८४८ (२) आ. पु. द., ध. पु. प्रथम पृष्ठ १९२-९३ एवं आ. ज से., प्र. पा. पृष्ठ २८५ (३) वही, श्लोक ८६८ (४) ब्र. शी. प्र. प्र., सा. सं. पृष्ठ १४०

क्षायिक चारित्र विशालधरं, आनंद अनंत प्रकाशकरं ।
जगमांहि अपूरब सूरज हो, विकसन भविजीवन नीरज हो ।।
मिथ्यात्व महातमटालन हो, शिवमग उत्तम दरशावन हो ।
तुम तारण तरन तरण्ड वरं, सुखकारण रत्नकरंडवरं ।।

गुणाद्यारोपणम्[1]

सहजान्घातिनाशोत्थान् दिव्यांश्चातिशयान् शुभान् ।
स्वर्गावतार सज्जन्म निःक्रमज्ञान निर्वृतौ ।।
कल्याणपंचकं चैतत्प्रातिहार्याष्टकं तथा।
संध्यायां रोपयेत्तस्यां प्रतिमायां बहिर्भवम् ।।
अनन्तदर्शनं ज्ञानं सुखं वीर्य तथान्तरम् ।
सम्यग्ध्यात्वाऽर्हतां बिम्बं मनसाऽऽरोपयेत्ततः ।।
प्रध्वंसतो घाति चतुष्टयस्य प्रजायतेऽनन्तचतुष्टयं यत् ।[2]
प्रमाणसिद्धं त्रिजगत्सुमारं प्रादुर्भवत्वत्र जिने स्फुटं तत् ।।

ओं अनंतचतुष्टयस्थापनाय प्रतिमोपरि पुष्पं क्षिपेत् ।

जानाति नित्यं युगपत्स्वतोऽन्यत् सर्वार्थसामान्यविशेषसर्व ।
निर्बाधकं स्पष्टतरं यदेतदनन्त – विज्ञानमिहास्तु बिम्बे ।।१।।

ओं अनंतज्ञानस्थापनार्थं पुष्पं क्षिपेत् ।

स्वात्मोत्थसामान्यविशेषसर्व साक्षात्करोत्येव समं सदा यत् ।
सुनिश्चितासंभवबाधकं तदनंतसद्दर्शनमत्र भातु ।।२।।

ओं अनंतदर्शनस्थापनार्थं पुष्पं क्षिपेत् ।

अनंतविज्ञानमनंतदृष्टि द्रव्येषु सर्वेषु च पर्ययेषु ।
व्यापारयन्नित्यमसंकरादिस्तादत्र बिम्बे तदनंतवीर्यम् ।।३।।

ओं अनंतवीर्यस्थापनार्थं पुष्पं क्षिपेत् ।

आत्मैकजातं गतबाधजात व्यपेतमानं विगतोपमानं ।
अचिन्त्यसारं जगदेकसारं बिम्बेत्रभूयात्तमनंतसौख्यम् ।।४।।

ओं अनंतसुखस्थापनार्थं पुष्पं क्षिपेत् ।

सत्तामात्रग्राहकं दर्शनं च तद्भेदानां ग्राहकं ज्ञानमुक्तं ।[3]
ताभ्यां स्वास्थ्यं पूर्णमुक्तं सुखं तच्छक्तव्र्यक्तिर्वीर्यमत्रार्चयामि ।।

ओं ह्रीं नमो ऽर्हते भगवते ऽनंतज्ञानदर्शनसुखवीर्यविभ्राजते जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

---

(१) आचार्य वसुनंदी प्रतिष्ठा पाठ से (२) श्री ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ ५७४-५७५
(३) आचार्य ज. से., प्रतिष्ठा पाठ, पृष्ठ २८६

प्रतिमा के सामने मोक्षमार्ग यंत्र की स्थापना करे।

मोक्षमार्ग मंत्र

ओं ह्री णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं अ सि आ उ सा सम्यग्दर्शन ज्ञानचारित्र तपेभ्यः स्वाहा (१०८ बार जपना)

नवकेवललब्धि [1]

सम्यक्त्व चरितं सुबोधनदृशी वीर्य ददिर्लाभको
भोगोपादि भुजीहि यस्य नवकं लब्धे सदाक्षायिकं।
संपन्नं खलु केवलोद्गमनतस्त साम्प्रत ध्यायतो
विघ्नाना निचय प्रणाशन मियात्तत्सस्मृति प्रार्थनात् ॥

ओं ह्रीं नमोऽर्हते भगवते नवकेवललब्धिभ्योऽर्घम् स्वाहा।

केवलज्ञानातिशय [2]

सौभिक्ष्य मुकुरोपमक्षितिरथो व्योमक्रमप्रक्रमः
प्राण्याघातविनिर्गमश्च कवलाहारव्यपाय परैः।
अक्लेशोपचयश्चतुर्मुखदृशिर्विद्येश्वरत्वं तनो
स्वछायत्वमकेशवृद्धिरिति वै दिक् संख्यकाः केवले ॥

ओं ह्री नमो ऽर्हते भगवते दशकेवलातिशयेभ्योऽर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्दशदेवकृतातिशय [3]

दिव्यावाग्जनसौहृदं प्रतिपदं सर्वान्ह गोत्रारुहा।
भूरादर्शतलामृदुस्वसनसन्मोदौतु भू- शालिनी ॥
सौरभ्याबुधरी सुवृष्टिरमला पादक्रमाधोलले।
स्वच्छांभोरुहनिर्मितिः खममलं दिग्संमदश्चक्रकं ॥
धर्माख्यां पुरतश्च सज्जनमनो मिथ्यात्वसस्फेटनं।
देवाह्वानपरस्पराधिकमुदा सन्मगलाष्टाविति ॥
दिव्यातीशयसंयुतो जिनपति शक्राज्ञयारैमुचा।
क्लृप्ते श्रीसमवादिसमृतिपदे संतिष्ठवांस्तान्मुदे।

ओंह्रींनमोऽर्हतेभगवतेचतुर्दशदेवकृतातिशयसम्पन्नायजिनायअर्घनिर्वपामीतिस्वाहा।
ततः समवसरणमण्डले प्रतिमां नीत्वा तत्र पूजां कुर्यात्
(समवसरण मे प्रतिमा स्थापित कर पूजा करे)

---

(१) आ. ज. से., प्र पा. श्लोक ८७० (२) वही, श्लोक ८७१ (३) वही, श्लोक ८७२-७३

यज्ञवेदी पर इन्द्र के आदेशानुसार कुबेर द्वारा सुंदर समवसरण की रचना हो। ऊपर सुंदर चंदोबा लगाना, तीन कटनी वाली गंधकुटी, तीन छत्र, सिंहासन, चमर, भामण्डल, धर्मचक्र, अष्ट प्रातिहार्य, अष्ट मंगल द्रव्यों से सुसज्जित हो। गंधकुटी पर अर्हन्त परमात्मा (विधिनायक) को विराजमान करें। और चारों दिशाओं में मानस्तंभ लगावें। बारह सभा के समस्त जीव दिव्यध्वनि सुनते हुए दिखलाये जावें। **तीन छत्र इस प्रकार हो - नीचे बड़ा, बीच में उससे छोटा तथा ऊपर उससे छोटा।**

समवसरण रचना

केवल ज्ञान प्राप्त होते ही सौधर्म इन्द्र की आज्ञा से कुबेर समवसरण की रचना करता है। आदिनाथ तीर्थंकर का समवसरण १२ योजन विस्तार का था जो क्रमशः आधा आधा योजन कम होते होते महावीर तीर्थंकर तक एक योजन विस्तार का रहा। संक्षिप्त रचना वर्णन निम्न है :-

पहली चैत्य प्रासाद भूमि :- जिसमें एक-एक जिनभवन के बीच में पांच पांच प्रासाद बने होते हैं जिनकी ऊंचाई तीर्थंकर की ऊंचाई से १२ गुनी होती है।

दूसरी खातिका भूमि :- स्वच्छ जल से भरी जिसमें विभिन्न प्रकार के सुगंधित कुमुद कमल आदि के फूल खिले रहते हैं तथा हंस आदि पक्षी क्रीड़ा करते हैं।

तीसरी लता भूमि :- यह सुन्दर सुन्दर लताओं से सजी रहती है जिसमें कई रंगों के पुष्प सुगन्धी बिखेरते हैं।

चौथी उपवन भूमि :- इसमे क्रमशः पूर्वादिक दिशाओं में अशोक वन, सदापर्ण वन, चम्पक वन एवं आम्रवन होते हैं चारों दिशाओं में चार चैत्यवृक्ष जिन प्रतिमा सहित शोभायमान होते हैं।

पांचवी ध्वजा भूमि :- इसमें दस प्रकार के चिन्हों वाली दिव्य ध्वजायें होती हैं। जिनका ध्वजदण्ड स्वर्णमय रत्नों से जड़ा होता है।

छठवीं कल्पवृक्ष भूमि :- इसमे दस प्रकार के कल्पवृक्ष होते हैं जिनके बीच - बीच में रमणीक बावड़ी, प्रासाद, क्रीड़ा शालायें, तथा चारों दिशाओं में चार सिद्धार्थ वृक्ष होते हैं। जिन पर सिद्ध प्रतिमा शोभायमान रहती हैं।

सातवीं भवन भूमि :- इसमें रत्नों से जडित ध्वजापताका एवं उन्नतद्वार तथा तोरण युक्त भवन होते हैं, जिनमें दिव्य रत्नमई सिद्ध भगवान की प्रतिमायें होती हैं।

आठवीं श्रीमण्डप भूमि :- इसमें गंधकुटी होती है। जिसकी तीसरी कटनी पर कमल से ४ अंगुल ऊपर केवली तीर्थंकर पद्मासन मुद्रा में विराजमान रहते हैं। यहाँ बारह सभाये होती हैं वहां सब प्राणी भगवान के दिव्य उपदेश को श्रवण करते हैं।

पहली सभा - इसमें गणधर एवं मुनिराज विराजते हैं।

दूसरी सभा - इसमें कल्पवासी देवियां विराजती हैं।

तीसरी सभा - इसमे आर्यिकाये एवं श्राविकायें विराजती हैं।

चौथी सभा - ज्योतिष देवियां विराजमान होती हैं।

पांचवीं सभा - इसमें व्यन्तर देवियां विराजमान होती हैं।

छठवी सभा - भवन वासी देवियां विराजमान होती हैं।

सातवीं सभा - भवन वासी देव विराजमान होते हैं।

आठवीं सभा - व्यंतर देव विराजमान होते हैं।

नवमी सभा - ज्योतिषी देव विराजमान होते हैं।

दसवीं सभा - कल्पवासी देव विराजमान होते है।

ग्यारहवीं सभा - चक्रवर्ती एवं मनुष्य विराजमान होते हैं।

बारहवीं सभा - तिर्यचप्राणी विराजमान होते हैं।

मानस्तंभसरः सुपुष्पविपनं सत्खातिका चाभितः
प्राकारादिसुनाट्यभूमिविपने नाकालयक्ष्मारुहाः।
स्तूपाहर्म्यततिर्ध्वजावलिसभे सद्गंधवेदिक्रमो
ऽशोकोर्वीरुहसिंहपादनभसि स्थायी जिनः पातु नः ॥[१]

ओं ह्रीं नमोऽर्हते भगवते सकल समवसरण विभूति संपन्नाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट प्रातिहार्य [२]

वनस्पतित्वेऽपि गतप्रशोको ऽशोकोबभूवातिमद प्रसूनः।
अनेकसंदर्शकशोकहारी वृक्षो जिनेन्द्राश्रयणप्रभावात्॥

ओं ह्रीं अशोकवृक्ष प्रातिहार्य सम्पन्नाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेयस्तरु फलति नोऽमरसौख्यमुच्चैर्हर्षोत्सुकत्वपरिलंभनसन्निषेण।
देवैः कृता सुमनसा परिवृष्टिरेषा मोद ददातु भवदुःखजुषां जनानां॥

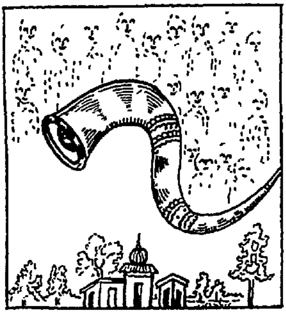
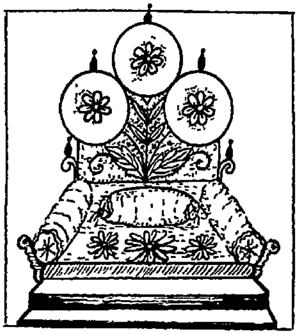
ओं ह्रीं देवकृतपुष्पवृष्टि प्रातिहार्य सम्पन्नाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

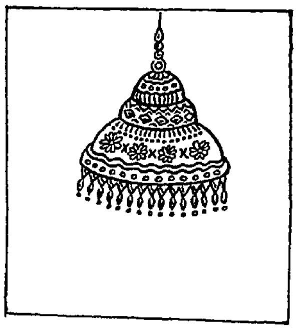
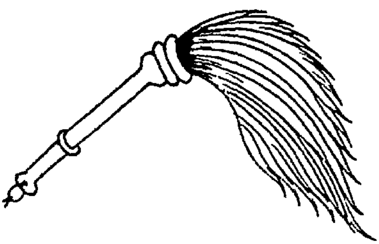
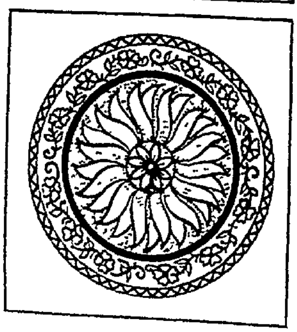
त्रैलोक्यवस्तु हृदयस्मरणावबोधो येन स्वयं श्रवणगोचरतां गतेन।
संजायते मुखरदौष्ठविघातशून्यो भूयाद् ध्वनिर्भवगदप्रसरार्ति हर्ता॥

ओं ह्रीं दिव्यध्वनिप्रातिहार्यसंपन्नाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

(१) आ. ज. से, प्र. पा. श्लोक ८७४ (२) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ८७५ से ८८४



यक्षेशपाणिलतिकांकुरसंगतानि तुर्याधिषष्टिगणनान्यपि देवनद्या. ।
वीचिप्रमाणभवतोद्विकपार्श्वयोस्ते सच्चामराण्यघचयं मम निर्दलन्तु ॥

ओं ह्रीं चतुःषष्टिचामरप्रातिहार्य सम्पन्नाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सिहासने छविरियं जिनदेवताया. केषां मनोवधृतपाप्महरी न वा स्यात् ।
स्याद्वादसंस्कृतपदार्थगुणप्रकाशो ऽस्या मेस्तु निर्हतमदाविलजातशक्तेः ॥

ओं ह्रीं सिंहासनप्रातिहार्यसंपन्नाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

भामण्डलेऽवयवपृष्टि् विभागरश्मिक्लृप्ते जनस्य भवसप्तकदर्शनेन ।
श्रद्धानमाप्तगुरुधर्मपरंपराणां गाढं भवेत्तदितदेवपतिर्नमस्यः ॥

ओं ह्रीं भामण्डलप्रातिहार्यसम्पन्नाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

देवस्य मोहविजयं परिशंसितुं द्राक् देवाः स्वहस्ततलतः परिवादयंति ।
वाद्यानि मंगलनिवासकराणि सद्यो मिथ्यात्वमोहजयिनः शुभगानि च स्यु ॥

ओं ह्रीं दुंदुभिप्रातिहार्यसम्पन्नाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

छत्रत्रयं जिनपमूर्धनि भासमानं त्रैलोक्यराजपतितामभिदर्शयद् वा ।
सोमार्कवह्निप्रतिमं सितपीतरक्त रत्नादिरंजितमिदं मम मंगलाय ॥

ओं ह्रीं छत्रत्रयप्रातिहार्यसम्पन्नाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

तालातपत्रचमरध्वजसुप्रतीकभृंगारदर्पणघटाः प्रतिवीथिचारं।
सन्मंगलानि पुरतो विलसंति यस्य पादारविंदयुगलं शिरसा वहामि ॥

ओं ह्रीं अष्टमंगलद्रव्यसम्पन्नाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

बुद्धीशामरनायिकार्यमहती ज्योतिष्कसद्व्यंतर-
नागस्त्रीभवनेश किंपुरुष सज्ज्योतिष्ककल्पामराः।
मर्त्या वा पशवश्च यस्य हि सभा आदित्यसंख्या वृष -
पीयूषं स्वमतानुरूपमखिलं स्वादंति तस्मै नमः ॥

ओं ह्रीं द्वादशसभासंपत्तिसम्पन्नाय जिनाय अर्घं स्वाहा ।

क्रमुक लागलिवारणमुख्यकैर्मधुसुपक्वसुगंधतरैर्फलैः ।
विमलकेवलबोध्यमलान् चिदे भुवननाथनुतान् प्रयुजे मुदा ।।
ओं ह्रीं केवलज्ञानप्राप्तचतुर्विंशति जिनाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जलप्रमुख्यफलान्तसुसर्वकैः कनकपात्रगतैः प्रवरादिकैः ।
विमलकेवलबोध्यमलान् चिदे भुवननाथनुतान् प्रयुजे मुदा ।।
ओं ह्रीं केवलज्ञानप्राप्तचतुर्विंशति जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रत्येक अर्घ

फाल्गुने कृष्णपक्षे च शोभनैकादशीदिने ।
वृषभं वृषदातारं सयजे ज्ञाननायकम् ।।१।।
ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय वृषभदेवायार्घ ।

पौषमासे शुचौ पक्षे विशालैकादशीदिने ।
अजित जितमोहारि पूजयामि गुणोदधिम् ।।२।।
ओं ह्रीं पौषशुक्लैकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अजितदेवाय अर्घ ।

कार्तिके कृष्णपक्षे च चतुर्थ्यामुत्तमे दिने ।
संभवं भवहन्तारं संयजे भुवनोत्तमम् ।।३।।
ओं ह्रीं कार्तिककृष्णचतुर्थ्यांज्ञानकल्याणकप्राप्ताय संभवनाथायार्घ ।

पौषमासे परे शुक्ले चतुर्दश्यां दिने शुभे ।
अभिनन्दनमर्चेऽहं ज्ञानसाम्राज्यनायकम् ।।४।।
ओं ह्रीं पौषशुक्लचतुर्दश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अभिनन्दनदेवायार्घ ।

चैत्रे विशद पक्षे च परमैकादशी दिने ।
संयजे बुद्धि वार्राशि सुमति ज्ञान नायकम् ।।५।।
ओं ह्रीं चैत्र शुक्लैकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय सुमति देवायार्घ ।

चैत्रमासे शुक्लपक्षे पूर्णिमाया सुवासरे ।
केवलज्ञानसंप्राप्त लोकालोकप्रकाशकम् ।।६।।
ओं ह्रीं चैत्रशुक्लपूर्णिमायां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय पद्मप्रभदेवायार्घ ।

फाल्गुने कृष्णपक्षे च सुषष्ठ्यां ज्ञाननायकम् ।
श्रीसुपार्श्वं यजे नित्यं लोकालोकप्रकाशकम् ।।७।।
ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णषष्ठ्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय सुपार्श्व नाथायार्घ्यम् ।

फाल्गुने कृष्णपक्षे च सप्तम्या ज्ञाननायकम् ।
यजे चन्द्रं शुभैर्द्रव्यैः परमस्थानसप्तदम् ।।८।।

ओंह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय चन्द्रप्रभजिनायार्घ ।

कार्तिके चार्जुने पक्षे शोभने द्वितीया तिथौ ।
पुष्पदन्तं महाशान्तं चर्चे केवलिनं परं ।।९।।

ओं ह्रीं कार्तिकशुक्लद्वितीयायां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय पुष्पदन्तजिनायार्घ ।

पौषमासे चतुर्दश्या कृष्णपक्षे जिनेशिनम् ।
प्राप्त च केवलज्ञान यजे ऽह ज्ञानलब्धये ।।१०।।

ओं ह्रीं पौषकृष्णचतुर्दश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय शीतलनाथायार्घ ।

माघकृष्णे ह्यमावस्या ज्ञानावरणसक्षयात् ।
प्राप्तं च केवलज्ञान सयजे ज्ञाननायकम् ।।११।।

ओं ह्री माघकृष्णामावश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रेयांसनाथायार्घ ।

माघे शुक्ले द्वितीयाया संप्राप्तं ज्ञानमुत्तमम् ।
लोकालोक प्रकाशाय संयजेज्ञान नायकम् ।।१२।।

ओं ह्रीं माघशुक्लद्वितीयायां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय वासुपूज्य जिनायार्घ ।

माघशुक्ले सुषष्ठ्यां च लोकालोकप्रकाशकम् ।
बोध सुकेवलं प्राप्तं यजे ऽहं ज्ञाननायकम् ।।१३।।

ओं ह्री माघशुक्लषष्ठ्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय विमलदेवायार्घ ।

चैत्रकृष्णे ह्यमावस्यां लोकालोकविलोचनम् ।
कृत्न च येन ज्ञानेन चर्चे तं ज्ञानस्वामिनम् ।।१४।।

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णामावस्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अनन्तनाथदेवायार्घ ।

पौषमासे शुचौ पक्षे पूर्णिमाया जिनोत्तमम् ।
केवलज्ञानसम्प्राप्तं चर्चे सज्ज्ञानदायकम् ।।१५।।

ओं ह्रीं पौषशुक्लपूर्णिमायां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय धर्मनाथजिनायार्घ ।

पौषशुभ्रदशम्यां तु लोकालोकप्रकाशकम् ।
यजे शान्तिजिनेशं च केवलज्ञाननायकम् ।।१६।।

ओं ह्री पौषशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय शान्तिनाथायार्घ ।

चैत्रशुक्लतृतीयायां द्विधाधर्मप्रकाशकम् ।
कुन्थुनाथमहं वन्दे घातिकर्मविनाशकम् ।।१७।।

ओं ह्रीं चैत्रशुक्लतृतीयायां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय कुन्थुनाथजिनायार्घ ।

कार्तिके शुक्लपक्षे च द्वादश्या स्वामिनं ह्यरम् ।
केवलज्ञानभानु च चर्चे विश्वप्रकाशकम् ।।१८।।

ओं ह्रीं कार्तिकशुक्लद्वादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अरनाथदेवायार्घ ।

पौषमासे कृष्णपक्षे विशुद्धे द्वितीयादिने ।
लोकालोकप्रकाशाय यजे ज्ञानदिवाकरम् ।।१९।।

ओं ह्रीं पौषकृष्णपक्षेद्वितीयायां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय मल्लिनाथायार्घ ।

वैशाखे श्यामले पक्षे नवम्या सुव्रतं जिनम् ।
केवलज्ञानभानुं च चर्चे विश्वप्रकाशकम् ।।२०।।

ओं ह्रीं वैशाखकृष्णनवम्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय मुनिसुव्रतदेवायार्घ ।

मार्गशीर्षे शुक्लपक्षे विशुद्धैकादशीदिने ।
केवलज्ञानसं प्राप्तं नमिनाथ समर्चये ।।२१।।

ओं ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लैकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय नमिनाथजिनायार्घ ।

अश्विने शुक्ल पक्षे च प्रतिपत्सुदिने यजे ।
केवलज्ञानयुक्तं च नेमि विश्वप्रकाशकम् ।।२२।।

ओं ह्रीं आश्विनशुक्लप्रतिपदिज्ञानकल्याणक प्राप्ताय नेमिनाथायार्घ ।

चैत्रमासे सुकृष्णे च चतुर्थीशुद्धवासरे ।
पंचमबोधसप्राप्त चर्चे त ज्ञानवारिधिम् ।।२३।।

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णचतुर्थ्या ज्ञानकल्याणकपार्श्वनाथजिनायार्घ ।

वैशाखशुक्लपर्क्षेच दशम्यां वर्द्धमानकम् ।
केवलज्ञानसंयुक्तं संयजे ज्ञानलब्धये ।।२४।।

ओं ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय महावीरजिनायार्घ ।

घातिकर्मक्षयाद्बोधं प्राप्त प्राणकबोधका ।
पूर्णार्धैः पूजितास्ते यै कुर्वन्तु मंगलं सदा ।।२५।।

ओं ह्रीं ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय चतुर्विंशतिजिनायार्घ्यम् ।

जयमाल

क्षुत्तृष्णामदमोहविस्मयभयं चिन्तारतीरागता
मृत्युंखेदविषादशोकजननं प्रस्वेदनिद्राजरा ।
रुग्दोषैर्बहुदुःखदैर्भव हरैरष्टादशासंख्यकै
येभिर्ये च विवर्जिता बहुगुणा नन्दन्तु ते ज्ञानिन. ।।१।।

धनदविहित समसृतौ या स्थिताः, धर्मवचनावलितोषिताःसज्जनाः ।
सन्तु बोधाय तेऽनतबोधिजिनाः सदगुणैर्निर्जरै· सेव्यसत्शासना· ॥२॥

यत्प्रभावा भवि या जनैकेशतैः याति सौभिक्ष्यमानदभुवि सभृता
सन्तुबोधाय तेऽनन्तबोधिजिना· सदगुणैर्निर्जरै· सेव्यसत्शासना· ॥३॥

स्वांगणे चारणे ये च मुक्ताश्रमाः जन्तुमृत्पीडिता ध्वस्तऽविश्वभ्रमा
सन्तुबोधाय तेऽनन्तबोधिजिना· सदगुणैर्निर्जरै· सेव्यसत्शासनाः ॥४॥

चोप सर्गातिगास्त्यक्त लेपावरा, ये चतुस्तुण्डिकाः सर्वविद्येश्वराः
सन्तुबोधाय तेऽनन्तबोधिजिना· सदगुणैर्निर्जरैः सेव्यसत्शासनाः ॥५॥

योगछायातिगा स्पंदपक्षोदिता यलषादिव्यकुंस्तुल्य भावंस्थिताः
सन्तुबोधाय तेऽनन्तबोधिजिनाः सदगुणैर्निर्जरै· सेव्यसत्शासनाः ॥६॥

अर्धसुरमागधी दिव्यभाषावदा, मागधैर्विसृतांधर्मगर्भासिदा ।
सन्तु बोधाय तेऽनतबोधिजिना· सदगुणैर्निर्जरैःसेव्यसत्शासनाः ॥७॥

सर्वभुवि गोचरा मित्रताभूद्धरा, यद्गुणादर्पणे वामलोस्युधरा ।
सन्तुबोधाय तेऽनन्तबोधिजिना सदगुणैर्निर्जरै· सेव्यसत्शासनाः ॥८॥

य· प्रभावाद्रुमा द्विर्णकै· सुन्दरा पुष्पपत्रैः फलैर्नम्रशाखाकरा ।
सन्तुबोधाय तेऽनन्तबोधिजिना· सदगुणैर्निर्जरै· सेव्यसत्शासना· ॥९॥

पृष्ठगामी भवेद्वायु येषां गति सद्बुधा· मार्ग सशोधकारस्युर्द्धुवं ।
सन्तुबोधाय तेऽनन्तबोधिजिनाः सदगुणैर्निर्जरै· सेव्यसत्शासनाः ॥१०॥

यत्प्रभावाद्धरां योजनैकप्रभा अन्तरिक्षाकरो धूलिकण्टकच्युतां ।
सन्तुबोधाय तेऽनन्तबोधिजिनाः सदगुणैर्निर्जरै· सेव्यसत्शासनाः ॥११॥

मेघदेवाय सांसद्मभूम्यां सदा गंधतोयोद्भवां वर्षणं चक्रदा
सन्तु बोधाय तेऽनन्तबोधिजिनाः सदगुणैर्निर्जरैः सेव्यसत्शासनाः ॥१२॥

यत्पदश्चारणे पादन्यास· कृतैः निर्जरैर्भक्ति भिर्भूषितै· ।
सन्तुबोधाय तेऽनन्तबोधिजिना· सदगुणैर्निर्जरैः सेव्यसत्शासनाः ॥१३॥

क्षेत्रशाल्योपि यान्प्रेक्षनाम्न· फलैस्तं नमन्ति च स्युर्भृगयुक्तैर्दलैः।
सन्तुबोधाय तेऽनन्तबोधिजिना· सदगुणैर्निर्जरैः सेव्यसत्शासनाः ॥१४॥

चतुः प्रभावाद्विभर्त्तु दिशो निर्मलं व्योम तत्पाजसमभावमत्यद्भुताः ।
सन्तुबोधाय तेऽनन्तबोधिजिना· सदगुणैर्निर्जरैः सेव्यसत्शासनाः ॥१५॥

यत्सभायां सुरा आह्वयन्ति जनान् स्वर्गस्थान् सुरभूपोपमान् सुन्दरान् ।
सन्तुबोधाय तेऽनन्तबोधिजिना· सदगुणैर्निर्जरै· सेव्यसत्शासनाः ॥१६॥

मगलैर्मण्डिता धर्मचक्रेश्वराः सच्चतुस्त्रिशकैर्येतिशयर्लियुताः
सन्तुबोधाय तेऽनन्तबोधिजिना· सदगुणैर्निर्जरै सेव्यसत्शासनाः ॥१७॥

धत्ता - वरतरुहि सुमनसां वर्णनां दिव्यवाद,
चमरवरत्रिछत्र भासनं दिव्यपीठं ।

वरद्युतिकरपुञ्जदुन्दुभीना निनादै ,
धनपति इति नस्ते सन्तु सिद्धयै समेता· ॥

ओं ह्री ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय चतुर्विंशतिजिनेन्द्रायार्घ्यम् ।

घातिकर्मविमुक्तास्ते समवसृतिसंस्थिताः ।
केवलज्ञानचक्रीशा· युष्मान् रक्षन्तु सर्वदाः ॥ **इत्याशीर्वादः**

तत्वोपदेश अर्घपूजा (१)

ज्ञानाभिन्नः सततचिदपावृत्त एषोऽस्ति जीवोऽ
नाद्यंतः स्याच्छिवजगदितश्चक्रमायोगयोगात् ।
पर्यायार्थैर्नरसुरपशुश्वभ्रिभेदादिरर्थ
याथातथ्यैर्निजसुखचिदानद एव ह्यशैत्सीत् ॥

ओं ह्रीं जीवतत्त्वस्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

रूपी स्पर्शादिभिरपि गुणैः स्वै प्रधानैर्निरुक्त·
स्कन्धाणुभ्यामनणुविवृत्तिव्यापृतः पुद्गल· स्यात् ।
कर्माकर्मप्रवृत्तिनिगडैर्विश्वमापीड्य हेतु-
र्बंधस्येति प्रभवति जिन जल्पयतं नमामि ॥

ओं ह्रीं पुद्गलतत्त्वस्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

लोकस्थानां भवति गमने जीवसत्पुद्गलाना
हेतुर्धर्म· सहचरविधौ दास्यमात्रप्रमेयः ।
लोकालोकस्थितिविभजनेऽग्रीण एवं हिधर्म-
स्वास्मानं संगदति जिनपः सो स्तु मे क्लेशहर्ता ॥

ओं ह्रीं धर्मतत्त्वस्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

---

(१) आ. ज. से , प्र. पा श्लोक ८८५ से ९०५

वैलक्षण्यं तत उपगतो जीवसत्पुद्गलानां
स्थाता धर्म- सहचरतयौदास्यमात्रे ऽपि तेषाम् ।
एवंतस्य स्वभवनम संदिह्यमानो जिनेन्द्रो
मादृक्षाणां भवविधिहति संकरोत्वात्मनीनां ।।

ओं ह्रीं अधर्मद्रव्यस्वरूपनिरूपकजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जीवाजीवाद्युपधृतितयाऽऽधारभूतो ह्यनंतो
मध्ये तस्य त्रिभुवनमिदं लोकनाम्ना प्रसिद्धं ।
सर्वेषां स्यादवकशनदः शून्यमूर्तिर्महांश्चा-
काशोऽयं तन्निजगुणगण वक्ति तं पूजयामि ।।

ओं ह्रीं आकाशद्रव्यस्वरूपनिरूपकाय जिनायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

वस्तूद्भूतागुणपरिणमस्यानुभूतेश्च हेतुः
सत्तार्थानां पद्युपगमनादेव जाति विधत्ते ।
सोऽयं कालो व्यवहरणकार्यानुमेयः क्रियायाः
कर्तृत्वादित्यकथयदिनो मुक्तिलक्ष्मी ददातु ।।

ओं ह्री कालद्रव्यस्वरूपनिरूपक जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

कायस्वांतवचः क्रियापरिणतिर्योगः शुभो वाऽशुभ-
स्तत्कर्मागमनायनं निजयुजो रागद्विषोरुद्भवात् ।
ईर्यामार्गभवौषधद्विविधया तत्संविधि वेदयन्
जीयाच्छ्रीपतिपूज्यपादकमलस्तीर्थकरः पुण्यगीः ।।

ओं ह्रीं आस्रवतत्त्वस्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

कषायावृतचेतसान्यविषयं स्वत्वं कृत्तं तद्विधे -
योग्याः कर्मविभावशक्तिसहिता ये पुद्गलाश्चात्मना ।
संश्लिष्टा अवगाहनैक्यमटितास्तत्प्रक्रमो बंधभाक्
तं छित्वा निजशुद्धभावविरतिप्राप्तः समे स्तात् गुरुः ।।

ओं ह्री बंधतत्त्वस्वरूपप्ररुपकाय जिनाय अर्घ स्वाहा ।

तद्रोधः खलु संवरो निगदितो द्रव्यार्थभेदाद् द्विधा ।
तद्धेतुर्व्रतगुप्तिधर्मसमितिप्रेक्ष्या चरित्रात्मता ।
मूलं निर्जरणस्य कर्मविततेर्नूत्नागमस्य स्वयं
तद्रूपं कथितं गणेश्वरपुरोभागे स आप्तो मम ।।

ओं ह्री संवरतत्त्वस्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वोद्भूतानुभवात्तथा कृततपो वीर्येण तच्छातनाद्
द्वेधा निर्जरण विसंयमियमि स्वाम्याश्रयेणास्तियत् ।
तद्रूप समवश्रिया गदितवान् भव्या त्मना श्रेयसः
संप्राप्त्यै स जिनोऽस्तु मे दुरितसंघ्रातस्य संच्छित्तये ॥

ओं ह्रीं निर्जरातत्त्वस्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

मोहस्यात्यंतनाशात् ज्ञपिति दृशि चिदाच्छादकाशेषलोपात्
प्रत्यूहस्यापि मूलंकषविनशनादात्मशक्तेः प्रकाशात् ।
निः सापत्नं ज्वलंती परमशिवसुखास्वादसंवेद्यमाना-
मुक्ति श्रीर्दिव्यतत्त्व त्विति सकलजना देयमुक्ति जिनेन्द्रैः ॥

ओं ह्रीं मोक्षतत्त्वस्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

देवोऽर्हन् सकलामयव्यपगतो दृष्टेष्ट वाग्देशको
भव्यद्धैर्तगतरागदोषकलनो मोक्षार्थिभिः श्रेयसे ।
आश्रेयः परिसेवनीय उदितज्ञानप्रभौघः स्वयं
शास्ता सर्वहितः प्रमाण पटुभिर्ध्येयो जिनः पातु नः ॥

ओं ह्रीं आप्तस्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

रागद्वेषकलंकपककणिका हीनो विसंवादको
निर्वाछो हितदेशनो व्रतगुणग्रामाग्रगण्यः प्रभुः ।
अस्माकं भवपद्धतावनुसरद् वाधार्दितानां महा
नाराध्यः प्रियकारको गुरुरय प्रोक्तो जिनेन त्वया ॥

ओं ह्रीं गुरुस्वरूपनिरूपकायजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

यत्रामूलमनून मन्यजडता पीडोत्कथा प्रच्युति
र्यत्रश्रेयसिदीपिकेव्र सरणिः प्राकाश्यमास्कंदते ।
विश्वप्रोत महार्ति मोहमदिरा निर्भत्सनं सद्गुणा -
श्लेषावाप्तिरय जिनवरै र्गीतो वृषोऽस्तु श्रिये ॥

ओं ह्रीं धर्मस्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

शब्दावाच्यमवस्त्वनादिकृत संकेतेन वस्तुग्रहः
केनापि ध्वनिना भवत्यथ स वै संजायते मातृकृत् ।
साऽपेक्षा सहितोह्यनेकगुणतस्ता एव तस्मात् स्थितं
वस्तुस्यात्पद संस्कृतं तदुदयन् स्याद्वाद एवार्हतः ॥

ओं ह्रीं नमोऽर्हतेभगवते स्याद्वादस्वरूप निरूपकाय जिनाय अर्घ स्वाहा ।

तीर्थेशां भरतेशिनां हलजुषा नारायणाना ततः
शत्रूणा त्रिपुरद्विषां च महतां सद्भाग्य सशालिनां।
पुण्यापुण्यचरित्र मत्र निहितं पूर्वानुयोगं विदन्
दृष्टांतप्रतिपत्तिद जिनपति प्रारब्धवान शासनम् ॥

ओं ह्रीं प्रथमानुयोग स्वरूप निरूपकायजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सस्थानायाम सख्यागणितमसुभृतां मार्गणास्थानतज्ज
कर्मोदीर्णोदयादि प्रकथन मधिपो वर्णयामास सम्यक्।
लोकालोकोक्त भेदे नरक सुरमनुष्यादि संस्थित्युदंत -
वृत्ति त्वारख्यानमेतत्करणगमनुयोगं प्रकाश्य स्वयंभूः ॥

ओं ह्रीं करणानुयोगस्वरूप निरूपकाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

शीलानां संयमानां व्रतसमिति चरित्रादिसाध्वर्हितानां
सागारार्थोक्त कर्मावधृत विरमणस्थूलधर्म क्रियाणां।
तत्तत्स्थानोक्तबुद्धयं निजनिज हृदयोद्भूतत्वं निरूप्य
कर्तव्यत्वोपदेशोयदवधिचरणाख्यान मुक्तं जिनेन ॥

ओं ह्रीं चरणानुयोगस्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

षट् द्रव्यस्वत्वरूपाण्यथनय घटा तत्प्रमाणस्वरूपं
नामस्थापादिकृत्यं तदधिकरणभिसूतत्वं संस्थापनादि।
मेयामेयव्यवस्थायदवधिसमिता यत्र षड्भंगवाणी
द्रव्याख्यान निरूप्यप्रथममभिहितं मोक्षमार्ग जिनेन ॥

ओं ह्री द्रव्यानुयोगस्वरूप निरूपकजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीमंस्त्वद् भक्तिभार प्रविनत शिरस केचिदिच्छंतिमुक्ति
ते सद्यः साधुदीक्षा प्रणयन पटवस्त्वत्प्रसादावलंबात्।
केचिद् व्युच्छितिधर्म गृहपतिनिरु तरु द्रमार्गावरूढं
स्वामिन् हस्तावलंब कुरु शरणगतान् रक्ष रक्षेशनाथ ॥

ओं ह्रीं मुनिश्रावक धर्मोपदेशक जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

एवमिन्द्रः समागत्य स्तुतिमालार्चितक्रमं ईशं नत्वा विहारार्थ प्रस्तावमकरोत्सुधीः ।

विहार हेतु स्तुति [१]

इच्छा विरहितस्यापि भव्यपुण्योदयेरितः ।
विहारमकरोद् देशानायान् धर्मोपदेशयन् ।

काश्यां काश्मीरदेशे कुरुषु च मगधे कोशले कामरूपे ।
कच्छे काले कलिंगे जनपदमहिते जांगलांते कुरादौ ।।

किष्किंधे मल्लदेशे सुकृतिजनमनस्तोषदे धर्मवृष्टिं ।
कुर्वन् शास्ता जिनेन्द्रो विरहति नियतं तं यजेऽहं त्रिकालं ।।

पांचाले केरले वाऽमृत पद मिहरोमंद्रचेदीदशार्ण ।
वंगागांधोलिकोशी नरमलयविदर्भेषु गौडे सुसह्ये ।।

शीतांशुरश्मिजालादमृतमिव समां धर्मपीयूषधारां ।
सिंचन् योगाभिरामा परिणमयति च स्वातशुद्धिं जनानां ।।

पुन्नाटचौलविषयेऽपि च मौंड्रदेशे
सौराष्ट्रमध्यमकलिदकिरातकादौ ।

सुयोग्ये सुदेशमहिते सुविहृत्यधर्म -
चक्रेणमोहविजयं कृतवान् जनानां ।।

ओं ह्रीं नमोऽर्हते भगवते विहारावस्थाप्राप्तायदेशेधर्मोपदेशेनोद्धर्त्रे जिनाय अर्घं ।

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक १०६ से १०९

ज्ञानकल्याणक पूजा (हिन्दी)

गीताछन्द- चौबीस जिनवर तीर्थकारी ज्ञान कल्याणक धरं
महिमा अपार प्रकाश जग में मोह मिथ्यातम हरं।
कीने बहुत भवि जीव सुखिया दुःख सागर उद्धरं
तिनकी चरण पूजा करें तिन सम बनें यह रुचि धरं ।।

ओं ह्रीं वृषभादि महावीरपर्यन्तचतुर्विंशति जिनेन्द्राः अत्र अवतर अवतर संवौषट् । अत्रतिष्ठतिष्ठ ठःठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

नीर लाय शीतलं महान मिष्टता धरे, गंधशुद्ध मेलिके पवित्र झारिका भरे
नाथ चौबिस महान वर्तमान काल के, बोधउत्सव करूं प्रमाद सर्व टालके।
ओं ह्रीं ज्ञानकल्याणकप्राप्तवृषभादिचतुर्विंशति जिनेभ्यो जलं निर्व० स्वाहा ।

श्वेत चन्दनं सुगन्धयुक्त सार लायके, पात्र मे धराय शांति कारणें चढ़ायके
नाथ चौबिस महान वर्तमान काल के, बोध उत्सव करूं प्रमादसर्व टालके।
ओं ह्रीं ज्ञानकल्याणकप्राप्तवृषभादिचतुर्विंशति जिनेभ्यः चन्दनं निर्व० स्वाहा ।

तन्दुल भले सुश्वेत वर्ण दीर्घलाइये, पापगुण सुअक्षतं अतृप्तिता नशाइये
नाथ चौबिस महान वर्तमान काल के, बोध उत्सव करूंप्रमादसर्व टालके।
ओं ह्रीं ज्ञानकल्याणकप्राप्तवृषभादिचतुर्विंशति जिनेभ्यो अक्षतं निर्व० स्वाहा ।

वर्ण वर्ण पुष्प सार लाइये चुनायके, काम कष्ट नाश हेतु पूजिये स्वभावके
नाथ चौबिस महान वर्तमान काल के, बोध उत्सव करूं प्रमादसर्व टालके।
ओं ह्रीं ज्ञानकल्याणकप्राप्तवृषभादिचतुर्विंशति जिनेभ्यः पुष्पं निर्व० स्वाहा ।

क्षीर मोदकादि शुद्ध तुर्त ही बनाइये, भूख रोग नाश हेतु चर्ण में चढ़ाइये।
नाथ चौबिस महान वर्तमान काल के, बोध उत्सव करूंप्रमादसर्व टालके।
ओं ह्रीं ज्ञानकल्याणकप्राप्तवृषभादिचतुर्विंशति जिनेभ्यो नैवेद्यं निर्व० स्वाहा ।

दीपधार रत्नमय प्रकाशता महान है, मोह अंधकार हार होत स्वच्छ ज्ञान है।
नाथ चौबिस महान वर्तमान काल के, बोध उत्सव करूं प्रमादसर्व टालके।
ओं ह्रीं ज्ञानकल्याणकप्राप्तवृषभादिचतुर्विंशति जिनेभ्यो दीपं निर्व० स्वाहा ।

धूप गंध सार लाय धूपदान खेइये, कर्म आठ को जलाय आप आप बेइये।
नाथ चौबिस महान वर्तमान काल के, बोध उत्सव करूंप्रमादसर्व टालके।
ओं ह्रीं ज्ञानकल्याणकप्राप्तवृषभादिचतुर्विंशति जिनेभ्यो धूपं निर्व० स्वाहा ।

लौंग ओ बदाम आम्र आदि पक्व फल लिए सुमुक्ति धाम पायके स्वआत्म अमृत पिये।
नाथ चौबिस महान वर्तमान काल के, बोध उत्सव करू प्रमादसर्व टालके।
ओं ह्रीं ज्ञानकल्याणकप्राप्तवृषभादिचतुर्विंशति जिनेभ्यः फलं निर्व० स्वाहा।

तोयगंध अक्षत सुपुष्प चारु चरु धरे दीप धूप फल मिलाय अर्घ्यदेय सुख करे।
नाथ चौबिस महान वर्तमान काल के, बोध उत्सव करूंप्रमादसर्व टालके।
ओं ह्री ज्ञानकल्याणकप्राप्तवृषभादिचतुर्विंशति जिनेभ्यो अर्घ निर्व० स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ

एकादशि फागुन वदिकी, मरुदेवी माता जिनकी।
हत घाती केवल पायो, पूजत हम चित उमगायो ॥१॥
ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्तवृषभनाथायार्घ।

एकादशि पौषसुदी को, अजितेश हतो घाती को।
निर्मल निज ज्ञान उपाये, हम पूजत सम सुख पाये ॥२॥
ओं ह्रीं पौषशुक्लैकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्तजितनाथायार्घ।

कार्तिक वदि चौथ सुहाई, संभव केवल निधि पाई।
भवि जीवन बोध दियो है मिथ्यामत नाश कियो है ॥३॥
ओं ह्री कार्तिककृष्णाचतुर्थ्या ज्ञानकल्याणकप्राप्तसंभवनाथजिनायार्घ।

चौदशि शुभ पौष सुदी को, अभिनन्दन हत घाती को।
केवल पा धरम प्रचारा, पूजू चरणा हितकारा ॥४॥
ओं ह्रीं पौषशुक्लाचतुर्दश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्तायभिनंदन जिनायार्घ।

एकादशि चैत सुदी को, जिन सुमति ज्ञान लब्धी को
पाकर भविजीव उधारे, हम पूजत भव हरतारे ॥५॥
ओं ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्तमतिनाथ जिनायार्घ।

मधुशुक्ला पूरणमासी, पद्मप्रभ तत्त्व अभ्यासी
केवल ले तत्त्व प्रकाशा, हम पूजत सम सुखभाषा ॥६॥
ओं ह्रीं चैत्रशुक्लापूर्णमास्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्तपद्मप्रभजिनायार्घ।

छठि फागुन की अधियारी, चउ घाती कर्म निवारी
निर्मल निज ज्ञान उपाया, धनधन सुपार्श्व जिनराया ॥७॥
ओं ह्री फाल्गुनकृष्णाषष्टयां ज्ञानकल्याणकप्राप्तसुपार्श्वनाथ देवायार्घ।

फागुन वदि साते सुहाई, चन्द्रप्रभ आतम ध्याई
हन घाती केवल पाया, हम पूजत सुख उपजाया ॥८॥

ओं ह्रीं फागुनकृष्णासप्तम्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्तचन्द्रप्रभजिनेन्द्रायार्घ ।

कार्तिक सुदि द्वितिया जानो, श्री पुष्पदत भगवानो
रज हर केवल दरसानो, हम पूजत पाप विलानो ॥९॥

ओं ह्रीं कार्तिकशुक्लाद्वितीयायां ज्ञानकल्याणकप्राप्तपुष्पदंत देवायार्घ ।

चौदशि वदि पौषसुहानी, शीतल प्रभु केवल ज्ञानी
भवका सन्ताप हटाया, समता सागर प्रगटाया ॥१०॥

ओं ह्रीं पौषकृष्णाचतुर्दश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्तशीतलनाथ जिनायार्घ ।

वदि माघ अमावस जानों, श्रेयांस ज्ञान उपजानों
सब जग मे श्रेय कराया, हम पूजत मंगल पाया ॥११॥

ओं ह्रीं माघकृष्णाअमावस्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्तश्रेयांसनाथायार्घ ।

शुभ द्वितीया माघ सुदी को, पाया केवल लब्धी को
श्री वासुपूज्य भवितारी, हम पूजत अष्ट प्रकारी ॥१२॥

ओं ह्रीं माघशुक्लाद्वितीयायां ज्ञानकल्याणकप्राप्तवासुपूज्य देवायार्घ ।

छटि माघ सुदी हत घाती, केवल लब्धी सुख लाती
पाई श्री विमल जिनेशा, हम पूजत कटत क्लेशा ॥१३॥

ओं ह्रीं माघशुक्लाषष्ट्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्तविमलनाथ देवायार्घ ।

वदि चैत अमावस गाई, निज केवल ज्ञान उपाई ।
जजूं अनन्त जिन चरणा, जो है अशरण के शरणा ॥१४॥

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णाअमावस्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्तानन्तनाथ जिनायार्घ ।

मासान्त पौष दिन भारी, श्री धर्मनाथ हितकारी ।
पायो केवल सब्दोधं, हम पूजे छाड़ कुबोध ॥१५॥

ओं ह्रीं पौषशुक्लापूर्णिमायां ज्ञानकल्याणकप्राप्तधर्मनाथ जिनेन्द्रायार्घ ।

सुदि पौष की दशमी जानी, श्री शातिनाथ सुखदानी ।
लहि केवल धर्म प्रचारा, पूजूं मैं अघ हरतारा ॥१६॥

ओं ह्रीं पौषशुक्लादशम्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्तशान्तिनाथ देवायार्घ ।

सुदि चैत्र तृतीया स्वामी, श्रीकुंथुनाथ गुणधामी ।
निर्मल केवल उपजायो, हम पूजत ज्ञान बढ़ायो ॥१७॥

ओं ह्रीं चैत्रशुक्लतृतीयायां ज्ञानकल्याणक प्राप्तकुंथुनाथ जिनायार्घ ।

कार्तिक सुदि वारस जानो, लहि केवल ज्ञान प्रमाणो।
परतत्त्व निजतत्त्व प्रकाशा, अरनाथ जजो हत आशा ॥१८॥

ओं ह्रीं कार्तिकशुक्लाद्वादश्यां ज्ञानकल्याणक प्राप्तारनाथ जिनायार्घं।

वदि पौष द्वितीया जाना, श्री मल्लिनाथ भगवाना।
हत घाती केवल पाये, हम पूजत ध्यान लगाये ॥१९॥

ओं ह्रीं पौषकृष्णद्वितीयायां ज्ञानकल्याणकप्राप्तमल्लिनाथ देवायार्घ।

वैसाख वदी नवमी को, मुनि सुव्रत जिन केवलको।
लहि वीर्य अनन्त सम्हारा, पूजूं मैं सुख करतारा ॥२०॥

ओं ह्रीं वैसाखकृष्णानवम्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्तमुनिसुव्रत नाथायार्घ।

अगहन सुदि ग्यारस आये, नमिनाथ ध्यान लौ लाए।
पाया केवल सुखदाई, हम पूजत चित हरषाई ॥२१॥

ओं ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लैकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्तनमिनाथ देवायार्घ।

पड़िवा शुभवार सुदीको, श्रीनेमिनाथ जिनजी को।
इच्छो केवल सत ज्ञानं, हम पूजत ही दुःख हानम् ॥२२॥

ओं ह्रीं आश्विनशुक्लाप्रतिपदायां ज्ञानकल्याणकप्राप्तनेमिनाथार्घ।

तिथि चैत्र चतुर्थी श्यामा, श्री पार्श्वनाथ भगवाना।
केवल लहि तत्त्व प्रकाशा, हम पूजत कर शिव आशा ॥२३॥

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णाचतुर्थ्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्तपार्श्वनाथ जिनेन्द्रायार्घ।

दशमी वैसाख सुदीको, श्री वर्द्धमान जिनजी को।
उपजो केवल सुखदाई, हम पूजत विघ्न नशाई ॥२४॥

ओं ह्रीं वैसाखशुक्लादशम्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्त महावीर जिनायार्घ।

जयमाल (सृग्विणी)

जय ऋषभनाथ जी ज्ञान के सागरा, घातिया घातकर आप केवल वरा
कर्म बंधन मई सांकला तोड़कर, आपका स्वाद ले स्वाद पर छोड़कर ॥१॥

धन्य तू धन्यतू धन्य तू नाथ जी, सर्व साधून में तोहिको नाथ जी
दर्श तेरा करे पाप मिटजात है, भर्मभाजे सभी ताप हट जात है ॥२॥

धन्य पुरुषार्थ तेरा महा अद्भुतं, मोह सा शत्रु मारा त्रिघाती हतं
जीत त्रैलक्यको सर्व दर्शीभये, कर्म सेना हती दुर्ग चेतन लये ॥३॥

आप सत तीर्थ त्रय रत्न के निर्मिता, भव्य लेवें शरण होय भव भवरिता
वे कुशल से तरें संसृती सागरा, जाय ऊरध लहें सिद्ध सुन्दर धरा ॥४॥

यह समवशर्ण भविजीव सुख पात हैं, वाणी तेरी सुनें मन यही भात हैं
नाथ दीजे हमें धर्म अमृत महा, इस बिना सुख नहीं दुःख भव में सहा ॥५॥

ना क्षुधा ना तृषा राग न द्वेष है, खेद चिन्तानहीं आर्ति न क्लेश है।
लोभमद क्रोध माया नहीं लेश है, वन्दता हूं तुम्हें तूहि परमेश है ॥६॥

ओं ह्रीं केवलज्ञानप्राप्त वृषभादिचतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो महार्घम् ।

स्तवन (पद्धारि)

जय परम ज्योति ब्रह्मामुनीश, जय आदि देव वृषनाथ ईश ।
परमेष्ठी परमातम जिनेश, अजरामर अक्षय गुण विशेष ॥७॥

शंकर शिवकर हर सर्व मोह, योगी योगीश्वर काम द्रोह ।
हो सूक्ष्म निरञ्जन सिद्धबुद्ध, कर्माञ्जन मेटन तोय शुद्ध ॥८॥

भवि कमल प्रकाशन रवि महान, उत्तम बागीश्वर राग हान ।
हो वीत द्वेष हो ब्रह्म रूप, सम्यग्दृष्टि गुण राज भूप ॥९॥

निर्मल सुख इन्द्रिय रहित धार, सर्वज्ञ सर्वदर्शी अपार ।
तुम वीर्य अनंत धरो जिनेश, तुम गुण पावत नाही गणेश ॥१०॥

तुम नाम लिये अघ दूर जाय, तुम दर्शन से भव भव नशाय ।
स्वामिन् अब तत्त्वन का प्रभेद, कहिए जासे हटे कर्म छेद । (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

भरत चक्रवर्ति द्वारा प्रार्थना करने पर जो दिव्योपदेश मिला उसका निरूपण करते हुए केवली भगवान को अर्घ चढ़ाना है।

जीव अनादि अनन्त है चेतन मय अविकार ।
कर्म बंध से जगभ्रमें कर्म नशें भवपार ॥

ओं ह्रीं जीव तत्त्व स्वरूप निरूपकाय जिनायार्घ ।

रूपी पुद्गल द्रव्य है अणु स्कंध स्वरूप ।
कर्म और नो कर्म से बंधेजीव बहुरूप ॥

ओं ह्रीं पुद्गल तत्त्व स्वरूप निरूपकाय जिनायार्घ ।

जिय पुद्गल के गमन में उदासीन सहकार ।
लोका लोक विभागकर धर्मद्रव्य अविकार ॥

ओं ह्रीं धर्मतत्त्व स्वरूप निरूपकाय जिनायार्घ ।

जिय पुद्गल के थगन मे उदासीन सहकार ।
लोक व्याप्ति अमूर्त है द्रव्य अधर्म निहार ॥

ओं ह्री अधर्म तत्त्व स्वरूप निरूपकाय जिनायार्घ ।

सर्वद्रव्य अवकाश दे है अनत आकाश ।
मध्यलोक षट् द्रव्यगय शेष अलोकाकाश ॥

ओं ह्री आकाश तत्त्व स्वरूप निरूपकाय जिनायार्घ ।

वस्तु परिणमन हेतु है निश्चय काल प्रमाण ।
समय घड़ी दिन रात यह व्यवहृत काल वरवान ॥

ओं ह्री कालतत्त्व स्वरुप निरुपकाय जिनायार्घ ।

काय वचन मन परिणमन योग शुभाशुभरूप ।
कर्माश्रवकारणयही मोह सहित भवरूप ॥

ओं ह्रीं आश्रव तत्त्व स्वरूप निरूपकाय जिनायार्घ ।

कर्म वर्गणा जीवके भाव कषाय प्रमाण ।
एकक्षेत्र अवगाह हो वंध तत्व यह जान ॥

ओं ह्रीं वंधतत्त्व स्वरूप निरूपकाय जिनायार्घ ।

गुप्ति समिति व्रतधर्म से कर्माश्रव रुक जाय ।
वीतराग मय भाव जहा सवर तत्त्व सुहाय ॥

ओं ह्रीं संवर तत्त्व स्वरुप निरूपकाय जिनायार्घ ।

कर्म अवधि से निर्जरें तप प्रभाव क्षय होय
दुविध निर्जरा अत्यधिक संयमीन के होय ।

ओं ह्रीं निर्जरा तत्त्व स्वरूप प्ररूपकाय जिनायार्घ ।

मोहादिक सब कर्म से रहित मोक्ष सुख रूप
आत्म शक्ति पूरण प्रगट अविनाशी इक रूप ।

ओं ह्री मोक्ष तत्त्व स्वरूप प्ररूपकाय जिनायार्घ ।

वीतराग सर्वज्ञ जिन हित उपदेशी जान
निर्मल तत्त्व प्रकाशकर भजो आप्त पहिचान ।

ओं आप्त स्वरूप निरूपकाय जिनायार्घ ।

वैरागी निस्पृह व्रती सर्व परिग्रह हीन
आतम ध्यानी गुरु कहे हितकर तत्त्व प्रवीण ।

ओं ह्री गुरु स्वरूप प्ररूपकाय जिनायार्घ ।

प्र. श्री प्र. प्र सा. स पृष्ठ १४८ से १५३ तक

रत्नत्रय मय मोह हर पीडा सत्व निवार
शिवकारण भव उद्धरण धर्म सत्व अविकार।

ओं ह्रीं धर्म स्वरूप निरूपकाय जिनायार्घ ।

वस्तू वाच्य अवाच्य है नित्यानित्य स्वरूप
नय प्रमाण तें साधता स्याद्वाद सुखरूप

ओं ह्रीं नमोऽर्हते भगवते स्याद्वाद स्वरूप निरूपकाय जिनायार्घ ।

तीर्थंकर चक्रीश हरि प्रतिहर हलधर वृत्त
पुण्य पाप दृष्टान्त यह प्रथमानुयोग पवित्र ।

ओं ह्रीं प्रथमानुयोग स्वरूप प्ररूपकाय जिनायार्घ ।

लोकत्रय रचना सकल जीवमार्गणा थान
करणानुयोग बखानता कर्म बंध आख्यान ।

ओं ह्रीं करणानुयोग स्वरूप निरूपकाय जिनायार्घ ।

मुनि संयम व्रत आचरण गृही धर्म आचार
कर्म हरण विधि सबकहे चरणानुयोग विचार ।

ओं ह्रीं चरणानुयोग स्वरूप निरूपकाय जिनायार्घ ।

नय प्रमाण निक्षेप से द्रव्य छहों को साध
सप्त तत्व शुद्धात्म कथ द्रव्यानुयोग अबाध ।

ओं ह्रीं द्रव्यानुयोग स्वरूपनिरूपकाय जिनायार्घ ।

तब प्रसाद भवि लहत हैं मुनि दीक्षा अविकार
प्रतिमा ग्यारह भविधरें तुम्हीं उतारन पार ।

ओं ह्री मुनिश्रावकधर्मोपदेशकजिनायार्घ ।

भरत चक्रवर्ती, महामण्डलेश्वर, मण्डलेश्वर राजाओं द्वारा स्तुति

चौपाई छंद

धन्य धन्य जिनराज प्रमाणा, धर्मवृष्टि कारी भगवाना ।
सत्यमार्ग दरशावन हारे, सरल शुद्ध मग चालन हारे ।।

आपी से आपी अरहन्ता, पूज्य भार त्रैलोक्य महंता ।
स्वपर भेद विज्ञान बताया, आतम तत्त्व पृथक दरसाया ।।

स्वानुभूतिमय ध्यान जताया, कर्मकाष्ठ बालन समझाया ।
धर्म अहिंसा मय बतलाया, प्रेमभाव हित करन बताया ।।

वस्तु अनेक धर्म धरतारा, स्याद्वाद परकाशन हारा।
मत विवाद को मेंटन हारा, सत्य मार्ग परकाशन हारा ॥
धन तीर्थकर तेरी वाणी, तीर्थ धरम सुख कारण मानी।
करहु विहार नाथ बहुदेशा, करहु प्रचार तत्व उपदेशा ॥

(विहार हेतु प्रार्थना की कहाँ कहाँ विहार हुआ) **विहारार्थं पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।**

दोहा - काशी अरु कशमीर में मगध सुकौशलकाम।
कच्छ कलिंग रकाल में कुरु जांगल शुभधाम ॥
किष्कंधा पांचाल में मलय सु केरल मन्द्र।
चेदि दशार्ण सुवंगमें अंग उकिल शुचि अन्ध्र ॥
गौड़ विदर्भ उसीनरे सह्य चौल पुन्नाट।
मौड्र सौराष्ट्र किरात में मध्यकलिग विराट ॥
इत्यादिक बहुदेशमें धर्म देशनाकार।
बन्दहु पूजहु प्रेमसे करहु करम निरवार ॥

ओं ह्रीं नमोऽर्हते भगवते विहारावस्था प्राप्तायदेशे धर्मोपदेशे नोद्धर्त्रैजिनायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ततो महार्घेण सुवाद्य घोष पुरस्सरेण त्रिकलोक भर्त्तु
महा महं कुर्यरनर्घ्यपात्रा र्पितेन शान्ति प्रपठेयुरिष्टाम् ॥[१]

ओंह्रींसकलयज्ञाधिकृतजिनदेवगुरुश्रुतादिसकलदेवताभ्योअर्घनिर्वपामीतिस्वाहा।

पश्चात् निर्वाण क्षेत्र अर्घ एवं महार्घ चढावें। फिर शांति पाठ विसर्जन करके कार्य समाप्त करें।

विशेष -

यदि समवसरण के सामने कैलाश पर्वत बनाने के लिए स्थान हो तो, समवसरण रचना रखें। और यदि वेदी पर स्थान कम हो तो प्रतिमा को वेदी पर विराजमान कर दें। समवसरण की रचना समाप्त कर के निर्वाण हेतु कैलाश पर्वत की सुदर रचना रात्रि में करा ले पर्वत के ऊपर भाग में बजौटा लगा दें। उस पर पत्थर की चौकोर शिला रख दें जिस पर ध्यान मुद्रा में भगवान का दर्शन हों। पश्चात् निर्वाण क्रिया भी पर्वत के ऊपर से की जाना चाहिए।

(१) वही, श्लोक १११

निर्वाण कल्याणक

निर्वाण कल्याणक (सिद्ध प्रतिष्ठा)

मंत्र	-	(१) निर्वाण सम्पत्तिकर मंत्र
		(२) सिद्ध चक्र मंत्र
मण्डल	-	(१) चौबीस तीर्थकर मण्डल
		(२) कर्म दहन मण्डल
		(३) सिद्ध मण्डल (तीन मे से कोई एक)
यंत्र	-	(१) निर्वाण सम्पत्तिकर यंत्र
		(२) सिद्ध चक्र यंत्र
भक्तियां	-	(१) सिद्ध भक्ति
		(२) श्रुत भक्ति
		(३) तीर्थकर भक्ति
		(४) चारित्र भक्ति
		(५) योगि भक्ति
		(६) निर्वाण भक्ति
		(७) शान्ति भक्ति
अन्य	-	चौकोर शिला

निर्वाण कल्याणक पर विचार

निर्वाण कल्याणक के विषय मे आचार्यो ने अलग - अलग मत दिए हैं। श्री जय सेनाचार्य अपर नाम वसुविंदु जी एवं प० आशाधर जी ने अपने प्रतिष्ठा ग्रंथों में केवलज्ञान कल्याणक तक की संपूर्ण विधि विस्तार पूर्वक दी है और निर्वाणकल्याणक के लिए विशेष न लिखकर मात्र सिद्ध परमेष्ठी के गुणों की स्थापना का कथन करके या निर्वाण भक्ति पाठ पढकर गुणारोपण करना लिखा है।

(१) प्रतिष्ठापाठ - (श्री आचार्य वसुविंदु अपरनाम जयसेन स्वामी)[1]

केवलज्ञानकल्याणक की विधि के साथ समवसरन की रचना, धर्मोपदेश, विहार आदि का वर्णन करके योगनिरोध की क्रिया का कथन एवं पूजा विधि लिखी है। पश्चात् लिखा है

अत्र प्रतिष्ठा समाप्तौ आचार्यवासर्वयजमानैः कायोत्सर्ग पूर्वकं भक्तिपाठः विधेयाः। निर्वाणभक्तिरेव निर्वाण कल्याणारोपणं। साक्षात्तु न विधेयं स्मरणीय मे वेति दिक्।

वचनिकका - अब यहां प्रतिष्ठा विधि की समाप्ति में आचार्य, इन्द्र, यजमान तीनों कायोत्सर्ग पूर्वक पूर्वोक्त भक्तिपाठ करें।

पंचकल्याणक में चार कल्याणक तो विधान संयुक्त किया और पंचम कल्याणक मोक्षकल्याण है। सो निर्वाणभक्ति पाठ मात्र ही आरोपण करना साक्षात् विधान नहीं करना स्मरण मात्र ही है। ऐसा अनिर्वाच्य समझ लेना। पश्चात् रथयात्रा, अभिषेक कर यज्ञ विधान विसर्जन करें। आगे सिद्ध प्रतिष्ठा को लिखा है।[2]

सिद्ध प्रतिष्ठा यदि तत्रयोग संरोधनं पूज्य चतुर्घनानि।
कर्माणि संयोज्यचतुःप्रदीपानुत्तारयेत्तत्र शिवोर्ध्वगंतॄन्।
पंचलघूच्चारणमत्र मयोगपंथानमाशुविनियुंज्यात्
तत्रैक समय एव सिद्धत्वं प्राप्त तत्र भासंति
तत्राष्ट गुणानां पूजा कार्या सम्यक्त्व मुख्य सुविधीनां
अन्यो विधिर्विधेयस्तावानेवात्र गुरुकुलाद् बुद्ध्वा
पूजाकर्म विधूननायमत्वेदेंदु प्रकृत्यस्तकृद्
यंत्रे मंडल मालिखेदवसुदलान्वीते पृथक्शासनं
संयोज्यामरनायकान् शिवपदप्राप्तान् यजेत्तद् गुणा-
नेवं युक्ति विशारदेन पटुना कार्यो विधिर्भूयशः

इस प्रकार सिद्ध प्रतिष्ठा लिखी है।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. पृ० ३०७ (२) आ. ज. से, प्र. पा. श्लोक ९१९ से ९२२

(२) प्रतिष्ठासारोद्धार (पंडित प्रवर आशाधर जी कृत)[1]

केवलज्ञानकल्याणक की सविस्तार विधि के पश्चात् एक श्लोक-

न्यस्य निर्वाणकल्याणं सूत्रोक्त विधिना ततः ।
सिद्धश्रुतचरित्रर्षि शिवशान्तीन् स्तुवंतु ते ॥

भाषा - इस तरह केवलज्ञानकल्याणक की स्थापना विधि हुई। उसके बाद वे इन्द्र शास्त्र कथित विधि से निर्वाण कल्याणक का स्थापन करके सिद्ध, श्रुत, चारित्र, ऋषि, शिव, शांति स्तुति का पाठ करें। जिस तरह स्वर्ग से अवतार लेना आदि क्रियायें हुई हैं। उसी तरह अर्हन्त के प्रतिबिंब में गुणादि की स्थापना करनी चाहिए इस तरह निर्वाण कल्याणक की स्थापना का विधान हुआ।

प्रतिष्ठा सारोद्धार ग्रंथ के छठवें अध्याय में सिद्ध प्रतिमा प्रतिष्ठा का विधान विस्तारपूर्वक पृ० १२७ से १२९ तक लिखा है। साथ ही अध्याय १ पृष्ठ ९ पर अर्हत प्रतिमा में पॉचों कल्याणक करने का विधान भी स्पष्ट रूप से लिखा है।

गुणो निःस्वेतादिः स्याद्वाहो ज्ञानादिरांतरः ।
सोऽर्हतां पंचकल्याण द्वारेणादौ प्रपंच्यते ॥८७॥
गर्भावतार जन्माभिषेक निष्क्रमणोत्सवान् ।
वृत्तान् ज्ञान शिवेद्धर्षौ बिम्बेर्हतोर्पयेत् ॥८८॥

तीर्थकर प्रभु की पचकल्याणकों के द्वारा प्रतिष्ठा विधि का वर्णन करते है। गर्भावतार, जन्माभिषेक, निष्क्रमणविधि, ज्ञानकल्याणक और निर्वाण कल्याणक यह पॉच कल्याणक अर्हन्त की प्रतिमा में स्थापित करें। इन दोनों आचार्यों ने अपने प्रतिष्ठा ग्रंथों में अरहंत परमेष्ठी की प्रतिष्ठा की विधि विस्तारपूर्वक लिखी है। और सिद्ध परमेष्ठी की विधि अति संक्षेप में कल्पना मात्र से लिखी है।

(३) प्रतिष्ठातिलक (श्री नेमिचन्द्र देव कृत)

इस प्रतिष्ठाशास्त्र में निर्वाणकल्याणक की विधि विस्तारपूर्वक लिखी गई है। इसी का आधार लेकर प्रतिष्ठा चंद्रिका (श्री प शिवजी राम जी पाठक रांची) द्वारा संकलित है। और दूसरा प्रतिष्ठासार संग्रह (स्व० ब्र० शीतलप्रसाद जी) द्वारा संकलित है। इन दोनों प्रतिष्ठा ग्रंथों में निर्वाणकल्याणक का वर्णन आया है। तदनुसार ही क्रियायें एवं पूजा विधि की जा रही है। विद्वज्जन विचार करें।

---

(१) प. आ. ध, प्रा. सा. अ. ४ श्लोक २२४

निर्वाणकल्याणक (सिद्ध प्रतिष्ठा)

निर्वाणकल्याणक के दिन प्रातः प्रतिष्ठा पात्रों द्वारा अभिषेक, नित्यमह पूजा, यागमण्डलार्चन, हवन, आदि पश्चात् निर्वाण क्रिया करें। (समयाभाव मे हवन निर्वाण होने के बाद भी किया जा सकता है।) कैलाश पर्वत की शुद्धि कर चोकोर शिला की शुद्धि करके शिला पर सर्वतोभद्र स्वस्तिक लिखकर उस पर प्रतिमा विराजमान करें। प्रतिमा के पास निर्वाणसंपत्तिकर यंत्र की स्थापना करें। और निर्वाणसपत्तिकर का जाप करे तथा पंचकल्याणक स्तोत्र एवं भक्तियां पढें।

निर्वाणसंपत्तिकर मंत्र

ओं ह्रीं अर्ह श्री ओं झं पं झ्वी क्ष्वीं हः पः हः अ सि आ उ सा मम शांतिं पुष्टिं कुरु कुरु ह्रीं क्रौं स्वाहा । (१०८ बार जाप करें) कैलास पर्वत के समीप कर्मदहनमण्डल बनाया जाय । योग निरोध करके भगवान ध्यानस्थ मुद्रा में विराजमान हैं। अघातिया कर्मो की स्थिति अत्यल्प है। भगवान के मोक्ष गमन का काल निकट है, और तृतीय शुक्लध्यानारूढ हैं। तभी भरतचक्री सपरिवार भगवान आदिनाथ की अर्चना हेतु आते हैं और सब अर्घ द्वारा पूजा करते हैं।

शुभेह्नि पुनरन्यत्र स्थापयेत् प्रतिमां विभो. ।
इमं योगनिरोधस्य प्रकमं स्थापयेच्छुभम् ॥(१)

ओं ह्रीं शुक्लध्यानिनिरताय जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

त्रिभंगीछन्द

जय जग वृषभेशा आदि जिनेशा हो परमेशा नमहुं तुम्हें ।
प्रभु देश विहारे, धर्मप्रचारे, भवि उद्धारे नमहुं तुम्हे ॥

कैलाश पधारे, आत्मविचारे, योगमगन जिनराज भये ।
सूक्ष्मक्रियाशुक्ल धार स्वयं निज मोक्ष तभी निकटतर भये ॥(२)

ओं ह्रीं वृषभजिनेन्द्राय तृतीय शुक्लध्यानारूढाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जय जय तीर्थंकर धर्मप्रभाकर शिवसुखरंजन नाथ भये ।
[illegible] शुक्लमहान [illegible] आत्म विशाल भये ॥

औदारिक तैजस कार्माण तन रहित नाथ अब होवेंगे ।
अब पूर्ण [illegible] मंगल गावे शिवपथगामी होवेंगे ॥

ओं ह्रीं [illegible] जिनेन्द्राय चतुर्थध्यानारूढाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

[illegible] (२) प्र. दी. प्र., प्र. सा. सं. पृष्ठ ११५

निर्वाणकल्याणक आरोपण

अस्मिन् बिम्बे निर्वाणकल्याणक आरोपयामि ।

(विधिनायक प्रतिमा एवं सभी प्रतिमाओं पर पुष्प क्षेपण करें)

पंचलघूच्चारणमत्रमयोगपंथानमाशु विनियुंज्यात्।
तत्रैक समय एव सिद्धत्वं प्राप्त तत्र भासन्ति ॥

(प्रतिमा को सावधानीपूर्वक पर्वत से उठा लेना चाहिए ।)

ओं ह्रीं अर्ह अनाहतविद्यायै णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं णमो उवज्झायाण णमो लोए सव्वसाहूणं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यः सम्यक्तपसे नमः स्वाहा ।

सिद्धचक्र मंत्र (१०८ बार जपना)

विशेष-प्रतिष्ठातिलक, प्रतिष्ठासारसंग्रह एवं प्रतिष्ठाचंद्रिका में निर्वाणकल्याणक की क्रिया निम्नानुसार दी है, जो विचारणीय है । भगवान आदिनाथ मोक्ष चले गये । इन्द्रादिक देवगण निर्वाण महोत्सव मनाने कैलाश पर्वत पर आ जाते हैं । कैलास पर्वत के सामने चौकोर कुण्ड तैयार करलें और उसमें सर्वतोभद्र स्वस्तिक बनाकर अगर, तगर, मलयागिर चंदन, कपूर आदि रख दें ।

भगवान के नख और केश का अंतिम संस्कार करने के लिये अग्निकुमार देव अपने मुकुट झुकाकर नमस्कार करते हैं जिससे अग्नि प्रज्ज्वलित होती है और नख और केश का अंतिम संस्कार हो जाता है ।

अग्नि प्रज्ज्वलन मंत्र [1]

उसहाय जिणो पणमामिसया अमलो विरजो वरकप्प तरु
सअ कामदुहा मम रक्ख सया पुरुविज्जुणुही पुरु विज्जुणुही
ओं ओं ओं ओं रं रं रं रं स्वाहा (अग्नि प्रज्वलित करें)

तीर्थेश्वरस्यान्त्य महोत्सवेयं भक्त्यानताग्नीन्द्र किरीटिजातं ।
आनर्चुरिन्द्राः सकलास्तमेनां यजे जलाद्यैरिह गार्हपत्यम् ॥

ओं ह्रीं गार्हपत्य प्रणीताग्नये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा । [2]

शांतिधारा[3]

ओं ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्ह अरहंत इदं शांतिधारां गृह्णीध्वं गृह्णीध्वं अर्ह णमो भद्रं भवतु जगतां शांतिधारां निपातयामि शांतिकृद्भयः स्वाहा । (शांतिधारा दें)

ओं ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्ह इदं पुष्पाञ्जलिं प्रार्चनं गृह्णीध्वं गृह्णीध्वं णमोऽर्हद्भ्योऽयात्भिरभीप्सित फलदेभ्यः स्वाहा । (इति पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

---

(१) पं. ने. दे., प्र. ति. पृष्ठ १४४, ब्र शी. प्र. प्र. सा. सं. पृष्ठ १७६ (२) वही, श्लोक ३४
(३) पं. शि. रा., प्र. चं. पृष्ठ २५१

स्तुतिनिर्वाणकाल[1] (पद्धडी छन्द)

जय ऋषभदेव गुणनिधि अपार, पंहुचे शिव को निजशक्तिद्वार ।
वन्दो श्री सिद्ध महन्त आज, सुधरें जासे मम सर्व काज ॥१॥

निर्वाणथान यह पूज्य धाम, यह अग्नि पूज्य है रमणराम ।
मनवचतन वन्दूं बार बार, निज कर्मवंश डालूं उजार ॥२॥

कैलाश महां तीरथ पुनीत, जहां मुक्ति लही सब कर्मजीत ।
नहि तैजस तन नहीं कारमाण, नहि औदारिक कोई प्रमाण ॥३॥

है पुरुषाकार सुध्यान रूप, जिन तन में था तिस है स्वरूप ।
तनुवातवलय में क्षेत्र जान, पीवत स्वातम रस अप्रमाण ॥४॥

हो शुद्ध चिदातम सुख निधान, हो बल अनंतधारी सुज्ञान ।
वन्दूं मैं तुमको बार बार, भवसागर पार लहूं अवार ॥५॥

सिद्ध मण्डल तैयार किया जाय मध्य मे स्वस्तिक हो उसके ऊपर अर्द्धचन्द्राकार बनावें तीन बिदु नीचे और एक बिन्दु ऊपर रखें आठ पांखुड़ी बनाकर सिद्ध भगवान के गुणों की स्थापना करें ।

गुणारोपण [2]

सम्यक्त्वं दर्शनं ज्ञानं वीर्यागुरुलघुसुखं ।
अव्याबाधावगाहौ च सिद्धबिम्बेषु संस्मरेत् ॥

ओं सिद्धाष्टगुणानिन्यसामि स्वाहा ।

गुणारोपण करने के लिए प्रत्येक मंत्र पढ के प्रतिमाओं पर पुष्प क्षेपण करें

जानाति बोधोयदनुग्रहेण द्रव्याणि सर्वाणि सपर्ययाणि
दुराग्रहत्यक्तनिजात्मरूपं सिद्धेत्र सम्यक्त्व गुणं न्यसामि ॥१॥

ओं ह्रीं परमावगाढ़ सम्यक्त्वगुणविभूषिताय नमः ।

जानाति नित्यं युगपत्स्वतोन्यत्सर्वार्थसामान्य विशेष सर्व
निर्बाधकं स्पष्टतरं च यस्तं सिद्धेत्र विज्ञानगुणं न्यसामि ॥२॥

ओं ह्रीं अनंतज्ञान विभूषिताय नमः ।

स्वात्मस्थसामान्यविशेषसर्व साक्षात्करोत्येव समं सदा यः
स्वनिश्चिता संभववांधकं तं सिद्धेत्रदृष्ट्याख्य गुणं न्यसामि ॥३॥

ओं ह्रीं अनंतदर्शन विभूषिताय नमः ।

---

(१) प्र. श्री. प्र. प्र. सा. स. पृष्ठ १५६
(२) श्री. जे. दे. प्र. ति. पृ. ६१५ से ६१७

अनंत विज्ञान मनंतदृष्टिं द्रव्येषु सर्वेषु च पर्ययेषु
व्यापारयंतं हतसंकरादिं सिद्धेत्र वीर्याख्यगुणं न्यसामि ।।४।।
ओं ह्रीं अनंतवीर्यगुणविभूषिताय नमः ।

अबाधकं मानमबाध्यमेव निष्पीतसर्वार्थमसंगसंगम् ।
सर्वज्ञवेद्यं तदवाच्यमेव सिद्धेत्र सूक्ष्माख्यगुणं न्यसामि ।।५।।

ओं सूक्ष्मगुणविभूषिताय नमः ।

एकत्र सिद्धात्मनि चान्यसिद्धा वसंत्यसंबाधमनंतसंख्याः ।
यस्य प्रभावात् सुनयास्थितं तं सिद्धेवगाहाख्यगुणं न्यसामि ।।६।।
ओं ह्रीं अवगाहनगुणविभूषिताय नमः ।

अधोनुपातोऽस्ति यथा शिलादेर्नतूलवद्वायुकृते रणं च
सिद्धात्मना तेन सुयुक्तिसिद्धं गुणं न्यसामोऽगुरुलघ्वभिख्यम् ।।७।।

ओं ह्रीं अगुरुलघुगुणविभूषिताय नमः ।

भवाग्निशान्त्यै विहितश्रमो व्या बाधात्मना यं परिणाममेति ।
स्वात्मोत्थसौख्यैकनिबंधनं तं सिद्धेत्र निर्बाधगुणं न्यसामि ।।८।।
ओं ह्रीं अव्याबाधगुणविभूषिताय नमः ।

सिद्ध पूजा [1]

स्थापना

बाह्याभ्यन्तरहेतुजातसुदृशः पूर्वश्रुतैरादिमा-
च्छुक्लध्यानयुगाद्विजित्य दुरित लब्ध्वा सयोगिश्रियम्

प्राप्तायोगिपदं परेण सकलं निर्जित्य कर्मोत्करं
शुक्लध्यानयुगेन सिद्धसुगुणान्सिद्धान्समाराधये ।

ओं ह्रीं सिद्ध परमेष्ठिन् अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ।

गंगादि तित्थप्पह वप्पएहि सग्गंधदा णिम्मल पप्पएहिं ।
अच्चेमि णिच्चं परमट्ठ सिद्धे सव्वट्ठ संपादय सव्वसिद्धे ।।
ओं ह्रीं श्रीं सिद्धाधिपतये नमः जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

गंधेहिं धाणाण सुहप्पएहिं समच्चयाणंपि सुहप्पएहि ।
अच्चेमि णिच्चं परमट्ठ सिद्धे सव्वट्ठ संपादय सव्वसिद्धे ।।
ओं ह्रीं श्रीं सिद्धाधिपतये नमः सुगंधं निर्वपामीति स्वाहा ।

---

(१) श्री जै. दे., प्र. ति. पृष्ठ - ६१८ से ६१९

पेरंतछोणीसयकारणेहि वरक्खएहि सियकारणेहिं ।
अच्चेमि णिच्चं परमट्ठ सिद्धे सव्वट्ठ संपादय सव्वसिद्धे ॥
ओं ह्रीं श्रीं सिद्धाधिपतये नमः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

पुप्फेहि दिव्वेहि सुवण्णएहि कल्ले कउसेहिं सुवण्णएहि ।
अच्चेमि णिच्च परमट्ठ सिद्धे सव्वट्ठ संपादय सव्वसिद्धे ॥
ओं ह्री श्रीं सिद्धाधिपतये नमः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

वब्मेहि णाणासुरसप्पएहिं भव्वाण णाणाइरसप्पएहि ।
अच्चेमि णिच्चं परमट्ठ सिद्धे सव्वट्ठ संपादय सव्वसिद्धे ॥
ओं ह्री श्रीं सिद्धाधिपतये नमः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ददिव्वमाणप्पह दीवएहि संउय आणं सिरदीव एहि ।
अच्चेमि णिच्चं परमट्ठ सिद्धे सव्वट्ठ संपादय सव्वसिद्धे ॥
ओं ह्रीं श्रीं सिद्धाधिपतये नमः दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

कालाअरु भूय सुहूवएहिं जीवाण पावाण सुहूव एहि ।
अच्चेमि णिच्चं परमट्ठसिद्धे सव्वट्ठ संपादय सव्वसिद्धे ॥
ओं ह्रीं श्रीं सिद्धाधिपतये नमः धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अणग्घभूएहि फलव्वएहि भव्वस्स संदिण्ण फलव्वएहिं ।
अच्वेमि णिच्चं परमट्ठसिद्धे सव्वट्ठ संपादय सव्वसिद्धे ॥
ओं ह्रीं श्री सिद्धाधिपतये नमः फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

णयेण णाणेण य दंसणेणतवेण उट्ठेण य संजमेण ।
सिद्धे तिकालेसु विसुद्ध बुद्धे समग्घयामो सयलेविसिद्धे ॥
ओं ह्रीं श्री सिद्धाधिपतये नमः अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रत्येक अर्घ (१)

जानातिबोधोयदनुग्रहेण द्रव्याणि सर्वाणि सपर्ययाणि ।
दुराग्रहत्यक्तनिजात्मरूपं त सिद्धसम्यक्त्वगुणं यजामि ॥
ओं ह्री सिद्ध सम्यक्त्वगुणाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जानाति नित्यं युगपत्स्वतोन्यसर्वार्थसामान्य विशेष सर्व
निर्बाधकं स्पष्टतरं च यस्तं सिद्धात्मविज्ञानगुणं यजामि ।
ओं ह्री सिद्धात्मविज्ञान गुणाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

---

(१) श्री जै. दे., प्र. ति. पृष्ठ ६०९ से ६१२

स्वात्मस्थसामान्यविशेषसर्वं साक्षात्करोत्येव समं सदा यः ।
सुनिश्चिता संभवबाधकं तं सिद्धात्मनो दृष्टिगुणं यजामि ॥
ओं ह्रीं सिद्धदर्शनगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अनंतविज्ञानमनंतदृष्टिं द्रव्येषु सर्वेषु च पर्ययेषु ।
व्यापारयन्तं हतसंकरादिसिद्धात्मवीर्याख्यगुणं यजामि ॥
ओं ह्रीं सिद्धवीर्यगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

एकत्र सिद्धात्मनि चान्य सिद्धा वसत्यसंबाधमनन्तसंख्याः ।
यस्य प्रभावात्सुनयस्थितं तं सिद्धावगाहाख्यगुणं यजामि ॥
ओं ह्रीं सिद्धावगाहगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अधो न पातोऽस्ति यथा शिलादेर्नतूलवद्वायुकृतेरणं च ।
सिद्धात्मनां तेन सुयुक्तिसिद्धं गुणं यजामोऽगुरुलघ्वभिख्यम् ॥
ओं ह्रीं सिद्धागुरुलघुगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

भवाग्निशान्त्यै विहितश्रमोऽव्याबाधात्मनायं परिणाममेति ।
स्वात्मोत्थसौख्यैकनिबंधनं तं सिद्धात्मनिर्बाधगुणं यजामि ॥
ओं ह्रीं सिद्धाव्याबाधगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अबाधकं मानमबाध्यमेव निष्पीतसर्वार्थमसंगसंगम् ।
सर्वज्ञवेद्यं तदवाच्यमेव सिद्धात्मसूक्ष्माख्यगुणं यजामि ॥
ओं ह्रीं सिद्धसूक्ष्मगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

इत्थं समभ्यर्चित सिद्धनाथ सम्यक्त्वमुख्याश्च गुणास्तदीयाः ।
सर्वार्चिताः सर्वजनार्चनीयाः स्वात्मोपलब्ध्यै मम संतुतेऽमी ॥
ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

णमो सिद्धाणं सिद्धा मंगलं सिद्धालोगुत्तमा सिद्धे सरणं पव्वज्जामि ह्रौं शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा । (१०८ बार जाप करें)

गुणस्तवन[१]

नमस्ते पुरुषार्थानां परां काष्ठामधिष्ठितः ।
सिद्धभट्टारकस्तोमनिष्ठितार्थनिरंजनः ॥१॥

स्वः प्रदाय नमस्तुभ्यं अचलाय नमोस्तु ते ।
अक्षयाय नमस्तुभ्यं अव्याबाधायते नमः ॥२॥

---

(१) श्री ने. दे. प्र. ति. पृष्ठ ६३८

नमस्तेऽनंतविज्ञानदृष्टि वीर्यसुखास्पदं
नमो नीरजसे तुभ्यं निर्मलायास्तु ते नमः ।।३।।

अच्छेद्याय नमस्तुभ्यं अभेद्याय नमो नमः
अक्षताय नमस्तुभ्यं अप्रमेय नमोस्तु ते ।।४।।

नमोस्त्वगर्भवासाय नमोऽगौरव लाघवे ।
अक्षोभ्याय नमस्तुभ्यमविलीनाय ते नमः ।।५।।

नमः परमकाष्ठात्मयोगरूपत्वमीयुषे
लोकाग्रवासिने तुभ्यं नमोऽनंतगुणाश्रय ।।६।।

निःशेषपुरुषार्थानां निष्ठां सिद्धिमधिष्ठित
सिद्धभट्टारकव्रातभूयो भूयो नमोस्तु ते ।।७।।

विविधदुरितशुद्धान्सर्वतत्त्वार्थबुद्धान्
परमसुखसमृद्धान्युक्तिशास्त्राविरुद्धान् ।

बहुविधगुणवृद्धान्सर्वलोकप्रसिद्धान्
प्रमितसुनयसिद्धान्संस्तुवे सर्वसिद्धान् ।।८।।

ओं ह्री र्ह श्रीं सिद्धाधिपतये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा

निर्वाणकल्याणक पूजा (संस्कृत)

निखलनिवृत्तिसंस्था भव्यशस्याणि सिंच्य परमसुकृतवृष्ट्या नूरमामुच्यवाह्या ।
तरघनघनिहत्य मुक्तिमाप्ता क्षणेन विमलगुणसुकोषाः स्नातहं स्थापयामि ।
ओं ह्री निर्वाणकल्याणकप्राप्त वृषभादिचतुर्विंशतिजिनेन्द्राः अत्र अवतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम सन्निहितोभव भव वषट् ।

अष्टक

विमलतीर्थज जीवनधारया, विधययोजरजोवरशालया ।
जिनवरान्प्रयजे शिवसद्मगा, भुवन नाथनुतान् सुनिरंजनान् ।।
ओं ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो जलम् ।
सुरतरुद्भव चन्दन चन्द्रकै विमलपीतन पीत सुवर्णकै ।
जिनवरान्प्रयजे शिवसद्मगा, भुवन नाथनुतान् सुनिरंजनान् ।।
ओं ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यः चन्दनम् ।

तुषमलोकित तन्दुल पुंजकैः सकल वर्जित मौक्तिक कीर्तिकैः
जिनवरान्प्रयजे शिवसद्मगा, भुवन नाथनुतान् सुनिरंजनान् ॥

ओं ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो अक्षतम् ।

धवल पुष्प सुकेतकी चम्पकैः मधुप सेवित पुष्प कदम्बकैः
जिनवरान्प्रयजे शिवसद्मगा, भुवन नाथनुतान् सुनिरंजनान् ॥

ओं ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यः पुष्पम् ।

घृत सिताभर सकृतभक्षकैः विमल व्यंजन सुस्कृत शुद्धकैः
जिनवरान्प्रयजे शिवसद्मगा, भुवन नाथनुतान् सुनिरंजनान् ॥

ओं ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यम् ।

स्वजन चक्षु मनोम्बुज कंजकैः जिनसुवाक्यभरैरिव दीपकैः
जिनवरान्प्रयजे शिवसद्मगा, भुवन नाथनुतान् सुनिरंजनान् ॥

ओं ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो दीपम् ।

दहन कुम्भ गतागरुधूपकैः भूविजनैर्हतकर्म सुधूमकैः
जिनवरान्प्रयजे शिवसद्मगा, भुवन नाथनुतान् सुनिरंजनान् ॥

ओं ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो धूपम् ।

वरफलैर्वर वर्ण मनोहरैः विहित नेत्र मनोज्ञ प्रमोदकैः
जिनवरान्प्रयजे शिवसद्मगा, भुवन नाथनुतान् सुनिरंजनान् ॥

ओं ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्तचतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यः फलम् ।

जनन पार करैं र्विमलार्घकैः कनक पात्र धृतेसुखदायकैः
जिनवरान्प्रयजे शिव सझगान् भुवननाथ नुतान् सुनिरंजनान् ।

ओं ह्रीं निर्वाण कल्याणकप्राप्तवृषभादि चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ ।

प्रत्येक अर्घ

माघमासे कृष्णपक्षे पूते चतुर्दशी दिने ।
वृषभं मुक्तिसंप्राप्तं पंचमीगतिदायकम् ॥

ओं ह्रीं माघकृष्ण चतुर्दश्यां निर्वाणकल्याणकप्राप्तवृषभदेवायार्घ ।

चैत्रमासे शुभ्रपक्षे विशाले पंचमी दिने ।
अजितं पूजयेत् सिद्धं विवर्ण विगताभयं ॥

ओं ह्रीं चैत्र शुक्ल पंचम्या निर्वाणकल्याणकप्राप्ताजितनाथ जिनायार्घ ।

चैत्रमासे शुक्लपक्षे विशाखाषष्टिका दिने ।

संभवं प्रयजे सिद्धं गुणाष्टकविभूषितम् ।

ओं ह्री चैत्रशुक्लषष्ठ्यां निर्वाणकल्याणकप्राप्तसंभवनाथदेवायार्घ ।

वैशाखे चार्जुने पक्षे सुषष्ठीशुद्धवासरे ।

अभिनन्दनज्ञानेशं मुक्तिसाम्राज्यनायकम् ।।

ओं ह्रीं वैशाख शुक्ल षष्ठयां निर्वाणकल्याणकप्राप्ताभिनन्दन देवायार्घ ।

चैत्रमासे शुचौ पक्षे पवित्रैकादशीदिने ।

सुमति मुक्तिदातारं यजेऽहं मुक्तिवल्लभं ।।

ओं ह्री चैत्रशुक्लैकादश्यां निर्वाण कल्याणकप्राप्तसुमति देवायार्घ ।

फाल्गुने कृष्णपक्षे च चतुर्थीनिर्मले दिने ।

सुपद्मप्रभमर्चामि मुक्तिपद्मममधुव्रतम् ।।

ओं ह्री फागुनकृष्ण चतुर्थ्यां निर्वाण कल्याणकप्राप्तपद्मप्रभजिनायार्घ ।

फाल्गुने श्यामपक्षे च प्रकृष्टे सप्तमीदिने ।

श्री सुपार्श्व यजे नित्यं रूपातीतं गुणात्मकम् ।।

ओं ह्री फाल्गुन कृष्ण सप्तम्यां निर्वाणकल्याणकप्राप्त सुपार्श्वनाथायार्घ ।

फाल्गुने कृष्णसप्तम्यां यजेऽहं मुक्तिनायकम् ।

अष्टमं तीर्थनाथं च पंचमीगतिदायकम् ।।

ओं ह्री फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां निर्वाणकल्याणकप्राप्तचन्द्रप्रभजिनायार्घ ।

शुक्ले भाद्रपदे मासे चाष्टमीशोभने दिने ।

पुष्पदन्त यजे धीरं सर्वकर्मनिवारकम् ।।

ओं ह्री भाद्रपद शुक्लाष्टम्यां निर्वाण कल्याणकप्राप्तपुष्पदन्तदेवायार्घ ।

आश्विने चार्जुने पक्षे चाष्टम्यां शुद्धवासरे ।

वसुद्रव्यै सुमुक्त्यर्थ वसुभूमि गतं यजे ।।

ओं ह्री आश्विन शुक्लाष्टम्यां निर्वाणकल्याणकप्राप्तशीतलनाथायार्घ ।

श्रावणे शुक्लपक्षे च पूर्णिमायां यजे जिनं ।

वसुभूमि गतं कर्मत्यक्त चाष्टगुणाधिकम् ।।

ओं ह्री श्रावण शुक्लपूर्णिमायां निर्वाणकल्याणकप्राप्तश्रेयोजिनायार्घ ।

शुद्धे भाद्रपदे शुभ्रे चतुर्दश्या सुवासरे ।

संयजे कर्मनाशाय पंचमीगतिनायकम् ।।

ओं ह्री भाद्रपदशुक्लचतुर्दश्यां निर्वाणकल्याणकप्राप्तवासुपूज्यदेवायार्घ ।

अषाढे श्यामपक्षे च ह्यष्टम्यां वसुभूमिगं ।
चर्चेऽह विमलं देवं वसुद्रव्यैर्गुणाप्तये ॥
ओं ह्रीं आषाढकृष्णाष्टम्यां निर्वाणकल्याणकप्राप्तविमलनाथजिनायार्घं ।

चैत्रकृष्णचतुर्थ्यां च घात्यघातिविवर्जितं ।
वसुभूमिगत देव यजेऽहं वसुद्रव्यकै ॥
ओं ह्रीं चैत्रकृष्णचतुर्थ्यां निर्वाणकल्याणकप्राप्तानंतनाथदेवायार्घं ।

ज्येष्ठ मासे शुक्लपक्षे चतुर्थ्यां धर्मनाथकं ।
वसुकर्मविनाशाय वसुभूमिगतं सदा ॥
ओं ह्रीं ज्येष्ठशुक्लचतुर्थ्यां निर्वाणकल्याणकाप्राप्तधर्मनाथजिनायार्घं ।

ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां वसुद्रव्यैर्जिनं यजे ।
वसुकर्मपरित्यक्तं वसुभूमिगत यजे ॥
ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां निर्वाणकल्याणकप्राप्तशांतिनाथायार्घं ।

वैशाखेशुभ्रे प्रतिपद्दिवसे प्राप्तनिर्वृति ।
यजामि वसुर्भिद्रव्यै सम्मेदे वै गुणात्मकम् ॥
ओं ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदिं निर्वाणकल्याणकप्राप्तकुन्थुनाथायार्घं ।

चैत्रकृष्णे ह्यमावश्यामरनाथ चिदात्मकं ।
वसुभूमिगतं द्रव्यैर्यजे वसुगुणाकरम् ॥
ओं ह्रीं चैत्रकृष्ण अमावस्यां निर्वाणकल्याणकप्राप्तारनाथजिनायार्घं ।

फाल्गुने शुक्लपक्षे च पंचम्यां शुद्धवासरे ।
मल्लि मुक्तिगत चर्चे कर्ममल्लविनाशकम् ॥
ओं ह्रीं फाल्गुनशुक्लपंचम्यां निर्वाणकल्याणकप्राप्तमल्लिनाथायार्घं ।

फाल्गुने कृष्णपक्षे च द्वादश्यां वसुभूमिगं ।
वसुकर्महरं देवं पूजये वसुद्रव्यकैः ॥
ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णद्वादश्यां निर्वाणकल्याणकप्राप्तमुनिसुव्रतनाथायार्घं ।

वैशाखे कृष्णपक्षे च चतुर्दश्यां नमिं जिनं ।
वसुभूमिगतं देवं पूजयेऽह गुणात्मकम् ॥
ओं ह्रीं वैशाखकृष्णचतुर्दश्यां निर्वाणकल्याणकप्राप्तनमिनाथजिनायार्घं ।

आषाढे श्वेतपक्षे च सप्तम्यामूर्जयन्तके ।
वसुकर्मक्षयं कृत्वा वसुभूमिगत यजे ॥
ओं ह्रीं आषाढशुक्लसप्तम्यां निर्वाणकल्याणकप्राप्तनेमिनाथायार्घं ।

श्रावणे शुक्लपक्षे च सप्तम्यां वसुभूगतं ।
यजे कर्माष्टहंतारं पार्श्वं वसुगुणात्मकम् ॥

ओं ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तम्यां निर्वाणकल्याणकप्राप्तपार्श्वनाथ देवायार्घ ।

कार्तिके कृष्णपक्षे च ह्यमावश्यां शिवास्पदं ।
पावापुर्या सुनिर्वाणं यजे निर्वृत्यसिद्धये ॥

ओं ह्री कार्तिककृष्णअमावस्यां निर्वाणकल्याणकप्राप्तमहावीर जिनायार्घ ।

इत्यंनन्तगुणा नित्यं कर्मकायादिदूरगाः ।
पुरस्ते अर्चिता ईशाः सन्तु सौख्याय जन्मिनाम् ॥

ओं ह्रीं निर्वाणकल्याणकप्राप्त वृषभादिचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः पूर्णार्घ स्वाहा ।

जयमाल

नमस्ते पुरुषार्थानां परां काष्ठामधिष्ठितः ।
सिद्धभट्टारकस्तोमनिष्ठितार्थ निरञ्जनं ॥१॥

स्वः प्रदाय नमस्तुभ्यं अचलाय नमोऽस्तु ते ।
अक्षयाय नमस्तुभ्यं अव्याबाधाय ते नमः ॥२॥

नमस्तेऽनंतविज्ञानदृष्टिवीर्यसुखास्पदं ।
नमो नीरजसे तुभ्यं निर्मलायास्तु ते नमः ॥३॥

अच्छेद्याय नमस्तुभ्यं अभेद्याय नमो नमः ।
अक्षताय नमस्तुभ्यं अप्रमेय नमोऽस्तु ते ॥४॥

नमोस्त्वगर्भवासाय नमोऽगौरवलाघव ।
अक्षोभ्याय नमस्तुभ्यमविलीनाय ते नमः ॥५॥

नमः परमकाष्ठात्मयोगरूपत्वमीयुषे ।
लोकाग्रवासिने तुभ्यं नमोऽनंतगुणाश्रये ॥६॥

निःशेषपुरुषार्थानां निष्ठां सिद्धमधिष्ठितः ।
सिद्धभट्टारकव्रातभूयो भूयो नमोऽस्तु ते ॥७॥

घत्ता - विविधदुरितशुद्धान्सर्वतत्त्वार्थबुद्धान्
परमसुखसमृद्धान्युक्तिशास्त्राविरुद्धान्
बहुविधगुणवृद्धान्सर्वलोकप्रसिद्धान् ।
प्रमितसुनयसिद्धान् संस्तुते सर्वसिद्धान् ॥८॥

ओं ह्रीं सिद्धपदप्राप्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

मोक्षकल्याणक पूजन

(त्रिभंगी)

जय जय तीर्थंकर मुक्तिवधुवर भवसागर उद्धार करं,
जय जय परमातम शुद्ध चिदातम कर्मकलंक निवारकरं।
जय जय गुणसागर सुखरत्नाकर आत्म मगनता सार लर,
जय जय निर्वाण पाय सुज्ञानं पूजत पग संसार हर ।।

ओं ह्रीं मोक्षकल्याणकप्राप्तऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकराः अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

(वसंततिलका)

पानी महान भरि शीतल शुद्ध लाऊ। जन्मादि रोग हर कारण भाव ध्याऊं।
पूजूं सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं। पाऊं महान शिवमंगल नाश कालं ।।
ओं ह्रीं मोक्षकल्याणकप्राप्तश्रीऋषभादिमहावीर पर्यन्त चतुर्विंशतिजिनेन्द्रभ्यो जलं।

केशर सुमिश्रित सुगन्धित चन्दनादी। आताप सर्व भव नाशन मोह आदी।
पूजूं सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं। पाऊं महान शिवमंगल नाश काल ।।
ओं ह्रीं मोक्षकल्याणकप्राप्तश्रीऋषभादिमहावीर पर्यंत चतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो चंदनं।

चन्दा समान बहु अक्षत धार थाली। अक्षय स्वभाव पाऊं गुण रत्न शाली।
पूजूं सदा चतुर्विंशति सिद्ध काल। पाऊं महान शिवमंगल नाश काल ।।
ओं ह्रीं मोक्षकल्याणकप्राप्तश्रीऋषभादिमहावीर पर्यंत चतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो अक्षतं।

चम्पा गुलाब मरुवा बहु पुष्प लाऊं। दुख टार काम हरके निज भाव पाऊं।
पूजूं सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं। पाऊं महान शिवमंगल नाश कालं ।।
ओंह्रींमोक्षकल्यणकप्राप्तश्रीऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो पुष्पं।

लाजे महान पकवान बनाय धारे। बाधा मिटाय क्षुधा रोग स्वयं सम्हारे।
पूजूं सदा चतुर्विंशति सिद्ध काल। पाऊं महान शिवमंगल नाश कालं ।।
ओं ह्रीं मोक्षकल्याणकप्राप्तश्रीऋषभादिमहावीर पर्यंत चतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं।

दीपावली जगमगात अंधेर घाती। मोहादि तम विघट जाय भव प्रतापी।
पूजूं सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं। पाऊं महान शिवमंगल नाश काल ।।
ओं ह्रीं मोक्षकल्याणकप्राप्तश्रीऋषभादिमहावीर पर्यंत चतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो दीपं।

चन्दन कपूर अगरादि सुगन्ध धूपं । वालूं जु अष्ट कर्म न हो सिद्ध भूपं ।
पूजूं सदा चतुर्विशति सिद्ध कालं । पाऊं महान शिवमंगल नाश कालं ।।
ओं ह्री मोक्षकल्याणकप्राप्तश्रीऋषभादिमहावीर पर्यंत चतुर्विशितजिनेन्द्रेभ्यो धूपं ।

मीठे रसाल बादाम पवित्र लाए । जासे महान फल मोक्ष सु आप पाए ।।
पूजूं सदा चतुर्विशति सिद्ध कालं । पाऊं महान शिवमंगल नाश कालं ।।

ओं ह्रीं मोक्षकल्याणकप्राप्तश्रीऋषभादिमहावीर पर्यंत चतुर्विशंतिजिनेन्द्रेभ्यो फलं ।

आठो सु द्रव्य ले हाथ अरघ बनाऊं । संसार वास हरके निज सुक्ख पाऊं ।
पूजूं सदा चतुर्विशति सिद्ध कालं । पाऊं महान शिवमंगल नाश कालं ।।
ओं ह्रीं मोक्षकल्याणकप्राप्तश्रीऋषभादिमहावीरपर्यंत चतुर्विशतिजिनेन्द्रेभ्यो अर्घ ।

२४ तीर्थकरों की मोक्षकल्याणक तिथि के २४ अर्घ्य

(गीता) चौदश वदी शुभ माघ की, कैलाशगिरि निज ध्याय के ।
वृषभेष सिद्ध हुए शचीपति, पूजते हित पाय के ।।
हम धार अर्घ महान पूजा, करें गुण मन लाय के ।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के ।।
ओं ह्रीं माघकृष्णाचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्त श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ ।।१।।

शुभ चैत सुदि पाचम दिना, सम्मेद गिरि निज ध्याय के ।
अजितेश सिद्ध हुए भविकगण, पूजते हित पाय के ।।हम।।
ओं ह्रीं चैत्रशुक्लापंचम्यां मोक्षकल्याणप्राप्त श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय अर्घ ।।२।।

शुभ चैत्र सुदि षष्ठी दिना, सम्मेदगिरि निज ध्याय के ।
सम्भव निजातम केलि करते, सिद्ध पदवी पाय के ।।हम।।
ओ ह्रीं चैत्रशुक्लाषष्ठयां मोक्षकल्याणकप्राप्त श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय अर्घ ।।३।।

वैशाख सुदि षष्ठी दिना, सम्मेदगिरि निज ध्याय के ।
अभिनन्दन शिव धाम पहुंचे, शुद्ध निज गुण पाय के ।।हम।।
ओं ह्री वैशाखशुक्ला षष्ठ्यां मोक्षकल्याणकप्राप्त श्रीअभिनन्दनाथजिनेन्द्राय अर्घ ।।४।।

शुभ चैत सुदि एकादशी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के ।
श्री सुमतिजिन शिव धाम पायो, आठ कर्म नशाय के ।।हम।।
ओं ह्रीं चैत्रशुक्ला एकादश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्त श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ ।।५।।

शुभ कृष्ण फाल्गुन चतुर्थी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री पद्मप्रभ निर्वाण पहुँचे, स्वात्म अनुभव पाय के ।।
हम धार अर्घ महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के ।।

ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णाचतुर्थी मोक्षकल्याणकप्राप्त श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घं ।।६।।

शुभ कृष्ण फाल्गुन सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री जिन सुपार्श्व स्वधाम लीयो, स्वकृत आनन्द पायके ।।हम।।

ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णासप्तम्यां मोक्षकल्याणकप्राप्त श्रीसुपार्श्वजिनेन्द्राय अर्घं ।।७।।

शुभ कृष्ण फाल्गुन सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री चन्द्रप्रभ निर्वाण पहुचे, शुद्ध ज्योति जगाय के ।।हम।।

ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णासप्तम्यां मोक्षकल्याणकप्राप्त श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं ।।८।।

शुभ भाद्र शुक्ला अष्टमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री पुष्पदंत स्वधाम पायो, स्वात्म गुण झलकाय के ।।हम।।

ओं ह्रीं भाद्रपदशुक्लाअष्टम्यां मोक्षकल्याणकप्राप्त श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय अर्घं ।।९।।

दिन अष्टमी शुभ क्वांर सुद, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्रीनाथ शीतल मोक्ष पाए, गुण अनन्त लहाय के ।।हम।।

ओं ह्रीं अश्विनशुक्लाअष्टम्यां मोक्षकल्याणकप्राप्त श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घं ।।१०।।

दिन पूर्णमासी श्रावणी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
जिन श्रेयनाथ स्वधाम पहुचे, आत्मलक्ष्मी पाय के ।।हम।।

ओं ह्रीं श्रावणपूर्णमास्यां श्री मोक्षकल्याणकप्राप्त श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अर्घं ।।११।।

शुभ भाद्र सुद चौदश दिना, मंदारगिरि निज ध्याय के।
श्री वासुपूज्य स्वथान लीनो, कर्म आठ जलाय के ।।हम।।

ओं ह्रीं भाद्रपदशुक्लाचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्त श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घं ।।१२।।

अषाढ़ वदि शुभ अष्टमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री विमल निर्मल धाम लीनो, गुण पवित्र बनाय के ।।हम।।

ओं ह्रीं आषाढ़कृष्णाअष्टम्यां मोक्षकल्याणकप्राप्त श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घं ।।१३।।

कृष्णाचतुर्थी चैत्र की, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
स्वामी अनन्त स्वधाम पायो, गुण अनन्त लखाय के ।।हम।।

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णाचतुर्थ्यां मोक्षकल्याणकप्राप्त श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय अर्घं ।।१४।।

शुभ ज्येष्ठ शुक्ला चौथ दिन, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री धर्मनाथ स्वधर्मनायक, भये निज गुण पायके ।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के ।।

ओं ह्रीं ज्येष्ठशुक्लाचतुर्थ्यां मोक्षकल्याणकप्राप्त श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ ।।१५।।

शुभ ज्येष्ठकृष्णा चौदसी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री शांतिनाथ स्वधाम पहुँचे, परम मार्ग बताय के ।।हम।।

ओं ह्री ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्त श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ ।।१६।।

वैशाख शुक्ला प्रतिपदा, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री कुन्थुनाथ स्वधाम लीनो, परम पद झलकाय के ।।हम।।

ओं ह्री वैशाखशुक्लाप्रतिपदायां मोक्षकल्याणकप्राप्तकुन्थुनाथजिनेन्द्राय अर्घ ।

अम्मावसी वदि चैत की, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री अरजिनेश स्वस्थान लीनो, अमर लक्ष्मी पाय के ।।हम।।

ओं ह्री चैत्रकृष्णा अमावस्यां मोक्षकल्याणकप्राप्त श्री अरनाथजिनेन्द्राय अर्घ ।।१८।।

शुभ शुक्ल फाल्गुन पंचमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री मल्लिनाथ स्वस्थान पहुंचे, परम पदवी पाय के ।।हम।।

ओं ह्री फाल्गुनशुक्लापंचम्यां मोक्षकल्याणकप्राप्त मल्लिनाथजिनेन्द्राय अर्घ ।।१९।।

फाल्गुन वदी शुभ द्वादशी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
जिननाथ मुनिसुव्रत पधारे, मोक्ष आनन्द पाय के ।।हम।।

ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णाद्वादश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्त श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय अर्घ ।।२०।।

वैशाख कृष्णा चौदशी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
नमिनाथ मुक्ति विशाल पाई, सकल कर्म नशाय के ।।हम।।

ओं ह्री वैशाखकृष्णाचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्त श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ ।।२१।।

अषाढ़ शुक्ला सप्तमी, गिरनार गिरि निज ध्याय के।
श्री नेमिनाथ स्वधाम पहुंचे, अष्टगुण झलकाय के ।।हम।।

ओं ह्रीं अषाढ़शुक्लासप्तम्यां मोक्षकल्याणकप्राप्त श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ ।।२२।।

शुभ श्रावणी सुद सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री पार्श्वनाथ स्वथान पहुंचे, सिद्धि अनुपम पाय के ।।हम।

ओं ह्रीं श्रावणशुक्लासप्तम्यां मोक्षकल्याणकप्राप्त श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ ।।२३।।

अम्मावसी वद कार्तिकी, पावापुरी निज ध्याय के।
श्री वर्द्धमान स्वधाम लीनो, कर्म वंश जलाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करे गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ओं ह्रीं कार्तिककृष्णाअमावस्यां मोक्षकल्याणप्राप्त श्री वर्द्धमानजिनेन्द्राय अर्घ ।।२४।।

जयमाल

(भुजंगप्रयात)

नमस्ते नमस्ते नमस्ते जिनन्दा, तुम्ही सिद्ध रूपी हरे कर्म फंदा ।।
तुम्ही ज्ञान सूरज भविक नीरजो को, तुम्ही ध्येय वायु हरो सब रजों को ।।१।।

तुम्ही निष्कलंक चिदाकार चिन्मय, तुम्हीं अक्षजीत निजाराम तन्मय ।
तुम्ही लोक ज्ञाता तुम्ही लोकपाल, तुम्ही सर्वदर्शी हता मान काल ।।२।।

तुम्हीं क्षेमकारी तुम्हीं योगिराजं, तुम्ही शात ईश्वर कियो आप काज ।
तुम्हीं निर्भयं निर्मलं वीतमोह, तुम्ही साम्य अमृत पियो वीतद्रोहं ।।३।।

तुम्हीं भव उदधि पारकर्ता जिनेशं, तुम्ही मोह तम के निवारक दिनेशं ।
तुम्हीं ज्ञान वीरं भरे क्षीर सागर, तुम्ही रत्न गुण के सुगम्भीर आकर ।।४।।

तुम्हीं चन्द्रमा निज सुधा के प्रचारक, तुम्ही योगियो के परमप्रेम धारक ।
तुम्ही ध्यान गोचर सुतीर्थकरो के तुम्ही पूज्य स्वामी परम गणधरो के ।।५।।

तुम्ही हो अनादी नही जन्म तेरा, तुम्हीं हो सदा सत् नही अत तेरा ।
तुम्ही सर्वव्यापी परम बोध द्वारा, तुम्ही आत्मव्यापी चिदानंद धारा ।।६।।

तुम्ही हो अनित्यं स्व परिणाम द्वारा, तुम्ही हो अभेद अमिट द्रव्य द्वारा ।
तुम्हीं भेदरूपं गुणानन्त द्वारा, तुम्ही नास्तिरुप परानन्त द्वारा ।।७।।

तुम्ही निर्विकारं अमूरत अखेद, तुम्ही निष्कषायं तुम्ही जीत वेदं ।
तुम्ही हो चिदाकार साकार शुद्ध, तुम्ही हो गुणस्थान दूर प्रबुद्ध ।।८।।

तुम्ही हो समयसार निज में प्रकाशी, तुम्हीं हो स्वचारित्र आतम विकाशी ।
तुम्ही हो निरास्रव निराहारज्ञानी, तुम्हीं निर्जरा बिन परम सुख निधानी ।।९।।

तुम्ही हो अबधं तुम्ही हो अमोक्षं, तुम्ही कल्पनातीत हो नित्यं मोक्षं ।
तुम्ही हो अवाच्यं तुम्ही हो अचिन्त्यं, तुम्ही हो सुवाच्यं सु गणराज नित्यं ।।१०।।

तुम्ही सिद्धराजं तुम्हीं मोक्षराजं, तुम्ही तीन भू के ऊपर विराजं
तुम्ही वीतरागं तदपि काज सारं, तुम्हीं भक्तजन भाव का मल निवारं ।।११।।

करे मोक्षकल्याणक भक्त भीने, फुरें भाव शुद्धं यही भाव कीनें ।
नमे है जजें हैं सु आनन्द धारे, शरण मगलोत्तम तुम्हीं को विचारें ।।१२।।

(दोहा)

परम सिद्ध चौबीस जिन, वर्तमान सुखकार ।
पूजत भजत सु भाव से, होय विघ्न निरवार ।।

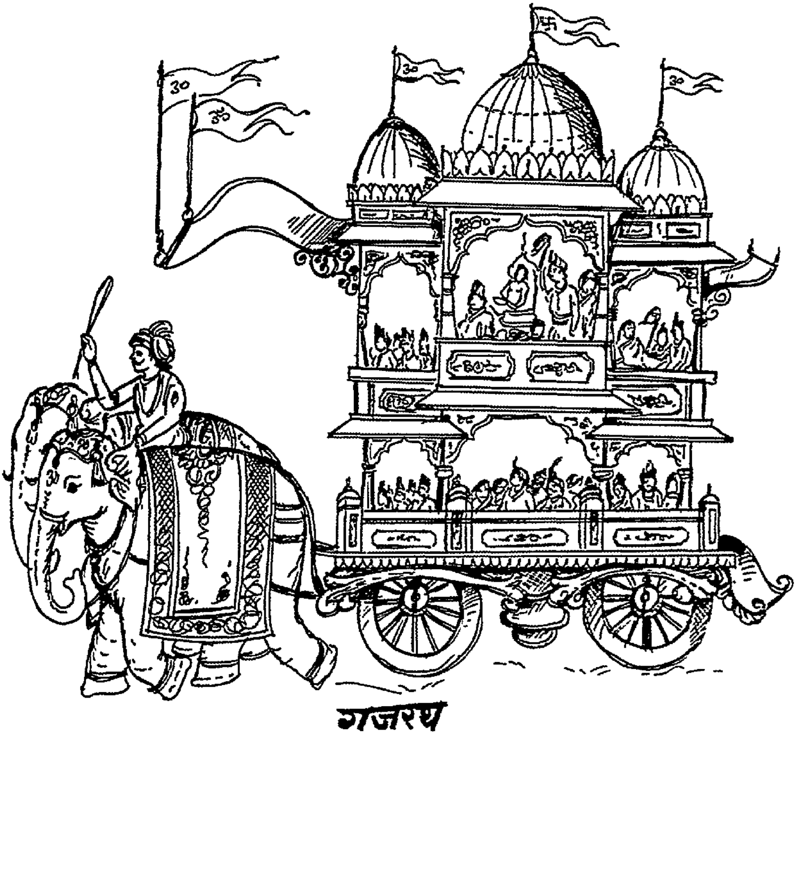
ओं ह्रीं मोक्षकल्याणकप्राप्त चतुर्विशति जिनेन्द्रभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

(दोहा)

बिम्बप्रतिष्ठा हो सफल, नरनारी अघ हार ।
वीतराग विज्ञानमय, धर्म बढो अधिकार ।।

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

पश्चात् शांतिपाठ विर्सजन कर, शाति हवन, शांत्याष्ठक शांतिभक्ति पढकर कार्य समाप्त करें ।



गजरथ

गजरथ-परिक्रमा

मंत्र - (१) शान्ति मंत्र

यंत्र - (१) विनायक यंत्र

(२) पूजा यंत्र

भक्तियाँ - (१) सिद्ध भक्ति

(२) चैत्य भक्ति

(३) शान्ति भक्ति

सामग्री - (१) पूजन सामग्री

(२) सूखे श्रीफल

(३) पीली सरसों

(४) गुग्गुल - सिंदूर

रथ शुद्धि विधान

रथ के समीप जाकर मंगलाष्टक पाठ पढ़ें पश्चात् दिग्बंधन, रक्षामंत्र एवं शान्ति मंत्र पढ़कर समस्त दिशाओं में पुष्प क्षेपण करना। रथ की प्रासुक जल से शुद्धि करकेविनायक सिद्धयंत्र को सिंहासन में विराजमान कर सिद्ध, चैत्य, शान्ति भक्तियां पढ़ना पश्चात् रथ पूजा (चैत्यालय पूजा) करें एवं विनायक यंत्र एवं नवदेवों को अर्घ चढावें।

रथपूजा (चैत्यालय पूजा)[1]

उच्चैर्गोपुर राजितेन सुवृतं शालेन रम्येण वै
शालामण्डपतोरणान्वितवरं श्रीभव्यसंघैर्भृतं।
गीतैर्वाद्यनिनादगर्जनिवहैः शोभापरं मंगलं
जैनेन्द्रं भवनं गिरीन्द्रसदृशं पश्येत्ततः श्रावकाः।

ओं ह्रीं जिनचैत्यालयसमूह अत्र अवतर अवतर।
अत्र तिष्ठतिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

अष्टक - सुगंधशीतलैः स्वच्छैः स्वादुभिर्विमलैर्जलैः
सार्धद्वीपद्वयातीतान् भवद्भव्यान् जिनान्यजे।

ओं ह्रीं जिन चैत्यालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सारकर्पूरकाश्मीरकलितैश्चन्दनद्रवैः।
सार्धद्वीपद्वयातीतान् भवद्भव्यान् जिनान्यजे।

ओं ह्रीं जिनचैत्यालयेभ्यः चन्दनं निर्वापामीति स्वाहा।

अक्षतै रक्षतैः सूक्ष्मैर्वलक्षै ऋक्षसन्निभैः।
सार्धद्वीपद्वयातीतान् भवद् भव्यान् जिनान्यजे।

ओं ह्रीं जिनचैत्यालयेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पैः प्रसरदामोदाहूतपुष्पंधयावृतैः।
सार्धद्वीपद्वयातीतान् भवद् भव्यान् जिनान्यजे।

ओं ह्रीं जिनचैत्यालयेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

हव्यैर्नव्यघृतापूपपायसैर्व्यजनान्वितैः।
सार्धद्वीपद्वयातीतान् भवद् भव्यान् जिनान्यजे।

ओं ह्रीं जिनचैत्यालयेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

---

(१) श्री पं. मन्नूलाल जैन प्रतिष्ठाचार्य की हस्त लिखित डायरी से।

कर्पूर प्रभवैर्दीपै दीप्त्यादीपितदिङ् मुखैः
सार्धद्वीपद्वयातीतान् भवद्भव्यान् जिनान्यजे।

ओं ह्री जिनचैत्यालयेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशांगधूपसद्धूमैर्दिशाशापूर्णसौरभैः।
सार्धद्वीपद्वयातीतान् भवद्भव्यान् जिनान्यजे।

ओं ह्रीं जिनचैत्यालयेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

चोचमोचाम्रजंबीरफलपूरादिसत्फलैः।
सार्धद्वीपद्वयातीतान् भवद्भव्यान् जिनान्यजे।

ओं ह्रीं जिनचैत्यालयेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलगंधाक्षतैः पुष्पैः दीपधूपचरुफलैः।
सार्धद्वीपद्वयातीतान् भवद्भव्यान् जिनान्यजे।

ओं ह्रीं जिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ

ओं ह्रीं सर्वभवनेन्द्रार्चितसमस्ताकृत्रिमचैत्य चैत्यालयेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

ओं ह्रीं सर्वज्योतिष्केन्द्रार्चित समस्ताकृत्रिमचैत्यचैत्यालयेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

ओं ह्रीं सर्वव्यंतरार्चित समस्ताकृत्रिम चैत्य चैत्यालयेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

ओं ह्रीं सर्वकल्पेन्द्रार्चित समस्ताकृत्रिम चैत्य चैत्यालयेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

ओं ह्रीं सर्वाहमिन्द्रार्चित समस्ताकृत्रिम चैत्य चैत्यालयेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

ओं ह्रीं सर्व विश्वेन्द्रार्चित समस्ताकृत्रिम चैत्य चैत्यालयेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाल

बहिर्द्वारेततः स्थित्वा नमस्कारपुरस्सरं।
संस्तुत्याच्छ्रीजिनागारं परमानंदनिर्भरम्॥१॥

सपदि विजयमारः सुस्थिताचारसारः क्षपितदुरितभारः प्राप्तसद्बोधपारः।
सुरकृतसुखसारः शंसितः श्रीविहारः परिगतपरपुण्यो जैननाथो मुदेऽस्तु॥२॥

कुसुमसघनमालाधूपकुम्भा विशालाः चमरयुवतिताना नर्त्तकी नृत्यगाना।
कनककलशकेतूत्तुंगश्रृंगाग्रशाला सुरनरपशुसिंहा यत्र तिष्ठन्ति नित्यम्॥३॥

श्रीमत्पवित्रमकलंकमनन्तकल्पं स्वायंभुवं सकलमंगलमादितीर्थम्
नित्योत्सवं मणिमयं निलयं जिनानां त्रैलोक्यभूषणमहं शरणं प्रपद्ये ॥४॥

जयति सुरनरेन्द्रश्रीसुधानिर्झरिण्याः कुलधरणिधरोऽयं जैनचैत्याभिरामः ।
प्रविपुलफलधर्मोऽनोकहाग्रप्रवालप्रसरशिखरशुभत्केतनः श्रीनिकेतः ॥

ओं ह्रीं सर्व जिन चैत्यालयेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

रथचक्र पूजा

शुद्धेनापि सुगंधेन स्वच्छेन बहुलेन च ।
स्नपयं रथचक्राणां तैलेन प्रकरोम्यहम् ॥

ओं आं क्रौं ह्रीं जिनरथचक्राणां तैलेन स्नपयामि (चाकों पर तेल डालें)

सिन्दूर लेपन

सिन्दूरैरारुपाकारैः पीतवर्ण सुसंभवैः ।
चर्चनं रथचक्राणां सिन्दूरं प्रकरोम्यहम् ।

ओं आं क्रौं ह्रीं जिनरथचक्राणां स्वस्तिकं करोमि ।
(रथ चक्र पर सिन्दूर से स्वस्तिक बनावें)

गुग्गुल मंत्र

भैश्यांच्छ गुग्गुलैः शुद्धैः धूपश्चापि सुनिर्मलैः ।
रथाग्रे क्षेपये भक्त्या सर्वविघ्नविनाशनम् ॥

ओं आं क्रौं ह्रीं रथाग्रे अग्नौ गुग्गलं निक्षेपयामि । (अग्नि में गुग्गुल क्षेपण करें)

ओं आं क्रौं ह्रीं प्रथम विजयभद्रचक्राय पुष्पम्
ओं आं क्रौं ह्रीं द्वितीय भैरवचक्राय पुष्पम्
ओं आं क्रौं ह्रीं तृतीय वीरभद्रचक्राय पुष्पम्
ओं आं क्रौं ह्रीं चतुर्थ अपराजित चक्राय पुष्पम्

तत्पश्चात् रथ के ऊपर के भाग में विधिनायक प्रतिमा को सिंहासन पर विराजमान करें। छत्र लगावें और चमर ढुरावें अर्घ चढावें ।

पंचपरमेष्ठिनस्ते मंगललोकोत्तमाश्च शरणानि ।
धर्मोपि कर्णिकायां समर्चिताः सन्तु नः सुखदाः ॥

ओं ह्रीं अर्हदादि मंगलोत्तमशरणभूतेभ्यो अर्घ ।

दिग्बंधन मंत्र

ओं क्षां क्षी क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्षं क्षः हूं फट् स्वाहा ।

(समस्त दिशाओ में पीले सरसों या पुष्प क्षेपण करें)

रथ संचालन मंत्र

यथाकोटिशिलापूर्व चालितासर्वविष्णुभि· ।
चालयामि ततोत्तिष्ठं शीघ्रं चल महारथम् ।।

ओं आं क्रौं ह्रीं अ सि आ उ सा सर्वोपद्रव निवारय निवारय सर्वशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ।

(१) रथ परिक्रमा के समय वृहच्छांतिमंत्र और रक्षा मंत्र का पाठ पढता हुआ पुष्प या पीले सरसों को फेंकता जाये। परिक्रमा करता हुआ रथ जब पाण्डाल के प्रमुख द्वार अर्थात् मंगल ध्वजा के पास आ जावे तो रथ में विराजमान बिम्ब को प्रत्येक परिक्रमा में अर्घ चढाए ।

(२) सातों परिक्रमा होने के बाद शान्त्यष्टक, शांति भक्ति पढ़ कर नौ बार णमोकार मंत्र का जाप करें ।

पश्चात् विधिनायक प्रतिमा को रथ से मण्डप में लाना चाहिए ।

(३) मण्डप में ऊंची आसन पर जिन बिम्ब विराजमान कर अभिषेक शांतिधारा करें और चतुर्विशति पूजा, शांतिपाठ, विसर्जन कर मगलगान एव नृत्य करे ।

मंगल कामना [१]

स्वस्तिस्ताज्जिनशासनाय महतां पुण्यात्मना पत्तये ।
राज्ञे स्वस्ति चतुर्विधाय वृहते संघाय यज्ञाय च ।।
सद्धर्माय सधर्मिणेऽस्तु सुकृतां भो वृष्टि रस्तुक्षणं
मा भूयाद् शुभवीक्षणं शुभयुजा भूयात्पुनर्दर्शनम् ।

समापन के दिन नित्यमहपूजा शांतिपाठ ,विसर्जन, वृहच्छांति हवन, पुण्याहवाचन, शांतिभक्ति, शान्त्याष्टक, यज्ञविसर्जन यज्ञदीक्षासमापन, आदि क्रियायें करे ।

वेदी पर बिम्ब स्थापन के पूर्व वृहदभिषेक, वृहच्छांति धारा एवं पूजा करके वेदी प्रतिष्ठा की विधि आगमानुसार करें ।

समस्त प्रतिमाओं की स्थापना करें । प्रतिष्ठा में आई बाहर की प्रतिमायें देनें की व्यवस्था करें ।

---

१. आ. ज. से, प्रतिष्ठापाठ पृष्ठ ३०६

मण्डल विसर्जन

जगतः शांतिविवर्धनमहसां प्रलयमस्तु जिनस्तवनेन मे (ते)
सुकृतबुद्धिरलं क्षमयायुतो जिनवृषे हृदये मम (तव) वर्तताम्
मोहध्वान्तविदारणं विशद् विश्वोद्भासि दीप्तिश्रियम् ।
सन्मार्गप्रतिभासकं विबुधसन्दोहामृतापादकम् ।।
श्रीपादं जिनचन्द्रशान्तिशरणं सद्भक्तिमानेऽपि ते ।
भूयास्तापहरस्य देव भवतो भूयात्पुनर्दर्शनम् ।।
मंगलार्थं समाहूता विसर्ज्याखिलदेवताः ।
विसर्जनाख्यमंत्रेण वितीर्य कुसुमाञ्जलिं

ओं ह्रीं अस्मिन् बिम्बप्रतिष्ठामहोत्सवे (कर्मणि) आहूयमान देवगणाः स्वस्थानं गच्छन्तु अपराधक्षमापणं भवतु ।

मंगलध्वज विसर्जन

प्रमादाज्ञानदर्पाद्यैः विहितं विहितं न यत् ।
जिनेन्द्रास्तु प्रसादास्ते सफलं सकलं च तत् ।।१।।
अस्मिन्यज्ञे सुराहूताः शिष्टार्हत्प्रभुपूजने
इष्टमस्माकमापाद्य तुष्टा यान्तु यथायथम् ।।२।।

(मंगलध्वज वेदी पर पुष्प क्षेपण करें)

यज्ञ दीक्षा समापन विधि

यज्ञोचितं व्रतविशेषवृतोह्यतिष्ठन् ।
यष्टाप्रतीन्द्रसहितः स्वयमे पुरावत् ।।
एतानि तानि भगवज्जिनयज्ञदीक्षा
चिन्हान्यथैष विसृजामि गुरोः पदाग्रे ।।

अथार्हत् पूजासमापन करणार्थं पूर्वाचार्यनुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावंदना स्तव समेतं श्रीमच्छान्तिभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ें)

मुकुट, माला, यज्ञोपवीत, रक्षासूत्र का त्याग करें ।

याजककर्त्तव्य

नित्यपूजाविधानार्थ स्थापयेन्मंदिरे नवे
पुराणे वा तत्र भाण्डागारे संस्थापयेद् धनं
ग्राम ह्रद्दुदकेणैव निर्दोषेण विधीयताम्
पूजाकृत्यं सेवकादि पालनं साधुतर्पणम्
रथयात्रां पुरा कृत्वाऽभिषेकमहनीयताम्
संपाद्य संघसद्भक्ति कुर्वीत याजकोत्तमः ।।

प्रतिमा एवं प्रतिष्ठा फल

अप्यंगुष्ठमितामनेन विधिना जैनीं प्रतिष्ठापये
शास्त्रोक्तां प्रतिमां भजन्ति विधिवन्नित्याभिषेकादिभिः
तेऽर्हद्भक्तिदृढानुरंजित धियो भक्त्याशिवाघर
ग्रामण्योभ्युदयावलीरनुभवं त्यात्यन्तिकीं निर्वृतिम् ।।

आशीर्वाद

दीर्घायुरस्तु शुभमस्तु सुकीर्तिरस्तु
सद्बुद्धिरस्तु धनधान्यसमृद्धिरस्तु
आरोग्यमस्तु विजयोऽस्तु महोऽस्तु पुत्र -
पौत्रौद्भवोऽस्तु तव सिद्धिपातेः प्रसादात्
आयुः पुष्टिं करोतु प्रहरतु दुरितं मंगलालीं धिनोतु
सौभाग्यं वृद्धिमुच्चैर्नयतु वितरताद्वैभवं संचिनोतु
रामा पद्माभिरामा रमयतु सुयशः स्पष्टयित्वा तनोतु
पुत्रं पौत्रं प्रतापं प्रथयतु भवतामार्हतीभक्तिरुच्चैः
श्रियं बुद्धिमनाकुल्यं धर्मप्रीतिविवर्धता
जिनधर्मे स्थितिर्भूत्वा श्रेयसं मे दिशत्वरम् ।

(समस्त पात्रों पर पुष्प क्षेपण करें)

स्वस्ति स्ताज्जिनशासनाय महतां पुण्यात्मनां पतये
राज्ञे स्वस्ति चतुर्विधाय वृहते संघाय यज्ञाय च
सद्धर्माय सधर्मिणोऽस्तु सुकृतांभोवृष्टिरस्तु क्षणं
मा भूयादशुभेक्षणं शुभयुजां भूयात्पुनर्दर्शनम् ।

श्री जिन चरणाग्रे पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

यज्ञदीक्षा समापन स्तुति

जय जय अरिहंता सिद्धमहंता, आचारज उवझायवरं ।
जय साधु महानं सम्यक् ज्ञानं सम्यक् चारित पालकरं ।।
हैं मंगलकारी भवतपहारी पाप प्रहारी पूज्यवरं ।
दीनन निस्तारन सुख विस्तारन, करुणाधारी ज्ञानवरं ।।१।।

हम अवसर पाये पूज रचाये करो महोत्सव हर्ष महां ।
बहु पुण्य उपाये पाप धुवाये सुख उपजाये सार महां ।।
जिनगुन कथ्थ पाये भाव बढ़ाये दोष हटाये यश लीना
तन सफल कराया आत्मलखाया दुर्गति कारन हर लीना ।।२।।

निज मति अनुसारं बल अनुसारं यज्ञविधान रचाया है ।
सब भूल चूक प्रभु क्षमा करो अब यह अरदास सुनाया है ।।
हम दास तिहारे नाम लेत हैं इतना भाव बढ़ाया है ।
सच याही से सब कार्य पूर्ण हों यह श्रद्धान जमाया है ।।३।।

तुम गुण का चितन होय निरंतर जावत उच्च न हो जावें ।
तुम्हरी पद पूरा करें निरन्तर जावत उच्च न पद पावें ।।
हम पठन तत्त्व अभ्यास रहे नित जावत बोध न सर्व लहें ।।
शुभ सामायिक अरुध्यान आत्म का करत रहे निज तत्त्व गहें ।।४।।

जय जय तीर्थकर गुणरत्नाकर सम्यक्ज्ञान दिवाकर हो ।
जय जय गुण पूरन ओगुन चूरन संशय तिमिर हरन रवि हो ।
जय जय भवसागर तारनकारन तुमही भवि अवलंबन हो
जय जय कृत कृत्यं नमें तुम्हें नित तुम सब संकट तारन हो ।। ५।।

प्रतिष्ठा पात्रों का कर्तव्य है कि वह कल्याणार्थ स्मृति स्वरूप कोई नियम अवश्य धारण करें । कम से कम प्रतिदिन दर्शन, छनकर पानी पीना एवं रात्रि भोजन का त्याग करना चाहिए ।।

।। इति शुभम् ।।

अन्य प्रतिष्ठा विधि

(१) बाहुबली बिम्बप्रतिष्ठा विधि

(२) मानस्तम्भप्रतिष्ठा विधि

(३) आचार्य बिम्बप्रतिष्ठा विधि

(४) उपाध्याय बिम्बप्रतिष्ठा विधि

(५) साधु बिम्बप्रतिष्ठा विधि

(६) चरण पादुकाप्रतिष्ठा विधि

(७) यंत्रों की प्राणप्रतिष्ठा विधि

बाहुबली बिम्बप्रतिष्ठा विधि

बाहुबली की प्रतिमा वीतराग रूप पंच परमेष्ठी के अन्तर्गत साधु परमेष्ठी की है। एक वर्ष कठिन तपश्चरण कर केवल ज्ञान प्राप्त किया और अर्हन्त परमेष्ठी हुए फिर समस्त कर्मो का अभाव कर सिद्ध परमेष्ठी हो गए। इनकी प्रतिष्ठा जहां पंचकल्याणक प्रतिष्ठा होती है उसमें तप कल्याणक के समय मातृकान्यास एवं सस्कारारोपण से प्रारंभ की जाती है। बाहुबली प्रतिष्ठा में औपचारिक रूप में तीन कल्याणक की विधि कर लेते हैं। वैसे कल्याणक तो तीर्थकरों के ही होते हैं। भरत ऐरावत क्षेत्र में उत्पन्न तीर्थकरों के पांच ही कल्याणक होते हैं कम नहीं होते, विदेह क्षेत्र में पांच, तीन, दो, कल्याणक होते हैं इसलिये बाहुबली बिम्ब प्रतिष्ठा में मातृकान्यास, संस्कार विधि, तिलक दान, अधिवासना, मुखोद्घाटन, नयनोन्मीलन, प्राण प्रतिष्ठा, सूरिमंत्र केवलज्ञानोत्पत्ति क्रियायें अवश्य ही करना चाहिए।

यदि बाहुबली बिम्ब की प्रतिष्ठा ही करना हो तो मंगलाष्टक, पात्रशुद्धि, इन्द्रप्रतिष्ठा, दिग्बंधन, रक्षामंत्र, शान्ति मंत्राराधन करें पश्चात् सवा लाख या इक्कीस हजार जाप शान्ति मंत्र का करें।

वृहच्छांति मंत्र

णमोअरिहंताणं, णमोसिद्धाणं, णमो आइरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं, अथवा

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सर्वशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।

जाप्यानुष्ठान किसी एक मंत्र द्वारा करें।

घटयात्रा विधि से यज्ञवेदी शुद्धि एवं मण्डपशुद्धि करके जिनबिम्ब की स्थापना, यागमण्डल का मांडना बनाकर विधान पूजा करें एवं पंचकल्याणस्तोत्र, सिद्ध, आचार्य, चारित्र, योगि, शांतिभक्ति पढ़ें। सर्वौषिधि जलसे **"ओं क्षीरसमुद्र वारि पूरितेन मणिमय मंगल कलशेन बाहुबली प्रतिकृतिं स्नपयामः"** इस मंत्र से प्रतिमा का अभिषेक कर शुद्धि करें।

पश्चात् मातृकान्यास, संस्कार विधि, तिलकदान, मंत्रन्यास, अधिवासना, मुखोद्घाटन, नयनोन्मीलन, प्राणप्रतिष्ठा, सूरिमंत्र, केवलज्ञानोत्पत्ति आदि मंत्रों का १०८ वार जाप करके इन्हीं मंत्रों से क्रिया करें फिर शान्ति हवन शांति पाठ विसर्जन कर प्रतिष्ठा कार्य पूर्ण करें।

मानस्तम्भप्रतिष्ठा

मंगलाष्टक, दिग्बंधन, रक्षामंत्र, शांति मंत्राराधन, सकलीकरण इन्द्र प्रतिष्ठा करके विनायक यत्र की पूजा करें पश्चात् शांति मंत्र का सवा लाख, इक्यावन हजार या इकतीस हजार जाप कराना।

मंगलध्वजारोहण करके मध्यान्ह घटयात्रा करके वेदी प्रतिष्ठा में लिखे ८१ कलशों से मानस्तम्भ की शुद्धि करना चाहिए। तदनन्तर - **ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अमृतं वर्षय** वर्षय जिनेन्द्र मानस्तम्भस्य स्नपनं करोमि। इस मन्त्र द्वारा शुद्धि करके निम्न संस्कार करें (१)

आयात भो वायुकुमारदेवाः प्रभोर्विहारावसराप्तसेवाः
यज्ञांशमभ्येतसुगंधिशीत मृद्वात्मना शोधयस्तम्भभूमिम्।

भो वायुकुमार सर्वविघ्न विनाशनाय मानस्तम्भ शुद्धिं कुरु कुरु फट् स्वाहा।

(शुद्ध वस्त्र से मार्जन करें)

आयात भो मेघकुमारदेवाः प्रभोर्विहारावसराप्तसेवाः।
गृह्णीत यज्ञांशमुदीर्ण शम्या गन्धोदकैः प्रोक्षत स्तम्भभूमिम्॥

भो मेघकुमार मानस्तम्भ धरां प्रक्षालय प्रक्षालय अं हं सं वं झं हं यः क्षः फट् स्वाहा

(मान स्तम्भ के ऊपर जल से छींटे लगावे)

आयात भो बह्निकुमारदेवाः आधानविध्यादिविधेयसेवाः।
भजध्वमिज्यांशमिमां मखोर्वी ज्वालाकलापेन परं पुनीत॥

भो अग्निकुमार मानस्तम्भभूमिं ज्वलय ज्वलय अं हं सं वं झं ठं यः क्षः फट् स्वाहा

(कपूर जलाकर मानस्तम्भ की शुद्धि करे।)

उद्भात भो षष्टिसहस्त्र नागाः क्ष्माकामचारस्फुटवीर्यदर्पाः।
प्रतृप्यतानेन जिनाध्वरोर्वी सेकात्सुधागर्वमृजामृतेन॥

भो षष्टि सहस्त्र नागाः मानस्तम्भ रक्षां कुरुत कुरुत स्वाहा।

(मानस्तम्भ के ईशान कोण में पुष्प क्षेपण करें)

विशेष - (१) मातृकामंत्र की १०८ बार जाप करना चाहिए
(२) पंच कल्याण स्त्रोत, सिद्धि, श्रुत, आचार्य, चैत्य, चारित्रभक्ति पढ़ना चाहिए।
(३) प्रतिमा के नीचे अचल यंत्र रखें। यदि यंत्र न हो तो केशर से लिखें।
(४) स्वस्तिक, पंचरत्न, पारद उस स्थान पर रखें जहां बिम्ब स्थापन करना है।

---

(१) पं. आ. ध., प्रतिष्ठा सारोद्धार ६/४३/१३१ सं. १३४

मंत्रं पठेत् जपं पद्मपीठेगन्धेन तल्लिखेत् ।
पञ्चरत्नमत्र क्षिप्त्वा प्रतिमां स्थापयेत्ततः ।।[1]

ओं ह्री विम्ब स्थापनार्थ पञ्चरत्नं, स्वस्तिकं च स्थापयामि ।

वेद्यां पारदं क्षिप्त्वा श्रीखण्डं कुंकुमं तथा ।
प्रथमं स्थापयेद् गर्भे कोणे वेद्याः जिनस्य च ।।[2]

ओं ह्री वेद्या कोणे पारदं स्थापयामिः

मातृका मंत्र

ओं नमोऽर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः कखगघङ, चछजझञ, टठडढण, तथदधन, पफबभम, यरलव, शषसह क्लीं ह्रीं क्रौं स्वाहा ।

(१०८ बार जाप करना)

अचलयंत्र स्थापन [3]

संस्थाप्यं निश्चलं यन्त्रमधस्तात् प्रतिमां नयेत्
लेखनं स्वर्णलेखन्या यंत्रं तस्य धरार्पितम् ।

ओं ह्रीं जिनबिम्ब स्थापनार्थ अचल यन्त्रं स्थापयामि

(प्रतिमा के नीचे अचल यंत्र स्थापित करें)

निर्मितं वीतरागस्य रत्न पाषाण धातुभिः ।
निराकारं च सिद्धानां बिम्बं संस्थापये मुदा ।।

ओं ह्रीं अर्हत् सिद्ध प्रतिमा स्थापनं करोमि

(प्रतिमा विराजमान करें)

अष्ट प्रातिहार्य स्थापना [4]

वनस्पतित्वेऽपि गतप्रशोकोऽशोको बभूवाति मदप्रसूनः ।
अनेक संदर्शकशोकहारी वृक्षो जिनेन्द्राश्रयणप्रभावात् ।।

ओं ह्रीं अशोकवृक्ष प्रातिहार्य सम्पन्नाय जिनायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।।१।।

श्रेयस्तरुः फलति नोऽमरसौख्यमुच्चै हर्षोत्सुकत्वपरिलम्भनसन्निषेण ।
देवैः कृता सुमनसां परिवृष्टिरेषा मोदं ददातु भव दुःखजुषां जनानाम् ।।

ओं ह्री देवकृत पुष्पवृष्टि प्रातिहार्य सम्पन्नाय जिनायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।।२।।

---

(१)(२) हस्तलिखित डायरी पं. मन्नूलाल जैन प्रतिष्ठाचार्य
(४) आ ज. से. प्रतिष्ठा पाठ श्लोक ८७७ से ८८२

त्रैलोक्य वस्तु मनंत स्मरणावबोधो येन स्वयं श्रवणगोचरतां गतेन ।
सञ्जायते मुखरदौष्ठविघातशून्यो भूयाद् ध्वनिर्भव गदप्रसरार्ति हर्ता ॥
ओं ह्रीं दिव्यध्वनि प्रातिहार्य सम्पन्नाय जिनायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

यक्षेशपाणि लतिकांकुर संगतानि तुर्याधिषष्टिगणनान्यपि देवनद्याः ।
वीचिप्रमाणि भवतो द्विकपार्श्व योस्ते सच्चामराण्यघचयं मम निर्दलन्तु ॥
ओं ह्रीं चतुः षष्टिचामरप्रातिहार्य सम्पन्नाय जिनायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

सिंहासने छविरियं जिनदेवतायाः केषां मनोऽवधूतपाप्महरी न वा स्यात् ।
स्याद्वादसंस्कृतपदार्थगुणप्रकाशाऽस्या मेस्तु निर्हत मदाविलजातशक्तेः ॥
ओं ह्रीं सिंहासन प्रातिहार्य सम्पन्नाय जिनायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

भामण्डलेऽ वयव पृष्ठ विभागरश्मि क्लृप्तेजनस्य भवसप्तक दर्शनेन ।
श्रद्धानमाप्तगुरुधर्मपरम्पराणां गाढं भवेत्तदित देवपतिर्नमस्यः ॥
ओं ह्रीं भामण्डल प्रातिहार्य सम्पन्नाय जिनायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

देवस्य मोह विजयं परिशंसितुं द्राक् देवाः स्वहस्त तलतः परिवादयन्ति ।
वाद्यानि मंगल निवास कराणि सद्यो मिथ्यात्व मोह जयिनः शुभगानि च स्युः ॥
ओं ह्रीं दुन्दुभिप्रातिहार्यसम्पन्नाय जिनायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

छत्रत्रयं जिनप मूर्धनिभासमानं त्रैलोक्यराज्य पतितामभिदर्शयद्वा ।
सोमार्कबह्निप्रतिमं सितपीतरक्तरत्नादि रञ्जित मिदं मम मंगलाय ॥
ओं ह्रीं छत्रत्रय प्रातिहार्य सम्पन्नाय जिनायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥
तालातपत्रचमरध्वजसुप्रतीक भृंगार दर्पणघटाः प्रतिवीथिचारं
सन्मंगलानिपुरतोविलसांतियस्य पादारविंदमुगलंशिरसा -
ओं अष्टमंगलद्रव्य सम्पन्नायजिनायर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

वन्दनमाला [1]

वन्दन मालिका बध्या मणिमुक्तादिनिर्मिता ।
वेदिकायां (मानस्तम्भे) परं रम्या किंकिण्याकिविभूषिता ॥
ओं वन्दनमालां बध्नामि स्वस्ति भवतु (वन्दनमाला बांधे)

---

(१) मंदिर वेदी प्रतिष्ठा, कलशारोहण विधि पृष्ठ ११४

मान स्तम्भ पूजा [१]

मानस्तम्भं विनतमनसा सेन्द्र सङ्घेन वन्द्यं
रत्नज्योतिर्निचयनिचितं श्रृंगसंस्पृष्ट मेघम् ।

मूलस्थानैर्जिनपतिचयैर्भ्राजमानं समन्तात्
शुम्भन्तं तं जिनपतिगृहप्राग्रभूमौ नमामः ।।

ओं ह्री जिन मन्दिराग्रे विराजमान मानस्तम्भ जिनेन्द्र अत्रावतर अवतर संवौषट् ।
ओं ह्री जिनमन्दिराग्रे विराजमान मानस्तम्भ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ ठः ठः
ओं ह्री जिनमन्दिराग्रे विराजमान मानस्तम्भ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टकम्

गांगेय नीरेण समुज्ज्वलेन कुम्भस्थितेनेह समर्चयामि ।
उत्तुंग श्रृंगेण विशोभमानं स्तम्भान्तमानं सुरमह्यमानम् ।।
ओं ह्रीं जिनमन्दिराग्रे विराजमान मानस्तम्भजिनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सौगन्ध्यसंतोषित भृंगसंघैः पाटीर पुञ्जैः परिपूजयामि ।
उत्तुंग श्रृंगेण विशोभमानं स्तम्भान्तमानं सुर मह्यमानम् ।।
ओं ह्री जिनमन्दिराग्रे विराजमान मानस्तम्भजिनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

शाल्यक्षतैश्चन्द्रकरावदातैः सुगन्धवद्भिः परिपूजयामि ।
उत्तुंग श्रृंगेण विशोभमानं स्तम्भान्तमानं सुरमह्यमानम् ।।
ओं ह्रीं जिनमन्दिराग्रे विराजमान मानस्तम्भजिनाय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

मनोहरै रम्यसुगंधयुक्तैः पुष्पव्रजैस्त्र समर्चयामि ।
उत्तुंग श्रृंगेण विशोभमानं स्तम्भान्तमानं सुरमह्यमानम् ।।
ओं ह्रीं जिनमन्दिराग्रे विराजमान मानस्तम्भजिनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

नैवेद्यवृन्देन मनोहरेण सुस्वादु नार्चामि रसाप्लुतेन ।
उत्तुंग श्रृंगेण विशोभमानं स्तम्भान्तमानं सुरमह्यमानम् ।।
ओं ह्रीं जिनमन्दिराग्रे विराजमान मानस्तम्भजिनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

---

(१) प. डा. पन्ना लाल जी कृत मंदिर वेदी प्रतिष्ठा कलशारोहण विधि परिशिष्ट ३

दीपैः प्रभा पूरितदिक्समूहै रर्चामि नित्यं नयनाभिरामैः ।
उत्तुंग श्रृंगेण विशोभमानं स्तम्भान्तमान सुरमह्यमानम् ।।
ओं ह्रीं जिनमन्दिराग्रे विराजमान मानस्तम्भजिनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूपेन गन्धाहृतषट्पदेन प्रार्चामि बह्निप्रहुतेन भक्त्या ।
उत्तुंग श्रृंगेण विशोभमान स्तम्भान्तमानं सुरमह्यमानम् ।।
ओं ह्रीं जिनमन्दिराग्रे विराजमान मानस्तम्भजिनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

फलैरसालैर्विविधप्रकारैरर्चामि सुस्वादुरसैरजस्त्रम् ।
उत्तुंग श्रृंगेण विशोभमान स्तम्भान्तमान सुरमह्यमानम् ।।
ओं ह्रीं जिनमन्दिराग्रे विराजमान मानस्तम्भजिनाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जलादि जातेन महोज्ज्वलेन ह्यर्घेण नित्यं परिपूजयामि ।
उत्तुंग श्रृंगेण विशोभमान स्तम्भान्तमानं सुरमह्यमानम् ।।
ओं ह्रीं जिनमन्दिराग्रे विराजमान मानस्तम्भजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्घावली

पूर्वदिक्स्थं जिनं रम्यं प्रार्चाम्यर्घेण भक्तितः ।
नीरादिनिर्मितेनाद्य मानिमानापहानये ।।१।।
ओं ह्रीं मानस्तम्भे पूर्व दिक् स्थिताय जिनबिम्बायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

आवाच्यां दिशिशुम्भन्तं जिनंशान्ति करं नृणाम् ।
जलादिद्रव्यजातेन ह्यर्घेणार्चामि सन्ततम् ।।२।।
ओं ह्रीं मानस्तम्भे दक्षिण दिक् स्थिताय जिनबिम्बायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रतीच्यां स्थापितं बिम्बं जैनं जन्मापहारकम्
प्रार्चाम्यर्घेण भक्त्याह साष्टद्रव्यमयेन वै ।।३।।
ओं ह्रीं मानस्तम्भे पश्चिम दिक् स्थिताय जिनबिम्बायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

उदीच्यां दिशि राजन्तं राजन्तं विविधैर्गुणैः
जलाद्यर्घेण भक्त्याहं पूजयामि जिनेश्वरम् ।।४।।
ओं ह्रीं मानस्तम्भे उत्तर दिक् स्थिताय जिनबिम्बायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला (मालनी)

समवसरणभूमौसंस्थित यं विलोक्य भवति झटिति मानी मानमुक्तोधरायाम् ।
इह जगति स मानस्तम्भनाम्ना प्रसिद्धः प्रभवतु जिनराजप्रोक्तधर्मप्रभावी ।।१।।

पद्धडी-

जयसमवसरण विभ्राजमान, जय जिनपति मूर्ति विराजमान ।
जय मानि मर्त्यमानापहार, जय शक्र शतक कृत्त नमस्कार ।।२।।

काष्ठा चतुष्टये यस्य सन्ति, वाप्यस्ता या नीरैर्लसन्ति ।
यासु स्नात्वाह्यग्रे व्रजन्ति, भव्या भक्ता दुरितं हरन्ति ।।३।।

जय धर्म प्रभावन करणशूर, जयमान तमो हरणैक सूर ।
जय कर्म कक्ष दहनैक दाव, जयवैर दूर करणस्वभाव ।।४।।

जय जन्मजात वैरापहार, जयदूरी कृत्त निखिलापकार ।
जय सुर नर किन्नर वन्द्यमान, जयमुनिवर गण परिनन्द्यमान ।।५।।

जयमानस्तम्भ महोपकार, जय कृत्त तम जिन धर्मप्रसार ।
जय मन्दिर पुरो विराजमान, जयमहता महसा भ्राजमान ।।६।।

घत्ता-

हे धर्म प्रभावक शुभ सुखदायक विनत सुरासुर नायक हे ।
त्वं विलस सदाभुवि कीर्तिधर त्वं विलस सदा भुविमानहर ।।७।।

ओं ह्रीं जिनमन्दिराग्रे विराजमान मानस्तम्भजिनायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

मानस्तम्भ पूजा (हिन्दी) [१]

गीतका - मान स्तम्भ में जिन चतुर्दिश हैं महाशुभसोहना,
जिन लखत मान पलात मानिन होत हिय निर्मोहना।
तिस मूल मांहि जिनेश प्रतिमा लखे आनंद हो घना,
करके आह्वानन थाप पूजों लहे शिव सुख सोहना ॥१॥

दोहा - मानस्तम्भ के मूल में प्रतिमा श्री भगवान।
कर आह्वानन जोर कर तिष्ठ तिष्ठ इत आन॥२॥

ओं ह्रीं मानस्तम्भ चतुर्दिक्षु स्थित जिनेन्द्र अत्रावतरावतर संवौषट्।
ओं ह्रीं मानस्तम्भ चतुर्दिक्षु स्थित जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ओं ह्रीं मानस्तम्भ चतुर्दिक्षु स्थित जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

योगीरासा - कंचन झारी उज्जवल जल ले श्री जिन चरण चढाऊं,
भाव सहित श्री जिनवर पूजों जनम जनम सुख पाऊं।
मानस्तम्भ सोहनो सुन्दर चारों दिश जिन पाऊं,
पूजत हर्ष होत भविजीवन सुर शिव लक्ष्मी पाऊं॥

ओं ह्रीं चतुर्दिक् मानस्तम्भ जिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कुमकुम केशर सरस सुवासी उत्तम लेकर धारो,
भव आताप विनासन कारण श्री जिन चरण पखारो।
मानस्तम्भ सोहनो सुन्दर चारों दिश जिन पाऊं,
पूजत हर्ष होत भविजीवन सुर शिव लक्ष्मी पाऊ॥

ओं ह्रीं चतुर्दिक् मानस्तम्भ जिनेन्द्रेभ्यः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ताफल उनहार सु तन्दुल कांति चन्द्र सम धारें,
पुंज करो जिनवर पद आगे अक्षय पद विस्तारें।
मानस्तम्भ सोहनो सुन्दर चारो दिश जिन पाऊं,
पूजत हर्ष होत भविजीवन सुर शिव लक्ष्मी पाऊं॥

ओं ह्रीं चतुर्दिक् मानस्तम्भ जिनेन्द्रेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

नाना बिध के पुष्प सुगंधित भ्रमर गुंजारत जापे,
पूजत श्री जिन चरण मनोहर काम न आवे तापे।
मानस्तम्भ सोहनो सुन्दर चारों दिश जिन पाऊं,
पूजत हर्ष होत भविजीवन सुर शिव लक्ष्मी पाऊं॥

ओं ह्रीं चतुर्दिक् मानस्तम्भ जिनेन्द्रेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

---

(१) पं. गुलाब चद पुष्प द्वारा रचित

फेनी घेवर तुरत सु घी के लाडू गोझा लावें,
क्षुधा रोग निरवारन कारन श्री जिनचरण चढ़ावें ।
मानस्तम्भ सोहनो सुन्दर चारों दिश जिन पाऊं,
पूजत हर्ष होत भविजीवन सुर शिव लक्ष्मी पाऊं ।।

ओं ह्रीं चतुर्दिक् मानस्तम्भ जिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मणिमय दीप अमोलक लेकर कनक रकावी धरिये,
मोह अंध के नाशन कारण जगमग ज्योति उजरिये ।
मानस्तम्भ सोहनो सुन्दर चारों दिश जिन पाऊं,
पूजत हर्ष होत भविजीवन सुर शिव लक्ष्मी पाऊं ।।

ओं ह्रीं चतुर्दिक् मानस्तम्भ जिनेन्द्रेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूप सुगंध समूह अनूपम खेय अगनि में डालो,
अष्ट कर्म ये दुष्ट भयानक इनको तुरतहि जालो ।
मानस्तम्भ सोहनो सुन्दर चारों दिश जिन पाऊं,
पूजत हर्ष होत भविजीवन सुर शिव लक्ष्मी पाऊं ।।

ओं ह्रीं चतुर्दिक् मानस्तम्भ जिनेन्द्रेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल लोंग लायची सुन्दर पिस्ता जाति घनेरा,
पूज जिनेश्वर शिवफल पइये स्वर्गादिक सुख केरा ।
मानस्तम्भ सोहनो सुन्दर चारों दिश जिन पाऊं,
पूजत हर्ष होत भविजीवन सुर शिव लक्ष्मी पाऊं ।।

ओं ह्रीं चतुर्दिक् मानस्तम्भ जिनेन्द्रेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

आठ द्रव्य मिल अर्घ संजोयो पूजो श्री जिनभाई,
भव सागर से पार उतारो जय जय जय जिनराई ।
मानस्तम्भ सोहनो सुन्दर चारों दिश जिन पाऊं,
पूजत हर्ष होत भविजीवन सुर शिव लक्ष्मी पाऊं ।।

ओं ह्रीं चतुर्दिक् मानस्तम्भ जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा - मानस्तम्भ सुहावनो चारों दिश जिन थान ।
सुरनर मुनि खग हर्षयुत पूजें आनन्द ठान ।।१।।

पद्धरि- जय जय जय मानस्तम्भ सार, शोभित नीचे चौकोर धार।
जय ऊपर गोलाकार जान, जय अति उत्तुंग दैदीप्यमान ॥२॥

जय ऊपर महा अति जगमगात, जयवज्रमयी नीचे सुहात।
जयलसै स्फटिकमय बीचमान, वैडूर्य मणि सम ऊर्ध्वजान ॥३॥

जय तापर कमल बने स्वरूप, जय तापर है कलशा अनूप।
जय दण्ड ध्वजा तापर सुहात, जय जगमग जगमग लहलहात ॥४॥

जय घंटा छत्र सु चमरजान, जयबँधी रतनमाला प्रमाण।
जय नाना मणिमय शोभकार, राजत सो मानस्तम्भसार ॥५॥

ता मूल सु चारों दिश निहार, जिन प्रतिमा सो है परम सार।
सुरगण पूजत जय जय उचार, कर नृत्य ताल स्वर को सम्हार ॥६॥

सननं सननं बाजे सितार, घननं घननं घन घंट धार।
द्रम द्रम द्रम द्रम बाजत मृदंग, कर ताल तबल अरु मूह चंग ॥७॥

छम छम छम छम नूपुर बजाय, क्षण भूमि क्षणक आकाश जाय।
तहां नाचत मघवा आप जान, तिहि शोभा को वरणें महान ॥८॥

इम नृत्य गान उत्सव महान, पूजनकर सुरपति हरष ठान।
जय पंच रतन मय अतिसुरंग, जय मानस्तम्भ दिपै अभंग ॥९॥

जय मानी जन सब मान छोड़, देखत नावत शिर हाथ जोड़।
जय ताते मानस्तम्भ नाम, सार्थक कीन्हों शोभाभिराम ॥१०॥

जय ऐसो मानस्तम्भ सार, सोहे चारों दिश जिन निहार।
जिनराज विभव देखत जु सार, महिमा वरनत पावे न पार ॥११॥

दोहा- श्री जिन मान स्तम्भ की गुणमाला सुविशाल।
जो नर पहिरे कण्ठ में सुर शिव पावे हाल ॥१२॥

ओं ह्रीं चतुर्दिक् स्थित मानस्तम्भ जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चात् शान्ति भक्ति एवं शांति पाठ पढकर पूजा का कार्य समाप्त करें। तदन्तर शांतिहवन एवम् पुण्याह बाचन करके शान्त्यष्टक शांति भक्ति, यज्ञ दीक्षा समापन शांति पाठ विसर्जन करके कार्य समाप्त करें।

इति मानस्तम्भ प्रतिष्ठा

आचार्य बिम्बप्रतिष्ठा विधि

पीछी और कमंडलु सहित पद्मासन या खड्गासन दिगम्बर (नग्न) रूप में आचार्य का प्रतिबिम्ब होना चाहिए ।

कम से कम ११००० (ग्यारह हजार) जाप आवश्यक है -

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा नमः सर्व विघ्न विनाशनाय स्वाहा"

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा नमः सर्वोपद्रव शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा"

दोनों मंत्र में से एक का जाप कराना चाहिए ।

मंगलाष्टक, दिग्बंधन, अंगरक्षा, शान्ति मंत्राराधन पूर्वक पात्रशुद्धि (सकलीकरण) इन्द्रप्रतिष्ठा, मण्डप प्रतिष्ठा, आदि क्रिया आवश्यक हैं ।

मण्डप में यागमण्डल विधान का मण्डल इस प्रकार बनाना चाहिए

प्रथम वलय में ॐ, द्वितीय वलय में १७, तृतीय वलय में ३६, चतुर्थ वलय में ४८ (ऋद्धियां) इस प्रकार १०१ अर्घ से यागमण्डल पूजा करें।

घटयात्रा करके यज्ञवेदी की शुद्धि करें और वेदी पर अर्हन्त भगवान की प्रतिमा विराजमान करें । प्रथम अभिषेक नित्य मह पूजा करें फिर यागमण्डल पूजा करना चाहिए। पश्चात् पीठिका आदि मंत्रों द्वारा हवन करके शांति मंत्र की १०८ आहुति करे । पंचकल्याणस्तोत्र, सिद्ध भक्ति, आचार्य भक्ति, तीर्थकर भक्ति, योगि भक्ति, समाधि भक्ति, चारित्र भक्ति पढ़ें ।

प्रथम दिन - मंगल ध्वजा स्थापन, घटयात्रा, यज्ञस्थलशुद्धि, जिनबिम्ब स्थापन, कलश एवं दीपक स्थापन और अभिषेक पूजा करें ।

द्वितीय दिन - प्रातः सकलीकरण, इन्द्र प्रतिष्ठा, नित्यमह अभिषेक पूजा, मध्यान्ह याग मण्डल विधानपूजा ।

तृतीय दिन - अभिषेक, नित्यमह पूजा, आचार्य प्रतिबिम्ब का अभिषेक, मातृकान्यास, मन्त्रन्यास, अधिवासना, नेत्रोन्मीलन, मुखोद्धाटन आदि विधि, पूजा विधि, शान्ति हवन, समाधि भक्ति, शान्ति भक्ति, विसर्जन ।

आचार्य प्रतिबिम्ब का अभिषेक -

स्नपन पीठ पर विराजमान कर पांच आचार के रूप में पांच कलशों से अभिषेक करना चाहिए।

"ओं ह्रीं आचार्य प्रतिकृतिं स्नपयामि"

इस मंत्र द्वारा इन्द्र अभिषेक करें। पश्चात् प्रक्षालन कर मातृका मत्र का १०८ बार जाप करें तदनंतर स्वर्णशलाका से अंकन्यास करें।

मंत्रन्यास [१]

ओं अं नमः ललाटे
ओं आं नमः मुखवृते
ओं इं नमः दक्षिण नेत्रे
ओं ई नमः वामनेत्रे
ओं उं नमः दक्षिण कर्णे
ओं ऊं नमः वामकर्णे
ओं ऋं नमः दक्षिण नासि
ओं ॠं नमः वामनासि
ओं लृं नमः दक्षिण गण्डे
ओं लॄं नमः वामगण्डे
ओं एं नमः अधः ओष्ठे
ओं ऐं नमः उर्ध्वओष्ठे
ओं ओं नमः अधो दन्ते
ओं औं नमः उर्ध्वदन्ते
ओं अं नमः मूर्ध्नि
ओं अः नमः जिह्वाग्रे
ओं कं नमः दक्षिणबाहुदण्डे
ओं खं नमः दक्षबाहुमध्यसंधौ
ओं गं नमः दक्षिणबाहुनाड़ीसंधौ
ओं घं नमः दक्षहस्तांगुलिसंधौ
ओं ङं नमः दक्षिणकराग्रे
ओं चं नमः वामबाहुदण्डे
ओं छं नमः वामबाहुमध्यसंधौ
ओं जं नमः वामहस्तनाड़ीसंधौ
ओं झं नमः हस्तांगुलिसंधौ
ओं ञं नमः वामहस्ताग्रे
ओं टं नमः दक्षिणपाद मूले (जंघा)
ओं ठं नमः दक्षिण पाद मूले (जंघा)
ओं डं नमः दक्षिणपाद गुल्फे
ओं ढंनमः दक्षिण पादगुल्फे
ओं णं नमः दक्षिणपदाग्रे
ओं तं नमः वामपाद मूले (जंघा)
ओं थं नमः वामपादमूले (जंघा)
ओं दं नमः वामपाद गुल्फे
ओं धं नमः वामपाद गुल्फे
ओं नं नमः वामपदाग्रे
ओं पं फं नमः दक्षिणपार्श्वादिकुक्ष्यंतं,
ओं बं भं नमः वामपार्श्वादिकुक्ष्यंतं
ओं मं नमः उदरे
ओं यं नमः हृदि
ओं रं नमः दक्षस्कंधे
ओं लं नमः ग्रीवायां
ओं वं नमः वामस्कंधे
ओं शं नमः हृदादिदक्षकरे
ओं षं नमः हृदादिवामकरे
ओं सं नमः हृदादिदक्षपादे
ओं हं नमः हृदादिवामपादे
ओं क्षं नमः हृदादिजठरे

(१) आ. ज. से., प्र. पा. पृष्ठ ११७ एवं २७२

नोट - तप कल्याणक में ४४३ पेज पर गणधर देव स्तवन है। उसको पढ़ना चाहिए। तदनंतर महर्षि पर्युपासन पढ़ें।

महर्षिपर्युपासन (१)

औषधी रसबलर्द्धि तपःस्थाः क्षेत्रबुद्धिकलिताः क्रिययाढ्याः।
विक्रियर्द्धिमहिताः प्रणिधानप्राप्तसंसृतितटामुनिपूज्याः ।।१।।

केवलावधिमनः प्रसराड्गाः बीजकोष्ठमतिभाजनशुद्धाः।
वीतरागमदमत्सरभावा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ।।२।।

यद्वचोऽमृतमहानदमग्ना जन्मदाहपरितापमपास्य।
निर्वृवुः सुखसमाजतटेषु बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ।।३।।

श्रोतृभिन्नमतयः पदपंथाः दृष्टसंसृतिपदार्थविभावाः।
तत्त्वसंङ्कलितधर्म्यसुशुक्ला बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ।।४।।

स्पर्शनश्रवणलोकनबुद्धाः घ्राणसंस्थरसनोपकृता ये।
दूरतोऽप्यनुभवं हि समाप्ता बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ।।५।।

छिन्न स्वर्य विधिना चतुर्दशदिक्सुपूर्वमतिनानिमित्तगा।
वादिबुद्धिकृतिनो मतिश्रमा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ।।६।।

अष्ट धोक्तदशधाभिदयाये बुद्धिवृद्धिसहिताः शिवयात्राः।
विण्मलादिगदहापनदेहा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ।।७।।

दृष्टवक्त्रमनसां विषभक्तिप्रीणिताः श्रुतसरित्पतिपुष्टाः।
लोकमङ्गलिषु स न्यसिता ये बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ।।८।।

वाक्यमानसबलेन समग्राउग्रदीप्ततपसस्त्रिकगुप्ताः।
घोरवीर्यगुणभावितचित्ता बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ।।९।।

दुग्धमध्वमृतभोजन कृत्त्वा सर्पिरासविवचोऽभिनियुक्ता।
अण्वलाघववशित्वविदर्भा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ।।१०।।

कामरूपगुरु ता प्रतिसर्पान्तर्द्ध्य हीनवसतिग्रहयुक्ताः।
चारणाजलफलाग्निकसूत्रा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ।।११।

आत्मशक्तिविभवागतसर्वपौद्गलीयममताश्चुतवस्त्राः।
सत्परीषहभटार्दनदास्ते बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ।।१२।।

ओं ह्रीं अष्टप्रकारसकलत्रर्द्धिप्राप्त मुनिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(१) आ. ल. सं., प्र. पा. श्लोक २९० से ३०१

पूजा (१)

ये येऽनगारा ऋषयो यतीन्द्रा मुनीश्वरा भव्यभवद् व्यतीताः ।

तेषां समेषां पदपंकजानि संपूजयामो गुणशीलसिद्ध्यै ॥

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र पवित्रतरगात्र चतुरशीतिलक्षगुणगणधर चरणा आगच्छत आगच्छत संवौषट्।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र पवित्रतरगात्र चतुरशीतिलक्षगुणगणधर चरणा अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ ठः।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र पवित्रतरगात्र चतुरशीतिलक्षगुणगणधर चरणा मम रत्नत्रयशुद्धिं कुरुत कुरुत अत्र मम सन्निहितो भवत भवत वषट्।

सुगंधिशीतलैः स्वच्छैः स्वादुभिर्विमलैर्जलैः ।

सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ।

ओं ह्रीं गणधरचरणेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सारकर्पूरकाश्मीरकलितैश्चन्दनद्रवै ।

सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ।

ओं ह्रीं गणधरचरणेभ्यः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अक्षतैरक्षतैः सूक्ष्मैर्धवलक्षेत्रक्षसन्निभैः

सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ।

ओं ह्रीं गणधरचरणेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

पुष्पैः प्रसारदामोदाहृतपुष्पंधयावृतैः

सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ।

ओं ह्रीं गणधरचरणेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

दध्योदनव्याघृतापूपपायसव्यञ्जनान्वितैः

सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ।

ओं ह्रीं गणधर चरणेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्पूरप्रभवैर्दीपैर्दीप्त्या दीपितदिङ्मुखैः

सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ।

ओं ह्रीं गणधरचरणेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

दशांगधूपसद्धूमैर्दशाशापूर्णसौरभैः

सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ।

ओं ह्रीं गणधरचरणेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

---

(१) ब्र शी प्र. प्र सा. सं. पृष्ठ १७८ से १७९

चोचमोचाम्रजबीरफलपूगादिसत्फलैः
सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे।

ओं ह्रीं गणधरचरणेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

गुणमणिगणसिन्धून्भव्यलोकैकबन्धून्
प्रकटितनिजमार्गान्ध्वस्तमिथ्यात्वमार्गान्
परिचितनिजतत्त्वान्पालिताशेषसत्वान्
शमरसजितचन्द्रानर्घ्ययामो मुनीन्द्रान्

ओं ह्रीं गणधरचरणेभ्यः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

स्तवन[1]

ये सर्वतीर्थप्रभवा गणेन्द्राः सप्तर्द्धयो ज्ञानचतुष्टयाढ्याः।
तेषां पदाब्जानि जगद्धितानां वचो मनो मूर्धसु धारयामः ॥१॥

तपो बलाक्षीणरसौषधर्द्धीन् विज्ञानऋद्धीनपि विक्रियर्द्धीन्।
सप्तर्द्धियुक्तानखिलानृषीन्द्रान्स्मरामि वन्दे प्रणमामि नित्यम् ॥२॥

सर्वेषु तीर्थेषु तदन्तरेषु सप्तर्षयो ये महिता बभूवुः।
भवांबुधेःपार मिताः कृतार्था भवन्तु नस्ते मुनयः प्रसन्नाः ॥३॥

ये केवलीन्द्राः श्रुतकेवलीन्द्राः ये शिक्षकास्तुर्यतृतीयबोधाः।
स विक्रिया ये वर वादिनश्च सप्तर्षिसंज्ञानिह तान्प्रवन्दे ॥४॥

प्रमत्तमुख्येषु पदेषु सार्धद्वीपद्वये ये युगपद्भवन्ति।
उत्कर्षतस्तान्नवकोटिसंख्यान्वन्दे त्रिसंख्यारहितान्मुनीन्द्रान् ॥५॥

(यह पढ़कर आचार्य प्रतिबिम्ब का स्पर्श कर पुष्पांजलि देवें) तत्पश्चात् भक्तियाँ पढ़कर प्रतिमा पर पुष्पों द्वारा अधिवासनादिकी की क्रिया करें।

१ प्रतिमा पर पुष्प क्षेपण कर पंचाचार स्थापित करें

ओं हूं दर्शनाचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः।
ओं हूं ज्ञानाचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः।
ओं हूं चारित्राचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः।
ओं हूं तपाचार गुण भूषिताय आचार्याय नमः।
ओं हूं वीर्याचार गुण भूषिताय आचार्याय नमः।

---

[1] प्र. शी. प्र. प्र. स. पृष्ठ १७९

१ तिलक दान विधि

ओं ह्रूं णमो आइरियाणं धर्माचार्याधिपतये नमः ।
स्वर्ण शलाका से केशर लेकर नाभि मे ह्रूं लिखें ।
ओं ह्रूं णमो आइरियाणं मुखवस्त्रं ददामि - पर्दा लगाकर क्रिया करे ।

(२) अधिवासना

ओं ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्य परमेष्ठिन् अत्र एहि एहि संवौषट् ।
ओं ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्य परमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ओं ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्य परमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।
(अष्ट द्रव्य चढावें)
ओं ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्य परमेष्ठिन् जलं गृहाण गृहाण स्वाहा ।
ओं ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्य परमेष्ठिन् चन्दनं गृहाण गृहाण स्वाहा ।
ओं ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्य परमेष्ठिन् अक्षतं गृहाण गृहाण स्वाहा ।
ओं ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्य परमेष्ठिन् पुष्पं गृहाण गृहाण स्वाहा ।
ओं ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्य परमेष्ठिन् नैवेद्यं गृहाण गृहाण स्वाहा ।
ओं ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्य परमेष्ठिन् दीपं गृहाण गृहाण स्वाहा ।
ओं ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्य परमेष्ठिन् धूपं गृहाण गृहाण स्वाहा ।
ओं ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्य परमेष्ठिन् फलं गृहाण गृहाण स्वाहा ।
ओं ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्य परमेष्ठिन् अर्घ गृहाण गृहाण स्वाहा ।
(निम्न मंत्र का १०८ बार जाप करे)
ओं ह्रूं णमो आइरियाणं धर्माचार्याधिपतये नमः ।

३ मुखोद्घाटन विधि

ओं ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्य मुखवस्त्रं अपनयामि । (परदा अलग कर दे)

४ नयनोन्मीलन विधि

नीचे लिखे मंत्र का १०८ बार जाप करना
ओं ह्रूं आचार्य प्रबुद्ध स्वधातृ जन मनांसि पुनीहि पुनीहि स्वाहा ।
(इसी मत्र को पढकर स्वर्ण शलाका से केशर लेकर नयनोन्मीलन की क्रिया करे)

आचार्य-पूजा

गीताछन्द - मुनिराज आचारज बड़े शिवमार्ग को दर्शावते
जो पालते आचार को वह अन्य को पलवावते ।
जो जैन आगम तत्त्व जाने स्व पर भेद लखावते
निज आत्म में रमते सदा निज ध्यान सम्यक् भावते ॥

ओं हूं श्री आचार्य परमेष्ठिन् अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ओं हूं श्री आचार्य परमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ओं हूं श्री आचार्य परमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

चालछन्द - भरि सलिल महाशुचिझारी, दे तीन धार हितकारी ।
पद आचारज सुखकारी, पूजत त्रय रोग निवारी ॥
ओं हूं आचार्य परमेष्ठिने जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चन्दन घिस केशर लाऊं, मन में बहु चाव धराऊं ।
आचारज हैं गुण दाई, पूजत भव ताप मिटाई ॥ **चन्दनम्**

अक्षत ले दीर्घ अखण्डे, उज्ज्वल शशि सम द्युतिमण्डे ।
गुरुपाद जजों मनलाई, अक्षय पद हो सुख दाई ॥ **अक्षतम्**

ले फूल सुवर्ण सुहाई, बहु गंध युतं सुखदाई ।
गुरु पूज काम दुखदाई, भयभीत होय नशजाई ॥ **पुष्पम्**

ताजे पकवान बनाऊं, आदर युत गुरु ढिंग लाऊं ।
पूजत क्षुद रोग समाऊं, अमृत निज ले सुख पाऊं ॥ **नैवेद्यम्**

ले दीपक तम हरतारा, बहु ज्योति प्रगट कर तारा ।
गुरु पाद पूज्य सुख पाऊं, भ्रमतम सब तुर्त नशाऊं ॥ **दीपम्**

बहु धूप सुगंधित लाऊं, धूपायन माहि खिवाऊं ।
आचारज जग हितकारी, जल जांय कर्म दुखकारी ॥ **धूपम्**

बहु दाख बदाम छुहारा, पिस्ता अखरोट सम्हारा ।
गुरुपाद जजें हित पावें, शिव वनिता को परिणावे ॥ **फलम्**

शुचि द्रव्य जु आठ मिलाऊं, करि अर्घ महा सुख पाऊं ।
गुरु चरनन शीश नवाऊं, जासे सब दोष मिटाऊं ॥ **अर्घम्**

जयमाला (सृग्विणी छन्द)

जय कृपा कन्द आनंद रूपीसदा, आत्मगुण वेदते हैं न तृष्णा कदा ।
धन्य आचार्य हैं साधु रक्षा करें, बोध दे दण्ड दे तत्त्व शिक्षा करें ।।१।।

सात तत्त्वार्थ को श्रद्धते भाव से, तत्त्व शुद्धात्म को चाहते चाव से ।
दर्शनाचार मे लीन सुख पावते, अन्य को बोध ते दर्श झलकावते ।।२।।

शास्त्र को जानते ज्ञान उपजावते, सप्तभंगी सुनय तत्त्व को साधते ।
मोह मिथ्यात्व के हेतु को टालते, बोध दे ज्ञान को लोक विस्तारते ।।३।।

व्रत महापालते गुप्त उर धारते, पंच समितीन को ध्यान से पालते ।
आत्म में लीन हो ध्यान दृढ़ धारते, सत्य आचार को लोक विस्तारते ।।४।।

तपमहां द्वादशं पालते भावसे, अनशनं आदि को धारते चाव से ।
सेव कर साधुजन मान को टालते, भव्य को मार्ग तप मे सदा लावते ।।५।।

वीर्य को गुप्ति रखते नहीं हैं यती, कार्य उत्साह से चूकते नहिं रती ।
आत्मशक्ति को दिन दिन अधिक पालते, अन्य को बोध दे वीर्य विस्तारते ।।।६।।

पंच आचार ये पालते भाव से, अन्य साधून को बोधते चाव से ।
निश्चयं आत्मरस पीवते प्रेम से, धन्य आचार्य हैं चालते नेम से ।।७।।

ओं ह्रूं श्री आचार्य परमेष्ठिने जयमालार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा - जो पूजे आचार्य को मन एकाग्र कराय ।
सो पावे निज निधि सही भव सागर तिर जाय **।।इत्याशीर्वादः।।**

फिर आचार्य भक्ति पढ के श्लोक पढकर चारो ओर पुष्प क्षेपें

प्राज्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुतरां जायतां दीर्घमायु
र्भूयादभूयांश्चभोगैः सुजन परिजनैरस्तात्सदारोग्यमग्र्यम् ।
कीर्ति र्व्याप्ताखिलाशा प्रभवतु भवतान्निः प्रतीपः प्रतापः
क्षिप्रं स्वर्मोक्ष लक्ष्मी र्भवतु तनुभृतां धर्म सूरिप्रसादात् ।।

तदन्तर शांति भक्ति पढ़े ।

पूजा विसर्जन पश्चात् शान्ति हवन मे पीठिका आदि यंत्रो से हवन करके जाप मन्त्र की दशांश आहुति, पुण्याहवाचन, शांत्याष्टक, शांति भक्ति, शांति पाठ, विसर्जन कर आचार्य प्रतिमा की प्रतिष्ठा पूर्ण करें ।

उपाध्याय बिम्बप्रतिष्ठा विधि

उपाध्याय बिम्ब मुनिराजसमान पीछी कमण्डलु सहित हो। हाथ में या अग्रभाग में शास्त्र होना चाहिए। प्रतिष्ठा विधि आचार्य प्रतिष्ठा के समान है, मंगलाष्टक, दिग्बंधन अंगरक्षा, शान्ति मंत्राराधन कर पात्रशुद्धि, इन्द्र प्रतिष्ठा, मण्डप प्रतिष्ठा आदि आवश्यक क्रियायें करें।

यागमण्डल विधान मांडना इस प्रकार बनाना चाहिए। बीच में "ॐ" बनाना फिर १७ कोठे का वलय फिर २५ कोठा का फिर ४८ कोठा का बलय बनावें फिर यागमण्डल पूजा करें।

पंचकल्याणस्तोत्र, सिद्ध, आचार्य, चारित्र, तीर्थंकर, योगि, समाधि भक्ति पढ़ें। अन्य विधि आचार्य बिम्ब प्रतिष्ठा के अनुसार करें। उपाध्याय बिम्ब का अभिषेक चार कलशों द्वारा करावें १ प्रथमानुयोग २ करणानुयोग ३ चरणानुयोग ४ द्रव्यानुयोग रूप में चार कलश लेना और इस मंत्र से अभिषेक करना।

'ओं ह्रीं उपाध्याय प्रतिकृतिं स्नपयामि' प्रक्षालन कर मातृका मंत्र का १०८ बार जाप करें फिर स्वर्ण शलाका से अंकन्यास करें।

मातृका मंत्र

ओं नमोऽर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः कखगघङ, चछजझञ, टठडढण, तथदधन, पफबभम, यरलव शषसह क्लीं ह्रीं क्रौं स्वाहा
(१०८ बार जाप करें)

तिलक दान विधि

ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं पाठकायनमः
(१०८ बार जाप करें)

चारित्र भक्ति पढ़ें और ऊपर का मंत्र पढ़ता हुआ स्वर्ण शलाका से नाभि में "ह्रौं" लिखें।

ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं मुखवस्त्रं ददामि
(पर्दा लगाकर क्रिया करें।)

अधिवासना विधि

ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिन् अत्र एहि एहि संवौषट् ।

ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिन् मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिन् जलं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिन् चन्दनं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिन् अक्षतं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिन् पुष्पं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिन् नैवेद्यं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिन् दीपं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिन् धूपं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिन् फलं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं उपाध्याय परमेष्ठिन् अर्घं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

मुखोद्घाटन

ओं ह्रौं णमो उवज्झायाणं उपाध्याय मुखवस्त्रं अपनयामि । (पर्दा अलग करें)

नयनोन्मीलन

ओं ह्रौं उपाध्याय प्रबुद्धस्वधातृजन मनांसि पुनीहि पुनीहि स्वाहा ।

(१०८ बार जाप करें)

फिर इसी मंत्र द्वारा केशर को स्वर्ण शलाका से लेकर नयनोन्मीलन की क्रिया करें ।

उपाध्याय - पूजा

गीतका छन्द- मुनिराज पाठक तत्त्वज्ञानी तत्त्व शिक्षा देत है,
बहु शिष्य पढ़त जिनागम अज्ञान तम हरलेत हैं ।
अनुयोग चारों जानते अध्यात्म विद्या नाथ है,
चारित्र साधु सुपालते बहु साधु रहते साथ हैं ।।

ओं ह्रौं उपाध्याय परमेष्ठिन् अत्र अवतर अवतर, तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (छन्दमालिनी)

समरस समचोखा ल्याय पानी सुसारं, सुवरण झारी ले भवगदं सर्व टारं ।
कर शुचि मनपूजू पाठकं तत्त्वधारी, नशत सब कुबोधं होय आनंदभारी ।
ओं ह्रौं उपाध्याय परमेष्ठिने जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

बहु सुरभिधराई चन्दनं लायनीके, भवताप बुझाई अमृतं शान्त पीके ।
कर शुचि मन पूजूं पाठकं तत्त्वधारी, नशत सब कुबोधं होय आनंद भारी ।।
ओं ह्रौं उपाध्याय परमेष्ठिने चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर में अक्षत ले दीर्घ अतिश्वेत वर्ण, अखय गुण प्रचारी सर्व सन्देह हर्ण ।
कर शुचिमन पूजू पाठक तत्त्वधारी, नशत सब कुबोधं होय आनंद भारी ।।
ओं ह्रौं उपाध्याय परमेष्ठिने अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुमन सुगधित ले पंचधा वर्णधारी, दुख काम मिटावे शीलधर्म प्रचारी ।
कर शुचिमन पूजूं पाठक तत्त्वधारी, नशत सब कुबोधं होय आनंद भारी ।।
ओं ह्रौं उपाध्याय परमेष्ठिने पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

चरुकरके ताजे शुद्ध मुनि अग्रधारूं क्षुधरोग नशाऊं तृप्तता गुण सम्हारूं ।
कर शुचिमन पूजूं पाठकं तत्त्वधारी, नशत सब कुबोधं होय आनंद भारी ।।
ओं ह्रौं उपाध्याय परमेष्ठिने नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

करदीप सजोऊ अंधकारं नशाई, ममोह तिमिर सब एक क्षण में पलाई ।
कर शुचिमन पूजूं पाठक तत्त्वधारी, नशत सब कुबोधं होय आनंद भारी ।।
ओं ह्रौं उपाध्याय परमेष्ठिने दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

बहु सुरभि घराई धूप अग्नि जलाई, मम आठ कर्म सब भस्म हों साधु ध्याई ।
कर शुचिमन पूजूं पाठकं तत्त्वधारी, नशत सब कुबोधं होय आनंद भारी ।।
ओं ह्रौं उपाध्याय परमेष्ठिने धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ले शुचि फल नीके दाख बादाम पिस्ता, जासे शिव फल हो नाश संसार रस्ता ।
कर शुचिमन पूजूं पाठकं तत्त्वधारी, नशत सब कुबोधं होय आनंद भारी ।।
ओं ह्रौं उपाध्याय परमेष्ठिने फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ले ले अठ द्रव्यं शुद्ध अर्घ बनाऊ, अठकर्म नशा के अष्ठगुण सार पाऊं ।
कर शुचिमन पूजूं पाठकं तत्त्वधारी, नशत सब कुबोधं होय आनंद भारी ।।
ओं ह्रौं उपाध्याय परमेष्ठिने अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाल (भुजंगप्रयात छन्द)

गुणानन्द धारी उपाध्याय प्यारे, सुसाधुचरित्रं धरें निर्विकारे ।
परम साम्यधारी सभी दोषटारी, रतनत्रय सम्हारी निजातम विचारी ॥१॥

एकादश सुअंगं पढ़ें तत्त्व जानें, चतुर्दश सुपूरव लखें सत् पिछानें ।
सकल श्रुत विचारे परम ज्ञानधारी, लखें आत्म को निश्चयं निर्विकारी ॥२॥

चतुर्बीस तीर्थकरों के चरित्रं, सुचक्री सुबलदेव जीवन पवित्रं ।
हरी प्रतिहरी वृत्त को जानते हैं, सु अनुयोग प्रथमं जु पहिचानते हैं ॥३॥

त्रिलोकं लखें सर्व रचना पिछानें, गुणस्थान मार्गण करम भेद जानें ।
करण सूत्र से सर्व गिनती लखानें, सु अनुयोग करणं भलीभांति माने ॥॥४॥

यती का सु आचार सब भेद पाया, गृहीभेद चारित एकादश बताया ।
क्रियाकाण्ड व्यवहार को जानते हैं, सुचरणानुयोगं सकल मानते हैं ॥५॥

पदारथ नवम तत्त्व शुभ सात ज्ञानी, छहों द्रव्य पंचास्तिकाय पिछानी ।
भली भांति आतम परमतत्त्वमानें, सुद्रव्यानुयोगं सकल भेद जाने ॥६॥

अनेकांत वस्तु सु स्याद्वाद ठाने, तिसे जान समता हृदय माहि आने ।
नहीं है विरोधं नही कोई खेद, परम तत्त्व जाने लखे सर्व भेदं ॥७॥

दयासागरं पाठकं भक्ति करनी, पढ़ावे यती सीख संसार तरणी ।
नही खेद मानें परम हर्ष ठानें, सकल ज्ञान दे आप सम साधु आने ॥८॥

नमूं पाद सुखदाय उवज्झायजी के, लहूं ज्ञान सुन्दर करुंकर्म फीके ।
सु छाया गुरुकी परम रक्षिका है, जजूं मन लगाई परम दक्षिका है ॥९॥ अर्घं

सोरठा - पाठक पूजूं पाय पाठ पठन पटुता कबै
गुन गाऊं नितगाय, मंगल हो अघ सब नशै ॥१०॥ इत्याशीर्वादः

प्राज्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुतरां जायतां दीर्घमायु -
र्भूयाद् भूयांश्च भोगाः स्वजनपरिजनैस्तात्सदारोग्यमग्र्यम् ।
कीर्तिर्व्याप्ताखिलाशा प्रभवतु भवतान्निः प्रतीपः प्रतापः ।
क्षिप्रं स्वर्मोक्षलक्ष्मीर्भवतु तनुभृतां पाठकेन्द्रप्रसादात् ॥ (पुष्प क्षेपण करे)

पूजा के पश्चात् शान्ति हवन विधि करना पीठिका आदि मंत्रों से आहुति कर जप मंत्र की दशांश आहुति करें। फिर पुण्याह वाचन शान्ति भक्ति शान्ति पाठ विसर्जन करें।

साधु बिम्बप्रतिष्ठा विधि

पीछी कमण्डलु सहित ध्यानमुद्रा मय साधु का बिम्ब बनावें।

प्रतिष्ठा विधि आचार्य एव उपाध्याय की प्रतिष्ठा के समान साधु बिम्ब की करें। मंगलाष्टक, दिग्बंधन, अगरक्षा शांतिमंत्राराधन कर पात्रशुद्धि, इन्द्रप्रतिष्ठा यज्ञवेदीशुद्धि, मण्डप प्रतिष्ठा आदि आवश्यक क्रियायें करें।

यागमण्डल विधानका मांडना इस प्रकार बनावें। बीच में ॐ बनाकर फिर १७ कोठे का वलय फिर २८ कोठे अन्त में ४८ कोठे का वलय बनावें और यागमण्डल विधान की पूजा करें।

पंचकल्याण स्तोत्र, सिद्ध भक्ति, आचार्य भक्ति, चारित्र भक्ति, तीर्थकर, योगि भक्ति समाधि भक्ति पाठ करना चाहिए। साधु बिम्ब का अभिषेक रत्नत्रय स्वरूप तीन कलशो से करना।

"ओं ह्रीं साधु प्रतिकृतिं स्नपयामि"

इस मंत्र से अभिषेक करे फिर प्रक्षालन कर मातृका मंत्र का १०८ बार जाप करें और आचार्य प्रतिष्ठा विधि अनुसार प्रतिबिम्ब पर अंकन्यास करें।

मंत्र - ओं नमोऽर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ लॄ ए ऐ ओ औ अं अः कखगघङ, चछजझञ, टठडढण, तथदधन, पफबभम, यरलव, शषसह क्ली ह्रीं क्रौं स्वाहा
(१०८ बार जाप करे।)

मंत्रन्यास

ओं ह्रः सम्यग्दर्शन भूषिताय साधवे नमः, ओं ह्रः सम्यग्ज्ञान भूषिताय साधवे नमः, ओं ह्रः सम्यग्चारित्र भूषिताय साधवे नमः।

प्रत्येक मंत्र के साथ पुष्प क्षेपण कर गुण स्थापित करें।

तिलकदान

ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं साधवे नमः।

(१०८ बार जाप करें)

तत्पश्चात् स्वर्ण शलाका से केशर द्वारा नाभि में "ह्रः" लिखें।

ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं मुखवस्त्रं ददामि।

पर्दा लगाकर क्रिया करें।

अधिवासना

ओं ह्रः णमोलोए सव्वसाहूणं साधुपरमेष्ठिन् अत्रएहि एहि संवौषट् ।

अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं साधु परमेष्ठिन् जलं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं साधु परमेष्ठिन् चन्दनं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं साधु परमेष्ठिन् अक्षतं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं साधु परमेष्ठिन् पुष्पं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं साधु परमेष्ठिन् नैवेद्यं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं साधु परमेष्ठिन् दीपं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं साधु परमेष्ठिन् धूपं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं साधु परमेष्ठिन् फलं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं साधु परमेष्ठिन् अर्घं गृहाण गृहाण स्वाहा ।

नयनोन्मीलन

ओं ह्रः साधु प्रबुद्धस्वधातृजनमनांसि पुनीहि पुनीहि स्वाहा ।

(१०८ बार जाप करे)

इसीमंत्र द्वारा केशर से स्वर्णशलाका द्वारा नयनोन्मीलन की क्रिया करें ।

ओं ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं साधुपरमेष्ठिन् मुखवस्त्रं अपनयामि ।

(परदा अलग कर देवे)

साधु - परमेष्ठी पूजा [१]

गीतकाछन्द- मुनिराज हैं गुण धाम जग में मोक्ष मारग साधते,
त्रयरत्नधारी निज विचारी ज्ञान आसन मांडते ।
तप करत द्वादश भेद अनुपम सहत हैं उपसर्ग को,
तिन चरण पूजू थाप उर में लहूं मैं अपवर्ग को ।।

ओं ह्रः श्रीसाधु परमेष्ठिन् अत्र अवतर अवतर, तिष्ठ तिष्ठ, सन्निधिकरण ।

(१) ब्र. शी. प्र. पा. सार. सं. पृष्ठ १८५-१८६

अष्टक (बंसततिलकाछन्द)

पानी महान अति शीतल कुंभ धारा, धारा सुदेत मृत जन्म जरा निवारा ।
पूजूं मुनीन्द्र चरणा शुचि भावकीने, पाऊं निजात्म सुखदा वसु कर्म हीने ।।
ओं ह्रः श्रीसाधु परमेष्ठिने जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

केशर मिलाय शुभचन्दन अग्रधारूं आतापभव शमन थाप स्वगुण सम्हारूं ।
पूजूं मुनीन्द्र चरणा शुचि भाव कीने, पाऊं निजात्म सुखदा वसुकर्म हीने ।।
ओं ह्रः श्रीसाधु परमेष्ठिने चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

चन्दा समान अतिश्वेत सुगंध अक्षत, धारुंसुथाल पाऊं गुण सार अक्षत
पूजूं मुनीन्द्र चरणा शुचि भाव कीने, पाऊं निजात्म सुखदा वसुकर्म हीने ।।
ओं ह्रः श्रीसाधु परमेष्ठिने अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

नीरज गुलाब बेला चंपा सुहाई, बहु पुष्पधार निज काम व्यथा नशाई ।
पूजूं मुनीन्द्र चरणा शुचि भाव कीने, पाऊं निजात्म सुखदा वसुकर्म हीने ।।
ओं ह्रः श्रीसाधु परमेष्ठिने पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

ताजे पवित्र पकवान सुल्यायथारी, जासे मिटाय क्षुदरोग स्वकाज हारी ।
पूजूं मुनीन्द्र चरणा शुचि भाव कीने, पाऊं निजात्म सुखदा वसुकर्म हीने ।।
ओं ह्रः श्रीसाधु परमेष्ठिने नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपक जलाय घृतसार कपूर लाऊं, मम मोह सर्व अंधियार तुरत मिटाऊं
पूजूं मुनीन्द्र चरणा शुचि भाव कीने, पाऊं निजात्म सुखदा वसुकर्म हीने ।।
ओं ह्रः श्रीसाधु परमेष्ठिने दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूपादि खेय शुचि अग्नि धुआं प्रसारा, आठों महान मलकर्म जलाय डारा ।
पूजूं मुनीन्द्र चरणा शुचि भाव कीने, पाऊं निजात्म सुखदा वसुकर्म हीने ।।
ओं ह्रः श्रीसाधु परमेष्ठिने धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

पिस्ताबदाम अखरोट सुफल धराये, जासे सुमोक्ष फल आप नजीक आये
पूजूं मुनीन्द्र चरणा शुचि भाव कीने, पाऊं निजात्म सुखदा वसुकर्म हीने ।।
ओं ह्रः श्रीसाधु परमेष्ठिने फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल चन्दनादि वसु द्रव्य मिलाय थारी, संसार पार झट होय स्वगुण विचारी ।
पूजूं मुनीन्द्र चरणा शुचि भाव कीने, पाऊं निजात्म सुखदा वसुकर्म हीने ।।
ओं ह्रः श्रीसाधु परमेष्ठिने अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाल (त्रोटक छन्द)

जय साधु सदागुण वास नमो, अनगार सुसत्य सुवास नमो ।
भव सागर तारनपोत नमों, निज मे धारत निजजोति नमों ॥१॥

जय सप्त तत्त्व रुचिकार नमो, आपा पर भेद विचारनमों ।
निज आत्म सुश्रद्धाकारनमों, सम्यग्दर्शन अधिकार नमो ॥२॥

जय निज आगम बुधधार नमो, ज्ञायक निश्चय व्यवहार नमो ।
निज आत्म पदारथ ज्ञान नमों, धारे नित सम्यग्ज्ञान नमों ॥३॥

जय पंच महाव्रत धार नमो, समिती गुप्ती प्रतिपाल नमो ।
निज साम्य भाव झलकाय नमो, सम्यक् चारित उर धार नमों ॥४॥

निज आत्म समाधि प्रकाश नमो, सब इन्द्रिय आश निराश नमों ।
चहु दुष्ट कषाय विनाश नमो, निज शांत भाव हुल्लास नमों ॥५॥

जय साधु सु साधत आत्मबली, जय साधु सु अनुभव सार रली ।
जय साधु परम उपकारी है, सयम सामायिक धारी हैं ॥६॥

ओं ह्रः साधुपरमेष्ठिने जयमालार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा- वन्दत साधु महन्त को, पूजत गुण अविकार,
निजानंद पावे सुधी, खुलजावे शिवद्वार । **इत्याशीर्वादः ।**

प्राज्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुतरां जायतां दीर्घमायुः,
भूयाद्भूयांश्च भोगाः स्वजनपरिजनैस्तात्सदारोग्यमग्र्यम् ।
कीर्तिर्व्याप्ताखिलाशा प्रभवतु भवतान्निः प्रतीपः प्रतापः,
क्षिप्रं स्वर्मोक्षलक्ष्मीर्भवतु तनुभृतां सर्वसाधुप्रसादात् ॥

यह पढकर सर्वत्र पुष्प क्षेपण करें । पश्चात् शांति हवन करें जप मंत्र की आहुति पुण्याहवाचन शान्ति भक्ति शांतिपाठ विसर्जन करके प्रतिष्ठा विधि समाप्त करें ।

चरणपादुका प्रतिष्ठाविधि

जहाँ तीर्थकरों के पंचकल्याणक होते हैं वहां जिनबिम्ब अथवा चरणचिन्ह स्थापित किए जाते हैं। उनकी प्रतिष्ठा हेतु मंगलाष्टक, सकलीकरण, दिग्बंधन, रक्षामंत्र, शान्तिमंत्राराधन कर इन्द्र प्रतिष्ठा आदि क्रिया करें। जिनालय या मण्डप में जहां प्रतिष्ठा करना हो उस स्थान की शुद्धि करें। शान्ति मंत्र का ग्यारह हजार जाप करें। यागमण्डल से १७ वलय वाली पूजा करें। शान्तिहवन, पुण्याहवाचन, भक्तियाँ आदि करना चाहिए। चरणपादुका का अभिषेक करें। फिर १०८ बार णमोकार मंत्र का जाप करें।

ओं ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तं कृपालुसन्तं श्री वृषभादि महावीर पर्यन्तं चतुर्विंशति तीर्थंकर परमदेवं मध्यलोके जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे भारतदेशे.....प्रान्ते .... स्थाने (नगरे) .... मन्दिरे .... वीरनिर्वाणसंवत्सरे मासानामुत्तमेमासे ...... मासे ......पक्षे ... पुण्यतिथौ ..... वासरे चरणपादुकां स्थापनं करोमि।

(या तप स्थाने, ज्ञान स्थाने, निर्वाण स्थाने, स्थापनं करोमि) फिर अर्हन्त के चरणों पर ओं ह्रां, आचार्य के चरणो पर ओं ह्रूं, उपाध्याय के चरणों पर ओं ह्रौं तथा साधु के चरणों पर ओ ह्रः लिखकर १०८ बार जाप्य करें तत्पश्चात् सिद्ध, आचार्य, निर्वाण भक्तियां पढ़ें। जिन तीर्थंकर की चरणपादुका हो उन तीर्थंकर की पूजा और यदि आचार्य, उपाध्याय एवं साधु की चरण पादुका हो तो उनकी प्रतिष्ठा उन ही जैसी विधि अनुसार करें। पश्चात् हवन शान्ति पाठ विसर्जन क्रिया करके कार्य समाप्त करें।

तदनन्तर हवन शान्त्यष्टक शान्ति भक्ति करके विसर्जन कर कार्य समाप्त करें।

यंत्रों की प्राणप्रतिष्ठा (१)

मंगलाष्टक, दिग्बंधन, रक्षामंत्र एवं शान्तिमंत्राराधन करके सिद्धभक्ति पढ़ें।

पश्चात् जिन यंत्रों की प्रतिष्ठा करना हो उन्हे सर्वौषधि के जल से शुद्ध कर निम्न मंत्र पढ़ कर केशर लगाना चाहिए।

ओं ह्रां ह्री ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय स्वाहा।

फिर जल से अभिषेक करें (अभिषेक मंत्र)

ओं ह्रीं अर्ह श्री जिनाय परमजिनाय नमः यंत्रं स्नपयामि

(२१ बार मंत्रोच्चारण कर जल की धारा देवे)

शान्तिधारा मंत्र

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं, चत्तारि मंगलं - अरिहंतामंगल, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं, चत्तारिलोगुतमा - अरिहंतालोगुतमा, सिद्धा लोगुतमा, साहूलोगुतमा, केवलिपण्णत्तो धम्मोलोगुत्तमो, चत्तारि सरणं पव्वज्जामि - अरिहंतेसरणं पव्वज्जामि, सिद्धेसरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पवज्जामि। शान्तिरस्तु, शिवमस्तु, जयोऽस्तु, नित्यमारोग्यमस्तु सर्वेषां सुखमस्तु, पुष्टिरस्तु, तुष्टिरस्तु, समृद्धिरस्तु कल्याणमस्तु ओं ह्री श्री क्लीं सर्व शान्तिर्भवतु, शान्तिर्भवतु, शान्तिर्भवतु।

ओं परमहंसाय नमः हं सः हं सः हं हं हें हैं हौं ह्रः असिआउसा सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रेभ्यो नमः। (यह मंत्र १९ बार पढते हुए पुष्प क्षेपण करना)

प्राणप्रतिष्ठा मंत्र

ओं आं क्रौं ह्रीं अ सि आ उ सा अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व, श ष स ह आयुष्यप्राणाः अमुष्य जीवाः इह स्थितोः अमुष्य यंत्र मंत्र तंत्रस्य सर्वेन्द्रियाणि काय वाङ् मनश्चक्षुश्रोंत्रघ्राण प्राणाः (यंत्र का नाम) इहैवायन्तु, अत्र सुखं चिरं तिष्ठन्तु।

पश्चात् ९ बार णमोकार मंत्र पढ़ें।

इस प्रकार शुद्धि करके यंत्रों की पूजा (अगले पेज से) करके उपयोग मे लाना चाहिये।

---

(१) आचार्य महावीर कीर्ति स्मृति ग्रंथ

यंत्रपूजा

करोमि विघ्नौघविनाशहेतु, आवाहनं स्थापनसन्निधानं ।
यंत्रस्य पूजा विधयोघ सर्वे, रक्षाभिधानस्य मनो मुहूर्त ।।

ओं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा हूं फट् रक्षय रक्षय यंत्रस्य अत्र एहि एहि संवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ःठ ः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

श्री मत्कनत्कांचननिर्मितोरु, भृंगारनालाद्गलितैः पयोभिः ।
यंत्रस्य विघ्नौघसमाय सर्व, रक्षाभिधानस्य करोमि पूजां ।।

ओं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा अर्ह नमः ओं ह्रीं भगवते ह्म्ल्व्र्यूं क्षीं झ्रौं यंत्राधिपतये चोरारिमारि शाकिनी प्रभृति घोरोपसर्गदुष्ट ग्रहराक्षस-भूतप्रेत-पिशाचादीन् अपनय अपनय सर्वरोगापमृत्यु विनाशाय फट् आयुष्ये वर्धय वर्धय देवदत्तस्य सर्वरक्षां कुरुकुरुलक्ष्मी प्रभावोदितं तुष्टिं तुष्टिं आयुरारोग्य क्षेमकल्याण विभव वितरणोपेत-वरप्रसाद-सद्धर्म-वृद्धयर्थ सिद्धयर्थ शान्त्यर्थ यंत्रराजाय....................(यंत्र का नाम) जलं समर्पयामि स्वाहा ।

प्रक्षीणपंकैर्वरसारसारैः, सौरभ्यसंप्रीणितविश्वलोकैः ।
यंत्रस्य विघ्नौघसमाय सर्वं, रक्षाभिधानस्य करोमि पूजां ।।

ओं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः................यंत्रराजाय................चन्दनं समर्पयामि स्वाहा ।

शाल्यक्षतैः क्षीरपयोभिफेनपिण्डौपमै रक्षत मुक्तलक्ष्म्यैः ।
यंत्रस्य विघ्नौघसमाय सर्व, रक्षाभिधानस्य करोमि पूजां ।।

ओं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः.............यंत्रराजाय.............अक्षतं समर्पयामि स्वाहा ।

मंदारजातीवकुलादिमुक्त-कुंदादिपुष्पैः सुरभीकृताशैः ।
यंत्रस्य विघ्नौघमाय सर्व, रक्षाभिधानस्य करोमि पूजां ।।

ओं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः...............यंत्रराजाय...............पुष्पं समर्पयामि स्वाहा ।

शाल्यन्नपक्वान्नसमस्तशाकैः क्षीरान्नयुतैश्चरु भिर्विचित्रैः ।
यंत्रस्य विघ्नौघमाय सर्व, रक्षाभिधानस्य करोमि पूजां ।।

ओं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः.............यंत्रराजाय...............नैवेद्यं समर्पयामि स्वाहा ।

कर्पूरदीपज्वलितैः प्रदीपैः निश्शेषताशेषदिगंधकारैः ।
यंत्रस्य विघ्नौघसमाय सर्व, रक्षाभिधानस्य करोमि पूजां ।।

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः...............यंत्रराजाय..............दीपं समर्पयामि स्वाहा ।

पापौघपूर्णैः घनधूपधूपैः धूमैः सुकालागरुचंदनौघैः ।
यंत्रस्य विघ्नौघमाय सर्व, रक्षाभिधानस्य करोमि पूजां ।।

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः...............यंत्रराजाय...............धूपं समर्पयामि स्वाहा ।

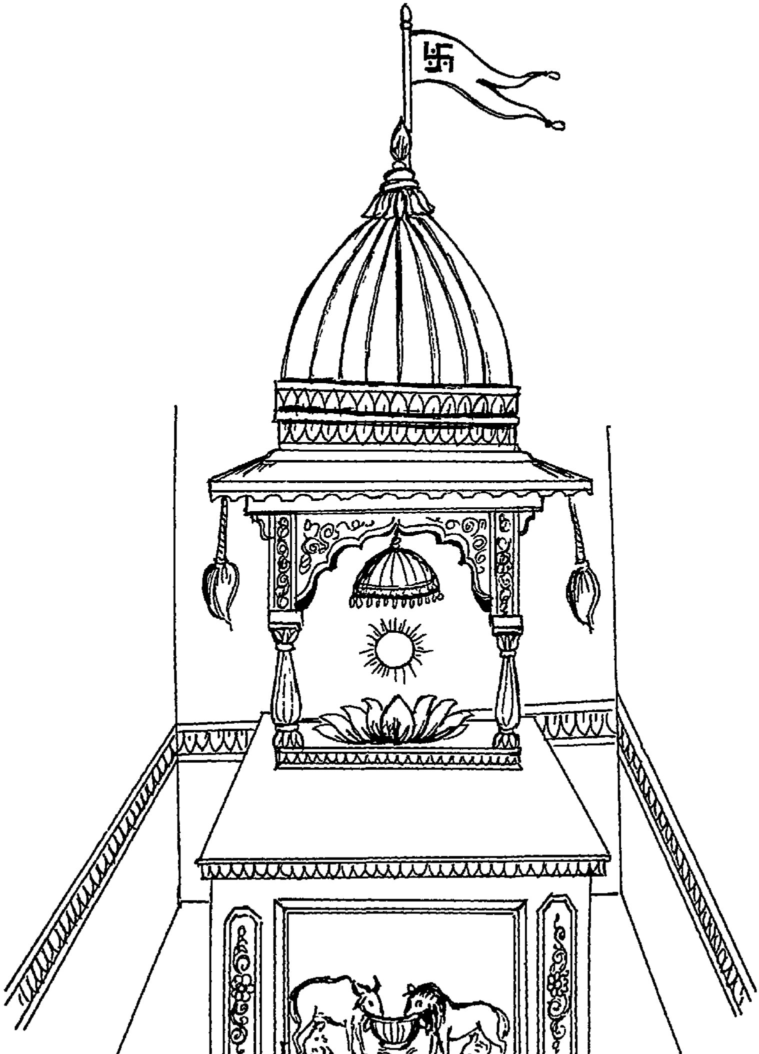
नारंगपूगाम्रसुमातुलिंगकज्जारमोच्यादिफलैर्मनोज्ञैः ।
यंत्रस्य विघ्नौघमाय सर्व, रक्षाभिधानस्य करोमि पूजां ।।

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः............यंत्रराजाय................फलं समर्पयामि स्वाहा ।

शीतांबु-गंधाक्षतपुष्पमुख्यैः द्रव्यैः कृतं चार्घ्यमिदं ददेऽहम् ।
यंत्रस्य विघ्नौघशमाय सर्व, रक्षाभिधानस्य करोमि पूजां ।।

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः...............यंत्रराजाय.............अर्घं समर्पयामि स्वाहा ।

तत्पश्चात् शांति भक्ति पढ़कर कार्य समाप्त करें ।



वृहद् वेदीप्रतिष्ठा एवं बिम्बस्थापन विधि

प्रस्तावना (१)

शुद्धं शुद्धात्म सद्भावं सिद्ध संज्ञान दर्शनम् ।
सिद्धं शुद्ध प्रमाणाप्ति निरस्त पर दर्शनम् ॥१॥

विश्वकर्मार्थि लोकस्य विश्वकर्मोपदेशकं ।
विश्वकर्म क्षयार्थिभ्यो विश्व कर्मक्षयप्रदम् ॥२॥

आदिदेवं जिनं नौमि विश्वकर्म जयं प्रभुं ।
शेषांश्च वर्धमानान्त जिनान् प्रवचनंगुरून् ॥३॥

आचारादि गुणाधारो रागद्वेष विवर्जितः ।
पक्षपातोज्झितः शान्तः साधुवर्गाः ग्रणीर्गणी ॥४॥

अशेषशास्त्र विच्चक्षुः प्रव्यक्तं लौकिक स्थितिः ।
गंभीरो मृदुभाषी च स सूरिः परिकीर्तितः ॥५॥

कुलीनो जाति संपन्नः कुत्साहीनः सुदेशजः ।
कल्याणांगो रुजाहीनः प्रशान्तः सकलेन्द्रियः ॥६॥

शुभलक्षण संपन्नः सौम्यरूपः सुदर्शनः ।
विप्रो वा क्षत्रियो वैश्यो विकर्मकरणोज्झितः ॥७॥

उपासक व्रताचार्यो दृष्ट सृष्ट क्रियोऽसकृत् ।
श्रद्धालुर्भक्ति संपन्नः कृतज्ञो विनयान्वितः ॥८॥

व्रतशीलतपोदान जिनपूजा समुद्यतः ।
जिनवन्दन कर्मादिष्वनुष्ठान परः शुचिः ॥९॥

श्रावकाध्ययनेदक्षः प्रतिष्ठा विधि वित्सुधीः ।
महापुराण शास्त्रज्ञो वास्तु विद्या विशारदः ॥१०॥

एवं गुणोमहासत्त्वः प्रतिष्ठाचार्य इष्यते ।
न चार्थार्थी न च द्वेषी भृष्ट लिगी कलंकवान् ॥११॥

---

(१) प. म. ला. जै. प्र. ह. लि. डा.

नैव पारवण्डि पुत्रोवा देव द्रव्योपजीविक. ।
नाधिकांगो न हीनांगो नाति दीर्घो न वामनः ॥१२॥

न निकृष्ट क्रियावृत्ति र्नाति वृद्धो न बालक. ।
गीत वाद्योपजीवीनो भाण्डो वैतालिको नटः॥१३॥

उन्मत्तो ग्रह ग्रस्तो वा भोजने पंक्ति वर्जितः ।
गर्भाधानादि संस्कारै र्विहीनो नाति मोहवान् ॥१४॥

ज्ञाता उपासकाद्यंते न त्रयो न महाव्रती ।
शास्त्रज्ञः कुल जातोऽपि वर्जनीयस्तथा विधः ॥१५॥

एवं समासतः प्रोक्त प्रतिष्ठाचार्य लक्षणं ।
प्रतिष्ठालग्नसंशुद्धिभणिष्यामो यथागमम् ॥१६॥

यदि मोहात्तथा भूतः प्रतिष्ठा कुरुते तदा ।
पुरं राष्ट्रं नरेन्द्रश्च प्रजा सर्वा विनश्यति ॥१७॥

न कर्ताफल माप्नोति नापि कारयिता स्वकम् ।
अथोक्त लक्षणोपेतो यदि पूजयते त्वमुम् ॥१८॥

यज्ञसूत्र युतं देह शिखा ग्रंथि दर्भासनम् ।
मदर्थ मर्चाव्यर्थ ब्रह्मचर्यस्य धारणम् ॥१९॥

अभुक्त शुक्लाम्बरं धार्य नासा नेत्रोन्मीलितं ।
ब्रह्मचर्यस्य रूपस्थ ईर्यापथ विशोधनम् ॥२०॥

आर्याः- अति निर्मल मुक्ता फल ललितं यज्ञोपवीत मतिपूतं ।
रत्नत्रय मितिमत्वा करोमि कलुषाय हरण महाभरणं ॥२१॥

श्लोकः- रत्नत्रयात्मकं पूतं यज्ञ सूत्र सुनिर्मलं ।
कुम्कुम गंध सारेण उरो लिप्तं प्रकल्पयेत् ॥२२॥

केवलज्ञान साम्राज्यं युवराज पदाप्तये ।
रत्नत्रय मिदं सूत्रं कण्ठाभरण मा दधे ॥२३॥

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रेभ्यो नमः। यज्ञोपवीतं धारयामः ।

सकलीकरण क्रिया

प्रतिष्ठाचार्य दातारौ स्नात्वाप्राग्वासरे शुभे ।
शुद्धवस्त्रं गृहीत्वाच वेदिकायां प्रवेशयेत् ।।

सिद्धं भक्ति विधायोच्चैः प्रतिष्ठाचार्य सत्तमः ।
सर्व विघ्नस्य शान्त्यर्थ वेदिकायां प्रवेशयेत् ।। **इति पीठिका**

वेदी प्रतिष्ठा में प्रथम दिन मंगल ध्वजा स्थापित करें और पात्र शुद्धि (सकलीकरण) करके शांति मंत्र का सवालाख या इक्यावन हजार जैसी सुविधा हो जाप्यानुष्ठान कराना चाहिए ।

ओं ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं अ सि आ उ सा अनाहतविद्यायै णमो अरिहंताणं ह्रीं सर्व शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ।

यदि मंदिर जी में स्थान हो तो वहां या पाण्डाल में यागमण्डल का मांड़ना बनाना चाहिए । मध्याह्न घटयात्रा करके मंदिर वेदी शुद्धि क्रिया करना चाहिए।

पश्चात् मंगलपंचक या मंगलाष्टक पाठ पढ़ें । दिग्बंधन, शांतिमंत्र पढ़कर पुष्पक्षेपण करें। वेदी शुद्धि करना हो तो वेदी की ८१ मंत्रों द्वारा शुद्धि करें। इसी प्रकार मंदिर की शुद्धि करें। यदि कलश की शुद्धि करना हो तो बड़ी थाली में केशर से स्वस्तिक बनाकर कलश स्थापना करें । फिर इन मंत्रों द्वारा शुद्धि कर लेना चाहिए । एक साथ तीनों की शुद्धि करना हो तो भिन्न भिन्न व्यक्तियों द्वारा शुद्धि करा लेना चाहिए तत्पश्चात् वेदी संस्कार एवं कलशपूजन आदि क्रियायें अलग अलग करें । भक्तियां पढ़कर क्रिया करें ।

शुद्धि विधान (१)

कुम्भमिन्द्राह्वयं दिव्यमिन्द्रशस्त्रसमप्रभम् ।
ऐन्द्र पुष्पैः समर्चामि नवार्हद्भवनोत्सवे ।।

ओं ह्रीं इन्द्रकलशेन वेदिका (मन्दिर, कलश) शुद्धिं करोमि ।।१।।

अग्नि ज्वाला समानाभमग्न्याख्यं बहुलाक्षतैः।
पूजयामि जिनागारस्नानाय सुखहेतवे ।।२।।

ओं ह्रीं अग्निकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

यमदण्ड समानाभमलौकिकमणिश्रितम् ।
यमाख्ययमदिक्पाल मान्यं संचर्चयेऽनघम् ।।३।।

ओं ह्रीं यमकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

(१) पं. म. ला. जै. प्र. ह. लि. डा.

नैऋताख्यं महाकुम्भं नैऋत्याधिपरक्षितम् ।
संशब्दये जिनागारं स्नानाय मधुरस्तवैः ।।४।।

ओं ह्रीं नैऋत्यकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

वरुणाख्यं घटं दिव्यं वरुणा सुररक्षितम्
संशब्द ये जिनेन्द्रस्य वेश्मस्नानाय चम्पकै ।।५।।

ओं ह्रीं वरुणकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

पवनामरसंसेव्यं पवनामरसुरक्षितम् ।
पवनाख्यं घटं नीर – गन्धप्रसूनशालिजै. ।।६।।

ओं ह्रीं पवनकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

कुबेराख्यं घटं दिव्यं कुबेरगृह शोभितम् ।
जिनवेश्म प्लवायात्र रामाह्वये कदम्बकैः ।।७।।

ओं ह्रीं कुबेरकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

ईशानाख्य मदाधारमीशादिदिग्विभासितम् ।
ओं ह्रीं तिष्ठेद्विधानेन काश्मीरैस्तन्महे मुदा ।।८।।

ओं ह्रीं ईशानकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

कुम्भं गारुन्मताह्वानं गरुन्मणिविनिर्मितम् ।
सरसैर्दिव्य पूजार्घै. श्रये जैनमहोत्सवे ।।९।।

ओं ह्रीं गारुन्मत कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

कलशं सुन्दराकारं वैडूर्यमणिनिर्मितम् ।
दिव्यं मरकताभिख्यं स्थापयेऽर्हद् गृहोत्सवे ।।१०।।

ओं ह्रीं मरकतमणिकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

गांगेयनिर्मितं कुम्भं गांगेयाख्यं महोन्नतम् ।
गंगा व नरसापूर्ण पूजयेऽर्हत्सुवेश्मनि ।।११।।

ओं ह्रीं गांगेयकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

प्रतप्तहाटकैः स्पष्टं श्रीमद्धाटक संज्ञकम् ।
कुम्भं तीर्थजलापूर्णमर्चयामि यथाविधिः ।।१२।।

ओं ह्रीं हाटककलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

हिरण्याख्यं महाकुम्भं हिरण्येन समर्जितम् ।
लसत्पंकजमालाढ्यं यजेऽर्हत्सद्मसम्महे ।।१३।।

ओं ह्रीं हिरण्यकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

कनत्कनकसंकाशं नानामणिविमण्डितम् ।
यजेऽर्हन्मन्दिरे कुम्भं शुद्धनीर समाश्रितम् ॥१४॥

ओं ह्रीं कनक कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

अष्टापदाख्यं सत्कुम्भं हेमस्त्रक् प्रविराजितम् ।
क्षीरोदवारि सम्पूर्णमचर्येऽर्हद्गृहोत्सवे ॥१५॥

ओं ह्रीं अष्टापदकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

महारजतनामाढ्यं महारजतनिर्मितम् ।
तीर्थाम्बुपूरनिभृतमर्हद्गेहेऽर्चये मुदा ॥१६॥

ओं ह्रीं महारजत कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

आनन्ददायक दिव्यं सानन्दाख्यं मनोहरम् ।
नित्यं तीर्थजलै पूर्ण स्थापये चैत्यसम्महे ॥१७॥

ओं ह्रीं आनंद कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

नन्दाख्यं नन्दनोत्कृष्टं प्रणन्दितगमं जितम् ।
कुम्भं समर्चये दिव्यं नानामणिविनिर्मितम् ॥१८॥

ओं ह्री नन्दकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

कुम्भ विजयनामानं विजयोर्जित विश्वकम् ।
पूर्ण तीर्थजलै र्दिव्यमर्चयेऽर्हद्गृहोत्सवे ॥१९॥

ओं ह्री विजय कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

नाना तीर्थजलाकीर्ण कुम्भं त्वजितनामकम् ।
मानवे विविधार्हाभिः स्मरजिनमन्दिरोत्सवे ॥२०॥

ओं ह्रीं अजितकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

अपराजितनामानं घटं काञ्चनसंनिभम् ।
सं प्रतिष्ठापये चैत्यमहे जलसुमाक्षतैः ॥२१॥.

ओं ह्रीं अपराजित कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

महोदरं शतानन्दनामधेयं प्रभास्वरम् ।
कलशं कमलैः पूर्ण प्रार्चयेऽर्हद्गृहोत्सवे ॥२२॥

ओं ह्री शतानन्द कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

सह स्नानदसत्ख्याति पद्मादितीर्थ संभृतम् ।
पुष्प मालावृतम् कुम्भं महाम्यर्हद्गृहक्षणे ॥२३॥

ओं ह्रीं स्नानद कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

कुन्दाख्यं कुन्दपुष्पाढ्यं कुन्दस्त्रक्प्रविराजितम् ।
प्रार्चये कुन्दपुष्पौघैः कुम्भं भव्य जिनालये ॥२४॥

ओं ह्रीं कुन्द कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

प्रस्फुटन्मल्लिका पुष्पसमूहामोद वासितैः ।
नीरैः पूर्ण यजे हेममल्लिकाख्यं महाघटम् ॥२५॥

ओं ह्रीं मल्लिकाख्य कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

अपूर्वचम्पकामोद प्रवासित जलैर्भृतम् ।
चम्पकाख्यं घटं दिव्यं सूत्रितं सम्यगर्चये ॥२६॥

ओं ह्रीं चम्पक कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

कदम्बरजसा व्याप्तकदम्बाख्यं महाघटम् ।
उपाक्षिप्त विधानेनार्चये जैनगृहालये ।२७॥

ओं ह्रीं कदम्ब कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

मन्दराख्यं महाकुम्भं मन्दारस्त्रग्विभूषितम् ।
दिव्यैरर्चामि मन्दारैः प्रत्यग्रं जिनमन्दिरे ॥२८॥

ओं ह्रीं मन्दारकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

प्रत्यग्र पारिजातौघसमर्चित जलैर्भृतम् ।
पारिजाताभिधं कुम्भमर्चयामि पयोभरैः ॥२९॥

ओं ह्रीं पारिजातकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

संतान पल्लवोत्फुल्ल प्रसूननिकरार्चितम् ।
संतानाख्यं जलैः पूर्ण संस्थाप्यपूजयेऽनिशम् ॥३०॥

ओं ह्रीं संतानकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

हरिचन्दन पुष्पाभं हरिचंदन सञ्ज्ञकम् ।
हरिचन्दन कर्पूरैः कुम्भं संप्रार्चये मुदा ॥३१॥

ओं ह्रीं हरिचन्दनकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

कल्पवृक्षमहापुष्पप्रकरेण प्रसाधितम् ।
कल्पवृक्षाभिधं कुम्भं पूजनाय प्रकल्पये ॥३२॥

ओं ह्रीं कल्पवृक्षकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

जपाख्यं जपदामाभं जपापुष्पाख्य बालकम् ।
यजे जगत्प्रभोर्नव्य चैत्यस्नानाय केवलम् ॥३३॥

ओं ह्रीं जपाकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

विशालाख्यं घटं दिव्यं विशालं रत्ननिर्मितम् ।
विशालयामि पुष्पौघैः कुन्दमन्दार संभवैः ॥३४॥

ओं ह्रीं विशाल कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

कुम्भं श्रीभद्र कुम्भाख्यं भद्रेभकुम्भसुन्दरम् ।
पारिभद्र प्रसूनौघै. शोभयामि मनोहरै. ॥३५॥

ओं ह्रीं भद्रकुम्भकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

घटं श्री पूर्णकुम्भाख्यं पूर्ण कुम्भमिवोन्नतम् ।
क्षीरोदनीरसम्पूर्णै. सुरत्नैर्वर्णयाम्यहम् ॥३६॥

ओं ह्रीं पूर्णकुम्भ कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

जयन्त सर्वकुम्भानां जयन्ताख्यं महाघटम् ।
विकसज्जयपुष्पौघैः संजयामि तदुत्सवे ॥३७॥

ओं ह्रीं जयन्तकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

वैजयन्ताभिधं कुम्भं सत्यं विजयदायकम् ।
नव्यप्रासादचर्यार्थैश्चर्चयेऽहं वनादिभिः ॥३८॥

ओं ह्रीं वैजयन्त कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

चन्द्रकान्तमहारत्न विनिर्मित महाघटम् ।
चन्द्राख्यं जगदुत्कृष्टं पूजये विविधार्चनैः ॥३९॥

ओं ह्रीं चन्द्र कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

सूर्य कान्ताश्मसन्दोहविराजितं महोदयम् ।
सूर्याख्यं कुम्भमुत्कृष्टैः प्रयजे तन्महार्घकैः ॥४०॥

ओं ह्रीं सूर्यकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

लोकालोक प्रविख्यातं लोकालोक विधानकम् ।
कुम्भं संस्थापयाम्यत्र सम्पूज्य विविधार्चनैः ॥४१॥

ओं ह्रीं लोकालोक कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

त्रिकूटनामकं कुम्भं त्रिकूटाद्रिसमानकम् ।
समर्च्य विविधार्घेण स्थापये तन्महोत्सवे ॥४२॥

ओं ह्रीं त्रिकूट कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

उदयाख्य महाकुम्भमुदयाचल सन्निभम् ।
स्थापयामि जिनागारेऽभिषवाय महोन्नतिम् ॥४३॥

ओं ह्रीं उदयाचलकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

हिमवत्पर्वताभिख्यं हिमाचल समुन्नतिम् ।
कूट निवेशयाम्यत्र स्नानाय नव्यवेश्मनः ॥४४॥

ओं ह्रीं हिमाचलकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

निषधाद्रिसमोत्सेधं निषधाख्यं घटं वरम् ।
संविधायार्हणां दिव्यां स्थापयेऽर्हन्महोत्सवे ॥४५॥

ओं ह्रीं निषध कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

माल्यवत्कुम्भनामानं नानामालाविराजितम् ।
शुद्धस्फटिकसंकाशं कुम्भं तत्र निवेशये ॥४६॥

ओं ह्रीं माल्यवत्कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

सत्पारिपात्रकोत्सेधं सत्पारिपात्रकाह्वयम् ।
कलशं श्री जिनागारस्नानाय पूजयेऽनघम् ॥४७॥

ओं ह्रीं सत्पात्र कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

गन्धमादननामानं गन्धमादप्रपूरितम् ।
सम्पूजये जलाद्यर्घैर्जिनौकस्नानहेतवे ॥४८॥

ओं ह्रीं गन्धमादन कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

सुदर्शन समाह्वानं सुदर्शनगरिष्ठकम् ।
कलशं विशुद्धये जैनवेश्मन स्थापयेऽनघम् ॥४९॥

ओं ह्रीं सुदर्शन कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

कलशं मन्दराकारं मन्दराख्यं महोन्नतिम् ।
विधापयामि जैनेन्द्र भवनस्नान हेतवे ॥५०॥

ओं ह्रीं मन्दरकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

अचलेत्यब्धिना पूर्णमचलाख्यं घटं नवम्
आम्रपल्लव शोभाढ्यं तदर्थं स्थापयाम्यहम् ॥५१॥

ओं ह्रीं अचलकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

विद्युन्मालासमाकारं विद्युन्माल्यभिधानकम् ।
कलशं स्थापये दिव्यं नाना पूजनवस्तुभिः ॥५२॥

ओं ह्रीं विद्युन्मालि कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

चूड़ामण्याख्यं मुत्तुंगं चूडामणि समुन्नतिम् ।
पूर्ण तीर्थोदकैः कुम्भं तदुत्सवे निधापये ॥५३॥

ओं ह्रीं चूड़ामणि कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

सद्धारगुलिकाभालं गुलिकाह्वयमुत्तमम् ।
कुम्भं निवेशयाम्यत्र जैन मन्दिर शुद्धये ॥५४॥

ओं ह्रीं गुलिकाकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

दक्षिणावर्तनामानं दक्षिणावर्तसन्निभम् ।
घटं च घटितं लक्ष्म्या तत्कृते सन्निवेशये ॥५५॥

ओं ह्री दक्षिणावर्त कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

कोकाख्य कोकसंकाशं वारिजाश्मविनिर्मितम् ।
घट निधापये जैनवेश्मनः शुद्ध हेतवे ॥५६॥

ओं ह्रीं कोक कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

राजहंस समानाभं राजहंस समाह्वयम् ।
घटं तं जाघटीम्यत्र नवार्हद्वेश्म शुद्धये ॥५७॥

ओं ह्रीं राजहंस कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

कलशं हरिताभिख्यं हरिताश्मविनिर्मितम् ।
पूजये दिव्यरत्नेन दिव्यगन्धाम्बुचम्पकैः ॥५८॥

ओं ह्रीं हरितकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

मृगेन्द्राह्वयमुत्तुंगं समाह्वायार्चनादिभिः ।
मृगेन्द्रवत्प्रगर्जन्तं स्नानकालेषु वेश्मन· ॥५९॥

ओं ह्रीं मृगेन्द्र कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

कुम्भं कोकनदाकारं श्रीमत्कोकनदाह्वयम् ।
त्रिभंगा नीरसम्पूर्ण घटयेऽस्मिन्महोत्सवे ॥६०॥

ओं ह्रीं कोकनद कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

स्निग्धाञ्जन समाकारमणिनिर्मितमुत्तमम् ।
कालाख्यं कलशं हृद्यं तदुत्सवे निवेशये ॥६१॥

ओं ह्रीं कालकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

पद्माख्यं पद्मचक्राख्यं पद्मरागविनिर्मितम् ।
कुम्भ समाह्वये नव्य प्रासाद स्नपनाय वै ॥६२॥

ओं ह्रीं पद्मकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

अत्यन्त श्यामलाकार प्रस्तरैर्निर्मितं घटम् ।
प्रासादस्नानकालेऽत्र महाकालं निवेशये ॥६३॥

ओं ह्रीं महाकाल कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

पञ्चप्रकारसद्रत्न विनिर्मितं महोन्नतम्।
कलशं सर्वरत्नाख्यं स्नानाय श्रीजिनौकसः ॥६४॥

ओं ह्रीं सर्वरत्न कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि।

पाण्डुकाकारपाषाणनिर्मितं पाण्डुकाह्वयम्।
कुम्भं तीर्थोद सम्पूर्ण निवेशये यथाविधिम् ॥६५॥

ओं ह्रीं पाण्डुकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि।

नैः सर्पकांगलाकारमणिनिर्मित मुन्नतम्।
कुम्भं स्थापयाम्यत्र तीर्थवारिप्रपूरितम् ॥६६॥

ओं ह्रीं नैसर्पकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि।

मानवाख्यं घटं नव्यमानये तीर्थवार्भृतम्।
स्थापयेऽर्हन्महावेश्म स्नपनाय जलार्जितम् ॥६७॥

ओं ह्रीं मानव कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि।

शंखसंकाशरत्नौघ विनिर्मितमहोन्नतम्।
संस्थाप्य पूजये दिव्यं शङ्खाख्यं जलचन्दनैः ॥६८॥

ओं ह्रीं शंखनिधि कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि।

पिंगलाख्यं च पिगाभंपिगाश्मभिर्विनिर्मितम्।
घटं तीर्थाम्बुसम्पूर्ण तदर्थ सन्निधापये ॥६९॥

ओं ह्रीं पिंगलकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि।

पुष्करावर्तनामानं कलशं रत्ननिर्मितम्।
जिनोदवासित स्नानालोक संकल्पयाम्यहम् ॥७०॥

ओं ह्रीं पुष्करावर्तकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि।

मकरध्वजनामानमिन्द्र नील विधापितम्।
कूटं गंगाम्बुपर्याप्तं पवित्रं स्थापयेद्वरम् ॥७१॥

ओं ह्रीं मकरध्वज कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि।

ब्रह्माभिख्यं चतुर्वक्त्रं कुम्भं ब्रह्मसमर्चितम्।
ब्रह्मतीर्थजलैः पूर्णं स्थापये नीरचन्दनै ॥७२॥

ओं ह्रीं ब्रह्म कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि।

सुवर्णनिर्मितं कुम्भं सुवर्णाख्यं महासुखम्।
स्फुरद्रत्नचयं चारुं संस्थाप्याहं समर्चये ॥७३॥

ओं ह्रीं सुवर्ण कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि।

कदली पत्रसंकाशं नीलाश्मकमयं घटम् ।
स्थापयामीन्द्रनीलाख्यं सम्भृतं तीर्थवारिणा ॥७४॥
ओं ह्रीं इन्द्रनीलकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

अशोक कुसुमामोद वासिताम्भः प्रपूरितम् ।
अशोकाख्यं महाकुम्भं निधापये जिनौकसाम् ॥७५॥
ओं ह्रीं अशोक कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

पुष्पदन्तसमानाभं पुष्पदन्तसमाह्वयम् ।
कलशं सलिलैः पूर्ण संस्थापयेऽर्हन्मन्दिरे ॥७६॥
ओं ह्रीं पुष्पदन्त कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

कुमुदाख्यं घटं नव्यं कुमुदस्रग् विराजितम् ।
कुमुदैरर्चये स्नाने संस्थाप्य श्रीजिनौकसः ॥७७॥
ओं ह्रीं कुमुद कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

येषु दृष्टेषु भव्यानां सम्यक्त्वं प्रकटीभवेत् ।
दर्शनाख्यं महाकुम्भं सम्भावये जलादिभिः ॥७८॥
ओं ह्रीं दर्शनकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

यस्य दर्शनमात्रेण धर्मोऽधर्मः प्रबुध्यते ।
कुम्भं ज्ञानाख्यमुत्तुंगं निवेशये जलैर्भृतम् ॥७९॥
ओं ह्रीं ज्ञान कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

दर्शनाद्यस्य भव्यानां वृत्ते मतिः प्रजायते ।
चारित्राख्यं वनैः पूर्ण कुम्भं संस्थापये मुदा ॥८०॥
ओं ह्रीं चारित्र कलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

सर्वार्थ सिद्धिकर्तारं सर्वार्थ सिद्धिनामकम् ।
कुम्भं समर्चये जैनवेश्मनः स्नानहेतवे ॥८१॥
ओं ह्रीं सर्वार्थ सिद्धिकलशेन वेदिका शुद्धिं करोमि ।

इस प्रकार शुद्धि करके श्रुतभक्ति शांति भक्ति पढकर नौ बार णमोकार मंत्र का जापकर कार्य समाप्त करें। वेदी को कपड़ा से वेष्टित करा दें।

द्वितीय दिन की क्रिया

वेदिका संस्कार विधि

प्रातःकाल में मंगलाष्टक पाठ, दिग्बंधन, रक्षामंत्र, शांतिमंत्राराधन करके संस्कार विधि प्रारम्भ करें। प्रथम सिद्ध भक्ति करें ९ बार णमोकार मंत्र पढें।

वेदि शुद्धि (१)

आयात भो वायुकुमार देवा: प्रभोर्विहाराव संराप्तसेवा: ।
यज्ञांशमभ्येत सुगंधिशीत मृद्वात्मनाशोधयताध्वरोर्वीम् ॥

भो वायुकुमार सर्व विघ्न विनाशनाय वेदिकाभूमिशुद्धिं कुरु कुरु फट् स्वाहा ।

(वेदी का शुद्ध वस्त्र से मार्जन करें)

आयात भो मेघ कुमारदेवाः प्रभोर्विहारावसराप्त सेवाः ।
गृह्णीत यज्ञांश मुदीर्णशम्या गन्धोदकैः प्रोक्षत यज्ञभूमिम् ॥

भो मेघकुमार वेदिधरां प्रक्षालय प्रक्षालय अं हं सं वं झं ठं यः क्षः फट् स्वाहा।

(वेदी पर जल के छीटें लगावें)

आयात भो बह्नि कुमारदेवाः आधानविध्यादि विधेयसेवा: ।
भजध्वमिज्याशमिमां मखोर्वीं ज्वालाकलापेन परं पुनीत ॥

भो अग्नि कुमार वेदिभूमिं ज्वलय ज्वलय अं हं सं वं झं ठं यः क्षः फट् स्वाहा ।

(रकाबी में कपूर जलाकर वेदी पर चलावें)

उद्भात भो षष्टिसहस्त्रनागाः क्ष्माकामचार स्फुट वीर्यदर्पा: ।
प्रतृप्यतानेन जिनाध्वरोर्वी सेकात्सुधागर्वभृजामृतेन ॥

ओं ह्रीं क्रौं षष्टि सहस्त्रनागाः जिनवेदिकारक्षां कुरुत कुरुत स्वाहा ।

(ऐशान दिशा में जल के छीटें लगावें)

ओं हूं क्षूं फट् किरिटिं किरिटिं घातय घातय परविघ्नान स्फोटय स्फोटय सहस्त्रखण्डान् कुरु कुरु परमुद्रां छिन्द - छिन्द परमंत्रान् भिन्द - भिन्द क्षां क्षः वाः वाः हूं फट् स्वाहा । यह मंत्र पढकर वेदी एवं मंदिर पर पुष्प क्षेपण करें।

वेदी की दीवार पर स्वस्तिक बनावें। वेदी की ऊपर वाली कटनी पर विनायक यंत्र को सिहासन मे विराजमान करे।

प्रत्यूह निर्णाशविधौ प्रसिद्धं गणेन्द्रवक्त्राम्बुजगीत कीर्तिम् ।
यंत्रं पुरापूजित मत्रनेयं पात्रे लिखित्वापि कृतार्चनादि ॥
ओं ह्रीं विनायक यंत्रं स्थायामि ॥

---

(१) प. आ ध. प्र. सा. अध्याय २ श्लोक १३१ से १३४

यंत्र की बाईं ओर मंगल कलश और दाहिनी ओर दीपक रखना चाहिए। वेदी के समीप टेबिल लगाकर विनायक यंत्र पूजा (पेज नं.२० से) और महर्षि पर्युपासन के अर्घ चढ़ाना चाहिये।

नोटः नवीन मंदिर शुद्धि, वेदी प्रतिष्ठा, या कलशारोहण के समय यागमण्डल विधान पाण्डाल में मण्डल बनाकर प्रतिमा जी स्थापित कर नित्यमह क्रियाओं के साथ करना चाहिए। प्रारम्भ में जाप करना अंत में शांति हवन करना आवश्यक है।

महर्षि पर्युपासन (१)

औषधी रसबलर्द्धितपःस्थाः क्षेत्रबुद्धिकलिताः क्रिययाढ्याः।
विक्रियर्द्धि महिताः प्रणिधान प्राप्तसंसृति तटामुनिपूज्याः ॥१॥

केवलावधिमनः प्रसराङ्गाः बीजकोष्ठमति भाजन शुद्धाः।
वीतरागमदमत्सरभावा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥२॥

यद् वचोऽमृतमहानदमग्ना जन्मदाह परितापमपास्य।
निर्वृवुः सुखसमाजतटेषु बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥३॥

श्रोतृभिन्नमतयः पदपन्थाः दृष्टसंसृति पदार्थ विभावाः।
तत्त्वसंकलित धर्म्यसुशुक्ला बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥४॥

स्पर्शन श्रवणलोकन बुद्धाः घ्राण संस्थरसनोपकृत्ता ये
दूरतोऽप्यनुभवं हिसमाप्ता बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥५॥

छिन्नस्वर्य विधिना चतुर्दशदिक्सुपूर्व मतिना निमित्तगाः।
वादिबुद्धिकृतिनो मतिश्रमा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥६॥

अष्टधोक्तदशधाभिदया ये बुद्धिवृद्धि सहिताः शिवयात्राः।
विण्मलादिगदहायनदेहा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥७॥

दृष्टवक्त्रमनसां विषभक्ति प्रीणिताः श्रुतसरित्पतिपुष्टाः।
लोकमङ्गलिषु सं न्यसिता ये बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥८॥

वाक्यमानसबलेन समग्रा उग्रदीप्ततपसस्त्रिक गुप्ताः।
घोरवीर्यगुण भावितचित्ता बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥९॥

दुग्धमध्वमृतभोजनकृत्वा सर्पिरास विवचोऽभि नियुक्ताः।
अण्वलाघववशित्वविदर्भा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥१०॥

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक २९० से ३०१

कामरूप गुरुताप्रति सर्पान्तदृर्ध्य हीनवसति गृहयुक्ताः ।
चारणा जलफलाग्निकसूत्रा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥११॥

आत्मशक्ति विभवागतसर्व पौद्गलीय ममताश्चुतवस्त्राः ।
सत्परीषह भटार्दनदास्ते बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥१२॥

ओं ह्रीं अष्टप्रकार सकल ऋद्धिप्राप्त मुनिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

आद्येशितुर्वृषभसेन पुरस्सरा ये सिंहादिसेन पुरतोऽजिततीर्थभर्तुः ।
श्रीसम्भवस्य किलचारु विसेनमुख्या स्तुर्यस्य वज्रधरमुख्यगणाधिराजाः ॥१॥[१]

कोकध्वजस्य चमराधिपपूर्वगाः स्युः पद्मप्रभास्य कुलिशादिपुरः स्थिताश्च ।
श्रीसप्तमस्य बलमुख्यकृत्ताः पुराणे चन्द्रप्रभस्य शमिनः खलु दत्तमुख्याः ॥२॥

मकरारांकिजनो गणभृतश्च विदर्भमुख्याः श्रीशीतलस्य गणया अनगारगण्याः ।
श्रेयोजिनस्य निकटे ध्वनि कुन्थुपूर्वा धर्मादयो गणधरा वसुपूज्यसूनोः ॥३॥

मेर्वादयश्च विमलेशितुरुद्धबुद्ध्या जय्यार्यनामभरणाश्च चतुर्दशस्य ।
धर्मस्य भान्ति शमिनः सदरिष्टमूलाश्चक्रायुधप्रभृतयः खलु शान्तिभर्तु ॥४॥

कुन्थुप्रभोर्यमभृतः कथिताः स्वयम्भू वर्याः पुनन्त्वरविभोः स्मृतकुम्भमान्याः ।
मल्लेर्विशाखमुनयो मुनिसुव्रतस्य मल्लिप्रवेकगणता नमिभर्तुरिष्टा ॥५॥

सप्तर्द्धि पूजितपदाः सुप्रभासमुख्या नेमीश्वरस्य वरदत्तमुखा गणेशाः ।
पार्श्वप्रभोः स्वयमितः सुखवोन्तनाम्ना वीरस्य गौतममुनीन्द्र मुखाः पुनन्तु ॥६॥

एभ्योऽर्घपाद्यमिह यज्ञधरावनार्थं दत्तं मया विलसनां शुचिवेदिकायाम् ।
पुष्पाञ्जलिप्रकरतुन्दिलमाज्य पात्र मुत्तारयामि मुनिमान्यचरित्रभक्त्या ॥७॥

ओं ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थकरगणधरेभ्यस्त्रिपंचाशत् सहितचतुर्दशशत संख्येभ्यश्चारुपात्रमग्रे कृत्वार्घं मुत्तारयामीति स्वाहा ।

(यह पढकर २४ तीर्थकरों के १४५३ गणधरों को अर्घ चढ़ावें ।)

तदनन्तर चारित्रभक्ति पढकर वेदी पर पुष्पाञ्जलि छोड़ें और ९ बार णमोकर मंत्र पढ़ें ।

---

(१) आ. ज. से., प्र. पाठ श्लोक ३०२ से ३०८

२४ गणधर अर्घ [1]

इन्द्रभूतिरग्निभूतिर्वायुभुतिः सुधर्मकः
मौर्यमौढ्यौ पुत्रमित्रावकम्पन सुनामधृक् ।।१।।

ओं ह्रीं गौतमादिएकादश मुनिभ्योऽर्घ निर्वपामीलि स्वाहा ।

अन्धवेलः प्रभासश्च रुद्रसंख्यान् मुनीन् यजे
गौतमं च सुधर्म च जम्बूस्वामिनमूर्ध्वगम् ।।२।।

ओं ह्रीं अन्त्यकेवलित्रयायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रुतकेवलिनोऽन्यांश्च विष्णुनन्घ्यपराजितान् ।
गोवर्धनं भद्रबाहु दशपूर्वधरं यजे ।।३।।

ओं ह्रीं श्रुतकेवलिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

विशाख प्रोष्ठिलनक्षत्रजयनागपुरस्सरान् ।
सिद्धार्थ धृतिषेणाहौ विजयं बुद्धिबलं तथा।।४।।

ओं ह्रीं कतिचिदंग धारिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

गंगदेवं धर्मसेनमेकादशसुश्रुतान् ।
नक्षत्रं जयपालाख्यं पाण्डुं च ध्रुवसेनकम् ।।५।।

कंसाचार्य पुरोङ्गीयज्ञातारं प्रयजेऽन्वहम्।
सुभद्रं च यशोभद्रं भद्रबाहुं मुनीश्वरम् ।।६।।

लोहाचार्य पुरा पूर्वज्ञानचक्रधरं नमः ।
अर्हद्वलि भूतवलि माघनन्दिनमुत्तमम् ।।७।।

धरसेनं मुनीन्द्रं च पुष्पदन्तसमाह्वयम् ।
जिनचन्द्रं कुन्दकुन्दमुमास्वामिनमर्चये ।।८।।

ओं ह्रीं ऐदंयुगीनदीक्षाधरणधुरन्धरनिर्ग्रथाचार्यवर्येभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

निर्ग्रन्थान् वकुशान् पुलाककुशलान् किशील निर्ग्रन्थकान्
मूलस्वोत्तरसद्गुणावधृतसाः किंचित्प्रकारं गतान् ।

वन्दित्वा जिनकल्पसूत्रितपदान् प्रध्वस्तपापोदयान् ।
वेदी शुद्धि विधि ददन्तु मुनयो ह्यर्घेण सम्पूजिताः ।।९।।

ओं ह्रीं पुलाकवकुशकुशील -निर्ग्रन्थस्नातकपदधरत्रिकन्यूनैक कोटीसंख्य - मुनिवरेभ्योऽर्घ ।

तदन्तर शांतिपाठ पढ़कर विसर्जन करके द्वितीय दिन की विधि को समाप्त करें ।

(1) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक ३०९ से ३१७

तृतीय दिन की क्रिया (बिम्ब स्थापन विधि)

मंगलाष्टक, मंगलपञ्चक या स्वस्तिमंगल पाठ पढ़ने के पश्चात् पात्रशुद्धि दिग्बंधन, शांतिमंत्राराधन के साथ यंत्राभिषेक (जो विनायक यंत्र वेदी पर विराजमान था उसका अभिषेक) कर पूजा करें। तदन्तर जिन प्रतिमाओं को वेदी पर विराजमान करना है सबका अभिषेक एवं शांतिधारा कराना चाहिए। फिर प्रक्षालन कर अर्घ चढ़ाने के पश्चात् वेदी पर विराजमान करना। प्रथम मूलनायक प्रतिमा के नीचे अचल यंत्र की स्थापना करें। पंचरत्न पारद एवं स्वस्तिक स्थापित करना चाहिये। ध्यान रहे प्रतिष्ठाग्रंथों में बिम्ब स्थापना दो प्रकार से कही है- (१) स्थिर बिम्ब (२) चल बिम्ब

मूलनायक बिम्ब को स्थिर प्रतिमा कहते है। इसे वेदी से नहीं उठाना चाहिये। अन्य प्रतिमायें चल बिम्ब हैं उत्सव विधानादि में वेदी से उठा भी सकते हैं। स्थापना के पूर्व अचल मंत्र की १०८ बार जाप करना चाहिये।

मन्त्र - ओं नमोऽर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ, ए ऐ, ओ औ अं अः, क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व, श ष स ह क्लीं ह्रीं क्रौं स्वाहा।

ओं ह्रीं अचल यंत्रं स्थापयामि।

यह पढ़कर अचल यंत्र स्थापित करें। यदि यन्त्र न हो तो केशर से लिखें। **चौबीस तीर्थकरों के चौबीस यंत्र हैं जिन्हें तीर्थकर प्रतिमानुसार अलग-अलग प्रतिमा के नीचे स्थापित करना चाहिये** (देखें यंत्राधिकार से)

मन्त्रं पठेत् जपं पद्मपीठे गन्धेन तल्लिखेत्।
पंचरत्नमत्र क्षिप्त्वा प्रतिमा स्थापयेत्ततः॥

ओं ह्रीं पंचरत्न - स्वस्तिकं च स्थापयामि।

वेद्यां पारद क्षिप्त्वा श्रीखण्ड कुंकुमंतथा
प्रथमं स्थापयेद् गर्भे कोणे वेद्याः जिनस्य च

ओं वेद्याः कोणे पारदं स्थापयामि।

संस्थाप्यं निश्चल यन्त्रमधस्तात् प्रतिमां नयेत्।
लेखनं स्वर्णलेखन्या यन्त्रं तस्य धरार्पितम्॥
यस्य नामप्रभावेण विपदो न स्पृशन्तिनृन्।
येनेन्द्रोऽयष्ट भक्त्या तत्प्रातिहार्याष्टकं त्विदम्॥१॥

अष्ट प्रातिहार्य की स्थापना के लिए वेदी पर आठ स्थान पर पुष्प रखें।

रत्नांशुवर्धेन्द्रधनुर्व्यातास्याहरिवाहनम् ।
यच्चक्रे धर्मैकात्मा सिहपीठं तदस्त्वदः ॥२॥

ओं ह्रीं सिंहासनं स्थापयामि (वेदी पर सिंहासन स्थापित करें)

विम्ब स्थापन

निर्मितं वीतरागस्य रत्नपाषाण धातुभिः ।
निराकारं च सिद्धानां विम्ब संस्थापये मुदा ॥३॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धप्रतिमा स्थापनं करोमि ।

यन्त्रं षोडशभावानां सिद्धचक्रं वृषा दश ।
द्वादशांग गिरां यन्त्रं स्थापये जिनपृष्ठके ॥४॥

ओं ह्रीं षोडशकारण-दशधर्म-सिद्धचक्र-श्रुतस्कन्धादियन्त्राणां स्थापनं करोमि ।

प्रवाद्यभेद्यो मेघौघध्वनिजिद् योजनं सदा ।
व्याप्नुवन् यो न केनापि व्यघाय्येष सतद्ध्वनिः ॥५॥[1]

ओं ह्रीं दिव्यध्वनिं स्थापयामि (दिव्यध्वनि स्थापित कर पुष्प क्षेपण करें)

यक्षैर्दोधूयमानार्हद्देहं छायाछलाच्छ्रिता ।
या चामरचतुः षष्टिर्नानटीतिस्म सास्त्वियम् ॥६॥

ओं ह्रीं चतुः षष्टि चामरं स्थापयामि । (चमर स्थापन कर पुष्प क्षेपण करें)

चक्षुषो पश्यतां सप्त भासयत्यनिशं भवान् ।
भामण्डलेऽब्रुडन् यत्र विश्वतेजांस्यदोऽस्तु तत् ॥७॥

ओं ह्रीं भामण्डलं स्थापयामि । (भामण्डल लगा कर पुष्पक्षेपण करें)

रत्नरोचिर्नदद्भृंग खगो वातचलल्ललः ।
विश्वाशोकीकृत्ते व्यक्तं योऽशोको नग एष सः ॥८॥

ओं ह्रीं रत्नाशोकं स्थापयामि (रत्न अशोक स्थापित कर पुष्पक्षेपण करें)

मुक्त प्रारोह मालम्बिमुक्तालम्बूष लक्षणम् ।
छत्रत्रयं रत्नभावाच्छ्री निधिवद्भात्यदोऽस्तु तत् ॥९॥

ओं ह्रीं छत्रत्रयं स्थापयामि (छत्र लगाकर पुष्पक्षेपण करें)

सभ्या श्रृण्वन्त्वसभ्योत्तर्भितीवातीव योऽध्वनत् ।
सार्धद्वादश कोट्युध्वक्षादित्रोऽयं स दुन्दुभिः ॥१०॥

ओं ह्रीं दुन्दुभिं स्थापयामि (दुंदुभि स्थापित कर पुष्पक्षेपण करे)

---

[1] प्र. सा. उ. प्र. सा. ४।२०६ से २१३

गङ्गाम्भः सुभगैर्गुञ्जद्भृंगोघैः सुमनस्तमैः ।
सुमनोभि· सुमनसां वृष्टिर्यासर्जि सास्त्वसौ ॥११॥

ओं ह्रीं पुष्पवृष्टिं स्थापयामि (पुष्पवृष्टि स्थापित कर पुष्पक्षेपण करें)

इत्यष्टौ प्रातिहार्याणि प्रतिमायां जिनेशिनः ।
स्थापितानि च निघ्नन्तु भाक्तिकानां सदापदः ॥१२॥

ओं ह्रीं प्रतिमाग्रे अष्टस्थानेषुपुष्पाणि स्थापयामि

(प्रतिमा के आगे अष्ट प्रातिहार्य स्थापन हेतु आठ स्थान पर पुष्प क्षेपण करें)

अष्ट प्रातिहार्य सहित जिनेन्द्र की अर्घावली[१]

वनस्पतित्वेऽपि गतप्रशोकोऽशोको बभूवातिमद प्रसूनः ।
अनेक संदर्शक शोकहारी वृक्षो जिनेन्द्राश्रयण प्रभावात् ॥१३॥

ओं ह्रीं अशोकवृक्ष प्रातिहार्यसहिताय जिनायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रेयस्तरुः फलति नोऽमर सोख्यमुच्चै र्हर्षोत्सुकत्व परिलम्भ न सन्निषेण ।
देवैः कृता सुमनसां परिवृष्टिरेषा मोदं ददातु भवदु· खजुषां जनानाम् ॥१४॥

ओं ह्रीं देवकृत पुष्पवृष्टि प्रातिहार्य सम्पन्नाय जिनायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

त्रैलोक्यवस्तु मननस्मरणावबोधो येन स्वयं श्रवणगोचरतां गतेन ।
सञ्जायते मुखरदौष्ठ विघातशून्यो भूयाद् ध्वनिर्भव मद प्रसरार्तिहर्ता ॥१५॥

ओं ह्रीं दिव्यध्वनि प्रातिहार्यसम्पन्नाय जिनायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

यक्षेशपाणि लतिकाङ्कुर सगतानि तुर्याधिषष्टि गणनान्यपि देवनद्याः ।
वीचिप्रमाणि भवतो द्विकपार्श्वयोस्ते सच्चामराण्यघचयं मम निर्दलन्तु ॥१६॥

ओं ह्रीं चतुः षष्टि चामर - प्रातिहार्य सम्पन्नाय जिनायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

सिंहासने छविरियं जिनदेवतायाः केषां मनोऽवधृतपाप्महरी न वा स्यात् ।
स्याद्वाद संस्कृत पदार्थगुणप्रकाशोऽ स्या मेस्तु निर्हतमदाविल–जातशक्तेः ॥१७॥

ओं ह्रीं सिंहासन प्रातिहार्य सम्पन्नाय जिनायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

भामण्डलेऽवयवपृष्ठ विभागरश्मि क्लृप्ते जनस्य भवसप्तक दर्शनेन ।
श्रद्धान माप्त गुरु धर्म परम्पराणा गाढं भवेत्तदिति देवपतिर्नमस्यः ॥१८॥

ओं ह्रीं भामण्डल - प्रातिहार्य सम्पन्नाय जिनायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

देवस्य मोह विजयं परिशंसितुं द्राक् देवाः स्वहस्ततलतः परिवादयन्ति ।
वाद्यानि मंगलनिवास कराणि सद्यो मिथ्यात्व मोहजयिनः सुभगानि च स्यु ।

ओं ह्रीं दुन्दुभि प्रातिहार्य सम्पन्नाय जिनायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

(१) आ. ज. से. प्र. पा. श्लोक ८७७ से ८८१

छत्रत्रयं जिनपमूर्धनि भासमानं त्रैलोक्य राज्यपतिता मभिदर्शयद्वा ।
सोमार्क - बह्नि-प्रतिमं सितपीतरक्तरत्नादि रञ्जितमिदं मम मंगलाय ॥२०॥

ओं ह्री छत्रत्रय प्रातिहार्य सम्पन्नाय जिनायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

भृंगार कुम्भ मुकुर स्वस्तिकध्वजरोपणम् ।
व्यजनेन सुसंयुक्तं जिनाग्रे द्रव्यमङ्गलम् ॥२१॥

ओं ह्री अष्टमंगल द्रव्य स्थापनाय पीठिकायाम ष्टस्थानेषुपुष्पाणि क्षिपेत् ।

अष्ट मंगलद्रव्य स्थापना के लिए पुष्पक्षेपण करें ।

(१) ओं भृंगारं स्थापयामि (झारी स्थापन करें)
(२) ओं कलशं स्थापयामि (कलश स्थापन करें)
(३) ओं दर्पणं स्थापयामि (दर्पण स्थापन करें)
(४) ओं स्वास्तिकं स्थापयामि (स्वास्तिक स्थापन करें)
(५) ओं ध्वजं स्थापयामि (ध्वज स्थापन करें)
(६) ओं व्यजनं स्थापयामि (वीजना स्थापन करें)
(७) ओं स्थापनां स्थापयामि (ठोना स्थापन करें)
(८) ओं चामरं स्थापयामि (चामर स्थापन करें)

छत्रचामरभृंगार - कुम्भाब्द व्यजन ध्वजान् ।
स्व. सुप्रतिष्ठान् यानिन्द्रो भर्तुतेनेऽत्र सन्तु ते ॥२२॥

ओं ह्रीं अष्टमंगलद्रव्य संयुक्त जिनायार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

इन्द्र युगल स्थापनम्

पार्श्वद्वये जिनेन्द्रस्य देवेन्द्रयुगले स्थिते ।
चामर पुष्पहस्ते च वस्त्राभूषण संयुते ॥२३॥

ओं इन्द्रयुगलं स्थापयामि ।

(इन्द्रो पर पुष्पक्षेपण करना)

मालास्थापनम्

रत्नविद्रुम मुक्तादि निर्मित जपसाधनम् ।
स्थाप्यं मालाष्टकं नूनं कर्मनिर्हरणक्षमम् ॥२४॥

ओं जपमालां स्थापयामि ।

श्लोक २१ से ३० पं. म. ला. प्र. ह. लि. डायरी से

जिनवाणी स्थापनम्

स्थापनीयं वरं शास्त्रं कुन्दकुन्दादि निर्मितं ।
जैन तत्त्वप्रबोधाय स्याद्वादेन विभूषितम् ।।२५।।

ओं जिनशास्त्रं स्थापयामि ।

वन्दनमाला स्थापनम्

वन्दनमालिका बध्या मणिमुक्तादि निर्मिता ।
वेदिकाया परं रम्या किङ्किण्यादि विभूषिता ।।२६।।

ओं वन्दनमालां बध्नामि स्वस्ति भवतु ।

वेदिका सूतनम्

पञ्चवर्णेन सूत्रेण दिव्यगंधयुतेन वै ।
रक्षामंत्रं समुच्चार्य वेदिकां परिवेष्टयेत् ।।२७।।

ओं वेदिकां पञ्चवर्णसूत्रेण सूत्रयामि स्वस्ति भवतु ।

घण्टा झल्लरी बन्धनम्

घण्टां च झल्लरीमुच्चैष्टङ्कारेण समन्विताम् ।
बध्नीयाद् भव्यजीवानामाह्वानाय मनोरमाम् ।।२८।।

ओं घण्टां झल्लरी च बध्नामि स्वस्ति भवतु ।

इस अवसर पर जिनवाणी, जिनमंदिर, विद्यालय आदि को दान की घोषणा करावे ।

सार्वकालिक पूजार्थ भूस्वर्णादिकद्रव्यकम् ।
वित्तानुसारतो दद्यात् पूजोपकरणानि च ।।२९।।

ओं हूं क्षूं फट् किरिटिं किरिटिं घातय घातय परविघ्नान् स्फोटय स्फोटय सहस्रखण्डान् कुरु कुरु परमुद्रां छिन्द छिन्द परमन्त्रान् भिन्द भिन्द क्षां क्षः वाः वाः हूं फट् स्वाहा ।

(सभी दिशाओं में पुष्प क्षेपण करें)

आर्शीवाद कामना

यावत्त्रिलोक्या जिनमदिरार्चाम् तिष्ठन्ति शक्रादिभिरर्च्यमानाः ।
तावज्जिनादि प्रतिमा प्रतिष्ठा शिवार्थिनोऽनेन विधापयन्तु ।।३०।।

(प्रतिष्ठाचार्य प्रतिष्ठाकारकों पर आर्शीवाद के पुष्प क्षेपण करे) पश्चात् जिनेन्द्र देव की पूजा करें ।

पूजा (1)

देवस्त्वं त्रिजगन्नाथस्त्वं त्रैलोक्यैकनायकः ।
केवल ज्ञान दीपस्त्वं मिथ्यात्व ध्वंशनायकः ॥१॥

ओं ह्रीं सिंहासन दिव्यध्वनि चतुः षष्टि चामर प्रभामण्डलाशोकवृक्ष छत्रत्रय दुन्दुभि पुष्पवृष्टि मणिमयमाला भृंगार कलश दर्पण स्वस्तिक श्वेत ध्वजा व्यजनेन्द्र युगल यक्षद्वय सर्वाम्यन्तर बाह्योपकरण संयुक्त जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

हिमाचलान्निर्गतस्वर्धुनीय – सौरभ्यशीतोज्ज्वल नीरकुम्भैः ।
महामि सर्वज्ञपदाब्जयुग्मं शक्रादि भव्यौघ भव प्रशान्त्यै ॥२॥
ओं ह्रीं अष्टप्रातिहार्य संयुक्त जिनेन्द्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्पूरकाश्मीर सुचन्दनाद्यैः सौगन्ध्यभारेण सुगन्धिताशैः ।
महामि सर्वज्ञपदाब्जयुग्मं शक्रादिभव्यौघ भव प्रशान्त्यै ॥३॥
ओं ह्रीं अष्टप्रातिहार्य संयुक्त जिनेन्द्राय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

चन्द्रोज्ज्वलै र्निर्मल शालिपुञ्जैर्मुक्तावतारैरिव शोभमानैः ।
महामि सर्वज्ञपदाब्जयुग्मं शक्रादिभव्यौघभव प्रशान्त्यै ॥४॥
ओं ह्रीं अष्टप्रातिहार्य संयुक्त जिनेन्द्राय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

सत्पारिजात प्रभृति प्रसूनैरामोद सन्तोषित षट्पदोघैः
महामि सर्वज्ञपदाब्जयुग्मं शक्रादिभव्यौघभव प्रशान्त्यै ॥५॥
ओं ह्रीं अष्टप्रातिहार्य संयुक्त जिनेन्द्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

नानारसापूरितभव्यभोज्यै पक्वान्न शाल्योदनसञ्चयैश्च ।
महामि सर्वज्ञपदाब्जयुग्मं शक्रादिभव्यौघभव प्रशान्त्यै ॥६॥
ओं ह्रीं अष्टप्रातिहार्य संयुक्त जिनेन्द्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

रत्नप्रभादिद्युति संचितेन दीपेन भाभासित दिक्चयेन ।
महामि सर्वज्ञपदाब्जयुग्मं शक्रादिभव्यौघभव प्रशान्त्यै ॥७॥
ओं ह्रीं अष्टप्रातिहार्य संयुक्त जिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

---

(1) प. म. ला. जै. प्र. ह. लि डा.

पाटीरचूर्णेन सुगन्धितेन कर्पूरगन्धेन सुवासितेन ।
महामि सर्वज्ञपदाब्जयुग्मं शक्रादिभव्यौघभव प्रशान्त्यै ॥८॥
ओं ह्रीं अष्टप्रातिहार्य संयुक्त जिनेन्द्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

पूगार्द्रद्राक्षाफलचोचमोच – खर्जूर संशोभित मातुलिङ्गैः
महामि सर्वज्ञपदाब्जयुग्मं शक्रादिभव्यौघभव प्रशान्त्यै ॥९॥
ओं ह्रीं अष्टप्रातिहार्य संयुक्त जिनेन्द्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

पाटीरनीराक्षत पुष्पपुञ्ज नैवेद्यदीपादि समुच्चयेन ।
महामि सर्वज्ञपदाब्जयुग्मं शक्रादिभव्यौघभव प्रशान्त्यै ॥१०॥
ओं ह्रीं अष्टप्रातिहार्य संयुक्त जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्घावली

जाम्बूनदाब्द सहितं मणिबद्धरत्न भृंगारझारिवर भूषित मुक्ति सौख्यम् ।
वेद्यां प्रमाणरचितं भवशंङ्कराग्र चैत्यं महामि सुरवृन्द महामहेरम् ॥११॥
ओं ह्रीं वेदिकास्थित जिनचैत्यार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

नानामणीरवचित हेममयैकभूष मुल्लोच तोरणमृदंगमनेकवाद्यम् ।
वेद्यां प्रमाणरचितं भवशङ्कराग्र चैत्यं महामि सुरवृन्द महामहेरम् ॥१२॥
ओं ह्रीं वेदिकास्थित जिनचैत्यार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

गन्धोद – दुन्दुभिमरुज्जयरत्नवृष्टि संगीत किन्नर सुरासुरमान्चार्च्यम् ।
वेद्यां प्रमाणरचितं भवशङ्कराग्र चैत्यं महामि सुरवृन्द महामहेरम् ॥१३॥
ओं ह्रीं वेदिकास्थित - जिन- चैत्यायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पूर्णेन्दुछत्र – वर – चामर – वीज्यमान माखण्डलस्तवननिर्भर विश्वदेवम् ।
वेद्यां प्रमाणरचितं भवशंकराग्र चैत्यं महामि सुरवृन्द महामहेरम् ॥१४॥
ओं ह्रीं वेदिकास्थित -जिन - चैत्यायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

नेत्रे च कर्णहृदये शिवसौख्यारि रत्नानुबिम्बितमनर्घ्यं विजृम्भमाणम् ।
वेद्यां प्रमाणरचितं भवशंकराग्र चैत्यं महामि सुरवृन्द महामहेरम् ॥१५॥
ओं ह्रीं वेदिकास्थित - जिन - चैत्यायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

समूहं जिनबिम्बानां प्रत्येकं मङ्गलाष्टकैः ।
धूप कुम्भोपकरणैरर्चामः पूर्णद्रव्यकैः ॥१६॥
ओं ह्रीं वेदिकास्थित जिन- चैत्येभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

सद्बुद्धिं विशदं श्रुताद्यसहितं ज्ञानाब्धि पारंगतं ।
सेव्यं धीमत्पर्ययैर्गुणशतैः सर्वज्ञसत्केवलम् ।

लोकालोक विलोक भास्करविभं धर्मामृताम्भोनिधिं
साम्राज्याखिलशर्म विश्वकमलं सम्पूजयामोमुदा ।।१७।।

पद्धरि

जयसुमति प्रकाशनसारसार हतमिथ्यामोह महान्धकार ।
भव्यौघजलजबोधनदिनेन्द्र, प्रणताखिल देव नतामरेन्द्र ।।१८।।

सहजावधिराजित देवदेव, सुरनर किन्नर कृतसुखदसेव ।
गुणमणिरत्नाकर शर्मकन्द, प्रणताखिलदेव नतामरेन्द्र ।।१९।।

सज्ज्ञानरश्मिततिवर्धमान, सुखसन्तति नित्य विजृम्भमाण ।
जय परमानन्द महाजिनेन्द्र, प्रणताखिलदेवनतामरेन्द्र ।।२०।।

वरकेवल किरणावलि विचित्र लोकालोकालोकनपवित्र ।
कृतसमवसरणसद्धर्मकेन्द्र, प्रणताखिलदेव नतामरेन्द्र ।।२१।।

श्रीमन्दिर सुरसुन्दरनिवास, दिव्यध्वनि दूरीकृत नृत्रास ।
निर्ग्रंथतपोधन नत नरेन्द्र प्रणताखिलदेव नतामरेन्द्र ।।२२।।

श्वेतातपत्रशोभानिधान, चामीकर चामर वीज्यमान ।
भामण्डलमण्डित पृष्ठकेन्द्र, प्रणताखिलदेव नतामरेन्द्र ।।२३।।

मांगल्यशुभाष्टक प्रातिहार्य, सद्ध्यान विदूरित साम्पराय ।
मंगलपदार्थराजितवृषेन्द्र, प्रणताखिलदेव नतामरेन्द्र ।।२४।।

सेवागतदेव चतुर्णिकाय, किन्नरगन्धर्व महोरगाय ।
जयखेचर गगनांगणदिवेन्द्र, प्रणताखिलदेव नतामरेन्द्र ।।२५।।

मृदुगायक जनकृतकुशलताल, काहलवीणारस विनतमाल ।
भेरीमृदंग झल्लरिकृतेन्द्र, प्रणताखिलदेव नतामरेन्द्र ।।२६।।

श्रृंगारहारआभरणदूर, जयमारमल्ल विजयैकशूर ।
रम्भानवयौवनवदनचन्द्र, प्रणताखिलदेव नतामरेन्द्र ॥२७॥

संगीत नृत्यविभ्रम विलास, हे स्वात्मसौख्य सुन्दर निवास ।
भूयोभूयोविनमितं खगेन्द्र, प्रणताखिलदेव नतामरेन्द्र ॥२८॥

अग्रेसुरसुन्दर्योलसन्ति, वरभक्तिभावतस्तव नमन्ति ।
हे अमरीनेत्रचकोरचन्द्र, प्रणताखिलदेव नतामरेन्द्र ॥२९॥

मालिनी

सुरनरफणिनाथ स्वान्तसन्तोषकारी
जिनमदनप्रहारी विश्वलोकोपकारी ।
जयतु जयतु देवः श्री जिनेन्द्राभिधान
नमति ललितकीर्तिस्त्वां सुभक्ति प्रधानः ॥३०॥

ओं ह्रीं वेदिकास्थित - जिन -बिम्बेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

शार्दूल विक्रीडितम्

इत्थं ये जिनभक्तिसंगतधियः सज्ज्ञानसिन्धूपमाः,
माङ्गल्यैः कलितं कलङ्कहतये प्रार्चन्ति नित्यं जिनम् ।
ते पुत्रादि विभूतिभूषिततमा लब्ध्वा सुराणां सुखं,
क्षिप्रं यान्ति शिवं सदासुखमयं सन्दह्य कर्माटवीम् ॥

इत्याशीर्वाद पुष्पांजलिं क्षिपेत्

(यदि मात्र वेदी प्रतिष्ठा करना हो तो शान्ति हवन, शांति अष्टक, शांति भक्ति विर्सजन कर, यज्ञदीक्षा समापन विधिपूर्वक कार्य पूर्ण करें)


कलशारोहण

कलशारोहण

मंत्रः - (१) शान्ति मंत्र

मण्डलः - (१) याग मण्डल

(२) चौबीस तीर्थंकर मण्डल

(३) पंच परमेष्ठी मण्डल

यंत्रः - (१) विनायक यंत्र

(२) आकाश यंत्र

भक्तियांः - (१) सिद्ध भक्ति

(२) श्रुत भक्ति

(३) आचार्य भक्ति

(४) चैत्य भक्ति

(५) शान्ति भक्ति

कलशारोहण विधि

प्रस्तावना

न तामरशिरोरत्नप्रभाप्रोतनखत्विषे ।
नमो जिनाय दुर्वारमारवीरमदच्छिदे ।।१।।

जिनवाग्देवतां नत्वा गुरुन् साधून्पुनः पुनः ।
कलशारोहणार्चा वै करोमि जिनयज्ञके ।।२।।

तत्रादौ गन्धकुट्यन्तः सकलीकरणान्वितः ।
देवशास्त्रगुरूणां च पूजनं कुरुतां ततः ।।३।।

महर्षीणां पर्युपासं पञ्च कौमारपूजनम् ।
पञ्च सद्गुरु पूजां च शान्तिधारात्रयं पुनः ।।४।।

अर्हत्सिद्धमुनीनाञ्चाष्टकं कृत्वा प्रथक्ततः ।
कुम्भस्य स्नपनं गन्धलेपनं मालयार्चनम् ।।५।।

तत्र पुष्पाञ्जलिं क्षिप्त्वा सिद्धार्थकुशदर्भकान् ।
परिक्षिप्य जलैः कुम्भं सेचनीयं पृथक् पृथक् ।।६।।

सुरं मेघकुमाराख्यं पूजयेत्सलिलादिभिः ।
पूजयेत् शंकुदेवञ्च सप्तावयवपूजनम् ।।७।।

ध्वजादिरोहणं कृत्वा मंत्रोच्चारणपूर्वकम् ।
मंगलद्रव्यविन्यासं स्वकीयपरिपूजनम् ।।८।।

कुम्भैस्रग्धारणं चैव चन्दनैर्लेपनं पुनः ।
रक्षाभिधानं पुण्याहं घोषणं स्वस्तिवाचनम् ।।९।।

आशीर्वादविसर्गौ च सर्षपान् मस्तके क्षिपेत् ।
मन्दिरं त्रिकबारं च परिक्राम्येत मूर्धनि ।।१०।।

शिखरस्य स्वर्ण कुम्भंशंकौ संस्थापयेत्पुनः ।
जयवाद्यादि सोत्साहं नृत्यगीतैर्महाजनैः ।।११।।

सयागं च महापूजां महादानं पुनः पुनः ।
द्रव्यदानं तु ताम्बूलैः फलैः सन्तोषयेत्कृती ।।१२।।

जिनमंदिर में देवशास्त्र गुरु की पूजा करके महिर्षिपर्युपासन के अर्घ एवं पाच बाल-ब्रह्मचारी तीर्थकरों की पूजा या अर्घ चढा कर यागमण्डल विधान या पंचपरमेष्ठी विधान पूजा करे । घट यात्रा पश्चात् कलशाशुद्धि विधान, ८१ कलशो द्वारा शुद्धि, अभिषेक चन्दन लेपन शान्तिधारा आदि क्रियायें करना चाहिए फिर अर्हन्त सिद्ध और मुनियों की पूजा करे । कलशा के सातो नगो पर पुष्पक्षेपण कर जिनालय के ऊपर जावें और कलशा शिर पर रखकर शिखर की या जिनालय की तीन प्रदक्षिणा करें । पश्चात् शिखर की शुद्धि २१ मंत्रो द्वारा करना चाहिए । कलशारोहण ध्वजारोहण वादित्रों की ध्वनि पूर्वक जयकारा के साथ करे। अन्त में शांति हवन, पुण्याहवाचन, शांतिभक्ति, शांतिपाठ विसर्जन करे ।

प्रथम दिन

प्रातः नित्यमह पूजा करके मंगल ध्वजा की स्थापना करें । फिर पात्रशुद्धि, सकलीकरण, दिग्बंधन, रक्षामंत्र, शान्तिमंत्राराधन कर सवालाख या कम से कम ५१ हजार शांति मंत्र द्वारा जाप्य प्रारंभ करावें । मध्यान्ह घटयात्रा विधि करे और ८१ कलशों द्वारा कलश की शुद्धि एवं संस्कार पूजा आदि करना चाहिए ।

द्वितीय दिन

प्रातः नित्यमह पूजा, महर्षिपर्युपासन, पाच बाल ब्रह्मचारी तीर्थकरों की पूजा, यागमण्डल विधान या पचपरमेष्ठी विधान करना चाहिए ।

तृतीय दिन

प्रातः नित्यमह पूजा करके शिखरशुद्धि, कलशा एवं ध्वजारोहण करके शांति हवन विसर्जन करना चाहिए ।

कलशशुद्धि विधान

मंगलाष्टक, पात्रशुद्धि, दिग्बंधन, रक्षामत्र, शातिमत्र पढकर विनायक सिद्धयत्र की पूजा करें । आचार्य एवं श्रुतभक्ति पढ़ें । तदनन्तर नीचे के श्लोक बोलते हुए कलशा पर पुष्पक्षेपण करें

वृषभोऽजितनामा च शंभवश्चाभिनन्दनः ।
सुमति· पद्मभासश्च सुपश्र्वो जिनसत्तमः ॥
चन्द्राभ· पुष्पदन्तश्चशीतलोभगवान्मुनिः ।
श्रेयाश्च वासुपूज्यश्च विमलो विमलद्युतिः ॥

अनन्तोधर्मनामा च शान्तिः कुन्थुर्जिनोत्तमः ।
अरश्च मल्लिनाथश्च सुव्रतोनमितीर्थकृत् ॥

हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः ।
ध्वस्तोपसर्गदैत्यारिः पार्श्वो नागेन्द्रपूजितः ॥

कर्मान्तकृन्महावीरः सिद्धार्थकुलसम्भवः ।
एते सुरासुरौघेण पूजिता विमलत्विषः ॥

पूजिताभरताद्यैश्च भूपेन्द्रैर्भूरिभूतिभिः ।
चतुर्विधस्य संघस्य शान्ति कुर्वन्तु शाश्वतीम् ॥

(यह पढकर कलश पर पुष्प वर्षा करें)

वासुपूज्यस्तथामल्लिर्नेमि· पार्श्वोऽथसन्मतिः ।
कौमारे पञ्च निष्क्रान्तास्तान्यजे विघ्नशान्तये ॥

ओं ह्रीं पञ्च कौमार निष्क्रान्त जिनेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्हन् सिद्धस्तथा सूरिरुपाध्यायोऽथ सन्मुनिः ।
पञ्चैते गुरवो नित्यंत्यमाराध्या कलशोत्सवे ॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योयाध्यायसर्वसाधुभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

चन्दनैश्चन्द्रसंकशैः कर्पूरादिविमिश्रतैः ।
अर्चे कुम्भ जिनेन्द्रस्य प्रासादस्योपरि स्थितम् ॥

ओं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा नमः सुगन्धितद्रव्येण लेपनम् करोमि ।

शत्रवो निधनं यान्तु हतास्ते परिपंथिनः ।
सुखमायुः सदा चैवं प्रतापोऽप्रतिमोऽस्तु च ॥

ओं नमोऽर्हते भगवते शान्तिनाथाय सर्वशान्तिकराय सर्वक्षुद्रोपद्रवनाशनाय सर्वपरकृतपरचक्रविध्वंसनाय जिनमतसूर्योद्योतकाय नमः सर्वोपद्रवशान्तिं कुरु कुरु।

कलशा पर तीन बार शान्ति धारा देवें तदनन्तर अष्टद्रव्य से पूजा करें

अर्हत्सिद्धमुनीनां च क्रमौ परम पावनौ ।
व्योमगगाजलैः पूतैर्यजेऽहं कलशोत्सवे ॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्हत्सिद्धमुनीनां च क्रमौ परम पावनौ ।
चन्दन मिश्रोदकाद्यैर्यजेऽहं कलशोत्सवे ॥

ओ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्हत्सिद्धमुनीनां च क्रमौ परमपावनौ।
सदृक्षै रक्षतैर्दिव्यैर्यजेऽह कलशोत्सवे॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्योऽक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्हत्सिद्धमुनीनां च क्रमौ परमपावनौ।
कुन्दादिसमुदायैश्च यजेऽह कलशोत्सवे॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्हत्सिद्धमुनीना च क्रमौ परमपावनौ।
चरुभिः स्वर्णकरस्थाल्यैर्यजेऽहं कलशोत्सवे॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्हत्सिद्धमुनीनां च क्रमौ परमपावनौ।
प्रदीपैर्घृतपसद्‍भ्यै र्यजेऽहं कलशोत्सवे॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्हत्सिद्धमुनीनां च क्रमौ परमपावनौ।
धूपैर्धुपतिधूमाग्रैर्यजेऽहं कलशोत्सवे॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्हत्सिद्धमुनीनां च क्रमौ परमपावनौ।
मोचचोचफलाद्यैश्च यजेऽहं कलशोत्सवे॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलगन्धाक्षतैः पुष्पैश्चरुदीपसुधूपकैः।
फलैरर्धैर्महापूतैरर्हत्सिद्धमुनीन् यजे॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्ति धारा

ओं प्रीयन्तां प्रीयन्तां सर्वज्ञाः सर्वदर्शिनस्त्रिलोकेशास्त्रिलोकमहितास्त्रिलोकमध्ये तीर्थकरा भगवन्तोऽर्हन्तः परमवृषभादयो भुवनत्रयजनानां तेजःप्रतापबलवीर्य लक्ष्मी भाग्य सौभाग्यकरा भवन्तु। ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अजरामरा भवन्तु। सर्वशान्तिं तुष्टिं पुष्टिं बलं वीर्यं च कुर्वन्तु। (कलशा पर शान्तिधारा देवें)

जलधारा

यंत्रप्रस्थापितस्वर्णभृङ्गनिर्यातसज्जलैः ।
सेचयामि महोत्साहात्स्वर्णकुम्भमहोत्सवे ।।
ओं ह्री भृंगारादि कलशक्षालनं करोमि ।

अष्टगंधजलधारा

हेमाभकर्तृसत्कुम्भैश्चन्दनादिसुगन्धितैः ।
देवाराध्यजनोत्साहे स्नपनं ते करोम्यहम् ।।
ओं ह्रीं सुगन्धितसलिलेन कलशक्षालनं करोमि ।

केशरलेपन

पुन. पुनर्वि लिम्पयामि निर्लिप्तं गणपूजितम् ।
स्वर्णकुम्भमहोत्साहे यजेऽहं जिनमन्दिरम् ।।
ओं ह्रीं चन्दनेन पुनर्लिप्तं करोमि ।

जल धारा

क्षीरार्णवजलैः शुभ्रैः सुगन्धैःरससंयुतैः ।
कलशान् शोधयेत्सम्यक् स्थैर्यार्थ मन्दिरोपरि ।।
ओं ह्रीं जलैः कलशं परिषेचयामि

पुष्पक्षेपण

जिनमन्दिररक्षार्थ कुम्भादीनां च रोहणम् ।
करोमि द्योतनार्थ च ततः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।
ओं ह्रीं पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

कलश के चारों ओर सरसों का क्षेपण

सिद्धार्थकुशदर्भादीन् क्षेपयामि समन्ततः ।
तेन चैत्यगृहद्वारे क्षेत्ररक्षार्थमुत्तमान ।।
ओं ह्रीं सिद्धार्थकुशदर्भान् समन्तात् सर्वदिक्षु कुम्भोपरि परिक्षिपामि ।।

इस प्रकार कलश शुद्धि करके शान्ति भक्ति, शान्तिपाठ, विसर्जन करना चाहिए और कलश पवित्र एवं सुरक्षित स्थान पर रखना चाहिए ।

द्वितीय दिन

नित्यमहपूजा करके यागमण्डलविधान या पंचपरमेष्ठी विधान महर्षिपर्युपासन, पाच ब्रह्मचारी तीर्थकर पूजा या अर्घ शांतिपाठ विसर्जन करना चाहिए।

तृतीय दिन

शिखरशुद्धि विधान

मंगलाष्टक, पात्रशुद्धि, दिग्बंधन, रक्षामंत्र, शांतिमंत्राराधन, अभिषेक, नित्यमह विनायकयंत्र पूजा कर चैत्यभक्ति करना पश्चात् मंदिर शिखर की शुद्धि करना चाहिए।

१. ओं ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हअसिआउसा मंदिर शिखरस्य सर्वशान्त्यर्थ रत्नत्रय प्राप्त्यर्थ प्रथम कलशेनाभिषेकं करोम्यहम्।

२. ओं ह्रीं श्रां श्रीं श्रूं श्रौंश्रः हं सं पः ठः ठः आत्मविशुद्धिकरणार्थ मोहादि विघ्न विनाशार्थ च द्वितीय कलशेनाभिषेकं करोम्यहम्।

३. ओं ह्रीं क्म्ल्व्र्यूं हं सं श्रां श्रीं क्रौं क्ली सकलपाप विध्वंसनार्थ तृतीय कलशेनाभिषेकं करोम्यहम्।

४. ओं ह्रीं रव्म्ल्व्र्यूं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा चतुर्थ कलशेनाभिषेकं करोम्यहम्।

५. ओं ह्रीं ग्म्ल्व्र्यूं श्री क्रौं क्ष्वी रः रः हं हः पंचम कलशेनाभिषेकं करोम्यहम्।

६. ओं ह्रीं घ्म्ल्व्र्यूं ह्रां ह्री ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रां श्रीं श्रूं श्रौं श्रः षष्ठ कलशेनाभिषेकं करोम्यहम्।

७. ओं ह्रीं ङ्म्ल्व्र्यूं ओं ह्रां श्रां श्रीं क्ली ब्लूं सप्तम कलशेनाभिषेकं करोम्यहम्।

८. ओं ह्रीं चम्ल्व्र्यूं हं सं श्रां श्रीं क्रौं क्ली अष्टम कलशेनाभिषेकं करोम्यहम्।

९. ओं ह्रीं छ्म्लव्र्यूं श्री हं सः ह्रां ह्रीं द्रां द्री ह्रौं ह्रः नवम कलशेनाभिषेकं करोम्यहम्।

१०. ओं ह्रीं ज्म्ल्व्र्यूं अर्ह णमो विउलमदीणं दशम कलशेनाभिषेकं करोम्यहम्।

११. ओं ह्रीं झ्म्ल्व्र्यूं अर्ह णमोदशपुव्वीणं एकादश कलशेनाभिषेकं करोम्यहम्।

१२. ओं ञ्म्लव्र्यूं अर्ह णमोचउदश पुव्वीणं द्वादश कलशेनाभिषेकं करोम्यहम्।

१३. ओं ह्रीं अर्ह ट्म्ल्व्र्यूं णमोअट्ठ महानिमित्त कुसलाणं त्रयोदश कलशेनाभिषेकं करोम्यहम्।

१४. ओं ह्री श्री शान्तिनाथाय थ्म्लव्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय चतुर्दश कलशेनाभिषेकं करोम्यहम्।

१५.ओं ह्री श्री शान्तिनाथाय घ्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय पंचदश कलशेनाभिषेकं करोम्यहम् ।

१६.ओं ह्री श्री शान्तिनाथाय न्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय षोडस कलशेनाभिषेकं करोम्यहम् ।

१७.ओ ह्री श्री शान्तिनाथाय रम्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय सप्तदश कलशेनाभिषेकं करोम्यहम् ।

१८.ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय फ्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय अष्टादश कलशेनाभिषेकं करोम्यहम् ।

१९.ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय ब्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय एकोनविंशति कलशेनाभिषेकं करोम्यहम् ।

२०. ओ ह्री श्री शान्तिनाथाय भ्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय विंशति कलशेनाभिषेकं करोम्यहम् ।

२१.ओं ह्रां ह्री ह्रूं ह्रौं ह्रः म्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय एकविंशेन कलशेनाभिषेकं करोम्यहम् ।

इन २१ कलशों द्वारा शिखर की शुद्धि कराके शिखर पर चार दिशा में चार स्वस्तिक बनाकर तीन प्रदक्षिणा देकर कलशारोहण की क्रिया करना चाहिए ।

लौह रूप महाशङ्कों वैर वंश विनाशकः ।
शिखरे त्वं निषीदात्र महाभक्त्या स्थितो भव ॥

ओं ह्रीं हे शङ्कों आगच्छ, तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, सन्निहितो भव भव वषट्
(कलशदण्ड (कुश) का स्पर्श कर पुष्प छोड़ें)

अनेकान्त मतोद्योत प्रचण्डोऽथ दिवामणि·।
एवं वितर्क्कं शङ्कों चाये पुष्पवरोत्तमैः ॥

ओं ह्री शंक्वर्चनं करोमि (कुश पर पुष्प छोड़ें)

(१) स्थाल्या उपरिमे भागे सच्चामीकरचक्रिकाम्
स्थापये ऽहं विशेषेण मुखे च कलशोत्सवे

ओं ह्रीं णमोसव्व सिद्धाणं सिद्धचक्राधिपतये प्रथम स्थाने हेमकलशादि पीठे चक्रिका स्थापनं करोमि (प्रथम नग की स्थापना करें)

चक्रिकां हि समर्चामि धर्मचक्र समन्विताम्
पूजयेत्कलशोद्धारे जिनमंदिर रक्षकान् ।

ओं ह्रीं हेमकलशपीठे चक्रिकांपूजनं करोमीति स्वाहा । (प्रथम नग पर अर्घ चढावें)

(२) हेमपद्मस्थितं देव करोमि हेमपद्मवत्
जिनमंदिर मूर्धस्थं स्थिरं तिष्ठ दिवानिशम ।

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध चक्राधिपतये हेमपद्म स्थापनं करोमि ।
(द्वितीय नग की स्थापना करें ।)

हेम पद्म निभं हेम पद्मकुम्भं समर्चयेत्
प्रतिष्ठाया विधौ नित्यं जलगन्धाक्षतादिभिः।

ओं ह्रीं हेमपद्मार्चनं करोमीति स्वाहा । द्वितीय नग पर अर्घ चढ़ावें ।

(३) हिरण्यमयीं चक्रिकां पूजये विधितोऽन्वहम् ।
जिनमंदिरमूर्धस्थां परिपूर्ति प्रसूचिकाम्

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध चक्राधिपतये हिरण्य चक्रिका स्थापनं करोमि ।
तृतीय नग की स्थापना करें ।

हेमकुम्भमहे स्थालीं चक्रिकोपरि सुस्थिराम् ।
करोमि विधिवत्पूजां तस्याः कुम्भमहोत्सवे ॥

ओं ह्रीं हिरण्यचक्रिकापूजां करोमीति स्वाहा । तृतीय नग पर अर्घ चढ़ावें ।

(४) वृत्ता स्थूला सुरम्या च नानारत्नैः समर्चिता ।
चक्रवच्चक्रकारम्या स्थाप्या कुम्भाधिरोहणे ॥

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध चक्राधिपतये हेमकुम्भ चक्रिका स्थापनं करोमि ।
चतुर्थ नग की स्थापना करें ।

हेमकुम्भमहे स्थालीं पूजयेत् विधितो मुदा ।
जिनमंदिरनिर्माणे रक्षार्थं तदुपद्रवात् ।

ओं ह्रीं हेम कुम्भस्थाली पूजनं करोमीतिस्वाहा । चतुर्थ नग पर अर्घ चढावें ।

(५) स्थाल्यां उपरिमे भागे सच्चामीकर चक्रिकां ।
चिरं तिष्ठतु शोभा च करीभूतां जिन मूर्ध्नि ।

ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं सिद्धचक्राधिपतये कनक कुम्भ स्थापनं करोमि ।

पंचम नग की स्थापना करें ।

चक्रिका पूजनं कुर्वे रंगरक्षार्थमेव च ।
जलगन्धादिभि-सम्यक् शान्त्यर्थ कलशोत्सवे ।

ओं ह्री कनक कुम्भ स्थाली पूजनं करोमीति स्वाहा ।

पंचम नग पर अर्घ चढ़ावें ।

(६) चामीकरचक्रिकां च कर्मकाण्डनिकन्दना
अत्रैव च स्थिरभूत्वा चिरं तिष्ठ महामखे ।

ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं सिद्ध चक्राधिपतये चामीकर चक्रिका स्थापनं करोमि ।

षष्ठम नग को स्थापित करें ।

षष्ठस्थाने हि सुस्थाप्या सच्चामीकरचक्रिका ।
चक्रिकापूजन कुर्वे शान्त्यर्थ कलशोत्सवे ।।

ओं ह्रीं चामीकर चक्रिका पूजनं करोमीति स्वाहा ।

षष्ठम नग पर अर्घ चढ़ावें ।

(७) शालकुम्भमयी कुम्भे संस्थाप्या चूलिकावरा ।
सा कुम्भचूलिकाप्रोक्ता तां कुर्वे सुभगस्थिताम् ।।

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध चक्राधिपतये सप्तम स्थाने स्वर्ण कुम्भ चूलिकास्थापनं करोमि।

(सप्तम नग की स्थापना करें)

जलगन्धाक्षतैः पुष्पैरष्टद्रव्यमनोहरैः ।
हेमकुम्भमहे कुम्भचूलिकां पूजयेत् मुदा ।

ओं ह्रीं हेमकुम्भचूलिकापूजनं करोमि ।

(सप्तम नग पर अर्घ चढ़ावें)

मुक्तिदूती समासक्ते मूर्धनि स्तात्समानवा
देवाराध्य जनोत्साहं मिथ्यादृङ् मदमर्दनम् ।

ओं हीं कलशोपरि मालां धारयामि ।

(कलश पर माला बांधें ।)

स्रग्धारणं गन्धलेपं सर्वादिवचार्चनम् ।
स्वाभिषानमुद्घोष्य स्थापयेत्कलशं जनः ।

ओं ह्रीं परमब्रह्म मंदिरोपरि शिराप्रदेशे भद्रपीठ महाकुम्भ महापीठ चिरं स्थायीभव सर्वजीवानां क्षेमायुरारोग्यं वृद्ध्यर्थ तिष्ठ तिष्ठ याजक यजमानादीनां सर्वसौख्यविधानार्थ प्रत्यूहव्यूहप्रणाशनार्थ कल्पान्तस्थायी भव ।

यह पढ़कर कलश पर सब दिशाओं में पुष्प क्षेपण करें ।

तदनन्तर ८४ पृष्ठ से ध्वजपूजा करके यह मंत्र पढ़कर ध्वजारोहण करना चाहिए ।

रत्नत्रयात्मकतयाभिमतेऽत्रदण्डे,
लोकत्रयप्रकृतकेवलबोधरूपम् ।

संकल्पपूजितमिदंध्वजमर्च्यलग्ने,
स्वारोपयामि सति मंगलवाद्यघोषे ॥

ओंणमो अरिहंताणं स्वस्तिभद्रं भवतु सर्वलोकस्य शांति र्भवतु स्वाहा ।

मंदिर के कलश से ध्वजा की ऊंचाई का फल

कलशादुच्छ्रिते हस्तं ध्वजे नीरोगता भवेत् ।
द्विहस्तमुच्छ्रिते तस्मात्पुत्रर्द्धिर्जायते परा ॥

त्रिहस्तं सस्यसम्पत्तिर्नृपवृद्धिश्चतुःकरम् ।
पंचहस्तं सुभिक्षं स्याद्राष्ट्रवृद्धिश्च जायते ॥

मंदिर की शिखर पर लगे कलश से ध्वजा एक हाथ ऊंची हो तो आरोग्यकारक है । दो हाथ ऊंची ध्वजा पुत्र एवं सम्पत्तिकारक है । तीन हाथ ऊंची ध्वजा धन धान्यकारक है । चार हाथ ऊंची ध्वजा राजा की वृद्धिकारक है । पंच हाथ ऊंची ध्वजा सुभिक्ष और राष्ट्रवृद्धि करने वाली है ।

ध्वजारोहण कर शान्त्यष्टक, शान्ति भक्ति, पढ़कर नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ कर कार्य संपन्न करें । पश्चात् शान्ति हवन, पुण्याहवाचन, शांति पाठ, विसर्जन, कर दक्षदीक्षा सनापन विधि पूर्वक कार्य पूर्ण करें ।

भक्ति - संग्रह

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में भक्तियों का विधान

श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक जिनबिम्ब प्रतिष्ठा के पावन कार्य को सानन्द सम्पादित करने के लिए जन-जन की श्रद्धापूर्ण सद्भावना आवश्यक है। शिल्पी, कारीगर, कर्मचारी आदि से लेकर प्रतिष्ठाकारक, पदाधिकारी, व्यवस्थापक एवं दर्शनार्थी सभी सयमित दिनचर्या का पालन करते रहें। सभी प्रतिष्ठापात्र एवं पदाधिकारियों के साथ-साथ समाज के सभी श्रद्धालुजनों को शांतिमंत्राराधन करना चाहिए। कार्य निष्पादित करने के लिए सवालाख मंत्रों का जाप्य अनुष्ठान अनिवार्य है।

पंचकल्याणक महोत्सव में जितने साधर्मीजन पधारें प्रतिष्ठाचार्य सभी को मंत्राराधन की सतत् प्रेरणा देते रहें, क्योंकि जन-जन की समर्पित सद्भावना, दृढ आस्था एवं प्रतिष्ठापात्रों की संयमसाधना, निर्दोषचर्या ही प्रतिष्ठा कार्य को अतिशयकारी बनाती है।

प्रतिष्ठाकार्य के प्रारम्भ से लेकर समापन तक समय-समय पर प्रतिष्ठाचार्य एवं प्रतिष्ठापात्रो द्वारा कल्याणक सम्बंधी मंत्राराधन शुद्ध उच्चारण सहित करने का उल्लेख आचार्यो ने किया है। पंचकल्याणक प्रतिष्ठा प्रदर्शन का नहीं किन्तु साधना का कार्य है। यह मंत्राराधन ध्यान एवं भक्तियो के माध्यम से प्रतिमा में गुणारोपण की महत्वपूर्ण पद्धति है। इस कार्य में प्रतिष्ठाकारक, प्रतिष्ठाचार्य एवं समस्त प्रतिष्ठापात्रो की मन, वचन, काय की विशुद्धि, निर्दोषसयम, त्याग एवं दिगम्बराचार्य मुनिराजों की साधना एवं संस्कारारोपण, गुणारोपण, अंकन्यास, मंत्रन्यास, सूरिमंत्र, प्राणप्रतिष्ठा आदि क्रियाओं की मुख्य भूमिका है।

उक्त महत्वपूर्ण क्रियायें यंत्र, मंत्र एवं भक्तियों पर ही आधारित होती है, इन्हीं के माध्यम से पाषाण को संस्कारित करके पूज्यता स्थापित की जाती है। सभी कल्याणकों में भक्ति करने का विधान प्रतिष्ठाशास्त्रों में उल्लेखित है। प्रतिष्ठाचार्य को इस ओर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए, क्योंकि प्रतिष्ठा में मंच प्रदर्शन के कार्य की मुख्यता नहीं किन्तु आन्तरिक क्रियाओं का विधि-विधान ही कार्यकारी होता है इसमें शिथिलता करना उचित नहीं है।

गर्भकल्याणक[1]

इत्थ वै सिद्धचारित्रशान्तिभक्तीः ससंघका ।
गर्भावतारकल्याण क्रियां कुर्वन्तु याजकाः ॥

जन्मकल्याणक[2]

इत्थ वै सिद्धचारित्रशान्तिभक्तीः ससंघका. ।
जन्माभिषेककल्याण क्रियां कुर्वन्तु याजका ॥

तपकल्याणक[3]

सिद्धचारित्रयोगीशशान्तिभक्ती. ससंघका ।
दीक्षागृहणकल्याण क्रियां कुर्वन्तु याजकाः ॥

ज्ञानकल्याणक[4]

सिद्धश्रुतचारित्रर्षिशान्तिभक्ती. ससघकाः ।
केवलज्ञानकल्याण क्रियां कुर्वन्तु याजकाः ॥

निर्वाणकल्याणक[5]

सिद्धश्रुतचारित्रर्षि शिवशान्तीशभक्तिभि. ।
भक्त्यानिर्वाणकल्याण क्रियां कुर्वन्तु याजकाः ॥

(१) श्री नेमिचन्द्रदेव, प्रतिष्ठातिलक, श्लोक ४२६, प. आशाधर, प्रतिष्ठासारोद्धार, श्लोक ९० ।
(२) वही, श्लोक ४९५ । (३) वही, श्लोक ५२४, १०२ । (४) वही, श्लोक ५८९, ११६ ।
[illegible] श्लोक ६२१, १२६ ।

(१) पंचकल्याणस्तोत्रम्

यद् गर्भावतरात्पुरः सुरपतिः संतोषयन् भूतलं
दीनानाथजनांश्च दुःखदवतो निर्घाट्य हर्ष ददन् ।
षण्मासात्पुरतः परत्र नवसु स्वर्ण समावर्षयन्
श्री ह्री मुख्यकुमारिकाः प्रणियुजन् यस्यास्ति सेवापरः ।।१।।

स्वर्गानेकपमाधिरोह्य सदनाद्राज्ञः सुमेरुस्थलं
नीत्वा दुग्धपयोधिसंभृतनिपैः स्नानं चकारेन्द्रराट् ।
यत्स्तोत्रं सुविधातुमास्यमकरोत्साहस्रसंख्यं तथा
नृत्यप्रांगणसंगतस्तु वपुषं स त्वं जिनेन्द्रः प्रभु. ।।२।।

किंचिद्धेतुविलंभनादिह गतं साम्राज्यसौख्यं तृण-
प्रायं मोचितवान् त्रिलोकमहितं राज्यं समासादितुम् ।
कृत्वोग्रे तपसि स्थितोऽशुभविकृत्युत्पाटयन्मूलत-
श्चारित्रैश्यमगात्प्रभुर्गुणनिधिः स त्वं विभास्येव नः ।।३।।

कैवल्यावगमाच्चराचरजगद्वस्तु स्वरूपं करे
कृत्वा श्री समवस्थितौ नरपशुस्वर्गिव्रजं बोधयन् ।
धर्माभोभवदुःखतप्तभविनो दत्त्वा सुखास्वादनं
नीताः सोऽस्त्वपुनर्भवाय भवतां कल्याणकल्पद्रुमः ।।४।।

आयुर्नाम सुगोत्रशातनविधीनुक्त्वाल्पसर्वप्रकृ-
त्युन्माथं सुविधाय चैकसमये लोकांतमाप्तः स्वभूः ।
किंचिन्न्यूननिजात्मदेशकलनः सिद्धः परं ज्ञापक -
श्चिद्ज्ञानांबकवीर्यताप्तिविमलः स त्वं महान् पूज्यसे ।।५।।

इति पठित्वा पंचकल्याणारोपणविधिप्रतिज्ञानाय मूलप्रतिकृत्यग्रे पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।
(विधिनायक प्रतिमा के आगे पुष्प क्षेपण करें)

(२) सिद्धभक्ति

असरीरा जीवघणा उवजुत्ता दंसणेय णाणेय ।
सायारमणायारा लक्खणमेयतु सिद्धाणं ।।१।।

मूलोत्तरपयडीण बधोदयसत्तकम्मउम्मुक्का ।
मगलभूदा सिद्धा अट्ठ गुणा तीदससारा ।।२।।

अट्ठविहकम्म वियला सीदीभूदा णिरजणा णिच्चा ।
अट्ठगुणा किदकिच्चा लोयग्गणिवासिणो सिद्धा ।।३।।

सिद्धा णट्ठट्ठमला विसुद्धबुद्धीय लद्धिसब्भावा ।
तिहुअणसिरिसेहरया पसियंतु भडारया सव्वे ।।४।।

गमणागमणविमुक्के विहडियकम्मपयडिसघारा ।
सासहसुह सपत्ते ते सिद्धा वंदियो णिच्चं ।।५।।

जयमंगलभूदाण विमलाणं णाणदंसणमयाणं ।
तइलोइसेहराणं णमो सदा सव्वसिद्धाणं ।।६।।

सम्मत्तणाणदसणवीरिय सुहुम तहेव अवग्गहण ।
अगुरुलघु अव्वावाहं अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ।।७।।

तवसिद्धे णयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य
णाणम्मि दंसणम्मिय सिद्धे सिरसाणमस्सामि ।।८।।

इच्छामि भंते । सिद्धभत्ति काओसग्गो कओतस्सालोचेओ [१], सम्मणाणसम्म दंसणसम्मचरित्तजुत्ताणं अट्ठविहकम्मविप्पमुक्काणं, अट्ठगुणसंपण्णाणं, उड्ढलोय मत्थयम्मि पयट्ठियाणं तव सिद्धाणं णयसिद्धाणं संजमसिद्धाणं चरित्तसिद्धाणं अतीताणागदवड्ढमाण कालत्तयसिद्धाणं सव्वसिद्धाणं सयाणिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि[२] वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगईगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं । इति पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थ भावपूजावन्दनास्तवसमेतं कायोत्सर्गं करोमि ।

---

(१) धर्मध्यानदीपक एवं सिद्ध भक्ति प्रवचन (सहजानंद वर्णी) मे पाठांतर - कउस्सग्गोकओ तस्सालोचेउं (२) अचेमि - अच्चेमि, पूजेमि - पुज्जेमि ।

(३) श्रुतभक्ति

अर्हद्वक्त्रप्रसूतं गणधररचितं द्वादशांगं विशालं ।
चित्रं बह्वर्थयुक्तं मुनिगणवृषभैर्धारितं बुद्धिमद्भिः।।
मोक्षाग्रद्वारभूतं व्रतचरणफलं ज्ञेयभावप्रदीपं ।
भक्त्या नित्यं प्रवंदे श्रुतमहमखिलं सर्वलोकैकसारम् ।।१।।

जिनेन्द्रवक्त्रप्रविनिर्गतं वचो यतींद्रभूतिप्रमुखैर्गणाधिपैः ।
श्रुतं धृतं तैश्च पुनः प्रकाशितं द्विषट्प्रकारं प्रणमाम्यहं श्रुतम् ।।२।।
कोटीशत द्वादश चैव कोट्यो लक्षाण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव ।
पचाशदष्टौ च सहस्रसंख्यमेतच्छ्रुतं पंचपदं नमामि ।।३।।

अंगबाह्यश्रुतोद्भूतान्यक्षराण्यक्षराम्नये।
पंचसप्तैकमष्टौ च दशाशीति समर्चये ।।४।।
अरिहंतभासियत्थं गणहरदेवेहि गंथियं सम्मं ।
पणमामि भत्तिजुत्तो सुदणाणमहोवहि सिरसा ।।५।।

इच्छामि भंते । सुदभत्ति काओसग्गो कओतस्सालोचेओ अंगोवंगपइण्णयेपाहुडय परियम्मसुतपढमाणिओय पुव्वगयचूलिया चेव सुतत्थयत्थुइधम्मकहाइयं सुदं णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।। (कायोत्सर्ग करोम्यहम्)

(४) चारित्रभक्ति

संसारव्यसनाहतिप्रचलिता नित्योदयप्रार्थिनः ।
प्रत्यासन्नविमुक्तयः सुमतयः शांतैनसः प्राणिनः ।।
मोक्षस्यैव कृतं विशालमतुलं सोपानमुच्चैस्तरा -
मारोहंतु चरित्रमुत्तममिदं जैनेन्द्रमोजस्विनः ।।१।।

तिलोए सव्वजीवाणं हियं धम्मोवदेसणं ।
वड्ढमाणं महावीरं वंदित्ता सव्ववेदिणं ।।२।।

घाइकम्म विघातत्थं घाइकम्मविणासिणा ।
भासियं भव्वजीवाणं चारित्तं पंचभेददो ।।३।।

सामायियं तु चारित्तं छेदोवड्ढावणं तहा ।
तं परिहारविसुद्धि च संयम सुहमं पुणो ।।४।।

जहाखायं तु चारित्तं तहाखायं तु तं पुणे ।
किच्चाहं पंचहाचारं मंगलं मलसोहणं ।।५।।

अहिंसादीणि वुत्तानि महव्वयाणि पंच य ।
समिदीओ तदो पंच पंचइंदियणिग्गहो ।।६।।

छब्भेयावासभूसिज्जा अण्हाणत्तमचेलदा ।
लोयत्तं ठिदिभुत्ति च अदंतवणमेव च ।।७।।

एयभत्तेण संजुत्ता रिसिमूलगुणा तहा ।
दसधम्मा तिगुत्तीओ सीलाणि सयलाणि च ।।८।।

सव्वे विय परीसहा वुत्तुत्तरगुणा तहा ।
अण्णे वि भासिया संता तेसिंहाणीमयेकया ।।९।।

जइरागेण दोसेण मोहेण णदरेण वा ।
वंदित्ता सव्वसिद्धाणं सजुहा सामुमुक्खुण ॥१०॥

संजदेण मए सम्मं सव्वसंजमभाविणा ।
सव्वसंजमसिद्धीओ लब्भदे मुत्तिजं सुहं ॥११॥

धम्मो मंगलमुक्किट्ठं अहिंसासंजमो तओ ।
देवा वि तस्स पणमंति जस्स धम्मे सया मणो ॥१२॥

इच्छामि भंते चारित्तभत्तिकाओसग्गो कओ तस्सालोचेओ सम्मणाणजोयस्स सम्मत्ताहिट्ठियस्स सव्वपहाणस्स णिव्वाणमग्गस्स संजमस्स कम्मणिज्जरफलस्स खमाहरस्स पंचमहव्वयसंपण्णस्स तिगुत्तिगुत्तस्स पंचसमिदिजुत्तस्स णाणज्झाणसाहणस्स समयाइपवेसयस्स सम्मचरित्तस्स सयाणिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं । कायोत्सर्ग करोम्यहम् ।

(५) आचार्य भक्ति

देसकुलजाइसुद्धा विसुद्धमणवयणकायसंजुत्ता ।
तुम्हं पायपयोरुहमिह मगलत्थि मे णिच्चं ॥१॥

सगपर समय विदण्हू आगमहेदूहि चावि जाणित्ता ।
सुसमच्छ जिणवयणे विणएसुताणुरूवेण ॥२॥

बालगुरुबुड्ढसेहे गिलाणथेरेयखमणसंजुत्ता ।
अट्ठावयग्गअण्णे दुस्सीले चावि जाणित्ता ॥३॥

वयसमिदिगुत्तिजुत्ता मुत्तिपहे ठावया पुणो अण्णे ।
अज्झावयगुणणिलया साहुगुणेणावि संजुत्ता ॥४॥

उत्तमखमाइपुढवी पसण्णभावेण अच्छजलसरिसा ।
कम्मिंधणदहणादो अगणी वाऊ असंगादो ॥५॥

गयणमिव णिरुवलेवा अक्खोहा सायरुव्वमुनिवसहा
एरिसगुणणिलयाणं पाय पणमामि सुद्धमणो ॥६॥

संसारकाणणे पुण बंभममाणेहिं भव्वजीवेहिं ।
णिव्वाणस्स दु मग्गोलद्धो तुम्ह पसाएण ॥७॥

अविसुद्धलेसरहिया विसुद्धलेसेहि परिणदा सुद्धा ।
रुद्दड्ढे पुणचत्ता धम्मे सुक्के य संजुत्ता ॥८॥

ओग्गह ईहावायाधारणगुणसंपएहि संजुत्ता ।
सुत्तत्थभावणाए भावियमाणेहि वंदामि ॥९॥

तुम्हे गुणगण संथुदि अयाणमाणेण ज मए वुत्ता ।
दितु मम बोहिलाहं गुरुभत्तिजुदत्थओ णिच्चं ॥१०॥

इच्छामि भंते आइरियभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ सम्मणाणसम्मदंसण सम्मचरित्तजुत्ताणं पंचविहाचाराणं आयरियाणं आयारादिसुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं तिरयणगुणपालणरयाणं सव्वसाहूणं सया णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं । (कायोत्सर्गं करोम्यहम्)

(६) योगिभक्ति

थोस्सामि गणधराणं अणयाराणं गुणेहि तच्चेहि ।
अंजुलिमउलियहत्थो अहिवंदंतो सविभवेण ॥१॥

सम्म चेव य भावे मिच्छाभावे तहेव बोद्धव्वा ।
चइऊण मिच्छभावे सम्ममि उवट्ठिदे वंदे ॥२॥

दो दोसविप्पमुक्के तिदंड विरदे तिसल्ल परिसुद्धे ।
तिण्णिय गारव रहिए तियरण सुद्धे णमस्सामि ॥३॥

चउविहकसायमहणे चउगइ संसारगमणभयभीए ।
पंचासव पडि विरदे पंचेंदियणिज्जदे वंदे ॥४॥

छज्जीवदयावण्णे छडायदण विवज्जिये समिदभावे ।
सत्तभयविप्पमुक्के सत्ताणभयंकरे वंदे ॥५॥

णदट्ठमघट्ठाणे पणट्ठ कम्मट्ठ णट्ठ संसारे ।
परमट्ठणिट्ठिद मट्ठे अट्ठ गुणट्ठीसरे वंदे ॥६॥

णवबंभचेरगुत्ते णवणय सब्भाव जाणगे वंदे ।
दसविहधम्मट्ठाई दससंजम संजुदे वंदे ॥७॥

एयार संगसुद सायरपारगे बार संग सुदणिउणे ।
वारसविह तवणिरदे तेरस किरियापडे वंदे ॥८॥

भूदेसु दयावण्णे चउदस चउदस सुगंथ परिसुद्धे ।
चउदसपुव्वपगब्भे चउदसमल वज्जिदे वंदे ॥९॥

वदे चउत्थभत्तादि जावछम्मास खवणि पडि पुण्णे ।
वंदे आदावंते सूरस्स य अहि मुहट्ठिदे सूरे ॥१०॥

बहु विह पडिमट्ठाई णिसेज्जवीरासणोज्झवासीयं ।
अणिट्ठु अकुडुंबदीये चत्तदेहे य णमस्सामि ॥११॥

ठाणिय मोणवदीए अब्भोवासी य रुक्खमूलीय ।
धुदकेसमंसुलोमे णिप्पडियम्मे य वंदामि ॥१२॥

जल्लमललित्तगत्ते वन्दे कम्ममलकलुस परिसुद्धे।
दीहणहणमंसुलोये तव सिरिभरिए णमस्सामि ॥१३॥

णाणोदयाहि सित्ते सीलगुणविहूसिये तवसुगधे।
ववगयराय सुदट्ठे सिवगइ पहणायगे वंदे ॥१४॥

उग्गतवे दित्ततवे तत्तवे महातवे य घोरतवे।
वंदामि तव महंते तव सजमइड्ढि संपत्ते ॥१५॥

आमोसहिए खेलो सहिए जल्लोसहिय तव सिद्धे।
विप्पोसहिए सव्वो सहिए वंदामि तिविहेण ॥१६॥

अमयमुह खीरसप्पी सव्वी अक्खीणमहाणसे वंदे।
मणवत्ति वचवलिकाय वलिणो य वंदामि तिविहेण ॥१७॥

वरकुट्ठवीय बुद्धी पयाणुसारीय सभिण्ण सोयारे।
उग्गहईहसमत्थे सुतत्थ विसारदे वंदे ॥१८॥

आभिणिबोहिय सुद ओहिणाणिमणणाणि सव्वणाणी य।
वंदे जगप्पदीवे पच्चक्खपरोक्खणाणी य ॥१९॥

आयास तंतुजलसेढि चारणे जंघ चारणे वंदे।
विउवणइड्ढिपहाणे विज्जाहरपण्णसमणे य ॥२०॥

गइचउरगुलगमणे तहेव फलपुल्लचारणे वदे।
अणुवमतवमहंते देवासुरवंदिदे वंदे ॥२१॥

जियभय जियउवसग्गे जिय इंदिय परिसहे जियकसाये।
जियरायदोसमोहे जियसुहदुक्खे णमस्सामि ॥२२॥

एव मए अभित्थुआ अणयारा रायदोस परिसुद्धा।
संघस्स वरसमाहि मज्झवि दुक्खक्खयं दितु ॥२३॥

इच्छामि भंते जोगिभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ अड्ढाइज्जदीव दोसमुद्देसु पण्णा रस कम्मभूमीसु आदावण रुक्खमूल अब्भोवासठाणमोण वीरासणेक्कपासकुक्कड़ासण चउ-छ-पक्ख खवणादि जोगजुताणं सव्वसाहूणं सया णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कमक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिनगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

(कायोत्सर्ग करोम्यहम्)

(७) तीर्थंकर भक्ति

चउवीसं तित्थयरे उसहाईवीर पच्छिमे वंदे।
सव्वेसि मुणिगणहरसिद्धे सिरसा णमस्सामि ॥१॥

ये लोकेष्टसहस्त्रलक्षणधरा ज्ञेयार्णवांतर्गताः।
ये सम्यग्भवजालहेतुमथनाश्चन्द्रार्कतेजोधिकाः।
ये साध्विन्द्रसुराप्सरोगणशतैर्गीतप्रणुत्यार्चिताः।
तान्देवान् वृषभादिवीरचरमान्भक्त्या नमस्याम्यहम् ॥२॥

नाभेयं देवपूज्यं जिनवरमजितं सर्वलोकप्रदीपम्।
सर्वज्ञं सम्भवाख्यं मुनिगणवृषभं नन्दनं देवदेवम्।
कर्मारिघ्नं सुबुद्धिं वरकमलनिभं पद्मपुष्पाभिगंधं।
क्षान्तं दान्तं सुपार्श्वं सकलशशिनिभं चन्द्रनामानमीडे ॥३॥

विख्यातं पुष्पदन्तं भवभयमथनं शीतलं लोकनाथं।
श्रेयासं शीलकोशं प्रवरनरगुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यम्।
मुक्तं दान्तेंद्रियाश्वं विमलमृषिपतिं सिंहसैन्यं मुनीन्द्रम्।
धर्मं सद्धर्मकेतुं शमदमनिलयं स्तौमि शांतिं शरण्यम् ॥४॥

कुंथुं सिद्धालयस्थं श्रमणपतिमरं त्यक्तभोगेषु चक्रम्।
मल्लिं विख्यातगोत्रं खचरगणनुतं सुव्रतं सौख्यराशिम्।
देवेन्द्रार्च्यं नमीशं हरिकुलतिलकं नेमिचन्द्रं भवान्तम्।
पार्श्वं नागेन्द्रवंद्यं शरणमहिमितोवर्द्धमानं च भक्त्या ॥५॥

इच्छामि भंते चउवीसतित्थयर भत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेओ पंचमहाकल्लाणसंपण्णाणं अट्ठमहापाडिहेरसहियाणं चउतीसातिसयविसेस संजुत्ताणं वत्तीस देविंद मणिमय मउडमत्थयमहियाणं बलदेववासुदेव चक्कहररिसिमुणिजइअणगारोवगूढाणं थुइसय सहस्स णिलयाणं उसहाइवीर पच्छिमगंगलमहापुरिसाणं सया णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि। दुक्खक्खओ कम्मक्खओ वोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं। (कायोत्सर्ग करोम्यहम्)

(८) समाधि भक्ति

स्वात्माभिमुखसंवित्तिलक्षणं श्रुतचक्षुषा ।
पश्यन्पश्यामि देव त्वां केवलज्ञानचक्षुषा ।।
शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुति· संगति· सर्वदार्यैः ।
सद्वृत्ताना गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ।।१।।

सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे ।
सपद्यंता मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गा ।।२।।

जैनमार्गरुचिरन्यमार्गनिर्वेगता जिनगुणस्तुतौ मति· ।
निष्कलंकविमलोक्तिभावना· सभवन्तु मम जन्मजन्मनि ।।३।।

गुरुमूले यतिनिचिते चैत्यसिद्धान्तवार्धि सद्घोषे ।
मम भवतु जन्मजन्मनि सन्यसनसमन्वितं मरणम् ।।४।।

जन्मजन्मकृत पापं जन्मकोटिसमार्जितम् ।
जन्ममृत्युजरामूलं हन्यते जिनवंदनात् ।।५।।

आबाल्याज्जिनदेवदेव भवत· श्रीपादयो सेवया ।
सेवासक्तविनेयकल्पलतया कालोद्ययावद्गत· ।
त्वां तस्याः फलमर्थये तदधुना प्राणप्रयाणक्षणे ।
त्वन्नाम प्रतिबद्धवर्ण पठने कण्ठोऽस्त्वकुण्ठो मम ।।६।।

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनं ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद्यावन्निर्वाणसंप्राप्तिः ।।७।।

एकापि समर्थेय जिनभक्तिर्दुर्गति निवारयितुम् ।
पुण्यानि च पूरयितुं दातुं मुक्तिश्रियं कृतिन· ।।८।।

पंच अरिजयणामे पंचय मदिसायरे जिणेवंदे ।
पंचजसोयरणामे पचय सीमदरे वदे ।।९।।

रयणत्तय च वंदे चव्वीस जिणे च सव्वदा वंदे ।
पंचगुरुण वन्दे चारणचरण सदा वदे ।।१०।।

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म वाचकं परमेष्ठिनः ।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणिदध्महे ।।११।।

कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् ।
सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ।।१२।।

आकृष्टिं सुरसंपदां विदधते मुक्तिश्रियो वश्यता -
मुच्चाटं विपदां चतुर्गतिभुवां विद्वेषमात्मैनसाम् ।
स्तंभं दुर्गमनं प्रति प्रयततो मोहस्य सम्मोहनम् ।
पायात्पंञ्चनमस्क्रियाक्षरमयी साराधनादेवता ।।१३।।

अनन्तानन्तसंसार-संततिच्छेद-कारणम् ।
जिनराजपदाम्भोज-स्मरणं शरणं मम ।।१४।।

अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात् कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ।।१५।।

नहि त्राता नहि त्राता नहि त्राता जगत्त्रये ।
वीतरागात्परोदेवो न भूतो न भविष्यति ।।१६।।

जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिनेदिने ।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु सदा मेस्तु भवे भवे ।।१७।।

याचेऽहं याचेऽहं जिन तव चरणारविन्दयोर्भक्तिम् ।
याचेऽहं याचेऽहं पुनरपि तामेव तामेव ।।१८।।

विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति शाकिनीभूतपन्नगाः ।
विषो निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ।।१९।।

इच्छामि भंते समाहिभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ रयणत्तयरुवपरमप्पज्झाण लक्खणंसमाहिभत्तीयेसया णिच्चकालंअच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं । (कायोत्सर्ग करोम्यहम्)

(९) निर्वाणभक्ति

अट्ठावयम्मि उसहो चंपाए वासुपुज्ज जिणणाहो ।
उज्जंते णेमिजिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो ।।१।।

वीसं तु जिणवरिंदा अमरासुरवंदिदा धुदकिलेसा ।
सम्मेदे गिरि सिहरे णिव्वाणगया णमोतेसिं ।।२।।

वरदत्तो य वरंगो सायरदत्तोय तारवरणयरे ।
आहुट्ठय य कोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ।।३।।

णेमिस्सामि पजुण्णो संबुकुमारो तहेव अणिरुद्धो ।
वाहत्तरिकोडीओ उज्जंते सत्तसया सिद्धा ।।४।।

रामसुआवण्णि जणा लाडणरिंदाण पंच कोडीओ ।
पावागिरवर सिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ।।५।।

पांडुसुआ तिण्णि जणा दविडणरिंदाण अट्ठकोडीओ ।
सित्तुंजे गिर सिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ।।६।।

संतेजे बलभद्दा जदुव णरिंदाण अट्ठकोडीओ ।
गजपंथे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ।।७।।

राम हणु सुग्गीओ गवय गवक्खो य णील महणीलो ।
णवणवदी कोडीओ तुंगीगिरिणिव्वुदे वंदे ।।८।।

णंगाणंगकुमारा कोडी पंचद्ध मुणिवरा सहिया ।
सवणागिरिवरसिहरे णिव्वाण गया णमो तेसिं ।।९।।

दहमुहरायस्स सुआ कोडिपंचद्ध मुणिवरा सहिया ।
रेवाउहय तडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ।।१०।।

रेवाणइए तीरे पच्छिम भायम्मि सिद्धवरकूटे ।
दो चक्की दहकप्पे आहुट्ठयकोडिणिव्वुदे वंदे ।।११।।

वडवाणीवरणयरे दक्खिणभायम्मि चूलगिरिसिहरे ।
इंदजीदकुंभयणो णिव्वाण गया णमो तेसिं ।।१२।।

पावागिरिवरणयरे सुवण्णभद्दाइमुणिवरा चउरो ।
चलणाणईतडग्गे णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥१३॥

फलहोडीवरगामे पच्छिमभायम्मि दोणगिरि सिहरे ।
गुरुदत्ताइ मुणिंदा णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥१४॥

णायकुमार मुणिंदो वालि महावालि चेव अज्झेया ।
अट्ठावयगिरि सिहरे णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥१५॥

अच्चलपुरवर णयरे ईसाणेभाए मेढगिरि सिहरे ।
आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१६॥

वंसत्थलवर णयरे पच्छिमभायम्मि कुंथुगिरि सिहरे ।
कुलदेसभूसणमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१७॥

जसहररायस्स सुआ पंचसयाइं कलिंग देसम्मि ।
कोडिसिलाए कोडिमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१८॥

पासस्स समवसरणे सहिया वरदत्ताइ मुणिवरा पंच ।
रिस्सिंदे गिरि सिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१९॥

जे जिणु जित्थु तत्था जे दु गया णिव्वुदिं परमं ।
ते वंदामि य णिच्चं तिरयण सुद्धो णमस्सामि ॥२०॥

सेसाणं तु रिसीणं णिव्वाणं जम्मि जम्मि ठाणम्मि ।
ते हं वन्दे सव्वे दुक्खक्खयकारणट्ठाए ॥२१॥

पासं तह अहिणंदण णायद्दहि मंगलाउरे वंदे ।
अस्सारम्मे पट्टणि मुणिसुव्वओ तहेव वंदामि ॥२२॥

बाहुबलि तह वंदमि पोदणपुर हत्थिणापुरे वंदे ।
संती कुंथु व अरहो वाराणसिये सुपास पासं च ॥२३॥

माहुरए अहिछित्ते वीरं पासं तहेव वंदामि ।
जम्बुमुणिंदो वंदे णिव्वुइ पत्तो वि जंवुवणगहणे ॥२४॥

पंचकल्लाण ठाणइ जाणवि संजादमच्चलोयम्मि ।
मणवयणकायसुद्धो सव्वे सिरसा णमस्सामि ॥२५॥

अग्गलदेवं वंदमि वरणयरे णिवणकुण्डली वंदे।
पासं सिरपुरि वंदमि होलागिरि संख देवम्मि ॥२६॥

गोम्मटदेवं वंदमि पंचसयं धणुह देह उच्चं तं।
देवा कुणति वुट्टी केसरकुसुमाण तस्स उवरम्मि ॥२७॥

णिव्वाण ठाण जाणवि अइसयठाणाणि अइसयेसहिया।
संजाद मिच्चलोए सव्वे सिरसा णमस्सामि ॥२८॥

जो जण पढइ तियालं णिव्वुइकंडंपि भाव सुद्धीए।
भुंजदि णरसुरसुक्खं पच्छा सो लहउ णिव्वाणं ॥२९॥

इच्छामि भंते परिणिव्वाणभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ इमम्मि अवसप्पिणीए चउत्थसमयस्स पच्छिमे भागे आहुट्ठयमासहीणे वास च उक्कम्मि सेसकालम्मि पावाए णयरीए कत्तियमासस्स किण्हचउद्दसिए रत्तीए सादीए णक्खत्ते पच्चूसे भयवदो महदि महावीरो वड्ढमाणो सिद्धिंगदो तीसुविलोएसु भवणवासियवाणविंतर जोइसिइ कप्पवासियत्ति चउव्विहा देवासपरिवारा दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण धूवेण दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण वासेण, दिव्वेण ण्हाणेण, सया णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति वंदंति णमस्संति परिणिव्वाणमहाकल्लाणपुज्जं करंति अहमवि इहसंतो तत्थ सत्ताइ णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।
(कायोत्सर्गं करोम्यहम्)

(१०) नवदेव भक्ति

अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायेभ्यस्तथा च साधुभ्यः ।
सर्वजगद्वंद्येभ्यो नमोऽस्तु सर्वत्र सर्वेभ्यः ।।१।।

क्षान्त्यार्जवादिगुणगणसुसाधनं सकललोकहितहेतुं ।
शुभधामनिधातारं वन्दे धर्मं जिनेन्द्रोक्तम् ।।२।।

मिथ्याज्ञानतमोवृतलोकैकज्योतिरमितगमयोगि ।
सागोपांगमजेय जैन वचनं सदा वन्दे ।।३।।

भवनविमानज्योतिर्व्यन्तरनरलोकविश्वचैत्यानि ।
त्रिजगदभिवंदितान त्रेधा वन्दे जिनेन्द्राणाम् ।।४।।

भुवनत्रयेऽपि भुवनत्रयाधिपाभ्यर्च्यतीर्थकर्तॄणां
वन्दे भवाग्निशान्त्यै विभवानामालयालीस्ताः ।।५।।

इति पंचमहापुरुषाः प्रणुताजिनधर्मवचनचैत्यानि ।
चैत्यालयाश्च विमला दिशन्तु बोधिं बुधजनेष्टाम् ।।६।।

तदनु जपतिश्रेयान्धर्मः प्रवृद्धमहोदयः
कुगतिविपथक्लेशाद्योऽसौ विपाशयति प्रजाः ।

परिणतनयस्याङ्गीभावाद्विविक्तविकल्पितम् ।
भवतु भवतस्त्रातृ त्रेधा जिनेन्द्रवचोऽमृतम् ।।७।।

तदनुजयताज्जैनीवित्तिः प्रभङ्गतरङ्गिणी
प्रभवविगमध्रौव्यद्रव्यस्वभावविभावनी ।

निरुपमसुखस्येदं द्वारं विघट्य निर्गलम् ।
विगतरजतां मोक्षं देयान्निरत्ययमव्ययम् ।।८।।

इति पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्म क्षयार्थभाव पूजा वन्दनास्तवं समेतं पंचमहागुरुभक्ति -कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(११) लघुचैत्य भक्ति

वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु नंदीश्वरे यानि च मंदिरेषु ।
यावंति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वंदे जिनपुंगवानां ॥

अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां ।
वनभवनगतानां दिव्यवैमानिकानां ।
इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां ।
जिनवरनिलयानां भावितोऽहं स्मरामि ॥

जम्बूधातकिपुष्करार्द्धवसुधा क्षेत्रत्रये ये भवाश्‍-
चंद्राम्भोजशिखण्डिकंठकनकप्रावृड्घनाभाजिनाः ।
सम्यग्ज्ञानचरित्रलक्षणधरादग्धाष्टकर्मेन्धनाः ।
भूतानागतवर्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जंबुवृक्षे ।
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचके कुण्डले मानुषांके ।
इष्वाकारेऽजनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यंतरे स्वर्गलोके ।
ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे भवनमहितले यानि चैत्यालयानि ॥

द्वौ कुंदेंदुतुषारहारधवलौ द्वाविन्द्रनीलप्रभौ,
द्वौबंधूकसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ ।
शेषाः षोडशजन्ममृत्युरहिताः संतप्तहेमप्रभा-
स्ते संज्ञानदिवाकराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छंतु नः ॥

इच्छामि भंते ! चेइयभत्ति कओसग्गो कओ तस्सालोचेउं अहलोय तिरियलोय उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिण चेइयाणि ताणि सव्वाणि तीसु वि लोएसुभवणवासिय वाण विंतर जोइसिय कप्पवासियत्ति चउव्विहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण धूवेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ण्हाणेण णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति वदंति णमस्संति । अहमवि इहसंतो तत्थ संताइ णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुण संपति होउ मज्झं ।

(अथ पौर्वाह्निक देववंदनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल कर्म क्षयार्थ भाव पूजा वन्दना स्तव समेतंश्रीपञ्च महागुरुभक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम्)

(१२) शान्त्यष्टकं (शान्ति भक्ति)

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन् पादद्वयं ते प्रजाः ।
हेतुस्तत्र विचित्र दुःखनिचयः संसारघोरार्णवः ।
अत्यन्तस्फुरदुग्ररश्मिनिकरव्याकीर्णभूमण्डलो
ग्रैष्मः कारयतीन्दुपादसलिलच्छायानुरागं रविः ।।१।।

क्रुद्धाशीर्विषदष्टदुर्जय- विषज्वालावलीविक्रमो
विद्याभैषजमंत्र तोयहवनैर्याति प्रशान्तिं यथा ।
तद्वत्ते चरणारुणांबुजयुगस्तोत्रोन्मुखानां नृणां ।
विघ्नाः कायविनायकाश्च सहसाशामयन्त्यहो विस्मयः ।।२।।

संतप्तोत्तमकांचनक्षितिधरश्रीस्पर्द्धिगौरद्युते ।
पुंसां त्वच्चरणप्रणामकरणात्पीडाः प्रयान्ति क्षयम् ।
उद्यद्भास्करविस्फुरत्करशतव्याघातनिष्कासिता ।
नाना देहि विलोचनद्युतिहरा शीघ्रं यथा शर्वरी ।।३।।

त्रैलोक्येश्वरभंगलब्ध विजयादत्यंतरौद्रात्मकान् ।
नाना जन्मशतान्तरेषु पुरतो जीवस्य संसारिणः ।।
को वा प्रस्खलतीह केन विधिना कालोग्रदावानलान्-
नस्याच्चेत्तव पादपद्मयुगलस्तुत्यापगावारणम् ।।४।।

लोकालोकनिरंतर - प्रविततज्ञानैकमूर्ते विभो ।
नानारत्नपिनद्ध दण्डरुचिरश्वेतातपत्रत्रयम् ।
त्वत्पादद्वयपूतगीतरवतः शीघ्रं द्रवन्त्यामयाः
दर्पाध्मातमृगेन्द्रभीमनिनदाद्वन्या यथा कुंजराः ।।५।।

दिव्यस्त्रीनयनाभिरामविपुलश्रीमेरुचूडामणे
भास्वद्बालदिवाकरद्युतिहर प्राणीष्टभामण्डलम् ।
अव्याबाधमचिन्त्यसारमतुलं त्यक्तोपमं शाश्वतम् ।
सौख्यं त्वच्चरणारविन्दयुगलं स्तुत्यैव संप्राप्यते ।।६।।

यावन्नोदयते प्रभापरिकरः श्रीभास्करोभासयं-
स्तावद्धारयतीह पंकजवनं निद्रातिभारश्रमम् ।
यावत्त्वच्चरणद्वयस्य भगवन्नस्यात्प्रसादोदय-
स्तावज्जीवनिकाय एष वहति प्रायेण पापं महत् ।।७।।

शान्ति शांतिजिनेन्द्र शांतमनसस्त्वत्पादपद्माश्रयात्,
सप्राप्ताः पृथिवीतलेषु बहवः शान्त्यर्थिन. प्राणिन. ।
कारुण्यान्मम भक्तिकस्य च विभो दृष्टि प्रसन्ना कुरु ।
त्वत्पादद्वय दैवतस्य गदत शान्त्यष्टक भक्तित. ॥८॥

शांतिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं शीलगुणव्रतसंयमपात्रं ।
अष्टशतार्चितलक्षणगात्र, नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम् ॥९॥

पञ्चममीप्सितचक्रधराणां, पूजितमिन्द्रनरेन्द्र गणैश्च ।
शान्तिकरं गणशान्तिमभीप्सु षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥१०॥

दिव्यतरु सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ ।
आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मडलतेज. ॥११॥

त जगदर्चितशान्तिजिनेन्द्रं शान्तिकर शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शान्ति मह्यमर पठते परमा च ॥१२॥

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नै शक्रादिभि सुरगणै स्तुतपादपद्मा. ।
तेमे जिना. प्रवरवशजगत्प्रदीपा. तीर्थकरा सततशांतिकरा भवन्तु ॥१३॥

संपूजकानां प्रतिपालकाना यतीन्द्रसामान्यतपोधनाना ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञ. करोतु, शान्ति भगवज्जिनेन्द्र ।
क्षेम सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान्धार्मिको भूमिपाल ।
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवाव्याधयो यान्तुनाशम् ॥१४॥

दुर्भिक्ष चौरमारी क्षणमपि जगतां मास्मभूज्जीवलोके ।
जैनेन्द्रं धर्मचक्र प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥१५॥

तद् द्रव्यमव्ययमुदेतु शुभः स देशः सन्तन्यतां प्रतपता सतत स काल ।
भाव. स नन्दतु सदा यदनुग्रहेण रत्नत्रय प्रतपतीह मुमुक्षुवर्गे ॥१६॥

प्रध्वस्तघातिकर्माण. केवलज्ञानभास्करा ।
कुर्वन्तु जगतां शान्ति वृषभाद्या जिनेश्वरा ॥१७॥

इच्छामि भन्ते शान्तिभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचओ पंचमहाकल्लाणसंपण्णाणं अट्ठमहापाडिहेरसहियाणं चउतीसातिसयविसेससंजुत्ताणं बत्तीसदेवेन्दमणिमय मउड मत्थयमहियाणं बलदेव वासुदेवचक्कहररिसिमुणिजदिअणगारोवगूढाणं थुइसय सहस्सणिलयाणं उसहाइवीर पच्छिम मंगल महापुरिसाणं सयाणिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ वोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं । (कायोत्सर्ग करोम्यहम्)

मंत्राधिकार

मंत्र एवं मंत्रशक्ति

मकारं च मनः प्रोक्तं त्रकारं त्राण मुच्यते ।
मनस्त्राणत्वयोगेन मंत्र इत्यभिधीयते ॥[1]

'मं' का अर्थ मन अथवा मन से संबंध रखने वाली मनोकामना, 'त्र' का अर्थ है रक्षा करना इस प्रकार जो मनोकामना की रक्षा करे वह 'मंत्र' कहलाता है।

चित्त को एकाग्र करने और आत्मशोधन करने के लिये मंत्र साधन है, जैसे आत्म कल्याण के लिये स्वाध्याय, चिंतन, मनन एवं ध्यान आत्मसात होना आवश्यक है। मंत्र आत्मिक शक्ति का विकास करता है और लौकिक एवं पारलौकिक कार्यों की सिद्धि कराता है। मनोविज्ञान मानता है कि मानव की दृश्य क्रियायें चेतन मन में एवं अदृश्य क्रियायें अचेतन मन में होती हैं। इन दोनों क्रियाओं को मनोवृत्ति कहा जाता है। साधारणतः मनोवृत्ति शब्द चेतन मन की क्रिया का ही बोध कराता है पर इसके तीन भेद हैं (१) ज्ञानात्मक (२) वेदनात्मक (३) क्रियात्मक। मनुष्य में यह तीनों एक साथ होते है, ज्ञान के साथ ही वेदना और क्रियात्मकभाव की अनुभूति होती है। ज्ञानकेन्द्र एवं क्रियाकेन्द्र में मंत्राराधन से घनिष्टता आती है और मनुष्य की मनोवृत्ति को सुदृढ़ होने के साथ साथ आत्म विकास की प्रेरणा मिलती है। **'मंत्र के प्रति पूर्ण विश्वास एवं सच्ची श्रद्धा अनिवार्य है'** विश्वास एवं श्रद्धा के साथ संयम एवं विवेक पूर्वक किया गया मंत्राराधन आत्मशक्ति (उर्जा) को बढाता है जो अनादि परिभ्रमण मिटाती है एवं लौकिक कार्यों को सिद्ध करने की शक्ति देता है।

आज भी मंत्रों द्वारा भयंकर सर्प, वृश्चिक आदि विषैले जीवों के विष का प्रतिकार तो होता ही है कैंसर जैसी लाइलाज बीमारी भी मंत्र पर दृढ श्रद्धान एवं इच्छा शक्ति से ठीक होती है। [2]मंत्रों द्वारा मानवीय शक्ति से परे कार्य होने के उदाहरण तो अनेकों हैं। कार्यपूर्ति/कार्य सिद्धि में मंत्र साधक की भावना का ही प्रभाव मुख्य होता है। मंत्र एक साधन है जिसके द्वारा आत्मोत्थान, परकल्याण के साथ तांत्रिक पद्धति से परघात तक हो सकता है। मंत्र का प्रयोग स्वार्थ सिद्धि में न करके समाज एवं राष्ट्र के हित में करें तो आज भी हिंसा के इस दुष्चक्र को रोका जा सकता है। मंत्र साधना के भेद मंत्रसाधक की भावना/मनोवृत्ति पर निर्भर होते हैं। मुख्य भेद इस प्रकार हैं।

(१) वशीकरण (२) स्तंभन (३) आकर्षण (४) शान्तिक (५) पौष्टिक (६) मारक (७) विद्वेषण (८) उच्चाटन

---

१. श्रावक का नित्य क्रिया कलाप-संकलन श्री आदिसागर मुनि पृष्ठ-७७

२. मृत्युंजय णमोकार-मुनि श्री अमरेन्द्रविजय जी

इनकी साधना/सिद्धि का विवरण मंत्र शास्त्रों में पूर्ण विवरण एवं विधिविधान सहित दिया गया है संक्षेप में इसे सलग्न चार्ट में दर्शाया गया है।

गृहे जपफलं प्रोक्तं वने शतगुणं भवेत् ।
पुण्यारामे तथारण्ये सहस्रगुणितं मतम् ।।

पर्वते दशसाहस्रं च नद्यां लक्षमुदाहृतं ।
कोटि देवालये प्राहुरनन्तं जिनसन्निधौ ।।[१]

घर में मंत्राराधन करने से एक गुणा, वन में सौ गुना, नशिया एवं वन में हजार गुना, पर्वत पर दस हजार गुना, नदी पर लाख गुना, देवालय में करोड़ गुना, जिनेन्द्र देव के समक्ष अनंत गुना फल दायक होता है। अतः कार्य सिद्धि के लिये मंत्राराधन देवालय या जिनेन्द्र देव के समक्ष करना चाहिये।

मंत्र आत्मशक्ति जागृत कर दिशाबोध देता है। प्रत्येक कार्य मे मंत्राराधन आवश्यक है। पंचकल्याणक, जिनबिम्ब प्रतिष्ठा में सवा लाख शांति मंत्र का जाप, वेदीप्रतिष्ठा, मानस्तम्भ प्रतिष्ठा, कलशारोहण एवं विधान पाठ में सवालाख, इक्यावन हजार, इक्तीस हजार मंत्र का जाप आवश्यक है।

उच्चारण शुद्ध हो, संयम एव साधन पूर्वक मंत्र का अर्थ ध्यान में होना अनिवार्य है। मंत्रो का निर्माण अक्षयशक्ति वाले बीजाक्षरों द्वारा होता है। प्रत्येक अक्षर का अपना अपना प्रभाव होता है, उसके विन्यास, ऊर्जा, ध्वनितरंग धैर्य, रचना सभी का सम्मिलित प्रभाव मंत्र मे निहित होता है। संत शिरोमणि दिगम्बराचार्य विद्यासागर महाराज जी ने शब्द रचना/विन्यास पर विशेष कार्य किया है। साहित्य समीक्षकों ने उन्हें "शब्दों का जादूगर" कहा है। जैसे "ष" का निर्माण "प" का पेट फाड़कर हुआ है अर्थात पाप और पुण्य को नाश करने वाला कर्मातीत हो जाता है।[२] 'ष' का मंत्रों में प्रयोग पाप और पुण्य से परे मोक्ष प्राप्ति मे परम सहयोगी है। इसी प्रकार प्रत्येक स्वर-व्यंजन का अर्थ होता है और उस में अनंत शक्ति समाहित है। अत मंत्र पढ़ते समय शुद्ध उच्चारण का विशेष ध्यान रखना चाहिये।

मंत्राधिकार में मंत्रों की रचना, भेद प्रभाव की विस्तृत जानकारी के साथ साथ विधान एवं प्रतिष्ठा कार्य में उपयोगी मंत्रों को दिया गया है।

---

(१) श्री गोम्मट प्रश्नोत्तर चिंतामणि गुणधराचार्य कुंथुसागर महाराज पृष्ठ ८५५
(२) "मूकमाटी" महाकाव्य आचार्य विद्यासागर महाराज पृष्ठ ३९८

मंत्र साधना के आवश्यक नियम

मत्र	ऋतु	समय	दिशा	आसन	मुद्रा	हस्त	अंगुलि	वस्त्र	योग	वायु	मण्डल	ध्यानवर्ग	माला	पल्लव
वशीकरण	वसत	पूर्वान्ह	उत्तर	स्वस्तिक आसन	सरोजमुद्रा	वामहस्त	अनामिका	रक्त	पूरक	वाम	जल	रक्त	प्रवाल	वषट्
स्तभन	वसत	पूर्वान्ह	पूर्व	वज्रासन	शखमुद्रा	दक्षिण	तर्जनी	पीत	कुम्भक	दक्षिण	पृथ्वी	पीत	स्वर्ण	घेघे
आकर्षण	वसत	पूर्वान्ह	दक्षिण	दण्डासन	अकुशमुद्रा	दक्षिण	कनिष्ठा	उदयार्क	पूरक	वाम	अग्नि	अरुण	प्रवाल	वौषट्
शान्तिक	हेमत	अर्द्धरात्रि	पश्चिम	पद्मासन	ज्ञानमुद्रा	दक्षिण	मध्यमा	श्वेत	पूरक	वाम	जल	चन्द्रकात	स्फटिक	स्वाहा
पौष्टिक	शिशिर	प्रभात	नैऋत्य	पद्मासन	ज्ञानमुद्रा	दक्षिण	मध्यमा	श्वेत	पूरक	वाम	पृथ्वी	चन्द्रकात	मुक्तामणि	स्वाहा
मारक	शरद	सायकाल	ईशान	भद्रासन	वज्रासन मुद्रा	दक्षिण	तर्जनी	कृष्ण	रेचक	दक्षिण	आकाश	कृष्ण	पुत्र जीवनी मणि	घेघे
विद्वेषण	ग्रीष्म	मध्यान्ह	आग्नेय	कुक्कुटा सन	प्रवालमुद्रा	दक्षिण	तर्जनी	धूम्र	रेचक	दक्षिण	वायु	धूम्र	पुत्र जीवनी मणि	हु
उच्चाटन	वर्षा	अपरान्ह	वायव्य	कुक्कुटा सन	प्रवालमुद्रा	दक्षिण	तर्जनी	धूम्र	रेचक	दक्षिण	वायु	धूम्र	पुत्र जीवनी मणि	फट्

मंत्र रचना

मंत्र शब्द की व्युत्पत्ति

१. मंत्र शब्द मन् धातु (दिवादि ज्ञाने) से ष्ट्रन (त्र) प्रत्यय लगा कर बनाया जाता है।
"मन्यते ज्ञायते आत्मादेशोऽनेन इति मंत्रः"
अर्थात् जिसके द्वारा आत्मा का आदेश निजानुभव जाना जाय, वह मंत्र है।

२. मन् धातु से ष्ट्रन प्रत्यय लगाकर मंत्र शब्द बनता है। इसकी व्युत्पत्ति के अनुसार **मन्यते विचार्यते आत्मादेशो येन स मंत्रः** जिसके द्वारा आत्मा - देश पर विचार किया जाय वह मंत्र है।[1]

प्रत्येक मंत्र स्वर एवं व्यंजन के योग से बनते है।

अकारदिक्षकारान्ता वर्णाः प्रोक्तारतु मातृकाः ।
सृष्टिन्यासः स्थितिन्यासः संहृतिन्यासतस्त्रिधा ॥[2]

अ से लेकर क्ष पर्यन्त मातृका वर्ण कहलाते है। इनका तीन प्रकार का क्रम है
(१) सृष्टिक्रम (२) स्थितिक्रम और (३) संहारक्रम

(१) आत्मानुभूति की प्राप्ति होना सृष्टिक्रम है।
(२) आत्मानुभूति के साथ लौकिक अभ्युदय की प्राप्ति स्थितिक्रम है ।
(३) कर्मो के विनाश की भूमिका बनना संहारक्रम है।

स्वर व्यंजन की संज्ञा

हलो बीजानि चोक्तानि स्वराः शक्तय ईरिताः ।[3]

ककार से लेकर हकार पर्यत बीज संज्ञक है। और अकारादि स्वर शक्ति रूप हैं। मंत्रों की निष्पत्ति बीज और शक्ति के संयोग से होती है।

मन्त्रों के भेद एवं संज्ञा

(१) बीजमत्र (२) मंत्रमंत्र (३) मालामंत्र (४) कल्पमंत्र

(१) एक अक्षर से नौ अक्षर तक मंत्र की बीज मत्रसंज्ञा है।
(२) दश अक्षर से बीस अक्षर तक मंत्र की मंत्रसंज्ञा है।
(३) इक्कीस अक्षर से तेतीस अक्षर तक की माला मंत्र संज्ञा है।
(४) इससे अधिक अक्षर वाला मत्र कल्पमंत्र कहलाता है।

---

(१) डा० नेमीचन्द्र, जैन कृत मगलमंत्र णमोकार एक अनुचिंतन पृष्ठ ११ (२) आचार्य जयसेन, प्रतिष्ठापाठ श्लोक ३७६ (३) वही श्लोक ३७७

मंत्रों का फल

बीजमंत्र, सिद्ध होने पर सदा ही फल देते हैं।
मंत्रमंत्र, मत्री को यौवनावस्था में ही फल देते हैं।
मालामंत्र, वृद्धावस्था में फल देते हैं।
कल्पमंत्र, इस लोक और परलोक मे फल देते हैं।

मंत्रों के साथ पल्लव का फल

(१) जिन मंत्रों के अन्त में श्री, स्वाहा शब्द पल्लव होता है वह स्त्रीसंज्ञा मंत्र कहलाते हैं और इनसे पाप नष्ट होते हैं।

(२) जिन मंत्रों के अन्तं मे हूं, वषट्, फट्, घे, स्वघा पल्लव होते हैं वह पुल्लिंगसंज्ञा मंत्र है। इनका उपयोग शुभकर्म, मारण, उच्चाटन, निर्विषीकरण और वशीकरण में होता है।

(३) जिन मंत्रो के अन्त में नमः पल्लव हो वह नपुंसकसंज्ञा मंत्र है शेष कार्यों में इसका उपयोग होता है।

बीजाक्षरों का प्रयोग

वश्य, आकर्षण और उच्चाटन में '**हूं**' का प्रयोग करें।
मारण और विघ्न निवारण में '**फट्**' का प्रयोग करें।
स्तम्भन, विद्वेषण और मोहन में '**नमः**' का प्रयोग करें।
शान्ति और पौष्टिक कार्यो में '**वषट्**' का प्रयोग करें।

मंत्र के अन्त में स्वाहा शब्द रहता है यह शब्द पाप नाशक, मंगल कारक, तथा आत्मा की आन्तरिक शांति को उद्‌बुद्ध करने वाला है।

मंत्रों के भेद

१. स्तम्भन २. उच्चाटन ३. वशीकरण ४. आकर्षण ५. विद्वेषण
६. मारण ७. शान्तिक ८. पौष्टिक

यह मंत्र के प्रधान भेद है किन्तु सामान्यतया अनेक प्रकार के हैं।

बीजाक्षरों की शक्तियाँ

ॐ पंच परमेष्ठी, आत्मवाचक और प्रणव वाचक है।

'**श्री**' कीर्तिवाचक '**ह्रीं**' कल्याणवाचक '**क्षीं**' शांतिवाचक '**र्ह**' मंगलवाचक '**ॐ**' सुखवाचक '**क्ष्वीं**' योगवाचक '**ह्रं**' विद्वेष एवं रोषवाचक '**प्रौं**' '**प्रीं**' स्तम्भनवाचक '**क्लीं**'

लक्ष्मी प्राप्ति वाचक कहा है। तीर्थकरों के नामाक्षर मंगल वाचक होते है। **ॐ** प्रणव ध्रुव ब्रह्मबीज तेजो बीज है। **ऐं** वाग्भवबीज **'लृं'** कामभव बीज, **'क्रीं'** शक्तिबीज **'हंसः'** विषापहार बीज, **'क्षी'** पृथ्वीबीज, **'स्वा'** वायुबीज, **'हा'** आकाश बीज, **'हां'** मायाबीज, **या** त्रैलोक्यनाथ बीज, **'क्रों'** अंकुश बीज, **'जं'** पाशबीज, **'फट्'** विसर्जनात्मक या चालन (दूरकरर्णाथक), **'वौषट्'** पूजाग्रहण या आकर्षणार्थक, **'संवौषट्'** आमंत्रणार्थक **'ब्लूं'** द्रावणबीज, **'क्लौं'** आकर्षण बीज, **'ग्लौं'** स्तम्भनबीज **ह्रौं** महाशक्तिवाचक, **'वषट्'** आह्वानन वाचक, **रं** ज्वलन-वाचक, **'क्ष्वी'** विषापहार, **'ठः'** चन्द्रबीज, **'घे घै'** ग्रहण बीज, **'द्रं'** विद्वेषणार्थक, रोषबीज, **'स्वाहा'** शान्ति और हवन वाचक, **'स्वधा'** पौष्टिक वाचक, **'नमः'** शोधनबीज, **'हं'** गगनबीज **'हूं'** ज्ञानबीज, **'यः'** विसर्जन या उच्चारण वाचक **'जुं'** विद्वेषण बीज, **'श्वीं'** अमृतबीज, **'क्ष्वीं'** भोगबीज, **'हूं'** दण्डबीज, **'खः'** स्वादन बीज, **'झौं'** महाशक्तिबीज, **'हम्ल्र्व्यूं'** पिण्डबीज, **र्ह्रं** मगलबीज, और सुखबीज, **श्रीं** कीर्तिबीज, या कल्याणबीज, **'क्ली'** धनबीज या कुबेरबीज, तीर्थकर नामाक्षर शक्तिबीज, **'ह्रौं'** ऋद्धि और सिद्धिबीज, **ह्रां, ह्रीं, ह्रूं, ह्रौं, ह्रः** सर्वशान्ति मांगल्य कल्याण, विघ्न विनाशक सिद्धिदायक, **'अ'** आकाशबीज एवं धान्यबीज, **'आ'** सुखबीज, तेजोबीज, **'ई'** गुणबीज, तेजोबीज, वायुबीज, **'क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्षः'** सर्वकल्याण, सर्वशुद्धिबीज, **'व'** द्रवणबीज, **'यं'** मंगलबीज, रक्षाबीज, **'सं'** शोधनबीज, **'झं'** शक्तिबीज, और **'तं थं दं'** कालुष्य नाशक, मंगल वर्धक और सुखकारक बताया गया है। इन समस्त बीजाक्षरो की उत्पत्ति णमोकार मंत्र तथा इस मंत्र में प्रतिपादित पंच परमेष्ठी के नामाक्षर तीर्थकर नामाक्षरों से हुई है।

मंत्र के तीन अंग होते है। (१) रूप (२) बीज (३) फल

जितने भी प्रकार के मंत्र हैं उनमे बीज रूप णमोकार मंत्र या इससे निष्पन्न कोई सूक्ष्मतत्त्व रहता है। णमोकार मंत्र के सूक्ष्मीकरण द्वारा जितने सूक्ष्म बीजाक्षर या अन्य मंत्रों मे निहित किऐ जाते हैं उन मत्रों की उतनी ही शक्ति बढती जाती है।

मानसिक विचार बदलने के उपाय

(१) दमन (२) विलियन (३) मार्गान्तरीकरण (४) शोधन

(१) **दमन** - जीवन को उपयोगी बनाने के लिए आवश्यक है कि समय समय पर अपनी प्रवृतियों का दमन करें अर्थात उन्हें अपने नियंत्रण में रखें यही दमन है।

(२) **विलियन-** मूल प्रवृतियों को परिर्वतन करना विलियन है यह दो प्रकार से हो सकता है १. निरोध २. विरोध

(१) प्रवृत्तियों को उत्तेजित होने का अवसर ही नहीं देना निरोध है। अर्थात धार्मिक आस्था द्वारा अपनी विकार प्रवृति को अवरुद्ध कर उन्हें नष्ट कर सकता है।

(२) जिस समय विकार रूप प्रवृत्ति काम कर रही हो उसी समय उससे विपरीत प्रवृत्ति को उत्तेजित कर देना अर्थात मंत्राराधन द्वारा यह प्रवृत्ति रोकना विरोध है।

(३) **मार्गान्तरीकरण-** चिन्तन करने की प्रवृत्ति अनादि से पाई जाती है यदि मनुष्य इस चितन की प्रवृत्ति में विकारी भावनाओं को स्थान नहीं दे और मंगल वाक्यों या मत्रो का चिन्तन करें तो यही सुन्दर मार्गान्तरीकरण है।

(४) **शोधन** - मंत्र की अराधना में ऐसी विद्युत शक्ति है जिससे व्यक्ति का अन्तर्द्वन्द शान्त हो जाता है, नैतिक भावनाओं का उदय होता है और अनैतिक भावनाओं का दमन होकर नैतिक संस्कार उत्पन्न होते हैं इसका नाम ही शोधन है। पंच नमस्कार मंत्र द्वारा मानसिक विचारों को बदल कर आत्मोत्थान की भावनाओ के साथ आत्मविशुद्धि परमावश्यक है इस प्रकार आर्तरौद्र ध्यान से हटकर धर्म ध्यान की भावना प्रकट करें।

मंत्रों में शक्ति प्रदायक आठ वज्र

१. क्म्ल्व्र्यूं २. ख्म्ल्व्र्यूं ३. घ्म्ल्व्र्यूं ४. झ्म्ल्व्र्यूं ५. म्म्ल्व्र्यूं ६. स्म्ल्व्र्यूं ७. ह्म्ल्व्र्यूं ८. भ्म्ल्व्र्यूं यह आठ वज्र हैं।

पिण्डाक्षर

१. क्म्ल्व्र्यूं २. ख्म्ल्व्र्यूं ३. घ्म्ल्व्र्यूं ४. छ्म्ल्व्र्यूं ५. झ्म्ल्व्र्यूं ६. झ्म्ल्व्र्यूं ७. त्म्ल्व्र्यूं ८. भ्म्ल्व्र्यूं ९. म्म्ल्व्र्यूं १०. य्म्ल्व्र्यूं ११. र्म्ल्व्र्यूं १२. स्म्ल्व्र्यूं १३. ह्म्ल्व्र्यूं १४. क्ष्म्ल्व्र्यूं

मंत्रों की विशेषताऐं

मंत्रो को जपने की निम्न लिखित तेरह विधियॉ हैं जिनको विन्यास कहते हैं। (१) ग्रथित (२) सम्पुट (३) ग्रस्त (४) समस्तयायोग (५) विदर्भित (६) आक्रान्त (७) आद्यन्त (८) गर्भित या गर्भस्थ (९) सर्वतोमुख (१०) विदर्भ (११) विदर्भ ग्रसित (१२) रोधन (१३) पल्लव।

१. साध्य के नाम के एक एक अक्षर के साथ मत्र के एक एक अक्षर को एक बार प्रयोग करने को ग्रथित कहते हैं। यह वश्य एवं आकर्षण कर्मो में फलदायक होता है।

२. जिसमें आदि में मंत्र फिर साध्य का नाम और अन्त में फिर मंत्र बोला जाय उसे सम्पुट कहते हैं यह शान्ति और पुष्टि करने वाला तथा तीन लोक मे ऐश्वर्य को देने वाला है।

३. जिसमे आदि और अन्त में आधा आधा मंत्र और बीच में साध्य का नाम हो उसे ग्रस्त कहते है इसको मरणादिक सभी अशुभ कर्मो में प्रयोग किया जाता है।

४. जिसमें पहले नाम और फिर मंत्र बोला जाये समस्तयायोग कहते है यह उच्चाटन में प्रयोग किया जाता है।

५. जिसमें मत्र के दो दो अक्षर और एक एक साध्य के नाम का अक्षर आवे उसे विदर्भित कहते हैं, यह वशीकरण करता है।

६ यदि साध्य का नाम चारों ओर मंत्र के अक्षरों से घिरा हो तो उसे आक्रान्त कहते है यह सब कार्यो की सिद्धि स्तम्भन आवेशन वश्य और उच्चाटन कर्मो को करता है।

७. जिसमें आदि में एक बार पूरा मंत्र, मध्य में साध्य का नाम और अन्त मे फिर पूरा मंत्र लगाया जाये उसे आद्यन्त कहते हैं। यह विद्वेषण करता है।

८. आदि और अन्त में दो दो बार मंत्र का प्रयोग करके बीच में एक बार साध्य का नाम रखने को गर्भस्थ या गर्भित कहते हैं, यह मारण, उच्चाटन, वश्य, नदीस्तंभन, नौका भंजन और गर्भस्तम्भन में प्रयोग किया जाता है।

९. जिसमें आदि और अन्त मे तीन तीन बार मंत्र जपा जावे और नाम बीच मे एक ही बार रहे उसे सर्वतोमुख कहते हैं। सब उपसर्गो को शांत करने वाला सब सौभाग्यों को करने वाला तथा देवताओं को भी अमृत देने वाला है।

१० जिसमें आदि में मंत्र और फिर नाम और फिर मंत्र इस प्रकार तीन बार किया गया हो उसे विदर्भ कहते हैं, यह सब व्याधियो को नष्ट करने वाला तथा भूत ओर मृगी के रोग को दूर करता है।

११. जिसमें साध्य के नाम के एक एक अक्षर को विदर्भरूप में करके पहले के समान आदि और अन्त में प्रयोग किया जाय उसे विदर्भग्रसित कहते हैं यह सब कार्यो को करने वाला और सभी ऐश्वर्यो को देने वाला है।

१२. नाम के आदि मध्य और अन्त में मंत्र रखने को रोधन कहते हैं।

१३. मंत्र के अन्त में नाम रखने को पल्लव कहते हैं।

मंत्रों में स्वर व्यंजन का आधार श्रुतज्ञान[१]

श्रुतज्ञान के दो प्रकार हैं – १. अक्षरात्मक श्रुतज्ञान २. अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान

अक्षरात्मक श्रुतज्ञान

अक्षर, पद, छन्दादि रूप शब्द से उत्पन्न हुआ अक्षरात्मक श्रुतज्ञान है जो प्रधान है। जातें देना लेना शास्त्र पढ़ना इत्यादि सब व्यवहार का मूल अक्षरात्मक श्रुतज्ञान है। शब्द से उपजा ज्ञान अक्षरात्मक है इसे श्रुत शब्द जानना।

अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान

कार्य विधि में कारण का उपचार किया। परमार्थ से ज्ञान कोई अक्षर रूप है नहीं। जैसे शीतल पवन का स्पर्श हुआ वहां शीतल पवन का जानना तो मतिज्ञान है और जिस ज्ञान के द्वारा वायु की प्रकृति वाले यह शीतल पवन अनिष्ट है ऐसा जानना अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान है। (क्योंकि मतिज्ञान बिना श्रुतज्ञान होता नहीं) अक्षरात्मक श्रुतज्ञान के संख्यात भेद होते हैं और अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान के असंख्यात लोक प्रमाण ज्ञान के विकल्प होते हैं (विशेष धवला पु. ६ जीव काण्ड में देखें)

अक्षर के भेद

१. लब्धि अक्षर २. निर्वृति अक्षर ३. स्थापना अक्षर

१. श्रुतज्ञानावरण के क्षयोपशम से उत्पन्न हुई पदार्थ जानने की शक्ति लब्धि रूप भाव इन्द्रिय वही स्वरूप लब्धि अक्षर कहलाता है।

२. कंठ, ओष्ठ तालु आदि अक्षर बुलावने के स्थान और ओठों का परस्पर मिलना जिससे उत्पन्न हुआ शब्द रूप अकारादि स्वर व्यंजन और संयोगी अक्षर को निर्वृति अक्षर कहते हैं।

३. पुस्तकादि में निजदेश की प्रवृत्ति के अनुसार अकारादि आकार करके लिखना स्थापना अक्षर है। (जिनका कभी नाश न हो उन्हें अक्षर कहते हैं)

---

(१) आ. पु. दं, ष. ख. (जीव काण्ड) पु. ६

इस प्रकार जो एक अक्षर है उसके सुनने से जो हुआ अर्थज्ञान अक्षर श्रुतज्ञान है समस्त ज्ञान वचन गोचर नहीं केवल ज्ञान गोचर है, तीर्थकर की सातिशय दिव्य ध्वनि के कहने मे आवे। जितना दिव्य ध्वनि कहने में आये उसके अनन्त वें भाग द्वादशांग श्रुत में व्याख्यान कीजिए जो श्रुत केवली को भी गोचर नही। जो दिव्य ध्वनि के द्वारा कहा जाय उस अर्थ को जानने की शक्ति केवल ज्ञान में ही होती है।

पद के भेद

अक्षर अक्षर बढ़ते बढ़ते पद समास होता है।

पद तीन प्रकार के है - १ अर्थपद २. प्रमाणपद ३. मध्यमपद ।

१. अक्षर समूह का विवक्षित अर्थ जानना अर्थपद है। जैसे अग्नि लाओ, डण्डे से गाय को भगाओ आदि।

२. जो अक्षरों की संख्या लिए हुए हो वह प्रमाण पद है जैसे अनुष्टुप छंद के चार पद और एक पद में आठ अक्षर हों ऐसे प्रमाणपद जानना।

३. सोलह सौ चौंतीस करोड़ तिरासी लाख सात हजार आठ सौ अट्ठासी (१६३४८३०७८८८) अक्षरों के समूह को मध्यम पद कहते हैं। अर्थपद और प्रमाण पद हीन अधिक अक्षरों का प्रमाण के लिए लोक व्यवहार से ग्रहण किये गये हैं और लोकोत्तर परमागम में कही जो संख्या है उसे मध्यम पद जानना। इन्हीं पदों के योग से द्वादशांग के पदों की रचना हुई।

द्वादशांग पदों की संख्या

एक सौ बारह करोड तिरासी लाख अट्ठावन हजार पॉच पद (११२,८३,५८,००५) सर्व द्वादशांग को जानना।

द्वादशांग (अंग प्रविष्ट) रचना के पश्चात जो अक्षर शेष रहें जिन्हें अंग बाह्य कहते हैं उनकी संख्या का वर्णन इस प्रकार पाया जाता है।

अंग बाह्य प्रकीर्णक के अक्षरों की संख्या

आठ करोड़ एक लाख आठ हजार एक सौ पचहत्तर (८,०१,०८,१७५) इनके द्वारा सामायिकादिक प्रकीर्णकों की रचना की गई है।

अक्षरों की प्रक्रिया का वर्णन

तैंतीस व्यंजन अक्षर हैं। आधी मात्रा जिसके बोलने के समय में हो उसे व्यंजन कहते हैं। क् ख् ग् घ् ङ्। च् छ् ज् झ् ञ्। ट् ठ् ड् ढ् ण्। त् थ् द् ध् न्। प् फ् ब् भ् म्। य् र् ल् व्। श् ष् स् ह् ये तैंतीस अक्षर व्यंजन हैं।

---

(1) आ. पु. दं, प. ख. (जीव काण्ड) गा. ३३४

स्वर अक्षर सत्ताईस हैं। अ इ उ ऋ लृ ए ऐ ओ औ यह नौ अक्षर। इनके एक एक के ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत तीन भेदों से सत्ताईस भेद हो जाते हैं।
अ आ आ। इ ई ई। उ ऊ ऊ। ऋ ॠ ॠ। लृ ॡ ॡ। ए ए ए। ऐ ऐ ऐ। ओ ओ ओ। औ औ औ। यह सत्ताईस स्वर हैं।

जिसकी एक मात्रा हो उसे **"ह्रस्व"** कहते हैं।

जिसकी दो मात्रा हों उसे **"दीर्घ"** कहते हैं।

जिसकी तीन मात्रा हों उसे **"प्लुत"** कहते हैं।

चार अक्षर योगवाह हैं -

१. यहाँ अं जैसा अक्षर अनुस्वार है।

२. अ· जैसा अक्षर विसर्ग है।

३. कः जैसा अक्षर जिह्वामूलीय है।

४. पः जैसा अक्षर उपध्मानीय है।

यह चौसठ मूल अक्षर अनादि निधन परमागम में प्रसिद्ध हैं।

सिद्धोवर्णः समाम्नायः

इतिवचनात् 'व्यज्यते' कहिए अर्थ जिन का प्रकट हो वह व्यंजन है।
'स्वरन्ति' जो अर्थ को कहे वह स्वर है।

'योगं वहन्ति' अक्षर के संयोग को प्राप्त हो उनको योगवाह कहते हैं।

मूल कहिए अक्षर के संयोग रहित· संयोगी अक्षर उपजनें के कारण ये चौसठ मूल वर्ण है। जैसे क् व्यंजन अ स्वर मिलकर क जैसा अक्षर होता है और आ मिलने से का होता है। इत्यादि संयोगी अक्षर उपजने के कारण चौंसठ मूल अक्षर होते हैं।

यहाँ एक प्रश्न - जो व्याकरण में ए ऐ ओ औ इनको ह्रस्व नहीं कहे यहाँ ह्रस्व कैसे कहें।

समाधान- जो संस्कृत भाषा में ह्रस्व नहीं कहे किन्तु प्राकृत भाषा में व देशान्तर की भाषा में ए ऐ ओ औ यह अक्षर ह्रस्व होते हैं इसलिये यहाँ कहे हैं।

ब्रह्मशब्द परिभाषा एवं भेद[1]:- १. परम ब्रह्म २.शब्द ब्रह्म

परमब्रह्म - अरिहत एवं सिद्ध परमात्मा हैं।

शब्द ब्रह्म - जिनेन्द्र देव की वाणी, मंत्र, यंत्र आदि हैं।

---

(१) ऋषि मण्डल विधान

मंत्राराधन हेतु दिशा बोध

१.	पूर्व यमान्तक	-	मृत्यु का अन्त करने वाली
२.	दक्षिण प्रज्ञान्तक	-	बुद्धि का अन्त करने वाली
३.	पश्चिम पद्मान्तक	-	हृदय को कष्ट कारक
४.	उत्तर विघ्नान्तक	-	विघ्नों का अन्त करने वाली

अतएव मंत्राराधन को पूर्व एवं उत्तर दिशा ही श्रेष्ठ मानी गई है।

पूजा हेतु दिशा बोध

१. पूर्व	- शान्ति पुष्टी	५. आग्नेय	- धनहानि
२. दक्षिण	- संतान का अभाव	६. वायव्य	- सन्तान अभाव
३. पश्चिम	- संतान विच्छेद	७. नैऋत्य	- कुल क्षय
४. उत्तर	- धनलाभ	८. ईशान	- सौभाग्य नाश

स्वरों के ध्यान का स्थान एवं विधि

ध्यान करने वाला पुरुष नाभि मण्डल पर सोलह दल के कमल की स्थापना कर प्रत्येक दल पर क्रम से अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ लॄ ए ऐ ओ औ अं अः इन सोलह स्वरों का चितवन कर ध्यान करें।

व्यंजनों के ध्यान का स्थान एवं विधि

हृदय स्थान पर कर्णिका सहित चौबीस दल के कमल का चितन करके इन पच्चीस अक्षरों की क्रमशः स्थापना करके क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म इन अक्षरों का ध्यान करें तथा मुख स्थान पर आठ पद वाले कमल स्थापना रूप चितन करके क्रमशः य र ल व श ष स ह इन आठ वर्णो की स्थापना करके ध्यान करें। प्रत्येक कमल पर दाहिनी ओर से स्वर व्यंजनादि स्थापना करना चाहिए। सिद्धान्तानुसार इस वर्ण मातृका का जो ध्यान करता है वह संसार समुद्र से पार हो जाता है। वर्तमान में अरुचि, अग्निमंदता, कुष्ठ, उदररोग, कास एवं श्वास आदि रोगों को जीतता है।

मंत्र राज का ध्यान

समस्त मंत्र पदों का स्वामी, सब तत्वों का नायक, आदि मध्य और अन्त के भेद से स्वर एवं व्यंजनों से उत्पन्न ऊपर और नीचे रेफ (र्) से युक्त बिन्दु से चिन्हित सपर कहिए हकार अर्थात् 'र्ह' ऐसा बीजाक्षर तत्त्व है इसको योगिराज सर्व सिद्धि दायक मंत्रराज कहते है। इसका निरतर ध्यान करना चाहिए।

अनाहत का लक्षण

ॐ बिन्द्वाकारहरोद्र्ध्वरेफबिन्द्वानवाक्षरम् ।
मालाधः स्यन्दि पीयूषबिन्दुं विदुरनाहतम् ।। (१)

इसमें निम्न लिखित नौ अक्षर मिले हुए है ।

१. ॐकार २. अनुस्वार ३. ईकार ४. अर्द्धकार ५. हकार
६. अधःरकार ७. अनुस्वार ८. ईकार ९. हकार

अनाहत मंत्र का आकार
श्री जिनेन्द्र देव के सदृश
इस मंत्र राज का ध्यान करो
यह सर्वव्यापी मंत्र माना गया है ।

मंत्राराधन में अंगुलियों का क्रम

अंगुष्ठेन तु मोक्षार्थ धर्मार्थ तर्जनी भवेत् ।
मध्यमा शान्तिकं ज्ञेया सिद्धिलाभायनामिका ।
कनिष्ठा सर्व सिद्धार्थ एतत् स्याज्जाप्य लक्षणम् ।
असंख्यातं च यज्जप्तं तत्सर्व निष्फलं भवेत् । (२)

जाप्य विधि में मोक्ष प्राप्ति हेतु अंगूठा से धर्म प्राप्ति हेतु तर्जनी से, शान्ति हेतु मध्यमा से, सिद्धि प्राप्ति हेतु अनामिका एवं सर्वसिद्धि हेतु कनिष्ठा से जाप श्रेष्ठ है । जाप विधि जाने बिना अथवा जिस मंत्र का जितना जाप लिखा उससे न्यूनाधिक किया जाप फलहीन माना गया है ।

जाप्य तीन प्रकार का है ।

१. मानसिक जाप - कार्य सिद्धि के लिए मन मे जाप करना चाहिए ।
२. वाचनिक जाप - पुत्र प्राप्ति के लिए उच्च स्वर से मंत्र का जाप करना चाहिए ।
३. कायिक जाप - धन प्राप्ति के लिए बिना बोले मंत्र पढ़ना जिससे ओठ हिलते रहें इस प्रकार पढ़ना ।

आसन विधान

बांस की आसन से दरिद्रता, पाषाण की आसन से रोग, भूमि पर जप करने से दुःख, लकड़ी की आसन से दुर्भाग्य ,घास की आसन से यशहानि, पत्रों की आसन से भ्रान्ति, वस्त्र की आसन से मन चंचल, चमड़ा की आसन से ज्ञान नष्ट, कंबल की आसन से मान भंग होता है । अतएव डाभ की आसन ही सर्वश्रेष्ठ होती है ।(३)

(१) आ. शु. च., ज्ञा., पृष्ठ ३६८ (२) श्री आ. दे. भू., ण. मं. क., पृष्ठ ९७
(३) धर्म रसिक ग्रंथ

वस्त्र विधान

१. नीला वस्त्र पहन कर जाप करने से दुख, हरे वस्त्र से मान भंग, श्वेत वस्त्र से यशवृद्धि, पीले वस्त्र से हर्ष लाभ, लाल वस्त्र श्रेष्ठ है।

२. **एक वस्त्रो न भुंजीत न कुर्यात् देव पूजनम्**
न कुर्यात् पितृकर्माणि दान होम जपादिकम् ।

एक वस्त्र पहन कर देव पूजा, आहार दान, जाप, हवन आदि कार्य नहीं करना चाहिए। अतएव धोती एवं दुपट्टा आवश्यक है।

३. **खण्डिते जीर्णे छिन्ने च मलिने चैव वाससि ।**
दानपूजाजपोहोमः स्वाध्यायो निष्फलं भवेत् ॥१॥

कषायं धूम्रवर्ण च वेशजं केशभूषितम् ।
छिन्नाग्रं चोप वस्त्रं च कुत्सितं नाचरेन्नरः ॥२॥

दग्धं जीर्ण च मलिनं मूसकोपहतं तथा ।
खादितं गो महिष्याद्यैस्तत्त्याज्यं सर्वथा द्विजैः ॥३॥

फटा वस्त्र, जीर्ण, बहुत पुराना, छेद सहित, मलिन वस्त्र, काला, ऊन से बना हुआ, जल गया हो, चूहों के द्वारा कतरा गया, गाय भैंस द्वारा खाया गया, धूम्र वर्ण वाला, अत्यन्त छोटा इन वस्त्रों से दान, पूजा, हवन, जाप, ध्यान, स्वाध्याय नहीं करना।[१]

पाँच प्रकार के वस्त्र

१. अण्डज (रेशम) २. वोण्डुज (कपास) ३. रोमज (ऊन)
४. बल्कल (वृक्ष की छाल) ५. चर्मज (चमड़ा)

पाँच प्रकार के स्नान

मंत्र स्नानं जपस्नानं तपस्नानं तथैव च
दया स्नानं जलस्नानं षष्ठं नैव च विद्यते ।

१. मंत्र स्नान २.जप स्नान ३. तप स्नान ४. दया स्नान ५. जल स्नान

इनके द्वारा शरीर शुद्धि पूर्वक आत्म शुद्धि आवश्यक है। आत्मा के विकारों को धो लेना ही मुख्य स्नान कहा गया है।

मंत्र विधान (एकाक्षरी)

१. ॐ २. ओं ३. र्ह ४. ह्रीं ५. झ्वीं ६. श्रीं ७. क्लीं ८. ऐं ९. क्ष्वीं १०. स्वा ११. ह्रां १२. ह्रीं १३. ह्रूं १४. ह्रौं १५. ह्रः १६. श्री १७. श्रूं १८. क्षां १९. क्षीं २०. क्षं २१. क्षः २२. क्रौं २३. ग्लौं २४. ब्लूं आदि।

(१) आ. उ. स्वा. उ. श्रा. पृष्ठ ५५

युग्माक्षरी मंत्र

१. अर्ह २. सिद्ध ३. ॐ ह्रीं

त्रयाक्षरी मंत्र

१ अर्हत २. ओं अर्ह ३. ओं सिद्धं

चतुराक्षरी मंत्र

१ अरहंत (अरिहंत) २. ॐ सिद्धेभ्यः ३. अ. सि. साहू

पंचाक्षरी मंत्र

१. अ सि आ उ सा २. ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः
३ अर्हत सिद्ध ४. णमो सिद्धाणं
५. नमो सिद्धेभ्यः ६. नमो अर्हते ७. नमो अर्हदभ्यः ७ ॐ आचार्येभ्यः

षड़ाक्षरी मंत्र

१. अरहंत सिद्ध २. नमो अरहते ३. ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः ४. ॐ नमो अर्हते
५. ॐ नमो अर्हेभ्यः ६. ह्रीं ॐ ॐ ह्रीं हं सः ७. ॐ नमः सिद्धेभ्यः ८. अरहंत सि सा

सप्ताक्षरी मंत्र

१ णमोअरिहंताणं २. ॐ ह्रीं श्रीं अर्ह नमः ३. णमो आइरियाणं ४. णमो उवज्झायाणं
५ नमो उपाध्यायेभ्यः, ६. नमः सर्व सिद्धेभ्यः ७. ओं श्री जिनाय नमः

अष्टाक्षरी मंत्र

१. ॐ णमो अरिहंताणं २. ॐ णमो आइरियाणं ३. ॐ णमो उवज्झायाणं ४. ॐनमो उपाध्यायेभ्यः ५. ॐ असिआउसानमः

नवाक्षरी मंत्र

१. णमो लोए सव्वसाहूणं
२. अरहंत सिद्धेभ्यो नमः
३. ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा नमः
४. ॐ ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा
५. ॐ ह्रीं अर्ह सिद्धेभ्यो नमः
६. ॐ ह्रीं सर्व साधुभ्यः नमः
७. ॐ ह्रीं अर्ह जिनाय नमः

दशाक्षरी मंत्र

१. ॐ अ सि आ उ सा नमो नमः
२. ॐ अर्हत्सिद्ध साधुम्य. नमः
३. ॐ अरहंत सिद्धेभ्यो नमः
४. ॐ णमो लोए सव्वसाहूणं
५. ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमो नमः

एकादशाक्षरी मंत्र

(१) ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा
(२) ॐ ह्री अर्हत्सिद्धेभ्यो नमो नमः
(३) ॐ ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा नमः
(४) ॐ श्रीं अरहंत सिद्धेभ्यो नमः
(५) ॐ ह्रीं णमो लोए सव्व साहूणं
(६) ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्ध साधुभ्यः नमः

द्वादशाक्षरी मंत्र

(१) ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा नमः
(२) ॐ ह्रीं श्रीं अर्ह अ सि आ उ सा नमः
(३) अर्ह सिद्ध सयोग केवलि स्वाहा
(४) ॐ ह्रीं अर्ह अरिहंताणं ह्रीं नमः
(५) ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्र. अ सि आ उ सा स्वाहा
(६) ॐ अर्ह अर्हत्सिद्ध साधुभ्यो नमः

त्रयोदशाक्षरी मंत्र

(१) ॐ अर्ह सिद्ध सयोग केवलि स्वाहा
(२) ॐ ह्रीं अर्ह णमो आइरियाणं स्वाहा
(३) ॐ ह्रीं अर्ह णमो उवज्झायाणं स्वाहा
(४) ॐ ह्रीं अर्ह लोए सव्व साहूणं नमः
(५) ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा नमः
(६) ॐ ह्री अनन्त परम सिद्धेभ्यो नमः
(७) ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्ध सर्व साधुभ्यो नमः

चतुर्दशाक्षरी मंत्र

(१) ॐ ह्रीं अर्ह णमो अरिहंताणं ह्रीं स्वाहा
(२) ॐ अनन्तानन्त परम सिद्धेभ्यो नमः
(३) श्री मद् वृषभादिवर्धमानान्तेभ्यो नमः

पंच दशाक्षरी मंत्र

(१) श्री वृषभादि वर्धमान जिनेन्द्रभ्यो नमः
(२) ॐ ह्रीं अनन्तानन्त परम सिद्धेभ्यो नमः

षोडशाक्षरी मंत्र

अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यो नमः

द्वाविंशत्यक्षरी मंत्र

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यो नमः

त्रयोविंशत्यक्षरी मंत्र

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा अर्ह सर्वशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा

पंचविंशत्यक्षरी मंत्र

ॐ जोग्गे मग्गे तच्चे भूदे भव्वे भविस्से अक्खे पक्खे जिणपरिस्से स्वाहा

सप्तविंशत्य अक्षरी मंत्र

ॐ ह्रां ह्रि ह्रु ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः अ सि आ उ सा सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रेभ्यो ह्रीं नमः

एक त्रिंशत्यक्षरी मंत्र

ॐ सम्यग्दर्शनाय नमः सम्यग्ज्ञानाय नमः सम्यक्चारित्राय नमः सम्यक्तपसे नमः।

पंचत्रिंशत्यक्षरी मंत्र

णमोअरिहंताणंणमोसिद्धाणंणमोआइरियाणंणमोउवज्झायाणंणमोलोएसव्वसाहूणं

इकहत्तरक्षरी मंत्र

ॐ अर्हन्मुख कमलवासिनि पापानांक्षयंकरि श्रुतज्ञान ज्वाला सहस्त्र प्रज्वलिते सरस्वति मम पापं हन हन दह दह क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः क्षीर वर धवले अमृत संभवे वं वं ह्रूं ह्रूं स्वाहा।

छिहत्तरक्षरी मंत्र

ॐ णमो अर्हते केवलिने परम योगिने अनन्त विशुद्धि परिणाम परिस्फुरच्छुक्ल ध्यानाग्नि निर्दग्धकर्म बीजाय प्राप्तानंत चतुष्टयाय सौम्याय शान्ताय मंगलाय वरदाय अष्टादश दोष रहिताय स्वाहा ।

एक सौ सत्ताईस अक्षरी मंत्र

चत्तारि मंगलं, अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगल केवलि पण्णतो धम्मो मंगल, चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंतालोगुत्तमा, सिद्धालोगुत्तमा साहू लोगुत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो, चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरिहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि केवलि पण्णतं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

परलोक, सुख, आत्मसिद्धि और कार्य सिद्धि के लिए यह मंत्र सर्वोपयोगी है

इस प्रकार मंत्रों का शास्त्रानुसार विधिविधान पूर्वक जाप करने से लौकिक के साथ साथ पारलौकिक सुख शान्ति प्राप्त करके मानव जीवन सफल बना सकते हैं ।

धार्मिक कार्यो /अनुष्ठानों में, प्रतिष्ठा कार्यो में सामान्यतः उपयोग में आने वाले मंत्र आगे संकलित किये गये हैं ।

जाप एवं विधान मंत्र

वृहच्छांति मंत्र-

ओ णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं । चत्तारि मंगलं - अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं साहू मंगलं केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा - अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारिसरणं पव्वज्जामि - अरिहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ह्रीं शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ।

मध्यम शान्ति मंत्र

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा नमः सर्व शान्ति कुरु कुरु स्वाहा ।

लघुशान्ति मंत्र

ओं ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नमः सर्व शान्ति कुरु कुरु स्वाहा ।

विश्वशान्ति चक्र मंत्र

ओं ह्री अर्हते भगवते श्री शान्तिनाथाय विश्व शान्तये नमः ।

शान्ति चक्र मंत्र

ओं ह्रीं श्री शान्तिनाथाय जगच्छान्तिकराय सर्वोपद्रवशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ।

धर्म चक्र मंत्र

ओं ह्रीं अर्हते भगवते धर्मचक्राधिपतये श्री चतुर्विंशति जिनेभ्यो नमः ।

अचिन्त्य फलदायक मंत्र

ओं ह्रीं स्वर्ह णमो णमो अरिहंताणं ह्रीं नमः ।

सर्व सिद्धिदायक मंत्र

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा नमः ।

रक्षा मंत्र

ओं ह्रूं क्षूं फट् किरिटि किरिटि घातय - घातय पर विघ्नान् स्फोटय - स्फोटय सहस्र खण्डान् कुरु कुरु पर मुद्रां छिन्द छिन्द पर मंत्रान् भिन्द भिन्द क्षां क्षः वाः वाः ह्रूं फट् स्वाहा ।

शान्ति मंत्र

ओं नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषदोष कल्मषाय दिव्य तेजो मूर्तये नमः श्री शान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्व विघ्नप्रणाशनाय सर्व रोगापमृत्युविनाशनाय सर्व परकृच्छुद्रोपद्रव नाशनाय सर्व क्षाम डामर विघ्न विनाशनाय ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौ ह्रः अ सि आ उ सा सर्व शान्ति कुरु कुरु स्वाहा ।

वेदीप्रतिष्ठा, कलशारोहण, तथा बिम्ब स्थापन हेतु मंत्र

ओं ह्री श्री क्ली अर्ह अ सि आ उ सा अनाहत विद्यायै णमो अरिहंताणं ह्रौं सर्व शान्ति कुरु कुरु स्वाहा ।

भक्तामर मंत्र

ओं ह्रीं क्लीं श्रीं अर्ह श्रीवृषभनाथतीर्थकराय नमः ।

ऋषि मण्डल मंत्र

ओं ह्रां ह्रि ह्रुं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः अ सि आ उ सा सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो ह्रीं नम ।

कलिकुण्डदण्ड मंत्र

ओं ह्रीं श्री क्लीं ऐं अर्ह कलिकुण्डदण्ड स्वामिन् अतुलबलवीर्यपराक्रमाय ममाभीष्टसिद्धि कुरु कुरु स्फ्रां स्फ्रीं स्फ्रूं स्फ्रौं स्फ्रः ममात्मविद्या रक्ष रक्ष परविद्यां छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द ह्रूं फट् स्वाहा ।

गणधरवलय मंत्र

(१) ओं ह्रीं ङ्वी श्रीं अर्ह अ सि आ उ सा अप्रतिचक्राय फट् विचक्राय झ्रौ झ्रौं नमः ।

(२) ओ णमो अरिहताण ओ णमो जिणाण ह्रा ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्र. अप्रतिचक्राय फट् विचक्राय ओं ह्री अर्ह अ सि आ उ सा झ्रौ झ्रौं नमः ।

सिद्ध चक्र विधान मंत्र

(१) ओं ह्रां ह्री ह्रूं ह्रौ ह्रः अ सि आ उ सा अनाहत पराक्रमाय सकलकर्मविमुक्ताय श्री सिद्धाय नम ।

(२) ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा सिद्धचक्राधिपतये नमः ।

इन्द्रध्वज विधान मंत्र

(१) ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा मध्यलोकसंबंधि चतुः शताष्टपंचाशत श्रीजिनचैत्यालयेभ्यो नमः ।

(२) ओं ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हअ सि आ उ सा मध्यलोकस्थित सर्व जिनालयस्थ जिन बिम्बेभ्यो नमः ।

त्रैलोक्यतिलक मण्डल विधान मंत्र

ओं ह्रीं श्रीं अर्हंअनाहत विद्याधिपाय त्रैलोक्यनाथाय नमः सर्व शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ।

जम्बूद्वीप विधान मंत्र-

(१) ओं ह्रीं जम्बूद्वीप संबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योयाध्याय सर्व साधुजिनधर्म-जिनागम-जिनचैत्य चैत्यालयेभ्यो नमः ।

(२) ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा जिनधर्म श्रुतचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः ।

कल्पद्रुम विधान मंत्र-

ओं ह्रीं समवसरणपद्मसूर्यवृषभादि वर्द्धमानान्तेभ्यो नमः ।

सर्वतोभद्र विधान मंत्र-

ओं ह्रीं त्रिलोकसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु- जिनधर्म- जिनागम- जिनचैत्य - चैत्यालयेभ्यो नमः ।

ढ़ाईद्वीप विधान मंत्र

ओं ह्रीं अर्ह अ सि आ उ सा सार्द्धद्वयद्वीपसंबंधि शाश्वत जिनालय जिनेभ्यो नमः ।

समवसरण विधान मंत्र-

ओं ह्री वृषभादिवीरांत चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः ।

नन्दीश्वर द्वीप विधान मंत्र-

ओं ह्रीं नन्दीश्वरद्वीप संबन्धि द्वापंचाशतजिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नमः ।

चौसठ ऋद्धि विधान मंत्र-

ओं ह्री चतुःषष्टी ऋद्धिसमृद्ध गणधरेभ्यो नमः ।

प्रतिष्ठा सम्बन्धी आवश्यक मंत्र

अनादि मूल मंत्र-

णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाण णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।

वृहच्छांति मंत्र

णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं । चत्तारि मंगलं- अरिहंता मगलं सिद्धा मंगल साहू मंगलं केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा- अरिहंता लोगुत्तमा सिद्धा लोगुत्तमा साहू लोगुत्तमा केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि- अरिहंते सरणं पव्वज्जामि सिद्धे सरणं पव्वज्जामि साहू सरणं पव्वज्जामि केवलि पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि क्रौं ह्री स्वाहा ।

चतुर्विंशति तीर्थंकर मंत्र

(१) ओं ह्री वृषभाजित संभवाभिनन्दन सुमतिपद्मप्रभसुपाश्र्वचन्द्रप्रभपुष्पदतशीतल श्रेयोवासुपूज्य विमलानत धर्मशान्ति कुन्थ्वर मल्लिमुनिसुव्रत नमिनेमिपाश्र्ववर्द्धमानांतेभ्यो ह्री नमः ।

(२) ओ ह्री वृषभादि वर्द्धमानातेभ्यो नम. ।

नवदेव मंत्र

ओं ह्री अर्ह अ सि आ उ सा जिनधर्मजिनागमजिनचैत्य चैत्यालयेभ्योनमः

पंच परमेष्ठि मंत्र

(१) ओं ह्रा ह्री ह्रूं ह्रौं ह्र: पञ्चपरमेष्ठिभ्यो नमः

(२) ओ अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः ।

मातृका मंत्र

ओं नमो ऽ र्ह अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ लॄ ए ऐ ओ औ अं अः क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण त थ द ध न प फ ब भ म य र ल व श ष स ह ह्री क्ली क्रौं स्वाहा ।

वर्धमान मंत्र

ओं णमो भयवदो वड्ढमाणस्स रिसहस्स जस्स चक्कजलं तं गच्छइ आयासं पायालं लोयाण भूयाणं जये वा विवादे वा रणांगणे वा थंभणे वा, मोहणे वा सव्वजीव सत्ताणं अपराजिदो भवदु मे रक्ख रक्ख स्वाहा ।

बीजाक्षर	आचार्य जयसेन प्र पाठ पृष्ठ ११६-११७	आचार्य जयसेन प्र पाठ पृष्ठ २७२	नेमीचन्द्र देवकृत प्रति पृष्ठ ५५२	पं आशाधर कृ प्रसा अध्याय ४ पृष्ठ१०७
अ	ललाटे	ललाट	ललाट	ललाट
आ	मुखवृत्ते	मुखवृत्ते	ललाट	ललाट
इ	दक्षनेत्रे	दक्षिण नेत्र	दक्षिण नेत्र	दक्षिण नेत्र
ई	वाम नेत्रे	वामनेत्र	वाम नेत्र	वाम नेत्र
उ	दक्षकर्णे	दक्षिण कर्ण	दक्षिण कर्ण	दक्षिण कर्ण
ऊ	वाम कर्णे	वाम कर्ण	वाम कर्णे	वाम कर्णे
ऋ	दक्षनसि	दाहिनानसि	दक्षिण घ्राण	दक्षिणनासा
ॠ	वामनसि	वामनसि	वामप्राघ्राण	वामनासा
लृ	दक्ष गंडे	दक्षिण गड	दक्षिण गंड	दक्षिण गंड
ॡ	वाम गडे	वाम गंड	वाम गंड	वाम गड
ए	अध ओष्ठे	अधो ओष्ठे	ऊपरिओष्ठे	उपरिदंत पक्ति
ऐ	ऊर्ध्व ओष्ठे	ऊर्ध्व ओष्ठे	अध ओष्ठे	अधो दंत पक्ति
ओ	अधोदन्ते	अधोदंत	दक्षिण स्कन्ध	दक्षिण स्वंध
औ	ऊर्ध्व दन्ते	ऊर्ध्व दत	वाम स्वंध	वाम स्कन्ध
अं	मूर्ध्नि	मस्तक	मस्तक	मस्तक
अः	जिव्हाग्रे	मस्तक	जिव्हाग्रे	जिव्हाग्रे
क	दक्षबाहु दण्डे	दक्षिणभुजदण्ड	दक्षिणभुजा	दक्षिणभुजा
ख	दक्षबाहु मध्य सधौ	दक्षिणभुजदण्ड	दक्षिणभुजा	दक्षिणभुजा
ग	दक्षबाहुनाड़ीसंधौ	दक्षिणहाथ अंगुलि	दक्षिणभुजा	दक्षिणभुजा
घ	दक्षकरागुलि सधौ	दक्षिणहाथ अंगुलि	दक्षिणभुजा	दक्षिणभुजा
ङ	दक्ष कराग्रे	दक्षिण हस्त अग्र भाग	दक्षिणभुजा	दक्षिणभुजा
च	वाम बाहु दण्डे	वाम भुजदण्ड	वामभुजा	वामभुजा
छ	वाम बाहु मध्य संधौ	वाम भुजदण्ड	वाम भुजा	वाम भुजा
ज	वाम हस्तनाड़ी संधौ	वामकर अंगुलि	वामभुजा	वामभुजा
झ	वाम हस्तागुलि सधौ	वामकर अगुलि	वामभुजा	वामभुजा
ञ	वाम हस्ताग्रे	वाम हस्त अग्रभाग	वामभुजा	वामभुजा

ट	दक्षिण पाद	दक्षिण चरण मूल मे	दक्षिण कुक्ष्यो	दक्षिणकुक्षौ
ठ	दक्षपाद सधौ	दक्षिण चरण मूल मे	दक्षिण कुक्ष्यो	दक्षिण कुक्षौ
ड	दक्ष पाद गुल्फे	दक्षिण पाद गुल्फे	दक्षिण कुक्ष्यो	दक्षिण कुक्षौ
ढ	दक्ष पाद मूले	दक्षिण पाद गुल्फे	दक्षिण कुक्ष्यो	दक्षिण कुक्षौ
ण	दक्षपदाग्रे	दक्षिण पाद अग्रे	दक्षिण कुक्ष्यो	दक्षिण कुक्षौ
त	वाम वाद मध्यसधौ	वामचरण मूल मे	वाम कुक्ष्यो	वाम कुक्षौ
थ	वाम पाद सधौ	वाम चरण मूल मे	वाम कुक्ष्यो	वाम कुक्षौ
द	वाम पाद गुल्फे	वाम पाद गुल्फे	वाम कुक्ष्यो	वाम कुक्षौ
ध	वाम पाद मूले	वाम पाद गुल्फे	वाम कुक्ष्यो	वाम कुक्षौ
न	वाम पदाग्रे	वाम पदाग्रे	वाम कुक्ष्यो	वाम कुक्षौ
प	दक्षपार्श्वादिकुक्ष्यतम्	दक्षिणपसवाडा	दक्षिण प्यूरौ	दक्षिणोरौ (जाघ)
फ	दक्षपार्श्वादिकुक्ष्यतम्	दक्षिणपसवाडा	वाम प्यूरौ	वामोरौ (जाघ)
ब	वामपार्श्वादिकुक्ष्यंतम्	वाम पसवाडा	गुह्यभाग	गुह्यस्थान
भ	वामपार्श्वादिकुक्ष्यंतम्	वाम पसवाडा	नाभिमडल	नाभिस्थान
म	नाभि	उदर मे	दक्षिण वाम स्फिक्‌ प्रदेश	चूतड़
य	हृदि	हृदय	उदर	उदर
र	दक्षासे	दक्षिणकाधा	उर्ध्वरोमाचे	शिरकेश
ल	कठे	ग्रीवा मे	पाठीवर	पीठ
व	वामासे	वामाकधा	ग्रीवाकक्षादिसधि	गलेकाख की सधि
श	हृदादिदक्षकरे	हृदयादिद०हाथपर्यंत	जानुयुग्म	घुटनो मे
ष	हृदादिवामकरे	हृदयादिनामहाथपर्यंत	गुल्फयुग्म	गुल्फ मे
स	हृदादि दक्ष पादे	हृदयादिदहिनापाद	पाद युगले	पैरो मे
ह	हृदादि वाम पादे	हृदयादि वाम पादे	हृदय	हृदय
क्ष	हृदादि जठरे	हृदयादिपेट	हृदय	हृदय

नोट: अंकन्यास विधि में प्रतिष्ठा ग्रंथों के अनुसार भिन्नता है परन्तु आचार्य जयसेन कृत प्रतिष्ठा पाठ के अनुसार अंक न्यास व्यवस्थित है अतः इसके अनुसार ही मै अंकन्यास करता हूँ।

सुरेन्द्र मंत्र

ओं ह्रां वषट् णमो अरिहंताण सवौषट् ओं ब्लूं क्लीं द्रां द्रीं ह्रीं क्रौं आ सः ओं नमो ऽर्ह अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण त थ द ध न प फ ब भ म य र ल व श ष स ह ल क्षः क्लीं ह्रीं क्रौं स्वाहा ।

गणधर वलय यंत्र

(१) ओं ह्रीं इवीं श्रीं अर्ह अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः ।
(२) ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः ।

चौसठ ऋद्धि मंत्र - ओं ह्रीं चतुः षष्टी ऋद्धिसमृद्धगणधरेभ्यो नमः

बोधिसमाधि

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा श्री र्ह ममेष्टं शुभं कुरु कुरु अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण त थ द ध न प फ ब भ म य र ल व श ष स ह क्षं पं वं क्षि स्वाहा ।

तिलकदान मंत्र -

ओ ह्रीं श्री अर्ह अ सि आ उ सा अप्रतिहत शक्तिर्भवतु ह्री स्वाहा ।

सिद्धचक्र मंत्र

(१) ओ ह्रीं अर्ह अनाहत विद्यायै णमो अरिहंताण णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्य. सम्यक्तपसे नमः स्वाहा ।
(२) ओं अ सि आ उ सा ह ह्रा हि ह्री हु ह्रू हे है हो ह्रौ हं ह्रः णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं । सम्यग्दर्शनाय नमः सम्यग्ज्ञानाय नम. सम्यक्चारित्राय नमः सम्यक्तपसे नमः ठः ठः ओं ह्रीं अनाहत विद्यायै अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण त थ द ध न प फ ब भ म य र ल व श ष स ह क्षः ठः ठ· नमः स्वाहा ।
(३) ओ ह्रां ह्री ह्रूं ह्रौ ह्र· श्री चक्राधिपतये अष्टगुण समृद्धाय फट् स्वाहा ।

नयनोन्मीलन मंत्र

ओं णमो अरिहंताणं णाण दंसण चक्खुमयाण अमियरसायणं विमलतेयाणं संति तुट्ठि पुट्ठि वरद सम्मादिट्ठीणं वं झं अमियवरसीणं स्वाहा ।

सूर्यकला मंत्र

ओं ह्रीं स्फ्रां स्फ्रीं औं वं झ्रौं सं श्री एहि एहि अस्मिन् बिम्बे सूर्यकलां स्थापय स्थापय श्रुः नमः ।

चन्द्रकला मंत्र

ओं ह्री श्रीं अर्हं पुनीहि पुनीहि ओं श्रीं क्लीं अस्मिन् बिम्बे चन्द्रकलां स्थापय स्थापय ह्रीं झ्रौं नम. ।

प्राण प्रतिष्ठा मंत्र

ओं आं क्रौं ह्रीं य र ल व श ष स ह अ सि आ उ सा क्षों सः हं सः आयुष्य प्राणा इह प्राणा आमुष्य जीवः इह स्थितः सर्वेन्द्रियाणां कायवाङ मनश्चक्षु श्रोत्रं मुखघ्राण जिव्हान् स्थापय स्थापय शब्द स्पर्श वर्ण रस गंधान् अस्य आत्म घटं वायु च पूरय पूरय संवौषट् तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः चिरकालं नन्दतु ।

सूरि मंत्र

(१) ओं परम ब्रह्मणे नमो नमः स्वस्ति स्वस्ति जीव जीव नन्द नन्द वर्धस्व वर्धस्व विजयस्व विजयस्व अनुसाधि अनुसाधि पुनीहि पुनीहि पुण्याहं पुण्याहं मांगल्य मांगल्यं वर्धयेत् वर्धयेत् एवं जिनबिम्बे आत्मघटं वायुं पूरय पूरय आगच्छ आगच्छ संवौषट् तिष्ठ तिष्ठ ठ· ठः चिरकालं नन्दतु वज्रमयां प्रतिमां कुरु कुरु ग्रौ ग्रौं स्वाहा स्वधा ।

(२) ओं ह्रीं णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं । चत्तारि मंगलं- अरिहंता मंगलं सिद्धा मंगलं साहू मंगलं केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा - अरिहंता लोगुत्तमा सिद्धा लोगुत्तमा साहू लोगुत्तमा केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि - अरिहंते सरणं पव्वज्जामि सिद्धे सरणं पव्वज्जामि साहू सरणं पव्वज्जामि केवलि पण्णतं धम्मं सरणं पव्वज्जामि क्रौं ह्री स्वाहा ।

मोक्षमार्ग मंत्र

ओं ह्रीं णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूण अ सि आ उ सा सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रतपेभ्य· स्वाहा ।

निर्वाण सम्पत्तिकर मंत्र

ओं ह्री अर्हं श्रीं ओं झं पं झ्वी क्ष्वीं हः पः हः अ सि आ उ सा मम शान्ति पुष्टि कुरु कुरु ह्री क्रौं स्वाहा ।

यंत्राधिकार

यंत्र एवं यंत्र निर्माण विधि

स्वर्ण, रजत, ताम्र एवं पीतल के पत्र पर विधि विधान पूर्वक बीजाक्षरों मंत्रों एवं अंकों का लेख जिसे आगम की कथन पद्धति एवं मंत्रों द्वारा प्रतिष्ठित किया जाता है। 'यंत्र' कहलाता है, जो जिनबिम्ब के समान ही पवित्र एवं पूजनीय है। आगम में परम

ब्रह्म (जिन बिम्ब) एवं शब्दब्रह्म (यंत्र) दोनों की आराधना का विधान आया है। चूंकि आराधना के लिये अवलम्बन आवश्यक है, और जहां जिन मंगलकार्यों में जिनबिम्ब नहीं होते हैं। वहां हम यंत्र जी को साक्षी मानकर अपनी आराधना पूर्ण करते हैं। जैसे निवास/प्रतिष्ठान में भक्तामर विधान, पाणिग्रहण संस्कार, सोलहकारण, दशलक्षण, रत्नत्रय आदि पर्वो की उपासना हम यंत्र का अवलम्बन लेकर करते हैं।

यंत्र रिद्धि सिद्धि वाले, विघ्न विनाशक, कष्टनिवारक, सर्व सिद्धि प्रदायक होते हैं। यंत्र विधान तीन प्रकार का है।

(१) बीजाक्षरों द्वारा

(२) स्वर एवं व्यंजनों के योग से विशिष्ट अर्थवाचक

(३) अंक गणित(संख्यानुसार)

(१) बीजाक्षर यंत्रः- प्रतिष्ठा विधि में जितने यंत्र हैं अधिकांश बीजाक्षरों से बनाये गये हैं। जिस प्रकार बीजाक्षर अनादि और अनन्तफलदायक हैं उसी प्रकार यंत्र भी प्रभावशाली और कार्य में सफलता प्रदान करते हैं।

(२) स्वरव्यंजन वाले यंत्रः- स्वर एवं व्यंजन के योग से (मंत्रों द्वारा) बनाये गये यंत्रों में भक्तामर,दशलक्षण, सोलहकारण, रत्नत्रय मुख्य हैं।

(३) अंक गणित वाले यंत्रः- इनका प्रयोग अलग – अलग कार्य सिद्धि के लिये अलग – अलग होता है यह यंत्र अधिकांशत : गले में, हाथ में और अन्य स्थानों पर प्रयोग में लाया जाता है इस प्रकार के यंत्रों का निर्माण भोज पत्र पर केशर से लिखकर किया जाता है – इसके लिखने के कुछ आवश्यक नियम ध्यान रखना अनिवार्य हैं।

(१) यंत्र लेखन का कार्य केशर या अष्टगंध से स्वर्ण शलाका, चन्दन अथवा अनार की कलम से करना चाहिये।

(२) लेखन ऊंचे पाटा (चौका) पर रखकर लिखना चाहिये घुटने पर रखकर नहीं क्योंकि नाभि से नीचे के अंग अशुद्ध माने गये हैं।

(३) लेखन में प्रथम छोटी सख्या वाले अंक फिर उसी क्रम में वृद्धि वाले अंक लिखना चाहिये, इसके विपरीत दशा से बनाये यंत्र लाभकारक नहीं होते है।

(४) यत्र मौनपूर्वक एवं शुद्धि के साथ लिखना चाहिये, अशुद्धि पूर्वक लिखे यंत्र लाभदायक नहीं होते।

(५) यंत्र लिखते समय पूर्व या उत्तर दिशा ही हो क्योंकि पूर्व दिशा से लिखे यंत्र सुख समृद्धि करते हैं और उत्तर दिशा से लिखे यंत्र आधि - व्याधि मिटाने वाले होते हैं। अन्य दिशा एवं विदिशा से यंत्र नहीं लिखना चाहिये।

(६) भोजपत्र फटा या गंदा नहीं बल्कि साफ और सुन्दर हो।

(७) यंत्र लिखते समय दीप एवं धूप का उपयोग आवश्यक है।

(८) यंत्र लिखते समय यदि कलम टूट जाये या केश्शर समाप्त हो जाये तो यंत्र लाभदायक नही होगा।

(९) यंत्र लिखने वाला यत्र शास्त्र का ज्ञाता, अंक गणित का ज्ञाता, संयम, ब्रह्मचर्य पालने वाला, शीलवान हो।

(१०) यंत्र को जमीन पर नहीं डालना चाहिये, यंत्र की पवित्रता आवश्यक है कदाचित् अशुद्ध हो जावे तो धूप जलाकर उसे शुद्ध किया जा सकता है।

धातु के यंत्रों का उपयोग विधिपूर्वक प्रतिष्ठा एवं पूजन करने के पश्चात् ही करना चाहिये। अन्यथा कार्य सिद्धि नहीं होगी। प्रतिष्ठा एवं विधान में उपयोगी यंत्रो की जानकारी इस प्रकार है।

यंत्र फल

१ विनायक सिद्धयंत्र विधि

मध्ये तेजस्ततः स्याद्वलयमथ धनु. संख्यकोष्ठेषु पञ्च
पूज्याद्यान् स्थाप्य वृत्ते तत उपरितने द्वादशाभोरुहाणि।
तत्र स्युर्मंगलान्युत्तमशरणपदान्याद्यसिद्धा महर्षि-
र्धर्मप्रख्यातभांजि त्रिभुवनपतिना वेष्टयेदं कुशाढ्यम्॥

विनायक यंत्र फल

यंत्र विनायकपदं विनयार्थमूलं, सर्वेषु मंगलविधिष्वनुयोज्यमानम्।
प्रत्यूहजालमपहाय समाप्तिमेति, शास्त्रे प्रतिष्ठितविधौ च विवाहकार्ये॥

२- श्रीशांतियंत्रोद्धार

स्थाप्यं ब्रह्म पदं ततोऽपि बलयेऽनादिप्रसिद्धाक्षरं
तस्मादूर्ध्ववृते चतुर्युतसुविशास्तीर्थनाथास्ततः ।
ऊर्ध्वे ऋद्धि धरा विनेयमुखनुत्यंताश्चतुः षष्टिकाः
ह्रीं वेष्ट्या गजशस्त्रकृद्धुधिहरं यंत्रं सुशांतिप्रदं ।

शांतियंत्र फल

घोरादिदुःखजनितामपराधजातां लूताज्वरव्रणभगंदरकासपीडां।
बाधां व्यपोहति समर्चितमेतदाशु शांतिप्रदं परममंत्रनिरूपणेन ॥

३ श्री पूजायंत्रोद्धार

मध्येनाहतलोकभर्तृजठरे ऽ र्हद्भ्यो नमस्तद्वृते
कोष्ठानां नवके प्रपूज्य विततिः स्याच्चैत्यचैत्यालयाः ।
वाणी धर्मविधीचतुर्थविभजाभक्त्यादिनुत्यंतकाः
ह्रीं क्रौं ऋद्धमिदं महार्चनकृत्तौ यंत्रं विमुक्तिप्रदम् ॥

पूजा-यंत्र फल-

यः पूजयेदतुलभक्तिभरेण पूजायंत्रं त्रिकालजपयुग् विधिना मनुष्यः ।
तस्यार्थसिद्धिपरिवृद्धिरनर्थहानिर्नित्यं करामलतले लुठति प्रसह्य ॥

४ श्री कल्याणयंत्रोद्धार

मध्ये ऽ र्हं प्रणवोत्पुटं त्रिभुवनक्लींकारवेष्ट्यं ततः
पार्श्वे पंचशरद्वयं बहिरिते वृत्ते ऽ ष्टकोष्ठान्विते ।
ओं ह्रीं संपुटितानि मन्मथमहालक्ष्मीश्रुतानि क्रमात्
विश्वेशांकुशयोः स्मृतं पुनरिदं त्रैलोक्यसाराभिधम् ॥

कल्याणयंत्र फल

गर्भादिपंचभविकेषु त्रिलोकसारं पूर्व समर्च्य विधिना तत उत्तराणि ।
कर्माणि संवितनुते परमार्थमार्गे नो प्रच्यवो भवति पूजयतो नरस्य ॥

५ श्री यंत्रेश यंत्रोद्धार

अंतोऽर्हत्गजरुद्रमात्रिभुवन क्लीं शांतिपुष्टि कुरु
द्विः स्वाहा परितो ऽ ब्जषोडशदले पंचेद्यहोमामृतै ।
क्ष्वीं वं हं ह्यमृतेन वेष्ट्यममुना विश्वक् रमात्र्यंगयो.
ह्रीं वेष्ट्या कलशेन च क्षितिभुजा यंत्रेशमेवं विधम् ॥

यंत्रेशयंत्रफल

विद्याः प्रसाधयतुमर्हति यो ऽ त्र धीमान् यंत्रेशमुत्तममिदं प्रथम समर्च्य ।
एतन्मनुं जपति शास्त्रगमित्त्ववाग्मित्वाद्यं बुधि तरति तर्कवितर्कणोद्ध ।

६ श्री सिद्धयंत्रोद्धार

ऊर्ध्वाधोरयुतं सविंदु सपरं ब्रह्मास्वरावेष्टित ।
वर्गापूरितदिग्गताम्बुजतटं तत्संधितत्त्वान्वितम् ॥
अंतः पत्रतटेष्वनाहतयुतं ह्रींकारसंवेष्टित ।
देवं ध्यायति यः स मुक्तिसुभगो वैरीभकंठीरवः ॥

सिद्धचक्रयंत्र फल

यः सिद्धचक्रनिरतो ऽ र्हणमाकरोति वैरिव्रजं दहति कर्मसमूहसार्थम् ।
अन्या च का बहुकथा शिवसौख्यलक्ष्मीः स्वैरं पदाब्जयुगले भ्रमरायति द्राक् ॥

७ श्री वृहत्सिद्धचक्रयंत्रोद्धार

ऊर्ध्व रेफयुतं सविंदुसपरं मायावृत पंचभि -
र्गुर्वाद्यक्षरवैः सहोमनिधनैर्वेदादिवैर्वेष्टितम् ।
ह्रीं वेष्ट्यं सपरं स्वरैरविमितैर्युक्ति ततोऽनाहतं,
युक्तं पंचपदैरनुप्रणवदृग्बोधेन वृत्तेन च ॥

सम्यग्युक्तपसा च होमनिधनेनास्यं ठकारावृत,
बाह्ये षोडशभिः स्वरैः परिवृतं तेभ्यो ऽ नुपत्राष्टकम् ।
ओं ह्रीं अर्हमनाहताक्षरमुखं वर्गाष्टकं होमयुक्,
यंत्रांतः प्रथमं च मंत्रमथ तत् पत्राग्रतोऽनाहतं ॥

मायावेष्टितमंकुशेन नमितं पश्चात् ठकारावृतं,
ओं ह्रीं अर्हमनाहतादिगुरुभिः सर्वैर्नमोऽन्तैर्युतम् ।
स्वाहांताय सुसिद्धचक्रपतये युक्तं ततो भः पुरं,
क्षोणीमंडलगं जगत्पतिशयं श्री सिद्धचक्रं महत् ।।

वृहत् सिद्धचक्रमंत्रफल

यः सिद्धचक्रमलघु प्रतिणौति रोगान्,
दुष्टान् निहंति शिवसौख्यरसायनानि ।
लब्ध्वोर्जयंतशिखरे तदनंतवीर्य,
स्वामीव वाक् प्रगुणतामनणुं बिभर्ति ।।
राज्यं देयं शिरो देयं सर्वसंपत्तिरुत्तमा ।
चक्रवर्तिपदस्थाय न देयं सिद्धचक्रकम् ।।
विनीताय सुशांताय ब्रह्मचर्ययुताय च ।
निजशिष्याविशिष्टाय देयं तदपि चावृतम् ।।
यदि निः शीलताभाजे ह्यविनीताय दीयते ।
तदा ऽपमृत्युमाप्नोति निरये घोरवेदनाम् ।।

८ श्रीगणधरवलययंत्रोद्धार

षट्कोणे प्रणवादिमर्हमभितः कोष्ठे बहिः संधिषु,
द्वादश्यप्रतिचक्रफड्ग मनुना क्लृप्ता सुलेख्या ततः ।
वृत्ते ऽष्टावितरे तु षोडश ततो वृत्ते चतुर्विंशतिः,
ऋद्धीनामुदयाद् गणेशगदितं यंत्रं गणेशाभिधम् ।।

गणधरवलय यंत्र फल

यः प्रांशुधीः प्रतिदिनं जिनबिंबसंस्थाऽभ्यर्णेऽर्चयन् जपति गानममुं त्रिकालम् ।
देवेन्द्र वृंदरचितांजलिकुड्मलश्रीपूज्यांघ्रिपद्मयुगलाः शिवमावृणीते ।।

९ श्री वर्धमानयंत्रोद्धार

भक्यंतोऽर्हमनुस्त्रिलोकजिनभूस्वाम्युत्पुटस्थस्वरै-
रावृत्योर्ध्वपुटे रविप्रभगृहे वर्गाष्टकावर्जितम् ।
सिद्धाचार्यगुरूपदेष्टपदकं दत्वा चतुर्थ्यन्तकं,
स्वाहान्वीतमिदं नमामि महित श्रीवर्धमानाख्यया ॥

वर्द्धमानयंत्र फल

मंत्रेण यः सह यजेद् गुरुभक्तिशीलः,
श्रीवर्धमानमुखपद्मविनिर्गतांकम् ।
तस्याशु बुद्धिमुपयाति नरेंद्रचक्र -
स्तुत्या विनष्टदुरिता शिवसौख्यलक्ष्मीः ॥

१० श्री बोधिसमाधि यंत्रोद्धार

गर्भे भक्तिजिनेशपञ्चमनवः श्रीर्ह्ममेष्ट शुभं,
द्विः कुर्वाग्निवधूयुजस्तदभितो वृत्तेष्टवर्गा यथा ।
पूर्वोक्ता जलभूमिमंडलगता ज्ञानार्कसंपत्करा-
श्चक्रं बोधिसमाधिनाम जिनपैः स्पष्टीकृतं सिद्धये ॥

बोधिसमाधियंत्रफल

सव्ये स्वरे समुदयत्यहनि प्रभाते सूर्योदये च सति साष्टसहस्रसंख्यम् ।
यो मंत्रयेदखिलपापविमुक्तदेहस्तत्वस्य शुद्धिमुपयाति समाधियंत्रात् ॥

११ श्री मोक्षमार्गयंत्रोद्धार

मध्ये पंचमनूनस्वपल्लवयुतान् तद्बृत्तकोष्टाष्टके,
तान्येवाक्षरसंमितानि परितो वृत्ते चतुःकोष्टके ।
सम्यग्दर्शनज्ञानतत्स्थितितपांस्येवंविधान्यर्जयद्,
यंत्र मोक्षपथप्रदं समवसृत्याप्तौ तु पूज्यं श्रये ॥

मोक्षमार्गयंत्र फल

नो केवलं यजनसृष्टिषु पूज्यमेव कामप्रदायि मनसोऽर्थ समापने च ।
इत्यामनंति मुनयो गतरागभावा बंदीच्युतावपि रुषाभिभवं करोति ॥

१२ श्री निर्वाणसंपत्करयंत्रोद्धार

मध्येऽनाहतसंपुटे मनसिजोद्बीजं रमाभिर्वृतं,
तद्बाह्ये ऽष्टदलेषु पंचजिनराट् वर्णा यथान्यासतः ।
तद्बाह्ये दलसीम्नि तन्मनुपुरः शांतिं च पुष्टिं कुरु,
द्विः स्वाहेति परं तदेव मनुभून्निर्वाणसंपत्करं ॥

निर्वाणसंपत्करयंत्र फल

निर्वाणपूजनविधौ महनीयमेवं काम्येऽपि हेमरजतप्रतिलब्धिहेतोः ।
प्रोक्तं पुरातनमुनींद्रगणेन तद्वन् मोक्षार्थिभिर्गतविभावविभासनैश्च ॥

१३ श्री सुरेन्द्रयंत्रोद्धार

मध्ये भक्तित्रिलोक्यां प्रथमपुरुपदं पूर्वमाह्वाननांगे,
तत्राद्ये मातृकायान्यसनमिह वृते रत्नपंचप्रणामः ।
पात्राः क्रौं ह्रीं नमः स्यादिति मदभुवने तोयपृथ्वीनिबंधं,
एवं देवेन्द्रचक्रं स्मरति नमति यो देवकांतामनोज्ञः ॥

सुरेन्द्रयंत्र फल

सुरेन्द्रचक्रं विधिना प्रयुक्तं सुरासुराचितपादपद्मं ।
बिभर्ति कंठे रतिलेह्यदेहौ नैरोग्यकारी जलपानकर्तुः ॥

१४ श्री मातृकायंत्रोद्धार

मध्येऽर्हं विलिखेत् तदभितो वृत्तेऽष्टकूटाक्षरं,
रेखानां च चतुष्टयेषु कुलिशाग्रेषु स्थिता मातृकाः ।
षट्त्रिंशद्भवनेषु च द्विरसगेष्वग्रेस्मरो भक्तिग-
श्चक्रेऽस्मिन् जिनसंस्थितिं विरचयेत् श्रीसूरिमंत्रक्षणे ॥

मातृकायंत्र फल

आचाल्यबिंबेऽग्रनिवासभूमौ विलेखनीयं पटुनर्त्तिकेन ।
स्वर्णलेखिन्यजयंत्रधार्या श्लाघ्या रहस्येव मनःप्रसत्तौ ॥

१५ श्री नयनोन्मीलनयंत्रम्

अनाहतं समावेष्ट्य ठकारैश्च स्वरैः क्रमात् ।
क्लीं इवीं क्ष्वीं हंसः सद्बीजै रंभोमंडलमध्यतः ।।
कुंकुमाद्यैर्लिखेद् यंत्रं पात्रे स्वर्णादिनिर्मिते ।
लवंगादिभवैः पुष्पैः पद्मरागसमप्रभैः ।।

ओं ह्रीं श्रीं अर्हं नमो मंत्रं जपेदष्टोत्तरं शतं ।
तद्रौप्यपात्रविन्यस्तसिताक्षीराज्यसंयुता ।।
विदध्यात्तेन गंधेन चामीकरशलाकया ।
चक्षुरुन्मीलनं शक्रः पूरकेन शुभोदये ।।

मूलविंबस्य चान्येषां यथायोग्यं समाचरेत् ।
आचार्यशक्रयःषण्णां मध्ये एकेन सत्क्रियात् ।।

प्रतिष्ठा सम्बंधी यंत्र

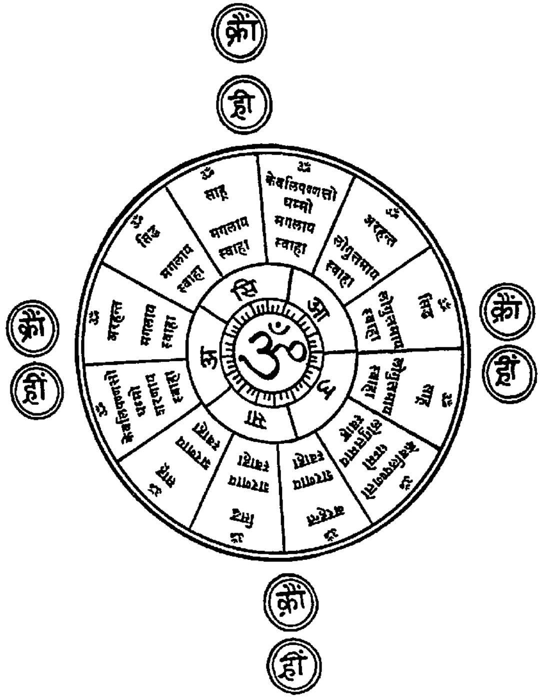
पंचकल्याणक प्रतिष्ठा का कार्य आरंभ करने से पूर्व प्रतिष्ठा में उपयोगी यंत्रों को विधिवत् शुद्ध करके यंत्र प्राण प्रतिष्ठा एवं पूजन करना अनिवार्य है।

मात्र गंधोदक या हवन कुण्ड में रखने से यंत्रों में पूज्यता नहीं आती है।

नवदेव मण्डल यंत्र

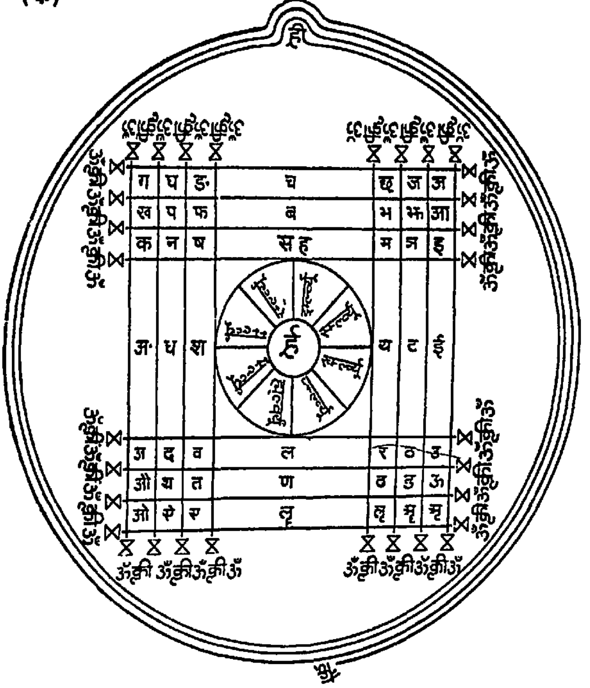


विनायक यंत्र

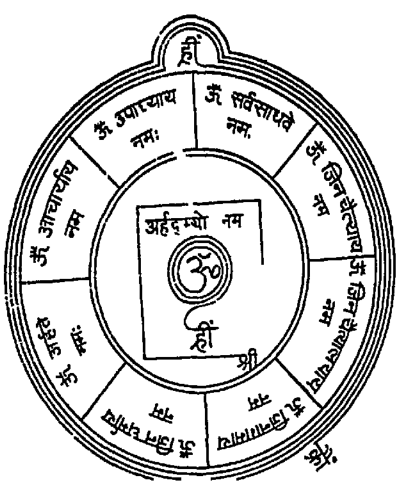


मातृका यंत्र

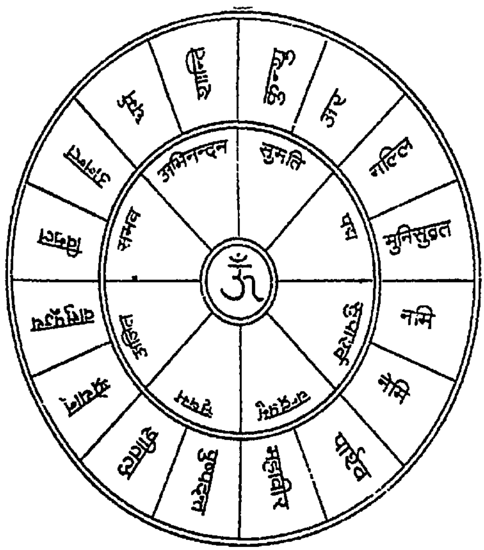
(क)



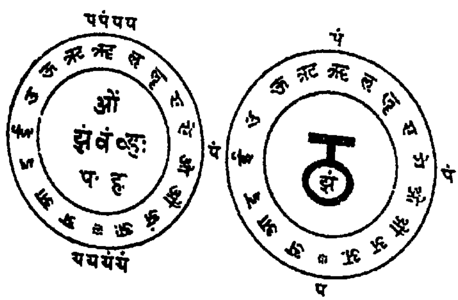
पूजा यंत्र



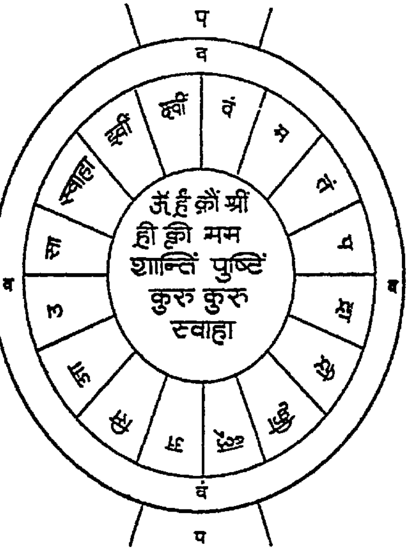
चौबीसी मण्डल यंत्र



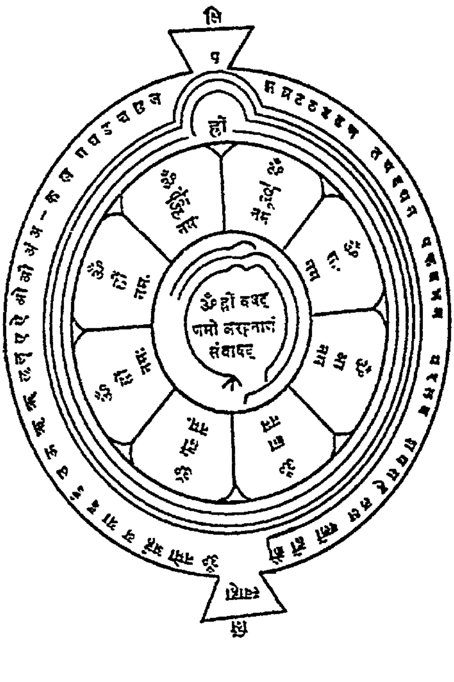
जल मण्डल यंत्र



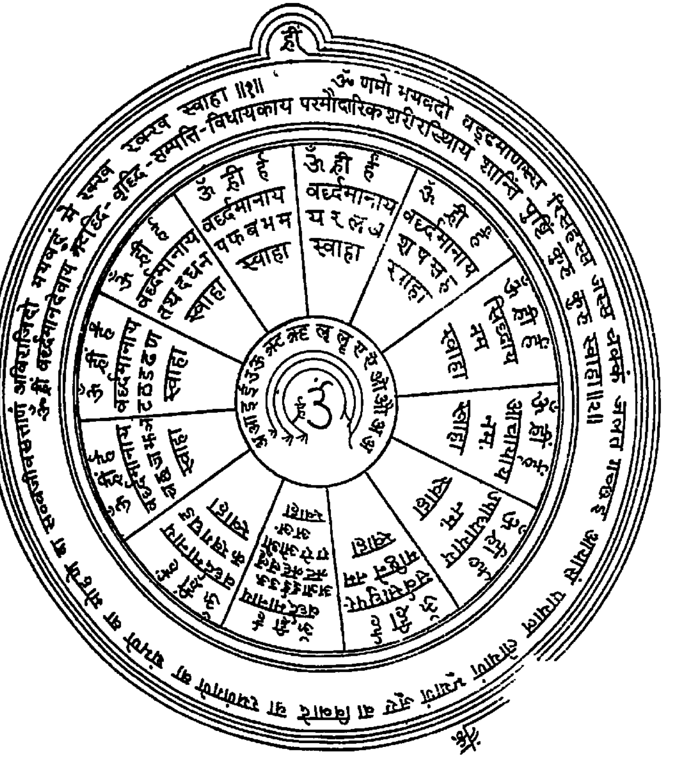
यंत्रेश यंत्र



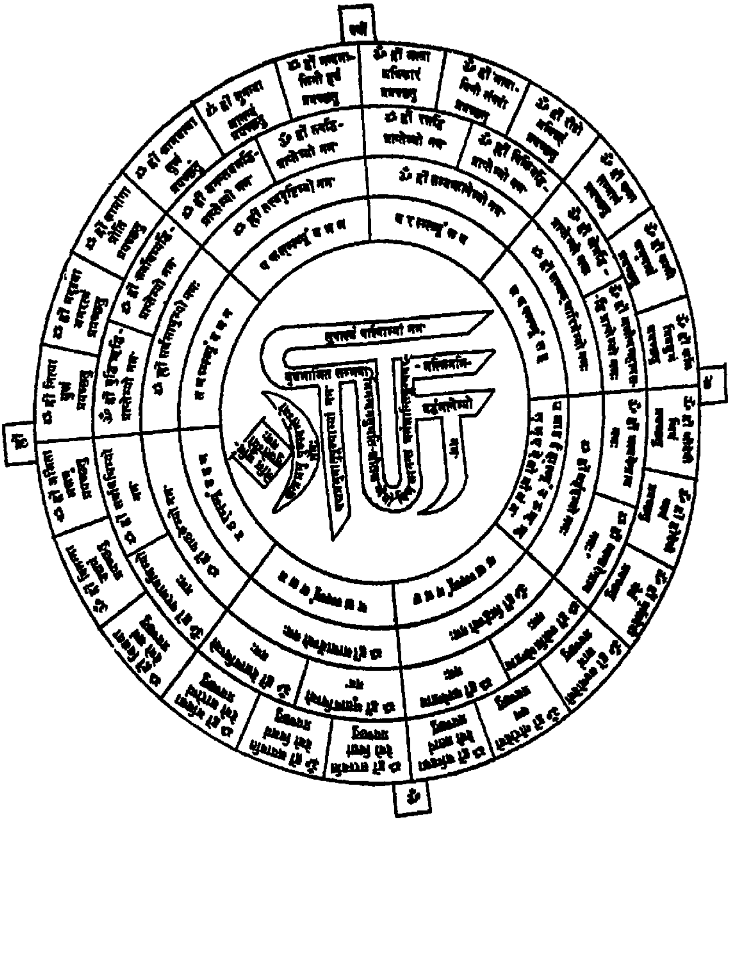
सुरेन्द्र चक्र यंत्र



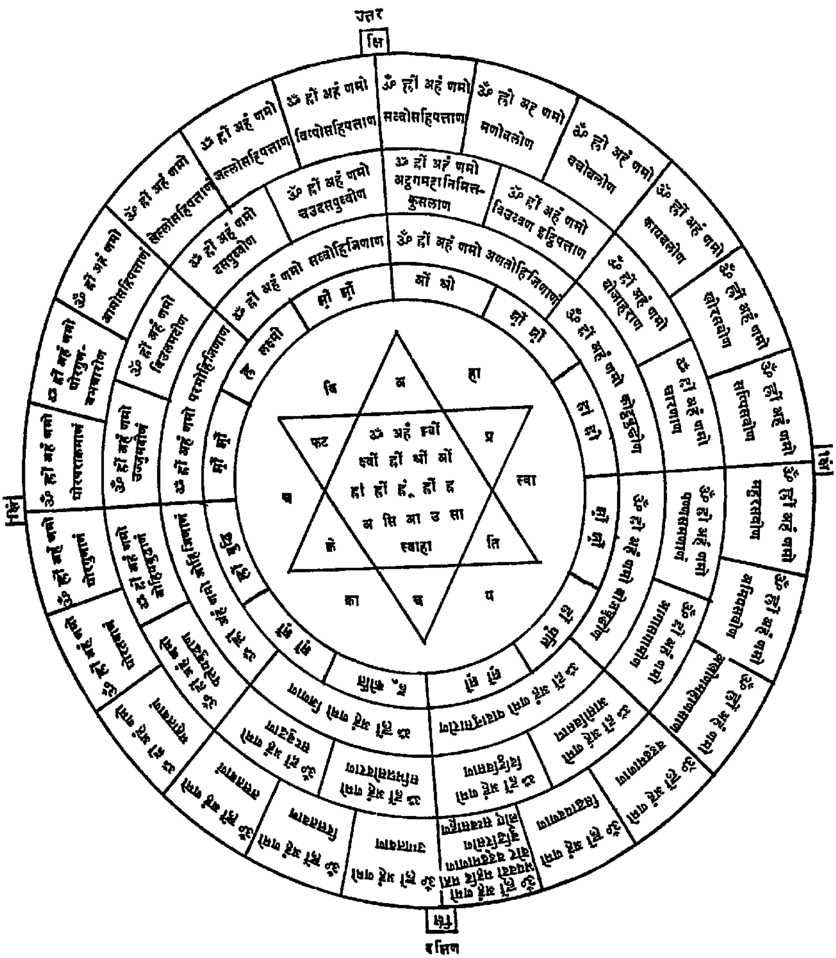
वर्द्धमान यंत्र


ह्रीं
ॐ णमो भयवदो वड्ढमाणस्स रिसहस्स जस्स चक्कं जलंतं गच्छइ आयासं पायालं लोयाणं भूयाणं जूए वा विवाए वा रणंगणे वा थंभणे वा मोहणे वा सव्वजीवसत्ताणं अवराजिदो भयवदु मे रक्खउ रक्खउ स्वाहा ॥१॥
ॐ ह्रीं वर्द्धमानदेवाय ऋद्धि-वृद्धि-सम्पत्ति-विधायकाय परमौदारिकशरीरस्थिताय शान्तिं पुष्टिं कुरु कुरु स्वाहा ॥२॥
ॐ ह्रीं र्हं वर्द्धमानाय पफबभम स्वाहा
ॐ ह्रीं र्हं वर्द्धमानाय यरलव स्वाहा
ॐ ह्रीं र्हं वर्द्धमानाय तथदधन स्वाहा
ॐ ह्रीं र्हं वर्द्धमानाय टठडढण स्वाहा
ॐ ह्रीं र्हं सिद्धाय नमः स्वाहा
ॐ ह्रीं र्हं आचार्याय नमः स्वाहा
ॐ ह्रीं र्हं उपाध्याय नमः स्वाहा
अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः
ॐ

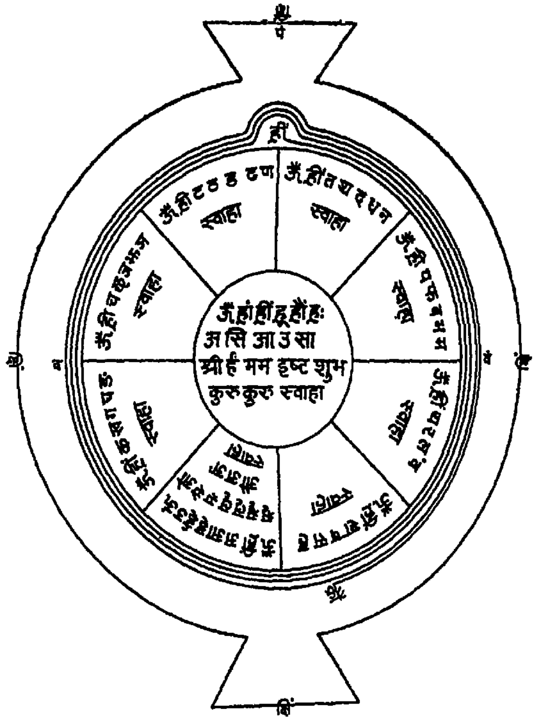
ऋषि मंडल यंत्र



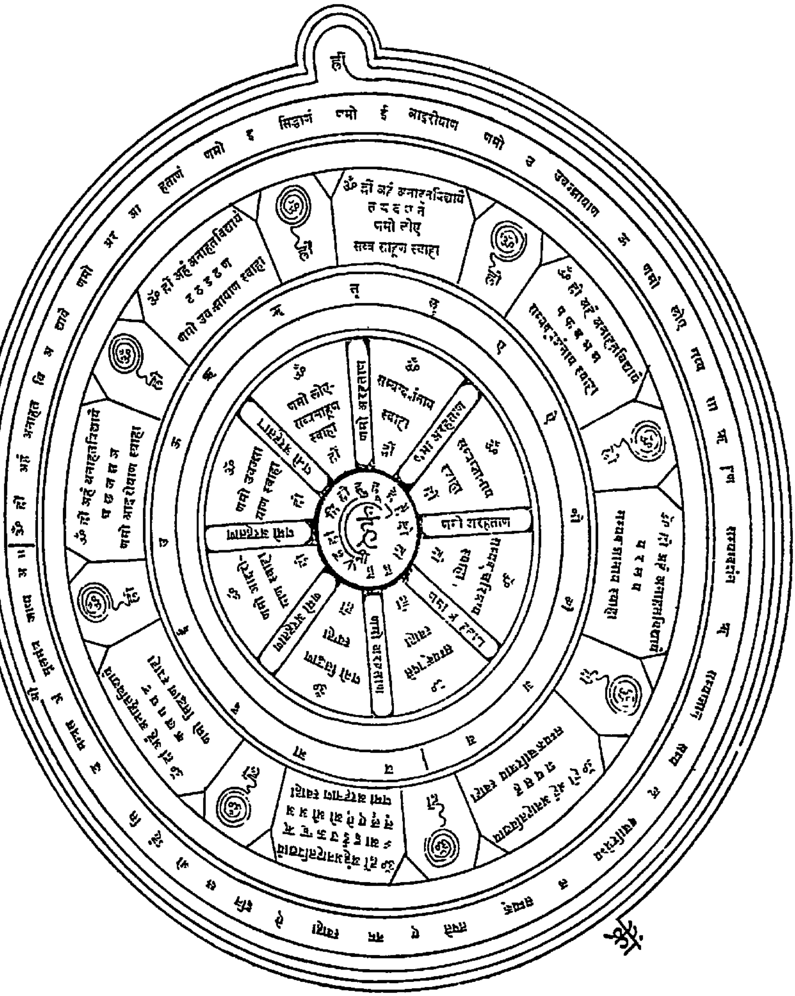
गणधर वलय यंत्र



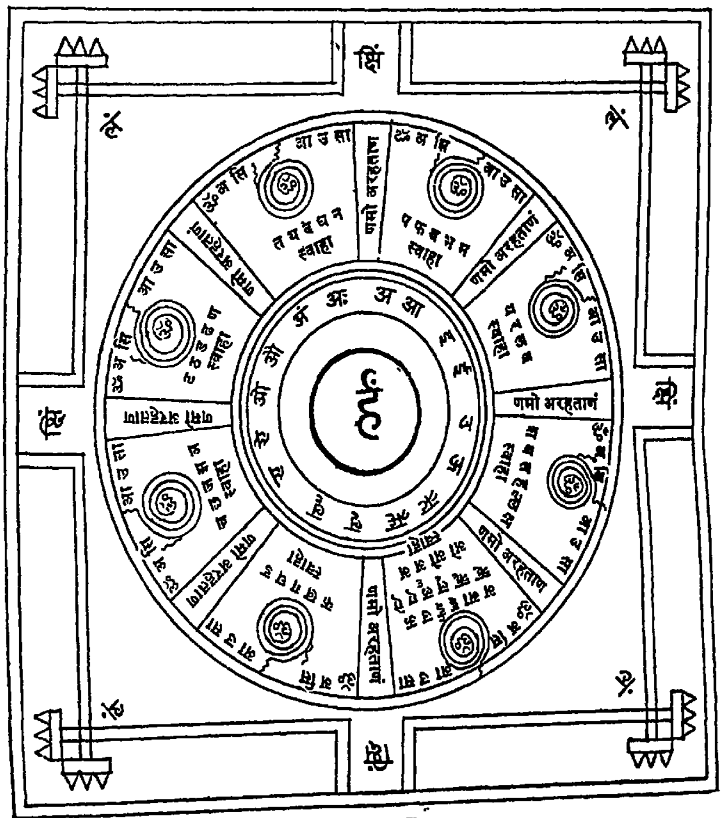
बोधि समाधि यंत्र



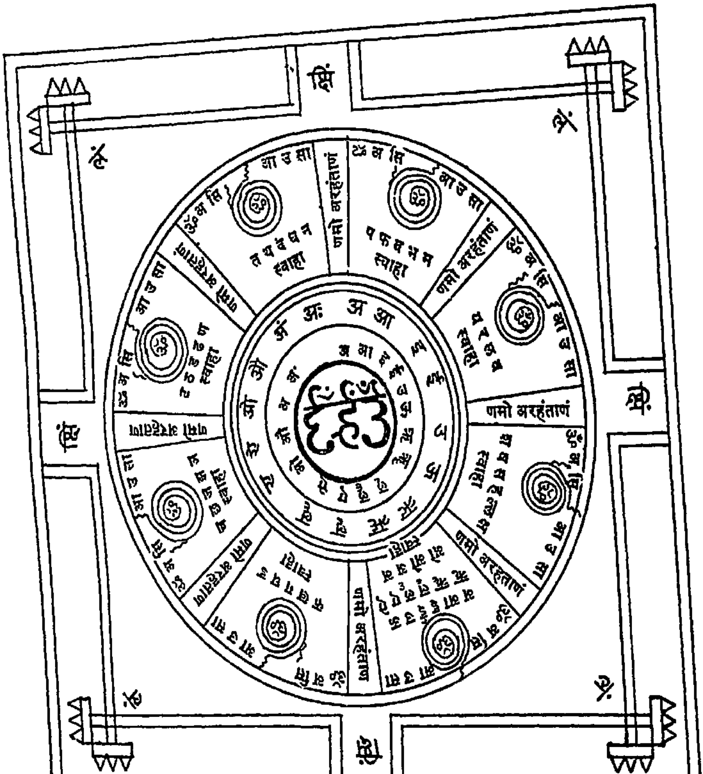
४६-सिद्ध चक्र यंत्र (वृहत्)



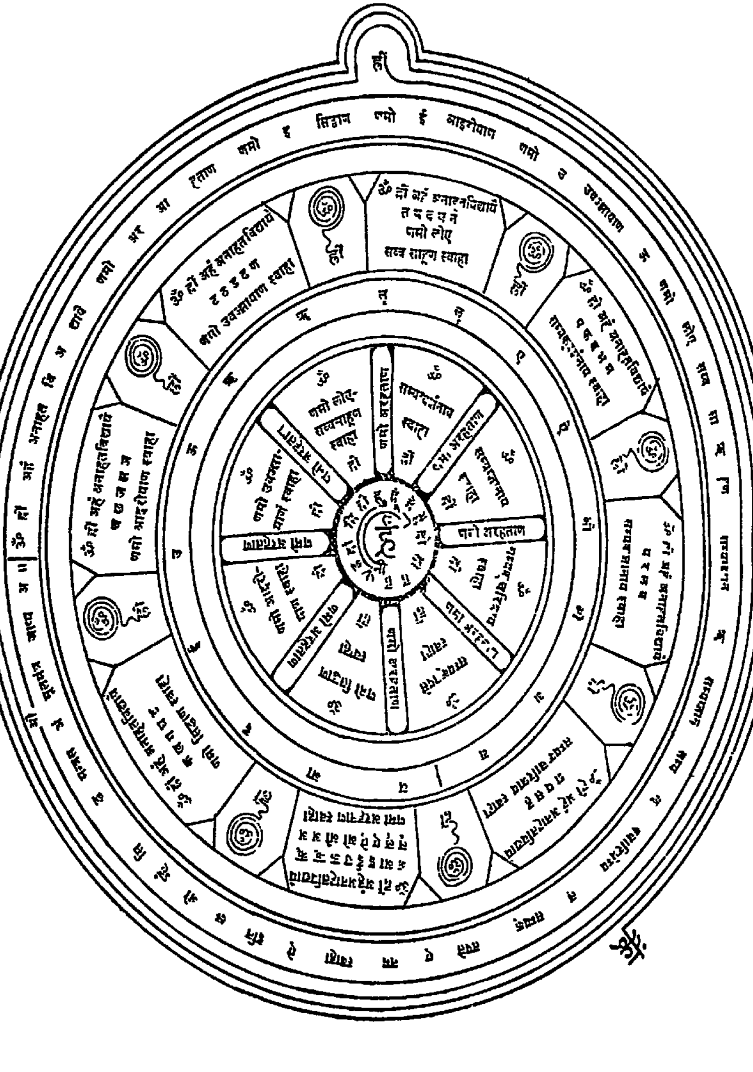
४५-सिध्द चक्र यंत्र (लघु)



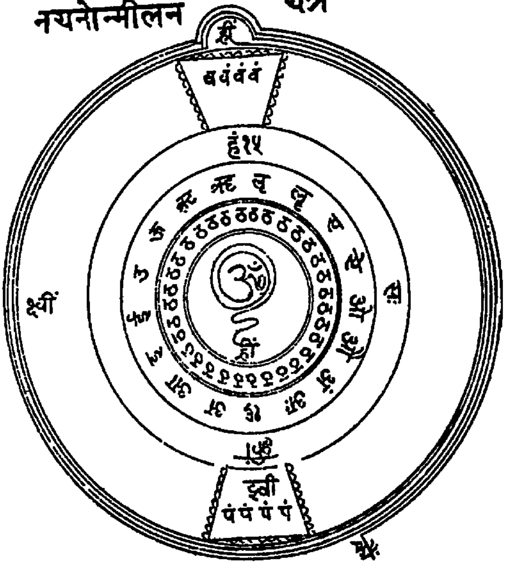
सिध्द चक्र यंत्र (लघु)



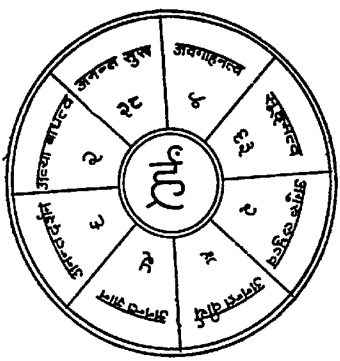
सिध्द चक्र यंत्र (वृहत्)



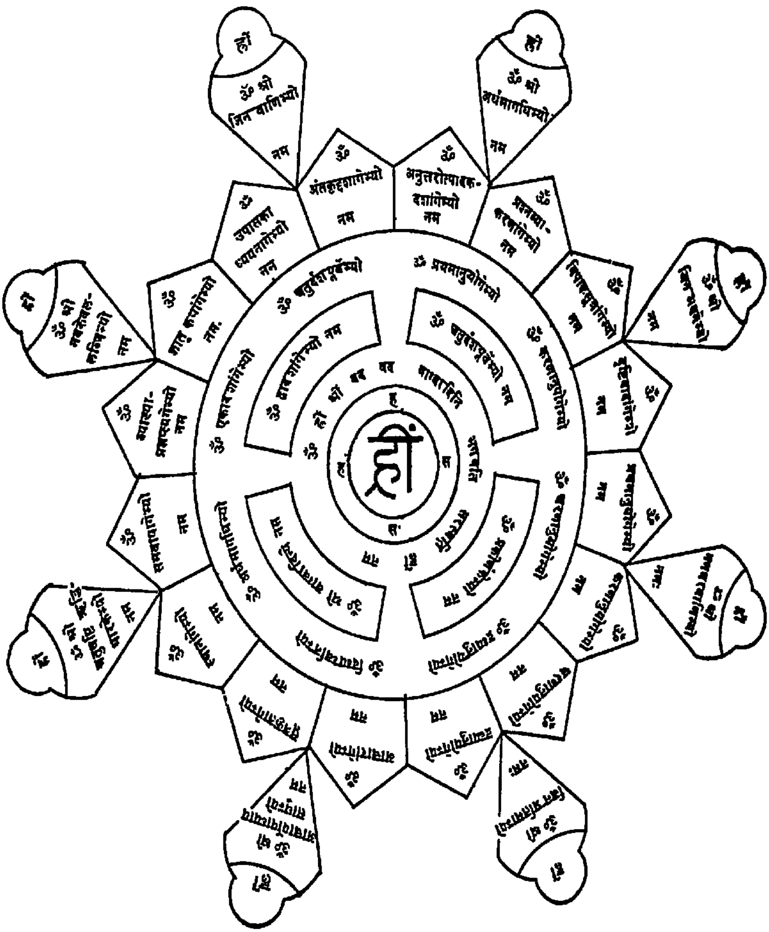
नयनोन्मीलन यंत्र



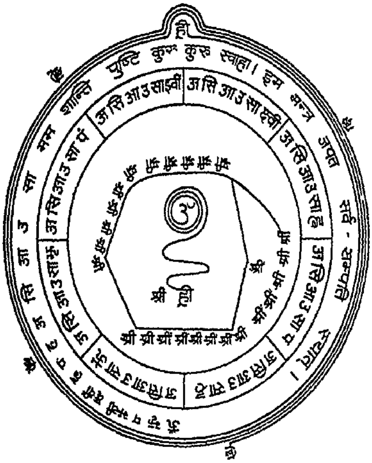
कर्म दहन यंत्र



सरस्वती यंत्र


ह्रीं
ॐ श्री
जिन वाणिभ्यो
नम
ॐ
अंतकृद्दशांगेभ्यो
नम
ॐ
अनुत्तरोपपादक-
दशांगेभ्यो
नम
ॐ
उपासका
ध्ययनांगेभ्यो
नम
ॐ प्रथमानुयोगेभ्यो

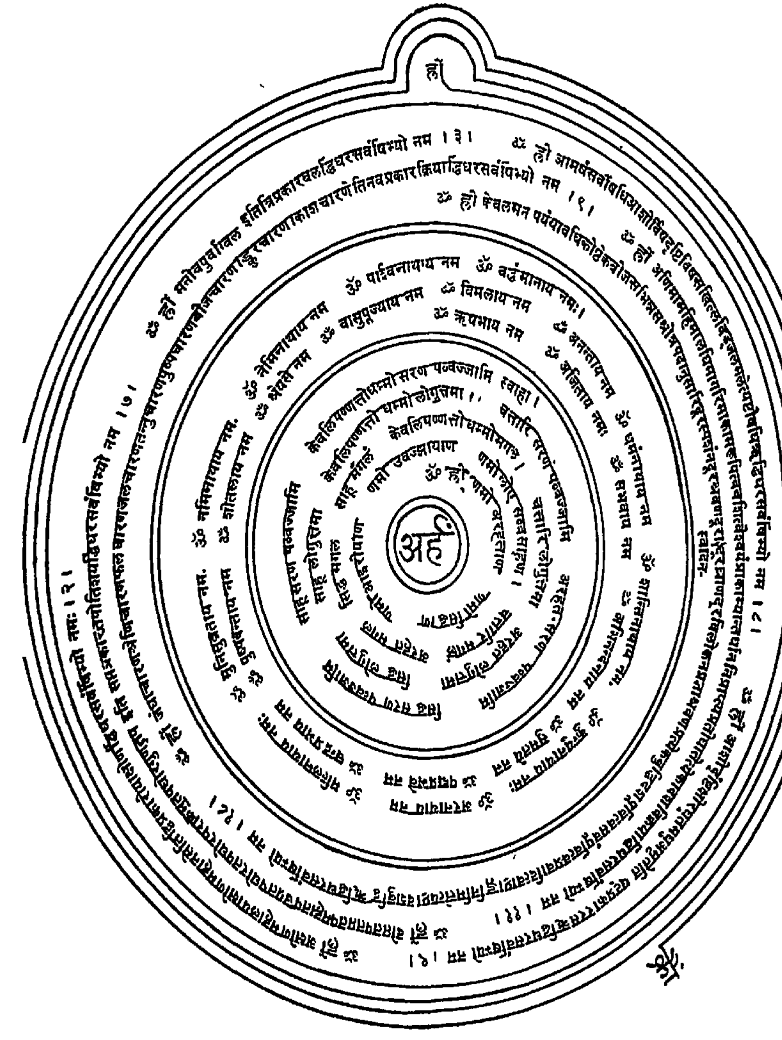
निर्वाण सम्पति यंत्र



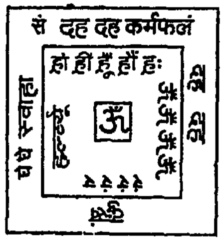
मोक्षमार्ग यंत्र



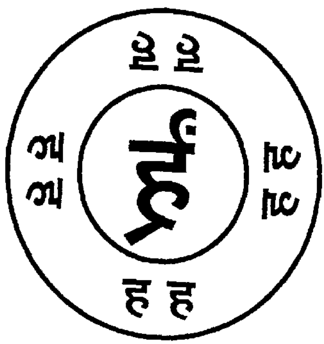
शान्ति यंत्र



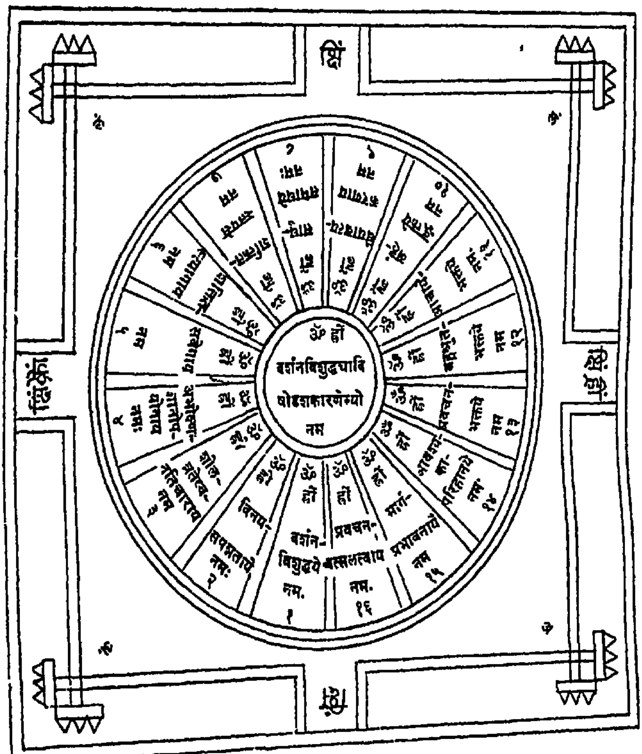
अग्नि मण्डल यंत्र



आकाश मण्डल यंत्र

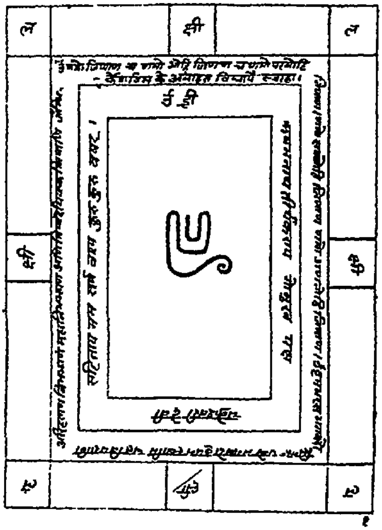


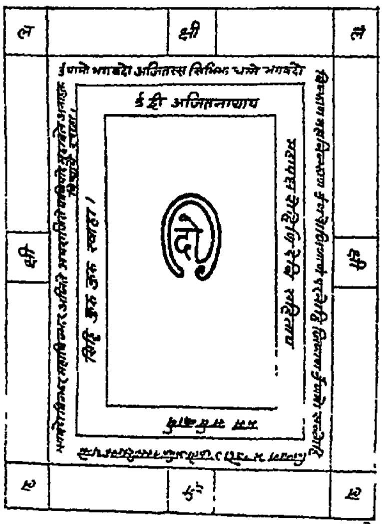
षोडशकारण धर्म चक्रोद्धार यंत्र

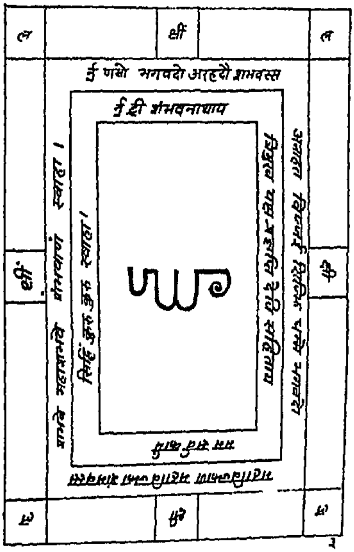


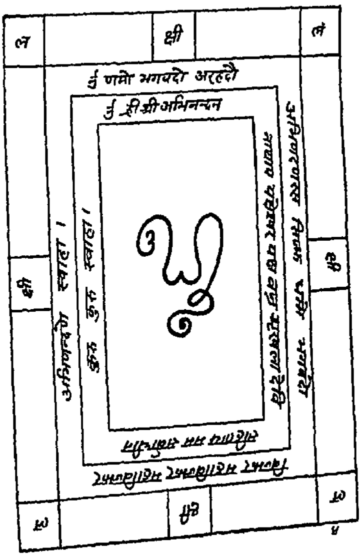
चौबीस तीर्थंकर यंत्र

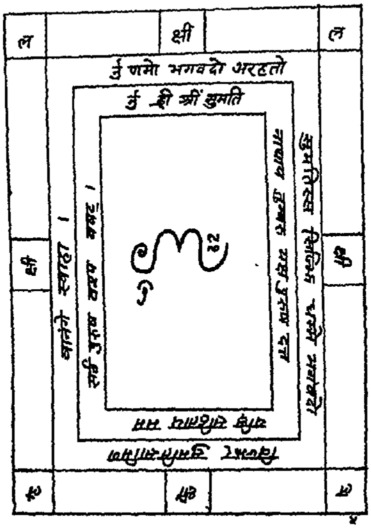
वेदी प्रतिष्ठा के समय मूलनायक तीर्थकर की प्रतिमा विराजमान करते समय उन्हीं तीर्थकर भगवान का यंत्र सीधा एवं बीचो बीच प्रतिमा के नीचे विराजमान करना चाहिए।



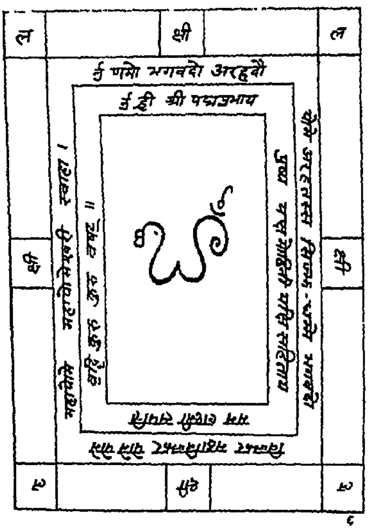



क्षीं
ॐ णमो भगवदो अरहदो शंभवस्स
ॐ ह्रीं शंभवनाथाय
शंभवे महाशंभवे शंभवाणं स्वाहा।
सिद्धिं कुरु कुरु स्वाहा।
क्षीं

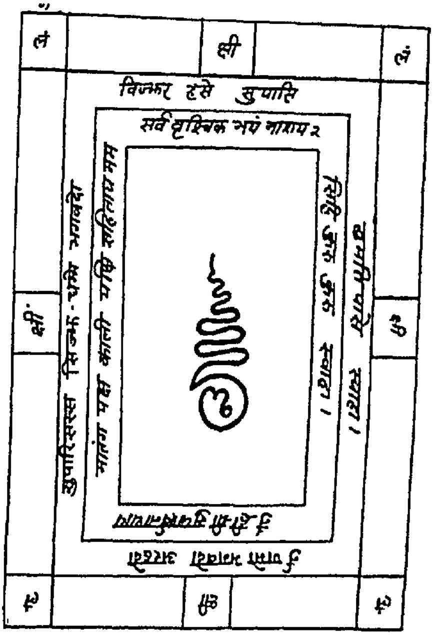

क्षीं
ॐ णमो भगवदो अरहदो
ॐ ह्रीं श्रीं अभिनन्दन
अभिणन्दणे स्वाहा।
कुरु कुरु स्वाहा।
क्षीं

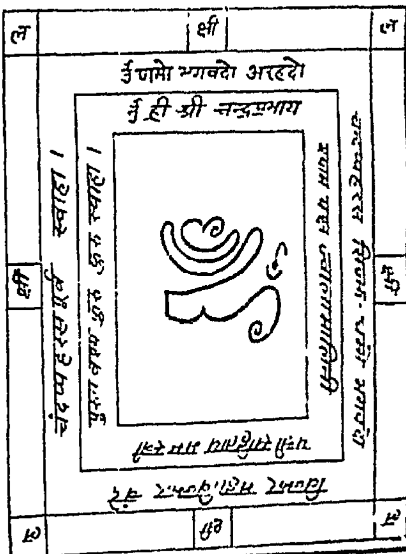


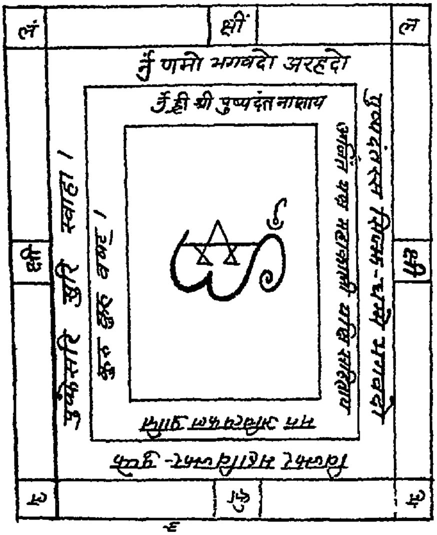
ॐ णमो भगवदो अरहतो
ॐ ह्रीं श्रीं सुमति

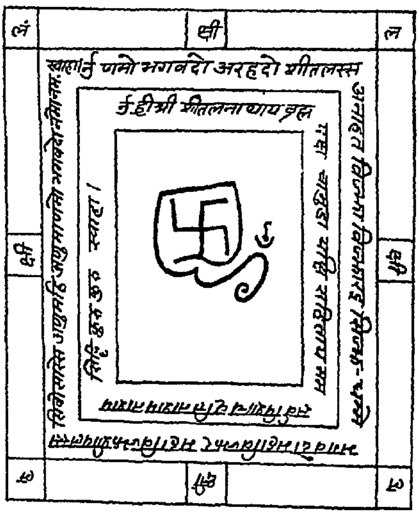


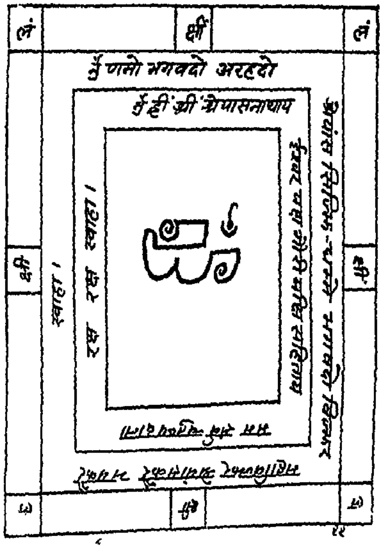
ॐ णमो भगवदो अरहदो
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभाय

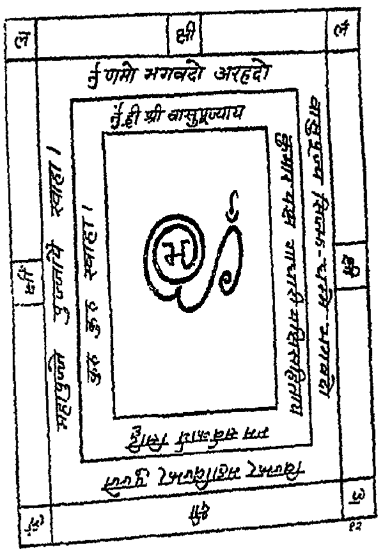

विज्झर हसे सुपासि
सर्व वृश्चिक भयं नाशय २
स्वाहा ।
स्वाहा ।

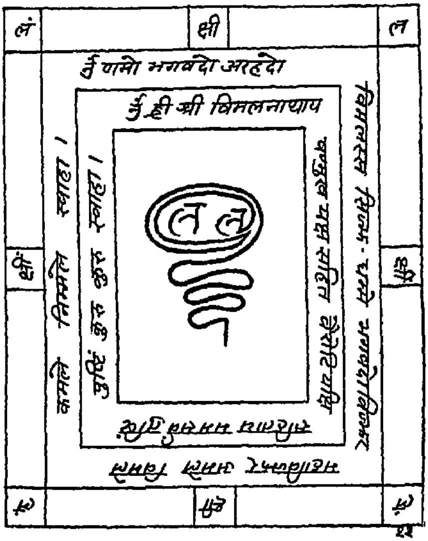

ॐ णमो भगवदो अरहदो
ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभाय
स्वाहा ।
स्वाहा ।



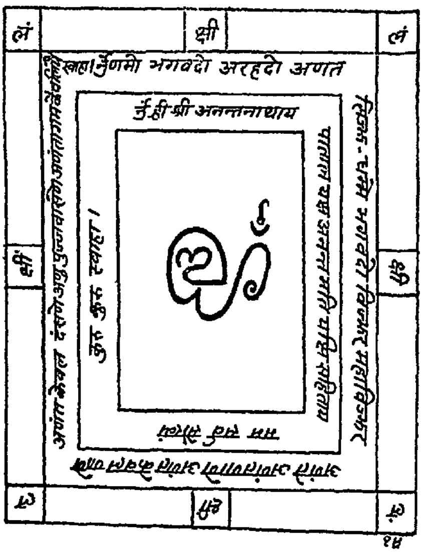



ॐ णमो भगवदो अरहदो
ॐ ह्रीं श्रीं श्रेयांसनाथाय
स्वाहा।

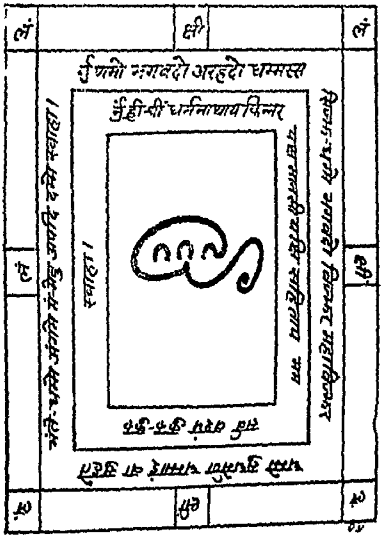

ॐ णमो भगवदो अरहदो
ॐ ह्रीं श्रीं वासुपूज्याय
महापुज्जे पुज्जणिये स्वाहा।
कुरु कुरु स्वाहा।

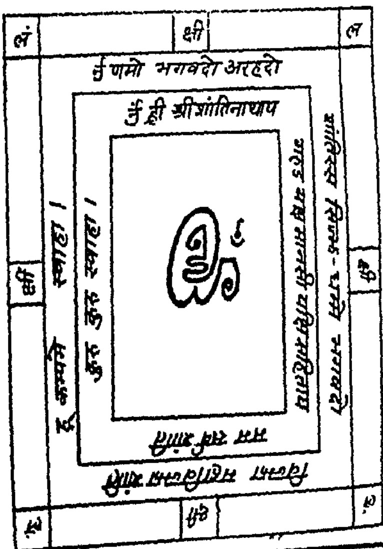


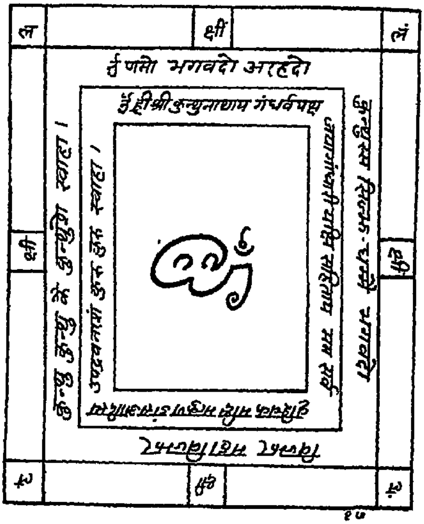
१३

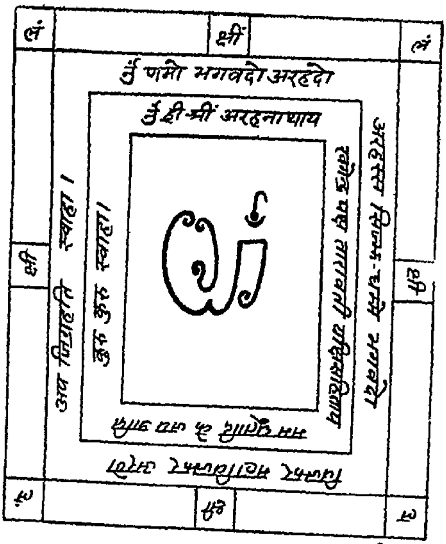


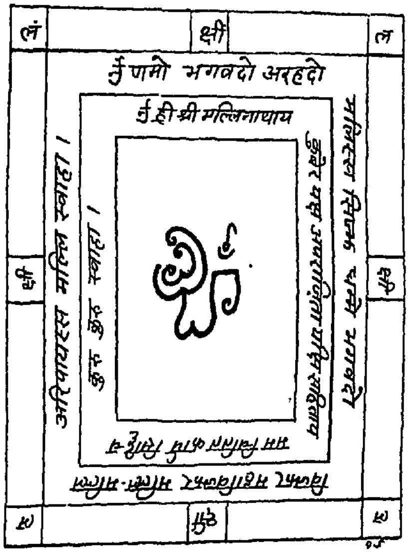
१४

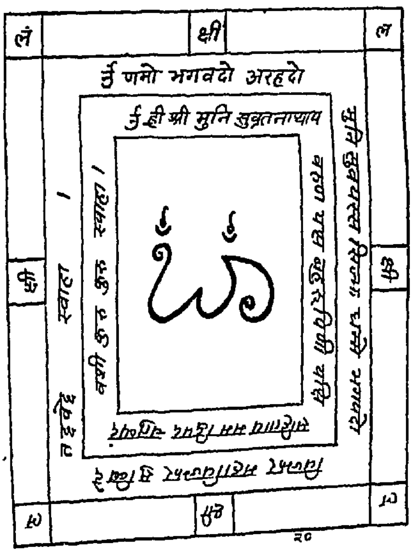

ॐ णमो भगवदो अरहदो धम्मस्स
ॐ ह्रीं श्रीं धर्मनाथाय जिनाय

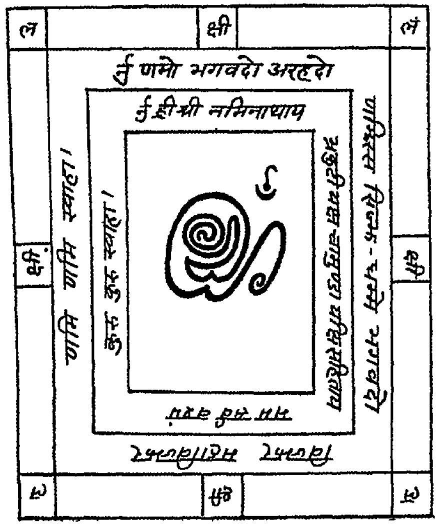

ॐ णमो भगवदो अरहदो
ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथाय

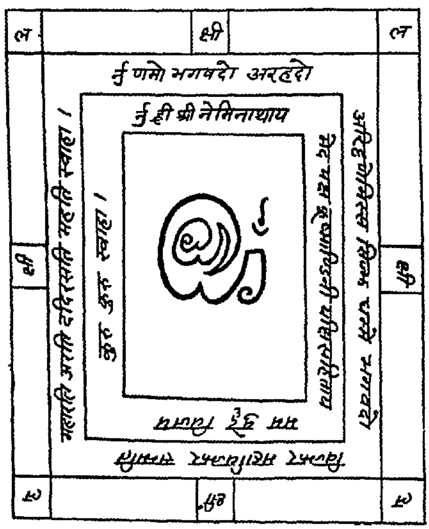

लं
क्षीं
ॐ णमो भगवदो अरहदो
ॐ ह्रीं श्रीं कुन्थुनाथाय गंधर्वयक्ष
जयाजंयाजीयाविक सहिताय मम सर्व
कुन्थुस्स सिज्झ-धम्मे भगवदो
उपद्रवनाशं कुरु कुरु स्वाहा।
कुन्थु कुन्थु मे कुन्थुणे स्वाहा।

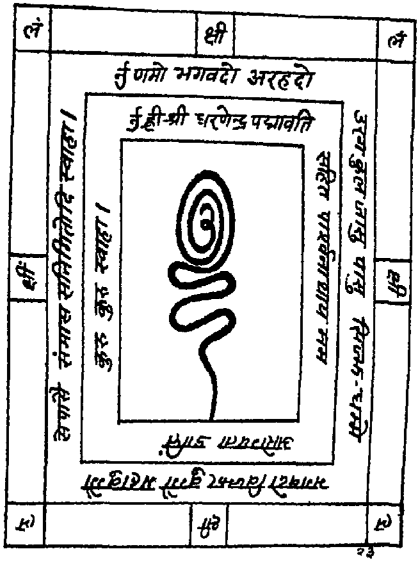

लं
क्षीं
ॐ णमो भगवदो अरहदो
ॐ ह्रीं श्रीं अरहनाथाय
खेन्द्र यक्ष तारावती चक्रिसहिताय
अरहस्स सिज्झ-धम्मे भगवदो
कुरु कुरु स्वाहा।
स्वाहा।

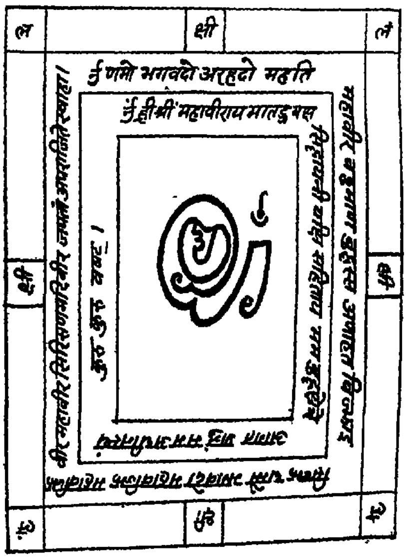

ॐ णमो भगवदो अरहदो
ॐ ह्रीं श्रीं मल्लिनाथाय
अरिपायरस मल्लि स्वाहा ।
कुरु कुरु स्वाहा ।
क्षीं


ॐ णमो भगवदो अरहदो
ॐ ह्रीं श्रीं मुनि सुव्रतनाथाय
स्वाहा ।
वश्यं कुरु कुरु स्वाहा ।
क्षीं


ॐ णमो भगवदो अरहदो
ॐ ह्रीं श्रीं नमिनाथाय
ॐ


ॐ णमो भगवदो अरहदो
ॐ ह्रीं श्रीं नेमिनाथाय
ॐ


ॐ णमो भगवदो अरहदो
ॐ ह्रीं श्रीं धरणेन्द्र पद्मावति
ॐ


ॐ णमो भगवदो अरहदो महति
ॐ ह्रीं श्रीं महावीराय मातङ्ग यक्ष
कुरु कुरु वषट्।
ॐ

भगवान आदिनाथ के पुत्रों के नाम

भगवान आदिनाथ की दो रानियां थीं। नन्दा एवं सुनन्दा - जिनसे आदिनाथ के १०० पुत्र एवं दो पुत्रियाँ हुई। इन सबमें भरत सबसे बड़े थे जिनके नाम से ही भारत का नाम पड़ा।

भगवान ऋषभदेव (आदिनाथ) ने अपने सभी पुत्रों को अलग अलग शिक्षा प्रदान की जिससे कि कर्मभूमि में आने वाली सभी समस्याओं का समाधान वह कर सकें।

'जैन धर्म का प्राचीन इतिहास' ग्रंथ के अनुसार अभिधान राजेन्द्र कोष के पृष्ठ ११२९ पर उनके १०० पुत्रों एवं २ पुत्रियों की सूची दी गई है जिसे आगे दर्शाया गया है।

आचार्य श्री जिनसेन स्वामी ने आदि पुराण १६/२८ में भगवान आदिनाथ के १०१ पुत्रों का उल्लेख किया है परन्तु सूची नहीं दी गई है।

'श्री मद् भागवत' ५/४/९/९३ के अनुसार भगवान आदिनाथ के १०० पुत्रों का ही वर्णन है परन्तु उनके नामों में अन्तर है।

भगवान आदिनाथ के पुत्रों के नाम

१.	भरत	१६.	ध्रुव	३१.	गम्भीर
२.	बाहुबलि	१७.	वच्छ	३२.	वसुचर्मा
३.	शंख	१८.	नन्द	३३.	सुवर्मा
४.	विश्वकर्मा	१९.	सुनन्द	३४.	राष्ट्र
५.	विमल	२०.	सुर	३५.	सुराष्ट
६.	सुभक्षण	२१.	कुरु	३६.	बुद्धिकर
७.	अमल	२२.	अंग	३७.	विविधकर
८.	चित्रांग	२३.	वंग	३८.	सुयशा
९.	ख्याति कीर्ति	२४.	कौशल	३९.	यशस्कीर्ति
१०.	वरदत्त	२५.	वीर	४०.	यशस्कर
११.	सागर	२६.	कलिग	४१.	कीर्तिकर
१२.	यशोधर	२७.	मागध	४२.	सूरण
१३.	अमर	२८.	विदेह	४३.	ब्रह्मसेन
१४.	स्थवर	२९.	संगम	४४.	विक्रान्त
१५.	कामदेव	३०.	दशार्ण	४५.	नरोत्तम

४६. पुरुषोत्तम
४७. चन्द्रसेन
४८. महासेन
४९. नभसेन
५०. भानु
५१. सुक्रान्त
५२ पुष्पयुत
५३. श्रीधर
५४. दुर्धष
५५. सुसुमार
५६. दुर्जय
५७. अजेयमान
५८. सुधर्मा
५९. धर्मसेन
६०. आनन्दन
६१. आनन्द
६२. नन्दन
६३. अपराजित
६४. विश्वसेन
६५. हरिषेण
६६. जय
६७. विजय
६८. विजयन्त
६९. प्रभाकर
७०. अरिदमन
७१. मान
७२. महाबाहू
७३. दीर्घबाहू
७४. मेघ
७५. सुघोष
७६. विश्व
७७. वराह
७८. सुसेन
७९. सेनापति
८०. कपिल
८१. शैलविचारी
८२. अरिजय
८३. कुंजर बल
८४. जयदेव
८५. नाग दत्त
८६. काश्यप
८७. बल
८८. धीर
८९. शुभमति
९०. सुमति
९१. पद्मनाभ
९२. सिंह
९३. सुजाति
९४. संजय
९५. सुनाम
९६. नरदेव
९७. चित्रहर
९८. सुरवर
९९. द्रढ रथ
१००. प्रभंजन

कन्या

१. ब्राह्मी
२. सुन्दरी

तीस चौबीसी के तीर्थंकरों की नामावलि

तीर्थंकर धर्म तीर्थ के प्रवर्तक होते हैं। वे धर्म तीर्थ की पुनः स्थापना करते हैं। तीर्थंकर अवसर्पिणी के चतुर्थ काल में और उत्सर्पिणी के तृतीय काल में जन्म लेते हैं। इस अवसर्पिणी या उत्सर्पिणी काल में तीर्थंकरों की संख्या २४ ही होती है। जैनधर्म में संसार की उत्पत्ति, विनाश और संरक्षण करने वाली कोई ऐसी अव्यक्त/अदृश्य शक्ति नही मानी जाती जो संसार का संचालन करती हो और ना ही किसी शक्ति का अवतार होता है। संसार में जो जीव, पुद्‌गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल षट् द्रव्य है उनके स्वभाव और कार्य कारण भाव से संसार का उत्पाद, व्यय, और ध्रौव्य माना है। आधुनिक विज्ञान भी इस कार्य कारण को स्वीकार करता है।

तीर्थंकर मनुष्य ही होते है किन्तु वे सामान्य मनुष्यों से भिन्न व असाधारण होते हैं उनमें यह विशिष्टता तीर्थंकर नाम कर्म के कारण होती है। तीर्थंकर नाम का कर्म होता है जिसका बंध तीर्थंकर, केवली और श्रुतकेवली के पाद मूल में अपायविचय, धर्मध्यान की भूमिका में दर्शन विशुद्धि आदि सोलह कारण भावनाओं का चिंतवन करने वाले मनुष्य को होता है, उनकी निरन्तर यही भावना रहती है कि मैं किस प्रकार संसार के दुखी प्राणियों का दुख दूर करुं। ऐसी उच्च भावना करने वाले महान पुण्यशाली जीव को तीर्थंकर नामकर्म प्रकृति का पुण्य बंध होता है। इसे आगम में भी कहा है कि '**पुण्यफला अरहंता**'[1]। अर्थात अरिहंत पद महान पुण्य फलवाली प्रकृति का बंध करने वाले जीव को ही प्राप्त होता है। जो तीर्थंकर के रूप में जन्म लेकर आत्मकल्याण करते हैं।

तीर्थंकर प्रकृति का बंध कराने वाली सोलहकारण भावनाऍं निम्न हैं।[2]

१.दर्शन विशुद्धि २. विनय सम्पन्नता ३. शीलवृतेष्वनतिचार ४. अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग ५. संवेग ६. शक्तितस्त्याग ७. शक्तितस्तप ८. साधु समाधि ९.वैयावृत्यकरण १०. अर्हद्‌भक्ति ११. आचार्य भक्ति १२ बहुश्रुत भक्ति १३. प्रवचन १४. आवश्यकापरिहाणि १५ सन्मार्ग प्रभावना १६. प्रवचन वत्सल।

इनका महत्व आगम में निम्न प्रकार बतलाया गया है :-

'एदेहिं सोलसेहिं कारणेहिं जीवो तित्थयर णामा गोदं कम्मं बंधदि'[3]

इन सोलह कारण भावनाओं से जीव को तीर्थंकर प्रकृति नाम का उच्चगोत्र बंधता है। इन सोलह भावनाओं में दर्शन विशुद्धि भावना मुख्य है।

---

(१) आ. कु. कु. स्वा. प्र. सा. पृ० १०४ गा. ४५ (२) आ. पू. पा. स्वा. स. सि. अ. ६. (३) आ. भू. व. म. वं

दृग्विशुध्यादयोनाम्नस्तीर्थकृत्वस्य हेतवः ।
समस्ता व्यस्तरूपा वा दृग्विशुद्धया समन्विताः ॥ [१]

दर्शन विशुद्धि आदि सोलह कारण तीर्थकर नामकर्म में कारण हैं चाहें वह सभी हो या पृथक्- पृथक् हों किन्तु दर्शनविशुद्धि का होना आवश्यक है। ऐसा आगम का नियम है।

पंचकल्याणक व्यवस्था

लोकोत्तम तीर्थकर पुण्य प्रकृति के बंध करने वाले पुण्यशाली जीवों के प्रायः गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान और निर्वाण यह पाँचों ही कल्याणक होते हैं। अर्थात् पाँचों मेरु सम्बंधि पाँचों भरत क्षेत्र, पाँच ऐरावत क्षेत्र, पूर्व पश्चिम में स्थित एक सौ साठ विदेह क्षेत्र इनमें जन्म लेने वाले तीर्थकरों के पाँच ही कल्याणक होते हैं। परन्तु विदेह क्षेत्र में कल्याणकों की निम्न व्यवस्थाऐं भी हैं :-

१. जिन जीवों ने पूर्वभव में सोलहकारण भावनाओ के आधार से तीर्थकर पुण्य प्रकृति का बंध किया हो उनके पाँच ही कल्याणक होते हैं।

२. तद्भव मोक्षगामी किसी जीव ने वर्तमान गृहस्थ अवस्था में तीर्थकर प्रकृति का बंध किया हो तो उस जीव के तप, ज्ञान और निर्वाण तीन ही कल्याणक होगें।

३. तद्भव मोक्षगामी जीवो में किसी जीव ने जैनेन्द्री दीक्षाधारण करके सोलहकारण भावनाओं का चिंतवन करके तीर्थकर पुण्य प्रकृति का बंध किया हो तो उनके ज्ञान और निर्वाण दो ही कल्याणक होगें।

विदेह क्षेत्र में सदैव चौथा काल ही होता है वहां तीर्थकर, केवली और श्रुत केवली का सद्भाव निरन्तर रहता है वहां उत्कृष्टतया एक साथ 'एक सौ साठ' तीर्थकरो की संभावना रहती है। इसलिए विदेह क्षेत्र में दो कल्याणक से पाँच कल्याणक तक के तीर्थकर भगवान होते है तथा बीस तीर्थकर सदैव विद्यमान रहते हैं। लेकिन पाँच भरत क्षेत्र और पाँच ऐरावत क्षेत्र ही ऐसे हैं जहां पाँच कल्याणक वाले पुण्य पुरुष तीर्थंकर होते हैं।

वर्तमान काल के चौबीस तीर्थकरों ने स्वर्ग और अनुत्तरों से आकर मध्यलोक मे जन्म लिया है। आगामी काल में होने वाले तीर्थकरों में पहले, सोलहवें एवं चौबीसवें यह तीन तीर्थकर नरक से तथा शेष स्वर्ग से आकर जन्म लेंगे। इस प्रकार स्वर्ग एवं नरक से निकलकर तीर्थकर बनने की योग्यता तो है किन्तु तिर्यच और मनुष्यगति से तीर्थकर नहीं होते ऐसा आगम में कथन पाया जाता है।

(१) आ. वि. न त. १. वा पृ. ४५६ श्लोक ७७

जम्बूद्वीप, धातकी खण्डद्वीप एवं पुष्करार्द्ध द्वीप के पाँचों मेरु संबधी भरत क्षेत्र एवं ऐरावत क्षेत्र में भूतकाल, वर्तमानकाल एवं भविष्यकाल में होने वाले कुल तीस चौबीसी के सात सौ बीस तीर्थंकर होते हैं जिनकी सूची निम्नानुसार है :-

सुदर्शन मेरु के भरत क्षेत्र संबंधी नामावली

	भूतकाल	वर्तमान काल	भविष्य काल
१.	श्री निर्वाण	श्री ऋषभनाथ	श्री महापद्म
२.	श्री सागर	श्री अजित नाथ	श्री सूरसेन
३.	श्री महासाधु	श्री संभवनाथ	श्री सुप्रभ
४.	श्री विमलप्रभ	श्री अभिनंदन नाथ	श्री सुवमं प्रभ
५.	श्री श्रीधर	श्री सुमति नाथ	श्री सर्वायुध
६.	श्री सुदत्तदेव	श्री पद्मप्रभ	श्री जगदेव
७.	श्री अमलप्रभ	श्री सुपाश्र्वनाथ	श्री प्रभादेव
८.	श्री शुद्धप्रभ	श्री चन्द्रप्रभ	श्री उदयदेव
९.	श्री उद्धारक	श्री पुष्पदन्त	श्री उदंक
१०.	श्री अग्निदेव	श्री शीतलनाथ	श्री प्रश्नकीर्ति
११.	श्री संजम	श्री श्रेयांसनाथ	श्री जयकीर्ति
१२.	श्री शिव	श्री वासुपूज्य	श्री पूर्णबुद्धि
१३.	श्री ज्ञान	श्री विमलनाथ	श्री निष्कषाय
१४.	श्री पुष्पांजलि	श्री अनंत नाथ	श्री विमलप्रभ
१५.	श्री उत्साह	श्री धर्मनाथ	श्री बहुलप्रभ
१६.	श्री परमेश्वर	श्री शांतिनाथ	श्री निर्मल
१७.	श्री जितशत्रु	श्री कुंथुनाथ	श्री चित्रगुप्त
१८.	श्री विमल	श्री अरनाथ	श्री समाधिगुप्त
१९.	श्री यशोधर	श्री मल्लिनाथ	श्री स्वयंप्रभ
२०.	श्री ज्ञानामृत	श्री मुनि सुव्रतनाथ	श्री कंदर्प
२१.	श्री विशुद्ध	श्री नमिनाथ	श्री जयदेव
२२.	श्री संतदेव	श्री नेमिनाथ	श्री विमलेश्वर
२३.	श्री तीर्थभद्र	श्री पाश्र्वनाथ	श्री दिव्यवाद
२४.	श्री कृष्ण	श्री वर्धमान	श्री अनंतवीर्य

सुदर्शन मेरु के ऐरावत क्षेत्र संबंधी नामावली

	भूतकाल	वर्तमानकाल	भविष्यकाल
१.	श्री पंचरूप	श्री बालचंद	श्री सिद्धारथ
२.	श्री जिनधर	श्री मुनिसुव्रत	श्री विमल
३.	श्री सांप्रति	श्री अग्निसेन	श्री जयघोष
४.	श्री उर्ज्यंत	श्री नंदिसेन	श्री स्वरमंगल
५.	श्री अधिक्षायक	श्री दत्त	श्री नंदिघोष
६.	श्री अभिनंदन	श्री व्रतधर	श्री वज्रधर
७.	श्री रत्नेस	श्री सोमचंद	श्री निर्वाण
८.	श्री रामेश्वर	श्री घृतदीर्घ	श्री धर्मध्वज
९.	श्री अंगेझित	श्री सत् पुष्प	श्री सिद्धसेन
१०.	श्री विन्यास	श्री शिवमत	श्री महासेन
११.	श्री अरोष	श्री श्रेयांसनाथ	श्री रविमिय
१२.	श्री सुविधानक	श्री श्रुतोदक	श्री सत्यसेन
१३.	श्री वप्रदत्त	श्री सिहसेन	श्री चंद्रदेव
१४.	श्री कुमार	श्री उपशांत	श्री महाचंद
१५.	श्री श्रीशैल	श्री गुप्तासन	श्री श्रुतांजन
१६.	श्री प्रभंजन	श्री अनंतवीर्य	श्री देवसेन
१७.	श्री सौभाग्य	श्री पाश्र्वजीन	श्री सुव्रत
१८.	श्री दिवाकर	श्री देवजिन	श्री जिनेंद्र देव
१९.	श्री सुवृत बिंदु	श्री मरुदेव	श्री पाश्र्व देव
२०.	श्री सिद्धिकर	श्री श्रीधर	श्री सुकौशल
२१.	श्री ज्ञानधन	श्री श्यामकंठ	श्री अनत
२२.	श्री कल्पद्रुम	श्री अग्नि प्रभ	श्री विमल
२३.	श्री तीर्थफल	श्री अग्नि दत्त	श्री अमृत सेन
२४.	श्री वीरमप्रभ	श्री वीरसेन	श्री अग्निदत्त

विजय मेरु के भरत क्षेत्र संबंधी नामावली

	भूतकाल	वर्तमान काल	भविष्य काल
१.	श्री रत्नप्रभ	श्री युगादिजिन	श्री सिद्धनाथ
२.	श्री अमितनाथ	श्री सिद्धांत	श्री सम्यकजिन
३.	श्री सभव नाथ	श्री महासेन	श्री जिनेन्द्र जिन
४.	श्री अकलंक	श्री परमार्थ	श्री सुपननाथ
५.	श्री सुचद्र	श्री समुद्धरन	श्री सर्वस्वामी
६.	श्री सुभंकर	श्री भूधर	श्री मुनिनाथ
७.	श्री तत्वज्ञायक	श्री उद्योतजिन	श्री वशिष्ठजिन
८.	श्री सुंदरजिन	श्री अर्जवजिन	श्री अमरनाथ
९.	श्री पुरंदर	श्री अभव्यजिन	श्री बाह्यशांत
१०	श्री स्वामीप्रभा	श्री प्रकपजिन	श्री पर्वनाथ
११.	श्री वासवदत्त	श्री पद्माभिजिन	श्री अकामजिन
१२.	श्री श्रेयांस	श्री पद्मनंदि	श्री ध्यानजिन
१३.	श्री विश्वरूप	श्री प्रियंकर	श्री कल्पनाथ
१४.	श्री तपतेज	श्री सुकृत्त	श्री संवरजिन
१५.	श्री सिद्धारथ	श्री भद्रेश्वर	श्री स्वस्थजिन
१६.	श्री प्रतिबोध	श्री मुनिचंद	श्री आनंदजिन
१७.	श्री संजम	श्री पंचमुष्टि	श्री रविप्रभ
१८.	श्री देवेंद्र	श्री त्रिमुष्ठि	श्री चंद्रप्रभ
१९.	श्री अमलप्रभ	श्री गांगक	श्री नंदजिन
२०.	श्री विश्वसेन	श्री गणनाथ	श्री सुकर्मजिन
२१.	श्री मेघनयन	श्री सर्वांगदेव	श्री सुर्कण्जिन
२२.	श्री त्रिनेत्र	श्री इंद्रदत्त	श्री अमनजिन
२३	श्री प्रवर	श्री ब्रह्म नाथ	श्री शाश्वतजिन
२४.	श्रीप्रभ	श्री गणपतिनाथ	श्री पार्श्वनाथ

विजय मेरु के ऐरावत क्षेत्र संबंधी नामावली

	भूतकाल	वर्तमान काल	भविष्य काल
१.	श्री ब्रजकांति	श्री अपश्चिम	श्री वीरजिन
२.	श्री उदय दत्त	श्री पुष्पदंत	श्री विजय जिन
३.	श्री सूरस्वामी	श्री अरहंत जिन	श्री सत्यजिन
४.	श्री पुरुषोत्तम	श्री सुचारित्र	श्री महामृगेन्द्र
५.	श्री सर्णस्वामी	श्री सिद्धनंदि	श्री चिंतामणि
६.	श्री अवबोधन	श्री नंदनाम	श्री अशोक जिन
७.	श्री विक्रमजिन	श्री पद्मकूट	श्री द्वीमृगेन्द्र
८.	श्री निर्घटक जिन	श्री उदयनंदि	श्री उपासक
९.	श्री हरिंद्रनाथ	श्री रुक्मदेव	श्री पद्मचंद
१०.	श्री प्रतींद्र जिन	श्री कृपाल जिन	श्री सुबोधक
११.	श्री निवार्ण जिन	श्री प्रोष्टिल जिन	श्री चिताहिम
१२.	श्री चतुर्मुख	श्री सिद्धेश्वर	श्री उत्साहक
१३.	श्री धर्महेत	श्री अमृत देव	श्री अपासिक
१४.	श्री शुक्रतेन्द्र	श्री स्वामि जिन	श्री अनारक
१५.	श्री श्रुतद्बुज	श्री भोनिलिंग	श्री अनघजिन
१६.	श्री विमलनाथ	श्री सर्वार्थसिद्ध	श्री नागेन्द्र जिन
१७.	श्री धरणेन्द्र	श्री मेघनंदि	श्री नीलोत्पल
१८.	श्री तीर्थनाथ	श्री केशवनंदि	श्री अप्रकंप
१९.	श्री देवप्रभ	श्री हरिहर	श्री पुरोहित
२०.	श्री सर्वार्थसिद्ध	श्री शांतिनाथ	श्री भिंदक
२१.	श्री धर्मिकाय	श्री आनंद जिन	श्री पार्श्व देव
२२.	श्री क्षेत्र स्वामी	श्री अधिष्ठित जिन	श्री निर्वाचक
२३.	श्री हरचन्द्र	श्री कुंडपाश्र्व	श्री विरोचिस
२४.	श्री देवप्रभ	श्री विमोचन जिन	श्री जिनवर जिन

अचल मेरु के भरत क्षेत्र संबंधी नामावली

	भूतकाल	वर्तमान काल	भविष्य काल
१.	श्री वृषभजिन	श्री विश्वचन्द्र	श्री रक्तकेश
२.	श्री प्रियमित्र	श्री कपिल	श्री चक्रहस्त
३.	श्री शांतिजिन	श्री वृषभ	श्री परमेश्वर
४.	श्री सुमतिजिन	श्री प्रीयतेज	श्री श्रीकृत्तनाथ
५.	श्री आदिनाथ	श्री प्रसमजिन	श्री सौमूर्तिक
६.	श्री अतिव्यक्त	श्री वृषभांग	श्री सौहूर्तिक
७.	श्री कालसेन	श्री चारित्रनाथ	श्री श्रीनिकेश
८.	श्री कर्मजिन	श्री प्रभादित्य	श्री स्वेतांगद
९.	श्री प्रबुद्धजिन	श्री मुंजकेष	श्री अरुज जिन
१०.	श्री वप्रजिन	श्री वीतवास	श्री देवनाथ
११.	श्री सौधर्म	श्री सुराधिप	श्री दयाधिक
१२.	श्री तमोद्वीप	श्री दयानाथ	श्री पुष्पनाथ
१३.	श्री बज्रस्वामी	श्री सहस्त्रभुज	श्री प्रशांत जिन
१४.	श्री प्रबुद्धि जिन	श्री जिनसिंह	श्री निराहार
१५.	श्री प्रबुन्ध जिन	श्री ऐरावत	श्री अमूर्तिजिन
१६.	श्री अतीत जिन	श्री बाहुजिन	श्री द्विजनाथ
१७.	श्री सुमुख जिन	श्री श्रीमाली	श्री नरनाथ
१८.	श्री पल्योपम	श्री अजोग जिन	श्री श्रीप्रतिच्युत
१९.	श्री अकाम जिन	श्री कामशत्रु	श्री नागेन्द्र
२०.	श्री निरतजिन	श्री आरम्भक	श्री तपोधिक
२१.	श्री मृगनाभ	श्री नेमिनाथ	श्री दशानिका
२२.	श्री पदस्तजिन	श्री गर्भज्ञान	श्री आरण्यक
२३.	श्री देव देवेन्द्र	श्री एकाकार जिन	श्री ज्ञानगर्भ
२४.	श्री शिवनाथ	श्री सुकेश	श्री सात्वक जिन

अचल मेरु के ऐरावत क्षेत्र संबंधी नामावली

	भूतकाल	वर्तमान काल	भविष्य काल
१.	श्री जिन सुरमेर	श्री साधित	श्री रविंदु
२.	श्री कृत्तकृत्तारथ	श्री स्वामीजिन	श्री सौकुमाल
३.	श्री कैत्टव	श्री स्तमितेंद्र	श्री पृथ्वीपत्त
४.	श्री प्रशस्त जिन	श्री आनंद जिन	श्री कुलरत्न
५.	श्री निर्दयांग	श्री प्रोपुत्ल्यजिन	श्री श्रीधर
६.	श्री कुलंकर	श्री मुंडिकाक	श्री सोमजिन
७.	श्री वर्धमान	श्री प्रहतजिन	श्री वरुणजिन
८.	श्री अमृतेन्द्र	श्री मदन सिह	श्री अभिनंदन
९.	श्री संख्यानंद	श्री दशद्रिद्र	श्री सर्वनाथ
१०.	श्री कल्पवृक्त	श्री चन्द्रपाश्र्व	श्री सुद्रिष्टी
११.	श्री हरिनाथ	श्री अब्जबोध	श्री सृष्टिजिन
१२.	श्री बाहुजिन	श्री बल्ल्भ	श्री सुधान्यक
१३.	श्री भार्गव	श्री विभूतिजिन	श्री सोमचन्द्र
१४.	श्री भद्रस्वामी	श्री सुवर्णजिन	श्री क्षेत्रनाथ
१५.	श्री पविपातन	श्री कुसुम	श्री सुदंतक
१६.	श्री विपोषित	श्री हरिबास	श्री जगतजिन
१७.	श्री ब्रह्मचारी	श्री प्रियमित्र	श्री तपोरिप
१८.	श्री असाक्षिक	श्री सुधर्म	श्री निर्मल
१९.	श्री चारित्रेस	श्री रत्नप्रिय	श्री कृत्तपारस
२०.	श्री पारिणामिक	श्री नंदिनाथ	श्री बोधिलाभ
२१.	श्री शास्वत	श्री अश्वानीक	श्री बाहुनद
२२.	श्री निधिनाथ	श्री पर्वनाथ	श्री दृष्टिस्वामी
२३.	श्री कौशिक	श्री पाश्र्वनाथ	श्री कुकुंभाभ्रय
२४.	श्री सुधर्मेश	श्री चित्रहिदय	श्री बंछित

मंदर मेरु के भरत क्षेत्र संबंधी नामावली

	भूतकाल	वर्तमान काल	भविष्य काल
१.	श्री मदन जिन	श्री जगन्नाथ	श्री वसंतध्वज
२.	श्री सुमूरति	श्री प्रभासनाथ	श्री जयंतजिन
३.	श्री निराग जिन	श्री सूर्यस्वामी	श्री त्रिस्थंभ
४.	श्री प्रलम्बत	श्री भरतेष	श्री परमब्रह्म
५.	श्री पृथ्वीपति	श्री दीर्घानन	श्री अबालिस जिन
६.	श्री चारित्रनिधि	श्री विख्यातकीर्ति	श्री प्रबादिक
७.	श्री अपराजित	श्री अवसानन	श्री भूमिआनंद
८.	श्री सुबोध जिन	श्री जिन प्रबोध	श्री त्रितीयनयन
९.	श्री बैताल जिन	श्री तपोद्यन	श्री विद्धंशजिन
१०	श्री बुद्धेशनाथ	श्री पावकनाथ	श्री परमात्मप्रसंग
११.	श्री त्रिमुष्टिक	श्री त्रिपुरेश्वर	श्री भूमेन्द्र
१२.	श्री मुनिबोधक	श्री सौगत जिन	श्री गोस्वामी
१३.	श्री तीर्थस्वामी	श्री वासवनाथ	श्री कल्याण प्रवास
१४.	श्री धर्माधीश	श्री मनोहर जिन	श्री सुमंगल
१५.	श्री धरणेश	श्री शुभकर्म	श्री महावासव
१६.	श्री प्रभव जिन	श्री अमलेन्द्राय	श्री उदय दत्त
१७.	श्री अनादि देव	श्री इष्टसेवित	श्री ज्योतिसेन्द्र
१८.	श्री अनादिप्रभ	श्री धर्मवास	श्री प्रबोधित
१९.	श्री सर्वतीर्थ	श्री प्रसादजिन	श्री प्रसमजिन
२०.	श्री निरुपम	श्री मृगांक	श्री अभयंक
२१.	श्री कामारिक	श्री अकलंक	श्री प्रमत्त
२२.	श्री विहारग्रह	श्री स्फाटिकप्रभ	श्री दारस्फारिक
२३.	श्री पृथ्वीनाथ	श्री गजेन्द्र	श्री व्रतस्वामी
२४.	श्री विकास जिन	श्री ध्यान जिन	श्री निधिनाथ

मंदर मेरु के ऐरावत क्षेत्र संबंधी नामावली

	भूतकाल	वर्तमान काल	भविष्य काल
१.	श्री क्रतिन जिन	श्री संकर जिन	श्री जसोधर
२.	श्री विशिष्ट जिन	श्री अक्षवास	श्री अभयघोष
३.	श्री देवादस	श्री नग्नस्वामी	श्री सुकृन्त जिन
४.	श्री उदिष्ट जिन	श्री नग्नाधिक	श्री निर्वाण
५.	श्री अस्थानिक	श्री पाखण्डनष्ट	श्री वृतवास
६.	श्री प्रभाचंद	श्री सुप्रबोध	श्री अतिराज
७.	श्री बेनुजिन	श्री तपोनिधि	श्री अजितजिन
८.	श्री त्रिभानु जिन	श्री पुष्पकेत्त	श्री बर्जन जिन
९.	श्री बज्रांग जिन	श्री धर्मका जिन	श्री शरीरक
१०.	श्री अविसेधन	श्री चंद्रकेत्तू	श्री तपस्चंद्र
११.	श्री अपाय जिन	श्री मनुरक्तजोति	श्री महेश जिन
१२.	श्री लोकोत्तर	श्री वीतराग	श्री सुग्रीव
१३.	श्री जलधि जिन	श्री उद्योतन	श्री दृणप्रहार
१४.	श्री विद्यापतन	श्री तमोपेक्ष	श्री अंबरीक
१५.	श्री सुमेरु जिन	श्री मधुनाथ	श्री दयतात
१६.	श्री भावित जिन	श्री मरु देव	श्री तुम्बराख्य
१७.	श्री वत्सल जिन	श्री दमम जिन	श्री सर्वशील
१८.	श्री जिनालय	श्री वृषभनाथ	श्री दयाकृत्त
१९.	श्री तौषारिक	श्री शिलातम	श्री जितेन्द्र
२०.	श्री भवन स्वामी	श्री विश्वनाथ	श्री तपोदिस
२१.	श्री सुकामुख	श्री महेन्द्र नाथ	श्री रत्नाकर
२२.	श्री देव देवाधिक	श्री नंदि जिन	श्री देवेश
२३.	श्री अकायका	श्री ब्रह्मदत्त	श्री लांक्षण
२४.	श्री बिबित जिन	श्री तमांतक	श्री प्रदेशाय

विद्युन्माली मेरु के भरत क्षेत्र संबंधी नामावली

	भूत काल	वर्तमान काल	भविष्य काल
१	श्री पद्मचन्द्र	श्री सर्वांगजिन	श्री प्रभावक जिन
२	श्री रत्नागद	श्री पद्माकर	श्री सुभाव जिन
३	श्री योगी जिन	श्री प्रभाकर	श्री विभाव जिन
४	श्री नग्नाधिप	श्री योगेश्वर	श्री दिनकर जिन
५	श्री नष्टपाखण्ड	श्री सूक्ष्मांग	श्री अघतेजस
६.	श्री सुप्रबोद्य	श्री बलनाथ	श्री धन दत्त
७.	श्री गुणाधिक	श्री बलातीत	श्री सुपोरव
८	श्री पारित्रक	श्री कलंवक	श्री जिन दत्त
९.	श्री ब्रह्मनाथ	श्री परिषाग	श्री सुपाश्र्वनाथ
१०	श्री मुनिन्द्र जग	श्री निषेधक	श्री सिधु जिन
११.	श्री दीप्त काय	श्री पापहार	श्री अस्तिक जिन
१२	श्री राजऋषये	श्री मुक्तिचंद्र	श्री भवानिक
१३.	श्री विसाख	श्री अप्रासिक	श्री नृपनाथ
१४.	श्री अनादित्य	श्री जयचन्द्र	श्री नारायण
१५.	श्री रविस्वामी	श्री मालाधार	श्री प्रसमौकस
१६.	श्री सोम दत्त	श्री संजत जिन	श्री भूपतये
१७	श्री जय स्वामी	श्री मलयसिंधु	श्री सुदृष्टि जिन
१८.	श्री मोक्ष नाथ	श्री अक्षधराख्य	श्री भवभीरक
१९.	श्री अग्रभान	श्री देवधर	श्री सुनंदन
२०.	श्री धनुषांग	श्री देवगन	श्री गर्मारि जिन
२१.	श्री रोमांचित	श्री आगामिक	श्री सुवासव जिन
२२.	श्री मुक्तिनाथ	श्री विनीत जिन	श्री परवासक
२३.	श्री जिनेश जिन	श्री वीतराग	श्री वनवास
२४.	श्री प्रसिद्धनाथ	श्री रतानंद	श्री भारतेश

विद्युन्माली मेरु के ऐरावत क्षेत्र संबंधी नामावली

	भूतकाल	वर्तमान काल	भविष्य काल
१.	श्री उपशांत	श्री सुगांगेय जिन	श्री अदोषिक
२.	श्री फाल्गुन जिन	श्री नलवास	श्री वृषभ जिन
३.	श्री पूर्वास जिन	श्री भीम जिन	श्री विनया नंद
४.	श्री सौरिक जिन	श्री दयाधिक	श्री मुनिभारत
५.	श्री त्रिविक्रम	श्री सुभद्रजिन	श्री इंद्रक जिन
६.	श्री गौरिक जिन	श्री स्वामिजिन	श्री चन्द्रकेतु
७.	श्री नरसिंह	श्री हनक जिन	श्री ध्वजादित्य
८.	श्री मृगवास	श्री नंदिघोष	श्री बसुबोध
९.	श्री सोमेश्वर	श्री रुपवीर्य	श्री मुक्तिगज
१०.	श्री सुधाकर	श्री बज्र जिन	श्री धर्मबोध
११.	श्री अपाप जिन	श्री सन्तोष जिन	श्री देवांग
१२.	श्री बिबाध जिन	श्री सुधर्म जिन	श्री मारीच जिन
१३.	श्री संधिक जिन	श्री फणीष	श्री जीवन जिन
१४.	श्री माधात	श्री वीरचन्द्र	श्री जशोधर जिन
१५.	श्री अश्वतेज	श्री स्वच्छ रुक्ष	श्री गौतम जिन
१६.	श्री विद्याधर	श्री मेघानीक	श्री मुनिशुद्ध
१७.	श्री सुलोचन	श्री कोपक्षय	श्री प्रबोधक
१८.	श्री मौन देव	श्री अकाम जिन	श्री सदानिक
१९.	श्री पुंडरीक	श्री सन्तोषित	श्री चारित्रनाथ
२०.	श्री इन्द्रमणि	श्री सत्वसेन	श्री शतानंद
२१.	श्री चित्रगण	श्री दयानाथ	श्री वेदार्थक
२२.	श्री सर्वकाल	श्री क्षमांग	श्री सुधानीक
२३.	श्री भूरीश्वर	श्री कीर्तिनाथ	श्री जोतिमूर्त्य
२४.	श्री पुण्यांग	श्री शुभदेव	श्री निकलंक

बारह मास की तिथियों में तीर्थंकरों के कल्याणक

मास	तिथि	तीर्थंकर	कल्याणक
कार्तिक कृष्णा	१	अनंतनाथ	गर्भ कल्याणक
	४	संभवनाथ	ज्ञान कल्याणक
	१३	पद्मप्रभ	जन्म, तप कल्याणक
	३०	महावीर	निर्वाण कल्याणक
कार्तिक शुक्ला	२	पुष्पदंत	ज्ञानकल्याणक
	६	नेमिनाथ	गर्भ कल्याणक
	१२	अरनाथ	ज्ञानकल्याणक
	१५	संभवनाथ	जन्म कल्याणक
मार्गशीर्ष कृष्णा	१०	महावीर	तप कल्याणक
मार्गशीर्ष शुक्ला	१	पुष्पदंत	जन्म, तप कल्याणक
	१०	अरनाथ	तप कल्याणक
	११	मल्लिनाथ	जन्म, तप कल्याणक
		नमिनाथ	ज्ञान कल्याणक
	१४	अरनाथ	जन्म कल्याणक
	१५	संभवनाथ	तप कल्याणक
पौष कृष्णा	२	मल्लिनाथ	ज्ञान कल्याणक
	११	चन्द्रप्रभ	जन्म, तप कल्याणक
	१४	शीतलनाथ	ज्ञान कल्याणक
		पार्श्वनाथ	जन्म, तप कल्याणक
पौष शुक्ला	१०	शांतिनाथ	ज्ञान कल्याणक
	११	अजितनाथ	ज्ञान कल्याणक
	१४	अभिनन्दननाथ	ज्ञान कल्याणक
	१५	धर्मनाथ	ज्ञान कल्याणक

मास	तिथि	तीर्थंकर	कल्याणक
माघ कृष्णा	६	पद्मप्रभ	गर्भकल्याणक
	१२	शीतलनाथ	जन्म, तप कल्याणक
	१४	आदिनाथ	निर्वाण कल्याणक
	३०	श्रेयांसनाथ	ज्ञान कल्याणक
माघ शुक्ला	२	वासुपूज्य	ज्ञान कल्याणक
	४	विमलनाथ	जन्म, तप कल्याणक
	६	विमलनाथ	ज्ञान कल्याणक
	९	अजितनाथ	तप कल्याणक
	१०	अजितनाथ	जन्म कल्याणक
		अभिनंदननाथ	तप कल्याणक
	१२	अभिनंदननाथ	जन्म कल्याणक
	१३	धर्मनाथ	जन्म, तप कल्याणक
फाल्गुन कृष्णा	४	पद्मप्रभ	निर्वाण कल्याणक
	६	सुपार्श्वनाथ	ज्ञान कल्याणक
	७	सुपार्श्वनाथ	निर्वाण कल्याणक
		चन्द्रप्रभ	ज्ञान, निर्वाण कल्याणक
	९	पुष्पदन्त	गर्भ कल्याणक
	११	श्रेयांसनाथ	जन्म, तप कल्याणक
		आदिनाथ	ज्ञान कल्याणक
	१२	मुनिसुव्रत	निर्वाण कल्याणक
	१४	वासुपूज्य	जन्म, तप कल्याणक
फाल्गुन शुक्ला	३	अरनाथ	गर्भ कल्याणक
	५	मल्लिनाथ	निर्वाणकल्याणक
	८	संभवनाथ	गर्भ कल्याणक

मास	तिथि	तीर्थंकर	कल्याणक
चैत्र कृष्णा	४	पार्श्वनाथ	ज्ञान कल्याणक
		अनंतनाथ	निर्वाण कल्याणक
	५	चन्द्रप्रभ	गर्भ कल्याणक
	८	शीतलनाथ	गर्भ कल्याणक
	९	आदिनाथ	जन्म, तप कल्याणक
	३०	अनंतनाथ	ज्ञान कल्याणक
		अरनाथ	निर्वाण कल्याणक
चैत्र शुक्ला	१	मल्लिनाथ	गर्भ कल्याणक
	३	कुंथुनाथ	ज्ञान कल्याणक
	५	अजितनाथ	निर्वाण कल्याणक
	६	संभवनाथ	निर्वाण कल्याणंक
	११	सुमतिनाथ	जन्म, ज्ञान, निर्वाण
	१३	महावीर	जन्म कल्याणक
	१५	पद्मप्रभ	ज्ञान कल्याणक
वैशाख कृष्णा	२	पार्श्वनाथ	गर्भ कल्याणक
	९	मुनिसुव्रतनाथ	ज्ञान कल्याणक
	१०	मुनिसुव्रत नाथ	जन्म, तप कल्याणक
	१३	धर्मनाथ	गर्भ कल्याणक
	१४	नमिनाथ	निर्वाण कल्याणक
वैशाख शुक्ला	१	कुंथुनाथ	जन्म, तप, निर्वाण
	६	अभिनन्दननाथ	गर्भ, निर्वाण कल्याणक
	९	सुमतिनाथ	तप कल्याणक
	१०	महावीर	ज्ञान कल्याणक
ज्येष्ठ कृष्णा	६	श्रेयांसनाथ	गर्भ कल्याणक
	१०	विमल नाथ	गर्भ कल्याणक
	१२	अनंतनाथ	जन्म, तप कल्याणक
	१४	शान्तिनाथ	जन्म, तप, निर्वाण
	३०	अजितनाथ	गर्भ कल्याणक

मास	तिथि	तीर्थंकर	कल्याणक
ज्येष्ठ शुक्ला	४	धर्मनाथ	निर्वाण कल्याणक
	१२	सुपार्श्वनाथ	जन्म, तप कल्याणक
आषाढ़ कृष्णा	२	आदिनाथ	गर्भ कल्याणक
	६	वासुपूज्य	गर्भ कल्याणक
	८	विमलनाथ	निर्वाण कल्याणक
	१०	नमिनाथ	जन्म, तप कल्याणक
आषाढ़ शुक्ला	६	महावीर	गर्भ कल्याणक
	७	नेमिनाथ	निर्वाण कल्याणक
श्रावण कृष्णा	२	मुनिसुव्रतनाथ	गर्भ कल्याणक
	१०	कुंथुनाथ	गर्भ कल्याणक
श्रावण शुक्ला	२	सुमतिनाथ	गर्भ कल्याणक
	६	नेमिनाथ	जन्म, तप कल्याणक
	७	पार्श्वनाथ	निर्वाण कल्याणक
	१५	श्रेयांसनाथ	निर्वाण कल्याणक
भाद्रपद कृष्णा	७	शान्तिनाथ	गर्भ कल्याणक
भाद्रपद शुक्ला	६	सुपार्श्वनाथ	गर्भ कल्याणक
	८	पुष्पदंत	निर्वाण कल्याणक
	१४	वासुपूज्य	निर्वाण कल्याणक
अश्विन कृष्णा	२	नमिनाथ	गर्भ कल्याणक
अश्विन शुक्ला	१	नेमिनाथ	ज्ञान कल्याणक
	८	शीतल नाथ	निर्वाण कल्याणक

जिस तिथि में जिन तीर्थकरों के कल्याणक हों उन तिथियों में मंदिर जी में विशेष पूजा -विधान एवं धार्मिक आयोजन करना चाहिए।

चौबीस तीर्थंकरों की राशि

प्रतिष्ठा कारक को मूर्ति बनवाते (लेते) समय अपनी राशि एवं तीर्थकरों के जन्मकाल के नक्षत्र के अनुसार उनकी राशि से ग्रह मैत्री का मिलान कर लेना चाहिये। साथ ही वर्गबल आदि का विचार करके जिस तीर्थकर से उचित मिलान हो उनकी मूर्ति की प्रतिष्ठा कराना चाहिए।

तीर्थकरों के जन्मनक्षत्रानुसार उनकी राशि निम्नानुसार हैं (यह राशि नाम के अनुसार नहीं है)

क्रमांक	राशि	तीर्थकर
१	मेष	शान्तिनाथ, मल्लिनाथ एवं नमिनाथ
२	वृष	अजितनाथ एवं कुंथुनाथ
३	मिथुन	संभवनाथ एवं अभिनंदननाथ
४	कर्क	धर्म नाथ
५	सिह	सुमतिनाथ
६	कन्या	पद्मप्रभ, नेमिनाथ एवं महावीर
७	तुला	सुपार्श्वनाथ एवं पार्श्वनाथ
८	वृश्चिक	चन्द्रप्रभ
९	धनु	आदिनाथ, पुष्पदंत एवं शीतलनाथ
१०	मकर	श्रेयांसनाथ एवं मुनिसुव्रतनाथ
११	कुंभ	वासुपूज्य
१२	मीन	विमलनाथ, अनन्तनाथ एवं अरनाथ

क्या करें यदि...... ?

(१) मंदिर निर्माण

(२) वेदी निर्माण

(१) दीवार से संलग्न प्रतिमा अशुभ है।

(२) वेदी प्रदक्षिणा क्यों ?

(३) निर्माण स्थल पर देवों की स्वीकृति की आवश्यकता ?

(४) मंदिर की छाया का विधान।

(५) गृह चैत्यालय एवं चैत्यालय में प्रतिमा की ऊंचाई।

(६) प्राकृतिक आपदाओं से मंदिर को क्षति होने पर।

(७) मंदिर जी में जीर्णता (अव्यवस्था) हो जावे।

(८) मंदिर जी में अशुद्धि होने पर।

(९) प्रतिमा जी नीचे जमीन पर गिरने पर।

(१०) प्रतिमा खण्डित होने पर।

(११) खण्डित प्रतिमा त्याज्य क्यों ?

(१२) जीर्णोद्धार हेतु वेदी से मूर्ति उठाने का विधान।

(१३) प्रतिमा मंजन करना हो।

(१४) जीर्णोद्धार की हुई वेदी में बिम्ब स्थापना।

(१५) शिखर पर कलशारोहण ध्वजारोहण का विधान।

(१६) मंदिर जी में पूजा प्रक्षाल न होने पर।

(१७) अभिषेक पूजा हेतु शुद्ध जल।

(१८) शांति विधान की आवश्यकता।

(१९) विमानोत्सव एवं रथोत्सव में प्रतिमा का विधान।

(२०) सूतक होने पर।

मंदिर निर्माण

धर्मसाधना एव आत्मकल्याण के लिये देवशास्त्रगुरु का सान्निध्य आवश्यक है, मंदिर के माध्यम से इन तीनों का सान्निध्य प्राप्त होता है अतः मंदिर का होना अनिवार्य है।

जैनं चैत्यालयं चैत्यमुत निर्मापयन् शुभम्
वाञ्छन् स्वस्य नृपादेश्च वास्तुशास्त्रं न लंघयेत्। (१)

अपने एव प्रजा के कल्याण के लिये जिनबिम्ब एवं मंदिर बनवाना चाहिये तथा निर्माण कार्य मे वास्तुसार का उल्लंघन नहीं करना चाहिये।

मंदिर का निर्माण कैसे करना ?

काष्ठे मृदिष्टके चैव पाषाणे धातुरत्नजे,
उत्तरोत्तरदृढं द्रव्यं लोहकर्म विवर्जयेत्।
उत्तमोत्तमधात्वादि पाषाणेष्टिककाष्ठकम्,
श्रेष्ठमध्याधमं द्रव्यं लौह चैवधमाधमम्॥(२)

काष्ठ, ईट, पत्थर, धातु और रत्न इन द्रव्यो से मंदिर बनवाया जावे तो उत्तरोत्तर मजबूत है, किन्तु लोह सर्वथा वर्जित है। रत्नधातु का मंदिर उत्तमोत्तम, पाषाण का उत्तम, ईंट का मध्यम्, लकडी का अधम एवं लौह का अधमाधम है अर्थात् मंदिर निर्माण में लोहे का उपयोग नहीं करना चाहिये।

मंदिर निर्माण में अतिशय पुण्य का अर्जन होता है

कोटिवर्षोपवासश्च तपो वै जन्मजन्मनि,
कोटिदानं कोटिदाने प्रासादफलकारणे।(३)

एक नवीन मंदिर बनवाने में इतना फल मिलता है जितना कि करोडों वर्ष उपवास करने का, कई जन्मों तक तप करने का और करोड़ों दानों में करोड़ दान का फल मिलता है।

कोटिघ्नं तृणजे पुण्यं मृन्मये दशसंगुणम्।
ऐष्टके शतकोटिघ्नं शैलेऽनन्तं फलं स्मृतम्॥(४)

घास का देवालय बनवाने में करोडगुना, मिट्टी का दस करोड़ गुना ईट का सौ करोड गुना और पाषाण का अनंत गुना फल देता है।

---

(१) प. आ. थ. प्र. सा. पृष्ठ २ श्लोक १७ (२) शि. स्मृ. वा. वि. अ. ६ श्लोक ११६-११७ (३) शि. र, अ. १३ श्लोक ८५ (४) प्रा. मं. अ १ श्लोक ३५

मंदिर समवसरण का रूप होता है, इसका माप अकृत्रिम चैत्यालयों के अनुसार चौड़ाई से दो गुनी लम्बाई एवं लम्बाई+चौडाई से आधी ऊंचाई होनी चाहिये।

वास्तु शास्त्रानुसार ही मंदिर का निर्माण करना चाहिये अन्यथा समाज एवं परिवार पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है

अतिदीर्घे कुलच्छेदो ह्रस्वेव्याधिर्विनिर्दिशेत्,
तस्माच्छास्त्रोक्त मानेन सुखदं सर्व कामदम ।(१)

मंदिर का शिखर मंदिर के मान (प्रमाण से अधिक ऊंचा या लम्बा हो तो कुल की हानि और प्रमाण से छोटा हो तो रोग उत्पन्न करने वाला है)

मंदिर का प्रमुखद्वार पूर्व एवं उत्तर दिशा में ही होना शुभ है, छोटाद्वार दक्षिण दिशा में भी बना सकते हैं।

पूर्वोत्तरं दक्षिण मरय कार्य द्वारं तथा पूर्वदिशासु नृत्य,
गीतालयं चोत्तरममर्शशास्त्रसद्वाचना गेहमतः प्रशस्तं । (२)

इस प्रकार मंदिर के निर्माण कार्य में अनुभवशील शिल्पी एवं आचार्य तथा विद्वान का परामर्श लेना चाहिये।

समाज को चाहिये कि जिन स्थानों पर समाज के अभाव में शिखर बंद बड़े मंदिरो में प्रक्षाल पूजा की व्यवस्था संभव नही है वहां की व्यवस्था करें अन्यथा वहां के **समवसरण को सुरक्षित स्थानों पर स्थापित करें जिससे जिनबिम्बों की अविनय एवं चोरी आदि से बचाव हो सके। नवीन मंदिरों में भी ऐसे ही स्थानों की प्रतिमाओं को विराजमान करना चाहिये,** साथ ही प्रतिष्ठा महोत्सव में सम्मिलित होने वाले भाइयों को पूजा प्रक्षाल का संकल्प अवश्य लेना चाहिये। पुराने मंदिरों, प्रतिमाओं की सुरक्षा (जीर्णोद्धार) में नवीन मंदिर बनवाने से आठगुना अधिक पुण्यार्जन होता है।

वापी कूप तडागानि प्रासाद भवनानि च
जीर्णान्युद्धारयेद्यस्तु पुण्यमष्ट गुणं लभेत् ।(३)

जिन मंदिर प्रतिमा आदि का जीर्णोद्धार कराने से नवीन निर्माण की अपेक्षा आठ गुना फल मिलता है।

(१) प्रा. म., पृष्ठ १४९ (२) आ. ज से, प्र. पा. श्लोक १३५ (३) शि. ट, अ. १३ श्लोक १०५

(२) वेदी निर्माण

गर्भगृह के छ भागकर दीवार के पास का एक भाग छोड़कर पांचवें भाग अथवा गर्भगृह के आठ भागकर पीछे का एक भाग छोड़कर सातवें भाग में जिनेन्द्र देव को स्थापित करना चाहिये ।[१]

किन्हीं आचार्यो के मतानुसार गर्भगृह के चार भाग करें जिसमें दीवार से प्रथम भाग राक्षस, द्वितीय भाग ब्रह्म, तृतीय भाग देव एवं चतुर्थ भाग मनुष्य का है। दो भाग छोड़कर देव के स्थान में बिम्ब स्थापित करना चाहिये ।[२]

इस प्रकार गर्भगृह में स्थानानुसार परिक्रमा का स्थान छोड़कर जिनबिम्ब की स्थापना करना आगमानुकूल है ।

आचार्य उमास्वामी ने गृह चैत्यालय एवं वेदी की ऊंचाई का विधान इस प्रकार दिया है ।

गृहे प्रविशतावामभागे शल्यविवर्जिते, देवतावसरं कुर्यात्सार्द्ध - हस्तोर्द्धभूमिके ।
नीचैर्भूमिस्थितं कुर्याद्देवतावसरं यदि, नीचैर्नीचैस्ततोवश्यं संतत्यापि समं भवेत् ।।[३]

गृह में प्रवेश करते समय बायें भाग में चैत्यालय बनवाना चाहिये यह स्थान शल्य रहित हो चैत्यालय में वेदी की ऊंचाई डेढ़ हाथ होना चाहिये, यदि इससे कम होगी तो बनवाने वाला अपनी संतति के साथ नीचता को प्राप्त होगा ।

आचार्य जयसेन स्वामी ने तीन कटनी की वेदी का विधान किया है ।

गर्भालये स्थापनमीश्वराणां वेदीत्रिभूरुर्ध्वविशालमध्या । [४]

गर्भगृह में डेढ हाथ चबूतरे पर जिनबिम्ब स्थापित करने के लिये वेदी की तीन ऊर्ध्व, मध्य एवं अधोरूप कटनी करें ।

इस प्रकार जिनबिम्ब के आसन की ऊंचाई नाभि से नीचे नहीं रहना चाहिये ।

नैकहस्तादितोऽन्यूने प्रासादे स्थिरता नयेत्,
स्थिरं न स्थापयेद् गेहे गृहीणां दुःखकृद्धियत् । [५]

एक हाथ से छोटी (नीची वेदी) में स्थिरप्रतिमा स्थापित नहीं करना चाहिये तथा गृह मंदिर में स्थिर प्रतिमा विराजमान करना दुखकारी है

वेदी बनाने के चार प्रकार आचार्य जयसेन स्वामी ने प्रतिष्ठापाठ में बताये हैं ।

वेदीचतुर्विधा तत्र चतुरस्त्रा च पद्मिनी, श्रीधरी सर्वतोभद्रा दीक्षासु स्थापनादिषु ।
चतुरस्त्रा चतुःकोणा वेदी सौख्यफलप्रदा, केश्चिच्चैत्य-प्रतिष्ठायां पद्मिनी पद्मसंनिभा।[६]

---

(१) प्रासाद मण्डन, पृष्ठ ७४-७५ (२) ठ. फे., वा. सा. प्र. पृष्ठ १३३ गाथा ४५
(३) आ. उ. स्वा., श्रा. श्लोक ९८, ९९ (४) आ. ज. से., प्र. पा. श्लोक २२२
(५) शि. स्मृ. वा. वि. अ. ६ श्लोक १३० (६) आ. ज. से प्र. पा. श्लोक २२८, २२९

(१) चौकोर वेदी (२) कमलाकार (पद्मनी) (३) अर्धचन्द्राकार (श्रीधरी) (४) आठखूंटकी सर्वतोभद्र यह चार प्रकार हैं। जिनमें प्रथम सुख देने वाली है इसका उपयोग बिम्ब प्रतिष्ठा में, द्वितीय वेदी का उपयोग ज्ञानकल्याणक में, तृतीय वेदी जन्मकल्याणक में एवं चतुर्थ का उपयोग तपकल्याणक में होता है इसलिये मंदिरो में अधिकांश चौकोर तथा पद्मनी वेदी पर बिम्ब स्थापित किये जाते हैं।

(१) दीवार से संलग्न प्रतिमा अशुभ है -

भित्तिसंलग्न-बिम्बश्च पुरुषः सर्वथाऽशुभः,
चित्रमयाश्च नागाद्या भित्तौ चैव शुभावहा। (१)

दीवार से स्पर्शकर स्थापित की हुई प्रतिमा और अन्य महापुरुष की मूर्ति सर्वथा अशुभ है, चित्राम के देवता दीवार पर हो सकते हैं।

दीवार स्थित अलमारी या आले में प्रतिमा स्थापित करना शुभ नहीं है इसी प्रकार दो स्तंभों के पाटे के नीचे या गार्डर, बीम आदि के नीचे भी जिनबिम्ब स्थापित नहीं करना चाहिये।

सूचिमुखं भवेच्छिद्रं पृष्ठे यदा करोति च।
प्रासादे न भवेत्पूजा गृहे क्रीडन्ति राक्षसाः। (२)

देवालय की पीछे की दीवार में यदि सुई की नौंक के बराबर भी छिद्र रखा जावे तो देवालय में पूजा भी नही होगी और राक्षसों का निवास रहेगा। अर्थात् वेदी के पीछे कोई अलमारी, रोशनदान आदि नहीं बनाना चाहिये।

(२) वेदी की प्रदक्षिणा क्यों ?

प्रदक्षिणात्रयं कार्यं मेरुप्रदक्षिणायलम्।
फलं स्याच्छैलराज्यस्य मेरोः प्रदक्षिणाकृते। (३)

सुमेरुपर्वत की तीन प्रदक्षिणा करने में जो फल प्राप्त होता है, उतना ही फल पाषाण के मेरुप्रासाद की तीन प्रदक्षिणा करने से प्राप्त होता है।

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च
तानि तानि विनश्यन्ति प्रदक्षिण - पदे - पदे। (४)

जन्म-जन्मान्तरो में जो जो पाप किये है वे मंदिर एवं वेदी की प्रदक्षिणा देने से नष्ट हो जाते हैं।

---

(१) शि. र. अ. १२ श्लोक २०५ एवं के वा. सा. गाथा १३३ (२) शि.र. अ. ५ श्लोक १५४
(३) प्रा मं., अ. ५ श्लोक ३५ (४) शि. र. अ. १३ श्लोक ३०

(३) निर्माण स्थल पर देवों की स्वीकृति की आवश्यकता ?

अहोधरायामिह ये सुराश्च क्षमंतु यज्ञाधिकृतिं ददंतु ।
प्रीतिःपुराणा बहुवासयोगात् क्षितावतोऽस्मद्विनिवेदनं वः ॥ (१)

जिस स्थान पर निर्माण कार्य या आयोजन जैसे मंदिर निर्माण, गृह, कूप, तालाब, अथवा यज्ञ भूमि आदि कार्य करना हो, उस स्थान के स्वामी (भूमिस्थ) देवों के प्रति क्षमापन करें, आदरपूर्वक निवेदन करें कि हे क्षेत्र रक्षक देव ! आप इस क्षेत्र में बहुत समय से निवास कर रहे हैं, अतः इस क्षेत्र के प्रति आपका अत्यंत स्नेह है, हम आपके क्षेत्र में... (कार्य का नाम) कार्य करना चाहते हैं आप अपनी सहमति प्रदान करे और परिवार सहित हमारा सहयोग करें। तदन्तर विधि पूर्वक – पूजनादि करके भूमि शुद्धि करें।

प्रतिष्ठा पाठ में जयसेनाचार्य ने उस क्षेत्र में निवास करने वाले देव, तिर्यंच एवं मनुष्यों के प्रति क्षमापन का भाव करने को लिखा है।

तत्स्थानवासान्‌निखिलान्‌सुरादीन् संतोष्य पंचेशसुमण्डलेन ।
पूजां विधायेतरदीनजन्तून् सन्मानयेत्करुणिको महात्मा ॥ (२)

उस क्षेत्र में निवास करने वाले देवों को सम्मान पूर्वक संतुष्ट करके आज्ञा प्राप्त करें और पंचपरमेष्ठी की पूजा करें तथा दीन दुखी प्राणियों को करुणापूर्वक यथा योग्य संतुष्ट करें।

शंका (३)

जयसेन जैसे महान आचार्य ने क्षेत्र के स्वामी व्यन्तर देवों से क्षमापन कराने और उन्हें संतुष्ट करने का विधान क्यों कहा है ?

समाधान-

पूज्यपाद स्वामी इष्टोपदेश में कहते हैं जो जीव जहां रहते हैं, वहां उनको प्रीति उत्पन्न हो जाती है। यथा -

यो यत्र निवसन्नास्ते स तत्र कुरुते रतिम् ।
यो यत्र रमते तस्मादन्यत्र स न गच्छति ॥ (४)

---

(१) आ. ज. से., प्र. पा. पृ. ५२ श्लोक २७५ (२) वही पृ० ३२ श्लोक ३२
(३) आ. वि. वा. वि. प. पृष्ठ २३ (४) पू. पा. इ. पृष्ठ ४६ श्लोक ४३

यह एक स्वाभाविक बात है कि प्राणी जिस स्थान पर रहता है, उसको उस स्थान से प्रेम हो जाता है। जो जिस स्थान पर रम जाता है, वह उस स्थान को छोड़कर कहीं अन्य स्थान पर नहीं जाना चाहता है।

जब जीवों को अपने निवास स्थान से प्रीति हो जाती है और वे उसे छोड़कर सहज ही अन्यत्र नहीं जाना चाहते तब यदि उनसे बिना पूछे या उन्हें बिना संतुष्ट किये उनके स्थान पर व्यवधान किया जावेगा तो उनके मन में कशायोत्पत्ति की संभावना रहती है, अतः कार्यारंभ के पूर्व उन्हें संतुष्ट करना आवश्यक है।

शंका (१)

जहां पर हम निर्माण कार्य कराना चाहते है वहां देवों का निवास हो ही वह कैसे संभव है ?

समाधान-

मध्यलोक में सुई की नौंक बराबर भी कोई ऐसा स्थान नही है जहां व्यन्तरदेवों का निवास/गमन न हो।

श्री यतिवृषभाचार्य जी तिलोयपण्णत्ति के छठे अधिकार में व्यन्तर देवों के निवास क्षेत्र का प्रमाण बताते हुये कहते हैं कि -

रज्जुकदी गुणिदव्वा णवणउदि-सहस्स-अहिय-लक्खेणं।
तम्मज्झेतिवियप्पा वेंतरदेवाण होंति पुरा ॥(२)

राजू के वर्ग को एक लाख निन्यानवे हजार (१९९०००) योजन से गुणा करने पर जो प्राप्त हो उसके मध्य में व्यन्तर देवों के तीन प्रकार के पुर होते हैं।

विशेषार्थ - रत्नप्रभानामक प्रथम पृथ्वी १,८०,००० योजन मोटी है। इसके तीन भाग हैं। अब्बहुल नामक अंतिम भाग ८०,००० योजन मोटा है जिसमे नारकियों का वास है। अवशेष (१,८०,०००-८०,०००) १,००,००० योजन रहा। सुमेरु पर्वत एक लाख योजन ऊंचा है, जिसमें से १,००० योजन उसकी नीव उपर्युक्त एक लाख योजन में गर्भित है इस चित्रा पृथ्वी के ऊपर सुमेरु की ऊंचाई ९९ हजार योजन है इस प्रकार पंक भाग से प्रारंभ कर सुमेरु पर्वत की पूर्ण ऊंचाई पर्यंत का क्षेत्र - (१,००,००० + ९९०००) = १९९००० योजन होता है और मध्यलोक एक राजू लम्बा और एक राजू चौड़ा है, अतः घन फल = राजू × राजू × १९९००० योजन है। यही व्यंतर देवों का निवास क्षेत्र है। इसी आगम प्रमाण से ज्ञात होता है कि मध्यलोक का सुई की नौंक बराबर भी क्षेत्र व्यन्तर देवों से रहित नहीं है।

---

(१) आ. वि. वा. वि. प. पृ० २४-२५ (२) श्री आ. य. ति. प. अ. ६ गा. ५

(४) मंदिर की छाया का विधान

पढ़मंत जाम वज्जिय धयाईदुति पहर संभवाछाया ।
दुहहेऊ णायव्वा तओ पयत्तेण वज्जिज्जा ।(१)

पहले और अंतिम प्रहर को छोड़कर दूसरे और तीसरे प्रहर में मंदिर के शिखर, ध्वजादि की छाया गृहस्थ निवास पर आती हो तो दुखकारक जानना अर्थात् द्वितीय एवं तृतीय प्रहर में जहां पर शिखर एवं ध्वजा की छाया पड़ती हो वहां गृहस्थ को मकान नही बनाना चाहिये ।

दुःखं देवकुलासन्ने गृहे हानिश्चतुष्पथे ।
धूर्तमत्यगृहाभ्याशे स्यातां सुतधनक्षयौ ।। (२)

यदि गृहस्थ का गृह मंदिर के पास होवे तो दुख कारक है, चौराहे पर हो तो हानिकारक एवं धूर्त और मंत्री के गृह के पास होवे तो पुत्र और धन का विनाश होता है ।

यामयोर्वेश्मनि छायां वृक्षप्रासादजां त्यजेत् ।
सौम्यादितः शुभाः प्लक्षवटोदुम्बरपिप्पलाः ।।(३)

दिन के दूसरे और तीसरे पहर में किसी मंदिर के शिखर अथवा ध्वजा की छाया और किसी भी वृक्ष की छाया गृहस्थ के घर पर पड़ती हो तो वह महाअशुभ है, उस घर में निवास नही करना चाहिये ।

गृह की पूर्व दिशा में बड़, दक्षिण दिशा में ऊमर पश्चिम दिशा में पीपल और उत्तर दिशा में भी पीपल का वृक्ष अशुभ नहीं होता पर इनकी छाया दूसरे और तीसरे प्रहर में गृह निवास पर नहीं पड़नी चाहिये ।

---

(१) ठ. फे. वा. सा. ग्र. प्र. पृष्ठ ७६
(२) वही, वि. पृष्ठ ८०, एव कुं. कुं. श्रा. सं. पृष्ठ ८२ श्लोक १०२ (३) शि. र. अ. ५ श्लोक २०६

(५) गृह चैत्यालय एवं चैत्यालय में प्रतिमा की ऊंचाई

एकादशांगुल बिम्बं सर्वकामार्थसाधनम् ।
एतत्प्रमाणमाख्यातमतऊर्ध्वं न कारयेत् ॥ (१)

गृह चैत्यालय में ग्यारह अंगुल तक ऊंची (९इंच से कम) प्रतिमा ही विराजमान करना चाहिये। इससे अधिक ऊंची प्रतिमा श्रावक को पीड़ाकारक होती है।

नैकहस्तादितोऽन्यूने प्रासादे स्थिरता नयेत् ।
स्थिरं न स्थापयेद् गेहे गृहीणां दुःख-कृद्धयत् ॥ (२)

एक हाथ से छोटी वेदी में स्थिर प्रतिमा या अचल प्रतिमा (मूलनायक) स्थापित नहीं करनी चाहिये। तथा गृह मंदिर में स्थिर प्रतिमा विराजमान करना दुख का कारण होती है।

तदूर्ध्व नव-हस्तान्तं पूजनीया सुरालये ।
दशहस्तादितोयाऽर्चा प्रसादेन बिनाऽर्चयेत् ॥ (३)

ग्यारह अंगुल से नौ हाथ पर्यंत (लगभग १३फुट) ऊंची प्रतिमा मंदिर जी में पूज्य है और इससे अधिक ऊची अर्थात् दशहाथ से अधिक ऊंचाई वाली प्रतिमा मदिर जी के बिना भी पूज्य है।

(६) प्राकृतिक आपदाओं से मंदिर जी को क्षति होने पर

प्राकृतिक आपदा बाढ, भूकम्प, अग्नि एवं बिजली से यदि मंदिर जी को क्षति पहुँचती है तो वृहद् शांति मंत्र का सवालाख जाप करके शाति विधान करें तत्पश्चात् शांतिहवन शांति भक्ति करके जीर्णोद्धार का कार्य आरंभ करें। समाज के सभी श्रावको को एकाशन, रस त्याग आदि नियम लेकर णमोकार महामंत्र की संकल्प पूर्वक शक्ति अनुसार जीर्णोद्धार होने तक जाप करना चाहिये।

(१) ठ. फे., वा. सा. पृष्ठ ८२ एवं आ. उ. रवा.श्रा. श्लोक १००
(२) शि. स्मृ. वा. वि., अ. ६ श्लोक १३० (३) शि. र. अ. ११ श्लोक ११

(७) मंदिर जी में जीर्णता (अव्यवस्था) हो जावे

मण्डलं जालकञ्चैव कीलकं सुषिरं तथा ।
छिद्रं संधिश्च काराश्च महादोषा इति स्मृताः ॥[१]

मंदिर जी का शिखर, दीवार, छत एवं फर्श आदि में क्षरण होने लगे, चूना/ सीमेन्ट गिरने लगे गड्ढे हो जावें । जाले आदि लग गये हों, (त्रस जीवों का आवास होने लगे) कूड़ा इकट्ठा होने लगे, दीवारों में छिद्र हो जावें, दरार पड़ जावे, शिखर तथा छत पर काई या वनस्पति होने लगे अर्थात् जीर्णाद्धार तथा सफेदी न कराई जावे तो समाज को पीड़ाकारक है ।

(८) मंदिर जी में अशुद्धि होने पर

दूषितेऽस्थ्यादिभिर्देव-धाम्न्यस्पृश्य-जनैरपि,
संशोध्य सकलं धाम-धुत्वा धूम्रध्वजांकुरैः ।
सिक्त्वा च सुधया देवं तैरेव स्नापयेद् घटैः ॥[२]

यदि मंदिर जी में हड्डी – मांस – चर्बी आदि गिर जावे, शूकर आदि जानवर प्रवेश कर जावें, चाण्डालादि अस्पृश्य मनुष्य का प्रवेश हो जावे, बच्चे मल मूत्रादि कर देवें या महिलायें असमय में मंदिर जी में ही अशुद्धि से हो जावें तो अशुद्ध पदार्थों को दूर करके पूरा मंदिर धुलवाकर सफेदी कराना चाहिये। तत्पश्चात विधिपूर्वक अभिषेक शान्तिधारा विधान जप एवं हवन आदि अनुष्ठान पूर्वक शुद्धि करके ध्वजारोहण कराना चाहिये ।

(९) प्रतिमा जी नीचे जमीन पर गिरने पर

पतिते जिनबिम्बेऽष्ट शतेन स्नापयेद् घटैः ।
अष्टोत्तरशतं कुर्यान् मूलमंत्रेण चाहुतीः ॥[३]

अभिषेक, प्रक्षाल, पूजन करते समय, विमानोत्सव आदि में प्रतिमा जी ले जाते समय या अन्य कारण से प्रतिमा जी नीचे गिर पड़ें (खण्डित न हुई हो) तो उस प्रतिमा का १०८ कलशों से अभिषेक, शान्तिधारा, पूजन करके णमोकार मूलमंत्र णमोकार का १०८ बार जप करके १०८ आहूति देकर हवन करें तथा प्रतिमा जी को यथास्थान विराजमान करके प्रायश्चित्त अवश्य लेवें ।

---

(१) शि. र., अ. ७ श्लोक १३२ एवं प्रा. म., अ. ८ श्लोक १६
(२) जि. सं., अ. ८ श्लोक २८ (३) जि. सं., अ. ८ श्लोक २४

(१०) प्रतिमा खण्डित होने पर

स्नापयेदंगमंगेषु- सहस्रेण जिनेश्वरम्,
होमं वा पातवत् कुर्याद् भग्नं चांग सुसेवयेत् ।
ततो जलाधिवासादिप्रतिष्ठापन- माचरेत् ।।(१)

अभिषेक, प्रक्षाल, पूजन करते समय प्रतिमा जी हाथ से गिरने या अन्य कारण से यदि अंग, उपांग और प्रत्यंग खण्डित हो जावे तो उन्हीं भगवान की अन्य प्रतिमा का १००८ कलशों से अभिषेक, शान्तिधारा, पूजन, शान्तिविधान एवं शांति मंत्राराधन एवं हवन करना चाहिये तथा खण्डित प्रतिमा को विधि पूर्वक अगाध जल राशि में विसर्जित करें तथा गुरु से प्रायश्चित लें ।

स्थापिता चैव या मूर्तिर्व्यंगिता चेद्विसर्जयेत् ।
तन्मूर्तिः प्रकर्तव्या नान्यमूर्तितं प्रवेशयेत् ।। (२)

मंदिर जी में स्थापित प्रतिमा जी खण्डित होते ही तत्काल जल में विसर्जन करके एकासन उपवास एवं रस परित्याग का प्रायश्चित करते हुये शुभ मुहूर्त में उन्हीं तीर्थंकर की नवीन प्रतिमा प्रतिष्ठित कराके स्थापित करना चाहिये। अन्य तीर्थंकर की नहीं ।

(११) खण्डित प्रतिमा त्याज्य क्यों ?

या खण्डिताश्च दग्धाश्च विशीर्णा स्फुटितास्तथा ।
न तासामन्य-संस्कारो गताश्च तत्र देवता ।।(३)

खण्डित, जली हुई, तड़की हुई तथा फटी हुई प्रतिमा पर मंत्र संस्कार नहीं रहते वह अप्रतिष्ठित हो जाती है और उसमें देवपना भी नहीं रहता अर्थात् वह पूजनीय नहीं है तथापि -

जीर्णं चातिशयोपेतं तद् व्यङ्गमपि पूजयेत् ।
शिरोहीनं न पूज्यं स्यान् निक्षेप्यं तन्नदादिषु ।। (४)

जो प्रतिमा प्राचीन हो, अतिशय से संपन्न हो, उसकी अंगुली का अग्रभाग, कान या नाक का भाग अर्थात उपांग खण्डित हो जाने पर भी पूज्य है किन्तु मस्तक आदि से खण्डित प्रतिमा सर्वथा अपूज्य है, उसे मंदिर में नही रखकर अगाध जलराशि में विधि पूर्वक विसर्जित करना चाहिये ।

---

(१) जि. सं. अ. ८ (२) शि. स्मृ. वा. वि. अ. ६ श्लोक १५१
(३) शि. स्म. वा. वि., अ. ६ श्लोक १५८ (४) व. से., प्र. दी. एवं आ. उ. श्रा. श्लोक १११

(१२) जीर्णोद्धार हेतु वेदी से मूर्ति उठाने का विधान

प्रासादप्रतिमोत्थापश्चरलग्ने शुभे दिने ।
लञ्चेन चालयेद्देवं सर्वदोष- विवर्जिते ।।(१)

मंदिर जी में विराजमान प्रतिमा शुभ दिन एवं शुभलग्न में विधि विधान पूर्वक उठाना चाहिये। पहले मूलनायक एवं अन्य प्रतिमाओं को क्रमशः विनय पूर्वक उठाना चाहिये ।

जिस वेदी का जीर्णोद्धार करना हो उसके सम्मुख समाज के प्रतिष्ठित व्यक्ति हाथों में श्री फल लेकर भक्ति एवं श्रद्धापूर्वक संकल्प करें तथा जिनालय में शासनरक्षक देवों का सहयोग शुभकार्य में प्राप्त करें । सकल्प निम्नानुसार करें ।

'हम सकल जैन समाज (शहर का नाम) के श्रावक जिनालय में स्थित रक्षक देवो से अनुरोध करते हैं कि भगवान .... (मूलनायक का नाम) की वेदी का जीर्णोद्धार करने में सहयोग प्रदान करे । वेदी में विराजमान भगवान के समक्ष हम सभी संकल्प करते हैं कि इस वेदी में विराजमान सभी प्रतिमाओं को ....(स्थान का नाम) पर विराजमान कर जिस प्रकार यहां पूजा प्रक्षाल करते थे उसी प्रकार उस स्थान पर भी पूजा प्रक्षाल करेंगे । तथा .... (समय की मर्यादा) दिनों में वेदी का जीर्णोद्धार करके सभी प्रतिमाओं को विधिविधान पूर्वक वेदी प्रतिष्ठा कराके पुन. स्थापित करेंगे । इतने समय तक हम एकासन एवं .... (रस का नाम) रस का त्याग (यह संकल्प शक्ति पूर्वक लें) करेंगे' । अज्ञानता वश जाने अनजाने में होने वाली गल्तियों के लिये क्षमायाचना करते हुए यह संकल्प करके वेदी पर श्रीफल चढ़ाकर भगवान को नमस्कार करें ।

कार्य आरंभ करने के पूर्व अन्य स्थान जहां प्रतिमा जी विराजमान करना हो उस स्थान की शुद्धि, टेविल, चंदोबा, छत्र आदि की समुचित व्यवस्था करें । तत्पश्चात् वृहद शांतिमंत्र की कम से कम ग्यारह हजार जाप करकेप्रतिमाभिषेक(प्रक्षाल) शांतिधारा एवं शांतिविधान करें । वेदी से प्रतिमा उठानें के पूर्व एक दीपक एवं मंगल कलश स्थापित करें । वेदी पूर्णतः खाली नही करना चाहिये । सिद्ध भक्ति पढ़कर प्रतिमा जी उठाकर अन्य स्थान पर विराजमान करें, फिर शातिहवन एवं शांतिभक्ति पढ़कर कार्य का समापन करे ।

अन्य स्थान पर प्रतिमा जी इस प्रकार विराजमान करें कि प्रत्येक प्रतिमा का दर्शन पूजन हो सके तथा उनकी अवमानना न हो इसका विशेष ध्यान रखें। कार्य में किसी प्रकार की जल्दबाजी एवं असावधानी न करें ।

---

(१) शि. र, अ. ५ श्लोक १२३

विधि विधान (मंत्राराधन, विधान एवं हवन) किये बिना वेदी से प्रतिष्ठित प्रतिमा जी उठाकर प्राचीन वेदी को खाली नहीं करना चाहिये। क्योंकि जब नवीन मंदिर या वेदी का निर्माण कराकर वेदी प्रतिष्ठा करते हैं तब जिन बिम्ब स्थापन के समय उस स्थान पर रहने वाले देव जिनेन्द्र भक्ति के भाव से उस क्षेत्र की रक्षा करने लगते हैं जो प्रतिमा की अविनय या आगमोक्त कार्य न होनें पर विघ्न भी उपस्थित कर सकते हैं।

(१३) प्रतिमा मंजन करना हो

वर्ष में एक बार मंदिर की सफाई, जीर्णोद्धार एवं वर्ष में दो बार प्रतिष्ठित प्रतिमाओं का मंजन करना चाहिये। मंजन हेतु वेदी से प्रतिमा उठाते समय पूर्ण विधि विधान करना अनिवार्य है, साथ ही ध्यान रखें अचल प्रतिमा (मूलनायक प्रतिमा) को वेदी से मंजन हेतु न उठावें। उसका मंजन उसी स्थान पर करें।

मंजन हेतु अशुद्ध पदार्थों/साधनों का प्रयोग नहीं करें। रीठा के जल एवं पिसी हुई लवंग के लेप से प्रतिमा का मंजन करें। धातु की प्रतिमा पर नींबू, इमली आदि खट्टे पदार्थों से प्रतिमा पर दाग आने की संभावना रहती है।

(१४) जीर्णोद्धार की हुई वेदी में बिम्ब स्थापना

भूतप्रेतपिशाचादि - राक्षसाश्च वसन्तिकैः ।
तस्मात् प्रासादनिष्पन्ने सर्वथा प्रेक्षणं चरेत् ॥[1]

वेदी का जीर्णोद्धार होने के पश्चात् या नवीन मंदिर के निर्माण कार्य पूर्ण होने के बाद वेदी को अधिक समय तक खाली न रखें क्योंकि खाली वेदी मे भूत, प्रेत, पिशाच तथा राक्षस आदि देव निवास कर लेते हैं। अतः शीघ्र विधि विधान पूर्वक वेदी प्रतिष्ठा कराकर बिम्ब स्थापन करना चाहिये अर्थात् मंदिर बिना मूर्ति का नहीं रखना चाहिये।

(१) शि. स्मृ. वा. वि., अ. ६ श्लोक १२४

(१५) शिखर पर कलशारोहण एवं ध्वजारोहण का विधान

पाहण कट्ठिट्टमओ जारिसु पासाउ तारिसो कलसो।
जह सत्ति पइट्ठपच्छा कणयमओ रयण जडिओ अ ॥ (१)

यदि मंदिर पत्थर का बना हो तो कलश पत्थर का करना, लकडी का प्रासाद हो तो लकड़ी का कलश करना और यदि ईट का मंदिर बना हो तो कलश ईट का करना चाहिये। परन्तु अपनी शक्ति केअनुसार सोने का अथवा रत्न जडित कलश भी करवा सकते हैं।

मंदिर की ऊंचाई केअनुसार कलश एवं ध्वजा लगाना चाहिये। कलश की लम्बाई २१, १५, ११, ९, ७, ५, ३,१ फुट की हो सकती है। कलश में नग १, ३, ५, ७ होना चाहिये।

दण्डः कार्यस्तृतीययांशे शिलातः कलशान्तकम्।
मध्योऽष्टांशेन हीनोऽसौ ज्येष्ठपादोनः कन्यसः ॥ (२)

खुर शिला से कलश तक ऊंचाई के तीन भाग करना, उनमें से एक (तीसरा भाग) जितना लम्बा ध्वजा दण्ड बनाना, यह ज्येष्ठ मान ध्वजादण्ड है ज्येष्ठमान ध्वजादण्ड में से आठवां भाग कम करें तो मध्यम मान और मध्यम मान का पांचवां भाग घटा देने से कनिष्ठ मान का ध्वजदण्ड होता है।

ध्वजा का वस्त्र दण्ड की लम्बाई जितना लम्बा और दण्ड केआठवें भाग जितना चौड़ा अनेक वर्ण के वस्त्र से सुशोभित कर बनाना चाहिये। (३)

यदि कलश केसाथ ताम्रपत्र या पीतल की ध्वजा लगाना हो तो कलश केअनुसार ३ या ५ फुट की ध्वजा या जैसी ऊंचाई हो उसके अनुसार ध्वजा लगाना चाहिये परन्तु ध्वजा की लम्बाई चौड़ाई से दो गुनी होना चाहिये।

मंदिर पर धातु और कपड़ा दोनों प्रकार की ध्वजायें लगवाई जा सकती हैं।

निश्चिन्हं शिखरं दृष्ट्वा ध्वजाहीनं सुरालयम्।
असुरावासमिच्छन्ति ध्वजाहीनं न कारयेत् ॥ (४)

मंदिर के शिखर का चिन्ह ध्वजा है। ध्वजारहित मंदिर देखकर असुरदेव वहां वास कर लेते हैं अतः एक दिन भी मंदिर बिना ध्वजा के नहीं रखना चाहिये।

जिस मंदिर की शिखर पर ध्वजा न हो तो उसमें किये गये जप, पूजन, ध्यान, अध्ययन आदि अनुष्ठान निष्फल होते हैं, अतः मंदिर पर नियम से ध्वजा लगानी चाहिये। (५)

---

(१) फे., वा. सा. प्रा. प्र. गाथा २८ एवं क्षीरार्णव, शिखराधिकार पृष्ठ १६१/४४
(२) प्रा. मं. ४/९०/४१ (३) प्रा. मं., ४/९३/४६ (४) शि. स्मृ. वा. वि., आ. ७ श्लोक १०२
(५) उ. खा. श्रा., पृ. ४० श्लोक १०७ एवं कुं. कुं. श्रा.

(१६) मंदिर जी में पूजा - प्रक्षाल न होने पर [१]

मंदिर जी में स्थापित प्रतिमा का नित्य ही प्रातः काल में अभिषेक पूजा होना अनिवार्य है, यदि एक समय जिन प्रतिमा की पूजन न हो सके तो दूसरे समय दुगनी पूजन कर महामंत्र का १०८ बार जाप करना चाहिये।

(१७) अभिषेक - पूजा हेतु शुद्ध जल ..... ?

जलाशयारामसमग्रशोभा वाल्मीक - जंतुप्रविचारवर्ज्या।
कीलास्थिदग्धाश्मविवर्जिता भूरत्न प्रशस्या जिनवेश्मयोग्या ॥[२]

मंदिर निर्माण कूप, वापिका, तड़ाग (तालाब), नदी आदि बगीचा वृक्षसमूह से शोभित और बाबी, जन्तु कीटादिक से रहित, श्मशान एव शूली आदि स्थान से रहित, दग्ध पाषाणों से रहित स्थान में करना चाहिये

अर्थात् मंदिर निर्माण मे कुये आदि के शुद्ध जल (छने जल) का उपयोग करना चाहिये।

श्रावक की पहचान में मर्यादित छने हुये शुद्ध जल का वर्णन कई आगम ग्रंथों में वर्णित है। जल छानने की विधि एव जल की मर्यादा का विशेष विवरण क्रियाकोष के पृष्ठ १२५ से १३१ तक कविवर किशन सिह जी ने किया है। जल छानने का तात्पर्य जल में विद्यमान जीवराशि की रक्षा से है जिस कूप से जल निकाला जावे उसकी जीवाणी (छनित जीव राशि) उसी कूप में उसी दिशा से कुण्डे वाले पात्र से कुयें के जल स्तर पर ही विसर्जित करें। ऊपर से फेंकने से जीवो का घात होता है। वैज्ञानिक दृष्टि से भी देखें तो कुयें में कई जल स्रोत होते है जिनसे आने वाले जल में भिन्नता (भिन्न-भिन्न Ph Value) होती है, अतः जल जीवो की रक्षा का भाव रखते हुये सावधानी पूर्वक जल छान कर जीवाणीविसर्जन करें।

श्रावक को दिनचर्या के साथ-साथ व्रतियों को आहार एवं अभिषेक-पूजन मे कुये के शुद्ध जल का ही प्रयोग अनिवार्य है। जल की मर्यादा का विशेष ध्यान रखें छने जल की मर्यादा मात्र दो घडी (४८ मिनिट) होती है। इसके पश्चात् उसमे सम्मूर्छनत्रंस जीव उत्पन्न हो जाते हैं अत. **अभिषेक पूजा में नियम से प्रासुक जल का प्रयोग करना चाहिये। ठंडे जल का नही।**

(१) जि. स., अ. ८ (२) आ. ज. से., प्र. पा., पृष्ठ ३१ श्लोक २८

हैण्डपम्प (वर्मा) या नल का जल छानने के बाद जीवाणी का विसर्जन नहीं कर सकते इसलिये त्रस जीवों का घात होता है।

वास्तु विज्ञान में भी कूप निर्माण का विधान किया है।

कूपे वास्तो - र्मध्यदेशेऽर्थनाशस्त्वैशान्यादौ पुष्टिरैश्वर्य वृद्धिः ।
सूनोर्नाशः स्त्रीविनाशो मृतिश्च सम्पत्पीडा शत्रुतः स्याच्च सौख्यम् ॥ (१)

मंदिर या गृह में कूप निर्माण उत्तर या पूर्व दिशा में करना चाहिये। मध्य में या अन्य दिशा विदिशा में कूप निर्माण हानिकारक होता है।

इस प्रकार जिनेन्द्र भगवान के अभिषेक पूजन में कूयें के शुद्ध प्रासुक जल का ही प्रयोग आगमानुसार किया जाना चाहिये। लवंग आदि से विरेचित जल की मर्यादा भी कम होती है अतः प्रासुक जल का ही प्रयोग करना चाहिये।

वापीकूपतडागानि प्रासादभवनानि च ।
जीर्णान्युद्धारयेद्यस्तु पुण्यमष्टगुणं लभेत् ॥ (२)

वापी, कूप, तडाग (तालाब) जिनमंदिर आदि का जीर्णोद्धार कराने से नवीन निर्माण की अपेक्षा आठ गुणा अधिक फल मिलता है। अतः इनका जीर्णोद्धार अवश्य कराना चाहिये। अर्थात इनको नष्ट होने से रोकना चाहिये। इनकी सुरक्षा करना चाहिये।

(१८) शान्ति विधान की आवश्यकता

भूम्यारम्भे तथा कूर्मे शिलायां सूत्रपातने ।
खुरे द्वारोच्छ्रये स्तम्भे पट्टे पद्मशिलासु च ॥
शुकनाशे च पुरुषे घण्टायां कलशे तथा ।
ध्वजोच्छ्रये च कुर्वीत शान्तिकानि चतुर्दश ॥(३)

(१) भूमिका आरंभ (२) कूर्मन्यास (३) शिलान्यास (४) सूत्रपात (५) खुरशिला स्थापन (६) द्वार (७) स्तंभ स्थापन (८) पाट चढाते समय (९) पद्म शिला (१०) शुकनाश (११) प्रासाद पुरुष के स्थापन समय (१२) अमलसार (१३) कलशारोहण (१४) ध्वजारोहण।

यह चौदह कार्य करते समय शांति विधान करना चाहिये।

---

(१) वि.वि. प्र. ग्र., पृष्ठ ५ (आ. वि. वा. वि. प. पृष्ठ ३३ से)
(२) शि. र., अ. ५ श्लोक १०५ (३) प्रा. मं., अ. १ श्लोक ३७, ३८

(१९) विमानोत्सव एवं रथोत्सव में प्रतिमा का विधान

प्रत्यग्रं चलनक्षमं दृढ़वपुःसंधिं तथा धातुजं ।
योग्यं नित्यमहोत्सवेषु शिविकासत्स्यंदनारोहणे ॥[१]

विमानोत्सव एवं रथोत्सव तथा गजरथ आदि में धातु की प्रतिमा विराजमान करना चाहिये। पाषाण की प्रतिमा का विधान नहीं है। क्योंकि धातु की मूर्ति सुदृढ़ संधि वाली होती है अतएव किसी प्रकार के अनिष्ट की आंशका नहीं रहती।

वेदी से प्रतिमा जी उठाने के पूर्व स्नानकर शुद्ध धोती दुपट्टा पहिने, सिद्ध भक्ति पढ़कर नौ बार णमोकार मंत्र की जाप करके अर्घ चढ़ाकर प्रतिमा जी उठावें एवं झालर, घंटा, चंवर आदि के साथ विनय पूर्वक ले जावें।

(२०) सूतक होने पर

परिवार/घर में सूतक हो जाने पर देव शास्त्र गुरु का प्रक्षाल एवं द्रव्य से पूजन नहीं करना तथा मंदिर जी के सामान का स्पर्श नही करना मंदिर के बाहर से देवदर्शन पाठ आदि कर लेवें सूतक का समय पूर्ण होने पर पूजनादि करके पात्रदानादि करें।

यदि धार्मिक अनुष्ठान मे सम्मिलित हों तथा सकलीकरण हो चुका हो तो उस व्यक्ति को घर/परिवार का सूतक नहीं लगता, वह व्यक्ति सूतक वाले घर से संपर्क नहीं रखे, सूतक सबंधी कार्यो में नहीं जावे। अपने रहने एवं भोजन की व्यवस्था अन्यत्र कर लेवे।

सूतक का समय निम्नानुसार होता है।

(१) जन्म का सूतक दस दिन तक होता है।

(२) यदि अपने घर में दासी तथा पुत्री की प्रसूति हो तो एक दिन का सूतक लगता है, घर से बाहर हो तो सूतक नहीं लगेगा।

(३) यदि पालतू जानवर अपने घर में जनें तो एक दिन का सूतक लगेगा घर से बाहर हो तो सूतक नहीं लगेगा।

---

(१). आ. ज. से., प्र. पा. पृष्ठ १७ श्लोक ७१

(४) मृत्यु का सूतक तीन पीढ़ी तक १२ दिन का लगेगा, चौथी पीढ़ी में दस दिन का, पाँचवी पीढ़ी में छः एवं छटवीं पीढ़ी में पाँच दिन का, सातवीं पीढ़ी में तीन दिन का, आठवीं पीढ़ी में एक दिन रात का तथा नवमीं पीढ़ी में स्नान मात्र से शुद्धता हो जाती है।

(५) गर्भपात में सूतक जितने माह का गर्भ हो उतने दिन का लगेगा। तथा प्रसूति स्त्री को सूतक ४५ दिन का लगेगा।
तीन दिन के बालक की मृत्यु का माता पिता को दस दिन का, आठ वर्ष के बालक की मृत्यु का दस दिन का, इसके आगे बारह दिन का सूतक लगेगा।

(६) अपने कुल के गृह त्यागी का सन्यासमरण या कुटुम्बी का संग्राम मरण हो तो एक दिन का सूतक लगेगा।

(७) गृह निवास के बाहर सूतक होने के खबर मिलने पर जितने दिन सूतक अवधि के शेष हों उतने दिन सूतक लगेगा। रजस्वला स्त्री गृहकार्य के लिये चौथे दिन तथा देवपूजन, आहारदान के लिये पाँचवें दिन शुद्ध होती है। इन दिनों में रजस्वला स्त्री को धार्मिक आयोजनों में सम्मिलित नहीं होना चाहिये। विशेष अनुष्ठानों में उनकी उपस्थिति से विघ्न आने की संभावना होती है।

सूतक विधान में आचार्यों के मतों में कुछ भिन्नता है।

इसे ध्यान रखें।

संदर्भित ग्रंथ

१. मंगल मंत्र णमोकार – एक अनुचितन, डा० नेमिचन्द्र जैन, ज्योतिषाचार्य
२. देव पूजा प्रवचन – क्षु० सहजानन्द वर्णी
३. प्रतिष्ठा पाठ – आचार्य जयसेन अपर नाम वसुबिंदु
४. वृहद् – वास्तुमालायाम् – टीका रमाकांत द्विवेदी
५. पं० मन्नूलाल जी जैन प्रतिष्ठाचार्य की हस्तलिखित डायरी
६. गोम्मट सार (जीव काण्ड) – श्रीमन्नेमिचन्द्रसिद्धांतचक्रवर्ती
७. प्रतिष्ठा सारोद्धार – पं० आशाधर
८. त्रिलोकसार – श्रीमन्नेमिचन्द्रसिद्धांत चक्रवर्ती
९ वास्तुसार प्रकरण – ठक्कुर फेरुमल
१०. षट्खण्डागमः – धवलाटीका पुस्तक ४
– धवलाटीका पुस्तक ६
– धवलाटीका पुस्तक ८
– धवलाटीका पुस्तक ९
आचार्य पुष्पदंत भूतबली
टीकाकार आचार्य श्री वीरसेनाचार्य
११. प्रतिष्ठासार संग्रहस्य श्लोकाः – आचार्य वसुनंदी
१२. आदि पुराण – आचार्य जिनसेन
१३. भारतीय मूर्तिकला के विकास में जैनों का योगदान
१४. प्रतिष्ठा तिलक – श्री नेमिचन्द्र देव
१५ प्रतिष्ठाचन्द्रिका – श्री शिवरामजी पाठक रांची
१६. वृहत्संहिता – श्री वराहमिहर
१७. प्रतिष्ठा मयूख
१८. मुहूर्त्त चक्रावलि
१९. शीघ्र बोध – दैवज्ञ काशीनाथ
२०. लोक विजय पंचांग – श्री जगन्नाथ झा
२१. चिंताहरण जंत्री – १९८८ सम्पादक, बचान प्रसाद त्रिपाठी
२२. ज्योतिष मुहूर्त्त विज्ञान
२३. भारतीय ज्योतिष – डा० नेमिचन्द्र जैन ज्योतिषाचार्य

२४. उद्धरण रत्नमाला
२५. चरचा समाधान - पं० भूधर दास
२६. शांतिविधान - पं० जिनदास
२७. महाबंध — आचार्य भूतबली
२८. जैन सिद्धांत भवन ग्रंथावली आरा
२९. धर्मरसिक ग्रंथ - संकलन गणधराचार्य कुंथुसागर
३०. प्रतिष्ठासारसंग्रह - ब्र. शीतल प्रसाद
३१. गणधरवलय विधान - आ. सकल कीर्ति
३२. आ. महावीर कीर्ति स्मृतिग्रंथ
३३. मंदिर वेदी प्रतिष्ठा कलशारोहण विधि - डा० पन्नालाल सहित्याचार्य
३४. धर्मध्यान दीपक
३५. सिद्ध भक्ति प्रवचन - क्षु. श्री सहजानंद वर्णी
३६. श्रावक का नित्य क्रिया कलाप - संकलन मुनि श्री आदिसागर
३७. मृत्युंजय णमोकार - मुनि श्री अमरेन्द्र विजय
३८. श्री गोम्मट प्रश्नोत्तर चिंतामणि - गणधराचार्य कुंथुसागर
३९. मूकमाटी महाकाव्य - आचार्य विद्यासागर
४०. ऋषिमण्डल मंत्र कल्प पूजा विधान - श्री विद्याभूषण सूरि
४१. ज्ञानार्णव. - शुभचन्द्राचार्य
४२. णमोकार मंत्र कल्प - आचार्य देशभूषण
४३. शिल्प स्मृति वास्तु विद्यायाम्
४४. प्रासाद मण्डन - श्री सूत्रधार मण्डन
४५. शिल्प रत्नाकर
४६. इष्टोपदेश - आचार्य पूज्यपाद स्वामी
४७. वास्तुविज्ञान परिचय - आर्यिका विशुद्धमति
४८. तिलोयपण्णत्ती - आचार्य यतिवृषभ
४९. आचार्य कुन्दकुन्द श्रावकाचार - आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी
५०. जिन संहिता
५१. प्रतिष्ठा दीपक - नरेन्द्र सेन
५२. विश्वकर्मा विद्या प्रकाश ग्रंथ
५३. क्रियाकोष - कविवर किशन सिह
५४. क्षीरार्णव - श्री विश्वकर्मा प्रणीत

५५. त्रिकालवर्ती महापुरुष – संकलन आदिसागर मुनि
५६. तीर्थंकर – पं० सुमेरु चन्द्र दिवाकर
५७. सर्वार्थ-सिद्धि – श्रीमत्पूज्यपादाचार्य
५८. जैन मंत्र शास्त्रः
५९. कार्तिकेयानुप्रेक्षा – आचार्य कार्तिकेय स्वामी
६०. प्रतिमा विज्ञान – श्री बालचंद्र जैन
६१. केवलज्ञान प्रश्न चूडामणि – सम्पादक डा० नेमिचंद्र ज्योतिषाचार्य
६२. लग्न चन्द्रिका – सर्वशास्त्र विशारद काशीनाथ
६३ मुहूर्त चिंतामणि – दैवेज्ञराम विरचित
६४. वास्तु रत्नावली
६५. मुहूर्त गणपति – दैवज्ञवर्य गणपति विरचित
६६. जैनेन्द्र सिद्धान्तकोष – भाग २
– भाग ३
– भाग ४ – क्षु० जिनेन्द्र वर्णी
६७. तीर्थंकर मासिक (पूजा विशेषांक) – डा० नेमिचन्द्र जैन
६८. ज्योतिष सार – सुकदेव
६९. कषायपाहुड (जयधवला) पुस्तक प्रथम – श्री गुणधराचार्य
७०. स्वयंम्भू स्तोत्र – आचार्य समन्तभद्र
७१. दशभक्त्यादि संग्रह – आचार्य पूज्यपाद स्वामी
७२. सावयधम्मदोहा – आचार्य देवसेन
७३. रयणसार – आचार्य कुंदकुंद
७४. पद्मनंदिपंचविंशतिका – आचार्य पद्मनन्दि
७५. पंचास्तिकाय – आचार्य कुंदकुंद
७६. परमार्थप्रकाशः – श्रीमद्-योगीन्दुदेव
७७. सागारधर्मामृतम् – महापण्डित आशाधर
७८. भगवती आराधना – आचार्य शिवकोटी
७९. अमितगतिश्रावकाचार – आचार्य अमितगति
८०. वसुनंदिश्रावकाचार – आचार्य वसुनंदि
८१. भावसंग्रह – आचार्य देवसेन
८२. सिद्धांत संग्रह – आचार्य नरेन्द्र सेन
८३. यशस्तिलकचम्पू महाकाव्य – आचार्य सोमदेव

संक्षिप्त शब्द - संकेत सूची

आ ज. से., प्र पा - आचार्य जयसेन, प्रतिष्ठापाठ
वृ वा मा. - वृहद् वास्तुमाला, टीका रमाकांत द्विवेदी
प म. ला. जैन, ह. लि. डा - प० मन्नूलाल जैन प्रतिष्ठाचार्य की हस्तलिखित डायरी।
आ ने च सि च, गो सा - आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धांतचक्रवर्ती, गोम्मटसार (जीवकाण्ड)
प आ ध., प्र सा - पडित आशाधर, प्रतिष्ठासारोद्धार
ठ फे., वा सा प्र - ठक्कुर फेरुमल, वास्तुसार प्रकरण
आ. पु द भू, ष. ध. पु. - आचार्य पुष्पदंत भूतबली षट्खण्डागम धवला पुस्तक
आ व न, प्र सा. स - आचार्यवसुनंदी, प्रतिष्ठासारसग्रह
आ उ स्वा. श्रा - आचार्य उमास्वामी श्रावकाचार
आ. जि से., आ. पु - आचार्य जिनसेन, आदिपुराण
आ. ने च सि च, त्रि सा - आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धांत चक्रवर्ती, त्रिलोक सार
श्री ने. च., प्र ति. - श्री नेमिचन्द्र देव, प्रतिष्ठातिलक
प. शि रा पा, प्र. च - प शिवरामजी पाठक, प्रतिष्ठाचन्द्रिका
डा ने च., भा ज्यो. - डा० नेमिचन्द्र जैन, ज्योतिषाचार्य, भारतीय ज्योतिष
ब्र शी प्र, प्र. सा. स. - ब्र. शीतल प्रसाद, प्रतिष्ठासारसंग्रह
आ शु. च., ज्ञा - आचार्य शुभचन्द्राचार्य, ज्ञानार्णव
आ दे भू., ण म क - आचार्य देशभूषण, णमोकार मंत्र कल्प
शि स्मृ. वा वि - शिल्प स्मृतिवास्तु विद्यायाम्
प्रा म - प्रासाद मण्डन, श्री सूत्रधार मण्डन
शि र - शिल्प रत्नाकार
आ. पू. पा, इ - आचार्य पूज्यपाद, इष्टोपदेश
आ वि., वा वि. प. - आर्यिका विशुद्धमति, वास्तु विज्ञान परिचय
श्री आ य, ति. प - श्री आचार्य यतिवृषभ, तिलोयपण्णत्ती
आ कु., कु श्रा. - आचार्य कुन्दकुन्द, कुन्दकुन्द श्रावकाचार
जि. स - जिन संहिता
न से., प्र.दी. - नरेन्द्र सेन, प्रतिष्ठादीपक
वि. वि. प्र ग्र. - विश्वकर्म विद्या प्रकाश ग्रंथ
आ. स की., ग. व. वि. - आचार्य सकलकीर्ति, गणधरवलय विधान ।